१९१८ में

सम्पूर्ण गांधी वाङ्मय

१४

(अक्तूबर १९१७ – जुलाई १९१८)

प्रकाशन विभाग

सूचना और प्रसारण मन्त्रालय

भारत सरकार

भूमिका

अक्तूबर १९१७ से लेकर जुलाई १९१८ तक जिन १० महीनोका समावेश इस खण्डमें हुआ है उनका गाधीजीके कर्म-जीवनमें एक विशिष्ट स्थान है। यह समय उनके लिए लगभग अनवरत और अत्यन्त उत्कट प्रवृत्तिका समय था। सकलित सामग्री वताती है कि इन दिनो वे किस तरह सत्याग्रहके सिद्धान्तका प्रयोग एक-दूसरेसे सर्वथा भिन्न परिस्थितियोका सामना करनेके लिए कर रहे थे। चम्पारनकी उनकी अपेक्षाकृत आसान सफलताने उनकी कार्यपद्धतिके बारेमें लोगोकी उत्सुकता जगा दी थी, लेकिन गाधीजी उनका प्रयोग राष्ट्रीय समस्याओको हल करनेमें करते, उसके पहले उसकी ज्यादा कडी कसौटी होनेकी जरूरत थी जिससे लोगोको उसकी शक्तिकी पूरी-पूरी प्रतीति हो जाती। फरवरी-मार्चमें अहमदावादके मिल मजदूरोकी हडतालमें और मार्च-अप्रैल १९१८ में खेडा सत्याग्रहमें उसके ऐसे दो प्रयोग हुए। युद्धमें सरकारकी सहायताके प्रयत्नोमें गाधीजीने जो हिस्सा लिया वह सत्याग्रहके दूसरे पहलूको प्रदर्शित करता है, क्योकि जैसे एक ओर सत्याग्रहका मतलव अन्यायका प्रतिरोध है वैसे ही दूसरी ओर उसका मतलव शत्रुके प्रति सद्भावना और प्रसग उपस्थित होनेपर उसके साथ सहयोग देनेके लिए तैयार रहना भी है। इस तरह वह नाजुक समय था जबकि सत्याग्रह सीखा और सिखाया जा रहा था और राष्ट्रीय नेतृत्वकी बागडोर गाधीजी अपने हाथोमें ले सकें, इसके लिए जमीन तैयार हो रही थी।

अहमदावादके मिल-मजदूरोकी हडताल कई दृष्टियोसे एक अद्वितीय घटना थी। मजदूर सगठनकी वात अभी भारतके लिए नई थी और यूरोपमें इस आन्दोलनको प्रेरित करनेवाला वर्ग-सघर्षका सिद्धान्त तो लगभग अज्ञात ही था। गाधीजी दक्षिण आफ्रिकामें मजदूरोकी एक ऐसी हलचल देख चुके थे जो मालिको और सरकारके प्रति शत्रुताके भावसे प्रेरित थी। वह उन्हे अच्छी नही लगी थी और उनका यह विश्वास कि मानव-सम्बन्धोके सारे सवालोका हल एकमात्र अहिंसा द्वारा हो सकता है, उससे और अधिक दृढ हो गया था। अहमदावादकी लडाईने उन्हे अपने इस विश्वासको परखने और उसकी श्रेष्ठता सिद्ध करनेका मौका दिया। उसके पीछे उनकी इच्छा मालिको और मजदूरोके हितोका सयोजन करनेकी और झगड़ेका प्रसग उपस्थित होनेपर उसे इस तरह निपटानेकी थी कि दोनो पक्षोमें कही कटुताका भाव उत्पन्न न हो। अहमदावादके मिल-मजदूरोने, मिल-मालिको द्वारा किसी किस्मका सलाह-मशविरा किये विना ही युद्ध-कालीन भत्ता वन्द कर दिये जानेपर, अपने वेतनमें उसी अनुपातमें वढोतरीकी माँग की थी। गाधीजी चाहते थे कि मामला विना किसी आन्दोलन और विक्षोभके निपट जाये। उन्होने मिल-मालिकोसे अपील की कि वे मजदूरोको "प्रेम-रूपी रेशमकी डोरसे" बाँधें (पृष्ठ ११३) और १४ फरवरीको इस सवालपर विचार करनेके लिए पचोकी नियुक्ति करानेमें सफल हो गये। दूसरी ओर उन्होने मजदूरोको उनके अधिकारोके प्रति जागरूक किया, लेकिन साथ ही उनसे अपने प्रयत्नमें हिंसाका सर्वथा त्याग करनेकी

प्रतिज्ञा लिवानेकी सावधानी भी वरती। जब संघर्ष अनिवार्य हो गया तब गांधीजी पूरे जोरसे मजदूरोके पक्षकी हिमायत करने लग गये। और उन्होने आगे वढ़कर उनका सक्रिय नेतृत्व भी सभाल लिया। लड़ाईके सिलसिलेमे उन्होंने प्रतिदिन मजदूरो और मालिको, दोनोको तालीम देनेकी गरजसे पत्रिकाएँ निकाली। मजदूरोसे उन्होने अपना सघर्ष सत्याग्रहकी भावनासे चलानेके लिए कहा और मालिकोंसे हृदय-परिवर्तनका अनुरोध किया। उन्होने मजदूरोंको दक्षिण आफ्रिकामें भारतीयोंके सघर्षकी याद दिलाई और वलिअम्मा तथा हरवर्तसिहकी आत्माहुतिका स्मरण कराया। मजदूरोका ध्यान उनकी त्रुटियोकी ओर आकृष्ट किया, उन्हें वताया कि वेतन-वृद्धिके इस संघर्षको वे अपने रहन-सहनको सुधारने और अपना जीवन ज्यादा सुसंस्कृत वनानेके वृहत् प्रयत्नका एक हिस्सा मानना सीखें। और जव उन्होंने उन्हे कठिनाइयोके सम्मुख लडखड़ाते हुए देखा तो उनके ध्येयकी सफलताके लिए अपनी आहुति देनेकी तत्परता प्रदर्शित करते हुए अनिश्चित कालके लिए उपवासकी घोषणा कर दी। यो, उन्होंने स्पष्ट कर दिया था कि उपवासमें मिल-मालिकोंपर दवाव डालनेका हेतु विलकुल नहीं है, किन्तु उन्होंने यह स्वीकार किया कि उसका यह असर होगा अवश्य और इसलिए जव मिल-मालिक झुके तो गांधीजीने इस परिस्थितिका पूरा लाभ उठानेसे, मजदूरोकी मॉगोको पूरी स्वीकृतिका आग्रह करनेसे, इनकार कर दिया। उनका यह रवैया कुछ मजदूरोको शायद वुरा भी लगा, लेकिन गांधीजीने उन्हे समझा-वुझाकर शान्त कर दिया। इस तरह सघर्षका अन्त जिस प्रकार हुआ उसमें समझौतेकी वह भावना विद्यमान थी जो गांधीजीके सत्याग्रहका अविच्छेद्य अंग थी।

मिल-मजदूरोकी हड़तालसे मुक्त होते-न-होते गांधीजीके सामने सरकारसे पहली वार डटकर भिड़नेकी सम्भावना उपस्थित हो गई। गुजरातके खेड़ा जिलेमे फसलको वाढ़से वहुत नुकसान हुआ था और स्थानीय राजनीतिक कार्यकर्ताओको ऐसा महसूस हुआ कि परिस्थितियोंको देखते हुए किसानोको मालगुजारी कानूनकी रूसे लगानकी पूरी या आंशिक छूट मिलनी चाहिए। किन्तु सरकार इस मामलेमे लोगोकी वातको अनसुनी कर रही थी। गांधीजी अभी चम्पारनमें ही थे, जव इस सम्बन्धमे उनकी सलाह माँगी गई। चम्पारनसे लौटकर आनेके वाद उन्होने लोगोकी इस शिकायतमे सक्रिय दिलचस्पी लेना शुरू किया। उन्होने फसलकी हालत घूम-फिरकर स्वयं जानी-परखी और अन्तमे वे इस निष्कर्षपर आये कि लगानकी छूटकी लोगोकी मॉग वाजिव है। अधिकारियोंको इस सम्बन्धमे प्रतिवेदन प्रेषित किये गये किन्तु उनसे उनके सहानुभूति-शून्य रवैयेमे कोई फर्क नही पड़ा। तव गांधीजीने लोगोको सक्रिय प्रतिरोधकी सलाह दी। "मुझे तो यह वात विलकुल स्वयंसिद्ध-सी लगती है कि अन्यायके खिलाफ अपनी भावना प्रकट करनेके लिए नम्रतापूर्वक लगान देनेसे इनकार करने और सरकारको उसे जवरदस्ती वसूल करने देनेमें कुछ भी गैरकानूनी नहीं है। (पृष्ठ २०४)। २२ मार्चको नडियादकी एक सार्वजनिक सभामें वोलते हुए उन्होंने लोगोंको अपनी इस लड़ाईको एक वृहत्तर सिद्धान्तकी स्थापनाके लिए लड़ी जा रही लड़ाईका रूप देने और लगान देनेसे इनकार करनेकी प्रतिज्ञा लेनेके लिए आहूत किया। उन्होने कहा : "इस देशमें यह नियम ही वन गया है कि सरकारका मत हमेशा ठीक होना चाहिए। लोग चाहे जितने सचाईपर हों तो भी

सरकार अपनी मनमानी करती है—यह स्थिति असह्य है। "यदि बात न्यायकी है तब तो यह ठीक है कि वह दूसरोंसे स्वीकार कराई जाये किन्तु यदि वह अन्यायपूर्ण है तब तो वह बदली ही जानी चाहिए" (पृष्ठ २६२)। संघर्षके दौरान उन्होंने प्राय. अपने प्रत्येक भाषणमें लोगोका ध्यान उसके इस बृहत्तर महत्वकी ओर खीचा और प्रजाके साथ सरकारका व्यवहार जिस जनतांत्रिक भावनासे अनुप्राणित होना चाहिए, उसकी शिक्षा दी। उन्होंने इसके लिए जनतामे अपने भीतर बलिदानकी भावनाका विकास करनेके लिए कहा। "जिन-जिन जातियोका उत्थान हुआ है उन्हे पहले कष्ट सहने पड़े हैं।" (पृष्ठ २६२)। "सत्ता अन्धी है, अन्यायी है। जो सरकार उस सत्ताका सम्मान करनेकी बात कहती है वह टिक नही सकती।" (पृष्ठ ३०७)। "जनताका विरोध करके कोई राजा राज्य नही कर सकता। इस सत्यको सिद्ध कर दिखाना मैंने अपने जीवनका मुख्य कार्य माना है।" (पृष्ठ ३११)। १२ अप्रैलको कमिश्नरने सरकारका पक्ष पेश करनेके लिए एक सभा बुलाई थी और गांधीजीने लोगोको उसमे हाजिर रहनेकी सलाह दी थी सभामें कमिश्नरने जो भाषण दिया उसके बारेमे उन्होंने कहा कि मै यह कहनेके लिए बाध्य हूँ कि "इस प्रतिहिंसा एव आतंकपूर्ण भावनाके विरुद्ध जीवन पर्यंत सघर्ष करना प्रत्येक राजनिष्ठ नागरिकका पवित्र कर्तव्य है।" (पृष्ठ ३२२)।

२५ अप्रैलको अधिकारियोकी नीतिमें परिवर्तनके चिह्न दिखाई दिये, यद्यपि उनके हृदयमें तो शायद कोई परिवर्तन नहीं हुआ। उन्होंने आदेश जारी किये कि जो लोग अपना बकाया लगान दे सकते है वे यदि अदायगी कर दें तो जो लोग देनेकी स्थितिमें नही है उनका लगान माफ कर दिया जायेगा। जूनके आरम्भमें जब ये आदेश प्रकाशमें आये तो गांधीजीने उन्हे स्वीकार तो किया किन्तु उन्हे महसूस हुआ और उन्होंने कहा भी कि सरकार द्वारा दी गई इस रियायतमें श्री नहीं है। वास्तविक राहतकी दृष्टिसे किसानोको जो लाभ हुआ वह तो नगण्य था किन्तु लोगोमें निर्भीकता आई और उन्हे जब भी आवश्यक हो सत्याग्रहका प्रयोग कर सकनेकी अपनी क्षमताकी प्रतीति हुई। गांधीजीने इस चीजको, सघर्षके दरम्यान लोगोने जो कष्ट भोगे थे, उनका पर्याप्त पुरस्कार माना।

खेड़ाके सघर्षकी समाप्तिने गांधीजीको अवश्य ही बहुत राहत महसूस हुई होगी, क्योंकि इससे उन्हे युद्ध-प्रयत्नके अपेक्षाकृत बड़े सवाल की ओर ध्यान देकर सत्याग्रहीके रूपमें अपने विरोधीकी भी सहायता करनेकी अपनी तत्परता दिखानेका अवसर मिला। ब्रिटेनके साथ भारतके सम्बन्धकी उपयोगितामें वे तब भी विश्वास करते थे। सो उन्होंने अपनी अहिंसाके विशुद्ध तर्क-संगत परिणामोपर फिलहाल अपनी वीरोचित उदारताकी वृत्तिको तरजीह देते हुए साम्राज्यको अपनी सेवाएँ पेश की। वे सोचते थे कि राजनीतिक परिणामोकी दृष्टिसे युद्ध-प्रयत्नमें दिया गया सहयोग अंग्रेजोके चरित्रके सत्-अंशपर इष्ट प्रभाव डालेगा और उसका कोई अन्य सुफल चाहे न भी आये, वह देशमें इतनी शक्ति तो उत्पन्न कर ही देगा जिससे होमरूल-प्राप्तिकी राष्ट्रीय आकाक्षाकी उपेक्षा कर सकना ब्रिटिश सरकारके लिए असम्भव हो जाये। अपनी आरम्भिक अनिच्छाको जीतकर वे २९ अप्रैलको दिल्लीमें वाइसराय द्वारा बुलाई गई युद्ध-परिषदकी बैठकमें शामिल हुए और उन्होंने युद्ध-प्रयत्नके पक्षमें सक्रिय सहायता देनेका निश्चय किया। २५ मई को उन्होंने सार्वजनिक रूपसे सेनामें भरतीकी पैरवी की। तिलक और दूसरे नेताओको

विना शर्त सहयोगकी इस नीतिकी बुद्धिमत्तामें सन्देह था। और जब बम्बईमें १० जून को प्रान्तीय युद्ध-परिषद्के दौरान बम्बईके गवर्नर लॉर्ड विलिंग्डनने लोकमान्य तिलक और केलकरको उनके भाषणोंके बीचमें रोक दिया, उस समय गांधीजीके लिए परिस्थिति निश्चय ही बहुत अटपटी हो गई होगी। उन्होंने इस मामलेको तुरन्त अपने हाथमें लिया, और गवर्नरसे साफ कहा कि उनका वैसा करना बहुत गलत था। जनताकी ओरसे गवर्नरके इस विवेकहीन व्यवहारकी जो टीका की गई उसमें गांधीजीने मुख्य हिस्सा लिया और राष्ट्रके सम्मान्य नेताके इस अपमानको राष्ट्रका अपमान मानते हुए उन्होंने गवर्नरसे क्षमा-याचनाकी माँग की। किन्तु सरकारके युद्ध प्रयत्नमे जनताके सहयोगकी माँग वे फिर भी करते रहे; यहाँ तक कि उन्होंने खेड़ा जिलेमें लोगोंको सेनामे भरती होने के लिए प्रोत्साहित करते हुए जोरदार मुहिम चलाई जिसका उनके स्वास्थ्यपर बहुत खराब असर पड़ा। अहिंसाका सन्देशवाहक सेनामें भरती होनेकी पैरवी करे, यह बात लोगोको, जैसा कि स्वाभाविक है, असगत मालूम होती थी। इस असंगतिके लिए मित्रो तकने गांधीजीकी आलोचना की। गांधीजीने अपनी स्थितिका स्पष्टीकरण करते हुए कहा कि कायरताको छिपानेके लिए अहिंसाकी शरण नही ली जा सकती; मैं अपने लिए तो किसी भी परिस्थितिमे हिंसाका वर्जन करूँगा किन्तु मेरी तरह जो अहिंसाको परम धर्म नहीं मानते उन्हे मैं यही सलाह दूँगा कि वे भय या दुर्बलताके कारण हिंसासे न हिचके। हिंसा-अहिंसाके सवालपर गांधीजीका यह स्पष्टीकरण उनकी शिक्षाका एक आवश्यक अंग है और यह बात उन्होने बादमें अनेक अवसरोपर दुहराई। उन्होंने कहा, अगर भारतीय जनता ब्रिटेनके साथ अपने सम्बन्धोका लाभ उठाते रहना चाहती है तो उसे साम्राज्यकी रक्षामे अपना योग अवश्य देना चाहिए। किन्तु देशकी राजनीतिक आकाक्षाओंकी सिद्धिके लिए वे सत्याग्रहको ही एकमात्र उपाय मानते रहे। एक सार्वजनिक कार्यकर्त्ताको उन्होने लिखा, "अवसर आनेपर अपनी शक्ति-भर सत्याग्रहकी महिमाको प्रदर्शित करना हमारा परम धर्म है।" (पृष्ठ १३०)। फिर इन्दौरमें, ३० मार्चके अपने एक भाषणमे उन्होंने घोषित किया, "हम अगर भारतका उद्धार कर सकते हैं तो सत्य और अहिंसासे ही कर सकते हैं। (पृष्ठ २८३) लेकिन उन्होंने यह भी स्वीकार किया कि मानवीय जीवनकी विविध परिस्थितियोमें जब अहिंसाके मार्गका अनुसरण किया जाता है तो हमें ऐसे अनेक जटिल नैतिक प्रश्नोंका मुकाबला करना पड़ता है जिनका कोई सीधा हल नही है। "हिमालयपर सीधी लकीरसे जा ही नहीं सकते। क्या इसी तरह अहिंसाका मार्ग भी विकट होगा?" (पृष्ठ ४९८)

बड़ी राष्ट्रीय समस्याओपर गांधीजीने जितना ध्यान दिया उतना ही दिखनेमे छोटी समस्याओपर भी। उन्होने गोरक्षाके विवादास्पद प्रश्नको प्राणि-जगत्के प्रति करुणा और उसके कल्याणकी चिन्ता के साथ जोड़कर उसे ज्यादा सही परिप्रेक्ष्य प्रदान करनेका प्रयत्न किया। उन्होंने गायोकी नसल सुधारने बैलोके साथ सदयताका बरताव करने, आदर्श गोशालाएं आदि चलानेपर जोर दिया जो कि इस समस्याके प्रति उनकी रचनात्मक दृष्टिका निदर्शक है। एक और महत्वपूर्ण प्रश्न, जिसपर उन्होंने इस समय अधिकाधिक ध्यान दिया, शिक्षाका था। अंग्रेजी शासन दे ने इस देशमें जिस शिक्षा-प्रणालीकी स्थापना की उससे वे अनेक कारणोसे असन्तुष्ट थे, किन्तु उन्हें सबसे ज्यादा आपत्ति

अंग्रेजीको शिक्षाका माध्यम बनाकर उसे जो बहुत ज्यादा अस्वाभाविक महत्व दे दिया गया था उसपर थी। अस्पृश्यताकी प्रथा नष्ट करने और जाति-प्रथाको जिस हदतक वह सयमके पालनमें सहायक हो उसी हद तक माननेके बारेमें भी उन्होने इन दिनो काफी लिखा और कहा।

अपनी इन विविध प्रवृत्तियोमें गाधीजीके बल और उत्साहका अक्षय स्रोत उनकी ज्वलन्त भारत-भक्ति ही थी। "मैं अपना जीवन तभी सार्थक समझूँगा जब भारतके लिए अपने प्राण उत्सर्ग कर पाऊँ।" (पृष्ठ ४६)। देशमे उनका प्रभाव इस समय प्रकर्षपर था और इस अवसरका उपयोग करके वे उसे अपना सन्देश सुना डालनेके लिए बेचैन थे। किन्तु उन्हे भारतकी परिस्थितियोके अपने सीमित अनुभवका भान था और राजनीतिके क्षेत्रमें वे अपने कदम काफी तोल-तोलकर ही बढा रहे थे। गुजरात राजनीतिक परिषदकी अध्यक्षता करते हुए, ३ नवम्बर, १९१७ को अपने भाषणमें उन्होने कहा, "भारतके राजनीतिक क्षेत्रमें मै अभी ढाई वर्षका बच्चा हूँ। मैं दक्षिण आफ्रिकाके अपने अनुभवसे यहाँ काम नही कर सकता।" (पृष्ठ ५०) फिर भी, उन्हे राजनीतिक क्षेत्रमें तो क्रियाशील रहना ही पडा। जब लॉर्ड माण्टेग्युने इसका कारण जानना चाहा तो उन्होने कहा कि अगर मै राजनीतिसे हट जाऊँ तो अपने धार्मिक और सामाजिक दायित्व भी पूरा नही कर पाऊँगा। यह उत्तर उन्होने काफी तौल कर दिया था, क्योकि उनका खयाल था, "अपने जीवनके अन्त तक मेरा यही जवाब रहेगा।" (पृष्ठ ४६१) देशकी घोर गरीबीका खयाल उन्हे रात दिन सालता रहता था और उनका यह दु ख तब और बढ जाता था जब वे देखते थे कि लोग उसका निवारण कर सकनेमें असहाय हैं। अन्य सभी क्षेत्रोमे प्रगतिके लिए भी राजनीतिक स्वतत्रता आवश्यक थी, और इसीलिए गाधीजी चाहते थे कि देशको गलतियाँ करनेका अधिकार मिलना चाहिए। "जिसे भूलें करनेका हक न हो वह कभी उन्नति भी नही कर सकता भूलें करनेका अधिकार और उन्हे सुधारनेकी सत्ता — यह स्वराज्यकी व्याख्या है।" (पृष्ठ ५५) स्वभावत वे देशके लिए स्वराज्यकी प्राप्तिको मुख्य स्थान देते थे और उसकी तुलनामें अन्य सार्वजनिक प्रश्नो और प्रवृत्तियोको उसके अधीन गौण स्थान देते थे। तदनुसार उन्होने मॉण्टेग्यु-चैम्सफोर्ड सुधारोका, स्वतत्रताकी दिशामें एक कदमके रूपमें, स्वागत किया।

खडमें सकलित पत्रोकी प्रचुरता इसकी एक अन्य उल्लेखनीय विशेषता है। भारत और दक्षिण आफ्रिकाके अपने स्वजनो, सह-कार्यकर्ताओ और साथियोको, तथा मित्रो, सार्वजनिक कार्यकर्ताओ, विद्वानो, सम्पादको, विभिन्न स्तरोके सरकारी अधिकारियो और विभिन्न विचारधाराओके राजनीतिक व्यक्तियोको लिखे गये इन पत्रोमें, पाठक देखेंगे कि गाधीजी पत्रोके प्रस्तुत विषयकी, राजनीतिक या अन्य सवालोकी, चर्चा करके नही रह जाते, उनकी दिलचस्पी इस सीमाको लाधकर चुपचाप उन व्यक्तियोके जीवनमे जा पहुँचती है — उसमें स्नेह और सहानुभूतिका मानवीय रग आ मिलता है और यह पत्र-व्यवहार गोया शुद्ध मानवीय धरातलपर दो व्यक्तियोके मिलनका आधार बन जाता है। उनके वैयक्तिक और राजनीतिक सम्पर्कोका दायरा, जन-सेवाकी उनकी प्रवृत्ति ज्यो-ज्यो बढती जाती है त्यो-त्यो व्यक्तियोके रूपमे उन पुरुषो और स्त्रियोके सम्बन्धमें उनकी कल्याण-चिन्ता अधिकाधिक गहरी और सक्रिय होती जाती है।

आभार

इस खण्डकी सामग्रीके लिए हम साबरमती आश्रम सरक्षक तथा स्मारक न्यास (साबरमती आश्रम प्रिजर्वेशन ऐड मेमोरियल ट्रस्ट) और सग्रहालय, नवजीवन ट्रस्ट, गुजरात विद्यापीठ ग्रन्थालय, अहमदाबाद, गाधी स्मारक निधि व सग्रहालय, राष्ट्रीय अभिलेखागार (नेशनल आर्काइव्ज ऑफ इडिया), नई दिल्ली, कलोनियल ऑफिस और इडिया ऑफिस पुस्तकालय, लन्दन, श्री छगनलाल गाधी, अहमदाबाद, श्री नारणदास गाधी, राजकोट; श्री नारायण देसाई, बारडोली; श्रीमती राधाबेन चौधरी, कलकत्ता, श्री ए० एच० वेस्ट, 'अन्त्यज स्तोत्र', 'आत्मकथा', 'बापू और हरिजन', 'बापुनी प्रसादी', 'धर्मात्मा गोखले', 'एक धर्मयुद्ध', 'गोपालकृष्ण गोखलेना व्याख्यानो', 'गोसेवा', 'जीवन प्रभात', 'जीवनना झरणा', 'खेडा सत्याग्रह', 'महादेवभाईनी डायरी', 'महात्मा गाधी', 'महात्मा गाधीजीनी विचारसृष्टि', 'माई डियर चाइल्ड', 'सरदार वल्लभभाई पटेल', सिलैक्ट डॉक्यूमेंट्स ऑन महात्मा गाधीज मूवमेट इन चम्पारन' और 'स्पीचेज ऐड राइटिंग्ज ऑफ एम० के० गाधी', पुस्तकोके प्रकाशको तथा निम्नलिखित समाचारपत्रो और पत्रिकाओके आभारी है 'अमृतबाजार पत्रिका', 'बगाली', 'बॉम्बे क्रॉनिकल', 'हिन्दू', 'गुजराती', 'इडियन रिव्यू', 'लीडर', 'मुम्बई समाचार', 'न्यू इडिया', 'प्रजाबन्धु', 'प्रताप', 'स्टेट्समैन' और 'यग इडिया'।

अनुसन्धान और सदर्भ सम्बन्धी सुविधाओके लिए अखिल भारतीय काग्रेस कमेटी पुस्तकालय, गाधी स्मारक सग्रहालय, इडियन कौसिल ऑफ वर्ल्ड अफेयर्स पुस्तकालय, सूचना और प्रसारण मन्त्रालय (मिनिस्ट्री ऑफ इन्फरमेशन ऐड ब्रॉडकास्टिग) के अनुसन्धान और सन्दर्भ विभाग (रिसर्च ऐड रेफरेस डिवीजन) नई दिल्ली, साबरमती सग्रहालय तथा गुजरात विद्यापीठ ग्रन्थालय, अहमदाबादके आभारी है।

पाठकोंको सूचना

अंग्रेजी, गुजराती और मराठीसे अनुवाद करते समय उसे मूलके समीप रखनेका पूरा प्रयत्न किया गया है, किन्तु साथ ही भाषाको सुपाठ्य बनानेका भी पूरा ध्यान रखा गया है। जो अनुवाद प्राप्त हो सके हैं, हमने ही मूलसे मिलाकर और संशोधन करनेके बाद उनका उपयोग किया है। छापेकी स्पष्ट भूलें सुधारनेके बाद अनुवाद किया गया है और मूलमें प्रयुक्त शब्दोंके संक्षिप्त रूप यथासम्भव पूरे करके दिये गये हैं। यह ध्यान रखा गया है कि नामोंको सामान्यतः जैसा बोला जाता है वैसा ही लिखा जाये। जिन नामोंके उच्चारणोंमें संशय था उनको वैसा ही लिखा गया है जैसा गांधीजीने अपने गुजराती लेखोंमें लिखा है।

मूल सामग्रीके बीच चौकोर कोष्ठकोंमें दी गई सामग्री सम्पादकीय है। गांधीजीने किसी लेख, भाषण आदिका जो अंश मूल रूपमें उद्धृत किया है, वह हाशिया छोड़कर साधारण टाइपमें छापा गया है। भाषणोंकी परोक्ष रिपोर्ट तथा वे शब्द जो गांधीजीके कहे हुए नहीं हैं, बिना हाशिया छोड़े गहरी स्याहीमें छापे गये हैं।

शीर्षककी लेखन-तिथि जहाँ उपलब्ध है, वहाँ दायें कोनेमें ऊपर दे दी गई है, जहाँ वह उपलब्ध नहीं है वहाँ उसकी पूर्ति अनुमानसे चौकोर कोष्ठकोंमें की गई है और आवश्यक होनेपर उसका कारण स्पष्ट कर दिया गया है। जिन हिन्दी और गुजरातीके व्यक्तिगत पत्रोंमें गुजराती संवत्के अनुसार तिथी दी गई थी उनमें ईसवी सन्के तदनुरूप तिथि भी दे दी गई है। कुछ पत्रोंकी लेखन तिथिका निर्णय बाह्य या आन्तरिक साक्ष्यके आधारपर किया गया है। जिन पत्रोंमें केवल मास या वर्षका उल्लेख है उन्हें आवश्यकतानुसार मासके या वर्षके अन्तमें डाल दिया गया है। शीर्षकके अन्तमें सूत्रके साथ दी गई तिथि, प्रकाशनकी है।

'सत्यना प्रयोगो अथवा आत्मकथा' के अनेक संस्करण होनेसे उनकी पृष्ठ संख्याएँ विभिन्न हैं; इसलिए हवाला देनेमें केवल उनके भाग और अध्यायका ही उल्लेख किया गया है।

सामग्रीकी पृष्ठभूमिका परिचय देनेके लिए मूलसे सम्बद्ध कुछ परिशिष्ट दिये गये हैं। अन्तमें साधन-सूत्रोंकी सूची और इस खण्डसे सम्बन्धित कालकी तारीखवार घटनाएँ दी गई हैं।

विषय-सूची

परिशिष्ट

चित्र-सूची

१. पत्र : कोतवालको

मोतीहारी

आश्विन बदी ९ [अक्तूबर ९, १९१७][1]

भाईश्री कोतवाल,[2]

आपका पत्र मिला। आपको भी मेरा तार[3] मिल गया होगा। मैं जवाब तो तुरन्त लिख देना चाहता था, लेकिन लिख नही सका। उसके बाद भाग-दौडमें ही रहा, और जवाब नही दे पाया।

आपको बहुत दु:ख सहना पडा है। लेकिन, अगर इसका अच्छा अर्थ लगायें तो आप अपनेको गढ सकेंगे। बेटी गई, माँ गई। अब तो चाहे बेटी कहिए चाहे माँ, सब-कुछ भारत ही है। आप उससे बहुत-कुछ पा सकते हैं, उसे बहुत-कुछ दे सकते हैं। और उसे जितना देंगे, उससे सौ गुना अधिक पा सकेंगे। वह कामधेनु है, लेकिन यदि आप उसे घास-भूसा भी नही देंगे तो वह दूध कहाँसे देगी? उसे क्या दें और कैसे दें, इसका निश्चय तो जब आप यहाँ आयेंगे तभी किया जायेगा।

अगर आप आ जायें तो २० तारीख तक तो मैं यही हूँ। उसके बाद कुछ व्यस्तता रहेगी।

मेरा एक भाषण[4] इस समय मेरे पास है, उसे तो भेज देता हूँ। दूसरोकी प्रतियाँ मिल जायेगी तो भेज दूँगा।

मेरे साथ बा हैं, देवदास और अवन्तिकाबेन हैं। उनके पति भाई बबन गोखले तथा कुछ अन्य लोग भी साथमें हैं।

मोहनदासके वन्देमातरम्

गांधीजीके स्वाक्षरोमें मूल गुजराती पत्र (जी० एन० ३६१३) की फोटो-नकलसे।

१. चम्पारनके नील-उत्पादनके काममें लगे किसानोंकी स्थितिकी जाँच समाप्त होनेके बाद गांधीजी ८ अक्तूबरकी रातको राचीसे मोतीहारी आये थे।

२. दक्षिण आफ्रिकाके टॉल्स्टॉय फार्ममें गांधीजीके साथी।

३. व ४. उपलब्ध नहीं है।

२. भाषण : सच्ची गोरक्षापर[1]

बेतिया

[अक्तूबर ९, १९१७ के आसपास][2]

गोरक्षिणी सभाने मुझे इस शहरमे गोशालाका शिलान्यास करनेका काम सौपा है, इसके लिए मैं सभाका और आप सबका आभार मानता हूँ। हिन्दुओकी दृष्टिमें यह कार्य बहुत पवित्र है। गायकी रक्षा करना हर भारतीयका मुख्य कार्य है। फिर भी इस महान् कार्यको करनेकी हमारी जो पद्धति है, उसमें मैंने अनेक दोष पाये हैं। इस महत्त्वपूर्ण प्रश्नपर मैंने थोडा-बहुत विचार किया है; आपकी इजाजतसे मैं उसे आपके सामने रखना चाहता हूँ।

आजकल गोरक्षाके दो ही अर्थ रह गये है। एक तो यह कि वकरीद आदिके अवसरोपर गोमाताको अपने मुसलमान भाइयोके हाथोसे छुडाना और दूसरा यह कि दुर्बल गायोके लिए गोशालाएँ वनवाना।

मुसलमान भाइयोके हाथोसे गोमाताकी रक्षा करनेका हमारा तरीका ठीक नही है। उसका परिणाम यह हुआ है कि भारतकी इन दो बड़ी जातियोके बीच हमेशा वैर-भाव और अविश्वास बना रहता है, और कही-कही तो इन दोनोके बीच मारपीट भी हो जाती है। अभी हालमे ही शाहाबाद जिलेमे जो मारपीट हुई थी, वह मेरे इस कथनका समर्थन करती है। यह ऐसा प्रश्न है, जिसपर दोनो जातियोको गम्भीरतापूर्वक विचार करना चाहिए। सैकड़ो हिन्दू भाइयोने निरपराध मुसलमान भाइयोके घरवार लूटकर भारी ऊधम मचाया। इसमें पुण्यकी तो गुजाइश ही कैसे हो सकती है? वह घोर पापका काम था।

गोरक्षिणी सभाके कार्योसे, दरअसल, गायोकी रक्षा होनेके वदले उनकी हानि ही अधिक होती है। अहिंसाको हिन्दू धर्ममे मुख्य स्थान दिया गया है। गायकी रक्षा करनेके लिए मुसलमानकी हत्या करना बिलकुल अधर्म है। अगर हम चाहते हो कि उनके हाथो गायकी हत्या न हो, तो उनका हृदय-परिवर्तन करनेकी जरूरत है। यह काम हम जोर-जबरदस्तीसे नही कर सकते। हमे तो प्रार्थना और नम्रताके बलपर उनके हृदयमे प्रवेश करना है। इस प्रकार उनके अन्तरके दयाभावको जाग्रत करके हम यह कार्य सिद्ध कर सकते हैं। इस तरह काम करनेके लिए हमे यह प्रतिज्ञा लेनी होगी कि मैं गोरक्षाके लिए काम करूँगा, और ऐसा करनेमे मुसलमान भाइयोके प्रति द्वेष या वैर-

१. यह भाषण वेतिया (चम्पारन, विहार) में गोरक्षिणी सभाके तत्त्वावधानमें आयोजित सभामें दिया गया था। स्पष्ट है, गाधीजीने यह भाषण हिन्दीमें दिया होगा, लेकिन हिन्दी-पाठ उपलब्ध न होनेके कारण इसे गुजरातीसे पुन अनूदित करके दिया जा रहा है।

२. भाषणमें शाहाबाद (बिहार) के हिन्दू-मुस्लिम दगेका उल्लेख है। यह दगा सन् १९१७ में २७ सितम्बरसे ९ अक्तूबरके बीच हुआ था। भाषणकी तिथिका अन्दाज उसीके आधारपर किया गया है।

भाव नही रखूँगा। उसी तरह उनपर क्रोध नही करूँगा और न उनके साथ मार-पीट करूँगा। ऐसा अभयदान देनेके बाद ही हम उनके साथ बात करनेके अधिकारी हो सकते हैं। यह याद रखना है कि हम जिन बातोको पाप समझते हैं, उन्हे हमारे मुसलमान भाई पाप नही समझते। इतना ही नही, किसी-किसी अवसरपर तो गायकी हत्या करना वे पुण्य समझते हैं। अपने धर्मका पालन प्रत्येक मनुष्यके लिए जरूरी है। यदि इस्लामका कोई ऐसा आदेश होता कि गायकी कुरवानी हर हालतमें जरूरी है, तो भारतमें वास्तविक शान्ति कभी न रह पाती। लेकिन मैं तो ऐसा समझता हूँ कि वकरीद आदि त्यौहारोमें गायका वध करना कोई धार्मिक कर्त्तव्य नही है। परन्तु जब हम जोर-जुल्म करके गोवध रोकना चाहते हैं, तब मुसलमान भाई मान लेते हैं कि गोवध करना उनका धार्मिक कर्त्तव्य है। जो भी हो, मेरा यह दृढ विश्वास है कि इस समस्याका समाधान केवल तपश्चर्यासे ही हो सकता है। ऐसे अवसरपर गायके लिए प्राण देना हमारी अन्तिम तपश्चर्या होगी।

ऐसी घोर तपश्चर्या करनेका भी सब हिन्दुओंको अधिकार नही है। दूसरोको पापकर्मसे विमुख करनेवालोको स्वय पापकर्मसे मुक्त होना चाहिए। हिन्दू-जगत् गाय और गो-वंशपर बहुत बडा अत्याचार कर रहा है। उसका प्रत्यक्ष प्रमाण हमारी गायोकी वर्त्तमान दशा है। जिनका रक्त-मास सूख गया है, जिनकी चमड़ीके भीतर हड्डीका ढाँचा साफ नजर आता है, जिन्हे पूरी खुराक नही मिलती, जिनपर मनमाना बोझ लाद दिया जाता है और जिन्हे पूंछ मरोडकर या पैने मारकर हाँका जाता है, ऐसे हजारो बैलोको जब मैं देखता हूँ तब मेरा हृदय रोता है, मेरा शरीर काँपने लगता है और मैं सोचता हूँ कि जबतक हम ऐसी घोर हिंसा करनेसे बाज नही आते तबतक हम मुसलमान भाइयोसे क्या कह सकते हैं? हमारी स्वार्थ-बुद्धि इतनी प्रबल है कि गायका सारा दूध दुहते हुए हमें तनिक भी शरम नहीं आती। कलकत्तेकी डेरियोमें तो बछडोको माँके दूधके बिना ही रखा जाता है। वहाँ फूंकेकी क्रियासे गायोका सारा दूध निकाल लिया जाता है। इन डेरियोंके मालिक और व्यवस्थापक सब हिन्दू ही होते हैं और दूध पीनेवालोमें भी बड़ी सख्या हिन्दुओकी ही है। जबतक ऐसी डेरियाँ चलती हैं और वहाँका दूध हम पीते हैं, तबतक हमें मुसलमान भाइयोसे एक शब्द भी कहनेका क्या अधिकार है? यह भी विचारने लायक बात है कि सारे भारतके बडे शहर कसाईखाने बन गये हैं। वहाँ हजारो गायो और बैलोका वध होता है। और अधिकाश अग्रेज भाइयोको मास वहीसे दिया जाता है। इस विषयमें सारा हिन्दू-जगत् चुप है और उस हत्याको बन्द करानेमें वह अपने-आपको असमर्थ मानता है।

जबतक हम ऐसे घोर हत्याकाडको नही रोक पाते, तबतक मुसलमानोके दिलोपर असर डालना या उनसे गायोकी रक्षा कराना मुझे असम्भव-सा मालूम होता है। इसलिए हमारा दूसरा काम अग्रेज भाइयोके बीच आन्दोलन करना है। उसमें हम पशुबलका उपयोग नही कर सकते। अग्रेज भाइयोको भी हमें अपनी तपश्चर्या और नम्रतासे जीतना चाहिए। गोमांसका भक्षण उनके लिए कोई धार्मिक क्रिया नही है। उन्हे समझा पाना इस हदतक ज्यादा आसान होना चाहिए। जब हम उपर्युक्त हिंसाके दोषसे मुक्त हो जायेंगे और अग्रेज भाइयोको गोमास-भक्षण तथा गाय-बैलोकी हत्या न करनेकी बात समझा

सकेंगे, तभी हमे मुसलमान भाइयोसे इस विषयमे कुछ कहनेका अधिकार प्राप्त हो सकेगा। और में विश्वासके साथ कहता हूँ कि जब हम अग्रेज भाइयोको समझा लेंगे, तब हमारे मुसलमान भाई भी हमपर दया करके किसी दूसरी तरहकी कुरबानीसे अपनी धार्मिक रूढ़ि सम्पन्न कर लिया करेंगे। जब हम अपना हिंसा-दोष स्वीकार कर लेंगे, तब हमारी गोशालाओका प्रवन्ध भी बदल जायेगा। तब हम अपनी गोशालाओमे केवल कमजोर गायोको ही नही रखेंगे, वल्कि हृष्ट-पुष्ट गायो और बैलोको भी रखेंगे। वहाँ हम ढोरोकी नस्ल सुधारनेका प्रयत्न करेंगे और शुद्ध दूव-घी आदि भी पैदा कर सकेंगे। यह प्रश्न केवल धार्मिक ही नही है। इसमे हिन्दुस्तानकी आर्थिक उन्नतिकी बात भी आ जाती है। अर्थशास्त्रियोने अकाट्य आँकडे देकर यह सिद्ध कर दिखाया है कि हिन्दुस्तानके बहुतसे ढोर इतने कमजोर है कि कितने ही गाय-बैलोको रखनेमे जो खर्च पडता है, उसकी तुलनामें दूध वहुत कम मिलता है। हम अपनी गोशालाओको अर्थ-शास्त्रके अध्ययन और इस बडी समस्याके समाधानके केन्द्रोमे परिणत कर दें। गोशालाओमे अभी जो अधिक खर्च आता है, उसे हमें जैसे-तैसे पूरा करना पड़ता है। मेरी कल्पनाकी गोशाला आर्थिक दृष्टिसे आत्म-निर्भर होगी। ऐसी गोशालाएँ शहरके भीतर नही होनी चाहिए। शहरके वाहर सौ-दो सौ एकड जमीन लेकर वहाँ हम ऐसी गोशालाएँ स्थापित कर सकते है। उसमे गायोके लिए अनाज और हर प्रकारकी घास आदि पैदा की जा सकती है। और उनके मल-मूत्रसे जो कीमती खाद बनेगा, उसका हम सुन्दर उपयोग कर सकते है। आशा है, आप सव मेरी बातो-पर पूरा ध्यान देंगे। मोतीहारीकी गोरक्षिणी सभाने मेरी उपर्युक्त सलाह स्वीकार की है। अन्तमे मेरी प्रार्थना है कि तदनुसार बेतिया और मोतीहारीकी ये दोनो सस्थाएँ मिलकर इस महत् कार्यको अपने हाथोमे ले लेंगी।

[गुजरातीसे]

गोसेवा

३. पत्र : छगनलाल गांधीको

मोतीहारी
चम्पारन
अक्तूबर १०, १९१७

चि० छगनलाल,

तुम्हारा पत्र मिल गया है। मैंने मान लिया है कि तुम भडौच आओगे। वेस्ट[1] पुस्तकोके लिए शोर मचाये रहते हैं। यदि उनके लिए शब्द-कोष आदि जो भी पुस्तकें

१. अल्बर्ट हेनरी वेस्ट, जिनसे गाधीजीकी मुलाकात सर्वप्रथम जोहानिसवर्गके शाकाहारी उपाहारगृहमें हुई थी। उन्होंने गाधीजीके साथ काम किया और सत्याग्रह आन्दोलनके दौरान जेल भी गये थे। वे फीनिक्स आश्रमसे प्रकाशित **इंडियन ओपिनियन**के मुद्रक थे। बादमें उनकी पत्नी, माँ और बहन भी आश्रममें रहने लगीं थीं।

तुम्हें उचित लगें, उन्हें भेजते रहो तो अच्छा हो। बिक्रीके लिए डॉक्टरकी[1] गुजराती पुस्तक भी वहाँ भेजो। बिक्रीकी रकम चाहे तो वे ही रखें। यहाँ उसकी प्रतियाँ पहुँच गई है।

प्रभुदासकी[2] तबीयत अभी तक क्यों ठीक नहीं हो पाई?

बापूके आशीर्वाद

गांधीजीके स्वाक्षरोंमें गुजरातीमें पोस्टकार्डपर लिखित मूल गुजराती पत्र (जी० डब्ल्यू० ५६४४) से।

सौजन्य छगनलाल गांधी

४. भाषण : बिहार छात्र-सम्मेलनमें[3]

[भागलपुर
अक्तूबर १५, १९१७]

छात्र-सम्मेलनकी इस बैठकका अध्यक्ष-पद मुझे देकर आप लोगोंने मुझे अपने प्रेमसे बाँध लिया है। पिछले पच्चीस वर्षोंसे विद्यार्थियोंके साथ मेरा घनिष्ठ सम्बन्ध रहता आया है। विद्यार्थियोंका पहला परिचय मुझे दक्षिण आफ्रिकामें हुआ था। इंग्लैंडमें भी मैं विद्यार्थियोंसे हमेशा मिलता रहता था।

भारत वापस आनेके बाद मैं विद्यार्थियोंसे जगह-जगह मिलता रहा हूँ। वे मेरे प्रति असीम प्रेम रखते हैं। आज मुझे अध्यक्षका पद देकर और हिन्दीमें व्याख्यान देने और सम्मेलनका काम हिन्दीमें चलानेकी अनुमति देकर आप विद्यार्थियोंने मेरे प्रति अपने प्रेमका परिचय दिया है। यदि मैं आपके इस प्रेमके लायक सिद्ध हो सका और विद्यार्थियों की कुछ सेवा कर सका तो मैं अपनेको कृतार्थ मानूँगा। इस सम्मेलनका काम इस प्रान्तकी भाषामें ही — और वही राष्ट्रभाषा भी है — करनेका निश्चय करके आपने दूरन्देशीसे काम लिया है। इसके लिए मैं आपको बधाई देता हूँ। मुझे आशा है कि आप लोग यह प्रथा जारी रखेंगे।

हमने मातृभाषाका अनादर किया है। उस पापका कड़वा फल हमें जरूर भोगना पड़ेगा। हममें और हमारे घरके लोगोंके बीच कितना ज्यादा व्यवधान पैदा हो गया है, इसके साक्षी इस सम्मेलनमें आनेवाले हम सभी हैं। हम जो-कुछ सीखते हैं वह अपनी माताओंको नहीं समझाते और न समझा सकते हैं। जो शिक्षा हमें मिलती है, उसका प्रचार हम अपने घरमें नहीं करते और न कर सकते हैं। ऐसा दुःखद

१. डॉ० प्राणजीवन मेहता, लन्दनके विद्यार्थी-जीवनसे गांधीजीके मित्र।

२. प्रभुदास गांधी, छगनलाल गांधीके पुत्र।

३. सम्मेलन भागलपुरमें हुआ था और गांधीजीने उसकी अध्यक्षता की थी। मूल भाषण हिन्दीमें रहा होगा किन्तु उसकी रिपोर्ट उपलब्ध नहीं हो सकी। भाषणका प्रस्तुत पाठ महात्मा गांधीनी विचार सृष्टिमें संकलित गुजराती रूपान्तरका हिन्दी अनुवाद है।

परिणाम अग्रेज कुटुम्बोमे कभी नही देखा जाता। इग्लैडमे और दूसरे देशोमे जहाँ शिक्षा मातृभाषामे दी जाती है वहाँ विद्यार्थी स्कूलोमे जो-कुछ पढते है, वह घर आकर अपने-अपने माता-पिताको सुनाते है और घरके नौकर-चाकरो और दूसरे लोगोको भी वह मालूम हो जाता है। इस तरह जो शिक्षा बच्चोको स्कूलमे मिलती है, उसका लाभ घरके लोगोको भी मिल जाता है। हम तो स्कूल-कॉलेजमे जो-कुछ पढते है वह वही छोड आते है। विद्या हवाकी तरह बहुत आसानीसे फैल सकती है। किन्तु जैसे कजूस अपना धन गाडकर रखता है, वैसे ही हम अपनी विद्याको अपने मनमे ही भरे रखते है और इसलिए उसका फायदा औरोको नही मिलता। मातृभाषाका अनादर माँके अनादरके बराबर है। जो मातृभाषाका अपमान करता है, वह स्वदेशभक्त कहलाने लायक नही। बहुत-से लोग ऐसा कहते सुने जाते है कि 'हमारी भाषामे ऐसे शब्द नही, जिनमे हमारे ऊँचे विचार प्रकट किये जा सके।' किन्तु यह कोई भाषाका दोष नही। भाषाको बनाना और बढाना हमारा अपना ही कर्त्तव्य है। एक समय ऐसा था जब अग्रेजी भाषाकी भी यही हालत थी। अग्रेजीका विकास इसलिए हुआ कि अग्रेज आगे बढे और उन्होने भाषाकी उन्नति की। यदि हम मातृभाषाकी उन्नति नही कर सके और हमारा यह सिद्धान्त रहे कि अग्रेजीके जरिये ही हम अपने ऊँचे विचार प्रकट कर सकते है और उनका विकास कर सकते है, तो इसमे जरा भी शक नही कि हम सदाके लिए गुलाम बने रहेगे। जबतक हमारी मातृभाषामे हमारे सारे विचार प्रकट करनेकी शक्ति नही आ जाती और जबतक वैज्ञानिक विषय मातृभाषामे नही समझाये जा सकते, तबतक राष्ट्रको नया ज्ञान नही मिल सकेगा। यह तो स्वयसिद्ध है कि .

१. सारी जनताको नये ज्ञानकी जरूरत है;
२. सारी जनता कभी अंग्रेजी नही समझ सकती;
३. यदि अग्रेजी पढनेवाला ही नया ज्ञान प्राप्त कर सकता है, तो सारी जनताको नया ज्ञान मिलना असम्भव है।

इसका मतलब यह हुआ कि यदि पहली दो बातें सही हो तो जनताका नाश ही हो जायेगा। किन्तु इसमें भाषाका दोष नही। तुलसीदासजी अपने दिव्य विचार हिन्दीमे प्रकट कर सके थे। रामायण-जैसे ग्रन्थ बहुत ही थोडे है। गृहस्थाश्रमी होकर भी सब-कुछ त्याग कर देनेवाले महान् देशभक्त भारत-भूषण पण्डित मदनमोहन मालवीयजीको अपने विचार हिन्दीमें प्रकट करनेमे जरा भी कठिनाई नही होती। पण्डितजीका अग्रेजी भाषण चाँदीकी तरह चमकता हुआ कहा जाता है, किन्तु उनका हिन्दी-भाषण इस तरह चमका है, जैसे मानसरोवरसे निकलती हुई गगाका प्रवाह सूर्यकी किरणोसे सोनेकी तरह चमकता है। मैने कितने ही मौलवियोको धर्मोपदेश करते हुए सुना है। वे अपने गम्भीर विचार भी अपनी मातृभाषामें ही बड़ी आसानीसे प्रकट कर सकते है। तुलसीदासजीकी भाषा सम्पूर्ण है, अमर है। इस भाषामें हम अपने विचार प्रकट न कर सके तो दोष हमारा ही है।

ऐसा होनेका कारण स्पष्ट है हमारी शिक्षाका माध्यम अग्रेजी है। इस भारी दोषको दूर करनेमें सब मदद कर सकते है। मुझे लगता है कि विद्यार्थीगण भी सरकारसे विनयपूर्वक यह बात कह सकते है। साथ ही विद्यार्थियोके पास तुरन्त प्रारभ करने

लायक काम यह भी है कि वे जो-कुछ स्कूलमें पढें, उसका अनुवाद हिन्दीमें करते रहें, जहाँतक हो सके उसका प्रचार घरमें करे और आपसके व्यवहारमें मातृभाषाका ही उपयोग करनेकी प्रतिज्ञा कर ले। एक बिहारी दूसरे बिहारीके साथ अग्रेजी भाषामें पत्र-व्यवहार करे, यह मेरे लिए तो असह्य है। मैंने लाखो अग्रेजोको बातचीत करते सुना है। वे दूसरी भाषाएँ जानते है, किन्तु मैंने दो अग्रेजोको आपसमें पराई भाषामें बोलते नही सुना। जो अत्याचार हम भारतमें करते हैं, उसका उदाहरण दुनियाके इतिहासमें कभी कही नही मिलेगा।

एक वेदान्ती कवि लिख गया है कि जो शिक्षा विचार करना नही सिखाती वह व्यर्थ है। किन्तु ऊपर बताये हुए कारणोसे विद्यार्थियोका जीवन बहुत-कुछ विचारशून्य दिखाई देता है। विद्यार्थी तेजहीन हो गये हैं, उनमें ताजगी दिखाई नही देती और वे अधिकतर निरुत्साही दृष्टिगोचर होते हैं।

मुझे अग्रेजी भाषासे वैर नही है। इस भाषाका भण्डार अटूट है। यह राजभाषा है और ज्ञानकी निधिसे भरी-पूरी है। फिर भी मेरी यह राय है कि हिन्दुस्तानके सब लोगोको इसे सीखनेकी जरूरत नही। किन्तु इस बारेमें मैं यहाँ ज्यादा नही कहना चाहता। विद्यार्थी अग्रेजी पढ रहे है, और जबतक दूसरी योजना प्रचलित नही होती·और आज की शालाओमें परिवर्तन नही होता, तबतक विद्यार्थियोके लिए दूसरा कोई उपाय नही। इसलिए मैं मातृभाषाके इस बडे विषयको यही समाप्त कर देता हूँ। मैं इतनी ही प्रार्थना करूँगा कि आपसके व्यवहारमें और जहाँ-जहाँ हो सके वहाँ सब लोग मातृ-भाषाका ही उपयोग करे; और विद्यार्थियोके सिवा जो महाशय यहाँ आये हैं, वे मातृभाषाको शिक्षाका माध्यम बनानेका भगीरथ प्रयत्न करे।

जैसा मैंने ऊपर कहा है, अधिकतर विद्यार्थी निरुत्साही दिखाई देते हैं। बहुत-से विद्यार्थियोने मुझसे सवाल किया है कि 'मुझे क्या करना चाहिए? मैं देश-सेवा किस तरह कर सकता हूँ? आजीविकाके लिए मुझे क्या करना ठीक है?' मुझे मालूम हुआ है कि आजीविकाके लिए विद्यार्थियोको बडी चिन्ता रहा करती है। इन प्रश्नोका उत्तर सोचनेसे पहले यह विचार करना जरूरी है कि शिक्षाका उद्देश्य क्या है? हक्सले-ने कहा है कि शिक्षाका उद्देश्य चरित्र-निर्माण है। भारतके ऋषि-मुनियोने कहा है कि वेद आदि सारे शास्त्र जाननेपर भी यदि कोई आत्माको न पहचान सके, सब बन्धनोसे मुक्त होनेके लायक न बन सके तो उसका ज्ञान बेकार है। दूसरा वचन यह है कि जिसने आत्माको जान लिया, उसने सब-कुछ जान लिया। अक्षरज्ञानके बिना भी आत्म-ज्ञान होना सम्भव है। पैगम्बर मुहम्मद साहबने अक्षरज्ञान नही पाया था। ईसा मसीहने किसी स्कूलमें शिक्षा नही ली थी। किन्तु यह कहना कि इन महात्माओको आत्मज्ञान नही हुआ था, धृष्टता ही होगी। वे हमारे विद्यालयोमें परीक्षा देने नही आये थे। फिर भी हम उन्हे पूज्य मानते हैं। विद्याका सब फल उन्हे मिल चुका था। वे महात्मा थे। उनकी देखा-देखी यदि हम स्कूल-कॉलेज छोड़ दें तो हम कहीके न रहें। किन्तु हमें भी अपनी आत्माका ज्ञान चारित्र्यसे ही मिल सकता है। चारित्र्य क्या है? सदा-चारकी निशानी क्या है? सदाचारी पुरुष सत्य, अहिंसा, ब्रह्मचर्य, अपरिग्रह, अस्तेय,

निर्भयता आदि व्रतोका पालन करनेका प्रयत्न करता रहता है। वह प्राण छोड़ देगा, किन्तु सत्यको कभी न छोड़ेगा। वह स्वयं मर जायेगा, परन्तु दूसरोको नही मारेगा। वह स्वयं दु.ख उठा लेगा, परन्तु दूसरेको दु.ख नही देगा। अपनी स्त्रीके प्रति भी भोग-दृष्टि न रखकर उसके साथ मित्रकी तरह रहेगा। इस तरह सदाचारी ब्रह्मचर्यका पालन कर शरीरके सत्त्वको भरसक बचानेका प्रयत्न करता है। वह चोरी नही करता, रिश्वत नही लेता। वह अपना और दूसरोका समय खराब नही करता। वह अकारण धन इकट्ठा नही करता। वह ऐश-आराम नही बढाता और सिर्फ शौककी खातिर निकम्मी चीजें काममें नही लाता; सादगीमें ही सन्तोष मानता है। यह पक्का विचार रखकर कि 'मै आत्मा हूँ, शरीर नही हूँ और आत्माको मारनेवाला दुनियामें पैदा नही हुआ,' वह आधि, व्याधि और उपाधिका डर छोड़ देता है और चक्रवर्ती सम्राटोंसे भी नही दबता; किन्तु निडर होकर काम करता चला जाता है।

यदि हमारे विद्यालयोसे ऊपर कहे हुए परिणाम न निकल सके, तो इसमें विद्यार्थी, शिक्षा और शिक्षक तीनोका दोष होना चाहिए। किन्तु चरित्रकी कमी पूरी करनेका काम तो विद्यार्थियोके ही हाथमें है। यदि वे चरित्र-निर्माण नही करना चाहते, तो शिक्षक या पुस्तकें वह चीज नही दे सकते। इसलिए जैसा मैंने ऊपर कहा है शिक्षाका उद्देश्य समझना जरूरी है। चरित्रवान् बननेकी इच्छा रखनेवाला विद्यार्थी किसी भी पुस्तकसे चरित्रका पाठ ले लेगा। तुलसीदासजीने कहा है:

जड़-चेतन, गुण-दोषमय, विश्व कीन्ह करतार।
सन्त-हंस गुण गर्हाहि पय, परिहरि वारि विकार॥

रामचन्द्रजीकी मूर्तिके दर्शन करनेकी इच्छा रखनेवाले तुलसीदासजीको कृष्णकी मूर्ति रामके रूपमें दिखाई दी। हमारे कितने ही विद्यार्थी, यदि विद्यालयका नियम हो तो उसे पालनेके लिए, बाइबिलके वर्गमें जाते है, फिर भी बाइबिलके ज्ञानसे अछूते रहते हैं। दोष निकालनेकी नीयतसे गीता पढनेवालेको गीतामें दोष मिल जायेंगे। मोक्ष चाहनेवालेको गीता मोक्षका सबसे अच्छा साधन बताती है। कुछ लोगोको कुरान शरीफमें सिर्फ दोष-ही-दोष दिखाई देते है; दूसरे उसे पढकर व मनन करके इस संसार-सागरसे पार होते है। किन्तु मुझे डर है कि बहुत-से विद्यार्थी शिक्षाके उद्देश्यपर विचार ही नही करते। वे पढनेका चलन है, इसी कारण स्कूल जाते है। कुछ आजीविका या नौकरीके हेतुसे जाते हैं। मेरी तुच्छ बुद्धिके अनुसार शिक्षाको आजीविकाका साधन समझना नीच वृत्ति कही जायेगी। आजीविकाका साधन शरीर है और पाठशाला चरित्र-निर्माणकी जगह है। उसे शरीरकी जरूरतें पूरी करनेका साधन समझना चमड़ेकी जरा-सी रस्सीके लिए भैंसको मारनेके बराबर है। शरीरका पोषण शरीर द्वारा ही होना चाहिए। आत्माको उस काममें कैसे लगाया जा सकता है? 'तू अपनी रोटी अपने पसीनेसे कमा'—यह ईसा मसीहका महावाक्य है। श्रीमद् भगवद्-गीतासे भी यही ध्वनि निकलती जान पड़ती है। इस दुनियामें ९९ फीसदी लोग इस नियमके अधीन रहते है और निडर बन जाते है। जिसने दाँत दिये है वही चबेना भी देगा, यह सच्ची बात है। किन्तु यह आलसीके लिए नही कही गई है। विद्यार्थि-

र्थियोंको शुरूमें ही यह सीख लेना जरूरी है कि उन्हें अपनी आजीविका अपने बाहुबलसे ही कमानी है। उसके लिए मजदूरी करनेमें शर्म नहीं आनी चाहिए। इससे मेरा यह मतलब नहीं कि हम सब हमेशा कुदाली ही चलाया करें। परन्तु यह समझनेकी जरूरत है कि दूसरा धन्धा करते हुए भी आजीविकाके लिए कुदाली चलानेमें जरा भी बुराई नहीं और हमारे मजदूर भाई हमसे नीचे नहीं हैं। इस सिद्धान्तको मानकर, इसे अपना आदर्श समझकर, आदमी किसी भी धन्धेमें पड़े, तो उसके काम करनेके ढंगमें शुद्धता और असाधारणता होगी। वह लक्ष्मीका दास नहीं बनेगा, लक्ष्मी उसकी दासी बनकर रहेगी। यदि यह विचार सही हो तो विद्यार्थियोंको मजदूरी करनेकी आदत डालनी पड़ेगी। ये बातें मैंने धन कमानेके उद्देश्यसे शिक्षा लेनेवालोंके लिए कही हैं।

जो विद्यार्थी शिक्षाका उद्देश्य सोचे बिना पाठशाला जाता है, उसे इसका उद्देश्य समझ लेना चाहिए। वह आज ही निश्चय कर सकता है कि 'मैं आजसे पाठशालाको चरित्र-निर्माणका साधन समझूँगा।' मुझे पूरा भरोसा है कि ऐसा विद्यार्थी एक महीनेमें अपने चरित्रमें जबरदस्त परिवर्तन कर डालेगा और उसके साथी भी यह परिवर्तन महसूस करेंगे। यह शास्त्रका वचन है कि हम जैसे विचार करते हैं वैसे ही बन जाते हैं।

बहुत-से विद्यार्थी ऐसा मानते हैं कि शरीरके लिए ज्यादा प्रयत्न करना ठीक नहीं। किन्तु शरीरके लिए व्यायाम बहुत जरूरी है। जिस विद्यार्थीके पास शरीर-सम्पत्ति नहीं वह क्या कर सकेगा? जैसे दूध कागजके बरतनमें नहीं रह सकता, वैसे ही शिक्षारूपी दूधका विद्यार्थियोंके कागज जैसे शरीरमें से निकल जाना सम्भव है। शरीर आत्माका निवास स्थान होनेके कारण तीर्थ जैसा पवित्र है। उसकी रक्षा करनी चाहिए। सुबह-तड़के डेढ़ घंटा और शामको डेढ घंटा साफ हवामें नियमसे और उत्साहके साथ घूमनेसे शरीरमें शक्ति बढ़ती है और मन प्रसन्न रहता है। और ऐसा करनेमें लगाया हुआ समय बरबाद नहीं होता। ऐसे व्यायाम और आरामसे विद्यार्थीकी बुद्धि तेज होगी और वह सब बातें जल्दी याद कर लेगा। मुझे लगता है कि गेंद-बल्ला या बॉल-बैट इस गरीब देशके लिए ठीक नहीं। हमारे देशमें निर्दोष और कम खर्चवाले बहुतसे खेल हैं।

विद्यार्थीका जीवन निर्दोष होना चाहिए। जिसकी बुद्धि निर्दोष है, उसे ही शुद्ध आनन्द मिल सकता है। उसे दुनियामें आनन्द लेनेको कहना उसका आनन्द छीन लेनेके बराबर है। जिसने यह निश्चय कर लिया हो कि मुझे ऊँचा दरजा पाना है, उसे वह मिल जाता है। निर्दोष बुद्धिसे रामचन्द्रने चन्द्रमाकी इच्छा की तो उन्हें चन्द्रमा मिल गया।

एक तरहसे सोचनेपर जगत् मिथ्या मालूम होता है और दूसरी तरहसे देखनेपर वह सत्य मालूम होता है। विद्यार्थियोंके लिए तो जगत् है ही, क्योंकि उन्हें इसी जगत्में पुरुषार्थ करना है। रहस्य समझे बिना जगत्को मिथ्या कहकर मनमानी करनेवाला और जगत्को छोड़ देनेका दावा करनेवाला सन्यासी भले ही हो, किन्तु वह मिथ्याज्ञानी है।

अब मैं धर्मकी बातपर आ गया। जहाँ धर्म नहीं वहाँ विद्या, लक्ष्मी, स्वास्थ्य आदिका भी अभाव होता है। धर्मरहित स्थिति बिलकुल शुष्क होती है, शून्य होती है। हम धर्मकी शिक्षा खो बैठे हैं। हमारी पढाईमें धर्मको जगह नहीं दी गई। यह तो

बिना दूल्हेकी बरात-जैसी बात है। धर्मको जाने बिना विद्यार्थी निर्दोष आनन्द नही ले सकते। यह आनन्द लेनेके लिए शास्त्रोका पढना, शास्त्रोका चिन्तन करना और विचारके अनुसार कार्य करना जरूरी है। सुबह उठते ही सिगरेट पीनेसे या निकम्मी बातचीत करनेसे न अपना भला होता है और न दूसरोका भला होता है। नजीरने कहा है कि चिड़ियाँ भी चूँ-चूँ करके सुबह-शाम ईश्वरका नाम लेती है, किन्तु हम तो लम्बी तानकर सोये रहते हैं। किसी भी तरह धर्मकी शिक्षा पाना विद्यार्थीका कर्त्तव्य है। पाठशालाओमे धर्मकी शिक्षा दी जाये या न दी जाये, किन्तु इस समय यहाँ आये हुए विद्यार्थियोसे मेरी प्रार्थना है कि वे अपने जीवनमें धर्मका तत्त्व दाखिल करे। धर्म क्या है? धर्मकी शिक्षा किस तरहकी हो सकती है? इन बातोका विचार इस जगह नही हो सकता। परन्तु इतनी-सी व्यावहारिक सलाह अनुभवके आधारपर देता हूँ कि तुम 'रामचरितमानस' के और 'भगवद्गीता' के भक्त बनो। तुम्हारे पास 'मानस' रूपी रत्न पडा है; उसे ग्रहण कर लो। किन्तु इतना याद रखना कि इन दो ग्रन्थोकी पढाई धर्मको समझनेके लिए करनी है। इन ग्रन्थोके लिखनेवाले ऋषियोका ध्येय इतिहास लिखना नही था, बल्कि धर्म और नीतिकी शिक्षा देना था। करोडो आदमी इन ग्रन्थोको पढते है और अपना जीवन पवित्र करते है। वे निर्दोष बुद्धिसे इनका अध्ययन करते है और उससे निर्दोष आनन्द लेकर इस ससारमें विचरते है। उनके मनमें स्वप्नमें भी यह शका नही उठती कि राम थे या नही, उन्होने जिस तरह रावणका वध किया उस तरह हम भी अपने शत्रुका वध कर सकते है या नही। वह तो शत्रुको सम्मुख देखते हुए भी रामकी सहायताकी याचना करके निर्भय रहता है। 'रामायण' के प्रणेता तुलसीदासके पास तो शस्त्रके रूपमें एक दया ही थी। तुलसीदास किसीका सहार नही करना चाहते थे। जो उत्पन्न करता है वही नाश कर सकता है। राम ईश्वर थे, उन्होने रावणको उत्पन्न किया था, उन्हे उसका सहार करनेका अधिकार भी था। जब हम ईश्वरका पद प्राप्त करेगे तब सोच लेगे कि सहारका अधिकार हमें है या नही। इन महान् ग्रन्थोके विषयमें मैने ये कुछ शब्द कहनेका साहस इसलिए किया है कि एक समय मैं स्वय संशयात्मा था। और मुझे अपने जीवनके नष्ट हो जानेका भय था। मैं उस अवस्थासे निकलकर श्रद्धालु हो सका हूँ। इन पुस्तकोने मेरे ऊपर जो प्रभाव डाला है, उसका वर्णन करना मुझे उचित लगा। मुसलमान विद्यार्थियोके लिए 'कुरान शरीफ' सबसे ऊँचा ग्रन्थ है। उन्हे भी मै इस ग्रन्थका धर्मभावसे अध्ययन करनेकी सलाह देता हूँ। 'कुरान शरीफ' का रहस्य जानना चाहिए। मेरा यह भी विचार है कि हिन्दू-मुसलमानोको एक-दूसरेके धर्म-ग्रन्थोको विनयके साथ पढना और समझना चाहिए।

इस रमणीय विषयको छोडकर मैं फिर प्रकृत विषयपर आता हूँ। प्रश्न पूछा जाता है कि विद्यार्थियोका राजनैतिक मामलोमें भाग लेना ठीक है या नही? मैं कारण बताये बिना इस विषयमें अपनी राय बताता हूँ। राजनैतिक क्षेत्रके दो भाग है: एक सिर्फ शास्त्रका और दूसरा शास्त्रपर अमल करनेका। विद्यार्थियोके लिए शास्त्रके प्रदेशमे जाना जरूरी है, किन्तु उसके व्यवहारके प्रदेशमें उतरना हानिकारक है। विद्यार्थी शास्त्रकी शिक्षा लेने या राजनीति सीखनेके ध्येयसे राजनीतिक सभाओमें, काग्रेसमें जा

सकते हैं। ऐसे सम्मेलन उन्हे पदार्थपाठ देनेवाले सावित होते है। उनमें जानेकी उन्हे पूरी आजादी होनी चाहिए और जो प्रतिवन्ध अभी लगाया गया है उसे दूर करानेका पूरा प्रयत्न होना चाहिए। ऐसी सभाओमें विद्यार्थी बोल नही सकते, राय नही दे सकते। किन्तु यदि पढाईके काममें रुकावट न होती हो तो वे स्वयसेवकका काम कर सकते हैं। मालवीयजीकी सेवा करनेका अवसर कौन विद्यार्थी छोड सकता है? विद्यार्थियोको दलवन्दीसे दूर रहना चाहिए। तटस्थ या निष्पक्ष रहकर जनताके नेताओके प्रति पूज्य भाव रखना चाहिए। उनके गुण-दोषोकी तुलना करनेका काम उनका नही। विद्यार्थी तो गुणोको ग्रहण कर लेनेवाले होते हैं; वे गुणोकी पूजा करते है।

वडोको पूज्य समझकर उनकी वातोका आदर करना विद्यार्थियोका धर्म है। यह वात ठीक है। जिसने आदर करना नही सीखा उसे आदर नही मिलता। धृष्टता विद्यार्थियोको शोभा नही देती। इस वारेमें भारतमें विचित्र हालत पैदा हो गई है। वडे वडप्पन छोड़ते दिखाई दे रहे हैं या अपनी मर्यादा नही समझते। ऐसे समय विद्यार्थी क्या करे? मैंने ऐसी कल्पना की है कि विद्यार्थियोमें धर्मवृत्ति होनी चाहिए। धर्मपर चलनेवाले विद्यार्थियोके सामने धर्मसकट आ पड़े तो उन्हे प्रह्लादको याद करना चाहिए। इस वालकने जिस समय और जिस हालतमें पिताकी आज्ञाको वडे आदरके साथ तोडा, वैसे समय और वैसी हालतमें हम भी आदरके साथ उस प्रकारके वडोकी आज्ञा माननेसे इनकार कर सकते हैं। इस मर्यादाके वाहर जाकर किया हुआ अनादर दोषमय है। वडोका अपमान करनेमें राष्ट्रका नाश है। वड़प्पन सिर्फ उम्रमें ही नही, उम्रके कारण मिले हुए ज्ञान, अनुभव और चतुराईमें भी है। जहाँ ये तीनो चीजें न हो, वहाँ सिर्फ उम्रके कारण वडप्पन रहता है। किन्तु सिर्फ उम्रकी ही पूजा कोई नही करता।

ऐसा प्रश्न पूछा जाता है कि विद्यार्थी किस प्रकारकी देशसेवा कर सकता है? इसका सीधा उत्तर यह है कि विद्यार्थी अच्छी तरह विद्या प्राप्त करे और ऐसा करते हुए तन्दुरुस्ती वनाये रखे और देशके लिए विद्याध्ययन करनेका आदर्श सामने रखे। मुझे विश्वास है कि ऐसा करके विद्यार्थी पूरी तरह देशसेवा करता है। विचारपूर्वक जीवन व्यतीत करके और स्वार्थ छोडकर परोपकार करनेका ध्यान रखकर हम मेहनत किये विना भी वहुत-कुछ काम कर सकते है। ऐसा एक काम मैं वताना चाहता हूँ। तुमने रेलके यात्रियोकी तकलीफोके वारेमें मेरा पत्र अखवारोमें पढा होगा। मै यह मानता हूँ कि तुममें से ज्यादातर विद्यार्थी तीसरे दरजेमें सफर करनेवाले होगे। तुमने देखा होगा कि मुसाफिर गाडीमें थूकते है; पान-तम्वाकू चवाकर जो छूंछ निकलती है उसे भी वही थूकते है, केले-सन्तरे वगैरा फलोके छिलके और जूठन भी गाडीमें ही फेंकते है, पाखानेका भी सावधानीसे उपयोग नही करते, उसे भी खराव कर डालते है; दूसरोका खयाल किये विना सिगरेट-वीड़ी पीते है। जिस डिब्वेमें हम वैठते हैं, उस डिब्वेके मुसाफिरोको आप गाडीमें गन्दगी करनेसे होनेवाली हानियाँ समझा सकते हैं। ज्यादातर मुसाफिर विद्यार्थियोका आदर करते हैं और उनकी वात सुनते है। लोगोको सफाईके नियम समझानेका वहुत अच्छा यह मौका छोड नही देना चाहिए। स्टेशनपर खानेकी जो चीजें वेची जाती है वे गन्दी होती हैं। ऐसी गन्दगी मालूम हो तो विद्यार्थियोका कर्त्तव्य है कि वे ट्रैफिक मैनेजरका ध्यान उस तरफ खीचें। ट्रैफिक मैनेजर

भले ही जवाब न दे; किन्तु पत्र भी हिन्दी भाषामे लिखना चाहिए। इस तरह बहुतसे पत्र जायेंगे तो ट्रैफिक मैनेजरको विचार करना पडेगा। यह काम आसानीसे किया जा सकता है, और फिर भी इसका नतीजा बड़ा निकल सकता है।

मै तम्बाकू और पान खानेके बारेमे बोला हूँ। मेरी नम्र रायमें तम्बाकू व पान खानेकी आदत खराब और गन्दी है। हम सब स्त्री-पुरुष इस आदतके गुलाम हो गये हैं। इस गुलामीसे हमें छूटना चाहिए। कोई अनजान आदमी भारतमें आ पहुँचे, तो उसे जरूर ऐसा लगेगा कि हम दिन-भर कुछ-न-कुछ खाते रहते है। सम्भव है पानमे अन्नको पचानेका थोडा-बहुत गुण हो, किन्तु नियमसे खाया हुआ अन्न पान वगैराकी मददके बिना पच सकता है। नियमके साथ खानेसे पानकी जरूरत नही रहती। पानमे कोई स्वाद भी नही। जरदा भी जरूर छोडना चाहिए। विद्यार्थियोको सदा सयम पालना चाहिए। तम्बाकू पीनेकी आदतका भी विचार करना जरूरी है। इस मामलेमें हमारे शासकोने हमारे सामने बडा बुरा उदाहरण रखा है। वे जहाँ-तहाँ सिगरेट पिया करते हैं। उसके कारण हम भी उसे फैशन समझकर मुँहको चिमनी बना डालते है। यह बतानेके लिए बहुत-सी पुस्तके लिखी गई हैं कि तम्बाकू पीनेसे नुकसान होता है। ईसाई कहते है कि जिस समय जनतामे स्वार्थ, अनीति, दुर्व्यसन फैल जायेंगे, उस समय ईसा मसीह फिर अवतार लेगें। हम ऐसे समयको कलियुग कहते है। इसमे कितना मानने लायक है, इसका मै विचार नही करता। फिर भी मुझे मालूम होता है कि शराब, तम्बाकू, कोकीन, अफीम, गाँजा, भाँग आदि व्यसनोसे दुनिया बहुत दुःख पा रही है। इस जालमें हम सब फँस गये है, इसलिए हम उसके बुरे नतीजोका ठीक-ठीक अन्दाज नही लगा सकते। मेरी प्रार्थना है कि आप विद्यार्थीगण ऐसे व्यसनोसे दूर रहे।

यह इस सम्मेलनका सत्रहवाँ अधिवेशन है। पिछले अधिवेशनोके सभापतियोके भाषण मुझे भेजे गये थे। मै उन्हे पढ गया हूँ। इन भाषणोके आयोजनका उद्देश्य क्या है? अगर उद्देश्य यह है कि तुम उनसे कुछ सीखो तो इस बातका विचार करके देखना कि तुमने क्या सीखा है? किन्तु यदि उनके आयोजनका उद्देश्य अग्रेजी शब्दोकी सुन्दर रचना सुननेका ही हो तो मै कहूँगा कि मुझे आपपर दया आती है। मैं तो ऐसा मानता हूँ कि भाषणोका उद्देश्य ज्ञान प्राप्त करके उसके अनुसार बरताव करना है। तुममें से कितने विद्यार्थियोने विदुषी एनी बेसेंटकी सलाह मानकर देशी पोशाक पसन्द की, खान-पान सादा बनाया और गन्दी बातें छोडी? प्रोफेसर यदुनाथ सरकार[1] की सलाहके मुताबिक छुट्टीके दिनोमे गरीबोको मुफ्त पढानेका काम कितने विद्यार्थियोने किया? इस तरहके बहुत-से सवाल पूछे जा सकते हैं। इनका जवाब मैं नही माँगता। आप स्वय अपनी अन्तरात्माको इनका जवाब दें।

तुम्हारे ज्ञानकी कीमत तुम्हारे कामोसे होगी। सैकड़ो किताबें दिमागमें भर लेनेसे कुछ लाभ मिल सकता है, किन्तु उसकी तुलनामे कामकी कीमत कई गुना ज्यादा है। दिमागमें भरे हुए ज्ञानकी कीमत सिर्फ उसके अनुसार किये गये कामके बराबर ही है। बाकीका सब ज्ञान दिमागके लिए व्यर्थका बोझ है। इसलिए मेरी तो सदा यही

१. प्रसिद्ध इतिहासकार और लेखक।

प्रार्थना है और यही आग्रह है कि तुम जैसा पढो और समझो, वैसा ही आचरण करो। वैसा करनेमें ही उन्नति है।

[गुजरातीसे]

महात्मा गांधीनी विचारसृष्टि

५. पत्र : मगनलाल गांधीको

मोतीहारी
मगलवार [अक्तूबर १६, १९१७][1]

चि० मगनलाल,[2]

चिताएँ[3] देखकर तुम क्षण-भरके लिए विचलित हो उठे, इसमें आश्चर्यकी कोई बात नही। यदि लोग नियमानुसार सयमपूर्वक रहें तो मृत्यु भी समयपर आये तथा चिताएँ स्वाभाविक लगने लगें। आंधी चलनेपर जब कच्चे फल टूटकर गिरने लगते हैं तब हम विचलित हो उठते हैं। पके फलोके गिरनेसे हमें सन्तोष होता है। यही बात मानव-जीवनके साथ भी है। प्लेग आदि भयकर तूफानोके आनेपर जब लोगोकी आकस्मिक मृत्यु होने लगती है, तब हम दुःखी हो उठते हैं। जहाँ ऐसा न हो वहाँ सतयुग है। मृत्युसे भय न हो, ऐसा युग लाना हमारा काम है। यदि हम जितना चाहिए उतना प्रयत्न करे तो हमारे लिए सतयुग आ गया समझो। हमें मौतके लिए तैयार रहकर अपना जीवन निर्भय बिताना चाहिए। ऐसे जीवनकी शिक्षा देना ही आश्रमका उद्देश्य है। तुम सब बहुत बडा काम कर रहे हो। तम्बूमें रहकर कठिनाइयाँ झेलना अच्छा है। बँगलेमें पडे रहना होता तो हम सबको नीचा देखना पडता। तम्बूमें रहनेसे तुम सबके जीवनका सच्चा निर्माण हो रहा है। वहाँ तुम शिक्षा प्राप्त कर रहे हो, लोगोके सामने उदाहरण प्रस्तुत कर रहे हो, प्रकृतिसे मुकाबला करना सीख रहे हो। ऐसा जीवन जो चाहे बिता सकता है।

मैं मजेमें हूँ। भड़ौचमें काम पूरा करनेके बाद ही मैं आश्रम आ सकूँगा।

बापूके आशीर्वाद

गांधीजीके स्वाक्षरोंमें मूल गुजराती पत्र (सी० डब्ल्यू० ५७१८) से।
सौजन्य : राधाबेन चौधरी

१. गांधीजीकी भड़ौंच यात्राके उल्लेखसे प्रतीत होता है कि यह पत्र उनके १९ अक्तूबर, १९१७को भड़ौंच रवाना होनेसे पहले ही लिखा गया था।

२. छगनलाल गांधीके भाई और गांधीजीके निकट-सहयोगी।

३. अहमदाबादके समीप साबरमती नदीके किनारे गांधीजीने जून, १९१७ में साबरमती आश्रमकी स्थापना की थी। इसके एक ओर जेलखाना और दूसरी ओर श्मशान घाट था। श्री मगनलालके पत्रमें यहींकी चिताओंका उल्लेख रहा होगा।

६. भाषण: व्यापारियों द्वारा आयोजित स्वागत-समारोहमें[1]

भड़ौंच

[अक्तूबर १९, १९१७ के बाद]

व्यापारियोके पास बुद्धि तथा धन आदि तो होते ही है; इनके बिना उनका काम ही नही चल सकता। पर अब [इसके साथ-साथ] उन लोगोमे देश-भक्तिकी प्रबल भावना भी होनी चाहिए। देश-भक्ति धर्मकी दृष्टिसे भी आवश्यक है। यदि देश-भक्तिकी भावना धार्मिक वृत्तिसे उद्भूत हो, तो उसका स्वरूप परम तेजस्वी होगा। इसलिए यह आवश्यक है कि व्यापारी-वर्गमें देश-प्रेमका भाव जगाया जाये।

व्यापारी लोग आजकल सार्वजनिक कामोमे पहलेकी अपेक्षा अधिक हिस्सा लेते है। यदि वे देश-भक्तिकी भावनासे प्रेरित होकर राजनैतिक हलचलोमे भी हाथ बँटाने लगे तो स्वराज्यको हाथपर धरे आँवलेके समान सहज प्राप्य समझिए। आप लोगोमें से कुछ सोचते होगे कि यह कैसे हो सकता है। किन्तु मै दावेके साथ कह सकता हूँ कि जैसे ही व्यापारी-वर्गके मनमे देश-भक्तिकी भावनाने घर किया कि हमे स्वराज्य प्राप्त हुआ।

स्वराज्य-प्राप्तिकी चाबियोमे सोनेकी चावी तो स्वदेशीका व्रत[2] ही है। अपने देशमे लोगोसे स्वदेशी-व्रतका पालन करवाना व्यापारियोके हाथमे है, और व्यापारी ही इसे लोक-प्रिय भी बना सकते है। आपसे नम्र निवेदन है कि आप लोग इस कार्यको एक बार अपने हाथमें ले तो फिर देखेगे कि आप कैसे-कैसे आश्चर्यजनक काम कर सकते है।

ऐसा प्रतीत होते हुए भी मुझे दु:खके साथ कहना पड़ता है कि इस देशमें स्वदेशीके चलन और आन्दोलनका सत्यानाश व्यापारी-वर्गने ही किया है। वे देशी मालके बदले लोगोके सामने विदेशी माल पेश करते है और भाव बढाते चले जाते है। अभी हालमे लोगोने सरकारसे बगालमें भाव बढाये जानेके बारेमे शिकायते की है और उनमे से एक शिकायत गुजरातके विरुद्ध भी है। कहा गया है कि धोतियोका दाम बहुत अधिक बढ गया है। ये धोतियाँ वहाँ गुजरातसे भेजी जाती है। आप पैसा कमाये, लेकिन सही तरीकेसे, बुरे तरीकोसे नही। बेईमानीका सहारा कभी नही लेना चाहिए।

व्यापारी-वर्ग ही भारतकी शक्ति है। यह शक्ति सैन्य-शक्तिसे भी अधिक है। युद्धकी जड भी व्यापार है और युद्धकी कुजी भी व्यापारी-वर्ग ही है। पैसा व्यापारी लोग ही जुटाते है और उसीके बलपर सेना खडी की जाती है। इग्लैण्ड और जर्मनीकी शक्तिका आधार वहाँके व्यापारी-वर्ग ही है। किसी भी देशकी समृद्धि उसके व्यापारी-वर्गपर ही निर्भर करती है। मुझे व्यापारी-वर्गसे अभिनन्दन-पत्र मिला। इसे मै अच्छा

१. अभिनन्दनपत्रके उत्तरमें।

२. विदेशी वस्तुओंका बहिष्कार करनेका यह आन्दोलन बगालमें १९०५ में आरम्भ हुआ था; देखिए खण्ड ५, पृष्ठ ९७।

शकुन मानता हूँ। जब-कभी मुझे भडौचका स्मरण होगा तब मैं आने-जानेवालोसे यह बात पूछूँगा कि जिन व्यापारियोने मुझे अभिनन्दन-पत्र दिया था, उनमें सच्ची आस्था और स्वदेश-प्रेम है या नही। यदि मुझे निराशाजनक उत्तर मिलेगा तो मैं समझूँगा कि भारतमें अभिनन्दन-पत्र देनेका जो चलन हो गया है मुझे भी उसीके प्रवाहमें पड़कर मानपत्र दे दिया गया था।[1]

[गुजरातीसे]

गुजराती, २८-१०-१९१७

७. भाषण : द्वितीय गुजरात शिक्षा सम्मेलनमें[2]

भड़ौच

अक्तूबर २०, १९१७

भाषण आरम्भ करनेसे पूर्व गांधीजीने उपस्थित जनसमुदायसे क्षमा-याचना करते हुए कहा :

चूँकि देर हो गई है, इसलिए अपना भाषण पढूँगा तो सभा निर्धारित समयसे अधिक देर तक चलेगी। फिर भी मैं अपना भाषण पढ रहा हूँ, क्योंकि यहाँ उपस्थित मेरे मित्रोका यही आग्रह है। भाषण तैयार करते हुए जो-कुछ कहना था उसे सक्षेपमें कहनेकी अधिकतम सावधानी मैंने रखी है, तिसपर भी, जितना मैं चाहता था वह उससे कुछ लम्बा हो गया है। मुझे उम्मीद है कि यदि भाषण पढनेमें मुझे निश्चित समयसे कुछ अधिक समय लग जाये तो आप क्षमा करेंगे।

इसके बाद गांधीजीने अपने छपे हुए भाषणको पढ़ा :

भाइयो और बहनो,

आपने मुझे इस सम्मेलनका अध्यक्ष बनाया है, इसके लिए मैं आप सबका कृतज्ञ हूँ। मैं जानता हूँ कि इस पदको सुशोभित करने लायक विद्वत्ता मुझमें नही है। मुझे इस बातका भी ध्यान है कि मैं देशसेवाके दूसरे क्षेत्रोमें जो हिस्सा लेता हूँ, मैं उससे इस पदके योग्य नही हो जाता। मैं इसके योग्य एक ही कारणसे हो सकता हूँ, और वह है गुजराती भाषाके प्रति मेरा प्रेम। मेरी आत्मा कहती है कि गुजरातीके प्रेमकी होडमें पहले दरजेसे कममें मुझे सन्तोष नही हो सकता, और उसी मान्यताके कारण मैंने जिम्मेदारीका यह पद स्वीकार किया है। मुझे आशा है कि जिस उदार वृत्तिसे आपने मुझे यह पद दिया है, उसी उदार वृत्तिसे आप मेरे दोषोको दरगुजर करेंगे, और इस काममें, जो जितना आपका है उतना ही मेरा भी है, पूरी मदद देंगे।

१. इस भाषणका मिलान **स्पीचेज़ ऍड राइटिंग्ज़ ऑफ महात्मा गांधी**में दिये गये पाठसे कर लिया गया है।

२. गांधीजी सम्मेलनके अध्यक्ष थे।

सम्मेलन अभी एक बरसका शिशु है। कहावत है कि पूतके पाँव पालनेमें दिखाई दे जाते हैं। इस बालकके लक्षण भी अच्छे दिखाई देते हैं। पिछले सालके कामकी रिपोर्ट मैंने देखी है। वह किसी भी संस्थाके लिए शोभनीय हो सकती है। मन्त्री महोदय समय-पर सम्मेलनका यह मूल्यवान विवरण छपवानेमें सफल हुए, इसके लिए वे हमारी बधाईके पात्र हैं। यह हमारा सौभाग्य है कि हमें ऐसे मन्त्री मिले हैं। जिन्होंने यह रिपोर्ट न पढ़ी हो, उन्हें मैं इसे पढ़ने और इसपर मनन करनेकी सलाह देता हूँ।

पिछले साल आदरणीय रणजीतराम वावाभाईकी[1] मृत्यु हो गई; यह हमारी बड़ी भारी हानि हुई। उनके जैसा पढ़ा-लिखा आदमी भरी जवानीमें चल बसा, यह शोचनीय बात है और इसपर विचार करनेकी आवश्यकता भी है। मैं भगवान्से उनकी आत्माको सद्गति देनेकी प्रार्थना करता हूँ और चाहता हूँ कि उनके कुटुम्बको इस बातसे सान्त्वना मिले कि हम सब उनके दुःखमें भागीदार हैं।

जिस संस्थाने[2] इस सम्मेलनका आयोजन किया है, उसने अपने सामने तीन उद्देश्य रखे हैं:

(१) शिक्षाके प्रश्नके बारेमें लोकमत तैयार करना और उसे अभिव्यक्ति देना।
(२) गुजरातमें शिक्षाके प्रश्नोंके विषयमें निरन्तर आन्दोलन करना।
(३) गुजरातमें शिक्षाके प्रसारके लिए ठोस कार्य करना।

इन तीन उद्देश्योंके बारेमें अपनी बुद्धिके अनुसार मैंने जो सोचा-विचारा है उसे यहाँ पेश करनेकी कोशिश करूँगा।

यह बात सबको अच्छी तरह समझ लेनी चाहिए कि इस दिशामें हमारा पहला काम है, विचारपूर्वक शिक्षाका माध्यम निश्चित करना। इसके बिना और सब कोशिशें लगभग बेकार साबित हो सकती हैं। शिक्षाके माध्यमका विचार किये बिना शिक्षा देनेका परिणाम नींवके बिना इमारत खड़ी करनेकी कोशिश-जैसी बात होगी।

इस बारेमें दो रायें पाई जाती हैं। एक पक्ष कहता है कि शिक्षा मातृ-भाषा (गुजराती) के जरिये दी जानी चाहिए। और दूसरा पक्ष कहता है कि वह अंग्रेजीके माध्यमसे दी जानी चाहिए। दोनों पक्षोंके हेतु पवित्र हैं। दोनों देशका भला चाहते हैं। लेकिन पवित्र हेतु ही कामकी सिद्धिके लिए काफी नहीं हैं। देखा गया है कि लोग पवित्र हेतु रखते हुए भी कई बार अपवित्र गड्ढोंमें जा गिरे हैं। इसलिए हमें दोनों मतोंके गुण-दोषोंकी जाँच करके, सम्भव हो तो एकमत होकर, इस बड़े प्रश्नको हल करना चाहिए। इसमें कोई सन्देह नहीं कि यह प्रश्न बहुत बड़ा है। इसलिए उसके बारेमें जितना विचार किया जाये उतना ही थोड़ा है।

वैसे तो यह प्रश्न सारे भारतका है; किन्तु हरएक क्षेत्र अथवा प्रान्त इसपर अपनी हदतक स्वतन्त्र रूपसे विचार कर सकता है। फिर भी ऐसा नहीं है कि जबतक भारतके सारे भाग एकमत न हो जायें, तबतक अकेला गुजरात आगे कदम बढ़ा ही नहीं सकता।

१. रणजीतराम वावाभाई मेहता (१८८२–१९१६); उनके नामसे एक स्वर्ण-पदक गुजरातमें प्रतिवर्ष साहित्य और कलाओंके क्षेत्रमें की गई विशिष्ट सेवाओंके लिए दिया जाता है।

२. भड़ौंच केलवणी मण्डल; भड़ौंचकी एक शिक्षा-संस्था।

फिर भी दूसरे प्रान्तोंमें इस बारेमें क्या कार्रवाई की गई है, इसकी जाँच करनेसे हम कुछ मुश्किलें हल कर सकते हैं। बंगभंगके[1] समय जब स्वदेशीका जोश उमड़ रहा था, तब बंगालमें बँगलाके जरिये शिक्षा देनेका प्रयत्न किया गया। राष्ट्रीय पाठशालाकी स्थापना भी हुई। रुपयोंकी वर्षा हुई। पर यह प्रयोग बेकार गया। मेरी यह नम्र राय है कि व्यवस्थापकोंकी अपने प्रयोगमें आस्था नहीं थी। वैसी ही करुणाजनक स्थिति शिक्षकोंकी भी रही। बंगालमें शिक्षित-वर्गको अंग्रेजीसे बड़ा मोह है। यह कहा गया है कि बँगला साहित्यने जो प्रगति की है उसका कारण बंगालियोंका अंग्रेजी भाषा और साहित्यपर अधिकार है। लेकिन तथ्य इस तर्कके विरुद्ध है। रवीन्द्रनाथ ठाकुरकी[2] चमत्कारिक बँगला अंग्रेजीकी ऋणी नहीं है। उनके भाषा-चमत्कारके पीछे उनका स्वभाषा विषयक अभिमान है। 'गीतांजलि' पहले बँगला भाषामें ही लिखी गई थी। महाकवि ठाकुर बंगालमें बंगलाका ही प्रयोग करते हैं। उन्होंने हाल ही में भारतकी वर्तमान स्थितिपर कलकत्तेमें जो भाषण दिया था, वह बँगलामें दिया था। बंगालके प्रमुख स्त्री-पुरुष उसे सुनने गये थे। जिन्होंने उसे सुना था उन्होंने मुझे बताया है कि डेढ़ घंटे तक अपने श्रोताओंको उन्होंने रस-विभोर रखा। उन्होंने अपने विचार अंग्रेजी साहित्यसे नहीं लिये। वे कहते हैं कि उन्होंने ये विचार इस देशके वातावरणमें से लिये हैं, उपनिषदोंमें से निचोड़े हैं। उनपर उन विचारोंकी वर्षा भारतके आकाशसे हुई है। मेरा विश्वास है कि यही बंगालके दूसरे लेखकोंके सम्बन्धमें भी सही है।

हिमालयकी तरह गम्भीर और भव्यदर्शी महात्मा मुन्शीरामजी[3] जब हिन्दीमें भाषण देते हैं, तब बच्चे और बड़े, स्त्री और पुरुष सभी उनका सुन्दर भाषण सुनते और समझते हैं। उन्होंने अपनी अंग्रेजी अपने अंग्रेज मित्रोंके लिए ही सुरक्षित रख छोड़ी है। वे अंग्रेजी शब्दोंका अनुवाद करके अपनी बात नहीं कहते।

कहा जाता है कि गृहस्थ होते हुए भी देशके लिए आत्मार्पण करनेवाले महामना पं० मदनमोहन मालवीयकी[4] अंग्रेजी चाँदीकी तरह शुभ्र होती है। वे जो कुछ कहते हैं, उसपर वाइसरॉयको सोचना पड़ता है। अगर उनके अंग्रेजी भाषणका प्रवाह चाँदी-जैसा चमकता है, तो उनके हिन्दी भाषणका प्रवाह शुद्ध तरल सोने-जैसा दमकता है। मानसरोवरसे उतरते समय सूर्यकी किरणोंसे जैसे गंगा दमकती है वैसी ही शोभा उनकी हिन्दीकी होती है।

१. १९०५ में प्रशासनिक सुविधाके बहाने बंगालका विभाजन कर दिया गया था। विभक्त प्रान्तोंमें एकमें मुसलमानों और दूसरेमें हिन्दुओंका बहुमत था। इस विभाजनसे देशभरमें एक तूफान खड़ा हो गया और इसके फलस्वरूप अंग्रेजी मालके बहिष्कारका आन्दोलन शुरू किया गया। अन्ततः १९११ में यह विभाजन रद कर दिया गया।

२. १८६१–१९४१; कवि तथा विश्वभारतीके संस्थापक।

३. स्वामी श्रद्धानन्द; हरद्वारके समीप गुरुकुल कांगड़ीके संस्थापक।

४. मदनमोहन मालवीय (१८६१–१९४६) बनारस विश्वविद्यालयके संस्थापक; शाही परिषद्के सदस्य, १९०९ और १९१८ में कांग्रेसके अध्यक्ष निर्वाचित।

इन तीनो वक्ताओकी वक्तृत्व शक्ति उनके अंग्रेजीके ज्ञानके कारण नही, बल्कि उनके स्वभाषा प्रेमके कारण आई है। स्वामी दयानन्दने[1] हिन्दी भाषाकी जो सेवाएँ की है वे अंग्रेजी ज्ञानके कारण नही की। तुकाराम[2] और रामदासने[3] मराठी भाषाको जिस तरह उज्ज्वल बनाया है, उसमे अंग्रेजी भाषाका कोई हाथ नही है। प्रेमानन्द[4], शामल भट्ट[5] और आधुनिक युगमे दलपतरामने[6] गुजराती साहित्यको समृद्ध किया है, अंग्रेजी भाषाका इसमें कोई हाथ नही है।

ऊपरके उदाहरणोसे यह साबित होता है कि मातृभाषाके विकासके लिए अंग्रेजी भापाकी जानकारीकी नही, मातृभाषाके प्रेमकी — उसके प्रति श्रद्धाकी — जरूरत है।

भाषाओके विकासपर विचार करे तो भी हम इसी निर्णयपर पहुँचेंगे। भाषाएँ उनके बोलनेवाले लोगोके चरित्रका प्रतिबिम्ब होती है। दक्षिण आफ्रिकाके हब्शियोकी भाषा जाननेसे हम उनके रीति-रिवाज वगैरा जान सकते है। भाषा जातियोके गुण-कर्मके अनुरूप बनती है। यह बात हम नि सकोच कह सकते है कि जिस भाषामे वीरता, सच्चाई, दया आदि लक्षण नही होते उस भाषाको बोलनेवाली जातियोमे वीर, सत्यशील और दयालु लोग नही होते। ऐसी भाषामे दूसरी भाषाओसे जैसे-तैसे वीरता या दया-सूचक शब्द ठूँस देनेसे न उस भाषाका विस्तार हो सकता है, न उस भाषाके बोलनेवाले लोग वीर ही बनेंगे। शौर्य किसीमें भी बाहरसे नही भरा जा सकता। हाँ, वह भीतर हो और उसपर जग लग गया हो, तो जगके हटते ही वह चमक उठेगा। हमने बहुत समय तक गुलामी भोगी है, इसलिए हममें विनयकी अतिशयता सूचित करनेवाले शब्दोका बडा भण्डार दिखाई देता है। अंग्रेजी भाषामे नौकाके लिए जितने शब्द है, उतने और किसी भाषामे शायद ही हो। यदि कोई साहसपूर्वक उन पुस्तकोका अनुवाद गुजरातीमें करे भी तो उससे न हमारी भाषाका कोई विकास होगा और न हम नौकाओके बारेमें ही ज्यादा जानने लगेंगे। अलबत्ता जब हम जहाज वगैरा बनाना सीखेंगे और जलसेना भी खडी करेंगे, नौका-सम्बन्धी पारिभाषिक शब्द तब अपने-आप बन जायेंगे। यह विचार स्वर्गीय रेवरेंड टेलरने अपने व्याकरणमे व्यक्त किया है। वे लिखते है·

> कभी-कभी यह विवाद सुनाई पड़ता है कि गुजराती भाषा पूर्ण है या अपूर्ण। कहावत है कि 'यथा राजा तथा प्रजा, यथा गुरुस्तथा शिष्यः।' इसी तरह कहते हैं कि 'यथा भाषकस्तथा भाषा — अर्थात् जैसा बोलनेवाला वैसी भाषा।' शामल भट्ट और अन्य कवि अपने मनके विचार प्रकट करते समय यह सोचकर कभी रुके नहीं जान पड़ते कि गुजराती भाषा अधूरी है। उन्होंने नये और पुराने

१. स्वामी दयानन्द सरस्वती (१८२४–८३); आर्य समाजके संस्थापक।

२. व ३. महाराष्ट्रके सन्त कवि।

४. १६३६–१७२८; गुजराती कवि।

५. १७००–६५; गुजराती कवि, इनकी कविताके एक पदका गाधीजीपर उनके बचपनमें ही बहुत प्रभाव पड़ा था। देखिए **आत्मकथा**, भाग १ अध्याय १०।

६. दलपतराम डाह्याभाई त्रिवेदी (१८२०–१८९२)।

शब्दोका उपयोग इस प्रकार विवेकपूर्वक किया कि उनके द्वारा व्यवहृत शब्द भाषामें प्रचलित हो गये।

एक विषयमें तो सभी भाषाएँ अधूरी हैं। मनुष्यकी छोटी बुद्धिमें न आनेवाली बातो, जैसे ईश्वर या अनन्तताके बारेमें कहे तो सभी भाषाएँ अधूरी हैं। भाषा मनुष्यकी बुद्धिके सहारे चलती है, इसलिए जब किसी विषय तक बुद्धि नहीं पहुँचती, तब भाषा अधूरी रह जाती है। भाषाका साधारण नियम यह है कि लोगोंके मनमें जो विचार भर जाते हैं, वे ही उनकी भाषामें व्यक्त होते हैं। लोग विवेकशील होगे तो उनकी बोलीमें विवेकशीलता होगी, लोग मूढ होगे तो उनकी बोलीमें भी मूढता होगी। अग्रेजीमें कहावत है कि "मूर्ख बढई अपने औजारोको दोष देता है।" भाषाको अपूर्ण बतानेवाले लोग भी कम-ज्यादा ऐसे ही समझिए। जिस विद्यार्थीको कुछ अंग्रेजी भाषा आ गई है और उसके साथ कुछ पाश्चात्य विषय भी आ गये हैं, उसे गुजराती भाषा अधूरी-सी लगती होगी, क्योकि उसका अंग्रेजीसे अनुवाद करना मुश्किल होता है। इसमें दोष भाषाका नहीं, लोगोका है। चूंकि लोगोको विवेकपूर्वक समझनेका प्रयत्न करनेका अभ्यास नहीं होता, इसलिए विशेषज्ञ नया विषय नई पारिभाषिक शब्दावली अथवा नई भाषा-शैलीमें रखते हुए झिझक जाता है; वह सोचता है, कौन "अधेके आगे रोये, अपने नैन खोये।" जबतक लोग भला-बुरा, नया-पुराना परखकर उसकी कीमत नहीं आँक सकते, तबतक लिखनेकी प्रतिभा भी कैसे चमक सकती है?

जो लोग अग्रेजीसे भाषामें अनुवाद करते हैं, वे कुछ ऐसा समझते हैं कि अपनी भाषाका ज्ञान तो उनकी घुट्टीमें ही उन्हे मिला है और अंग्रेजी उन्होंने पढी ही है; इसलिए अब वे दो भाषाओके पूरे पण्डित हो गये। भला अब वे गुजरातीका अध्ययन किसलिए करें? परभाषाका ज्ञान प्राप्त करनेमें श्रम करनेकी अपेक्षा स्व-भाषामें प्रवीणता प्राप्त करनेके निमित्त अध्ययन करना अधिक महत्त्वपूर्ण है। शामल और अन्य गुजराती कवियोंके ग्रन्थ देखिए। उनमें प्रत्येक पदमें अध्ययनका प्रमाण मिलता है। जबतक मनसे प्रयत्न न करेगे तबतक गुजराती कच्ची ही रहेगी; परिश्रमसे बादमें पक्की होगी। प्रयत्न करनेवालेका प्रयत्न अधूरा होगा, तो उसकी भाषा भी अधूरी होगी, लेकिन यदि प्रयत्न पूरा होगा, तो गुजराती भी पूरी होगी। इतना ही नहीं वह सजी हुई भी दिखाई देगी। गुजराती आर्यकुलकी, संस्कृतकी बेटी और बहुत ही उत्कृष्ट भाषाओंकी सगी ठहरी। उसे कोई निम्नकोटिकी कैसे बता सकता है?

परमात्मा इसे आशीर्वाद दे। अनन्तकाल तक इसकी वाणीमें सद्विद्या, सद्ज्ञान और सद्धर्मका सुबोध रहे और सिरजनहार प्रभु करें, हम माताओ और छात्रोंसे सदा-सर्वदा उसका गुणगान सुनें।

इस तरह हम देखते हैं कि बगालमें सारी शिक्षा बँगलाके जरिये देनेके आन्दोलनकी असफलताका कारण भाषाकी अपूर्णता या प्रयत्नकी अयोग्यता नही है। अपूर्णताके बारेमें

हम विचार कर चुके है। इससे बँगलाकी अयोग्यता सिद्ध नही होती। हम चाहे तो इसे प्रयत्न करनेवालोकी अयोग्यता या अनास्था कह सकते है।

उत्तरमे हिन्दी भाषाका विकास तो हो रहा है, फिर भी उसे शिक्षाका माध्यम बनानेका निरन्तर प्रयत्न केवल आर्यसमाजियोने ही किया मालूम होता है। गुरुकुलोमे यह प्रयत्न जारी है।

मद्रासमे देशी भाषाओके जरिये शिक्षा देनेका आन्दोलन कुछ ही वर्षोसे शुरू हुआ है। तमिलोकी अपेक्षा तेलगू भाषा-भाषी अधिक जाग्रत है। शिक्षित तमिलोपर अग्रेजीका इतना ज्यादा असर हो गया है कि उनमे तमिल भाषाके माध्यमसे अपना काम चलानेका उत्साह नही रहा। तेलगू भाषी भागमे अग्रेजी शिक्षा इतनी नही फली है। इसलिए तेलगू-भाषी मातृभाषाका उपयोग ज्यादा कर रहे है। तेलगू भाषी भागमे सिर्फ तेलगूके जरिये शिक्षा देनेका प्रयोग किया जा रहा है। इतना ही नही, तेलगू भाइयोने भाषाके आधारपर प्रान्त-निर्माण करनेका आन्दोलन भी शुरू किया है। इस विचारका प्रचार कुछ समयसे ही शुरू हुआ है। फिर भी उनका प्रयत्न इतना साहसपूर्ण है कि थोडे दिनोमें हम उसे क्रियान्वित होता देखेगे। उनके काममे कठिनाइयाँ बहुत है, परन्तु उनमे दूर करनेकी शक्ति है, उनके नेताओकी मुझपर ऐसी ही छाप पडी है।

महाराष्ट्रमें भी यह प्रयत्न चल रहा है। साधुचरित प्रोफेसर कर्वे[1] इस प्रयत्नके समर्थक है। भाई नायकका भी यही दृष्टिकोण है। अनेक निजी पाठशालाएँ इस काममे लगी हुई है। प्रोफेसर बीजापुरकरने[2] बहुत कष्ट उठाकर अपने साहसपूर्ण प्रयत्नको फिर आरम्भ किया है और कुछ समयमे हम देखेगे कि उनकी पाठशाला सुचारु रूपसे चल निकली है। उन्होने पाठ्य पुस्तकें लिखनेकी योजना बनाई थी। कुछ पुस्तके छप गई है और कुछ लिखी हुई तैयार है। उस पाठशालाके शिक्षकोने कभी अनास्था नही दिखाई। अगर दुर्भाग्यसे उनकी पाठशाला बद न हुई होती, तो आज यह प्रश्न उठता ही नही कि मराठीके जरिये ऊँची शिक्षा दी जा सकती है या नही।

गुजरातमे भी मातृभाषाके जरिये शिक्षा देनेका आन्दोलन शुरू हो चुका है। इस बारेमे हमें रा० ब० हरगोविन्ददास काटावालाके[3] लेखसे जानकारी मिल सकती है। प्रो० गज्जर[4] और स्वर्गीय दीवान बहादुर मणिभाई इस विचारके नेता माने जा सकते है। यह विचार करना हमारा काम है कि हमें इन लोगोके बोये बीजोके अकुरित होनेमें मदद देनी चाहिए या नही। मुझे तो लगता है कि इसमें जितनी देर हो रही है, उतना ही हमारा नुकसान हो रहा है।

१. धोंडो केशव कर्वे (१८५८–१९६२), समाज-सुधारक, भारत रत्न, भारतीय महिला विश्वविद्यालय (इडियन वीमेन्स यूनिवर्सिटी) के संस्थापक।

२. विष्णु गोविन्द बीजापुरकर (१८६३–१९२६); मराठी साहित्य, स्वदेशी व राष्ट्रीय शिक्षणके प्रचारक।

३. १८३९–१९३१; बड़ौदा रियासतके लोक-शिक्षा निदेशक। देखिए खण्ड ५, पृष्ठ ९४–९५।

४. त्रिभुवनदास कल्याणदास गज्जर (१८६३–१९२०); रसायन-शास्त्रके प्रोफेसर, बड़ौदा कालेज, बड़ौदा; पश्चिम भारतमें रसायन उद्योगके प्रणेता।

अंग्रेजी भाषाके माध्यमसे शिक्षामें कमसे-कम सोलह वर्ष लगते है। यदि इन्ही विषयोकी शिक्षा मातृभाषाके माध्यमसे दी जाये, तो ज्यादासे-ज्यादा दस वर्ष लगेंगे। यह राय बहुतसे अनुभवी शिक्षकोने प्रकट की है। हजारो विद्यार्थियोके छ-छ वर्ष बचनेका अर्थ यह होता है कि कई हजार वर्ष जनताको मिल गये।

विदेशी भाषा द्वारा शिक्षा पानेमें दिमागपर जो बोझ पडता है वह असह्य है। यह बोझ हमारे बच्चे उठा तो सकते है, लेकिन उसकी कीमत उन्हे चुकानी पडती है। वे दूसरा बोझ उठानेके लायक नही रह जाते। इससे हमारे स्नातक अधिकतर निकम्मे, कमजोर, निरुत्साही, रोगी और कोरे नकलची बन जाते है। उनमें खोज करनेकी शक्ति, विचार करनेकी शक्ति, साहस, धीरज, वीरता, निर्भयता और अन्य गुण बहुत क्षीण हो जाते है। इससे हम नई योजनाएँ नही बना सकते और यदि बनाते है तो उन्हे पूरा नही कर पाते। कुछ लोग, जिनमें उपर्युक्त गुण दिखाई देते है, अकाल ही कालके गालमें चले जाते है। एक अंग्रेजने लिखा है कि मूल लेख और सोखता कागजके अक्षरोमें जो भेद है, वही भेद यूरोपके और यूरोपके बाहरके लोगोमें है। इस विचारमें जो सचाई है वह कोई एशियाके लोगोकी स्वाभाविक अयोग्यताके कारण नही है। इसका कारण शिक्षाका योग्य माध्यम चुन लेना है। दक्षिण आफ्रिकी हब्शी साहसी, शरीरसे कद्दावर और चरित्रवान् है। बाल-विवाह आदि जो दोष हममें है वे उनमें नही है। फिर भी उनकी दशा वैसी ही है जैसी हमारी। उनकी शिक्षाका माध्यम डच भाषा है। वे भी हमारी तरह डच भाषाको तुरन्त अधिकृत कर लेते है और हमारी ही तरह शिक्षा समाप्त होते-होते कमजोर हो जाते है। वे भी 'बहुत हदतक' कोरे नकलची निकलते है। उनमें भी असली चीज माध्यमरूपमें मातृ-भाषाके हटनेसे लुप्त हुई दीखती है। अंग्रेजी शिक्षा पाये हुए हम लोग ही इस नुकसानका सही अनुमान नही लगा पाते। यदि हम यह अनुमान लगा सकें कि जनसाधारणपर हमारा कितना कम असर पड़ा है, तो इसकी कुछ कल्पना हो सकती है। हमारे माता-पिता हमारी शिक्षाके बारेमें कभी-कभी कुछ कह देते है, वह विचारने लायक होता है। हम जगदीशचन्द्र वसु[1] और रायको[2] देखकर मोहांध हो जाते है। मुझे विश्वास है कि हमने ५० वर्ष तक मातृ-भाषा द्वारा शिक्षा पाई होती, तो हममें इतने वसु और राय होते कि उन्हें देखकर हमें अचम्भा न होता।

यदि हम यह विचार एक तरफ रख दें कि जापानका उत्साह जिस ओर जा रहा है, वह ठीक है या नही, तो हमें जापानका साहस आश्चर्यजनक मालूम होगा। उन्होंने मातृ-भाषा द्वारा जन-जाग्रति की है, इसीलिए उनके हर काममें नयापन दिखाई देता है। वे शिक्षकोंके भी शिक्षक बन गये है। उन्होंने [गैर-यूरोपीय देशोके लोगोको दी

१. सर जगदीश चन्द्र बोस (१८५८–१९३७); वैज्ञानिक; बोस रिसर्च इन्स्टीट्यूटके संस्थापक तथा वनस्पति विज्ञान सम्बन्धी पुस्तकोंके लेखक।

२. आचार्य प्रफुल्ल चन्द्र राय (१८६१–१९४४); वैज्ञानिक और देशभक्त।

गई] सोखता कागजकी उपमा गलत साबित कर दी है। शिक्षाके कारण जापानके जन-जीवनमें हिलोरे उठ रही हैं और दुनिया जापानियोंका काम अचरज-भरी आँखोंसे देख रही है। विदेशी भाषाके माध्यमसे शिक्षा देनेकी पद्धतिसे अपार हानि होती है।

माँके दूधके साथ जो संस्कार और मीठे शब्द मिलते है, उनके और पाठशालाके बीच जो मेल होना चाहिए, वह विदेशी भाषाके माध्यमसे शिक्षा देनेमे टूट जाता है। इस सम्बन्धको तोड़नेवालोका हेतु पवित्र ही क्यो न हो, फिर भी वे जनताके दुश्मन हैं। हम ऐसी शिक्षाके वशीभूत होकर मातृद्रोह करते हैं। इसके अतिरिक्त विदेशी भाषा द्वारा शिक्षा देनेसे अन्य हानियाँ भी होती हैं। शिक्षित-वर्ग और सामान्य जनताके बीचमे अन्तर पड़ गया है। हम जनसाधारणको नही पहचानते। जनसाधारण हमें नही जानता। वे हमें साहब समझते हैं और हमसे डरते हैं; वे हमपर भरोसा नही करते। यदि यही स्थिति अधिक समय तक कायम रही तो एक दिन लॉर्ड कर्जनका[1] यह आरोप सही हो जायगा कि शिक्षित-वर्ग जनसाधारणका प्रतिनिधि नही है।

सौभाग्यसे शिक्षित लोग अपनी इस मोह-मूर्च्छासे जागते दिखाई देते हैं। वे जनसाधारणसे सम्पर्क करते है तो उन्हे ऊपर बताये हुए दोष स्पष्ट दिखाई देते हैं। उनमें जो जोश आया है उसे लोगोमे कैसे भरे? अंग्रेजीके माध्यमसे तो यह काम किया नही जा सकता। गुजरातीके द्वारा उसे लोगोमें भरनेकी शक्ति उनमें नही है या बहुत कम है। उन्हे अपने विचार मातृ-भाषामें जनसाधारणके सामने रखनेमें बड़ी कठिनाई होती है। ऐसी बातें मैं हमेशा सुनता हूँ। इस बाधाके कारण जन-जीवनका प्रवाह रुक गया है। हमें अंग्रेजी शिक्षा देनेमें मैकॉलेका[2] हेतु शुद्ध था। उसके मनमें हमारे साहित्यके प्रति तिरस्कारका भाव था। यह छूत हमें भी लग गई; हम भी मूढ होकर इसका तिरस्कार करने लगे और इस मामलेमे अपने गुरुसे भी आगे बढ़ गये। मैकॉले सोचता था कि हम जनसाधारणमें पश्चिमी सभ्यताके प्रचारक बनकर जायेंगे। उसकी कल्पना यह थी कि हममें से कुछ लोग अंग्रेजी पढ़-लिखकर, अपना चरित्र उन्नत करके जनताको नये विचार देंगे। वे देने लायक थे या नही, इस बातका विचार करना यहाँ अप्रासगिक होगा। हमे तो सिर्फ शिक्षाके माध्यमकी बात ही सोचनी है। हमने अंग्रेजी शिक्षामे [नये विचारोको नही] धनप्राप्ति को देखा, और उसके उपयोगको सर्वाधिक प्रमुख स्थान दे डाला। कुछ लोगोमें अपने देशका अभिमान भी पैदा हुआ। इस तरह मूल विचार गौण हो गया और अंग्रेजी भाषाका प्रचार श्री मैकॉलेकी धारणासे भी आगे बढ़ गया, किन्तु इससे हम घाटेमे रहे।

यदि हमारे हाथमें सत्ता होती, तो हम इस दोषको तुरन्त देख लेते और तब मातृभाषाका त्याग करना असम्भव हो जाता। सरकारी तबकेने उसे नही छोड़ा; हमने

१. १८५९–१९२५; वाइसरॉय और भारतके गवर्नर-जनरल, १८९९–१९०५।

२. टामस बैबिंगटन मैकॉले (१८००–५९) भारत सरकारकी सामान्य लोक शिक्षा समितिके अध्यक्ष और गवर्नर जनरलकी कार्यकारिणी परिषदके कानून-सदस्य। उन्होंने भारतमें अंग्रेजी शिक्षा शुरू करनेकी सिफारिश अपने २ फरवरी १८३५के स्मरण-पत्रमें की थी।

उसे छोडा है। वहुतोको शायद मालूम नही होगा कि हमारी अदालती भाषा गुजराती ही मानी जाती है। सरकार कानून गुजरातीमें वनवाती है। दरवारोमें पढे जानेवाले भाषणोका गुजराती अनुवाद भी उसी समय पढा जाता है। मुद्रा नोटोमें अग्रेजीके साथ गुजराती और अन्य भारतीय भाषाओका भी उपयोग किया जाता है। जमीनकी पैमाइश करनवालेको गणित और जो अन्य विषय सीखने पडते है, वे कठिन होते है और यह काम यदि अग्रेजीमें होता, तो माल-महकमेका काम वहुत खर्चीला हो जाता। इसलिए पैमाइशवालोके लिए ऐसे पारिभाषिक शब्द बनाये गये है जिन्हे जानकर हमें हर्ष और आश्चर्य होता है। हममें भाषाके लिए सच्चा प्रेम हो, तो हम अपने उपलब्ध साधनोका उपयोग तत्काल कर सकते है। वकील अपना काम गुजराती भाषामें करने लग जायें तो मुवक्किलोका वहुत-सा रुपया वच जाये, इससे मुवक्किलोको कानूनका जरूरी ज्ञान मिल जाये और वे अपने हक समझने लगें। दुभाषियेका खर्च भी वचे तथा भाषामें कानूनी शब्दोका प्रचार हो। इसमे वकीलोको थोडा प्रयत्न जरूर करना पड़ेगा। मुझे विश्वास है, और मेरा अनुभव है कि इससे उनके मुवक्किलोका नुकसान नही होगा। यह भय करनेका कोई कारण नही है कि गुजरातीमे की हुई वहसका असर कम पडेगा। हमारे कलक्टरो वगैराके लिए गुजराती जानना अनिवार्य है; परन्तु अग्रेजीके प्रति हमारे झूठे मोहके कारण उनकी इस जानकारीमे जग लग जाता है।

ऐसी दलील दी गई है कि रुपया कमानेके लिए और देशहितके खयालसे अग्रेजीका जो उपयोग किया गया उसमें दोषकी कोई वात नही है। यह दलील जव शिक्षाके माध्यमका विचार करते है तव ठीक नही मालूम होती। रुपया कमानेके लिए या देशहितके खयालसे कुछ लोग अग्रेजी सीखें, तो हम उन्हे सादर प्रणाम करेगें। परन्तु इसी कारण अग्रेजी भाषाको शिक्षाका माध्यम तो नही माना जा सकता। मैं यही स्पष्ट करना चाहता हूँ कि उपर्युक्त वातोके कारण अग्रेजी भाषाको शिक्षाके माध्यमके रूपमें भारतमें जो स्थान मिला उसका परिणाम दु खद हुआ है। कुछ लोग कहते है कि अग्रेजी शिक्षाप्राप्त लोग ही देशभक्त हुए है, पिछले दो महीनोसे तो हमें इससे विलकुल उलटी वात नजर आ रही है। यदि अग्रेजीका यह दावा मान भी ले तो इतना अवश्य कहा जा सकता है कि अग्रेजी शिक्षाप्राप्त लोगोके समान दूसरोको मौका ही नही मिला। इसके सिवा अग्रेजी शिक्षाप्राप्त लोगोके देशप्रेमका प्रभाव जनसाधारणपर नही पडा। सच्चे देशप्रेमको तो व्यापक होना चाहिए। इनके देशप्रेममें यह गुण दिखाई नही देता।

कहा जाता है कि ऊपरकी दलीले और कुछ भी हो, वे आज अव्यावहारिक है। "अग्रेजीके कारण अन्य विषयोकी कुछ भी हानि हो, तो यह दु खकी वात है। अग्रेजीपर अधिकार प्राप्त करनेमें ही हमारी अधिकाश मानसिक शक्ति खर्च हो जाये, यह वहुत ही अवाछनीय है। परन्तु अग्रेजीके सम्वन्धमें हमारी जो स्थिति है, उसे ध्यानमें रखते हुए मेरा यह नम्र मत है कि इस नतीजेको सहकर रास्ता निकालनेके सिवा और कोई उपाय नही है।" ये शब्द किसी ऐसे-वैसे लेखकके कहे हुए नही है। ये गुजरातके

शिक्षित-वर्गमे अग्रगण्य एक स्वभाषा-प्रेमी व्यक्तिके है। आचार्य आनन्दशकर ध्रुव[1] जो कुछ लिखते है, इसपर हम विचार किये बिना नही रह सकते। उन्होने जो अनुभव प्राप्त किया है, वह बहुत कम लोगोने प्राप्त किया है। उन्होने साहित्य और शिक्षाकी बडी सेवा की है। उन्हे सलाह देने तथा टीका करनेका पूरा अधिकार है। ऐसी स्थितिमे मेरे-जैसे व्यक्तिको कुछ कहते हुए बडी झिझक होती है। और फिर, ये विचार अकेले आनन्दशकर भाईके ही नही है। उन्होने मीठी भाषामे अग्रेजी भाषाके समर्थकोके विचार रखे है। उन विचारोका आदर करना हमारा कर्त्तव्य है। इसके अलावा भी मेरी स्थिति कुछ विचित्र-सी है। उनकी सलाहसे, उनकी निगरानीमे मै राष्ट्रीय शिक्षाका प्रयोग कर रहा हूँ। वहाँ मातृ-भाषाके माध्यमसे ही शिक्षा दी जाती है। जहाँ इतना निकटका सम्बन्ध हो, वहाँ टीकाके रूपमे कुछ भी लिखते समय हिचकिचाना स्वाभाविक है। सौभाग्यसे आचार्य ध्रुवने शिक्षाके माध्यमके रूपमे अग्रेजी भाषा और मातृभाषा दोनोका ही प्रयोग होते देखा है और दोनोमे से एकके बारेमे भी उन्होने निश्चित राय नही दी है। इसलिए उनके विचारोके विरुद्ध कुछ कहनेमे सकोच अवश्य कम हो जाता है।

अग्रेजीके सम्बन्धमे हम अपनी स्थितिको जरूरतसे ज्यादा महत्व देते है। मै जानता हूँ कि इस सम्मेलनमे इस विषयमे पूरी-पूरी आजादीसे चर्चा नही की जा सकती। किन्तु जो राजनैतिक मामलोमे नही पड सकते हमारा उनसे इतना कहना तो अनुचित नही है कि भारतमे अग्रेजोका राज्य केवल भारतकी भलाईके लिए होना चाहिए। और किसी विचारसे इस सम्बन्धका बचाव नही किया जा सकता। एक राष्ट्रका दूसरे राष्ट्रपर राज्य करना दोनोके लिए असह्य है, बुरा है और दोनोको नुकसान पहुँचानेवाला है यह बात अग्रेज अधिकारियोने भी मानी है और जहाँ कही भी परोपकारकी दृष्टिसे विचार होगा, वहाँ यह बात सिद्धान्तरूपमें मानी जायेगी। इसलिए यदि शासको और शासितो दोनोको यह निश्चय हो जाये कि अग्रेजीके माध्यमसे शिक्षा देनेसे जनसाधारणकी मानसिक शक्ति नष्ट होती है, तो एक पलकी भी देर किये बिना शिक्षाका माध्यम बदल दिया जाना चाहिए। इसमें जो बाधाएँ सामने आये, उन्हे दूर करनेमें ही हमारे पुरुषार्थकी कसौटी है। यदि यह बात ठीक मान ली जाये, तो जो लोग आचार्य ध्रुवकी तरह यह स्वीकार करते है कि अग्रेजी माध्यमके कारण हमारी मानसिक शक्तिकी हानि होती है उन्हे भरोसा दिलानेके लिए कोई दूसरी दलील देनेकी जरूरत नही रह जाती।

यह सोचना कि मातृभाषाके माध्यम द्वारा शिक्षा देनेसे अग्रेजी भाषाके ज्ञानको धक्का पहुँचेगा, अनावश्यक है। सभी पढे-लिखे भारतीयोको इस भाषापर अधिकार प्राप्त करनेकी जरूरत नही है। इतना ही नही मेरी तो यह भी नम्र राय है कि उसपर अधिकार प्राप्त करनेकी रुचि पैदा करना भी जरूरी नही है।

कुछ भारतीयोको अग्रेजी सीखनी अवश्य पडेगी। आचार्य ध्रुवने केवल उच्च शिक्षाकी दृष्टिसे ही इस प्रश्नपर सोचा है, परन्तु हम सब दृष्टियोसे सोचनेपर देख सकेगे कि दो वर्गोको अग्रेजीकी जरूरत रहेगी

१. आनन्दशंकर बापुभाई ध्रुव (१८६९-१९४२) प्रसिद्ध विद्वान्; बनारस हिन्दू विश्वविद्यालयके सह-उपकुलपति।

१. वे देशप्रेमी लोग, जिनमें भाषा सीखनेकी अधिक शक्ति है, जिनके पास समय है और जो अंग्रेजीका उपयोग अंग्रेजी साहित्यमें शोध करके उसके परिणाम जनताके सामने रखनेमें या शासकोंसे मिलने-जुलनेमें करना चाहते हैं, और

२. वे लोग जो अंग्रेजी ज्ञानका उपयोग रुपया कमानेमें करना चाहते हैं।

इन दोनों वर्गोंको अंग्रेजी भाषाका उत्कृष्ट ज्ञान एक वैकल्पिक विषयके रूपमें देनेमें कोई हर्ज नहीं। उनके लिए इसकी सुविधा तक कर देना जरूरी है। पढ़ाईके इस क्रममें भी शिक्षाका माध्यम तो मातृ-भाषा ही रहेगी। आचार्य ध्रुवको भय है कि यदि हमारी पूरी शिक्षा-दीक्षा अंग्रेजीके माध्यमसे न हुई और हमने उसे केवल विदेशी भाषाके रूपमें पढ़ा, तो जैसा हाल फारसी, संस्कृत और ऐसी ही अन्य भाषाओंका होता है, वैसा ही अंग्रेजीका भी होगा। मुझे आदरके साथ कहना चाहिए कि इस विचारमें कुछ दोष है। बहुतसे अंग्रेज अपनी शिक्षा-दीक्षा अंग्रेजीमें होनेपर भी फ्रेंच आदि भाषाओंका ऊँचा ज्ञान प्राप्त करते हैं और उनका अपने काममें पूरा उपयोग कर सकते हैं। भारतमें ऐसे भारतीय मौजूद हैं, जिन्होंने अंग्रेजीमें शिक्षा पाई है, परन्तु फ्रेंच और अन्य भाषाओंपर भी उनका असाधारण अधिकार है। सच तो यह है कि जब अंग्रेजी अपनी जगह रहेगी और मातृ-भाषा अपना पद ले लेगी, तब हमारे मस्तिष्क जो अभी बँधे हुए हैं, बन्धनमुक्त हो जायेंगे। और जब हमारा मस्तिष्क शिक्षित तथा सुसंस्कृत होनेपर भी ताजा होगा तब उसे अंग्रेजी भाषाका ज्ञान प्राप्त करनेका बोझ भारी नहीं लगेगा। मेरा तो यह भी विश्वास है कि उस समयका अंग्रेजीका अध्ययन हमारे आजके अंग्रेजीके अध्ययनसे ज्यादा उपयुक्त होगा, और बुद्धि प्रखर होनेके कारण उसका उपयोग अधिक अच्छा हो सकेगा। लाभालाभके विचारसे यह मार्ग सभी अर्थोंका साधक मालूम होगा।

जब हम मातृ-भाषा द्वारा शिक्षा पाने लगेंगे, तब हमारे घरके लोगोंके साथ हमारा दूसरा ही सम्बन्ध रहेगा। आज हम अपनी स्त्रियोंको अपनी सच्ची जीवन-सहचरी नहीं बना सकते। उन्हें हमारे कामोंका बहुत कम ज्ञान होता है। हमारे माता-पिताको हमारी पढ़ाईके सम्बन्धमें कोई जानकारी नहीं होती। यदि हम अपनी भाषाके जरिये उच्च-शिक्षा प्राप्त करें तो हम अपने धोबी, नाई और भंगी सभीको सहज ही शिक्षा दे सकेंगे। विलायतमें हजामत बनवाते हुए हम नाईके साथ राजनीतिकी चर्चा कर सकते हैं। यहाँ तो हम अपने कुटुम्बमें भी ऐसी चर्चा नहीं कर सकते। इसका कारण यह नहीं है कि हमारे कुटुम्बी या नाई अज्ञानी हैं। उस अंग्रेज नाईके बराबर ज्ञानी तो ये भी हैं। इनके साथ हम महाभारत, रामायण और तीर्थोंकी बातें करते हैं, क्योंकि लोक-शिक्षण इसी दिशामें प्रवाहित होता है। परन्तु स्कूलकी शिक्षा घर तक नहीं पहुँच पाती, क्योंकि अंग्रेजीमें पढ़ी हुई बातें हम अपने कुटुम्बियोंको बतानेमें असमर्थ रह जाते हैं।

आजकल हमारी धारासभाओंका सारा कामकाज अंग्रेजीमें होता है। बहुतेरी संस्थाओंका भी यही हाल है। इससे विद्या-धन कंजूसकी दौलतकी तरह गड़ा हुआ पड़ा रहता है। अदालतोंमें भी यही दशा है। न्यायाधीश [मुकदमोंके दौरान] अनेक

शिक्षाप्रद बातें कहते रहते हैं। सम्बन्धित व्यक्ति उन्हे सुनकर लाभ भी उठा सकते है, परन्तु न्यायाधीशकी आखिरी शुष्क आज्ञाके सिवा कोई अन्य बात उनके पल्ले नही पड़ती। वे अपने वकीलो तक की जिरह नहीं सुन सकते। अंग्रेजीके माध्यमसे चिकित्सा-शास्त्रका ज्ञान पाये डॉक्टरोंकी भी यही दशा है। वे रोगीको जरूरी ज्ञान नही दे सकते। उन्हे तो शरीरके अवयवोंके गुजराती नाम भी नहीं आते। इसलिए अधिकतर दवाका नुसखा लिख देनेके सिवा रोगीके साथ उनका और कोई सम्बन्ध नही रहता। भारतमें पहाड़ोकी चोटियोंसे चौमासेमें पानीके जो प्रपात गिरते है, उनसे हम अपने अविचारके कारण कोई लाभ नहीं उठाते। हम नित्य लाखों रुपयेकी सोने-जैसी कीमती खाद पैदा करते है, किन्तु उसका उचित उपयोग नहीं करते और फलत. रोग मोल लेते हैं। इसी तरह हम अंग्रेजी भाषाके बोझसे कुचले हुए लोग दूरदर्शिताके अभावमें ऊपर लिखे अनुसार जनसाधारणको जो कुछ देना चाहिए, उसे उनको नही दे पाते। इस कथनमे अतिशयोक्ति नही है। उससे केवल मेरी तीव्र भावना प्रकट होती है। हम मातृ-भाषाका जो अनादर करते रहे है, उसका हमें भारी प्रायश्चित्त करना पड़ेगा। इससे जनसाधारणका बड़ा नुकसान हुआ है। इस नुकसानसे उसे बचाना मैं पढ़े-लिखे लोगोका पहला फर्ज समझता हूँ।

जो नरसी मेहताकी[1] भाषा है, जिसमें नन्दशंकरने अपना 'करणघेलो'[2] उपन्यास लिखा, जिसमे नवलराम[3], नर्मदाशंकर[4], मणिलाल[5], मलबारी[6] आदि लेखक अपना साहित्य लिख गये है, जिस भाषामे स्व० राजचन्द्र[7] कविने अमृतवाणी सुनाई है, हिन्दू, मुसलमान और पारसी जातियाँ जिस भाषाकी सेवा करती है, जिसके बोलनेवालोमें पवित्र साधु-सन्त हो चुके है, जिस भाषाको बोलनेवालोमे धन भी प्रचुर है और जिनमें जहाजो द्वारा परदेशोमे व्यापार करनेवाले व्यापारी भी है, जिसमें मुलू माणिक[8] और जोधा माणिककी[9] बहादुरीकी प्रतिध्वनि काठियावाड़के बरड़ा पहाड़मे आज भी गूँजती है, उस भाषाके विकासकी सीमा नहीं बाँधी जा सकती। ऐसी भाषाके द्वारा गुजराती लोग शिक्षा भी न लें, तो उनसे भला और क्या होगा? इस प्रश्नपर विचार करना पड़े यही बड़े दु.खकी बात है।

इस विषयको समाप्त करते हुए मैं आप सबका ध्यान डॉक्टर प्राणजीवन मेहता द्वारा लिखे लेखोकी तरफ खींचता हूँ। उनका गुजराती अनुवाद प्रकाशित हो चुका

१. १४१४–७९; गुजरातके सन्त कवि। उनकी एक रचना "वैष्णव जन तो तेने कहिए" गांधीजीको अत्यन्त प्रिय थी।

२. गुजराती साहित्यका प्रथम उपन्यास जिसमें गुजरातके अन्तिम स्वतन्त्र हिन्दू राजाकी कहानी है।

३. नवलराम लक्ष्मीशंकर पंड्या (१८३६–१८८८); गुजराती साहित्यकार।

४. १८३३–१८८९; सुप्रसिद्ध गुजराती कवि व लेखक।

५. गांधीजीके मित्र रेवाशंकर झवेरीके पुत्र, गुजराती विचारक व लेखक।

६. बहरामजी मेरवानजी मलबारी (१८५४–१९१२); कवि, पत्रकार और समाज सुधारक।

७. राजचन्द्र रावजीभाई मेहता; जैन दार्शनिक विचारक, कवि और जौहरी, देखिए आत्मकथा, भाग २, अध्याय १।

८. व ९ प्रसिद्ध बागी सरदार; इन्होंने ब्रिटिश राज्यकी स्थापनाका विरोध किया था।

है। मैं आपको उन्हें पढ जानेकी सलाह देता हूँ। उनमें उक्त मतके समर्थक बहुतसे विचार मिलेंगे।

यदि हमें यह विश्वास हो गया है कि मातृ-भाषाको शिक्षाका माध्यम बनाना अच्छा है, तो हमें यह सोचना चाहिए कि उस विश्वासपर अमल करनेके लिए क्या उपाय किये जायें। दलीलें दिये बिना मुझे जो उपाय सूझते है, उन्हें सामने रखता हूँ :

१. अंग्रेजी जाननेवाले गुजराती, जानबूझकर या अनजाने भी आपसी व्यवहारमें अंग्रेजीका उपयोग न करें।

२. जिन्हें अंग्रेजी और गुजराती दोनोंका अच्छा ज्ञान है, वे अंग्रेजीमें प्राप्त अच्छी उपयोगी पुस्तकें या विचारोंको गुजरातीमें लोगोंके सामने रखें।

३. शिक्षा-समितियाँ [गुजरातीमें सब विषयोंकी] पाठ्य-पुस्तकें तैयार कराएँ।

४ धनवान लोग जगह-जगह गुजरातीके माध्यमसे शिक्षाके लिए स्कूल खोलें।

५. इनके साथ-साथ परिषदों और शिक्षा-समितियोंको सरकारके पास अर्जी भेजनी चाहिए कि समस्त शिक्षा मातृ-भाषाके माध्यमसे ही दी जाये और अदालतों और धारा-सभाओंका सारा कामकाज गुजरातीमें किया जाये। लोगोंको भी अपना सब काम इसी भाषामें करना चाहिए। आज जो यह रिवाज पड गया है कि अंग्रेजी जाननेवालेको ही अच्छी नौकरी मिल सकती है, उसे बदलकर भाषाका भेदभाव रखे बिना नियुक्तियाँ योग्यताके अनुसार की जाये। सरकारको अर्जी भी दी जानी चाहिए कि ऐसे स्कूल खोले जायें, जिनमें सरकारी नौकरोंको गुजराती भाषाका जरूरी ज्ञान दिया जा सके।

इस योजनामें एक आपत्ति दिखाई देगी। वह यह है कि धारासभामें मराठी, सिंधी और गुजराती सदस्य है और कर्नाटकके सदस्य भी हो सकते हैं। यह आपत्ति बड़ी तो है, परन्तु इसका निवारण किया जा सकता है। तेलगू लोगोंने इस विषयकी चर्चा शुरू की है और इसमें शक नहीं कि किसी-न-किसी दिन भाषाके अनुसार नये प्रान्त बनाने ही होंगे। परन्तु तबतक धारासभाके सदस्योंको हिन्दीमें या अपनी मातृ-भाषामें बोलनेका अधिकार दिया जाना चाहिए। यह सुझाव आज हास्यास्पद मालूम हो, तो माफी माँगकर इतना ही कहूँगा कि बहुतसे सुझाव शुरूमें हास्यास्पद ही मालूम होते हैं। मेरे कहनेका तात्पर्य यह है कि देशकी उन्नति शिक्षाके माध्यमके सही निर्णयपर निर्भर है। इसलिए मुझे अपने सुझावमें बहुत सार मालूम होता है। जब मातृभाषाकी कीमत बढ़ेगी और उसे राजभाषाका पद मिलेगा, तब उसमें वे शक्तियाँ देखनेको मिलेंगी, जिनकी हमें कल्पना भी नहीं हो सकती।

जैसे हमें शिक्षाके माध्यमका विचार करना पड़ा, वैसे ही हमें राष्ट्रभाषाका भी विचार करना चाहिए। यदि अंग्रेजी राष्ट्रभाषा बनाई जाये तो उसे अनिवार्य स्थान दिया जाना चाहिए।

क्या अंग्रेजी राष्ट्रभाषा हो सकती है? कुछ देशभक्त विद्वानोंका कहना है कि अंग्रेजी राष्ट्रभाषा बनाई जा सकती है या नहीं, यह प्रश्न ही अज्ञानावस्थाका सूचक है। अंग्रेजी तो राष्ट्रभाषा बन चुकी है। हमारे वाइसरॉय महोदयने[1] जो भाषण दिया

१. लॉर्ड चैम्सफोर्ड (१८६८–१९३३); भारतके वाइसरॉय १९१६–२१।

है, उसमें उन्होंने केवल ऐसी आशा ही प्रकट की है। उनका उत्साह उन्हें उपर्युक्त श्रेणीमें नही ले जाता। वाइसरॉय आशा करते हैं कि अंग्रेजी भाषा दिन-प्रतिदिन इस देशमे फैलेगी, हमारे परिवारोमें प्रवेश करेगी और अन्तमे राष्ट्रभाषाके ऊँचे पदपर पहुँचेगी। ऊपर-ऊपरसे देखे तो आज इस विचारका समर्थन किया जा सकता है। हमारे पढे-लिखे लोगोकी दशाको देखते हुए ऐसा मालूम पडता है कि अंग्रेजीके बिना हमारा कारबार बन्द हो जायेगा। तिसपर भी यदि हम जरा गहराईसे देखें, तो पता चलेगा कि अंग्रेजी राष्ट्रभाषा नही बन सकती, और न उसका प्रयत्न किया जाना चाहिए।

तब राष्ट्रभाषाके क्या लक्षण होने चाहिए? इसपर विचार करें.

१ वह भाषा सरकारी नौकरोंके लिए आसान होनी चाहिए।

२. उस भाषाके द्वारा भारतका आपसी धार्मिक, आर्थिक और राजनैतिक काम-काज शक्य होना चाहिए।

३. उस भाषाको भारतके ज्यादातर लोग बोलते हो।

४. वह भाषा राष्ट्रके लिए आसान होनी चाहिए।

५ उस भाषाका विचार करते समय क्षणिक या अस्थायी स्थितिपर जोर न दिया जाये।

अंग्रेजी भाषामें इनमें से एक भी लक्षण नही है।

पहला लक्षण मुझे अन्तमे रखना चाहिए था। परन्तु मैंने उसे पहले रखा है, क्योंकि वह लक्षण अंग्रेजी भाषामें दिखाई पड सकता है। ज्यादा सोचनेपर हम देखेंगे कि आज भी राज्यके नौकरोके लिए वह भाषा आसान नही है। यहांके शासनका ढाँचा इस तरहका सोचा गया है कि अंग्रेज कम होंगे, यहाँ तक कि अन्तमे वाइसरॉय और दूसरे अंग्रेज अँगुलियोपर गिनने लायक रहेंगे। अधिकतर कर्मचारी आज भी भारतीय हैं और वे दिन-दिन बढते ही जायेंगे। यह तो सभी मानेंगे कि इस वर्गके लिए अंग्रेजी भारतकी किसी भी भाषासे ज्यादा कठिन है।

दूसरे लक्षणपर विचार करते समय हम देखते हैं कि जबतक जनसाधारण अंग्रेजी बोलनेवाले न हो जायें, तबतक हमारा धार्मिक व्यवहार अंग्रेजीमे नही चल सकता। इस हदतक अंग्रेजी भाषाका समाजमें फैल जाना असम्भव मालूम होता है।

तीसरा लक्षण अंग्रेजीमें नही हो सकता, क्योंकि वह भारतके अधिकतर लोगोकी भाषा नही है।

चौथा लक्षण भी अंग्रेजीमे नही है, क्योंकि सारे राष्ट्रके लिए वह इतनी आसान नही है।

पाँचवें लक्षणपर विचार करते समय हम देखते हैं कि अंग्रेजी भाषाकी आज जो शक्ति है वह क्षणिक है। स्थायी स्थिति तो यह है कि भारतमे सार्वजनिक कामोमे अंग्रेजी भाषाकी जरूरत सदा कम रहेगी। अंग्रेजी साम्राज्यसे व्यवहार करनेमें अवश्य उसकी जरूरत पडेगी, अर्थात् वह साम्राज्यके अन्तर्गत पारस्परिक राजनैतिक व्यवहार [डिप्लोमेसी]की भाषा होगी, यह सवाल जुदा है। उसके लिए अंग्रेजी जरूर रहे। हमें अंग्रेजी भाषासे कुछ भी द्वेष नही है। हमारा आग्रह तो इतना ही है कि उसे मर्यादासे

बाहर न जाने दिया जाये। साम्राज्यकी भाषा तो अंग्रेजी ही होगी और इसलिए हम अपने मालवीयजी, शास्त्रियर, बनर्जी जैसे लोगोके लिए इसको पढना अनिवार्य कर देंगे और यह विश्वास रखेंगे कि ये लोग विदेशोमें भारतकी कीर्ति फैलायेंगे। परन्तु राष्ट्रकी भाषा अंग्रेजी नही हो सकती। अंग्रेजीको राष्ट्रभाषा बनाना कृत्रिम विश्वभाषा [एस्पेरेंटो] दाखिल करने जैसी बात है। अंग्रेजी राष्ट्रभाषा हो सकती है, यह कल्पना उसी प्रकार हमारी कमजोरीकी सूचक है जिस प्रकार एस्पेरेंटोको विश्वभाषा बनानेका प्रयत्न अज्ञानका सूचक है।

तब कौन-सी भाषा उन पाँच लक्षणोसे युक्त है? यह माने बिना काम चल ही नही सकता कि हिन्दी भाषामें ये सारे लक्षण मौजूद है।

हिन्दी भाषा मैं उसे कहता हूँ, जिसे उत्तरमें हिन्दू और मुसलमान बोलते है और देवनागरी या फारसी (उर्दूकी) लिपिमें लिखते है। इस व्याख्याका थोडा विरोध किया गया है।

ऐसी दलील दी जाती है कि हिन्दी और उर्दू दो अलग भाषाएँ है। यह दलील सही नही है। उत्तर भारतमें मुसलमान और हिन्दू दोनो एक ही भाषा बोलते है। भेद पढे-लिखे लोगोने डाला है। इसका अर्थ यह है कि हिन्दू शिक्षित-वर्गने हिन्दीको केवल संस्कृतमय बना दिया है। इस कारण कितने ही मुसलमान उसे समझ नही सकते। लखनऊके मुसलमान भाइयोने उस उर्दूमें फारसी भर दी है और उसे हिन्दुओके समझनेके अयोग्य बना दिया है। ये दोनो केवल पण्डिताऊ भाषाएँ है और उनको जनसाधारणमें कोई स्थान प्राप्त नही है। मैं उत्तरमें रहा हूँ, हिन्दू-मुसलमानोके साथ खूब मिला-जुला हूँ, और मेरा हिन्दी भाषाका ज्ञान बहुत कम होनेपर भी मुझे उन लोगोके साथ व्यवहार रखनेमें जरा भी कठिनाई नही हुई है। जिस भाषाको उत्तरी भारतमें आमलोग बोलते है, उसे चाहे उर्दू कहे चाहे हिन्दी दोनो एक ही भाषाकी सूचक है। यदि उसे फारसी लिपिमें लिखिये तो वह उर्दू भाषाके नामसे पहचानी जायेगी और नागरी लिपिमें लिखें तो वह हिन्दी कहलायेगी।

अब रहा लिपिका झगडा। अभी कुछ समय तक तो मुसलमान लडके फारसी लिपिमें अवश्य लिखेंगे और हिन्दू अधिकतर देवनागरीमें लिखेंगे। 'अधिकतर' इसलिए कहता हूँ कि हजारो हिन्दू आज भी अपनी हिन्दी फारसी लिपिमें लिखते है और कितने ही तो देवनागरी लिपि नही जानते। अन्तमें जब हिन्दू-मुसलमानोमें एक दूसरेके प्रति तनिक भी सन्देहकी भावना नही रह जायेगी और अविश्वासके सारे कारण दूर हो जायेंगे, तब जिस लिपिका ज्यादा जोर रहेगा, वह लिपि ज्यादा लिखी जायेगी और वही राष्ट्रीय लिपि हो जायेगी। इस बीच जिन मुसलमान भाइयो और हिन्दुओको फारसी लिपिमें अर्जी लिखनी होगी, उनकी अर्जी सरकारी कार्यालयोमें स्वीकार की जानी चाहिए।

इन पाँच लक्षणोसे युक्त हिन्दीकी होड करनेवाली और कोई भाषा नही है। हिन्दीके बाद दूसरा दर्जा बँगलाका है। फिर भी बंगाली लोग बंगालके बाहर हिन्दीका ही उपयोग करते है। हिन्दी-भाषी जहाँ जाते है, वहाँ हिन्दीका ही उपयोग करते है और इससे किसीको अचम्भा नही होता। हिन्दी-भाषी धर्मोपदेशक और उर्दू-भाषी मौलवी

सारे भारतमे अपने भाषण हिन्दीमे ही देते है और अपढ जनसाधारण उन्हे समझ लेते है। जहाँ अपढ गुजराती भी उत्तरमें जाकर थोडी-बहुत हिन्दीका उपयोग कर लेता है, वहाँ उत्तरका 'भैया' बम्बईके सेठकी नौकरी करते हुए भी गुजराती बोलनेसे इनकार करता है और सेठ 'भैया' के साथ टूटी-फूटी हिन्दी बोल लेता है। मैंने देखा है कि ठेठ द्रविड प्रान्तमे भी हिन्दीकी आवाज सुनाई देती है। यह कहना ठीक नही कि मद्रासमे तो अग्रेजीसे ही काम चलता है। वहाँ भी मैंने अपना सारा काम हिन्दीसे चलाया है। सैकड़ो मद्रासी मुसाफिरोको मैंने दूसरे लोगोसे हिन्दीमे बातचीत करते सुना है। इसके सिवा, मद्रासके मुसलमान भाई तो हिन्दी भाषा अच्छी तरह जानते है। यहाँ यह ध्यानमे रखना चाहिए कि सारे भारतके मुसलमान उर्दू बोलते हैं और उनकी सख्या सब प्रान्तोमें कुछ कम नही है।

इस तरह हिन्दी भाषा राष्ट्रभाषा बन चुकी है। हमने वर्षों पहले उसका राष्ट्र-भाषाके रूपमें उपयोग किया है। उर्दू भी हिन्दीकी इस शक्तिसे ही पैदा हुई है।

मुसलमान बादशाह फारसी अथवा अरबीको भारतकी राष्ट्रभाषा नही बना सके। उन्होने हिन्दीके व्याकरणको मानकर फारसी लिपिको अपनाया और फारसी शब्दोका ज्यादा उपयोग किया। परन्तु वे जनसाधारणके साथ विदेशी भाषासे व्यवहार नही चला सके। यह हालत अग्रेज अधिकारियोसे छिपी हुई नही है। जिन्हे सैनिक प्रशासन-का अनुभव है, वे जानते हैं कि जवानोके लिए हिन्दी या उर्दू पारिभाषिक शब्द बनाने पड़े है।

मद्रासके शिक्षित-वर्गके लिए इस मामलेमें कुछ कठिनाई है, फिर भी हम देखते हैं कि हिन्दी ही राष्ट्रभाषा हो सकती है।

महाराष्ट्री, सिन्धी, गुजराती और बगाली लोगोके लिए तो वह बडी आसान है। वे कुछ महीनोमे हिन्दीपर अच्छा अधिकार प्राप्त कर सकते है, उसमे राष्ट्रीय काम-काज चला सकते हैं। तमिल भाइयोके लिए यह उतनी सहल नही है। तमिल और अन्य दक्षिणी भाषाएँ द्रविड वर्गकी पृथक् भाषाएँ हैं और उनकी बनावट तथा उनका व्याकरण सस्कृतसे अलग ही है। कुछ शब्दोकी एकताके सिवा कोई अन्य एकता सस्कृतज भाषाओ और द्रविड भाषाओमें नही पाई जाती। परन्तु यह कठिनाई सिर्फ आजके पढे-लिखे लोगो तक ही सीमित है। हमे उनके देश-प्रेमपर भरोसा करने और उनसे विशेष प्रयत्नसे हिन्दी सीख लेनेकी आशा करनेका अधिकार है। यदि भविष्यमें हिन्दीको राष्ट्रभाषाका स्थान दिया जाता है तो हर मद्रासी स्कूलमे हिन्दी पढाई जायेगी और मद्रासका दूसरे प्रान्तोसे विशेष परिचय होनेकी सम्भावना बढ जायेगी। अग्रेजी भाषा द्रविड जनतामें प्रवेश नही पा सकी है। परन्तु हिन्दीको उनमे प्रवेश करनेमें देर नही लगेगी; तेलगू भाषी लोग आज ऐसा प्रयत्न कर भी रहे हैं। यदि यह सम्मेलन इस बारेमें राष्ट्रभाषा कैसी होनी चाहिए यह स्थिर कर सके, तब तो इस कामको पूरा करनेके उपाय करनेकी जरूरत भी मालूम होगी। जैसे उपाय मातृ-भाषाके बारेमे बताये गये हैं, वैसे ही आवश्यक परिवर्तनके साथ, राष्ट्रभाषाके बारेमें भी उपयुक्त हो सकते हैं। गुजरातीको शिक्षाका माध्यम बनानेमें खास तौरपर हमको ही प्रयत्न करना पड़ेगा। परन्तु राष्ट्रभाषाके आन्दोलनमें तो सारा भारत भाग लेगा।

हमने शिक्षाके माध्यम, राष्ट्रभाषा और शिक्षामे अग्रेजीके स्थानके सम्बन्धमे विचार किया। अब हमें यह सोचना बाकी है कि हमारी पाठशालाओमे दी जानेवाली शिक्षामें कमी है या नही।

इस विषयमें कोई मतभेद नही है। सरकार और लोकमत सब प्रचलित शिक्षा-पद्धतिको बुरी बताते हैं। इस बारेमे काफी मतभेद है कि इसमें क्या ग्राह्य है और क्या त्याज्य है। इन मतभेदोपर बहस करने योग्य ज्ञान मुझमे नही है। मै, जो विचार मैंने बनाये हैं, उन्हे इस सम्मेलनके आगे रख देनेकी धृष्टता करता हूँ।

शिक्षा मेरा क्षेत्र नही कहा जा सकता। इसलिए मुझे इस विषयमें कुछ भी कहते सकोच होता है। जब कोई अनधिकारी व्यक्ति अपने अधिकारसे बाहर बात करता है, तो मै उसकी बातका खण्डन करनेके लिए अधीर हो उठता हूँ। यदि कोई वैद्य वकील बननेका प्रयत्न करे, तो वकीलको गुस्सा आना ठीक ही है। इसी तरह मै मानता हूँ कि शिक्षाके बारेमें जिसे कुछ भी अनुभव न हो उसे उसकी टीका करनेका कोई अधिकार नही है। इसलिए पहले मुझे दो शब्द अपने अधिकारके बारेमें कहने पडेगे।

मैंने आधुनिक शिक्षापर अबसे पच्चीस वर्ष पहले ही विचार करना आरम्भ कर दिया था। मेरे और मेरे भाई-बहनोके बच्चोकी शिक्षाकी जिम्मेदारी मुझपर पडी। मुझे अपने स्कूलोकी कमियाँ मालूम थी, इसलिए मैंने अपने लडकोको शिक्षा देते हुए उनपर प्रयोग शुरू किये। मैंने उन्हे इधर-उधर भटकाया भी। मैंने किसीको कही, तो किसी-को कही भेजा। किसी-किसीको मैंने स्वय पढाया। मैं दक्षिण आफ्रिका गया। वहाँ भी मेरा असन्तोष ज्योका-त्यो बना रहा और मुझे इस बारेमें विशेष विचार करना पडा। वहाँ भारतीय शिक्षा-सघका[1] कारोबार बहुत समय तक मेरे हाथ में रहा, किन्तु अपने लड़कोको मैंने स्कूलोमें शिक्षा नही दिलवाई। मेरे सबसे बडे लडकेने मेरी अलग-अलग अवस्थाएँ देखी थी। उसने मुझसे निराश होकर कुछ समय तक अहमदाबादके स्कूलमें शिक्षा ली। परन्तु उसे ऐसा नही लगा कि उसे इससे लाभ हुआ। मै ऐसा मानता हूँ कि जिन्हे मैंने स्कूल नही भेजा, उनका नुकसान नही हुआ है, और उन्हे अच्छी शिक्षा मिली है। उनकी कमी भी मै जानता हूँ, परन्तु कमीका कारण यही है कि वे मेरे प्रयोगोकी शुरूआतमें पल-पुसकर बडे हुए, इसलिए उनपर सारे प्रयोगोमें दृष्टिकी एकताके बावजूद उसमे किये गये परिवर्तनोका प्रभाव पडा। दक्षिण आफ्रिकामें सत्याग्रहके समय कभी मेरे पास लगभग पचास लडके पढते थे।[2] इस स्कूलकी रचना अधिकतर मेरे हाथो हुई थी। उसका सम्बन्ध दूसरे स्कूलो या सरकारी शिक्षा-पद्धतिसे नही था। यहाँ भी ऐसा ही प्रयत्न चल रहा है और मैंने आचार्य ध्रुव और दूसरे विद्वानोका आशीर्वाद लेकर अहमदाबादमे एक राष्ट्रीय स्कूल खोला है। उसे पाँच महीने हुए हैं। उसके प्रिंसिपल गुजरात कॉलेजके भूतपूर्व प्रोफेसर साकलचन्द शाह हैं। उन्होने प्रोफेसर गज्जरकी देखरेखमें शिक्षा पाई है और उनके साथ दूसरे भी भाषाप्रेमी लोग हैं। इस योजनाके लिए मुख्य रूपसे मै जिम्मेदार हूँ। परन्तु

१. यहाँ नेटाल भारतीय शिक्षा सघकी ओर सकेत है। देखिए खण्ड २, पृष्ठ ३३४ और दक्षिण आफ्रिकाके सत्याग्रहका इतिहास, अध्याय ६।

२ फीनिक्सकी पाठशालामें; देखिए खण्ड ९, पृष्ठ १२२, १३७-४१।

उसमे इन सब शिक्षकोकी सहमति है और उन्होने केवल अपनी जरूरतके लायक वेतन लेकर इस कामके निमित्त अपना जीवन अर्पण किया है। परिस्थितिवश मै स्वय इस स्कूलमें पढ़ानेका काम नही कर सकता, परन्तु मेरा ध्यान उस तरफ हमेशा रहता है। इस तरह मैंने बनाया तो सिर्फ ढाचा ही है, परन्तु मै समझता हूँ कि वह थोडा सोच-विचार कर बनाया गया है। मुझे उम्मीद है कि आप लोग इसे ध्यानमें रखकर मेरी बातोपर विचार करेगे।

मुझे सदा ऐसा लगता रहा है कि आधुनिक शिक्षामे हमारी कौटुम्बिक व्यवस्थापर ध्यान नही दिया गया। उसकी रचना करनेमें हमारी जरूरतोका खयाल रखना स्वाभाविक ही है।

मैकॉलेने हमारे साहित्यका तिरस्कार किया, हमें अन्धविश्वासी माना। जिन लोगोने हमारी शिक्षाकी योजना बनाई, उनमें से अधिकाशको हमारे धर्मके बारेमे गहरा अज्ञान था। कितनो ही ने उसे अधर्म समझा। उन्होने हमारे धर्मग्रथोको अन्धविश्वासोका समुच्चय माना। उन्हें हमारी सभ्यता दोषपूर्ण मालूम हुई। यह समझा गया कि हमारा राष्ट्र अवनत है, और इसलिए हमारी प्रणालियोमें बहुत दोष होने चाहिए। इससे शुद्ध भावना होते हुए भी उन्होने प्रणाली गलत बनाई। चूँकि रचना नई करनी थी, इसलिए प्रयोजकोने तत्कालीन स्थितियोका ही ध्यान रखा। सारी योजना इस खयालको आगे रखकर बनाई कि उन्हे अपनी मददके लिए वकीलो, डॉक्टरो और क्लर्कोकी जरूरत होगी और हम सबको नये ज्ञानकी जरूरत होगी। इसलिए हमारे जीवनका विचार किये बिना पुस्तकें तैयार की गईं और जैसी कि अग्रेजीमें कहावत है, 'गाडीके पीछे घोडा जोत दिया गया।'

मलबारीने कहा है कि इतिहास-भूगोल पढाना हो, तो पहले बच्चोको घरका इतिहास-भूगोल सिखाना चाहिए। मुझे याद है कि मुझे इग्लैण्डकी 'काउण्टियो' को रटना पड़ा था और भूगोल-जैसा दिलचस्प विषय मेरे लिए जहर हो गया था। इतिहासमें भी मुझे कोई उत्साहप्रद बात नही मिली। इतिहास देशपर गर्व अनुभव करना सिखानेका साधन होता है। मुझे इतिहास सिखानेकी अपने स्कूलकी पद्धतिमें इस देशके बारेमें गर्व अनुभव करनेका कोई कारण नही मिला। उसके लिए मुझे दूसरी ही किताबें पढनी पडी।

अकगणित और अन्य विषयोके शिक्षणमें भी देशी-पद्धतिको कम स्थान दिया गया है। पुरानी पद्धति लगभग छोड़ ही दी गई है। हिसाब सिखानेकी देशी पद्धति मिट जानेसे हमारे बड़े-बूढोमें जल्दीसे हिसाब लगा लेनेका जो गुण था, वह हममें नही रहा।

विज्ञान नीरस है। उसके ज्ञानसे हमारे बच्चे कोई लाभ उठा ही नही सकते। खगोल-जैसे शास्त्र, जो बच्चोको आकाश दिखाकर सिखाये जा सकते है, सिर्फ पुस्तकोसे पढाये जाते हैं। मै नही समझता कि स्कूल छोडनेके बाद किसी विद्यार्थीको पानीकी बूँदका विश्लेषण याद रहा होगा।

स्वास्थ्यके सम्बन्धमें शिक्षा दी ही नही जाती, यह कहना अतिशयोक्ति नही है। साठ सालकी शिक्षाके बाद भी हमें हैजा, प्लेग आदि रोगोसे बचाव करना नही आया है। हमारे डॉक्टर भी इन रोगोको दूर नही कर सके। मै इसे अपनी शिक्षा-पद्धतिपर सबसे

वडा आक्षेप समझता हूँ। अपने सैकडो घरोको देखनेपर भी मुझे यह अनुभव नही हुआ कि उनमें स्वास्थ्यके नियमोने प्रवेश किया है। साँप काटनेपर क्या किया जाये, यह हमारे स्नातक वता सकेंगे, इसमें मुझे पूरा शक है। यदि हमारे डॉक्टरोको छोटी उम्रसे ही आरोग्य-शास्त्र सीखनेका मौका मिला होता, तो आज उनकी जो दयनीय अवस्था है, वह न हुई होती। यह हमारी शिक्षाका भयकर दुष्परिणाम है कि दुनियाके दूसरे सब हिस्सोके लोगोने अपने यहाँसे महामारीको निकाल बाहर कर दिया, परन्तु हमारे यहाँ तो वह जडे जमाती चली जा रही है और हजारो भारतीय वेमौत मरते जा रहे है। यदि इसका कारण हमारी गरीवी वताई जाये, तो इस वातका जवाव भी शिक्षा-विभागकी तरफसे मिलना चाहिए कि साठ सालकी शिक्षाके वाद भी भारतमें गरीवी क्यो है?

अव जिन विषयोकी शिक्षा ही नही दी जाती, उनपर विचार करे। शिक्षाका मुख्य हेतु चरित्रगठन होना चाहिए। धर्मके बिना चरित्र कैसे वन सकता है, यह मेरी समझमें ही नही आ सकता। हम 'इतो भ्रष्टस्ततो भ्रष्ट:' होते जा रहे हैं; इसका भान हमें आगे चलकर होगा। इस वारेमें मै ज्यादा नही कर सकता। लेकिन मै सैकडो शिक्षकोंसे मिला हूँ। उन्होने गहरे दु खके साथ मुझे अपने अनुभव सुनाये है। इस सम्मेलनको इस प्रश्नपर गम्भीरता-पूर्वक विचार करना ही पडेगा। यदि विद्यार्थियोकी नैतिकता चली गई, तो सव कुछ गया समझिए।

जिस देशमें ८५ से ९० फी सदी स्त्री-पुरुष खेतीके धधेमें लगे हुए हैं, उसमे इस धन्धेका जितना ज्ञान दिया जा सके उतना ही कम है। फिर भी हाई स्कूल तक के हमारे पाठयक्रममें उसका कोई स्थान ही नही है। ऐसी विषम स्थिति निभ नही सकती।

वुनाईका धन्धा नष्ट होता जा रहा है। किसानोके लिए यह फुरसतका धन्धा था। इस धन्धेको हमारे पाठ्य-क्रममें स्थान प्राप्त नही है। हमारी शिक्षासे सिर्फ क्लर्क पैदा होते हैं। और उसका ढग ऐसा है कि सुनार, लुहार या मोची, जो भी स्कूलके फदेमें फँस जाते हैं क्लर्क वन जाते है। हम सवकी यह कामना होनी चाहिए कि अच्छी शिक्षा सभीको मिले। परन्तु यदि शिक्षित होकर भी क्लर्क वन जायें तो क्या होगा?

हमारी शिक्षामें युद्ध विज्ञानका स्थान नही है। मेरे खुदके लिए तो यह दु खकी वात नही है। मैंने तो इसे एक सहज प्राप्त सुख माना है। लेकिन लोग हथियार चलाना सीखना चाहते हैं। जिसे सीखना हो उसे इसका मौका मिलना चाहिए। परन्तु यह तो पाठ्यक्रममें भुला ही दिया गया दीखता है।

सगीतके लिए कही स्थान नही दीखता। हमपर सगीतका वहुत असर होता है। हम काफी हदतक यह वात भूल गये हैं, नही तो हम किसी-न-किसी तरह अपने वच्चोको सगीत जरूर सिखाते। वेद-मन्त्रोकी रचना सगीतके आधारपर हुई जान पडती है। मधुर सगीत आत्माके तापको शान्त कर सकता है। हजारो लोगोकी सभामें हमे कभी-कभी कोलाहल सुनाई देता है। हजारो कठोंसे एक स्वरमें कोई राष्ट्रीय गीत गाया जाये, तो वह कोलाहलके वदले प्रेरणा वन सकता है। हजारो बालक एक स्वरसे वीर रसकी कविता गाकर शौर्य पैदा कर सकते है। यह कोई साधारण वात नही है। मल्लाह और दूसरे मजदूर मिलकर 'हरिहर', 'अल्लावेली' जैसे नारे लगाते हैं और

उनके सहारे अपना कठिन काम निभा पाते है, यह सगीतकी शक्तिका एक उदाहरण है। अग्रेज मित्रोको मैंने गाना गाकर अपनी ठड भगाते देखा है। हमारे बालक चाहे जब चाहे जैसे नाटकके गाने सीख लेते है और हारमोनियम वगैरा बेसुरे बाजे बजाते है। इससे उनका बडा नुकसान होता है। अगर सगीतकी शुद्ध शिक्षा मिले, तो नाटकके गीत गानेमे और बेसुरे राग अलापनेमें उनका समय नष्ट न हो। जैसे सच्चा गवैया बेसुरा या बेवक्त नही गाता, वैसे ही शुद्ध सगीत सीखनेवाला अश्लील गाने नही गायेगा। जन-जागृतिके लिए सगीतका उपयोग किया जाना चाहिए। इस विषयपर डॉक्टर आनन्द कुमारस्वामीके[1] विचार मनन करने योग्य है।

व्यायाम शब्दमें खेल-कूद वगैराको शामिल किया गया है। परन्तु इसका भी किसीने खयाल नही किया। देशी खेल छोड दिये गये है और टेनिस, क्रिकेट और फुटबालका बोलबाला हो गया है। यह माननेमें कोई हर्ज नही कि इन तीनो खेलोमें रस आता है। परन्तु हम पश्चिमी चीजोके मोहमें न फँसते, तो इन्ही जैसे मजेदार तथापि लगभग बिना खर्चके गेंद-बल्ला, गिल्ली-डडा, खो-खो, मग-माटली, नवनागेली, सात-ताली, कबड्डी, और खारोपाट आदि खेलोको न छोडते। ऐसी कसरत तथा कुश्तीके अखाड़े, जिसमें सभी अगोको पूरी-पूरी गति मिलती है और जिसमें बहुतसे लाभ निहित है, लगभग मिट गये है। मुझे लगता है कि यदि किसी पश्चिमी चीजकी हमें नकल करनी चाहिए तो वह 'ड्रिल' या कवायद है। एक मित्रने टीका की थी कि हमे चलना ही नही आता और एक साथ ठीक ढगसे चलना तो हम बिलकुल नही जानते। हजारो आदमी एक ताल और शान्तिसे किसी भी परिस्थितिमे दो-दो, चार-चारकी कतार बनाकर चल सके, यह योग्यता हममें नही है। ऐसी कवायद सिर्फ लडाईमें ही काम आती हो सो बात नही। परोपकारके बहुतेरे कामोमे भी कवायद बहुत उपयोगी सिद्ध हो सकती है। जैसे आग बुझाने, डूबे हुओको बचाने, बीमारोको डोलीमे ले जाने आदिमें कवायद बहुत ही कीमती साधन है। इस तरह हमारे स्कूलोमे देशी खेल, देशी कसरतें, और पश्चिमी ढगकी कवायद जारी करनेकी जरूरत है।

पुरुषोकी शिक्षापद्धति जैसी दोषपूर्ण है, वैसी ही स्थिति स्त्रियोकी शिक्षा-पद्धतिकी भी है। भारतमें स्त्री-पुरुषोका क्या सम्बन्ध है, स्त्रीका आम समाजमे क्या स्थान है, इन बातोपर विचार ही नही किया गया है।

प्रारम्भिक शिक्षाका बहुत-सा भाग दोनो वर्गोके लिए समान हो सकता है। इसके सिवा और सब बातोमे बहुत असमानता है। जैसे कुदरतने पुरुष और स्त्रीमें भेद रखा है, वैसे ही शिक्षामे भी भेदकी आवश्यकता है। ससारमे दोनोका स्थान समान है। परन्तु उनके कामोमे बँटवारा पाया जाता है। घरमें राज करनेका अधिकार स्त्रीका है। बाहरकी व्यवस्थाका स्वामी पुरुष है। पुरुष आजीविकाके साधन जुटानेवाला है, स्त्री संग्रह और खर्च करनेवाली है। स्त्री बच्चोको पालनेवाली है, उनकी विधाता है, उसपर बच्चोका चरित्र निर्भर है, वह बच्चोकी शिक्षिका है, इस अर्थमें भी वह

१. १८७७–१९४७; प्राच्यकला और सस्कृतिके मर्मज्ञ-समीक्षक, डांस ऑफ शिव आदि पुस्तकोंके लेखक।

सन्तानकी माता हैं। पुरुष इस अर्थमें सन्तानका पिता नहीं है। एक खास उम्रके बाद पिताका असर पुत्रपर कम हो जाता है। परन्तु माँ अपना दर्जा कभी नहीं छोडती। बच्चा आदमी बन जानेपर भी माँके सामने बच्चेकी तरह व्यवहार करता है। पिताके साथ वह ऐसा सम्बन्ध नहीं रख सकता।

यह योजना स्वाभाविक और ठीक हो, तो स्त्रीके लिए स्वतन्त्र कमाई करनेकी व्यवस्था नहीं होनी चाहिए। जिस समाजमें स्त्रियोको तार-मास्टर या टाइपिस्ट अथवा कम्पोजीटरका काम करना पडता हो, उसकी व्यवस्था बिगडी हुई ही होनी चाहिए। उस जातिने अपनी शक्तिका दिवाला निकाल दिया है और वह जाति अपनी पूँजीमें से खर्च करने लगी है, ऐसी मेरी राय है।

इसलिए जिस तरह स्त्रीको अँधेरेमें और हीन दशामें रखना बुरा है, उसी तरह उसे पुरुषके काम सौंपना निर्बलताका सूचक है और उसपर जुल्म करनेके बराबर है।

इसलिए एक खास उम्रके बाद स्त्रियोंके लिए दूसरी ही तरहकी शिक्षाका प्रबन्ध होना चाहिए। उन्हे गृह-व्यवस्था करनेका, गर्भकालमें सावधानी रखनेका, बालकोका पालन-पोषण करनेका ज्ञान देनेकी जरूरत है। इस योजनाको बनानेका काम बहुत कठिन है। शिक्षाक्रममें यह नया विषय है। इस बारेमें खोज और निर्णय करनेके लिए चरित्रवान् और ज्ञानवान् स्त्रियो तथा अनुभवी पुरुषोकी समिति नियुक्त करके कोई योजना बनवानेकी जरूरत है।

उपर्युक्त काम करनेवाली समिति कन्याकालसे शुरू होनेवाली शिक्षाका उपाय खोजेगी। परन्तु जिन कन्याओका बचपनमें ही विवाह हो गया हो, उनकी सख्याका भी तो पार नहीं है। फिर यह सख्या प्रतिदिन बढती जा रही है। विवाहके बाद तो उनका पता ही नहीं चलता। उनके बारेमें मैंने अपने जो विचार 'भगिनी समाज पुस्तकमाला' की पहली पुस्तककी प्रस्तावनामें दिये है, उन्हींको यहाँ उद्धृत करता हूँ

> स्त्री-शिक्षाको हम केवल कन्या-शिक्षासे ही पूरा नहीं कर सकेंगे। सहस्रो लड़कियाँ बारह सालकी उम्रमें ही बाल-विवाहकी बलि चढ जाती है और हमारी दृष्टिसे ओझल हो जाती हैं। वे गृहिणी बन जाती हैं। यह पापपूर्ण प्रथा जबतक हमारे समाजसे नहीं मिटेगी, तबतक पुरुषोको स्त्रियोका शिक्षक बनना सीखना पडेगा। उनको इस विषयकी शिक्षा दिये जानेपर अनेक बातोकी आशा कर सकते हैं। जबतक हमारी स्त्रियाँ हमारे विषयभोगकी सामग्री और रसोई करने-वाली न रहकर हमारी जीवन-सहचरी, अर्धांगिनी और सुख-दुखकी साझीदार नहीं बनती, तबतक हमारे सारे प्रयत्न मिथ्या जान पड़ते हैं। कोई-कोई अपनी स्त्रीको जानवरके बराबर समझते हैं। इस स्थितिके लिए कुछ सस्कृतके वचन और तुलसीदासजीकी यह प्रसिद्ध चौपाई भी बहुत जिम्मेदार है। तुलसीदासजीने एक जगह लिखा है: "ढोल गँवार शूद्र पशु नारी, ये सब ताडनके अधिकारी।" तुलसी-दासजीको मैं पूज्य मानता हूँ। परन्तु मेरी पूजा अधी पूजा नहीं है। या तो उपर्युक्त चौपाई प्रक्षिप्त है, अथवा यदि वह तुलसीदासजीकी ही है तो उन्होने उसे बिना विचारे केवल प्रचलित प्रथाके अनुसार जोड़ दिया है। सस्कृत वचनोके

वारेमे ऐसा कुछ भ्रम व्याप्त पाया है कि सस्कृतमे लिखे श्लोक तो शास्त्र-वचन ही होने चाहिए। यह भ्रम मिटाकर स्त्रियोको हीन समझनेकी जो प्रथा पडी हुई है, हमें उसे जडसे उखाड फेकना होगा। दूसरी तरफ हममें से कितने ही विषयान्ध होकर स्त्रीकी पूजा करते हैं और जैसे हम ठाकुरजीको हर समय नये आभूषणोसे सजाते हैं, वैसे ही वे स्त्रीको सजाते रहते हैं। इस पूजाकी बुराईसे भी हमें बचना जरूरी है। अन्तमें तो जैसे महादेवके लिए पार्वती, रामके लिए सीता और नलके लिए दमयन्ती थी, वैसे ही जब हमारे लिए हमारी स्त्रियाँ होगी और वे हमारी वातचीतमे भाग लेंगी, हमारे साथ वाद-विवाद करेंगी, हमारे विचारोको समझकर उनका पोषण करेंगी, हमारी बाहरी मुसीवतोको इशारेमे समझकर अपनी अलौकिक शक्तिसे उनको दूर करनेमे भाग लेंगी और हमे शान्ति देंगी, तभी हमारा उद्धार हो सकेगा, उससे पहले नही। कन्या-शालाओसे जल्दी ही ऐसी स्थिति प्राप्त करनेकी सम्भावना बहुत कम है। जबतक बाल-विवाहका फदा हमारे गलेमे पडा है, तबतक पुरुषोको अपनी स्त्रियोका शिक्षक बनना पड़ेगा। और उनकी यह शिक्षा केवल अक्षर-ज्ञान तक ही सीमित नही होगी; उन्हे धीरे-धीरे राजनीति और समाज-सुधारके विषयोकी शिक्षा भी दी जा सकती है। ऐसा करनेमे पहले अक्षर-ज्ञानकी जरूरत नही पड़ती। इसी तरह पुरुषको अपनी पत्नीके बारेमे अपना रवैया बदलना पडेगा। पत्नी जबतक वयस्क न हो जाये तवतक विद्योपार्जन करे और पति उसके साथ ब्रह्मचर्यपूर्वक रहे। यदि हम एकदम ही जड नही हो गये हैं तो हम बारह या पन्द्रह सालकी लड़कीपर प्रसवकी महावेदनाका बोझ हर्गिज नही डालेंगे। हमारा हृदय ऐसे विचार मात्रसे काँप जाना चाहिए।

विवाहित स्त्रियोके लिए वर्ग खोले जाते हैं, उनके लिए भाषण होते हैं। यह सव अच्छा है। इस काममे लोग अपना समय भी देते हैं। यह सब हमारे खातेमें जमाकी ओर लिखा जाता है। परन्तु इसके साथ ही जबतक पुरुष-वर्ग उपरोक्त कर्त्तव्यका पालन नही करता, तबतक ऐसा मालूम होता है कि परिणाम वहुत अच्छा नही निकलेगा। गहरा विचार करनेपर यह बात सबको स्वयमेव सुस्पष्ट हो जायेगी।

हम जहाँ-जहाँ नजर डालते हैं, वहाँ-वहाँ दिखाई पडता है कि कच्ची नीवपर भारी इमारते खडी की गई हैं। प्रारम्भिक शिक्षाके लिए चुने हुए शिक्षकोको शिष्टाचारवश भले ही शिक्षक कहा जाये, परन्तु यथार्थमे उन्हे यह नाम देना शिक्षक शब्दका दुरुपयोग करना है। विद्यार्थीकी वाल्यावस्था अत्यन्त महत्त्वपूर्ण होती है। जिस अवस्थामे मिले हुए ज्ञानकी स्मृति अमिट होती है। उसी अवस्थामे उसपर कमसे-कम ध्यान दिया जाता है और वह चाहे जैसी सामान्यसे सामान्य पाठशालामें डाल दिया जाता है। मेरी समझमें कॉलेजो और हाईस्कूलोमें साज-सामानपर इतना खर्च किया जाता है कि उसे यह गरीब देश नही उठा सकता। इसके विपरीत यदि प्रारम्भिक शिक्षा सुशिक्षित, प्रौढ और सदाचारी शिक्षको द्वारा ऐसी जगह दी जाती हो जहाँ सृष्टि-सौन्दर्यका

ख़याल रखा गया हो, तथा स्वास्थ्यकी सँभाल रखी जाती हो तो कुछ समयमें ही इसके बहुत अच्छे नतीजे देखे जा सकते हैं। ऐसा परिवर्तन करनेके लिए यदि आजके शिक्षकोंका माहवारी वेतन दुगुना कर दिया जाये, तो भी उद्देश्य पूरा नहीं होगा। बड़े परिणाम ऐसे छोटे परिवर्तनसे पैदा नहीं हो सकते। प्रारम्भिक शिक्षाका स्वरूप ही बदला जाना चाहिए। मैं जानता हूँ कि यह बहुत कठिन बात है और इसमें बाधाएँ भी बहुत हैं। फिर भी इसका हल गुजरात शिक्षा मण्डलकी शक्तिके बाहर नहीं होना चाहिए।

यहाँ यह कहना शायद जरूरी है कि मेरा उद्देश्य प्राथमिक स्कूलोंके शिक्षकोंके दोष बताना नहीं है। ये लोग अपनी शक्तिसे बाहर जो काम करके नतीजे दिखा पाते हैं, मेरी धारणा है कि उसका कारण हमारी सुन्दर सभ्यता है। यदि इन्हीं शिक्षकोंको पूरा प्रोत्साहन मिले तो जो नतीजा निकलेगा उसका अनुमान नहीं लगाया जा सकता।

शिक्षा मुफ्त और अनिवार्य होनी चाहिए या नहीं, इस बारेमें मैं कुछ भी कहना ठीक नहीं समझता। मेरा अनुभव कम है। इसके सिवा, जब किसी भी तरहका कर्त्तव्य लोगोंपर लादना मुझे ठीक नहीं मालूम होता तब यह अतिरिक्त कर्त्तव्य उन-पर कैसे डाला जाये। मुझे यह बात खटकती रहती है। इस समय हम शिक्षाको मुफ्त और ऐच्छिक रखकर उसके प्रयोग करें, तो यह अधिक समयानुकूल होगा। जबतक हम 'जो हुक्म' के जमानेसे गुजर नहीं जाते, तबतक शिक्षाको अनिवार्य करनेमें मुझे कई बाधाएँ दिखाई देती हैं। यह विचार करते समय महाराजा गायकवाड़की सर-कारका अनुभव कुछ हदतक सहायक हो सकता है। मेरी जाँचका नतीजा अनिवार्य शिक्षाके खिलाफ है; परन्तु वह जाँच नहींके बराबर है इस कारण उसपर जोर नहीं दिया जा सकता। मैं आशा करता हूँ कि इस विषयपर सम्मेलनमें आये हुए सदस्य हमें कीमती जानकारी देंगे।

मेरा यह विश्वास है कि अर्जियाँ देना इन सब दोषोंको दूर करनेका राजमार्ग नहीं है। शासक सहसा महत्त्वपूर्ण परिवर्तन नहीं कर सकते। यह साहस लोक-नेताओंको ही करना चाहिए। अंग्रेजोंके संविधानमें लोकसाहसका विशेष स्थान है। यदि हम यही सोचें कि सरकारके किये ही सब कुछ होगा, तो हमें अपना सोचा हुआ काम करनेमें सम्भवतः युग बीत जायेंगे। इंग्लैण्डकी तरह यहाँ भी सरकारसे प्रयोग करानेके पहले हमें स्वयं प्रयोग करके बताना चाहिए। जिसे जिस दिशामें कमी दीखे, वह उसी दिशामें कमी दूर करे और अच्छे नतीजे निकालकर दिखाये। वह तभी सरकारसे परिवर्तन करा सकता है। ऐसे साहसके लिए देशमें शिक्षाकी कई विशेष संस्थाएँ कायम करनेकी जरूरत है।

इसमें एक बहुत बड़ी बाधा है हमारा 'डिग्री' का मोह। हम समझते हैं कि हमारा सम्पूर्ण जीवन परीक्षामें उत्तीर्ण होनेपर निर्भर करता है। इससे जनताकी बड़ी हानि होती है। हम यह भूल जाते हैं कि 'डिग्री' सिर्फ सरकारी नौकरी करने-वाले लोगोंके ही कामकी चीज है। परन्तु जनताकी इमारत कोई नौकरीपेशा लोगों-पर थोड़े ही खड़ी करनी है। हम अपने चारों तरफ देखते हैं कि बिना नौकरीके तमाम लोग बहुत अच्छी तरह जीविकोपार्जन कर सकते हैं। यदि अपढ़ लोग अपनी होशियारीसे करोड़पति हो सकते हैं, तो पढ़े-लिखे लोग क्यों नहीं हो सकते? यदि

पढे-लिखे लोग डर छोड़ दे, तो उनमे अपढ लोगोके बराबर सामर्थ्य तो जरूर आ सकता है।

यदि 'डिग्री' का मोह दूर कर दिया जाये तो देशमे गैरसरकारी पाठशालाएँ बहुत चल सकती है। कोई भी शासन जनताकी सारी शिक्षाको नही चला सकता। अमरीकामें तो वह मुख्यत गैरसरकारी सस्थाओके बलपर ही चलती है। इग्लैण्डमे भी अनेक सस्थाएँ इसी प्रकार अपने बलपर चलती है। वे अपने ही प्रमाणपत्र भी देती है।

इस शिक्षाको मजबूत बुनियादपर खड़ा करनेके लिए भगीरथ-प्रयत्न करना पडेगा। इसमें तन, मन, धन और आत्मा सब कुछ लगाना होगा।

मुझे ऐसा लगा है कि अमरीकासे हम बहुत नही सीख सकते। परन्तु उनकी एक बात तो अनुकरणीय है, वहाँकी बडी-बडी शिक्षा सस्थाएँ एक बड़े ट्रस्टके जरिये चलाई जाती है। उसमे धनवान लोगोने करोडो रुपया दान दिया है। उसकी तरफसे बहुत-सी गैरसरकारी पाठशालाएँ चलाई जाती है। उसमे जैसे यह रुपया इकट्ठा हुआ है, वैसे ही शरीर सम्पत्तिके धनी, देशप्रेमी और विद्वान् लोग भी इकट्ठे हुए है। वे सारी सस्थाओकी जाँच करते है और उनकी रक्षा करते है। उन्हे जहाँ जितना ठीक लगता है, वहाँ उतनी मदद देते है। एक निश्चित विधान और नियमावलीको माननेवाली सस्थाओको यह मदद सहज ही मिल सकती है। इस ट्रस्टकी तरफसे उत्साहके साथ किये गये आन्दोलनके परिणामस्वरूप अमरीकाके बूढे किसानोको भी खेतीकी नई खोजोसे सम्बन्धित ज्ञान मिला है। ऐसी ही कोई योजना गुजरातमे भी चलाई जा सकती है। यहाँ धन है, विद्वत्ता है और धर्मवृत्ति भी मिटी नही है। बच्चे तो विद्याकी राह देख ही रहे है। ऐसा साहस किया जाये, तो कुछ ही वर्षोमे हम सरकारको बता सकते है कि हमारा प्रयत्न सच्चा है। फिर सरकार उसपर अमल करनेमे नही चूकेगी। हमारा करके दिखाया हुआ काम अर्जियोसे कही ज्यादा सफल होगा।

उपर्युक्त सुझावमे गुजरात शिक्षा मण्डलके दूसरे दो उद्देश्योका अवलोकन आ जाता है। इस प्रकारके ट्रस्टकी स्थापनासे शिक्षा-प्रचारका लगातार आन्दोलन होगा और शिक्षाका व्यावहारिक काम होगा। लेकिन, यह काम हो गया तो समझिए कि फिर सब-कुछ हो जायेगा। इसलिए यह काम आसान नही हो सकता। सरकारकी तरह धनवान् लोग भी जगानेसे ही जागते है। उन्हे जगानेका एक ही साधन है। वह है तपस्या। तपस्या धर्मका पहला और अन्तिम चरण है। मैं समझता हूँ कि गुजरात शिक्षा मण्डल तपस्याकी प्रतिमूर्ति है। उसके मन्त्रियो और सदस्योमें परोपकार-वृत्ति रहे और वे विद्वान् भी हो तो लक्ष्मी वहाँ अपने-आप चली आयेगी। धनवान् लोगोके मनमे सदा सन्देह रहता है। सन्देहके कारण भी होते है। इसलिए यदि हम लक्ष्मीदेवीको खुश करना चाहते है, तो [उसके लिए] हमे अपनी पात्रता सिद्ध करनी पडेगी।

इसके लिए साधन तो बहुत चाहिए फिर भी, इसे अधिक महत्त्व देनेकी जरूरत नही। जिसे राष्ट्रीय शिक्षा देनी होगी, वह पढा न होगा, तो अपना दैनिक कार्य करते हुए पढ लेगा, फिर वह पढ-लिखकर एक पेडके नीचे बैठेगा और जिन्हे विद्या चाहिए उन्हे

उसका दान देगा। यह ब्राह्मणका धर्म है; जिसमें इसका पालन हो वही कर सकता है। ऐसे ब्राह्मण पैदा होंगे, तो उनके आगे धन और सत्ता दोनों सिर झुकायेंगे।

मैं चाहता हूँ और परमात्मासे प्रार्थना करता हूँ कि गुजरात शिक्षा मण्डलमें इतनी अटल श्रद्धा जागे।

शिक्षा स्वराज्यकी कुंजी है। राजनैतिक नेता भले ही श्री मॉण्टेग्युके[1] पास जायें, राजनैतिक क्षेत्र भले ही इस सम्मेलनकी मर्यादाके अन्तर्गत न हो, परन्तु शुद्ध शिक्षाके बिना उस दिशामें भी सब प्रयत्न व्यर्थ हैं। शिक्षा इस सम्मेलनका खास क्षेत्र है। इसमें हमारी जीत हुई, तो फिर सर्वत्र जीत ही जीत है।

[गुजरातीसे]

महात्मा गांधीनो विचारसृष्टि

८. पत्र : मगनलाल गांधीको

[अक्तूबर २०, १९१७ के बाद][2]

चि० भाई मगनलाल,

तुम्हारा पत्र मिल गया है। गुरुप्रसादजीकी बात [मैं] तुम्हींपर छोड़ता हूँ। यदि तुम्हें लगे कि वे सच्चे देशभक्त हैं, और आश्रममें बिना झंझटके रह सकते हैं, तथा जो काम दिया जाता है उसे शुद्ध निष्ठासे करते हैं, तो १० रुपये तक भेजनेमें मुझे कोई आपत्ति नहीं दिखती। लेकिन इसका दायित्व तुमपर होगा। मैं नहीं चाहता कि मैं कोई काम करूँ और उसका परिणाम तुम्हें झेलना पड़े। मैंने उन्हें कुछ भेजनेकी बात नहीं सोची थी, मुझे उनकी जरूरतोंके बारेमें ही कुछ मालूम नहीं है, फिर भी किसी योग्य व्यक्तिके लिए तो हम गुंजाइश निकाल ही सकते हैं। व्रजलालभाईकी[3] तबीयत ठीक रहती है। भाई फूलचन्दकी[4] तबीयत भी ठीक हो गई होगी। उनसे कहना कि मुझे अपनी पत्नीकी हालतके बारेमें लिखें। भाई साकलचन्दसे कहना कि शिक्षा सम्मेलनके भाषणका अनुवाद मुझे जल्दी भेज दें।

बापूके आशीर्वाद

महादेव देसाईके स्वाक्षरोंमें मूल गुजराती पत्र (एस० एन० ६४१३) की फोटो-नकलसे।

१. ई० एस० मॉण्टेग्यु (१८७९–१९२४), भारत-मन्त्री (१९१७–२२) और मॉण्टेग्यु-चैम्सफोर्ड सुधारोंके सह-प्रणेता।

२. शिक्षा सम्मेलनके जिस भाषणकी चर्चा इसमें की गई है वह २०–१०–१९१७ को दिया गया था; देखिए पिछला शीर्षक।

३. आश्रमके निवासी।

४. (१८८४–१९३४) गुजरातके एक राजनीतिज्ञ और रचनात्मक कार्यकर्ता।

९. राष्ट्रीय शिक्षाकी योजना[1]

बहुत वर्षोसे कुछ मित्रोको और मुझे यह महसूस होता रहा है कि हमारी आधुनिक शिक्षा राष्ट्रीय नही है और फलस्वरूप इससे प्रजाको जो लाभ मिलना चाहिए वह नही मिलता। हमारे बालक शिक्षा प्राप्त करते-करते क्षीण हो जाते है। वे पुरुषार्थ नही कर पाते तथा उनको मिले ज्ञानका प्रसार जनसमाजमें, यहाँतक कि उनके परिवारोमें भी नही होता। युवक समुदायके मनमे आधुनिक शिक्षाका उद्देश्य केवल नौकरी प्राप्त करके आर्थिक स्थिति सुधारना ही होता है।

प्रोफेसर आनन्दशकर बापुभाई ध्रुव लिखते हैं '

"पिछले पाँच-सात वर्षोमें जब हिन्दुस्तानकी नींद टूटी और उसने आँखें खोलीं तो उसने शिक्षाकी समस्याको सामने खड़ा पाया। हिन्दुस्तानकी प्रजा अपने राज्य-संचालनमें भाग लेनेकी माँग करेगी, वह भाग लेगी भी। तो क्या उसकी तीन-चौथाई आबादी अशिक्षित रहेगी? हिन्दुस्तानकी जनता स्वदेशी मालका उपयोग करनेकी प्रतिज्ञा करेगी; तो क्या उनकी शिक्षामें व्यापारिक तथा औद्योगिक शिक्षाका उचित समावेश नहीं होगा? हिन्दुस्तान जब आत्मसम्मानको पहचानेगा तो क्या वह अपने प्राचीन साहित्य, कला, धर्म तथा तत्त्वज्ञानका निरूपण विदेशी विद्वानोके हाथों होने देगा? इन अभिलाषाओ और जीवनको पूर्ण बनानेकी ऐसी ही अन्य अभिलाषाओं तथा नई परिस्थितियोको ध्यानमें रखते हुए हम शिक्षाके प्रश्नको आजके युगमें विशेष महत्त्व देते है। जब हम इस महत्त्वपूर्ण प्रश्नकी गम्भीरताको समझकर अपनी शिक्षाके कुछ बुनियादी नियमोका दृढ़तापूर्वक पालन करेंगे तभी हम न केवल अपने तथा अपने देशके प्रति, बल्कि मानवताके प्रति अपने कर्त्तव्यको पूरा कर सकेंगे।

उन्होने आगे कहा है

गत कालके नेताओंको समाज-सुधार तथा धार्मिक जीवन अत्यन्त सरल प्रतीत होता था; लेकिन ताने-बानेके वे तार जिनसे धर्म बना है विभिन्न रंगोसे रंजित हैं और उनकी बुनाई बड़ी अच्छी तरह की गई है। और हिन्दू प्रजाका दारमदार इसीपर है। नये युगके लोगोंका यह कर्त्तव्य है कि वे इस सत्यको समझें और उसके अनुसार जीवन व्यतीत करें। प्रचलित शिक्षा-प्रणालीमें एक दोष यह है कि यह अधिकांशतः सरकारी नौकर, वकील तथा डॉक्टर तैयार करने तक ही सीमित है।

१. यह लेख गुजरातीमें मोहनदास करमचन्द गांधीके नामसे प्रकाशित हुआ था। इसमें शीर्षक लेख 'राष्ट्रीय गुजराती शाला' का एक अंश भी शामिल है। देखिये खण्ड १३, पृष्ठ ३३४–३६।

मैं भारतमें जहाँ-जहाँ घूमा-फिरा हूँ, वहाँ-वहाँ मैंने नेताओंसे इस विषयपर वातचीत की है। और लगभग विना किसी अपवादके सबने यह स्वीकार किया है कि शिक्षा-पद्धतिमें परिवर्तन होना चाहिए। निम्नलिखित उद्धरणसे यह स्पष्ट हो जाता है कि सरकारने इस शिक्षा-प्रणालीकी रचना जनसमाजकी समस्त आवश्यकताओंको पूरा करनेके उद्देश्यसे नहीं की थी.

> हमने शिक्षाको बढ़ावा देनेके कार्यको अत्यन्त महत्त्वपूर्ण माना है; क्योंकि यह केवल बुद्धिका चरम विकास ही नहीं करती वल्कि जो इसका लाभ लेते हैं उनके नैतिक चरित्रको भी ऊँचा उठाती है। और इस प्रकार आपको [सरकारको] ऐसे सेवक तैयार करके देती है जिनकी प्रामाणिक निष्ठामें विश्वास रखकर आप उन्हें भारतमें ऊँचे ओहदोंपर प्रतिष्ठित कर सकें।

शिक्षाके आधारभूत सिद्धान्तोंमें एक सिद्धान्त यह है कि समाजकी आवश्यकताओंको ध्यानमें रखकर इसकी रचना की जानी चाहिए। अपनी पाठशालाओंमें समाजकी आवश्यकताओंका विचार ही नहीं किया जाता।

शिक्षाकी पद्धतिमें परिवर्तन होना ही चाहिए, लेकिन इस सम्बन्धमें [यदि हम] सरकारपर भरोसा रखकर बैठे रहे तो यह समय व्यर्थ गँवानेके समान होगा। सरकार लोकमतकी राह देखेगी और विदेशी होनेके नाते फूँक-फूँककर कदम रखेगी। वह हमारी आवश्यकताओंको नहीं समझ सकती। यह भी हो सकता है कि उसके सलाहकारोंको [स्थितिकी] गलत जानकारी हो अथवा वे स्वार्थी हों। सम्भव है, ऐसे अनेक कारणोंसे सरकारकी मारफत वर्तमान पद्धतिमें महत्त्वपूर्ण फेरफार होते-होते बहुत समय निकल जाये। समय जितना बीत रहा है, प्रजाकी उतनी ही हानि हो रही है। फिर भी इसका मतलब यह नहीं कि हम सरकारसे कोई सहायता ही न लें। सरकारको आवेदन-पत्र अवश्य दिये जायें, लोकमत इकट्ठा किया जाये लेकिन अच्छेसे-अच्छा आवेदन-पत्र तो वही है जो हम स्वयं करके दिखायें। लोकमतको शिक्षित करनेके लिए भी यह सीधा रास्ता है, इसने कुछ-एक विद्वानोंसे सलाह-मशविरा करनेके वाद एक राष्ट्रीय पाठशाला खोलनेका प्रस्ताव पास हुआ है।

पाठशालाकी शिक्षा

इस पाठशालामें पूरी शिक्षा मातृ-भाषाके माध्यमसे दी जायेगी। किसी भी देशकी प्रजामें मातृ-भाषाका स्थान प्रमुख होता है लेकिन आश्चर्यकी बात है, हमारे यहाँ यह स्थान अंग्रेजीको प्राप्त है। यह अन्ततः प्रजाके लिए हानिकारक है। प्रथम गुजरात शिक्षा परिषदके अध्यक्षने भी कहा था कि शिक्षा मातृ-भाषाके माध्यमसे दी जानी चाहिए। स्वागत मण्डलके प्रमुखके भाषणमें भी मातृ-भाषाके जरिये शिक्षा देनेकी बातको जोरदार शब्दोंमें व्यक्त किया गया था। १८५४ के सरकारी खरीतेमें इस बातकी विशेष रूपसे चर्चा की गई है। फिर भी समझमें नहीं आता कि शिक्षा-पद्धतिका आधार कैसे परिवर्तित हो गया। खरीतेमें कहा गया है.

> देशकी विभिन्न भाषाओंके स्थानपर अंग्रेजीको प्रतिष्ठित करनेकी न तो हमारी इच्छा है और न हम उसे ठीक ही समझते हैं। जिन भाषाओंको आवादी-

का एक बहुत बड़ा हिस्सा समझ सकता है, हम उनके उपयोगके महत्त्वको हमेशासे अच्छी तरह समझते आये हैं। और हमने न्याय-प्रशासन तथा सरकारी अमलदारों और जनताके बीच व्यवहृत फारसीके स्थानपर अंग्रेजीको नहीं, बल्कि इन भाषाओंको ही प्रतिष्ठित किया है। इसलिए शिक्षाकी किसी भी योजनामें इन देशी भाषाओंके अभ्यासको बहुत प्रोत्साहन मिलना नितान्त आवश्यक है। जनताका वह बड़ा हिस्सा जिसकी परिस्थितियाँ उसे विज्ञानके क्षेत्रमें विचरनेके लिए सुविधा प्रदान नहीं करतीं और जो विदेशी भाषाकी कठिनाइयोंको नहीं लाँघ सकता, उसे यदि शिष्ट यूरोपीय विज्ञानसे परिचित कराना हो तो वह देश [हिन्दुस्तान] की एक अथवा दूसरी भाषामें ही किया जा सकता है। इसीलिए हम अंग्रेजी भाषाको और वैसे ही हिन्दुस्तानकी देशी भाषाओंको यूरोपीय विज्ञानके प्रचारका साधन मानते हैं। हमारी इच्छा है कि हिन्दुस्तानकी प्रत्येक पाठशालामें इन भाषाओंका अच्छी तरहसे विकास हो तथा अपेक्षणीय गुणोंसे सम्पन्न, अनुभवी तथा कुशल शिक्षक इन पाठशालाओंमें उच्च वर्गोंका संचालन करें।

हमारे माननीय वाइसरॉय लॉर्ड चैम्सफोर्डने भी २२ फरवरी, १९१७ को दिल्लीमें शिक्षा निदेशकोंके सम्मेलनमें भाषण देते हुए देशी भाषाओंके स्थानपर अंग्रेजी भाषाको प्रमुख स्थान देनेसे जो नुकसान हुआ है, उसका विवरण दिया। उन्होंने कहा कि अगर अंग्रेज जनताको विदेशी भाषाके माध्यमसे शिक्षा प्राप्त करनी पड़ती तो क्या होता? उन्होंने यहाँतक कहा कि बहुतसे अंग्रेज निराश होकर पढ़ना ही छोड़ देते। वे चालू शिक्षाके द्वारा शिक्षण देनेकी पद्धतिको 'विशस सिस्टम' [दूषित प्रणाली] कहते हैं। उनके वचन निम्नलिखित हैं:

> मेरा अभिप्राय अंग्रेजी और देशी भाषाओंके सापेक्ष्य दावेसे है। वर्तमान कालमें हम अंग्रेजीको उच्च शिक्षा प्राप्त करनेके माध्यमके रूपमें मानते हैं। इसका मुख्य कारण यह है कि नौकरी प्राप्त करनेके लिए अंग्रेजीका ज्ञान पासपोर्ट है और देशी भाषाओंमें अपेक्षित पाठ्यपुस्तकोंका अभाव है। लेकिन उसका परिणाम क्या होगा यह स्पष्ट है। एक विदेशी भाषाके जरिये कितने ही जटिल विषयोंको समझनेके लिए विद्यार्थियोंको बड़ी परेशानी होती है और अनेक प्रसंगोंमें तो उन्हें [विद्यार्थियोंको] उस भाषाके ज्ञानकी कमी होनेके कारण पाठ्य पुस्तकोंको घोटना-तक पड़ता है। हम घोटनेकी इस प्रवृत्तिकी तीव्र भर्त्सना करते हैं; लेकिन हमारे विचारानुसार विद्यार्थियोंकी ज्ञान-प्राप्तिकी तीव्र आकांक्षा सचमुच प्रशंसनीय है क्योंकि वे केवल पृष्ठ ही नहीं वरन् पूरीकी-पूरी किताबोंको उनका अर्थ समझे बिना रट लेते हैं। शिक्षाकी यह पद्धति निस्सन्देह उपहासास्पद है।... मैं आपसे तथा अपने-आपसे, विश्वविद्यालयसे सम्बद्ध व्यक्तियोंकी हैसियतसे, पूछना चाहूँगा कि यदि हमें विदेशी भाषाके द्वारा ही पूरी शिक्षा दी गई होती तो हम किस प्रकार आगे बढ़ते? मुझे आशंका है कि हमने कदाचित् उस प्रयत्नको निराश होकर छोड़ दिया होता। इस दूषित शिक्षा-प्रणालीने विद्यार्थियोंके मार्गमें जो काँटे

बिछाये हैं उनको दूर करनेका वे बड़ा जबरदस्त प्रयत्न करते हैं। उनकी इस ईश्वरप्रदत्त प्रतिभाको देखकर मैं आश्चर्यचकित रह गया हूँ।

पूनामें देशी भाषा द्वारा शिक्षा देनेका प्रयत्न किया गया है और उस पाठशालाके व्यवस्थापकोंके विचारानुसार सरकार और जनता — दोनोंका यही मत है। हमारा उद्देश्य भी देशी भाषाके माध्यमसे शिक्षा प्रदान करनेका है।

प्रथम [गुजरात] शिक्षा परिषद्के अध्यक्षने अपने भाषणमें बताया कि यदि मातृ-भाषा द्वारा शिक्षा दी जाये तो [विद्यार्थियोंको] हाई स्कूलमें जितना ज्ञान इस समय ग्यारह वर्षोंमें प्रदान किया जाता है उतना सात वर्षोंमें दिया जा सकता है। समयकी यह बचत कोई छोटी-मोटी बात नहीं है। इस शिक्षा-पद्धतिसे सबसे बड़ा लाभ यह होगा कि इससे जनताके खर्चका भारी बोझ हल्का हो जायेगा।

इस पाठशालाके पाठ्यक्रममें हिन्दी भाषा पढाई जाती है, उसका कारण यह है कि इस समय हिन्दी भाषा बोलनेवालोंकी सख्या लगभग २२ करोड है। और हमारे देशके इतने लोग जो भाषा बोलते हैं यदि वह [सब लोगोंको] पढाई जाये तो प्रत्येक व्यक्ति विभिन्न राजनैतिक हलचलोंको आसानीसे समझ सकेगा। मेरा दृढ विचार है, केवल हिन्दी ही राष्ट्रभाषाका स्थान ले सकती है। हिन्दीमें बहुत अच्छा साहित्य है। वह हमारी भाषाओंके साहित्यको समृद्ध बना सकती है।

आजकी पाठशालाओंमें धर्मशास्त्रकी शिक्षाकी कोई व्यवस्था नहीं है। इस पाठ-शालाके पाठ्यक्रममें इसको भी स्थान दिया गया है।

यहाँ लोगोंको दो धन्धोंकी शिक्षा दी जायेगी (१) खेती और (२) बुनाईका काम। इन दो धन्धोंके अगरूप लोगोंको लुहारी और बढईगीरीका अभ्यास भी कराया जायेगा। उनको भौतिक-शास्त्र, रसायन-शास्त्र, वनस्पति-शास्त्र और प्राणी-शास्त्रकी शिक्षा भी दी जायेगी। हिन्दुस्तानमें इन दो धन्धोंको सबसे अधिक महत्त्वपूर्ण स्थान प्राप्त है और जो लोग इन धन्धोंको सीख लेंगे उन्हे नौकरी तलाश करनेकी कोई जरूरत नहीं होगी।

प्रत्येक विद्यार्थीको स्वास्थ्य-रक्षाके उपाय बताये जायेंगे तथा सामान्य रोगोका घरेलू उपचार करनेकी शिक्षा दी जायेगी। विद्यार्थीकी मानसिक शिक्षाकी ओर जितना ध्यान दिया जायेगा, शारीरिक शिक्षाकी ओर उससे तनिक भी कम ध्यान नही दिया जायेगा। प्रत्येक विद्यार्थीको पाँच भाषाएँ सिखाई जायेंगी:

(१) गुजराती (२) हिन्दी (३) मराठी (४) संस्कृत तथा (५) अंग्रेजी।

गणितके विषयोंमें अंक-गणित, बीज-गणित, भूमिति, त्रिकोणमितिका ज्ञान दिया जायेगा। इस प्रकार आजकल कॉलेजोंमें पाँच वर्षमें जितनी शिक्षा दी जाती है उतनी शिक्षा प्रत्येक विद्यार्थीको दी जायेगी।

इतिहास-भूगोल गुजरात, हिन्द, इग्लैण्ड, ग्रीस, रोम तथा आधुनिक कालका इतिहास पढाया जायेगा। अन्तिम वर्षमें इतिहासका रहस्य तथा समाज-शास्त्र भी पढाया जायेगा। भूगोल सम्बन्धी जितना ज्ञान अन्य पाठशालाओंमें दिया जाता है उतना ही इस पाठशालामें भी दिया जायेगा।

खगोल सम्बन्धी मूलतत्त्वोंकी जानकारी दी जायेगी। अर्थ-शास्त्रके अभ्यासकी भी आवश्यकता है, [पाठ्यक्रममें] उसका भी समावेश किया गया है।

कानूनका थोड़ा-बहुत ज्ञान प्रत्येक व्यक्तिके लिए उपयोगी है, इसलिए व्यवहारमें इसकी जितनी जानकारी उपयोगी हो उतनी दी जायेगी।

बालकोंका प्रथम वर्षसे ही मनोरंजन हो और व्यायाम भी हो, इस उद्देश्यसे कवायदका विषय भी [पाठ्यक्रममें] शामिल किया गया है।

संगीतका विषय भी रखा गया है जिससे प्रत्येक विद्यार्थीको उसका कुछ ज्ञान मिले और कविता-पाठमें भी मदद मिले। पहले वर्षमें सारी शिक्षा मौखिक रूपमें ही दी जायेगी। उद्देश्य यह है कि बच्चोंको खेलते-खेलते सामान्य ज्ञानकी शिक्षा मिले और उनके मस्तिष्कका भी विकास हो। रंग, रूप, आकार आदिका ज्ञान भी कराया जायेगा जिससे बच्चेकी अवलोकन-शक्तिको बढ़ावा मिले। इस प्रकार शिक्षाका यह साधन शिक्षण-पद्धतिका एक अंग रहेगा।

हिन्दुस्तानमें परीक्षाओं-जैसी कोई चीज थी ही नहीं। यह पद्धति अभी हाल ही में शुरू की गई है। सन् १८५४ के खरीतेमें इसको महत्त्वपूर्ण स्थान नहीं दिया गया। अब परीक्षाका बहुत दुरुपयोग होने लगा है; हरएक विषय परीक्षाको ध्यानमें रखते हुए पढ़ाया जाता है और विद्यार्थीके मनमें यह बात अच्छी तरह घर कर लेती है कि परीक्षामें उत्तीर्ण होना ही पर्याप्त है। अध्यापकको भी इसी तरीकेसे अपना काम करनेकी आदत पड़ गई है। इसलिए विद्यार्थीको जो ज्ञान मिलता है वह ऊपरी होता है। कोई भी विषय पूरी तरहसे नहीं पढ़ाया जाता। इस सम्बन्धमें निम्नलिखित वाक्य पढ़ने लायक हैं:

> पिछले कुछ वर्षोंसे ये [परीक्षा] संस्थाएँ असाधारण रूपसे बढ़ गई हैं तथा हिन्दुस्तानकी समस्त शिक्षा-पद्धति इसके प्रबल प्रभावमें पड़ी हुई है। उसका परिणाम यह हुआ है कि शिक्षक भी इसी दृष्टिकोणसे कार्यका संचालन निश्चित पाठ्यक्रमके अनुसार बेमनसे करता चला जाता है तथा लिखित परीक्षाके अलावा जिसकी कसौटी नहीं हो सकती वैसे शिक्षणकी अवहेलना की जाती है। इसलिए बहुतसे शिक्षक और विद्यार्थी अपनी कार्य-शक्ति, सच्ची शिक्षापर नहीं बल्कि परीक्षामें परीक्षक कैसे प्रश्न पूछेगा, उसपर विचार करनेमें लगाते हैं।

परीक्षाकी पद्धति बहुत खराब है इस बातको ध्यानमें रखकर इस संस्थामें, अध्यापक ठीक तरहसे पढाते हैं या नहीं तथा विद्यार्थी अच्छी तरहसे समझ पाते हैं या नहीं — इन दो उद्देश्योंको निगाहमें रखते हुए समय-समयपर विद्यार्थियोंकी परीक्षा ली जायेगी। विद्यार्थियोंको परीक्षाके भयसे मुक्त करनेका प्रयत्न किया जायेगा। ये परीक्षाएँ पाठशालाके अध्यापकों तथा उसकी [पाठशालासे] जानकारी रखनेवाले व्यक्तियों द्वारा ली जायेगी। मान्यता यह है कि जो विद्यार्थी दस वर्ष तक शिक्षा प्राप्त करेगा उसको आजकलके स्नातक जितना ज्ञान होगा। इसके उपरान्त उसे खेती तथा बुननेके कामका व्यावहारिक ज्ञान दिया जायेगा। पाठशालासे निकलनेके बाद विद्यार्थियोंमें जो शक्ति होगी उसका व्यावहारिक जीवनमें उपयोग करनेमें ही उनकी खरी कसौटी मानी जायेगी। विद्या सीखनेका उद्देश्य नौकरी प्राप्त करना है, इस वहमको हर तरहसे

दूर करनेकी कोशिश की जायेगी। फिलहाल सामान्य तौरपर व्यावसायिक वर्गमे अंग्रेजी पढ़े-लिखे और वह भी सरकारी पद्धतिके अनुसार शिक्षा-प्राप्त व्यक्तियोको अच्छे स्थानोपर नियुक्त करनेका रिवाज है। लेकिन जब इस पाठशालासे विद्यार्थी शिक्षा प्राप्त करके निकलेंगे तब व्यापारियोके लिए पसद करनेको और भी क्षेत्र मिलेंगे। उस समय इस पाठशालाके शिक्षणकी कार्यक्षमताकी ओर जन-समाजका ध्यान जायेगा। व्यापारी लोग 'डिग्री' से मोहित नही होते, वे तो जिनमें कार्य करनेकी योग्यता होगी उसे स्थान देंगे।

यदि कोई विद्यार्थी दस वर्षतक शिक्षा प्राप्त करनेके बाद किसी एक विषयमें विशेष ज्ञान प्राप्त करना चाहे तो उसके लिए समुचित व्यवस्था करनेकी बातको भविष्य के लिए उठा रखा गया है।

निःशुल्क शिक्षा

इस पाठशालामें कोई शुल्क नही लिया जायेगा; और इसका खर्च दान द्वारा प्राप्त रकमसे चलाया जायेगा।

शिक्षक

वैतनिक शिक्षक रखे जायेंगे और वे सबके-सब बड़ी उम्रके तथा ऐसे लोग होंगे जिन्होंने कॉलेजकी शिक्षा पाई हो अथवा जिनका ज्ञान कॉलेजकी शिक्षाके स्तरका हो। मान्यता यह है कि बालकोंको प्रारम्भमें अच्छेसे-अच्छे शिक्षकोंकी आवश्यकता है।

[गुजरातीसे]

गुजराती, २१-१०-१९१७

१०. भाषण : सम्मेलनकी समाप्तिपर[1]

भड़ौच

अक्तूबर २१, १९१७

मुझे धन्यवाद तो पहले ही मिल चुका है। अपनी भावना प्रकट करनेका मुझे कोई मौका ही नही मिला। [पूरे मनसे की गई] ऐसी सेवाओंको ही मैं मोक्षका द्वार मानता हूँ। आज तीन दिनोंसे मैं बहुत प्रसन्न हूँ। मैं श्री हरिभाईका उपकार मानता हूँ, क्योंकि वे रात-दिन एक करके आगत सज्जनोंकी सेवा कर रहे हैं। जो लोग असन्तुष्ट रह गये हों उनसे मैं उनकी ओरसे क्षमा-याचना करता हूँ। दुधारू गायकी लात भी सहन करनी चाहिए। मुझे अपनी मातृभाषासे प्यार हो गया है — उसका रग चढ़ गया है। मुझे लगता है कि इसके बिना हमारा गुजारा नही हो सकता। उसके बिना हमारा उद्धार नही हो सकता। इसी कारण मैं जहाँ-तहाँ इसके सम्बन्धमें आग्रह करता रहता हूँ। और मेरे आग्रहका यहाँ कुछ असर पड़ा है, यह देखकर मैं आप सबका बड़ा

१. सम्मेलनके दूसरे दिन; देखिए पिछला शीर्षक ।

कृतज्ञ हुआ हूँ। आप मेरा उपकार क्यो और किस लिए माने? और यदि आप मेरा उपकार मानें ही, तो उसे मैं सुन नही सकता। मुझे आशा है कि विभिन्न समितियोको जो कार्य सौपा गया है वे उसे पूरा करेंगी। पुरुषार्थके सम्मुख कठिनाइयाँ टिक नही सकती। समयके अभावके कारण सभाके समक्ष लम्बे भाषणकी माँग को मैं स्वीकार नही कर सका उसके लिए मुझे खेद है। मैं आप सब भाइयो और बहनोको धन्यवाद देता हूँ। मैं अपना जीवन तभी सार्थक समझूँगा जब भारतके लिए अपने प्राण उत्सर्ग कर पाऊँ।

[गुजरातीसे]

गुजराती, २८-१०-१९१७

११. भाषण: जीवदया परिषद्मे[1]

भड़ौच
अक्तूबर २१, १९१७

जिस दिनसे मैं श्री आनन्दशंकर ध्रुवके सम्पर्कमे आया हूँ उसी दिनसे उनपर मुग्ध हूँ। वे निस्सन्देह गुजरातके एक अनमोल रत्न है। सम्भवत. गुजरात उन्हे अभी पूर्ण रूपसे नही जानता। इस सस्थाने जब श्री ध्रुवको अध्यक्ष-पद प्रदान किया तो मुझे लगा कि यह संस्था भी बड़ी प्रतिष्ठित होनी चाहिए। श्री ध्रुवने समस्त हिन्दू संसारके सम्मुख सिद्ध कर दिया है कि 'अहिंसा परमोधर्म.' वचन सारे भारतका है। जैन और हिन्दू धर्मके बीच ऐसा कोई भेद नही है कि उन्हे भिन्न माना जाये। गौतम बुद्धका बौद्ध धर्म वही बात कहता है कि जो हिन्दू धर्म कहता है।

श्री ध्रुव केवल गुजरातके ही रत्न नही है, वे सारे भारतवर्षके रत्न हैं। वे गुजरातमें लोगोके सामने नही आये इसलिए भारतीय जनतामे सुप्रसिद्ध नही हो पाये। वे बड़े ही समर्थ विद्वान् हैं। यह मैं उनके भाषणोसे ही समझ गया हूँ। उनकी कार्य-कुशलता व्यावहारिक जीवनके लिए अत्यन्त आवश्यक है। संसारी जीवनका मुझे भी बड़ा अनुभव है और मैंने सहन भी बहुत किया है। श्री ध्रुवके शुद्ध अन्त.करणसे निकले उद्‌गार मुझे बड़े प्रिय लगने लगे हैं और मुझमें उनका सत्संग करनेकी आकांक्षा जाग गई है।

श्री ध्रुव गुदड़ीके लाल हैं। उन्हे प्राचीन और अर्वाचीन हिन्दू जीवनका अच्छा अनुभव है। आजकी जो पीढी ऐशो-आरामके वातावरणमें पलकर बड़ी हुई और जो मनसूबोके दुर्ग बाँधती हुई [आधुनिक] सभ्यताके प्रवाहमे, बिना विचारे बह चली है, उसे समुचित और योग्य स्थानपर पहुँचानेके लिए श्री ध्रुव नौका-रूप हैं। वे ऐसे नेता हैं। बुजुर्ग लोग फलोके महत्त्वको जानते है। इसीलिए उन्होने भी [नई पीढ़ीकी] ठीक कद्र की है और युवकोके साथ मिलकर अपने विचारोको उनमे किस प्रकार दृढतापूर्वक प्रतिष्ठित किया जाये इस सम्बन्धमे अपनी कार्य-कुशलताका परिचय दिया है।

१. सम्मेलनके दूसरे दिन गाधीजीने अध्यक्ष प्रो० आनन्दशकर ध्रुवके प्रति धन्यवादका प्रस्ताव किया।

जीवदया मण्डल श्री ध्रुवको अपने अध्यक्ष-पदपर मनोनीत कर सका है, यह इस बातका प्रमाण है कि यह संस्था बड़े सुदृढ पायेपर कामकर सकी है और जीवदयाके अपने सिद्धान्तोंका प्रचार भविष्यमें भी जनताके बीच अधिकाधिक कर सकेगी तथा जनमनको इसके पक्षमें तैयार कर सकेगी। इतना कहकर मैं अध्यक्ष महोदयके प्रति धन्यवादका प्रस्ताव पेश करता हूँ। मुझे उम्मीद है कि आप सब इसका समर्थन करेंगे।

[गुजरातीसे]

मुम्बई समाचार, २३–१०–१९१७

१२. पत्र : वाणिज्य और उद्योग विभागके सचिवको

सत्याग्रह आश्रम
साबरमती
अक्तूबर ३१, १९१७

सचिव
वाणिज्य और उद्योग विभाग
दिल्ली

महोदय,

इसके साथ एक पत्रकी[1] नकल भेजता हूँ जो मैंने अभी हालमें समाचारपत्रोंको रेलके तीसरे दर्जेके यात्रियोंके सम्बन्धमें लिखा था।

ये कष्ट दो तरहके हैं: एक वे जिनका कारण स्वयं यात्रियोंकी लापरवाही है और दूसरे वे जिनको केवल रेल-कम्पनियाँ ही दूर कर सकती हैं। इनके भी दो हिस्से किये जा सकते हैं—कुछका निराकरण कोई बड़ा खर्च उठाये बिना किया जा सकता है और कुछका निराकरण बहुत ज्यादा रुपया खर्च करनेपर ही हो सकता है।

मैं स्वीकार करता हूँ कि जबतक युद्ध चलता है तबतक दूसरे वर्गके कष्टोंको दूर करनेका कोई प्रभावकारी उपाय नहीं किया जा सकता। इन कष्टोंका कारण स्थानकी अपर्याप्तता है। मैं इस सम्बन्धमें सुझाव देना चाहता हूँ कि टिकट बाँटनेमें कुछ कमी अवश्य की जा सकती है और गार्डों एवं अन्य अधिकारियोंको यात्रियोंके यातायातको व्यवस्थित करनेके निर्देश भी दिये जा सकते हैं। स्थिति यह है कि ताकतवर यात्री अधिकारियोंके प्रबन्ध या नियन्त्रणके बिना ही स्थान प्राप्त कर लेते हैं और कमजोर यात्री प्रायः रह जाते हैं। अधिकारियोंको यात्रियोंके यातायातको व्यवस्थित करनेके निर्देश देना ही काफी नहीं है, बल्कि उनका समय-समयपर डिब्बोंकी हालतकी जाँच करना और यह देखना भी लाजिमी कर देना चाहिए कि कोई यात्री अन्य यात्रियोंको असुविधामें डालकर ज्यादा जगहपर कब्जा किये तो नहीं बैठा है।

1. देखिए खण्ड १३, पृष्ठ ५५८-६२।

मैंने जो बुराइयाँ बताई हैं उनके लिए, जहाँतक स्वयं यात्रियोंके दायित्वका सम्बन्ध है, डिब्बोंकी दीवारोंपर ऐसे नोटिस चिपका देने चाहिए और स्टेशनोंपर ऐसे नोटिस-बोर्ड लगा देने चाहिए जिनमें पाखानों आदिके प्रयोगके सम्बन्धमें विस्तृत निर्देश दिये गये हों। गन्दी या घृणित आदतोंको वर्जित करनेवाले विनियम सावधानीसे लागू किये जा सकते हैं। विभिन्न देशी भाषाओंमें छपी एक निर्देश-पुस्तिका लम्बी यात्राके टिकटोंके साथ बाँटी जा सकती है और अन्य लोगोंको माँगनेपर मुफ्त दी जा सकती है। इस शिक्षणात्मक कार्यकी पूर्तिके लिए आम जनतामें से स्वयंसेवक माँगने चाहिए और उनका सहयोग लेना चाहिए।

अन्य शिकायतोंके बारेमें :

स्टेशन-निरीक्षकों और अन्य अधिकारियोंको हिदायत कर देनी चाहिए कि वे हर जंक्शन या मुख्य स्टेशनपर डिब्बोंको और पाखानोंको धुलवाएँ और साफ करवाएँ।

स्टेशनोंपर बने हुए पाखानोंकी सफाईके बारेमें पूरी सावधानी रखी जानी चाहिए। पाखानोंके उपयोगके बाद हर बार मिट्टी या कीटाणुनाशक दवा डाली जानी चाहिए। इसके लिए हर स्टेशनपर हर समय भंगी नियुक्त रखने चाहिए। मेरी विनम्र सम्मतिमें इस मामलेके महत्वको देखते हुए हर समय भंगी नियुक्त रखना अत्यावश्यक है। सम्भवतः ऐसे विशेष पाखाने बनवाना दूरदर्शितापूर्ण होगा जिनका उपयोग थोड़ा-सा शुल्क देकर कोई भी यात्री कर सके। इस समय स्टेशनोंपर जो पाखाने हैं वे बिलकुल बेपर्दा हैं। मेरा खयाल है कि पर्देकी व्यवस्था थोड़ा-सा खर्च उठाकर की जा सकती है।

समस्त प्रमुख स्टेशनोंपर स्नानकी सुविधाएँ सुलभ होनी चाहिए।

मुझे मालूम हुआ है कि स्टेशनोंपर खाने-पीनेकी चीजें बेचनेकी अनुमति केवल लाइसेंस-प्राप्त विक्रेताओंको ही मिली हुई है। लाइसेंस देनेसे पहले विक्रेताओंको चीजोंके भावोंकी लिखित सूची देनी चाहिए और खाने-पीनेकी चीजें और विक्रेता साफ हों, यह सुनिश्चित कर लेना चाहिए। तीसरे दर्जेके मुसाफिरखाने जैसे इस समय गन्दे रहते हैं वैसे गन्दे नहीं रखने चाहिए। बल्कि वे सावधानीके साथ स्वच्छ रखे जाने चाहिए।

यात्रियोंको टिकट प्राप्त करनेमें अकथनीय कष्टोंका सामना करना पड़ता है। टिकट प्रायः गाड़ी छूटनेसे केवल कुछ समय पहले ही दिये जाते हैं। इसका नतीजा होता है घूसखोरी, टिकटें खरीदनेके लिए यात्रियोंमें लड़ाई-झगड़े और अनेक लोगोंको निराशा।

मुख्य-मुख्य स्टेशनोंपर मुसाफिरखानोंको बिलकुल नया रूप देनेकी आवश्यकता है। वहाँ यात्रियोंके अनुसरणके लिए विनियम होने चाहिए। बेंचोंकी व्यवस्था बड़ी संख्यामें होनी चाहिए। वे दिनमें कई बार साफ की जायें। स्त्री-वर्गके उपयोगके लिए कमरोंकी व्यवस्था हो।

मेरी विनम्र सम्मतिमें अतिरिक्त डिब्बोंकी व्यवस्थाको छोड़कर अन्य सब बुराइयोंको रेलवे प्रशासन बहुत-थोड़ा अतिरिक्त खर्च उठाकर दूर कर सकता है। जरूरत सहानुभूति दिखाने और तीसरे दर्जेके यात्रियोंके अधिकारोंको मान्य करनेकी है, क्योंकि उनसे रेलवेको यात्रा-यातायातसे प्राप्त आयका सबसे बड़ा हिस्सा मिलता है।

यद्यपि यहाँ उल्लिखित शिकायतें पुरानी हैं, किन्तु वे इतनी आवश्यक हैं कि उनकी ओर तुरन्त ध्यान देना चाहिए। आशा है कि आपका विभाग इस मामलेको जल्दी हाथमें लेगा। मेरी सेवाएँ आपके सुपुर्द हैं, आप उनका जिस तरह उचित समझें उपयोग कर सकते हैं।

आपका विश्वस्त,
मो० क० गांधी

गांधीजीके स्वाक्षरोंमें अंग्रेजी मसविदे (एस० एन० ६३९३) की फोटो-नकल तथा रेलवे डिपार्टमेंट रेकर्ड्स, मार्च १९१८ : ५५२-टी-१७ १-२४; नेशनल आर्काइव्ज़ ऑफ इंडियासे।

१३. पत्र : भगवानजी मेहताको

साबरमती
आश्विन वदी २ [नवम्बर १, १९१७][1]

भाईश्री,

तुम्हारा पत्र मिला। वीरमगांवके[2] बारेमें मैंने बातचीत की है और उसके उत्तरकी प्रतीक्षा है। मुझे इसमें सन्देह नहीं कि यह बन्द होना चाहिए और होकर ही रहेगा।

पंजीयित पत्र मेरे पास है। आवश्यकता होगी तब जैसा तुम कहते हो वैसा कुछ-तो करूँगा।

काठियावाड़ आनेकी बड़ी इच्छा है परन्तु जब आ पाऊँ तब है। फिलहाल छ: महीने तो बिहारके[3] लिए सुरक्षित हैं।

१. बिहारके उल्लेखसे यह पत्र १९१७ में लिखा लगता है।

२. यह ब्रिटिश भारतीय क्षेत्र और काठियावाड़ रियासतोंकी सीमापर स्थित था। यहाँ सरकारने चुंगी लगा दी थी जिससे रेल-यात्रियोंको बहुत असुविधा होती थी। मोतीलाल नामक एक दर्जीने सर्वप्रथम गांधीजीका ध्यान इस ओर आकर्षित किया था। देखिए आत्मकथा भाग ५, अध्याय ३। समस्याको पूरी तरह समझ लेनेके बाद गांधीजीने उसके बारेमें बम्बई सरकार और बादमें गवर्नर लॉर्ड विलिंग्डनसे पत्र-व्यवहार किया। वाइसरॉय लॉर्ड चैम्सफोर्डसे अपनी भेंटके दौरान भी गांधीजीने इस कठिनाईका उल्लेख किया, जिसपर वाइसरॉयने कष्ट-निवारणका वचन दिया। अन्तत: नवम्बर १० को यह चुंगी समाप्त कर दी गई। देखिए "भाषण : प्रथम गुजरात राजनीतिक परिषद्में", ३-११-१९१७ और "प्रस्ताव : प्रथम गुजरात राजनीतिक परिषद्में-२", ५-११-१९१७।

३. चम्पारन, बिहारमें नीलकी खेती करनेवाले किसानोंकी समस्या सुलझ जानेपर गांधीजीने प्रान्तमें शिक्षा-प्रसार और स्वास्थ्य सम्बन्धी काम करनेका निश्चय किया था।

तुम्हारी तबीयत ठीक हो गई होगी।

तुम्हारा,
मोहनदास करमचन्द गांधी

भाई भगवानजी अनूपचन्द मेहता
वकील
सदर
राजकोट

गांधीजीके स्वाक्षरोंमें पोस्टकार्डपर लिखित मूल गुजराती पत्र (सी० डब्ल्यू० ३०३०) से।

सौजन्य : नारणदास गांधी

१४. भाषण : प्रथम गुजरात राजनीतिक परिषद्में[1]

[गोधरा]
नवम्बर ३, १९१७

गांधीजी परिषद्के मण्डपमें ठीक समयपर आ गये थे किन्तु लोकमान्य तिलक[2] ४५ मिनट देरसे आये इसलिए कार्यका आरम्भ भी किंचित् देरसे हुआ। अपना भाषण पढ़नेसे पहले गांधीजीने इस बातका उल्लेख करते हुए कहा :

इस देरके लिए मैं जिम्मेदार नहीं हूँ। हम स्वराज्यकी माँग करते हैं। अगर उससे सम्बन्धित परिषद्में पौन घंटेकी देर चिन्त्य नहीं मानी जाती तो स्वराज्यकी प्राप्तिमें भी पौन घंटेकी देर हमें खटकनी नहीं चाहिए।

इसके बाद गांधीजीने अपना भाषण पढ़ा :

भाइयो और बहनो!

मुझे आपने जो उच्च पद प्रदान किया है उसके लिए मैं आप सबका आभार मानता हूँ। भारतके राजनीतिक क्षेत्रमें मैं अभी ढाई वर्षका बच्चा हूँ।[3] मैं दक्षिण आफ्रिकाके अपने अनुभवसे यहाँ काम नहीं कर सकता। ऐसी स्थितिमें इस पदको स्वीकार करना कितने ही अंशमें उद्दण्डता समझी जा सकती है, तो भी आप लोगोंके अपार प्रेमके कारण मैंने यह पद स्वीकार किया है।

मैं अपनी जिम्मेदारी समझता हूँ। यह परिषद् गुजरातमें पहली है। समस्त देशके लिए यह समय बड़ा नाजुक है। इस समय साम्राज्यपर जैसी विपत्ति आई है वैसी

१. प्रथम गुजरात राजनीतिक परिषद्में अध्यक्ष पदसे दिया गया।

२. लोकमान्य बाल गंगाधर तिलक (१८५६–१९२०); भारतके महान् राष्ट्रीय नेता और विद्वान्। देखिए खण्ड २, पृष्ठ ४१८।

३. गांधीजी ९ जनवरी, १९१५को भारत लौटे थे।

पहले कभी नहीं आई थी। मेरे विचार सामान्य प्रवाहकी दिशामें नहीं बहते हैं। मुझे जान पड़ता है कि कुछ तो सामान्य प्रवाहकी उलटी दिशामें बहते हैं। ऐसी दशामें मुझे इस पदको स्वीकार करनेका अधिकार बहुत कम है। सभापतिका भाषण प्रायः सभाके विचारोंका दर्शक होता है। परन्तु मेरे विषयमें यह बात चरितार्थ न हो सकेगी। यह आपकी उदारता है कि ऐसे सुन्दर अवसरपर आपने मुझे अपने विचार गुजरातकी जनताके सामने रखनेकी अनुमति दी है। मेरे इन विचारोंपर इस सभामें टीका-टिप्पणी हो, उनसे मतभेद प्रकट किया जाये तथा उनका कड़ा विरोध हो तो इससे मुझे दुःख नहीं होगा। मैं तो यह चाहता ही हूँ कि उनपर खुलकर, पूरी-पूरी चर्चा हो। अपने इन विचारोंके सम्बन्धमें मैं इतना ही कहूँगा कि वे आजकलके नहीं, वरन् बहुत पुराने हैं। मैं तो उन्हींपर मुग्ध हूँ और इन ढाई वर्षोंके अनुभवसे उनमें कोई परिवर्तन भी नहीं हुआ है।

इस परिषद्की योजनाका विचार करनेवालों और उस विचारको कार्यका रूप देनेवालोंको मैं धन्यवाद देता हूँ। गुजरातके लिए यह एक महत्त्वकी घटना है और हम उसमें से बहुत सुन्दर परिणाम पैदा कर सकते हैं। यह परिषद् नींव-स्वरूप है। यदि नींव दृढ़ और मजबूत होगी तो मकानके विषयमें हम निश्चिन्त रह सकेंगे। यह परिषद् नींव-स्वरूप है, इससे इसका उत्तरदायित्व भी बड़ा है। मैं ईश्वरसे प्रार्थना करता हूँ कि वह हम सबको सुमति प्रदान करे और हमारा कार्य लोगोंके लिए भविष्यमें लाभदायी सिद्ध हो।

यह परिषद् राजनीतिक है। इस 'राजनीतिक' शब्दपर हम थोड़ा विचार करें। 'राजनीतिक' शब्द अंग्रेजीके 'पोलिटिकल' शब्दका अनुवाद है। अक्सर इस शब्दका संकुचित अर्थ किया जाता है, किन्तु मेरा खयाल है कि हमें उसका व्यापक अर्थ करना चाहिए। ऐसी परिषदोंकी इतिश्री यदि राजा-प्रजाके सम्बन्धोंके विचार-मात्रमें ही हो जाये तो उससे न केवल काम अधूरा रह जायेगा बल्कि इस विषयकी पूरी कल्पना भी हम न कर सकेंगे। उदाहरणके लिए, महुएके फूलोंका सवाल गुजरातके एक हिस्सेके लिए बहुत महत्त्वपूर्ण है। यदि ['राजनीतिक' शब्दके संकुचित अर्थमें] हम उसे एक राजनीतिक सवाल मानकर उसपर विचार करें तो सम्भव है उसका कड़वा परिणाम निकले या चाहा हुआ परिणाम न निकले। किन्तु यदि हम महुआ-सम्बन्धी कानूनकी उत्पत्तिका विचार करें और उसके साथ अपने कर्त्तव्यका भी विचार करें, तो सरकारसे अपनी लड़ाईमें हम ज्यादा जल्दी कामयाब होंगे और लड़नेकी चाबी भी हमें आसानीसे मिल जायेगी। मैं अपने जो विचार आपके सामने उपस्थित करनेवाला हूँ उससे आपको और स्पष्ट हो जायेगा कि राजनीतिक शब्दसे मेरा क्या अभिप्राय है।

अधिवेशन समाप्त होनेके पश्चात् परिषदें अपने पीछे कोई कार्यकारी मण्डल नहीं छोड़ जातीं और यदि ऐसा कोई कार्यकारी मण्डल हो भी तो उसमें स्वर्गीय महात्मा गोखलेके[1] शब्दोंमें "अपने धन्धोंसे समय मिलनेके बाद कार्य करनेवाले" होते हैं। हमें

१. गोपाल कृष्ण गोखले (१८६६-१९१५); भारतके एक प्रतिष्ठित नेता और राजनीतिज्ञ। देखिए खण्ड २, पृष्ठ ४१७-१८।

ऐसे आदमियोकी आवश्यकता है जो परिषदोके प्रस्तावोको व्यवहारमे लाना ही अपना कार्य समझें। ऐसे ही आदमियोके अधिक होनेसे परिषदोका कार्य सुन्दर और सफल हो सकता है। अभी तो बहुत-सा कार्य व्यर्थ जा रहा है। देशमे भारत सेवक समाज जैसी सस्थाओकी आवश्यकता है। सेवाको ही धर्म माननेवालोकी सख्या जब अधिक होगी तभी हम बड़े परिणाम देखनेकी आशा कर सकते हैं। हमारे सौभाग्यसे भारत धर्म-बद्ध है इसलिए यदि यह विचार उत्पन्न हो जाये कि इस समय देशसेवा ही धर्मकी अन्तिम सीमा है तो धार्मिक वृत्तिवाले मनुष्य बड़ी सख्यामें राजनीतिक कार्यमें सम्मिलित हो सकते हैं। मेरा विश्वास है कि जिस समय भारतके साधु-सत इस कामको अपने हाथोमे ले लेगे, उस समय भारत अपना अभीष्ट सरलतासे सिद्ध कर सकेगा। जो भी हो, परन्तु हमें इस परिषद्के कामके लिए एक कार्यकारी-मण्डल सगठित करना चाहिए जिसका काम परिषद्के उद्देश्योको कार्य-रूपमें परिणत करना और कराना हो।

देशमें स्वराज्यकी ध्वनि गूंज रही है। विदुषी श्रीमती एनी बेसेंट लाखो स्त्री-पुरुषोसे स्वराज्यका मन्त्र जपवा रही हैं। जिस बातको दो वर्ष पहले बहुतसे स्त्री-पुरुष नही जानते थे, श्रीमती बेसेंटने[1] अपनी चतुराई और अपने भारी प्रयत्नसे उसी बातका प्रचार कर दिया। लोगोमे इस आशाका संचार करनेमें कि स्वराज्य दूर नही है उनका नाम इतिहासमें प्रथम पक्तिमे लिखा जायेगा, इसमे सन्देह नही। स्वराज्य ही कांग्रेसका आदर्श था और है। स्वराज्यका विचार श्रीमती बेसेंटका दिया हुआ नही है, परन्तु यह स्वराज्य थोडे दिनोमें प्राप्त हो सकता है, इसका ज्ञान करा देनेवाली यही देवी हैं। इसके लिए उनका जितना उपकार माना जाये, कम है। उन्हे तथा उनके साथी श्री अरुण्डेल[2] और श्री वाडियाको[3] छोड़कर सरकारने कृपा की है तथा यह स्वीकार किया है कि स्वराज्यका आन्दोलन उचित है। हम चाहते हैं कि सरकारने जो उदारता श्रीमती बेसेंट एवं उनके साथियोके प्रति दिखलाई है वही वह भाई मुहम्मदअली[4] और भाई शौकतअलीके प्रति भी दिखाये। सर विलियम विन्सेंटने[5] इन दोनो भाइयोके बारेमें जो कुछ कहा है उसमे विचार करने योग्य कितना है — इसकी जाँच करनेकी कोई जरूरत नही है। आशा है, प्रजाकी यह प्रार्थना स्वीकार करके सरकार उन्हे छोड देगी और उनके छोडनेसे कोई अयोग्य परिणाम न निकले, इसका उत्तरदायित्व प्रजापर ही रखकर उसको ऋणी बनायेगी। जबतक सरकार इनको न छोडेगी तबतक उसकी उदारता

१. एनी बेसेंट (१८४७–१९३३); सुप्रसिद्ध वक्ता तथा थियोसॉफिस्ट; १९१६ में भारतीय होमरूल लीगकी स्थापना की; १९१७ के कांग्रेस अधिवेशनकी अध्यक्ष।

२. डॉ० जॉर्ज सिडने अरुण्डेल; एनी बेसेंट द्वारा सगठित राष्ट्रीय शिक्षा प्रसार समितिके अध्यक्ष; होमरूल लीगके सक्रिय कार्यकर्त्ता।

३. बी० पी० वाडिया; होमरूल लीगके संघटनकर्त्ता।

४. शौकतअलीके छोटे भाई और साप्ताहिक कॉमरेडके सम्पादक। सरकारने प्रथम विश्व-युद्ध शुरू होनेके तुरन्त बाद दोनों भाइयोंको नजरबन्द कर लिया था।

५. सर विलियम विन्सेंट; गवर्नर-जनरलकी कार्यकारिणी परिषद्के सदस्य, १९१७। भारतीय परिषद्के सदस्य, १९२३–३१।

अधूरी समझी जायेगी। हमारी उम्मीद है कि सरकार पूर्ण उदारता दिखाकर प्रजाका चित्त जीत लेगी और उसे अपना बना लेगी।

श्री मॉण्टेग्यु साहब आ रहे हैं। उनकी सेवामें पेश करनेके लिए प्रार्थनापत्र[1] तैयार किया गया है और उसपर हस्ताक्षर किये जा रहे हैं। इस प्रार्थनापत्रका प्रधान हेतु [स्वराज्यके बारेमें] प्रजाको शिक्षित करना है। स्वराज्य प्राप्त करनेके लिए अक्षर-ज्ञानकी आवश्यकता है, यह कहना इतिहासका अज्ञान प्रकट करता है। प्रजामे यह भावना भरनेके लिए कि हमें अपना कामकाज स्वय करना है, अक्षर-ज्ञानकी आवश्यकता नही है। इस विचारका होना ही काफी है। सैकडो अपढ राजाओने अच्छी तरह राज-काज किया है। उपर्युक्त भावना प्रजामें कहाँ तक है, यह देखना और यदि न हो तो उसे उत्पन्न करना — यह उस प्रार्थनापत्रका उद्देश्य है। इसलिए यह जरूरी है कि इस प्रार्थनापत्रपर लाखो स्त्री-पुरुष उसका मतलब समझकर हस्ताक्षर करे। श्री मॉण्टेग्युपर ऐसे प्रार्थनापत्रका प्रभाव पडे बिना नही रहेगा।

काग्रेस और मुस्लिम लीग द्वारा स्वीकृत योजनामें फेरफार करनेका किसीको अधिकार नही है, इसलिए इसके गुण-दोषोका विचार करनेका सवाल ही नही उठता। प्रस्तुत प्रयोजनकी दृष्टिसे अभी तो हमें इतना ही करना है कि प्रजाके नेताओने बहुत विचारपूर्वक जो योजना बनायी है उसे हम अच्छी तरह समझें और ऐसा प्रयत्न करे जिससे उसका अमल हो सके।

यह योजना[2] — स्वराज्य नही है, स्वराज्यकी नसैनीपर चढते हुए पैर रखनेकी जगह है। कुछ अग्रेज आलोचक कहते हैं कि हमें — भारतीयोको — स्वराज्य भोगनेका अधिकार नहीं, क्योंकि जो लोग स्वराज्य माँगते हैं उनमें हिन्दुस्तानकी रक्षा करनेकी शक्ति ही नही है। वे पूछते हैं कि क्या अग्रेज, सिपाहियोकी तरह, भारतकी रक्षा करेंगे और भारतीय प्रजा शासन-कार्य चलायेगी। यह प्रश्न हास्यजनक और दुखद है। हास्यजनक तो यो है कि हमारे अग्रेज मित्र अपनेको हमसे जुदा मानते हैं। हमारी कल्पना तो यह है कि हम ब्रिटेनके साथ रहकर स्वराज्य भोगेंगे। हम यह नही चाहते कि जो अग्रेज यहाँ बस गये हैं वे यहाँसे चले जायें। बल्कि हम तो उन्हे स्वराज्यके हिस्सेदार मानते हैं। स्वराज्यके सगठनमें यदि उनके हिस्सेमें सिपाहीगीरी आये तो उन्हे शिकायतका कारण नही रहता। परन्तु उनका यह कहना कि हम सिपाहीगीरीमें भाग न लेंगे, उतावलापन है। भारतकी वृत्ति जिस समय सैनिक शक्ति प्राप्त करनेकी होगी उस समय वह थोडे ही समयमें प्राप्त हो जायेगी। सहार करनेकी शक्ति कठोर वृत्तिका परिणाम है और कठोरताका पोषण करनेमें देर नही लगती। वह घासकी तरह उग सकती है। प्रश्न दुखद इसलिए है कि वह स्मरण दिलाता है कि आजतक सरकारने हमें सैनिक शिक्षासे वचित रखा है। यदि उसने हमें सैनिक शिक्षा देना चाहा होता तो आजतक शिक्षित-वर्गकी एक बडी सेना तैयार हो गई होती। इस युद्धमें शिक्षित-दलने

१. २६ नवम्बरको काग्रेस-लीगके शिष्टमण्डल द्वारा भारत-मन्त्री तथा वाइसरॉयको दिया गया था। देखिए परिशिष्ट १।

२. देखिए परिशिष्ट २।

भाग नही लिया, इसका दोष शिक्षित-दलकी अपेक्षा सरकारपर ही अधिक है। यदि सरकारकी नीति आरम्भसे भिन्न प्रकारकी होती तो आज सरकारके पास अजेय सेना तैयार होती। लेकिन वर्तमान स्थितिके लिए कौन दोषी है, इस प्रश्नको हम जाने दे। जिस समय अंग्रेजी शासन स्थापित हुआ, उस समय करोडोपर सत्ता चलानेके लिए बुद्धिमानीकी नीति यही मानी गई कि प्रजासे हथियार छीन लिये जायें और उसे सैनिक शिक्षा न दी जाये। लेकिन जब जागे तभी सबेरा समझकर राजा-प्रजा दोनोको यह भूल सुधार लेनी चाहिए।

ये विचार यह मानकर पेश किये गये है कि वर्तमान प्रवाह उचित है। किन्तु वर्तमान स्थिति सब प्रकारसे ठीक है, इस बातसे मैं सहमत नही हूँ। हम जो आन्दोलन चला रहे है वह पश्चिमी परिपाटीका है। हम जो स्वराज्य चाहते है वह भी पश्चिमी नमूनेका है। इसका परिणाम यह होगा कि भारतको पश्चिमी देशोके साथ प्रतियोगिता करनी पडेगी — उनका अनुसरण करना पडेगा। कई लोग कहते है कि दूसरा रास्ता ही नही है। मैं ऐसा नही मानता। भारत यूरोप नही है, जापान नही है, चीन नही है, इसे मैं भूल नही सकता। मेरे मनमे तो यह देववाणी समा गई है कि भारत ही कर्म-भूमि है, शेष सब भोग-भूमियाँ है। मुझे लगता है कि और देशोसे इस देशका काम भिन्न है। भारतमे धार्मिक साम्राज्य भोगनेकी शक्ति है। जैसी तपस्या इस देशमे हुई वैसी और कही नही हुई। भारतको लोहेके हथियारोकी जरूरत नही है। वह तो दिव्य अस्त्रोसे लडता आया है और अब भी लड सकता है। अन्य देशोने शरीर-बलकी उपासना की है। यूरोपमे जो दारुण युद्ध अभी चल रहा है वह इसका ज्वलन्त प्रमाण है। भारत आत्मबलसे सब-कुछ जीत सकता है। आत्माकी शक्तिके आगे शरीरकी शक्ति तृणवत् है, इसके अनेक उदाहरण है। ऐसा कवियोने गाया है। अनुभवी मनुष्योने वर्णन किया है। हृष्ट-पुष्ट ३० वर्षका जवान अपने ८० वर्षके बापके सामने बकरी हो जाता है। यह प्रेम-बलका उदाहरण है। प्रेम ही आत्मा है, आत्माका गुण है। इस प्रेमका उपयोग हम श्रद्धापूर्वक समस्त जगत्पर कर सकते है। हम धर्मके प्रति अपनी श्रद्धा खो बैठे है, इससे आधुनिक तूफानमे हम अपने पैर स्थिर नही रख सकते और इधर-उधर धक्के खाते फिरते है। इस बातपर आगे मैं और विचार करूँगा।

अपने इन विचारोके बावजूद मैं स्वराज्यके आन्दोलनमें भाग लेता हूँ — क्योकि सरकार आजकल जिस पद्धतिसे शासन कर रही है वह आधुनिक पद्धति है। इस पद्धतिका शुद्ध स्वरूप पार्लियामेंट है, इस बातको सरकार स्वय मानती है। यदि ऐसी पार्लियामेंट हमे न मिले तो हम 'इतो भ्रष्टस्ततो भ्रष्ट' हो जायेंगे [न तो हम स्वराज्यका अपना पुराना आदर्श सिद्ध कर पायेंगे और न हमे नया ही मिलेगा।] श्रीमती एनी बेसेंटका यह कहना बिलकुल ठीक है कि "या तो भारतको स्वराज्य मिले, नही तो यहाँ भूखो मरनेका रोग फैल जायेगा।" मैं ऑकडोके फेरमे नही पडना चाहता। मेरे लिए मेरी आँखोकी गवाही पर्याप्त है। यह गवाही बताती है कि भारतमें दरिद्रता बढ रही है। दूसरा कोई नतीजा हो भी कैसे? जो देश अपना कच्चा माल बाहर भेजता है और बाहरसे उसकी चीज बनकर यहाँ आती है तब जो उन्हे लेता है, जो देश स्वय कपास पैदा करता है फिर भी अपने कपडोके लिए करोडो रुपये बाहर

भेजता है उस देशमें गरीबी न हो तो क्या हो? जिस देशमे व्याह-शादीपर होनेवाले खर्चको फजूल-खर्ची कहते हैं उसे गरीब ही कहना होगा। जो देश प्लेग आदि रोगोको समाप्त करने योग्य खर्च नही कर सकता उसकी स्थिति भिखारी-जैसी ही है। जिस देशके लोग कड़े जाड़ेमें ऊनी वस्त्रोके अभावमें सोने-जैसा बहुमूल्य खाद जलाकर शीत-निवारण करते हैं, जिस देशके अधिकारी-वर्गकी तनख्वाहोका बडा हिस्सा बाहर देशोमें खर्च किया जाता है वह देश यदि कगाल रहे और उस देशकी प्रजा दिनभर-दिन दरिद्र होती जाये तो आश्चर्य ही क्या है। समस्त भारतमें घूमते हुए मैंने कही प्रजामे श्री और सम्पन्नता नही देखी। मध्यम श्रेणीके लोगोकी बड़ी दुर्दशा है। कनिष्ठ श्रेणीके लोगोके पास बस नीचे धरती और ऊपर आसमान है। उनके लिए अच्छा दिन ही नही है। भारतका धन पृथ्वीके पेटमें गडा हुआ है या जेवरोमें पडा हुआ है, यह कोरी कल्पना है। वह नगण्य है। लोगोकी आमदनी तो बढी नही, खर्च अलबत्ता बढ गये हैं। यह दशा सरकारने जान-बूझकर पैदा की है, सो नही। मैं मानता हूँ कि सरकारका हेतु शुद्ध है। उसका विश्वास है कि प्रजाकी उन्नति होती जाती है। अपनी "ब्ल्यु बुको" पर उसकी अटल श्रद्धा है। एक अग्रेजी कहावत है कि 'अकोसे जो चाहे सो सिद्ध हो सकता है'; वह यथार्थ है। इन्ही आँकडोके बलपर सरकारी अर्थशास्त्री सिद्ध करते हैं कि भारत उन्नति कर रहा है। मेरे जैसे साधारण लोग तो इन आँकडोको देखकर शंका-युक्त हो सिर हिलाते हैं। ऊपरसे देवता आकर कुछ कहे तो भी मैं यही कहूँगा कि "भारतको मैं कगाल होता देख रहा हूँ।"

हमारी पार्लियामेंट हो तो वह क्या करेगी? जब भारतवर्षमे पार्लियामेंट हो जायेगी तब भूले करने तथा उन्हे सुधारनेकी सत्ता हमें प्राप्त होगी। पहले तो हमसे भूले जरूर होगी, परन्तु चूँकि हम इस देशकी मिट्टीके बने हैं इसलिए उन्हे सुधारनेमें भी देर न लगेगी और इस कगालीका इलाज भी हमें तुरन्त सूझेगा। तब हम लका-शायरकी चीजोपर निर्भर नही होगे। तब हमें अपार धन लगाकर शाही दिल्ली बनानेकी भी आवश्यकता नही होगी। शाही दिल्लीका आकार भारतकी झोपडियोके अनुसार होगा। झोपडियो और पार्लियामेंट हाउसमें कुछ मेल तो रहेगा। प्रजा इस समय निर्धन हो गई है। उसे भूले करनेका भी हक नही रहा। जिसे भूले करनेका हक न हो वह कभी उन्नति भी नही कर सकता। हाउस ऑफ कॉमन्सका इतिहास भूलोका इतिहास है। एक अरबी कहावत है कि "इन्सान भूलोका पुतला है।" भूले करनेका अधिकार और उन्हे सुधारनेकी सत्ता — यह स्वराज्यकी व्याख्या है। यह स्वराज्य पार्लियामेंटमें है और हमें वह आज ही चाहिए। हम उसके योग्य हैं — आज ही। इसलिए हम उसे माँगेंगे तो वह हमें मिलेगा। वह "आज" कब आयेगा यह हमारे ही ऊपर अवलम्बित है।

ब्रिटिश प्रजातन्त्रके — ब्रिटिश प्रजाके आगे रोनेसे स्वराज्य नही मिलेगा। ब्रिटिश प्रजा ऐसी माँगको नही पहचानती। वह कहेगी — "हम किसीके पास स्वराज्य माँगने नही गये। हमने अपनी शक्तिके बलसे उसे प्राप्त किया है। तुम्हे नही मिला, क्योंकि तुम अयोग्य हो। जब तुम योग्य होगे तब तुम्हे वह मिलेगा ही।"

यह योग्यता कैसे आयेगी? हमें भारतवर्षकी प्रजासे स्वराज्य माँगना है। हमारी प्रार्थना उसी भारतीय प्रजासे है। जब भारतवर्षके किसान यह जानने लगेंगे कि स्वराज्य क्या है, तब स्वराज्यको कोई नही रोक सकेगा।

सर विलियम विल्सन हटरने[1] लिखा है, "ब्रिटिश साम्राज्यमे अभीष्ट सिद्धिका सहजसे-सहज उपाय सग्राममें प्राप्त की हुई विजय है।" यदि हमारा शिक्षित-वर्ग चुप-चाप इस लडाईमे शामिल हो जाता और अपना हिस्सा अदा करता तो मेरा विश्वास है कि हमारी माँग आज ही पूरी हो जाती; इतना ही नही, यह प्राप्ति कुछ अलग प्रकारकी होती है।

हम बहुधा कहते है कि भारतके सिपाहियोने फ्रास और मेसोपोटामियाके मैदानोमें अपने प्राणोकी आहुति दी है। इसका श्रेय हम शिक्षितोको नही मिल सकता। इन सिपाहियोको हमने तैयार नही किया और न सिपाही देशाभिमानसे प्रेरित होकर युद्ध-क्षेत्रमें गये। उनको स्वराज्यका ज्ञान नही है। युद्धकी समाप्तिपर वे स्वराज्य माँगेंगे भी नही। वे अपने अन्नदाताका नमक अदा करने — अपनी नमक हलालीका परिचय देने — वहाँ गये है। स्वराज्यकी माँगके लिए हम उनको बीचमे नही ला सकते। शिक्षित-वर्गने लडाईमे भाग नही लिया है, इसके लिए वह दोषी नही है, इतना ही कह सकते है।

हमने कठिन समयमे राजभक्ति दिखाई है, इससे भी हमारी योग्यता सूचित नही होती। राजभक्ति गुण नही है। राजभक्ति तो राष्ट्रके अस्तित्वकी अनिवार्य आवश्यकता है। राजभक्तिसे स्वराज्य नही मिल सकता, यह तो स्वयसिद्ध है।

स्वराज्यकी हमारी योग्यताका पता इस बातसे चलता है कि हममें स्वराज्यकी तीव्र इच्छा उत्पन्न हो गई है और हम यह अच्छी तरह जान गये हैं कि अधिकारी-वर्गने चाहे कितने ही शुद्ध भावसे कार्य किया हो, पर अब उसका अन्त समय आ रहा है। बस इतनी योग्यता हमे अपने कार्यके लिए काफी है। स्वराज्यके बिना अब भारतमें शान्ति सम्भव नही है।

किन्तु यदि स्वराज्यका आन्दोलन हम केवल सभाएँ करके ही करते रहे तो इससे प्रजाकी हानि होना सम्भव है। सभाएँ और व्याख्यान योग्य स्थान और योग्य समय-पर हो, यह ठीक है; परन्तु सभाओ और व्याख्यानोसे राष्ट्रका निर्माण नही हो सकता।

जिस प्रजाके हृदयमे स्वराज्यकी तरगें हिलोरे मार रही हो उसमें और सब दिशाओमें जागृतिके चिह्न दिखने चाहिए। स्वराज्यका पहला आधार प्रत्येक व्यक्ति है। "यथा पिण्डे तथा ब्रह्माण्डे" यह महावाक्य इस स्थानपर भी बिलकुल सच है। यदि हमारे हृदयमें निरन्तर लडाई चलती रहे, यदि हम टेढे चले, अपनी इन्द्रियोपर अकुश रखनेके बदले इन्द्रियाँ हमारे ऊपर राज्य करती हो तो हमारे लिए स्वराज्यका अर्थ क्या हो सकता है? पहली सीढी तो यह है कि हम अपने ही ऊपर राज्य करना सीखें।

इसके बाद कुटुम्ब. यदि कुटुम्बमे कलह हो, भाई-भाई लडें, कुटुम्बी एक साथ न रह सके, अविभक्त कुटुम्ब यानी स्वराज्य भोगनेवाले कुटुम्ब भी झगड़कर विभक्त हो जायें तो हम स्वराज्यके योग्य कैसे बन सकते है?

१. (१८४०–१९००); भारतीय मामलोंके विशेषज्ञ; देखिए खण्ड १, पृष्ठ ३९६।

इनके बाद जाति : यदि हम जातिमें एक दूसरेसे द्वेषपूर्वक व्यवहार करें, जातियाँ अपना काम-काज न चला सकें, उनमें कोई व्यवस्था न हो, बड़े लोग बड़प्पन चाहें तथा जातिभाई स्वेच्छाचारी हों और यदि हम इतना संकुचित स्वराज्य भी न चला सकें तो राष्ट्रीय स्वराज्य कैसे चला सकेंगे?

कुटुम्ब और जातिके बाद शहर : अपने शहरका कारोबार हम स्वयं न चला सकें, अपनी गलियाँ साफ न रखें, हमारे घर खण्डहर हों, रास्ते टेढ़े-मेढ़े हों, शहरका कारोबार चलानेवाले लापरवाह, बे-जवाबदेह अथवा स्वार्थी हों तो हमें विशेष सत्ता ग्रहण करनेका क्या अधिकार है?

शहरकी व्यवस्था कर सकनेमें ही सच पूछिए तो स्वराज्यकी कुंजी है। इसलिए उनके विषयमें अधिक विचार करनेकी आवश्यकता है। भारतमें प्लेगने अपना घर बना लिया है।[1] हैजा तो हमारे साथ है ही। मलेरिया प्रति वर्ष सहस्रों प्राणियोंकी बलि लेता है। दुनियाके दूसरे हरएक हिस्सेमें लोगोंने वहाँसे प्लेगको मार भगाया है। ग्लासगोमें जाते ही वह निकाल दी गई, जोहानिसबर्गमें वह एक ही बार आ सकी।[2] वहाँकी नगरपालिकाओंने बड़े प्रयत्नसे एक ही मासमें उसको निर्मूल कर दिया। परन्तु प्लेगपर हम कुछ भी प्रभाव नहीं डाल सकते। इसके लिए हम सरकारपर दोषारोपण नहीं कर सकते। सच पूछिए तो दरिद्रताको भी हम दोष नहीं दे सकते। प्लेगके प्रतिकारमें हमें कोई भी नहीं रोकता — हमारे रास्तेमें रुकावटें नहीं डालता। अहमदाबाद-जैसा शहर दरिद्रताका बहाना करके नहीं छूट सकता। मुझे डर है कि प्लेगके बारेमें हमें अपनी जिम्मेदारी माननी ही पड़ेगी। यह आश्चर्यकी बात है कि जब हमारे मुहल्लोंमें — हमारे रहनेके स्थानोंमें — प्लेग जारी रहता है, तब अंग्रेजोंके मुहल्लोंमें उसका पता भी नहीं लगता। इसका कारण भी शीघ्र समझमें आ जाता है। वहाँ हवा स्वच्छ रहती है, घर दूर-दूर हैं, रास्ते चौड़े और साफ हैं और पाखानोंकी व्यवस्था बहुत अच्छी है। हमारे यहाँ तो पाखाने जाना नरक-वास करने जैसा है। जिस देशमें ९० फीसदी लोग नंगे पाँव चलते हैं, लोग चाहे जहाँ थूकते हैं, जहाँ चाहें पाखाना फिरते हैं और ऐसे ही रास्तोंपर हमें चलना पड़ता है। ऐसी दशामें यदि वहाँ प्लेग अपना डेरा डाले तो आश्चर्यकी कौन-सी बात है?

जबतक हम अपने शहरोंकी हालत नहीं बदलते, अपनी बुरी आदतोंको नहीं छोड़ते, अपने पाखानोंको नहीं सुधारते तबतक हमारे लिए स्वराज्यका मूल्य कुछ भी नहीं है।

यहाँ एक बात कहना अनुचित न होगा। हम अपने सबसे उपयोगी सेवक मेहतरोंको अस्पृश्य मानते हैं। उसका फल यह होता है कि हम उन्हें अपने पाखाने भी अच्छी तरह साफ नहीं करने देते और खुद उन्हें साफ करते नहीं, क्योंकि धर्मके नामपर हम मानते हैं कि उससे हम अशुद्ध हो जायेंगे। इसलिए यद्यपि हम स्वयं स्वच्छ माने जाते हैं तथापि हमारे घरका एक भाग दूसरे देशोंकी तुलनामें सबसे ज्यादा गन्दा रहता है और इसी कारण हम सदा गंदी हवामें पलते और बड़े होते हैं। जबतक हम गाँवोंमें रहते थे तबतक हम आराममें थे। परन्तु शहरोंमें हम अपनी कुटेवोंके कारण आत्मघात कर रहे हैं।

१. भारतमें यह बीमारी १९१७ में फैली और जुलाई १९१७ से जून १९१८ के बीच लगभग ८०,००० लोग मरे।

२. १९०४ में; देखिए खण्ड ४, पृष्ठ १६२-३ व ५, पृष्ठ ११४-५।

जहाँ लोग इतनी बड़ी सख्यामे बेमौत मरते हो वहाँ ऐसा ही मालूम होता है कि लोगोमे धर्म, कर्म और आचारका अभाव है। मैं तो ऐसा मानता हूँ कि प्लेगको नष्ट करना हमारी शक्तिके बाहर नही है। यदि हम प्लेगको निर्मूल कर सकें तो इससे हमारी स्वराज्य-विषयक योग्यता जितनी बढ़ेगी उतनी महान् आन्दोलनसे भी नही बढ सकेगी। इस सवालपर हमारे डॉक्टरो और वैद्योको विचार करना चाहिए।

हमारे पडोसमे ही डाकोरजीका प्रसिद्ध धाम है। मैंने उसे देखा है। उस पवित्र धामकी अपवित्रताका पार नही है। मै अपनेको शुद्ध वैष्णव मानता हूँ इसलिए मुझे इस विषयमे आलोचना करनेका अधिक अधिकार है। डाकोरजीमे ऐसी घोर गन्दगी है कि जिसे स्वच्छताकी आदत हो उसे डाकोरजीमे एक दिन विताना भी कठिन हो जाता है। यात्री, जैसा उनके जीमे आता है उस तरह, तालावको और रास्तोको गन्दा करते हैं। मन्दिरके मुखिया लोग आपसमे लड़ते है और रणछोडरायजीके आभूषणो आदिकी हिफाजतके लिए "रिसीवर" नियुक्त हुआ है, सो अलग। इस स्थितिको सुधारना हमारा काम है। स्वराज्य लेनेको दौड़नेवाले हम गुजराती यदि अपना ही आँगन साफ न रखे, घर न सुधारें तो स्वराज्यकी सेनामे हम कौन-सी विजय प्राप्त कर लेंगे।

शहरोमे शिक्षाकी स्थितिपर विचार करनेसे भी निराशा ही होती है। अपने निजी साहससे लोगोकी शिक्षाका प्रवन्ध करना हमारा पवित्र कर्त्तव्य है। किन्तु होता यह है कि देशमे हजारो बालक अशिक्षित रहते है और उनकी शिक्षाके लिए हमारी दृष्टि सरकारपर लगी रहती है।

शहरोंमें शराबका व्यसन बढ़ रहा है। ईरानियोकी [चाय-आदिकी] दूकाने बढ़ रही हैं। जुआ बढ रहा है। यदि हम इन सबका प्रतिकार न कर सके तो स्वराज्य हम कैसे प्राप्त कर सकेंगे? स्वराज्यका अर्थ ही यह है कि हम अपना कारोबार स्वयं चलायें।

जान पडता है कि अब वह समय आ गया है जब हमारे और हमारे बच्चोके मुँहसे दूध छिन जायेगा — गुजरातमें डेरियाँ हमारा बड़ा अहित कर रही हैं। वे बहुत-सा दूध खरीदकर मक्खन, पनीर इत्यादि बनाकर बेचती हैं। जिस प्रजाका आधार मुख्य करके दूध रहा है वह इस प्रकार अपनी खूराकको कैसे नष्ट होने देती है? ऐसे स्वार्थी मनुष्य क्यो जन्म लेते है, जो प्रजाके आरोग्यपर ध्यान न देकर पैसेके लिए उसके खानेकी वस्तुओका अयोग्य व्यापार करते हैं? दूध, घी तथा दूधकी बनी चीजें प्रजाके लिए इतनी अमूल्य है कि नगरपालिकाओको उनपर पूरा अकुश रखना चाहिए। हम इस सम्बन्धमे क्या कर रहे हैं?

मैं अभी-अभी एक ऐसे प्रदेशसे आया हूँ, जहाँ बकरीदके मौकेपर दगे हुए। दो जातियाँ एक क्षुद्र बातपर लड़ पडी, उसमे उपद्रवी लोग शामिल हो गये और झगडा बढ गया। हम उसका कोई उपाय न कर सके। केवल सरकारकी कार्रवाईपर ही हमे अवलम्बित होना पड़ा। इससे हमारी कमजोरी प्रकट होती है।

यहाँ कुछ देरके लिए गो-रक्षापर विचार करना अप्रासंगिक नही होगा। यह एक महत्त्वका सवाल है। फिर भी उसे हल करनेका कार्य हमने तथाकथित गो-रक्षा सभाओपर छोड दिया है। गो-रक्षाकी प्रथा पुरानी मालूम होती है। उसकी उत्पत्ति

इस देशकी विशिष्ट आवश्यकताओंमें से हुई है। जहाँ ९० सैकडा मनुष्य खेतीपर गुजर करते है, जहाँ खेतीके लिए बैलोंकी जरूरत होती है, वहाँ गायकी रक्षा करना सहज कर्तव्य हो जाता है। ऐसी जगह मासाहारीको भी गो-मासका त्याग करना चाहिए। ये स्वाभाविक कारण गायकी रक्षा करनेके लिए काफी माने जाने चाहिए। पर यहाँ विचित्र परिस्थिति है। यहाँ गो-रक्षाका मुख्य अर्थ यह देख पडता है कि गायें मुसलमान भाइयोंके हाथ न पडने दी जायें, उन्हे गो-मासका भक्षण न करने दिया जाये। हमारे शासकोंको गायका मास जरूरी होता है। उनके लिए रोज हजारो गायोका बध होता है। इसे रोकनेके लिए हम कुछ नही करते। कलकत्तेमें हिन्दू ही फूंकेकी क्रूर क्रियाके द्वारा गायका सारा दूध रोज खीच लेते हैं। हमने शायद ही कभी गायके साथ की जानेवाली इस घोर हिंसाको मिटानेकी चेष्टा की हो। गुजरातमें हिन्दू बैलको हाँकनेके लिए कील लगी लकडियाँ काममे लाते है। हम इसके खिलाफ कुछ नही कहते। अपने शहरके बैलोंकी दशा करुणाजनक है। गाय और उसके वशकी रक्षा करनेका काम बडा भारी है। उसे हमने मुसलमानोके साथ झगडा करनेका सकुचित रूप देकर गो-वधकी वृद्धि की है। गो-रक्षाके लिए मुसलमान भाइयोका वध धर्म नही, अधर्म है। मेरा विश्वास है, यदि हम मुसलमान भाइयोंके साथ प्रेमपूर्वक परामर्श करें तो वे भी भारतकी स्थितिपर ध्यान देकर गायकी रक्षाके लिए कटिबद्ध हो जायेंगे। हम उनसे विनय करे, सत्याग्रह करे, तो गो-रक्षाके कार्यमें हम उनका सहयोग प्राप्त कर सकते हैं। परन्तु ऐसा करनेके पहले इस प्रश्नका सच्चा स्वरूप समझ लेना चाहिए। अपने भाइयोंके मारनेके बदले हमें स्वय मरनेको तैयार होना चाहिए। परन्तु इसका होना तभी सभव है, जब हम गायका मूल्य समझ लेंगे और हमारे हृदयमें शुद्ध दयाका स्फुरण होगा। यह कार्य करनेमें एक साथ और भी कई कार्य हो जायेंगे। हिन्दू-मुसलमानोके बीचका झगडा खतम हो जायेगा, गायकी रक्षा होगी, और शुद्ध और सस्ता घी-दूध मिलेगा। इसके साथ ही हमारे बैल दुनियामें सबसे बढकर होंगे। यदि हमारी तपस्या शुद्ध होगी तो हम अग्रेज, मुसलमान या हिन्दू सबके हाथसे गो-वधका होना रोक सकेंगे। यह एक कार्य भी स्वराज्यको समीप लानेवाला है।

ऊपर जिन सवालोंकी चर्चा हुई है उनमें से अधिकाश नागरिक जीवनसे सम्बन्ध रखते है। हम देख सकते है कि अपने देशका कारोबार हम तभी चला सकते हैं जब इन नागरिक सवालोंसे सम्बन्धित कारोबारको अच्छी तरह नीतिपूर्वक चला दिखायें।

स्वदेशीका आन्दोलन देशमें नाम-मात्रको ही है, ऐसा कहना गलत न होगा। हमें यह नही सूझता कि स्वदेशीमें लगभग स्वराज्यकी चाबी है। यदि हमें अपनी भाषा से अरुचि हो, देशका बना हुआ अपना कपडा अच्छा न लगे, अपना पहनावा-पोशाक बुरी मालूम हो, अपनी चोटीकी शरम आये, अपनी जलवायु और भोजन अच्छा मालूम न हों, अपने आदमी अनगढ मालूम हो और अपने साथ रहने योग्य न जान पडें, अपनी सभ्यता अच्छी न लगे तथा विदेशी सभ्यता अच्छी लगे, साराश यह कि अपना सब बुरा और विदेशी सब अच्छा लगे तो स्वराज्यका क्या अर्थ रह जायेगा — यह मेरी समझमें नही आता। यदि हमें हर चीज विदेशी ही ग्राह्य मालूम होती हो तब तो अभी हमें विदेशी तालीमकी बहुत आवश्यकता है, क्योकि विदेशी रीति-नीतिने हमारे जन-

समाजमे बहुत ही कम प्रवेश किया है। मेरा खयाल तो यह है कि हमे स्वदेशीके प्रति प्रेम ही नही अनुराग भी होना चाहिए। तभी हम स्वराज्यका रसास्वादन कर सकेंगे। हमारे प्रत्येक कार्यमे स्वदेशीकी छाप दृष्टिगोचर होनी चाहिए। स्वराज्यकी इमारत इसी कल्पनाकी नीवपर खडी की जा सकती है कि कुल मिलाकर हमारी अधिकाश वस्तुएँ अच्छी है। स्वदेशीका आन्दोलन यहाँ बहुत बडे पैमानेपर होना चाहिए। जहाँ-जहाँ स्वराज्यकी हलचल हुई है वहाँ-वहाँ लोगोने स्वदेशीके महत्त्वको पूरी तरह समझा है। स्कॉटलैण्डके सिपाही मृत्युके भयसे भी अपना किल्ट [घाघरा] छोडनेकी इच्छा नही करते। हम लोग हँसीमे उन्हे 'घाघरा पलटन' कहते है। किन्तु इन घाघरा पहननेवालोके बलको दुनिया जानती है। वह असुविधाजनक है, शत्रु उसके कारण उन्हे आसानीसे अपना निशाना बना सकते है, फिर भी स्कॉटलैण्डके सिपाही उसे छोडते नही। मेरा यह अभिप्राय नही है कि हम अपने दुर्गुणोका न त्याग करे, मेरा अभिप्राय यह है कि हमारी चीज विगुण हो तो भी हमारे लिए ग्राह्य है और विदेशी स्वनुष्ठित होनेपर भी त्याज्य है। जो आज विगुण है उसे हम अपने पराक्रमसे गुणपूर्ण कर लेगें। मै चाहता हूँ कि इस परिषद्के सदस्योकी रग-रगमे स्वदेशीके प्रति प्रेम और उत्साह व्याप्त हो। वे महान् सकटो और कष्टोको सहकर भी स्वदेशी-व्रतको धारण करे और निष्ठापूर्वक उसका पालन भी करे। यदि ऐसा ही जाये तो हमें घर बैठे स्वराज्य मिल जायेगा।

पूर्वोक्त दृष्टान्तोसे स्पष्ट हो जाता है कि हमारा आन्दोलन दोहरा होना चाहिए। सरकारको आप प्रार्थनापत्र भले ही भेजिए, शाही परिषद्में आप अपने अधिकार भले ही माँगिए, परन्तु लोक-जागृतिके लिए हमे इन कार्योकी अपेक्षा आन्तरिक आन्दोलनकी ज्यादा आवश्यकता है। बाह्य व्यापारमे दम्भ, स्वार्थ आदिके प्रवेशका भय है; आन्तरिक व्यापारमे इसकी बहुत कम सम्भावना है। आन्तरिक क्रियाके बिना बाहरी क्रिया न केवल शोभेगी नही, बल्कि सभव है वह निरर्थक सिद्ध हो। मेरे कथनका यह अर्थ नही है कि हम आन्तरिक क्रियासे एकदम खाली है। परन्तु मै यह कह देना चाहता हूँ कि हम आन्तरिक क्रियाको यथेष्ट महत्त्व नही देते।

यह भी सुनाई देता है कि एक बार भारतकी शासन-सत्ता हाथमे आ जाने दीजिए, फिर यह सब ठीक हो जायेगा। इससे बडा भ्रम और नही हो सकता। कोई देश इस प्रकार स्वतत्र नही हुआ। बसन्त जब बहारपर आता है उस समय उसकी शोभा हरएक झाडमे देखी जा सकती है, सारी भूमिमे नवयौवनका सचार हो जाता है। इसी प्रकार जब हम स्वराज्यके बसन्तमें प्रवेश करेगे उस समय अगर यहाँ कोई यात्री आये तो वह हमारे जीवनमे हर जगह नवयौवनकी ताजगी देखेगा। वह देखेगा कि प्रजाके सेवक अपनी-अपनी शक्तिके अनुसार विभिन्न सार्वजनिक कार्योमे लगे हुए हैं।

यदि यह कहा जाये कि हमारी प्रगति यथेष्ट नही है तो इसके दो कारण भी स्वीकार करने पडेगे। हमने अपनी स्त्रियोको अपने आन्दोलनसे अलग रखा, इससे हम पक्षाघातके शिकार हो गये है। जनता एक पाँवसे चल रही है। यही कारण है कि उसके सारे कार्य अधूरे और आधे होते देखे जाते है। इसके अतिरिक्त देशका शिक्षित समाज विदेशी भाषाके द्वारा शिक्षा पाकर अशक्त हो रहा है। और जो शक्ति वह प्राप्त करता है उसका लाभ देशको नही मिलता। इस विषयपर अपने विचार मै गुज-

रात शिक्षा परिषद्में¹ पेश कर चुका हूँ इसलिए यहाँ उन्हें दुहराना नहीं है। इस परिषद्ने अपना सारा कार्य मातृ-भाषामें करनेका निश्चय करके बहुत अच्छा किया है। मुझे आशा है कि गुजराती जनता किसी भी प्रलोभनमें आकर उस निश्चयसे टलेगी नहीं।

शिक्षित-वर्गका, स्वराज्य-प्रेमियोंका कार्य जन-समाजमें मिले बिना नहीं चलेगा। हम जनताके एक भी अंगकी उपेक्षा नहीं कर सकते, किसीको छोड़ नहीं सकते। सबको साथ लेकर चलेंगे तब हम बढ सकेंगे। यदि शिक्षित-वर्ग सामान्य जनतासे मिलता-जुलता रहता तो बकरीदके मौकेपर जो दंगे हुए वे होते ही नहीं।

अन्तिम विषयपर आनेके पहले मुझे एक अन्य कर्त्तव्यका पालन करना है और कुछ सुझाव भी देने हैं।

यमराज प्रतिवर्ष हमारे नेताओंमें से कुछको उठा लेते हैं। पिछले बारह महीनोंमें ऐसी जितनी घटनाएँ हमारे यहाँ हुई हैं उन सबका उल्लेख तो मैं यहाँ नहीं करना चाहता किन्तु हिन्दके दादा ऋषि-तुल्य स्वर्गीय दादाभाई नौरोजीका नाम तो छोड़ा नहीं जा सकता। उनकी देशसेवाकी कीमत आँकनेका काम मेरा नहीं हो सकता। मैं तो उन लोगोंमें से हूँ जो उनके चरणोंमें बैठकर बड़े हुए हैं। ठेठ युवावस्थामें जब मैं विलायत गया तब मैंने उनके दर्शन किये थे। उनके नामका एक सिफारिशी पत्र मैं उनके पास ले गया था, तभीसे मैंने उनकी पूजा करना सीखा। उनकी निष्कलंक और अखण्ड देशसेवा, उनकी निष्पक्ष समदृष्टि, उनका शुद्ध चरित्र एक ऐसा आदर्श उपस्थित करते हैं जिसका भारत हमेशा अनुकरण करता रह सकता है। ईश्वर उनकी आत्माको शान्ति दे। उनके परिवारको और राष्ट्रको यह वियोग सहन करनेकी शक्ति दे। उनके चरित्रको अपने जीवनमें उतारकर और उनकी देशसेवाका अनुसरण करके और अपने हृदयमें स्थान देकर हम उन्हें सदाके लिए अमर कर सकते हैं।

वाइसरॉय महोदयने वीरमगाँवकी सीमापर ली जानेवाली चुंगीको रद करनेकी घोषणा की है, इसके लिए उन्हें धन्यवाद देना हमारा कर्त्तव्य है। यह कार्य जल्दी हो जाना चाहिए था। प्रजा उसके बोझसे पिसी जा रही थी। उसके कारण कई लोगोंका व्यापार चौपट हो गया, कई स्त्रियोंको भी उसके कारण बहुत कष्ट भोगना पड़ा। अभी इस निर्णयपर अमल शुरू हुआ नहीं मालूम होता। आशा है कि शीघ्र ही शुरू हो जायेगा।

रेलके तीसरे दर्जेके मुसाफिरोंको जो कष्ट होते हैं उसके विषयमें मैंने अपना अनुभव समाचारपत्रोंके द्वारा जनताके सामने रखा है।² ये कष्ट सचमुच असह्य हैं। भारतकी प्रजा बड़ी सीधी-सादी है। उसे चुपचाप दुःख सहन करनेकी शिक्षा मिली है। यही कारण है कि वह लाखों दुःख सहती है तथापि उनका निवारण नहीं होता। इस प्रकार दुःख सहन करनेमें बहुत गुण है, परन्तु उनकी सीमा होनी चाहिए। निर्बलताके कारण कष्ट-सहन करना पौरुषहीनताका सूचक है। रेलगाड़ियोंमें यात्री जो कष्ट सहते जा रहे

१. देखिए "भाषण : द्वितीय गुजरात शिक्षा सम्मेलनमें", २०-१०-१९१७।
२. देखिए खण्ड १३, "पत्र : अखबारोंको", पृष्ठ ५५८-६२।

हैं उससे पौरुषहीनता ही सूचित होती है। ये कष्ट दो प्रकारके हैं -- एक तो रेल-विभागकी अकर्मण्यतासे होनेवाले और दूसरे यात्रियोकी लापरवाहीसे होनेवाले। इनके इलाज भी दो प्रकारके हैं पहला उपाय है कि जिन कष्टोका सम्बन्ध रेलवे विभागसे है, उनकी शिकायते पीडित लोगोको रेलवे विभागसे करनी चाहिए। शिकायत गुजरातीमें [अपनी मातृभाषामें] भी लिखी जा सकती है। इसके सिवा समाचारपत्रोके द्वारा भी पुकार मचाई जाये। दूसरा उपाय यह है कि ज्ञानवान् यात्री अज्ञानी यात्रियोको ढग सिखाएँ। उनकी गन्दगी, लापरवाही इत्यादि की ओर उनका ध्यान आकर्षित करे। इस कार्यके लिए स्वयसेवकोकी आवश्यकता है। इसमे सब लोग यथाशक्ति भाग ले सकते हैं। नेता लोग कभी-कभी इन दु खोका अनुभव करनेके लिए अपना परिचय दिये बिना तीसरे दर्जेमे यात्रा करे। फिर उन्हे जो अनुभव हो उसकी खबर रेलवे विभागको दें। ऐसा करनेपर थोडे ही दिनोमें महत्वपूर्ण परिवर्तन दिखलाई देगे।

फीजी इत्यादि टापुओमे भेजे जानेवाले गिरमिटिया मजदूरोके लिए एक समिति लन्दनमे स्थापित हुई थी। उस कमेटीने अपने विचार बाजाब्ता प्रकाशित किये है और भारत-सरकारने उनपर लोगोकी राय माँगी है। इस विषयपर भी मैं अपनी सम्मति समाचारपत्रोमे दे चुका हूँ। अतएव यहाँ उसके विवेचनकी आवश्यकता नही। मैंने अपनी राय यह दी है कि समितिकी सिफारिशोका परिणाम भी एक प्रकारका गिरमिट ही होगा। हमें एक ही सम्मति देनी चाहिए और वह यह है कि हम अपने मजदूरोको किसी प्रकारके बन्धनमें बँधकर विदेश जाते नही देखना चाहते। उसकी जरूरत नही है। गिरमिटका नियम बिलकुल रद होना अत्यन्त आवश्यक है। उपनिवेशोको किसी प्रकारकी सुविधा कर देनेके लिए हम बँधे नही हैं।

अब मैं अन्तिम विषयपर आता हूँ। अभीष्ट वस्तुकी प्राप्तिके लिए दो मार्ग हैं. सत्याग्रह और दुराग्रह। हमारे ग्रन्थोमें इन्ही को दैवी और आसुरी प्रवृत्ति कहा है। सत्याग्रहके मार्गमे सदैव सत्यका आग्रह रहता है। किसी भी कारणसे सत्यका त्याग नही किया जाता। इसमें देशके लिए झूठका प्रयोग भी नही हो सकता। सत्याग्रहकी मान्यता है कि सत्यकी सदैव ही जय होती है। कभी-कभी मार्ग कठिन जान पडता है, परिणाम भयकर मालूम होता है, और ऐसा लगता है कि सत्यको थोडा छोड दे तो सफलता मिल जायेगी। किन्तु सत्याग्रही सत्यका त्याग नही करता। उसकी श्रद्धा ऐसे समय भी सूर्यके तेजके समान चमकती रहती है। सत्याग्रही निराश तो होता ही नही। उसके पास सत्यकी तलवार होती ही है इसलिए उसे लोहेकी तलवार या गोली-बारूदकी आवश्यकता नही होती। वह आत्मबल या प्रेमसे शत्रुको भी अपने वशमे कर लेता है। मित्र-मण्डलीमे प्रेमकी कसौटी नही होती। यदि मित्र मित्रपर प्रेम करे तो इसमें कोई नवीनता नही है। वह गुण नही है, उसमे श्रम नही है, परन्तु शत्रुके प्रति मित्रता रखनेमें प्रेमकी कसौटी है। इसमे गुण है, श्रम है। इसीमें पुरुषार्थ है और इसीमे सच्ची बहादुरी है। शासन-कर्त्ताओके प्रति भी हम ऐसी दृष्टि रख सकते हैं। ऐसी दृष्टि रखनेसे हम उनके अच्छे कार्योका मूल्य आँक सकेंगे और उनकी भूलोके लिए द्वेष करनेके बजाय प्रेम-भावसे वे भूले बताकर उन्हे तुरन्त दूर करनेमें समर्थ होगे। इस प्रेम-भावमें

भयको कोई स्थान नही है। निर्बलता तो उसमें हो ही नही सकती। निर्वल मनुष्य प्रेम नही कर सकता, प्रेम तो शूर ही दिखा सकते हैं। प्रेमकी दृष्टिसे विचार करे तो हमें अपने शासन-कर्त्ताओको सन्देहकी दृष्टिसे नही देखना चाहिए और न यह मानना चाहिए कि वे सब काम बुरी नीयतसे ही करते हैं। हमारे द्वारा प्रेमपूर्वक की हुई उनके कार्योकी परीक्षा इतनी शुद्ध होगी कि उनके ऊपर उसकी छाप पडे बिना न रहेगी।

प्रेम लड सकता है। प्रेमको कितनी ही बार लडना पडता है। सत्ताके मदमें मनुष्य अपनी भूलोको नही देखता। इस समय सत्याग्रही बैठा नही रहता। वह स्वयं दुःख सहन करता है। सत्ताधीशकी आज्ञा — उनके कानूनो — का सादर निरादर करता है और उस निरादरके परिणामस्वरूप होनेवाले कष्ट — जेल, फाँसी इत्यादि सहन करता हैं। इस प्रकार आत्मा उन्नत होती है, इसमे जो समय जाता है वह व्यर्थ नही जाता।

इस प्रकार विनयपूर्वक किये गये निरादरमे यदि बादमें भूल प्रतीत हो तो इस भूलका परिणाम मात्र सत्याग्रही और उसके साथियोको सहन करना पडता है। इसमें सत्ताधीशसे अनबन नही होती, बल्कि अन्तमें वे सत्याग्रहीके वशमें हो जाते हैं। वे समझ लेते हैं कि सत्याग्रहीके ऊपर हमारा शासन नही चल सकता, सत्याग्रहीकी सम्मति और इच्छाके बिना वे एक भी काम उससे नही ले सकते। यह स्वराज्यकी परिसीमा हुई, क्योकि इसमें सम्पूर्ण स्वतन्त्रता आ जाती है। ऐसा न समझना चाहिए कि इस प्रकारका सत्याग्रह सभ्य और सुसस्कृत सत्ताधीशके सामने ही हो सकता हैं। वज्रके समान कठोर हृदयवाला भी आत्मबलकी अग्निमे पिघल सकता है। नीरो-जैसा क्रूर शासक भी इस बलके आगे बकरीकी तरह दीन बन जाता है। यह अतिशयोक्ति नही है। यह तो बीजगणितके समीकरणके प्रश्न समान है। यह सत्याग्रह भारतवर्षका विशिष्ट शस्त्र है। भारतमें और भी शस्त्रास्त्र हैं, परन्तु सत्याग्रहका ही उपयोग यहाँ अधिक हुआ है। यह सर्वव्यापक शक्ति है और इसका प्रयोग प्रत्येक समय और प्रत्येक स्थितिमें किया जा सकता है। इस सत्याग्रहके लिए काग्रेस आदिकी मुहरकी भी आवश्यकता नही। जिसको इस शक्तिका ज्ञान हो जाता है, वह इसका प्रयोग किये बिना नही रहता। पलके जिस तरह आप ही आँखोकी रक्षा किया करती हैं उसी प्रकार सत्याग्रह प्रकट होकर आत्म-स्वतन्त्रताकी रक्षा स्वय ही किया करता है।

दुराग्रह इससे विपरीत लक्षणोवाली शक्ति है। उसका नमूना जैसा कि ऊपर कहा है यूरोपमें चल रहा दारुण युद्ध है। एक देश दूसरे देशको शरीर-बलसे हराता है, इससे यह कहाँ सिद्ध होता है कि उसका पक्ष सच्चा है? बली मनुष्य प्राय निर्बल मनुष्यपर अत्याचार करते देखे जाते हैं। निर्बल हार जाता है। इससे न तो उसकी अनीति सिद्ध होती है और न बली ही की नीति सिद्ध होती है। दुराग्रही साधनोका विचार नही करता। उसका लक्ष्य योग्य अथवा अयोग्य साधनोसे केवल अपनी अभीष्ट-सिद्धिकी ओर ही रहता है। यह तो धर्म नही, अधर्म है। धर्ममें किसी प्रकारका असत्य नही होता, कठोरता नही होती और हिंसा नही होती। धर्मकी नाप तो प्रेमसे, दयासे और सत्यसे होती है। इनके त्यागसे प्राप्त हुआ स्वर्ग भी निन्द्य है। सत्यके त्यागसे यदि भारत को स्वराज्य मिलता हो तो वह किसी कामका नही। इससे अन्तमें प्रजाका नाश ही होगा। दुराग्रही अधीर होकर अपने माने हुए वैरीका सहार करनेकी इच्छा रखता है।

इसका परिणाम वैर-भावकी वृद्धिके सिवा और कुछ नही होता। पराजित शत्रु हृदयमे वैर रखकर समयकी प्रतीक्षा किया करता है। इस तरह वैरकी विरासत पीढी-दर-पीढी चलती जाती है। हम आशा करते हैं कि भारत कभी दुराग्रहको प्रधान पद नही देगा। यदि इस परिषद्के सदस्य समझके साथ सत्याग्रहको स्वीकार कर अपनी कार्य-रेखा बनायेंगे तो निश्चय है कि साध्य वस्तु बड़ी आसानीसे प्राप्त कर लेंगे। यह सम्भव है कि प्रारम्भमे निराशा ही दिखाई दे, भले ही कुछ काल तक उसका परिणाम न दिखाई दे; परन्तु अन्तमे सत्याग्रहकी ही जीत होगी। दुराग्रही कोल्हूके बैलकी तरह चक्राकार घूमता रहता है। उसका यह घूमना गति है, प्रगति नही। सत्याग्रही लगातार आगे बढता जाता है।

उतावलीमें मेरे विचारोकी आलोचना करनेवाला कहेगा कि उनमे कितने ही स्थलोमें अन्तर्विरोध है। एक ओर तो मै सरकारसे शस्त्रोकी तालीमकी माँग करता हूँ, दूसरी ओर सत्याग्रहीको सर्वोपरि पद प्रदान करता हूँ। सत्याग्रहमे शस्त्रका क्या काम? सचमुच कोई काम नही है। परन्तु शस्त्र-शिक्षाकी आवश्यकता उनके लिए है जो सत्याग्रही नही हैं। मै ऐसी कल्पना नही करता कि सारा देश सत्याग्रही बन जायेगा। लेकिन कायर बनकर देशकी सेवा अथवा निर्बलोकी रक्षा तक न करना सदा सर्वथा त्याज्य है। अत्याचारी मनुष्यसे निरपराधिनी स्त्रीकी रक्षा करनेके लिए या तो हमे अपना बलिदान देकर उसे आत्मबलसे — प्रेमबलसे — वशीभूत करना चाहिए और यदि ऐसी शक्ति न हो तो शरीरबलसे उसको अत्याचार करनेसे रोकना चाहिए। सत्याग्रही और शस्त्रधारी दोनो योद्धा हैं। शस्त्रधारी नि शस्त्र होकर दीन बन जाता है। परन्तु सत्याग्रही कभी दीन बनता ही नही। वह नश्वर शरीर या शरीरके शस्त्रोपर भरोसा नही रखता, वह तो अजेय, अमर, अविनाशी आत्माके बलपर युद्ध करता है। जो न शस्त्रधारी है, न सत्याग्रही वह आदमी ही नही है। उसे आत्माका कुछ भी भान नही; अन्यथा वह डरसे कभी भाग नही सकता। वह शरीरको कृपणके धनके समान सचय करनेमे सर्वस्व खो बैठता है। उसे मरना नही आता। शस्त्रधारी तो प्राण हथेलीपर लिये फिरते है, किसी दिन उनके सत्याग्रही होनेकी सम्भावना है। भारतसे हम यह आशा रखते हैं कि यह महान् पवित्र आर्यदेश अपनी आर्यताको — दैवी वृत्तिको — प्रधान पद प्रदान कर अधिकाशमे सत्याग्रहका उपयोग करेगा और शस्त्रक्रियाको सर्वोपरि आसन न देगा। भारतवर्षमे 'शरीरबल सत्य है' — वाले सूत्रका मान न होगा। परन्तु "सत्यमेव जयते" — वाले सूत्रका निस्सशय आदर होगा।

सूक्ष्म-दृष्टिसे विचार करनेपर मालूम होगा कि सत्याग्रहसे हम समाजका सुधार कर सकते है। अपनी जाति-प्रथाकी त्रुटियाँ दूर कर सकते हैं, हिन्दू-मुसलमानोके बीचका झगडा दूर कर सकते है और अपने राजनीतिक प्रश्नोको भी हल कर सकते है। कार्यकी सरलताके लिए हम इन सब विषयोको अलग-अलग मानते है और यह ठीक भी है, किन्तु हमें भूलना न चाहिए कि उनमें आपसमे प्रगाढ सम्बन्ध है। राजनीतिक विषयोका और धर्म अथवा समाज-सुधारका कोई सम्बन्ध ही नही है, यह खयाल ठीक नही है। धार्मिक वृत्तिसे हम राजनीतिक सवालोको जिस तरह हल कर सकते हैं उस तरह धर्मवृत्तिको छोड़कर नही कर सकते; धर्मवृत्तिको छोड़कर हम जो फल प्राप्त करेंगे

वह और ढंगका होगा। राजनीतिक विषयोंका विचार करते हुए हम भटकते-रमते छप्पन हजार [लाख] अज्ञात साधुओंको छोड नहीं सकते। ऐसे ही मुसलमान भाई फकीरोंको नहीं भुला सकते। हिन्दू समाज विधवाओंके अथवा बाल-विवाहके सवालकी अवगणना नहीं कर सकता। इसी तरह मुसलमान समाज पर्देके प्रश्नको नहीं छोड सकता। हिन्दू और मुसलमान, दोनों एक दूसरेके सम्बन्धमें प्रश्न उठाते रहते हैं; इन प्रश्नोंसे भी हम आँखें नहीं मूँद सकते।

सचमुच हमारी कठिनाइयाँ हिमालयके समान हैं। परन्तु जैसी हमारी कठिनाइयाँ हैं वैसे ही बढ़िया साधन भी, उन्हें दूर करनेके लिए, हमारे पास हैं। हम प्राचीन जातिकी सन्तान हैं। रोम, यूनान मिस्र इत्यादि देशोंकी सभ्यताके क्षयके हम साक्षी हैं। हमारी सभ्यतामें समुद्रके पानीकी तरह ज्वार-भाटा आता रहा है। परन्तु वह समुद्रकी तरह अचल रही है। हमारे देशमें पूर्ण स्वतन्त्र रहनेके लिए आवश्यक समस्त सामग्री उपलब्ध है। यहाँ महान् पर्वत हैं, नदियाँ हैं, सृष्टि-सौन्दर्य है। इसकी सन्तान हमारे लिए पराक्रमकी विरासत दे गई है। यह देश तपश्चर्याका भण्डार है। यहाँ सब धर्म साथ रहते हैं। सब देवी-देवताओंकी पूजा होती है। यह सारी साधन-सम्पत्ति होते हुए भी यदि हम कोई अलौकिक कार्य करके संसारको शान्ति प्राप्त न करा सकें, अपनी सात्विक प्रवृत्तिसे यदि हम अंग्रेज प्रजाको न जीत सकें तो हम अपनी इस विरासतको लजायेंगे। अंग्रेज जातिके साथ हमारा सम्बन्ध निरर्थक गया माना जायेगा। अंग्रेज जाति साहसी है। उसमें धर्मकी वृत्ति भी है। उसमें अटल आत्म-विश्वास है। वह वीर है, वह स्वतन्त्रताकी आराधना करती है। किन्तु उसमें व्यापार-वृत्तिका स्थान प्रधान है। धनोपार्जन करनेमें उसने योग्य और अयोग्य साधनोंका विचार नहीं किया है; वह आधुनिक सभ्यताकी पूजा करती है। उसके मनपर से प्राचीन आदर्शोंका प्रभाव बहुत कम हो गया है। यदि हम उस जातिकी नकल करनेके बदले अपनी प्राचीन विरासतका खयाल रखें, अपनी सभ्यताके प्रति सच्चा भाव रखें, उसकी श्रेष्ठतापर हमें दृढ विश्वास हो, तो हम उस जातिके साथ अपने सम्बन्धका सदुपयोग करेंगे और अपनेको उससे तथा सारे संसारको लाभ पहुँचायेंगे। जगन्नियन्ता परमात्मासे मेरी प्रार्थना है कि यह परिषद् इस महान् कार्यमें अपना पूरा हिस्सा अदा करे और गुजरात और भारतवर्षकी कीर्तिको उज्ज्वल करे।

[गुजरातीसे]

महात्मा गांधीनी विचारसृष्टि

१५. प्रस्ताव : प्रथम गुजरात राजनीतिक परिषद्‌मे – १[1]

नवम्बर ४, १९१७

१. यह परिषद् दादाभाई नौरोजीके निधनपर शोक और उनके परिवारके प्रति अपनी समवेदना प्रकट करती है तथा ईश्वरसे प्रार्थना करती है कि इस महात्मा पुरुषको शान्ति मिले।

२. परिषद् अखिल भारतीय मुस्लिम लीग तथा काग्रेसके प्रसिद्ध नेता श्री अब्दुल रसूलके स्वर्गवासहोनेपर दुःख प्रकट करती है और उनके परिवारके प्रति सहानुभूति प्रदर्शित करती है एव भगवान्‌से प्रार्थना करती है कि उनकी आत्माको शान्ति मिले।

३ श्री मॉण्टेग्यु महोदय अपने यात्रा-कार्यक्रमके अनुसार २४ दिसम्बर, १९१७ से २ जनवरी, १९१८ तक बम्बईमें रहेगे। लेकिन उस सप्ताहके दौरान काग्रेस तथा मुस्लिम लीगकी कलकत्तेमे जो सभा होनेवाली है उसमें सम्मिलित होनेके लिए इस प्रान्तके नेता कलकत्ते गये हुए होगे और इस कारण उन्हे श्री मॉण्टेग्युके साथ परामर्श करनेका अवसर नही मिल सकेगा। इसलिए यह परिषद् सरकारसे अनुरोध करती है कि वह ऐसा प्रबन्ध करे जिससे श्री मॉण्टेग्यु पूर्वोक्त सप्ताह बम्बईमे व्यतीत न करके कलकत्तेमे व्यतीत करे।

४. यह परिषद् गुजरातकी काग्रेस समितियो, होमरूल लीगकी शाखाओ तथा अन्य राजनैतिक सस्थाओसे आग्रहपूर्वक विनती करती है कि वे काग्रेस तथा मुस्लिम लीग द्वारा अगीकार की गई स्वराज्य-योजनाके लिए निरन्तर कार्य करे, उसी प्रकार परिषद् गुजरातियोको सलाह देती है कि वे श्री मॉण्टेग्युको भेजे जानेवाले स्वराज्य-सम्बन्धी प्रार्थनापत्रपर[2], जिसपर फिलहाल हस्ताक्षर लिये जा रहे है, अधिकसे-अधिक सख्यामें हस्ताक्षर लें।

[गुजरातीसे]

गुजराती, ११-११-१९१७

१. ये प्रस्ताव अध्यक्ष द्वारा प्रस्तुत किये गये थे और सम्भवतः इनका मसविदा गांधीजीने तैयार किया था

२. श्री मॉण्टेग्युको भेंट की गई याचिका; इसका मसविदा गाधीजीने तैयार किया था। देखिए खण्ड १३ पृष्ठ ५३७। बिहार और उडीसाके लोगोंकी ओरसे भी एक वैसा ही प्रार्थनापत्र भेजा गया था।

१६. भाषण : प्रथम गुजरात राजनीतिक परिषद्में – २

[गोधरा]
नवम्बर ४, १९१७

परिषद्की कार्रवाई शुरू करनेसे पहले गांधीजीने वीरमगाँव सीमापर ली जानेवाली चुँगी रद्द करनेके सरकारके निर्णयकी घोषणा की :

वीरमगाँवमें ली जानेवाली चुंगीके सम्बन्धमें पत्र-व्यवहार चल रहा था और मैंने [कुछ समय पहले] पूछताछ की थी कि यह कर कबतक उठा दिया जायेगा। मुझे यह बताते हुआ प्रसन्नता हो रही है, यह कर उठा दिया जायेगा और इससे सम्बन्धित सरकारी प्रस्ताव, 'गजट' के आगामी अंकमें प्रकाशित कर दिया जायेगा।

श्री जिन्नाने[1] सुधारोंके लिए कांग्रेस-लीग योजना सम्बन्धी प्रस्ताव गांधीजीके अनुरोधपर[2] गुजरातीमें पेश किया और गांधीजीने उनको धन्यवाद देते हुए कहा :

श्री जिन्नाने मेरे सुझावको मानकर मुझपर उपकार किया है। आज वे शाही विधान परिषद्के सदस्य हैं। लेकिन कल उन्हें हिन्दू, मुसलमान, घाची[3], गोला[4] आदि अंग्रेजी न जाननेवाले लोगोंके पास मत माँगनेके लिए जाना पड़ेगा। इसलिए, यदि उन्हें गुजराती न आती हो तो उन्हें सीखनी चाहिए।

गांधीजी द्वारा इस प्रस्तावपर लोकमान्य तिलकसे बोलनेके लिए अनुरोध किये जानेपर श्री तिलक किस भाषामें बोलें, यह प्रश्न उठा। इस सम्बन्धमें अपना निर्णय देते हुए गांधीजीने कहा :

आप स्वराज्य माँगते हैं तो अपने द्वारा निर्वाचित किये गये सभाध्यक्षका कहना आपको मानना चाहिए। श्री तिलक गुजराती समझते हैं, बोल नहीं सकते। वे अपनी

१. मुहम्मद अली जिन्ना (१८७६–१९४८); बैरिस्टर और राजनीतिज्ञ। पाकिस्तानके संस्थापकोंमें से एक तथा उसके प्रथम गवर्नर-जनरल।

२. ६–११–१९१७के बॉम्बे क्रॉनिकलमें निम्नलिखित संक्षिप्त रिपोर्ट प्रकाशित हुई थी : मु० अ० जिन्नासे उस प्रस्तावको, जिसमें श्री मॉण्टेग्युकी भावी यात्राके सम्बन्धमें परिषद्की ओरसे कृतज्ञता प्रकट की गई थी और हाल ही में भारत-मन्त्री द्वारा घोषित नीतिकी प्रथम किश्तके रूपमें कांग्रेस-मुस्लिम लीगकी सुधार योजनापर स्वीकृति दिये जानेकी प्रार्थना की गई थी, पेश करनेका अनुरोध करनेसे पूर्व गांधीजीने कुछ शब्द कहे जिनमें उन्होंने स्वयं श्री जिन्ना द्वारा ही प्रस्ताव पढ़े जानेके कारणोंका जिक्र किया तथा उनसे गुजरातीमें बोलनेका अनुरोध किया।

बादमें, गांधीजीने अध्यक्ष-पदसे एक प्रस्ताव पेश किया। इसमें श्री मॉण्टेग्युसे ऐसे समय अपनी बम्बई यात्राको स्थगित करनेका अनुरोध किया जिस समय सब प्रमुख नेता शहरसे बाहर होंगे तथा उनसे कलकत्तेमें होनेवाले कांग्रेस-मुस्लिम लीगके अधिवेशनमें उपस्थित होनेको प्रार्थना की।

३ व ४. शिक्षाकी दृष्टिसे पिछड़ी जातियोंके नाम।

मातृभाषामे[1] ही बोलेंगे। वे वृद्ध हो गये हैं, लेकिन यदि वे गुजराती शिक्षक रखकर गुजराती सीखे तो यह उचित ही होगा। हम तो बम्बई प्रदेशके रहनेवाले हैं, इसलिए जनताकी भावनाओको जाननेके लिए [हमें] दोनो भाषाओका अभ्यास करना चाहिए। महारानी विक्टोरियाने उर्दू सीखी थी।

[गुजरातीसे]

गुजराती, ११-११-१९१७

१७. भाषण: प्रथम गुजरात राजनीतिक परिषद्में – ३[2]

नवम्बर ५, १९१७

कुछ-एक सुन्दर भाषण पूरे नही करने दिये गये, उसके लिए मुझे अफसोस है, मैं उन सज्जनोसे क्षमा माँगता हूँ। जिनकी उमंगें मनमे रह गई हो, वे किसी अन्य रीतिसे उन्हे प्रकट कर सकते हैं। मुझे गोधराके निवासियोके प्रेमको त्यागकर आज ही जाना पड़ेगा। अधिक रहा होता तो शान्ति मिलती, लेकिन फिलहाल जहाँ दावाग्नि सुलग रही है वहाँ शान्ति कहाँ? जो गीत गाया गया वह कानोको मधुर लगा, लेकिन इतनेसे ही बात खत्म नही हो जाती। मुझे उम्मीद है कि उन वचनोको आप व्यावहारिक जीवनमे उतारेंगे। गीत गानेके बाद यदि आप देश कल्याणके निमित्त अपने प्राण उत्सर्ग करेंगे तो श्री तलाटीने[3] जो आशा प्रकट की है वह अवश्य पूर्ण होगी। यदि आप बारह मासके भीतर स्वराज्य प्राप्त करनेकी प्रतिज्ञा लेनेका साहस करे तो वह प्रतिज्ञा ली जाये। हमने परिषद्में देखा कि मातृभाषामें कितनी शक्ति है। हमारी भाषा विधवाके समान है। श्री खापर्डे[4] आदिने मातृभाषाकी खूबियाँ बताई हैं। श्री तिलकने कल जो भाषण दिया उसे लगभग ७५ प्रतिशत लोगोंने समझा। विदेशी भाषा सुवर्णमय होनेपर भी उपयोगी नही हो सकती। हमारी भाषा तृणवत् हो, तो उसे स्वर्णमय बनाना चाहिए।

पास किये गये प्रस्तावोमें पाँच प्रस्ताव ऐसे मामलोसे सम्बन्धित हैं जिन्हे हम एक वर्षके भीतर पूरा कर सकते हैं। बेगारसे सम्बन्धित प्रस्तावको कार्यकारिणी समिति यदि एक वर्षमें पूरा नही करती तो सदस्योको त्यागपत्र दे देना चाहिए। यदि वे विद्यार्थियोकी स्थितिमें सुधार करनेमे सफल न हो तो उन्हे चूडियाँ पहन लेनी चाहिए।

१. मराठी।

२. यह गांधीजीका समापन भाषण था। ७-११-१९१७ के बॉम्बे क्रॉनिकलमें कहा गया था कि "परिषद्को विसर्जित करते हुए श्री गांधीने एक छोटेसे भाषणमें उनसे अनुरोध किया कि वे अपने प्रचारके कार्यको जारी रखें और श्री मॉण्टेग्युको भेजे जानेवाले आवेदनपत्रपर लोगोसे हस्ताक्षर लें।"

३. उन्होंने यह आशा प्रकट की थी कि स्वराज्य प्राप्तिके बाद प्रथम सम्मेलन गुजरातमें स्थित नडियादमें हो।

४. जी० एस० बाबासाहब खापर्डे, बरारके प्रसिद्ध वकील और बाल गंगाधर तिलकके प्रबल समर्थक।

पुरुषोको चूड़ियाँ पहनना शोभा नही देगा। मुहम्मदअली और शौकतअलीको छुडवानेके लिए भी हमें प्रयत्न करना होगा। मुस्लिम लीगके अध्यक्षका पद खाली रहे, यह नही हो सकता।

[गुजरातीसे]

गुजराती, ११–११–१९१७

१८. प्रस्ताव: प्रथम गुजरात राजनीतिक परिषद्में – २[1]

नवम्बर ५, १९१७

५. काठियावाड़से ब्रिटिश हद्दमें आनेवाली कुछ-एक वस्तुओपर, वीरमगाँव चुगीके नामसे प्रसिद्ध जो सीमा-शुल्क लिया जाता है, माननीय वाइसरॉयने उसके हटा दिये जानेकी घोपणा की है। उसके लिए यह परिपद् उनको धन्यवाद देती है तथा उनसे उस प्रस्तावको तुरन्त अमलमें लानेका अनुरोध करती है।

६ हमेशासे चले आ रहे रिवाजके मुताविक किसानोसे भूमिकर दो किस्तोमें न लेकर एक ही किस्तमें लिया जाता है, जिससे गरीव खेतिहरोको वहुत अधिक दिक्कत उठानी पडती है। तथा जीवन-निर्वाह करनेके अपने विशेप उपकरणोको वेचकर उक्त कर चुकाना पड़ता है। अन्त, परिषद् सरकारसे प्रार्थना करती है कि भूमि-कर दो किस्तोमें वसूल किया जाये तथा किस्त लेते समय फसलकी स्थितिको ध्यानमें रखा जाये।

७. प्रत्येक जिलेके उप-विभागीय अधिकारी चौमासेमें जिलोके सदर मुकाममे नही रहते। परिपद्के विचारानुसार उन्हे विभागके प्रमुख गाँवमें रहना चाहिए। दाहोदके जिला डिप्टी कलक्टरका दफ्तर कुछ अरसेसे वरसातमें गोधरा चला जाता है जिससे झालोद, भीमड़ी आदिकी जनताको काफी परेशानी उठानी पडती है तथा आने-जानेपर भी वहुत खर्च आ जाता है। इसलिए, यह परिषद् सरकारसे निवेदन करती है कि मुख्य कार्यालय दाहोदमें ही रहे।

८ भारत रक्षा कानूनके अन्तर्गत राजनीतिक कारणोसे जिन स्त्री-पुरुषोको नजरवन्द किया गया है यह परिपद् सरकारसे उन लोगोको रिहा कर दिये जानेका अनुरोध करती है और अपनी यह राय प्रकट करती है कि माननीय वाइसरॉय द्वारा व्यक्त, श्री मॉण्टेग्युके यहाँ पधारनेपर सर्वत्र शान्तिकी इच्छा तभी फलीभूत होगी जब सव कैदियोको मुक्त कर दिया जायेगा।

९ राजस्व-सम्वन्वी मामलो और जिलेमें शान्ति सुव्यवस्था वनाये रखनेके सम्वन्धमें कलक्टर फिलहाल तो मामलतदारो और पुलिस द्वारा पेश किये गये इकतरफा तथ्योपर ही निर्भर करते है, उससे अनेक वार जिलेके प्रशासनमें वहुत वडी भूल

१. ये प्रस्ताव परिषद्के तीसरे दिन पेश किये गये थे और सम्भवत: इनका मसविदा गाधीजीने तैयार किया था।

हो जाती है तथा लोगोंको अन्याय सहन करना पड़ता है। इसलिए, यह परिषद् सरकारसे सिफारिश करती है, वह प्रत्येक जिलेसे निर्वाचित सदस्योंका एक सलाहकार बोर्ड नियुक्त करे।

१०. हाल ही में गुजरातमें जहाँ-तहाँ प्रजाके हितका विचार किये बिना कुछ लोगोंने दूध [से मक्खन आदि निकालने] की मशीनें लगा रखी हैं और सरकार भी ऐसा ही कर रही है, फलस्वरूप लोगोंको दूध, घी आदि पौष्टिक खुराक नहीं मिलती। इसके लिए यह परिषद् सरकारको सुझाव देती है कि इन मशीनोंको तुरन्त बन्द कर दिया जाये।[1]

[गुजरातीसे]

गुजराती, ११-११-१९१७

१९. भाषण : समाज-सम्मेलनमें[2]

गोधरा
नवम्बर ५, १९१७

प्यारे भाइयो,

हम उन लोगोंके बीचमें हैं जिन्हें आप ढेढ, भंगी, अन्त्यज या ऐसा ही दूसरा नाम देते हैं। मेरा खयाल है कि मेरे पास यहाँ वकील और डॉक्टर तथा अन्य सज्जन भी बैठे हैं। हम आज कथित अवनत वर्गोंसे मिल गये हैं। हमें अब स्वराज्य अवश्य मिल जायेगा। (करतल-ध्वनि)। हम हिन्दू और मुसलमान एक हो गये हैं, यहाँ हम इस ढेढ जातिसे मिल-जुल रहे हैं। हम यह न मानें कि इस जातिका दर्जा नीचा है, आप इस जातिसे हिल-मिलकर एक हो जायें और तब आप स्वराज्यके योग्य हो जायेंगे। हमने इस जातिके प्रति इतनी उपेक्षा बरती, यह हमने ईश्वरके सम्मुख पाप किया है; इसीलिए हमने इससे पूर्व स्वराज्यका अधिकार खो दिया था। हम अन्त्यजोंको छूनेसे क्यों झिझकते हैं? किसी भी समाजके धर्मग्रन्थमें यह नहीं कहा गया है कि हमें इस जातिको नहीं छूना चाहिए या उससे ऐसा व्यवहार करना चाहिए जैसा हम इस समय कर रहे हैं। जातियोंकी तुलनामें इस जातिको निम्नतम स्थान देना भूल है। मुझे विश्वास है कि जहाँ हृदय एक हो जाते हैं वहाँ ईश्वरका वास होता है। ईश्वर सर्वशक्तिमान् है, यद्यपि हममें से कुछ लोग इसपर विश्वास नहीं करते और इसीलिए

१. गोधरासे नवम्बर ५, १९१७ को प्रकाशित एक पुस्तिकामें यह प्रस्ताव विस्तारपूर्वक दिया गया है जो सम्भवतः गांधीजी द्वारा तैयार नहीं किया गया था। यहाँ दिये गये प्रस्तावोंका मिलान ८-११-१९१७ के **मुम्बई समाचारमें** प्रकाशित विवरणसे कर लिया गया है।

२. गुजरात राजनीतिक परिषद्में एकत्रित उच्च वर्गोंके अनुरोधपर ढेढ जातिने अपनी एक सभा की थी। इसकी अध्यक्षता करते हुए गांधीजीने गुजरातीमें यह भाषण दिया था। अब्बास तैयबजी, विट्ठलभाई जे० पटेल, रतनसी धरमसी, मोरारजी गोकलदास और अन्य लोग इसमें सम्मिलित हुए थे।

हम आपसमें लड़ते-झगड़ते हैं। हममें और इस जातिके लोगोंमें क्या अन्तर है? उनके भीतर भी वैसा ही हृदय है, उनकी भी वैसी ही नाक है, वैसी ही जीभ है और उनकी भावनाएँ भी वैसी ही हैं। वे सभी बातोंमें तो मिलते-जुलते हैं। (हर्ष-ध्वनि)। जहाँ हृदयोंमें अन्तर होता है वहाँ भगवान् रामचन्द्रका वास नहीं हो सकता। वहाँ इमाम भी नहीं होते। (हँसी)। ईश्वर राजनीतिक परिषद्में था ऐसा मेरा खयाल नहीं है। (हँसी)। किन्तु मुझे विश्वास है कि वह यहाँ अवश्य है। (हर्ष-ध्वनि)। मैं यहाँ कोई लम्बा भाषण देनेके लिए नहीं आया हूँ। मैं तो यहाँ एक पदार्थ-पाठ सिखाने आया हूँ। (हर्ष-ध्वनि)। समाज-सुधारके सम्बन्धमें यह पदार्थ-पाठ अन्यत्र नहीं मिलेगा। (हर्ष-ध्वनि)। यहाँ बहुत बड़ा जनसमुदाय इकट्ठा है। यह एक महासागरके समान है। कोई भी इस पानीको अपना भात पकानेके काममें ला सकता है। (हँसी)। सभी बोलें। अब मैं माननीय श्री पटेलसे भाषण देनेकी प्रार्थना करता हूँ। (जोरकी हर्ष-ध्वनि)

इसके बाद एक ढेढ युवकने बोलनेकी अनुमति माँगी। वह बहुत घबराया हुआ-सा आगे बढ़ा। उसने कहा, मैं पढ़ा-लिखा नहीं हूँ। मैं ढेढका बेटा हूँ। मैं अपनी जातिकी ओरसे इस जन-समुदायको धन्यवाद देता हूँ और बाबाजी (श्री पटेल)के प्रति प्रेम और कृतज्ञताकी यह श्रद्धांजलि अर्पित करता हूँ। उसमें धीरे-धीरे आत्मविश्वास बढ़ा और उसने अपनी जातिके इस दावेको पुष्ट करनेका प्रयत्न किया कि ढेढोंका स्थान राजपूत जातियोंमें अग्रिम है।

श्री गांधी उसका भ्रम-निवारण करनेके लिए एक बार फिर खड़े हुए। उन्होंने उसे यह सलाह दी कि वह अपने वंशके मूलके सम्बन्धमें ऐसी बेसिर-पैरकी बातोंपर विश्वास न करे। उन्होंने ढेढोंको भी सलाह दी कि वे अपने उद्भवके सम्बन्धमें सन्तोष करें और अपने प्रयत्नोंसे ऊँचे बनें, क्योंकि अब उन्हें उच्च वर्गोंने भी ममतापूर्वक सहारा दिया है।

इसके बाद अन्य वक्ताओंके भाषण हुए और उन सभीने ढेढ जातिको सान्त्वना देने और प्रोत्साहित करनेका प्रयत्न किया . . .।

श्री गांधीने अन्तमें भाषण देते हुए कहा कि उच्च वर्ग ढेढोंके प्रति अपनी शाब्दिक सहानुभूतिको व्यवहारिक रूप दें और ढेढोंके बच्चोंके लिए एक स्कूल खोलने और चलानेके लिए चन्दा दें। उनकी अपीलपर १६५३ रुपये तत्काल इकट्ठे हो गये।[1]

[अंग्रेजीसे]

बॉम्बे सीक्रेट एब्स्ट्रैक्ट्स, १९१७

१. इसके बाद गांधीजीको और अन्य लोगोंको मालायें पहनाई गईं और सभा "गांधीजीकी जय"के नारे लगाती हुई विसर्जित हो गई।

२०. भाषण : अन्त्यज परिषद्में

गोधरा

नवम्बर ५, १९१७

जिनके[1] सहारे मैं खडा हूँ उनको लक्ष्य करके कहता हूँ कि अपनी वाहरी पोशाकसे वे जैसी साधुवृत्तिके लगते हैं, यदि भीतरसे भी वैसी ही साधुवृत्तिके हो तो स्वराज्य जल्द ही मिल जायेगा। वे धारासभामे भी इसी वेशमें सघर्ष चलायें तो हमारी इच्छा और भी जल्दी पूरी हो। अन्त्यज भाइयोसे मैं यह कहता हूँ कि आज आप हिन्दुओ और मुसलमानोके बीचमें बैठे है। हिन्दू धर्ममें यह वात कही भी नही है कि जो लोग हमारी सेवा करते हैं उन्हे छूनेमे पाप होता है। इतनी भीड होनेके वावजूद किसीका पैर तक नही कुचला गया। जहाँ ऐसी शाति हो वहाँ परमेश्वर है ही। ईश्वर सर्वव्यापी है, यह सूत्र किसी राजनैतिक सम्मेलन अथवा संसार-सुधार परिषदमें निश्चित किया गया हो, यह मैं नही मानता, लेकिन वह यहाँ तो अवश्य उपस्थित है। जहाँ पाखण्ड, झूठ, भेदभाव तथा अमुक व्यक्तिको स्पर्श न करनेकी मान्यता हो वहाँ विष्णु भगवान्, खुदा अथवा रसूल उपस्थित नही रह सकते।

इसके वाद गाधीजीने गंगावेनसे[2] अन्त्यजोको आश्रय देने और उन्हे पढ़ना-लिखना सिखानेका अनुरोध किया।

[गुजरातीसे]

गुजराती, ११-११-१९१७

२१. हिन्दू धर्मके माथेपर कलंक

[गोधरा

नवम्बर ५, १९१७ के बाद]

अछूतोका एक जुदा वर्ग बना देना हिन्दू धर्मके माथेपर कलक है। जात-पाँत एक वन्धन है, पाप नही। अछूतपन तो पाप है, सख्त जुर्म है, और यदि हिन्दू धर्म इस बडे साँपको समय रहते नही मार डालेगा, तो वह उसको खा जायेगा। अछूतोको अब हिन्दू धर्मके बाहर हरगिज न समझना चाहिए। उन्हे हिन्दू-समाजके मातबर आदमी समझना चाहिए और उनके धन्धेके मुताविक वे जिस वर्णके लायक हो, उसी वर्णका उन्हे समझना चाहिए।

१. विठ्ठलभाई जे० पटेल, जो वादमें मॉण्टेग्यु-चैम्सफोर्ड सुधारोंके अन्तर्गत केन्द्रीय विधान सभाके सर्वप्रथम स्पीकर निर्वाचित हुए थे। वे परिषदमें साधु-वेशमें उपस्थित हुए थे।

२. साबरमती आश्रममें निवास करनेवाली एक महिला जिन्होंने आगे चलकर चरखे अथवा करघेके जनप्रिय रूपका प्रचलन किया।

वर्णकी मेरी की हुई व्याख्या या तारीफके हिसाबसे तो आज हिन्दू धर्ममें वर्ण-धर्मका अमल होता ही नहीं। ब्राह्मण नाम रखनेवाले विद्या पढाना छोड बैठे हैं। वे और-और धन्धे करने लगे हैं। यही बात थोडी-बहुत दूसरे वर्णोंके बारेमें भी सच है। असलमें विदेशी हुकूमतके नीचे होनेके कारण हम सब गुलाम हैं और इस तरह पश्चिम-वालोंकी निगाहमें शूद्रसे भी हल्के अछूत हैं।

ईश्वर यह अत्याचार क्यों चलने देता है? रावण राक्षस था, पर यह अस्पृश्यता-रूपी राक्षसी तो रावणसे भी भयकर है। और इस राक्षसीकी धर्मके नामपर जब हम पूजा करते हैं, तब तो हमारे पापकी गुरुता और भी बढ जाती है। इससे हब्शियोंकी गुलामी भी कहीं अच्छी है। यदि इसे धर्म कहे तो ऐसे धर्मसे मुझे घृणा होती है। यह हिन्दू धर्म हो ही नहीं सकता। मैंने तो हिन्दू धर्म द्वारा ही ईसाई धर्म और इस्लामका आदर करना सीखा है। फिर यह पाप हिन्दू धर्मका अग कैसे हो सकता है? पर क्या किया जाये?

इस पाखण्ड और अज्ञानके खिलाफ यदि जरूरत पडे तो मैं अकेला लडूँगा, अकेला तपश्चर्या करूँगा और उसका नाम जपते हुए मरूँगा। शायद ऐसा भी हो कि मैं किसी दिन पागल हो जाऊँ और कहने लगूँ कि मैंने अस्पृश्यता सम्बन्धी विचारोंमें भूल की। अस्पृश्यताको हिन्दू धर्मका पाप कहकर मैंने पाप किया, तो आप मानना कि मैं डर गया हूँ, सामना नहीं कर पाया और हारकर अपने विचार बदल रहा हूँ। उस दशामें आप मानना कि मैं बेहोशीमें क्या-कुछ बक रहा हूँ।

मेरी अल्प बुद्धिके अनुसार तो भगी जो मैल उठाता है, वह शारीरिक है और वह तुरन्त दूर किया जा सकता है। किन्तु जिनपर असत्य और पाखण्डका मैल चढ गया है, उनका मैल इतना सूक्ष्म है कि उसे दूर करना बहुत कठिन है। यदि किसीको अस्पृश्य गिन सकते हैं तो असत्य और पाखण्डसे भरे हुए इन लोगोंको ही।[1]

गोधराके महारवाडेमें भगी, डोम आदि अछूत जातियोंका जो जलसा हुआ था उसके सम्बन्धमें 'गुजराती' नामक पत्रमें बडी आलोचना की गई है। और इन आलो-चकोंने वास्तविक घटनाका विवरण तोड-मरोडकर दिया है और उससे पाठकोंके मनमें भ्रम उत्पन्न किया है। अत उसे दूर करनेके लिए मैं निम्नलिखित पक्तियाँ लिख रहा हूँ।

धर्म सम्बन्धी बातोंमें मैं अपने आपको बालक नहीं, किन्तु खासा ३५ वर्षोंका तजुर्बेकार समझता हूँ। क्योंकि इतने वर्ष मैंने धर्मके विषयका विचार और मनन किया है। विशेषकर मुझे जहाँ-जहाँ सत्य दीख पडा, वहाँ-वहाँ मैंने उसे कार्यमें परिणत किया। मेरी धारणा है कि निरे शास्त्राभ्याससे ही धर्मका स्वरूप हस्तगत नहीं होता। हम

१. इसके बाद यहाँ जो अनुच्छेद आते हैं उनका साराश गाधीजीने अपने उस पत्रमें भी दिया है जो उन्होंने नवम्बर ५, १९१७ को गोधरामें हुई अन्त्यज परिषद्की गुजराती द्वारा की गई टीका-टिप्पणीके सम्बन्धमें उसको लिखा था। पत्र गुजरातीके ३०-११-१९१७ के अकमें प्रकाशित किया गया था।

सदा ही देखते हैं कि शास्त्र-पठन किये बिना और नियमोंके पालनके बिना मनुष्य मनमाने मार्गसे चलने लगता है। मैं ऐसे मनुष्यसे शास्त्रका अर्थ न पूछूँगा, जिसने लोगोंसे पण्डित कहानेके लिए शास्त्र पढ़े हैं। इसीलिए मैक्समूलर जैसे महान् विद्वानोंने विकट अध्ययनके अनन्तर जो पुस्तकें लिखी हैं उनसे भी मैं अपने आचरण सम्बन्धी नियम बनानेमें सहायता न लूँगा। आजकल अपनेको शास्त्रोंके ज्ञाता कहनेवाले बहुतेरे लोग अज्ञानी और दम्भी ही पाये जाते हैं। मैं धर्मगुरुकी खोजमें हूँ। गुरुकी आवश्यकता है, यह मैं मानता हूँ। परन्तु जबतक मुझे कोई योग्य गुरु न दीख पड़े, तबतक मैं अपने आपको ही अपना गुरु मानता हूँ। यह मार्ग विकट अवश्य है, परन्तु आजकलके इस विषम-कालमें यही योग्य जान पड़ता है। हिन्दू धर्म इतना महान् और व्यापक है कि आजतक कोई उसकी व्याख्या करनेमें कृतकार्य नहीं हो सका। मेरा जन्म वैष्णव सम्प्रदायमें हुआ है और इसके सिद्ध सिद्धान्त मुझे बड़े ही प्रिय हैं। वैष्णव धर्ममें अथवा हिन्दू धर्ममें मुझे कहीं यह विधान नहीं मिला कि भंगी डोम आदि जाति अस्पृश्य है। हिन्दू धर्म अनेक रूढ़ियोंसे घिरा हुआ है। उनमें से कुछ रूढ़ियाँ प्रशंसनीय हैं, शेष निन्द्य हैं। अस्पृश्यताकी रूढ़ि तो सर्वथा ही निन्द्य है। इसकी बदौलत दो हजार वर्षोंसे धर्मके नामपर पापकी राशि हिन्दू धर्मपर लादी जाती रही है और अब भी लादी जाती है। मैं इस रूढ़िको पाखण्ड कहता हूँ। इस पाखण्डसे आपको मुक्त होना पड़ेगा, और इसका प्रायश्चित्त आप कर ही रहे हैं। इस रूढ़िके समर्थनमें मनुस्मृति आदि धर्म-ग्रन्थोंके श्लोक उद्धृत करनेसे कोई लाभ नहीं। इन ग्रन्थोंमें कितने ही प्रक्षिप्त श्लोक हैं। कितने ही श्लोक नितान्त अर्थहीन हैं। फिर मनुस्मृतिकी प्रत्येक आज्ञाका पालन करनेवाला या पालन करनेकी इच्छा रखनेवाला एक भी हिन्दू मेरे देखनेमें नहीं आया। और यह सिद्ध करना बहुत सहज है कि जो ऐसा करेगा वह अन्तमें गिरकर रहेगा। धर्म-ग्रन्थोंमें मुद्रित प्रत्येक श्लोकका समर्थन कर देनेसे सनातन धर्मकी रक्षा न होगी, बल्कि उनमें प्रतिपादित त्रिकालाबाधित-तत्त्वोंको कार्यरूपमें परिणत करनेसे ही उसकी रक्षा होगी। जिन-जिन धार्मिक नेताओंसे इस विषयमें सम्भाषण करनेका मुझे अवसर मिला है, सबने इस बातको स्वीकार किया है। उन धर्म-प्रचारकोंने, जिनकी गणना विद्वानोंमें होती है और जो समाजमें पूज्य माने जाते हैं, स्पष्ट कहा है कि भंगी, डोम आदिके साथ हम लोग जैसा बर्ताव करते हैं उसका इसके सिवा और कोई आधार नहीं कि वैसी रूढ़ि या प्रथा चल गई है। सच पूछिये तो इस रूढ़िका कोई पालन भी नहीं करता। रेलमें उनका स्पर्श होता है। मिलोंमें उनसे काम लिया जाता है और हम उन्हें बेहिचक छूते हैं। फर्ग्युसन तथा बड़ौदा कालेजोंमें अन्त्यज प्रविष्ट किये गये हैं। इन सब बातोंमें समाज बाधा नहीं डालता। अंग्रेजों और मुसलमानोंके घरोंमें उनका सत्कार किया जाता है और अंग्रेजों या मुसलमानोंको छूनेमें हमें कुछ भी संकोच नहीं होता, बल्कि इनमें से कितनोंके साथ हाथ मिलानेमें तो हम उलटा गौरव समझते हैं। ईसाई धर्म ग्रहण कर लेनेपर इन्हीं अन्त्यजोंको हमें अछूत माननेका साहस नहीं होता। इस प्रकार जिस रूढ़िका पालन करना असम्भव है, व्यक्तिगत मत भिन्न होनेपर भी, उसका समर्थन कोई समझदार हिन्दू नहीं कर सकता।

अस्पृश्यताकी भावनामें घृणाका अन्तर्भाव माननेसे इनकार करनेवालोंके लिए तो कोई विशेषण ही मेरे ध्यानमें नहीं आता। भूलसे कोई भंगी हमारे डिब्बेमें सवार हो जाये तो बेचारा पिटे बिना नहीं रह सकता और गालियोंकी तो मानो उसपर वर्षा ही होने लगेगी। उसके हाथ चायवाला चाय और दूकानदार सौदा नहीं बेचता। वह मरता हो तो भी हम उसको छूना गवारा नहीं करते। अपना जूठा हम उसे खानेको देते हैं और फटे तथा मैले कपड़े पहननेको। कोई हिन्दू उसे पढ़ानेको तैयार नहीं होता। वह अच्छे मकानोंमें नहीं रह सकता। रास्तेमें हमारे भयसे उसे बार-बार अपनी अस्पृश्यताकी घोषणा करनी पड़ती है। इससे बढ़कर घृणा-सूचक व्यवहार और कौन-सा हो सकता है? उनकी दशासे और क्या सूचित होता है? जिस तरह यूरोपमें एक समय धर्मकी ओटमें गुलामीकी प्रथाकी हिमायत की जाती थी, उसी तरह आज हमारे समाजमें भी धर्मके नामपर अन्त्यजोंके प्रति घृणा-भावकी रक्षा की जाती है। यूरोपमें भी अन्त तक ऐसे कुछ-न-कुछ लोग निकल ही आते थे जो बाइबिलके वचन उद्धृत करके गुलामीकी प्रथाका समर्थन करते थे। अपने यहांके वर्तमान रूढ़िके हिमायतियोंको भी मैं उसी श्रेणीमें गिनता हूं। हमें अस्पृश्यताका विचार-दोष धर्मसे अवश्य दूर कर देना होगा। उसके बिना प्लेग, हैजे आदि रोगोंकी जड़ नहीं कट सकती। अन्त्यजोंके धन्धोंमें नीचताकी कोई बात नहीं है। डॉक्टर और हमारी मातायें भी वैसे काम करती हैं। कहा जा सकता है कि वे सब फिर स्वच्छ हो जाती हैं। अच्छा, यदि भंगी आदि स्वच्छताका पालन नहीं करते तो दोष उनका नहीं, सोलहों आने हमारा ही है। यह स्पष्ट है कि जिस समय हम प्रेमपूर्वक उनका आलिंगन करने लगेंगे उस समय वे अवश्य ही स्वच्छ रहना सीख लेंगे।

सहभोज आदि आन्दोलनोंकी तरह इस आन्दोलनको आघात देनेकी आवश्यकता नहीं है। इस आन्दोलनसे वर्णाश्रम धर्मका लोप नहीं हो सकता। इसका उद्देश्य इसके अनिष्टको दूर करके उसकी रक्षा करना है। इस आन्दोलनके पुरस्कर्ताओंकी यह भी इच्छा नहीं है कि भंगी आदि अपने काम छोड़ दें। किन्तु उन्हें यह दिखा देना है कि मल, गन्दगी आदि साफ करनेका उद्यम इतना आवश्यक और पवित्र है कि उसके करनेसे वैष्णव तककी शोभा हो सकती है। इस धन्धेको करनेवाले नीच नहीं, किन्तु दूसरे पेशेवालोंके बराबर सामाजिक अधिकारोंके पात्र हैं और उनका उद्यम कितने ही रोगोंसे देशकी रक्षा करता है। इसलिए वे डॉक्टरोंके समान सम्माननीय हैं।

एक ओर यह देश तपश्चर्या, पवित्रता, दया आदिके कारण सबके लिए वन्दनीय है दूसरी ओर स्वेच्छाचार, पाप, क्रूरता आदि दुर्गुणोंका भी क्रीडास्थल बना हुआ है। ऐसे समयमें लेखक समुदायके पाखण्डका विरोध कर समाजसे उसकी जड़ काट देनेके लिए बद्ध परिकर होनेमें ही आपकी शोभा है। आपसे मेरी प्रार्थना है कि गोधरामें किये गये पुण्य कार्यका अभिनन्दन कर आप उस पुण्यके भागी और इस निमित्त किये जानेवाले इस उद्योगमें सहायक हों, ताकि ६ करोड़ मनुष्य हताश होकर उससे अलग न हो जायें।

इस आन्दोलनमें सम्मिलित होनेके पहले मैंने अपने धार्मिक उत्तरदायित्वको अच्छी तरहसे सोच-समझ लिया है। एक आलोचकने यह भविष्यवाणी की है कि कालान्तरमें

मेरे विचार बदल जायेंगे।[1] इस सम्बन्धमें मुझे इतना ही कहना है कि यदि कभी ऐसा समय आयेगा, तो उसके पहले मैं हिन्दू धर्म ही नही, ससारके धर्म-मात्रका त्याग कर चुकूँगा। परन्तु मेरी यह दृढ धारणा है कि हिन्दू धर्मको पूर्वोक्त कलकसे मुक्त करनेमें यदि अपना शरीर भी देना पडे, तो भी यह कोई बडी बात नही है। जिस धर्ममें नरसी मेहता-जैसे समदर्शी भगवद्भक्त हो गये हो उसमें अस्पृश्यताकी भावनाका रह सकना कदापि सम्भव नही है।

बापू और हरिजन

२२. भाषण: मुजफ्फरपुरमें[2]

नवम्बर ११, १९१७

भाइयो,

मेरा इरादा तो आपसे केवल तीन बातें कहनेका ही था परन्तु यहाँ स्टेशनपर जो हाल देखा उसके कारण उनमे एक बात और जुड़ जाती है। मैं जहाँ भी जाता हूँ, लोग, प्रेमके वशीभूत होकर, मेरी ओर कुछ ऐसे उमडते आते है और हुल्लड मचाते है कि मै विमूढ हो उठता हूँ। ऐसी भीड़-भाड़से बडा क्लेश होता है और देशके सेवा-कार्यको हानि पहुँचती है। यदि किसी भी देशसेवकका हम सम्मान करना चाहें तो उसका भी तरीका होता है और उसे सीखना आवश्यक है। हम लोगोको तो स्टेशन पर व्यवस्थित ढगसे खडे रहना भी नही आता। हम राष्ट्रीय कार्य करना चाहते हैं। हमने देशकी सेवा करनेका कार्य हाथमें लिया है। तो समाजमे हमारा व्यवहार कैसा हो, हम किस प्रकार उठें-बैठे, और किस प्रकार लोकसेवकोका सम्मान करे, यह सब सीखना भी हमारा फर्ज हो जाता है। ऐसे प्रसंगोपर हमारा व्यवहार कैसा हो इसके लिए हमे कवायद सीखनी चाहिए।

दूसरी बात चम्पारनके सम्बन्धमें है। वहाँकी जनताको जिस बातकी आवश्यकता थी, अब वह उसे मिल गई है।[3] बागान-मालिकोंके साथ हमारा कोई झगडा नही था। हमें तो केवल उनकी गुलामीसे मुक्त होना था और उतना हमने प्राप्त भी कर लिया। वैसे चम्पारनकी जनताके सम्बन्धमें जारी किये गये निर्देश मुजफ्फरपुरपर लागू

१. गुजरातीमे यहाँ नर्मदाशंकरका उदाहरण दिया गया है।

२. यह भाषण मुजफ्फरपुर, धर्मशाला, बिहारमें नवम्बर ११, १९१७ को दिया गया था। बिहार-उड़ीसा पुलिस एक्स्ट्रैक्ट्स, १९१७ से पता चलता है कि इस सभामें लगभग पाँचसे सात हजार लोग उपस्थित थे।

३. गांधीजीके नेतृत्वमे हुए चम्पारन सत्याग्रहके परिणामस्वरूप नील काश्तकारोंपर से *तिनकठिया* कर उठा दिया गया था। देखिए खण्ड १३।

नही होते, लेकिन मै ऐसा मानता हूँ कि वे धीरे-धीरे लागू होने लगेंगे। यदि हम किसी वस्तुको प्राप्त न कर पायें तो उसका कारण यही होता है कि हम जिस व्यक्तिसे उस वस्तुकी माँग करते है उसके और हमारे बीच विश्वासकी भूमिका नही होती। मैंने जब चम्पारनमें काम शुरू किया तो बागान-मालिको और अधिकारियोको लगा कि मै उनसे सघर्ष करने जा रहा हूँ, पर अन्तमें दोनोको जब यह विश्वास हो गया कि मेरा ऐसा कोई इरादा नही है और मै तो केवल इतना चाहता हूँ कि बागान-मालिक मजदूर-जनताके साथ न्याय किया करें, तो इच्छित बातके हो जानेमें कोई मुश्किल नही रही।

चम्पारनका यह कार्य तो सफल हो गया। पर दूसरा कार्य, जो कही अधिक कष्टसाध्य है, अभी बाकी है। वह मनुष्य जो गुलामीसे मुक्त होकर स्वतन्त्रता पा जाता है, उसे यदि उचित शिक्षा न मिल पाये तो वह प्राय. स्वतन्त्रताका दुरुपयोग करने लगता है। चम्पारनकी जनता एक प्रकारका स्थानिक स्वराज्य तो पा ही चुकी है। लेकिन अब जो प्रश्न रह जाता है वह यह है कि इस स्वराज्यका सचालन किस प्रकार किया जाये। इसके लिए बाबू ब्रजकिशोर[1] तथा दूसरे भाइयोने — जो मेरे साथ काम करते है, यह तय किया है कि स्थान-स्थानपर पाठशालाएँ खोली जायें और लोगोको सामान्य ज्ञान तथा आरोग्यके नियमोका विशेष ज्ञान कराया जाये। कल्पना यह है कि बालक-बालिकाओको अक्षर-ज्ञान और साफ-सुथरा रह सकने योग्य आरोग्यका ज्ञान कराया जाये तथा बडी उम्रके लोगोको ग्राम स्वास्थ्यकी, रास्तो, इस्तेमालमें न आनेवाले कुओ और पाखानोकी सफाईकी शिक्षा दी जाये।

इसी हेतुको ध्यानमें रखकर मगलवारके शुभ दिन ढाका नामक गाँवमें एक पाठशाला खोली जायेगी। इस कार्यके लिए स्वयसेवकोकी बडी आवश्यकता है। शिक्षित बन्धुओमें जिनकी इच्छा हो, वे इसके लिए आगे आयें। उनकी परीक्षा ली जायेगी और जो योग्य साबित होगे उन्हे यह काम दिया जायेगा।

तीसरी बात यह है। हिन्दू-मुसलमानोके बीच जो गाँठ पड गई है, उनके दिलमें जो कड़वाहट पैदा हो गयी है — इसे कैसे दूर किया जाये? इन दोनो कौमोके बीच मित्रभावकी स्थापना करना ही मेरे जीवनका कार्य है। २५ वर्षोसे मै इसके उपाय खोजता आ रहा हूँ। मै मुसलमान भाइयोके बीच रहा। शाहाबादका मामला[2] सुनकर मेरा दिल फट जाता है, और मेरा दिल रो उठता है कि यदि मुझसे बन पडता तो मै शाहाबाद जाकर अपने मुसलमान भाइयोसे मिलता, उनसे सलाह-मशविरा करता। लेकिन

१. बाबू ब्रजकिशोर प्रसाद, दरभगाके एक प्रमुख वकील, उग्र राष्ट्रवादी और गाधीजीके सक्रिय सहयोगी; जिन्होंने सन् १९१७ में चम्पारन सत्याग्रहमें उनके साथ काम किया था। सन् १९२० में वकालत छोड़कर आप असहयोग आन्दोलनमें शरीक हो गये थे।

२. सन् १९१७ के सितम्बर-अक्तूबरमें बकरीदके अवसरपर इस जिलेमें हिन्दू-मुसलमानोंके बीच दंगा हो गया था। इसका विषैला प्रभाव देशके दूसरे भागोंमें भी हुआ था।

अपनी सीमित शक्तिका मुझे भान है। चम्पारनका कार्य अभी समाप्त नही हो पाया है, और मेरा यह सिद्धान्त है कि जबतक एक काम पूरा न हो जाये तबतक उसीके लिए जिऊँ और उसीके लिए मरूँ। पर मैं इस समस्यापर सोचता रहा हूँ और मुझे अपने हिन्दू भाइयोसे कहना पड़ता है कि इस अवसरपर हमसे बड़ी गलती हुई है। इस घटनाके लिए हम ही अधिक दोषी हैं। अब जो समझदार हिन्दू हैं उनका यह फर्ज है कि वे मुसलमानोंको इससे जो दु ख पहुँचा है उसे मिटाये। हमने आरामे उनका जितना नुकसान किया है उससे दुगुना हमें उन्हे लौटा देना चाहिए। मैं तो यहाँतक कहूँगा कि अकेले शाहाबादके हिन्दुओसे यदि इतना न बन पाये तो सारे भारतके हिन्दुओको यह नुकसान पूरा कर देना चाहिए। हमारे जो वकील भाई दोनो पक्षोकी ओरसे लड रहे हैं उन्हे चाहिए कि वे अदालतोसे अपने-अपने मामले उठा ले, और सरकारसे कह दें कि इन मामलोको अब वे जारी नही रखना चाहते। मैं अपने मुसलमान भाइयोसे भी कहूँगा कि एक जिलेमे दो कौमोके बीच जो संघर्ष हुआ है उसे वे सारे भारतका सघर्ष न बना दें। झगडा तो दो भाइयोमे भी होता है पर उसका परिणाम सारे कुटुम्बपर नही होना चाहिए। ठीक इसी प्रकार दोनो समाजोको चाहिए कि वे इन झगडोको प्रान्तके बाहर न फैलायें। मुस्लिम लीग और काग्रेस दोनोने जिस कार्यको अपने कन्धोपर उठाया है उसे हम अपना धर्म समझकर करे। जो कार्य हमारे नेताओने विचारपूर्वक देखभालकर हाथमें लिया है, उसमे हमे दखल देनेका कोई अधिकार नही है। हम तो स्वराज्यके लिए कमर कस रहे हैं अत. यदि हम इस प्रकारके भेदोमे अपना समय गँवायेंगे तो हमारी आनेवाली पीढ़ियाँ हमे दोषी ठहरायेंगी। हमारे अपने झगड़े हमे स्वयं ही निपटाने हैं, पर अबतक हम वैसा कर नही पाये हैं। इन झगडोकी बुनियादमें एक कारण यह भी है कि हमारी शिक्षा अंग्रेजीमे होती है। एक विदेशी भाषामे शिक्षा पानेके कारण हमारा तेज और बल क्षीण हो गया है। केवल यही नही, इसीके कारण हम अपने जनसमाजमे घुल-मिल नही पाते। हमारे शिक्षित-वर्ग और जन-समाजके बीच एक खाई पड़ चुकी है। शिक्षितो और अशिक्षितोके बीचके आपसी सम्बन्ध यदि अच्छे होते तो आज ये बखेडे खड़े ही नही होते।

हिन्दू और मुसलमानोके बीच झगडा गोमाताको लेकर खड़ा हुआ है। यदि हमें गायकी रक्षा करनी है तो हमें उसे कसाईखानेसे बचाना चाहिए। अंग्रेज बन्धुओके लिए हररोज कमसे कम ३० हजार गाय और बछडे कत्ल किये जाते हैं। और जबतक हम इस हत्याको रोक नही पाते तबतक मुसलमान भाइयोपर हाथ उठानेका हमें कोई अधिकार नही है। अपने हिन्दू भाइयोसे मैं कहूँगा कि गोमाताको बचानेके लिए मुसलमान बन्धुओका खून करना कोई धर्म नही है। हिन्दू धर्म तो केवल एक मार्ग बताता है और वह है तपश्चर्याका मार्ग। तुलसीदासजीकी वाणीमे कहे तो 'दया धर्मको मूल है।' इसलिए हमे तो दयासे ही काम लेना चाहिए। गायकी रक्षा तो मैं भी करना चाहता हूँ। पर गायके लिए मैं अपने मुसलमान भाइयोसे कहूँगा कि गायको छुरा मारनेके बदले आप मेरी गर्दनपर छुरी चलावें और मेरा खून करे। मुझे विश्वास है कि मेरी यह दीन वाणी मुसलमान-बन्धु अवश्य सुनेंगे। हम यदि अपनी स्वतन्त्रता चाहते हैं तो हमे

दूसरोंकी स्वतन्त्रता छीन लेनेका कोई अधिकार नहीं है। एक दूसरेकी स्वतन्त्रता छीन लेनेका प्रयत्न करनेमें ही झगड़े खड़े होते हैं। यदि कोई मुसलमान आदेशके स्वरमें कहेगा कि कोई भी हिन्दू ढोल न बजाये तो हिन्दू कभी नहीं मानेगा, पर यदि अपने मुसलमान भाई नम्रतापूर्वक कहें कि आप ढोल न बजायें, हमारे धर्म-कार्य नमाजमें खलल न डालें, और यदि आप ऐसा करेंगे तो हम अपने ही खूनकी नदी बहा देंगे, तो मैं विश्वास करता हूँ कि कोई भी हिन्दू भाई इतना नासमझ नहीं निकलेगा जो इस प्रार्थनाके विरुद्ध व्यवहार करेगा। परन्तु सच्ची बात तो यह है कि इस सम्बन्धमें हिन्दू और मुसलमान, किसीका भी मन साफ नहीं है। यदि हम मेल और प्रेम चाहते हैं तो वह मुहब्बतसे ही हो सकेगा; भय दिखाकर तो कभी नहीं हो सकेगा। हम अपने दिलकी बात कभी भी साफ-साफ नहीं कह पायेंगे।

मैं यह कहता आया हूँ कि राष्ट्रीय भाषा एक होनी चाहिए और वह हिन्दी होनी चाहिए। मैंने सुना है कि इस सम्बन्धमें कई मुसलमान बन्धुओंके मनमें गलतफहमी है। उनमें बहुतेरोंका खयाल है कि 'हिन्दी होनी चाहिए' यह कहकर मैं उर्दूका विरोध करता हूँ। हिन्दी भाषासे मेरा मतलब उस भाषासे है जिसे उत्तर भारतमें हिन्दू और मुसलमान दोनों बोलते हैं और जो नागरी तथा उर्दू लिपिमें लिखी जाती है। उर्दूके लिए मेरे मनमें कोई द्वेष नहीं है। मेरी तो यह मान्यता है कि दोनों भाषाएँ एक ही हैं। मेरे खयालसे तो दोनों भाषाओंका गठन, दोनोंका ढंग, संस्कृत और अरबी शब्दोंके भेदको छोड़कर, एक ही प्रकारका है। मेरा झगड़ा तो अंग्रेजीके विरुद्ध है। मुझे द्वेष उससे भी कोई नहीं है; परन्तु अंग्रेजी भाषाके माध्यमसे हम अपनी जनतासे घुलमिल नहीं सकते और उनके साथ एकरस होकर काम नहीं कर सकते। मेरे कहनेका आशय इतना ही है। हिन्दीको आप हिन्दी कहें या हिन्दुस्तानी; मेरे लिए तो दोनों एक ही हैं। हमारा कर्त्तव्य यह है कि हम अपना राष्ट्रीय कार्य हिन्दी भाषामें करें। लिपिके सम्बन्धमें यह होगा कि हिन्दू बालक नागरीमें लिखेगा और मुसलमान उर्दूमें। इससे किसी प्रकारकी भी हानि नहीं है। पर दोनों ही दोनों लिपि सीखेंगे। हमारे बीच हमें अपने कानोंमें हिन्दीके ही शब्द सुनाई दें—अंग्रेजीके नहीं। इतना ही नहीं हमारी धारासभाओंमें जो वाद-विवाद होता है वह भी हिन्दीमें होना चाहिए। ऐसी स्थिति लानेके लिए मैं जीवन-भर प्रयत्न करूँगा।

अब एक बात और कहनी बाकी रह गई है। सारे हिन्दुस्तानमें स्वराज्यका आन्दोलन चल रहा है। शाहाबादमें जो दंगा हुआ है उससे हमें स्वराज्यकी प्राप्तिमें विलम्बका कारण ज्ञात होता है। स्वराज्य निरी अर्जियों या भाषणोंसे नहीं मिलेगा। यदि हिन्दू कहेगा कि एक गायकी रक्षा करनेके लिए मैं एक मुसलमानका खून पी जाऊँगा तब तो हमें कभी स्वराज्य प्राप्त नहीं होगा। यदि दोनों कौमोंके बीच मेल हो जाये; यदि दोनों कह दें कि हम आपसी झगड़ोंको स्वयं ही निबटा लेंगे, उसमें किसी बाहरी व्यक्तिके बीचमें पड़नेकी जरूरत नहीं है। यदि हम इतना विश्वास दे सकें तो स्वराज्य मिलकर रहेगा। स्वराज्यके लिए शिक्षाकी आवश्यकता नहीं है, केवल हमारे बीच एकता होनी चाहिए। हममें ताकत होनी चाहिए। स्वराज्यसे भी पूर्व हममें निर्भयता होनी

चाहिए। जबतक हममें ईश्वरीय अंश वर्तमान है तब तक हमें मनुष्यसे कभी भय नहीं खाना चाहिए।[1]

[गुजरातीसे]

महात्मा गांधीनी विचारसृष्टि

२३. भाषण : उमरेठमें[2]

[उमरेठ]
नवम्बर १२, १९१७

मित्रो,

आप लोगोंने मुझे श्री गोखलेके नामपर खोले जानेवाले पुस्तकालयका उद्घाटन और उनकी तसवीरका अनावरण करनेके लिए बुलाया है। यह काम बहुत पवित्र है और गम्भीर है। आजकल पश्चिमके लोगोंमें एक ऐसी गलतफहमी फैली हुई है कि पुस्तकालय खोल दिया तो समाजकी सेवा हो गई। अमेरिकाके एक शहरमें कार्नेगी नामके एक करोड़पति सज्जन रहते हैं। उनके पास इतना ज्यादा पैसा है कि वे लाखों रुपया बाँटें तो भी उनकी पूंजीमें कोई कमी नहीं होगी। वे अनेक जगहोंमें पुस्तकालय खोलनेके लिए पैसा देते हैं और ये सारे पुस्तकालय उन्हींके नामपर होते हैं। स्कॉटलैंडके कुछ नेताओंने उनसे विनती की है कि कृपया ऐसी प्रथा आप हमारे यहाँ हमारी मर्जीके बिना न फैलायें, क्योंकि हमारी समझमें इससे हितके बदले हानि होनेकी ही ज्यादा सम्भावना है। पेरिसमें पुस्तकालयोंका दुरुपयोग दिन-प्रतिदिन बढ़ रहा है। इससे आप यह न समझें कि मैं पुस्तकालयोंके खिलाफ हूँ। पुस्तकालय खोलते समय और उसके पहले यह विचार करना आवश्यक है कि वह किसके नामपर खोला जाये और स्थानीय हितकी दृष्टिसे वहाँ पुस्तकें कैसी चुनी जायें ताकि व्यक्तिका नाम और पुस्तकोंका वाचन सार्थक हो।

अब उनकी तसवीरके विषयमें। गोखले नामके भूखे नहीं थे; बल्कि वे अपना सार्वजनिक सम्मान पसन्द ही नहीं करते थे। अकसर ऐसे अवसरोंपर उनकी आँखें झुक जाया

१. बिहार-उड़ीसा पुलिस एब्स्ट्रैक्ट्समें बताया गया है कि अन्तमें गांधीजी 'होमरूल' आन्दोलनके सम्बन्धमें बोले और उन्होंने लोगोंसे भारतीय राष्ट्रीय कांग्रेस और मुस्लिम लीगकी सिफारिशोंका समर्थन करनेका अनुरोध किया। उन्होंने उपस्थित जन-समुदायके सम्मुख श्री मॉण्टेग्युको भेजे जानेवाले प्रार्थना-पत्रका वर्णन किया और उसपर हस्ताक्षर करनेका अनुरोध किया। उसी शामको गांधीजीने हिन्दू-मुस्लिम नेताओंके एक सम्मेलनमें भाग लिया। मुजफ्फरपुरके पुलिस अधीक्षकसे प्राप्त हुई नवम्बर १२, १९१७की गुप्त रिपोर्टके अनुसार श्री गांधीजीने शाहाबादके दंगोंकी भर्त्सना की और खेद प्रकट किया। . . . श्री गांधीने कहा कि वे यह नहीं चाहते कि हिन्दीको अपनाया जाये, उर्दूको नहीं। उन्होंने कहा विदेशी भाषा नहीं अपनाई जानी चाहिए और सिर्फ ऐसी भाषा अपनाई जानी चाहिए जिसे सब लोग समझ सकें। अधिकांशतः हिन्दी और उर्दू भाषाएँ बोली जाती हैं और ये आसानीसे समझ आ जाती हैं।

२. गुजरातमें।

करती थी। यदि आप ऐसा मानते हैं कि गोखलेकी तसवीरका उद्घाटन करनेसे उनकी आत्माको शान्ति मिलेगी, तो वह सही नहीं है। मरते समय इस महात्माने अपनी चिर-पोषित इच्छा स्पष्ट कर दी थी। उन्होंने कहा था "मेरी मृत्युके बाद मेरा जीवन-चरित्र लिखा जाये, मेरा स्मारक बनाया जाये या शोक-प्रदर्शनकी सभाएँ हों, तो उनसे मेरी आत्माको शान्ति नहीं मिलेगी। मेरा जीवन सारे भारतका जीवन बन जाये, और सस्थापित भारत-सेवक-समाजकी प्रगति हो, यही मेरी अभिलाषा है।" जो लोग उनका यह वसीयतनामा स्वीकार करते हों, उन्हींको उनकी तसवीरका उद्घाटन करनेका अधिकार है।

गोखलेने अपने जीवनमें बहुतसे काम किये; मगर आज तो मैं यहाँ आई हुई बहनोंके ध्यानसे उनके जीवनके कुछ कौटुम्बिक प्रसग ही सुनाऊँगा। बहनोंको गोखलेके इस उदाहरणसे सीख लेनी चाहिए कि उन्होंने अपने कुटुम्बकी काफी सेवा की थी। उन्होंने ऐसा कोई काम कभी नहीं किया जिससे कुटुम्बका जी दुखे। आजकल हिन्दू परिवारोंमें लड़कीको गुड़ियाकी तरह ब्याहकर आठ वर्षकी उम्रमें ही अथाह ससार सागरमें ढकेल दिया जाता है। लेकिन गोखलेने वैसा नहीं किया। उनकी लड़की अभी भी अविवाहित है। ऐसा करनेमें उन्हें काफी मुसीबतें सहन करनी पड़ीं। उनकी युवावस्थामें ही उनकी पत्नीकी मृत्यु हो गई थी। वे फिरसे विवाह कर सकते थे, पर उन्होंने वैसा नहीं किया। अपने कुटुम्बकी सेवा तो उन्होंने अनेक तरहसे की। दूसरे लोग भी सामान्यत. कुटुम्ब-सेवा करते ही होंगे। परन्तु कुटुम्ब-सेवा दो तरहसे हो सकती है— एक स्वार्थदृष्टिसे और दूसरी स्वदेशहितकी वृत्तिसे। गोखलेने स्वार्थवृत्तिको तिलाजलि दे दी थी। पहले कुटुम्ब, उसके बाद ग्राम और फिर देश — जिस समय जिसके प्रति कर्त्तव्य करनेका प्रसग उपस्थित हुआ, उस समय वही कर्त्तव्य उन्होंने सम्पूर्ण साहस, लगन और श्रमसे पूरा किया।

गोखलेके मनमें हिन्दू-मुसलमानके भेदका लेशमात्र भी नहीं था। वे सबको समान दृष्टिसे और स्नेहभावसे देखते थे। कभी-कभी वे नाराज हो जाते थे, लेकिन उनकी यह नाराजी स्वदेशके हितके साथ सम्बन्ध रखनेवाली होती थी और विपक्षीके मनपर उसका अच्छा ही असर होता था। उनके क्रोधकी इस विशेषताके कारण ही जो यूरोपीय पहले उनके प्रति शत्रुताका भाव रखते थे, उनके गाढे मित्र बन गये थे।

जो व्यक्ति गोखलेके सम्पूर्ण जीवनपर दृष्टि डालेंगे वे देखेंगे कि उन्होंने अपने जीवनको देश-सेवाका पर्याय ही बना डाला था। वे अपनी उम्रके पचास वर्ष पूरे होनेके पहले ही इस दु खपूर्ण ससारसे चले गये और इसका एकमात्र कारण था चौबीसों घन्टे तन और मनसे अनवरत देश-सेवा। अपने और अपनी गृहस्थीकी छोटी-मोटी बातोंको तो वे अपने मनमें कोई जगह ही नहीं देते थे। उनको केवल इस बातकी चिन्ता रहती थी कि वे देशके लिए क्या कर सकते हैं। गोखलेकी महान् आत्माको हमारे भारतकी शक्ति — अन्त्यज वर्ग — के उद्धारका प्रश्न भी सदा चिन्तित रखता था। उनके उद्धारके लिए उन्होंने बहुत प्रयत्न किये। अगर कोई उन्हें वैसा करते देखकर टोकता, तो वे साफ कह देते थे कि अपने भाई अन्त्यजोंको छूनेसे हम भ्रष्ट नहीं होते, बल्कि अस्पृश्यताकी दुष्ट भावना रखनेसे ही घोर पापमें पड़ते हैं।

अभी मैं यहाँके मेघवाल[1] भाइयोका बुनाईका काम देखने गया, तब साथमे आये हुए लडकोमें छुआछूतकी बात निकली। उसे सुनकर मुझे आश्चर्य हुआ। मै यहाँ अभी जाति-पाँतिके विषयपर कुछ कहना नही चाहता, लेकिन इतना तो कहूँगा कि इस वर्गको अपने साथ मिलाये बिना हमारी, हमारे गाँवकी और हमारे देशकी उन्नति नही होगी। इसके बिना स्वराज्यकी आशा रखना भी व्यर्थ होगा। जबतक हमारे मनमे अन्धश्रद्धा बनी रहेगी, जबतक घरमे, कुटुम्बमे, गाँवमे और समाजमे लडाई-झगडे होते रहेंगे, तबतक हम कितना ही स्वराज्य-स्वराज्य चिल्लाते रहे, उससे कुछ होगा नही। आपके उमरेठमें पहले पचास करघे चलते थे, लेकिन अब केवल दो रह गये है और उनपर भी सन्तोष देने योग्य ढगसे काम नही हो पाता। इसका कारण आपकी सकुचित वृत्ति है। उमरेठके नेताओका कर्त्तव्य है कि वे अपने देशी उद्योगोके विकासमे मदद करे और उन्हे प्रोत्साहन दे। अगर उनमे ऐसी भावना न हो, तो उन्हे गोखले-जैसे परमार्थी सन्तकी तसवीरके उद्घाटनका कोई अधिकार नही। पर मुझे लगता है कि उमरेठ एकदम भावना और उत्साहशून्य नही है। महात्मा गोखलेके प्रति वह सद्भाव रखता है और अपने कर्त्तव्यको पहचान गया है। यह सन्तोषकी बात है।

[गुजरातीसे]

धर्मात्मा गोखले

२४. समाचारपत्र

[नवम्बर १४, १९१७ से पूर्व]

मैंने 'हिन्दुस्तान' के सम्पादकको दीवाली विशेषाकके लिए कुछ लिख भेजनेका वचन दिया है। वचनका पालन करनेके लिए मेरे पास समय नही है, फिर भी यह सोचकर कि किसी तरह थोडा-बहुत लिखकर भेजना चाहिए, पाठकोके सम्मुख समाचार-पत्रके सम्बन्धमे अपने विचार रख रहा हूँ। परिस्थितियोके वशीभूत होकर दक्षिण आफ्रिकामें मुझे यह काम करना पडा, उससे मुझे इस विषयपर विचार करनेका अवसर मिला। जिन विचारोको मै यहाँ प्रकट करनेकी धृष्टता कर रहा हूँ उन सबको मैंने कार्यरूप दिया है।

मेरी विनम्र रायमे, समाचारपत्रके कार्यको आजीविका कमानेका साधन मानना अनुचित है। कुछ-एक कार्य [क्षेत्र] ऐसे खतरनाक और सार्वजनिक होते है कि उनके द्वारा आजीविका प्राप्त करनेसे मूल उद्देश्यको हानि पहुँचती है। जब समाचारपत्रको नफा कमानेका साधन बनाया जाता है तब तो बहुत अनर्थ होनेकी सम्भावना रहती है। ऐसा बहुत अधिक मात्रामे हो रहा है। यह बात मुझे उन लोगोके सम्मुख, जिन्हे पत्रकारिताका पूरा अनुभव है, सिद्ध करनेकी कोई आवश्यकता नही है।

१. निम्न वर्गकी एक जाति।

समाचारपत्रोंका कार्य है लोक-शिक्षा। इन्हींके द्वारा लोगोंको आधुनिक इतिहासकी जानकारी होती है। यह काम कम जिम्मेदारीका नहीं है। इतना होनेपर भी हम महसूस करते हैं कि पाठक-समुदायका समाचारपत्रोंपर पूर्ण विश्वास करना सम्भव नहीं है। अनेक बार तो समाचारपत्रोंमें दिया गया विवरण घटनासे बिलकुल विपरीत होता है। यदि समाचारपत्र लोगोंको शिक्षित करना अपना कर्त्तव्य समझें तो समाचार देनेसे पहले उनकी जाँच करनेसे न चूकें। इसमें सन्देह नहीं कि इनको अनेक बार कठिन परिस्थितियोंमें काम करना पडता है। बहुत ही अल्प-समयमें इन्हें सत्य-असत्यका निर्णय करना पड़ता है और प्राय. अनुमानके आधारपर सत्य निर्धारित करना होता है। इतना होनेपर भी मैं मानता हूँ कि जिस समाचारके सही होनेका निश्चय न हो सके उस समाचारको प्रकाशित न करना ही अधिक उचित है।

इनमें वक्ताओंके भाषणकी जो रिपोर्ट दी जाती है वह अधिकतर दोषपूर्ण होती है। रिपोर्टको सही-सही उतारनेकी क्षमता बहुत ही कम लोगोंमें होती है इसीलिए सामान्यत. देखनेमें आता है कि भाषणोंकी खिचड़ी बन जाती है। सबसे अच्छा नियम तो यही है कि भाषणके "प्रूफ" स्वयं वक्ताके पास संशोधनके लिए भेज दिये जायें और यदि वह उनमें संशोधन न करे तो समाचारपत्र अपनी ली हुई रिपोर्ट ही प्रकाशित कर सकते हैं।

अनेक बार यह देखनेमें आता है कि समाचारपत्र मात्र स्थान भरनेके लिए ऐसी-वैसी सामग्री प्रकाशित कर देते हैं। यह चलन सर्वव्यापक है। पश्चिममें भी ऐसा ही है। उसका कारण यह है कि समाचारपत्र मुख्यत' धन कमानेपर नजर रखते हैं। समाचार-पत्र [जनताकी] भारी सेवा करते हैं, उसमें सन्देह नहीं। उससे उनके दोष ढक जाते हैं। लेकिन मेरे मतानुसार वे जितनी सेवा करते हैं उससे कम हानि नहीं करते। पश्चिमके कुछ-एक पत्र इतनी अनीतिसे भरे हुए होते हैं कि उनका स्पर्श करना भी दोषपूर्ण है। अनेक पत्र पूर्वाग्रहसे भरे होनेके कारण लोगोंमें द्वेषका प्रसार करते हैं अथवा उसे और भी बढाते हैं। अनेक बार वे परिवारों और जातियोंमें कटुता पैदा कर देते हैं। इस प्रकार लोक-सेवा करनेके बावजूद वे टीका-टिप्पणीसे बच नहीं सकते। कुल मिलाकर उनके अस्तित्वसे, हानि और लाभ होनेकी समान सम्भावना है।

समाचारपत्रोंमें यह पद्धति देखनेमें आती है कि वे मुख्य रूपसे चन्दोंपर नहीं बल्कि विज्ञापनोंकी रकमके ऊपर निर्भर करते हैं। इसका परिणाम हानिकारक सिद्ध हुआ है। जो समाचारपत्र मदिरा-पानके विरुद्ध लिखता है उसमें ही मदिराका बखान करते हुए विज्ञापन दिया गया होता है। जिस समाचारपत्रमें हम तम्बाकूके दोषोंको पढ़ेंगे उसीमें अच्छेसे-अच्छा तम्बाकू कहाँ बिकता है, वह भी पढ़नेको मिल जायेगा। किसी नाटकका लम्बा विज्ञापन और उसकी [विपरीत] आलोचना एक ही पत्रमें देखनेमें आ सकती है। दवाइयोंके विज्ञापनमें अधिकसे-अधिक कमाई होती है फिर भी दवाइयोंके विज्ञापनसे प्रजाका जितना नुकसान हुआ है और हो रहा है, उसकी कोई सीमा नहीं है। इन विज्ञापनोंके कारण समाचारपत्रोंने [लोगोंकी] जो सेवा की है उसपर लगभग हरताल फिर जाती है। दवाइयोंके विज्ञापनसे हुए नुकसानको मैंने खुद अपनी आँखोंसे देखा है। अनेक व्यक्ति इन विज्ञापनोंसे आकर्षित होकर हानिकर दवाइयोंको खरीद लेते हैं। अनेक

वार दवाइयाँ अनीतिकी पोषक होती है। ऐसे विज्ञापन धार्मिक पत्रोमें भी देखनेमें आते है। यह परिपाटी पश्चिमसे ही आई है। चाहे कितने भी प्रयत्न क्यो न करने पड़ें लेकिन हमे विज्ञापनोके इस रिवाजको खत्म करना चाहिए अथवा विज्ञापनोमें वहुत सुधार करने चाहिए। प्रत्येक समाचारपत्रका कर्त्तव्य है कि वह विज्ञापनोपर अकुश रखे।

अन्तिम प्रश्न विचार करने योग्य यह है कि जहाँ "राजद्रोहात्मक लेख आदि सम्बन्धी कानून" और "भारत सुरक्षा कानून" जैसे कानून प्रचलित हो वहाँ समाचारपत्रोको क्या करना चाहिए? हमारे समाचारपत्रोमें अनेक वार दोअर्थी भाषा देखनेमे आती है। कुछ-एक पत्रोने तो इस पद्धतिको शास्त्रका रूप दे दिया है। मेरी सम्मतिमें इससे देशको नुकसान पहुँचता है। लोगोमें कायरताका प्रसार होता है और दोअर्थी वचनोको वोलनेकी आदत पडती है। इससे भाषाका स्वभाव ही वदल जाता है और वह विचार प्रकट करनेके स्थानपर उन्हे छिपानेका साधन वन जाती है। इससे प्रजाका [चारित्रिक] विकास नही होता, यह मै विशेष रूपसे मानता हूँ। हमारे मनमें जो हो वही वोलनेकी आदत प्रजामें तथा व्यक्तियोमें पडनी चाहिए। यह शिक्षा समाचारपत्रो द्वारा अच्छी तरह मिल सकती है। अतएव जिन्हे उपर्युक्त कानूनोसे वचकर कार्य करना हो उनके लिए यही श्रेयस्कर है कि समाचारपत्रको प्रकाशित ही न करे। अथवा इन कानूनोकी परवाह किये विना मनमें जो विचार आये उन्हे निडर होकर, [लेकिन] विनयपूर्वक प्रकट कर दें और उसका जो भी परिणाम हो उसे सहन करे। न्यायमूर्ति स्टीफनने कही यह विचार प्रकट किया है कि जिस व्यक्तिने कभी द्रोहकी कल्पना नही की है उसकी भाषामें द्रोह हरगिज नही हो सकता। और यदि मनमें द्रोह हो तो उसे निधडक होकर व्यक्त करना चाहिए। अगर ऐसा करनेकी हिम्मत न हो तो पत्रका प्रकाशन वन्द कर देना चाहिए। इसीमें सवका कल्याण है।

[गुजरातीसे]
महात्मा गांधीनी विचारसृष्टि

२५. सन्देश : गुजराती हिन्दू स्त्री-मण्डलको[1]

[नवम्वर १४, १९१७ या उससे पूर्व]

जिन वहनोके पास यह लेख पहुँचेगा वे कम-ज्यादा शिक्षित तो होगी ही, इसलिए मैं एक विषयपर विचार करना चाहता हूँ। शिक्षित स्त्रीवर्गको अपनी अशिक्षित वहनोके लिए क्या करना चाहिए? यह प्रश्न वहुत महत्त्वका है। यह निर्विवाद है कि यदि स्त्रियाँ चाहें तो वे इस क्षेत्रमें पुरुषोसे कही अधिक सफलता प्राप्त कर सकती हैं। शिक्षित महिलाएँ अभी इस कामको पर्याप्त मात्रामें करती नजर नही आती। इसमें उनका दोष नही, उनको मिली शिक्षाका दोष है, ऐसा मै मानता हूँ। इसलिए शिक्षित स्त्रियोका पहला कार्य ऐसे प्रयत्न करना है जिससे उनकी वहनें इस दोषका शिकार न हो। इस विषयमें किसीको सन्देह नही कि आधुनिक शिक्षा स्त्रियोको उनके विशेष

१. यह सन्देश गुजराती नववर्षके अवसरपर उक्त महिला-मण्डलको भेजा गया था।

कार्यके लिए बिलकुल तैयार नहीं करती। यहाँ मैं न तो आधुनिक शिक्षाके दोषोंकी छानबीन करनेके झमेलेमें पड़ना चाहता हूँ और न इन दोषोंका निवारण कैसे हो, इस प्रश्नपर मगजपच्ची ही करना चाहता हूँ। मेरी तो इतनी ही इच्छा है कि शिक्षित बहनें इस प्रश्नको अपना मानकर तथा जिन्हें कुछ अनुभव है वे बहनें भी, अपना सर्वस्व समर्पित करके इस विषयपर गुजरातको जागृत करें और सही दिशाका ज्ञान करायें।

शिक्षित स्त्रियाँ अशिक्षितोंके साथ सम्पर्क स्थापित नहीं करतीं, और प्राय: ऐसे सम्पर्कको बढ़ावा नहीं देतीं। इस रोगका उपचार करना चाहिए। शिक्षित स्त्रियोंको अपने सहज कर्त्तव्यका भान करानेकी आवश्यकता है। इन दोषोंसे पुरुष-वर्ग भी मुक्त नहीं है, लेकिन स्त्रियोंको पुरुषोंके पीछे-पीछे चलनेकी जरूरत नहीं। स्त्रियोंमें नवीन भावनाओंके सृजनकी तथा उनको व्यवहारमें लानेकी जो शक्ति विद्यमान है वह पुरुषोंमें नहीं है। पुरुष अपेक्षाकृत अविचारी, उतावला और सदैव नवीनताकी खोजमें लगा रहनेवाला होता है। स्त्री गम्भीर, धैर्यवान् और अधिकतर पुरानी वस्तुओंसे चिपककर रहनेवाली होती है। इसलिए उसे जब भी कोई नई वस्तु सूझ पड़ती है तो उसकी उत्पत्ति स्त्रीके हृदयकमलसे होती है। इस प्रकार उद्भूत हुई वस्तुके प्रति उसकी अचल श्रद्धा होती है और इस कारण उसका प्रचार जल्दी हो सकता है। अतएव मेरी मान्यता है कि यदि शिक्षित स्त्रियाँ, पुरुषोंकी नकल करना छोड़ दें और स्त्रियों-सम्बन्धी महान प्रश्नोंपर स्वतन्त्र रूपसे विचार करें तो हम अनेक उलझनोंको आसानीसे सुलझा सकते हैं।

विधवाओंका प्रश्न साधारण प्रश्न नहीं है। इसमें अनेक स्त्रियाँ अपना जीवन अर्पित कर सकती हैं। विधवा अपनी इच्छानुसार पुनर्विवाह करे यह एक बात है और बाल-विधवाओंको पुन: लग्न करनेकी शिक्षा देनेमें समय गँवाना दूसरी बात है। इसके बजाय स्त्रियाँ विधुर पुरुषसे स्वयं अथवा अपनी लड़कीका पाणिग्रहण संस्कार न करने तथा पालनेमें झूलने लायक बाल-वरको अपनी बेटी देकर उसकी आहुति न देनेका दृढ़ निश्चय करें और करायें तो मुझे विश्वास है कि भारतके लिए इसका परिणाम मधुर होगा। छोटी-बड़ी सैकड़ों विधवाओंका उपयोग देशके निमित्त कैसे हो यह प्रश्न बहुत विचार करने योग्य है तथा इसपर शिक्षित स्त्रियाँ विचार नहीं करेंगी तो और कौन करेगा? अनेक वर्षोंसे एक विचार मेरे मनमें है; उसे यहाँ व्यक्त करता हूँ। थोड़े ही समय पहले हमारी स्त्रियाँ सूत कातने और बुननेका भी काम करती थीं। अब यह धन्धा खत्म होने पर है। इस धन्धेकी अवनतिसे हिन्दुस्तानको नुकसान पहुँचा है। करोड़ों रुपये बाहर भेज दिये जाते हैं। विधवाएँ अभी मन्दिरोंमें अथवा कथित साधु-सन्तोंकी सेवामें अथवा गप्पें हाँकनेमें अपना समय गँवाती हैं। मन्दिर जानेमें ही धर्म है, मुझे ऐसा प्रतीत नहीं होता। लेकिन सदुद्देश्यको दृष्टिमें रखकर मन्दिर जानेसे कुछ फायदा नहीं होता, मैं यह भी नहीं कहना चाहता। परन्तु अन्य कार्योंको छोड़कर मन्दिरमें बैठना परमार्थकी पराकाष्ठा है, यह विचार तो कोरा भ्रम जान पड़ता है। उसी प्रकार जिन साधु-सन्तोंको किसी प्रकारकी सेवाकी आवश्यकता नहीं है उनके पास बैठे रहनेसे दोनोंकी ही हानि और व्यर्थका कालक्षेप है। ऐसी प्रवृत्तियोंसे विधवाओंको हटाकर हिन्दुस्तानका उपकार करनेकी पारमार्थिक प्रवृत्तिमें उन्हें फिर लगाना ही उनका शुद्ध पुनर्विवाह है। शिक्षित स्त्रियाँ ऐसा साहस क्यों नहीं करतीं? ऐसा काम

करनेकी इच्छुक स्त्रियोको पहले तो स्वय उद्योगकी पाठशालामे पहला पाठ पढना होगा, कातना होगा तथा खड्डियोंपर कपडा बुनना होगा।

मोहनदास करमचन्द गांधी

[गुजरातीसे]
गुजराती, २-१२-१९१७

२६. पत्र : जे० एल० मेरीमैनको

मोतीहारी
नवम्बर १४, १९१७

प्रिय श्री मेरीमैन,[1]

मैं सोचता हूँ कि मैं यहाँ जो-कुछ कर रहा हूँ मुझे उसकी सूचना आपके पास भेजते रहना चाहिए। स्कूलके लिए बनी-बनाई इमारत मिल जानेके तथा खाम गाँवमे स्कूल खोलनेका निमन्त्रण मिलनेके फलस्वरूप मैंने आज ढाकाके समीप बरहरवा लखमसेन नामक गाँवमे एक स्कूल खोल दिया है। जिन लोगोने मुझे मदद देनेकी इच्छा प्रकट की थी उनमें से अच्छेसे-अच्छे अवैतनिक अध्यापकोको मैंने वहाँ लगा दिया है और वे है बम्बईके श्री और श्रीमती गोखले। उनकी जीविकाके अपने स्वतन्त्र साधन है। श्रीमती गोखले बम्बईमे शिक्षाका कार्य कर रही थी। उन्हे जिस किस्मका कार्य यहाँ करना है, वह मैं आपको पहले ही बता चुका हूँ। यदि बन सका तो उन कारखानोके विभिन्न सचालकोकी सहायतासे इसी प्रकारके अन्य स्कूल, एक स्कूल पीपरा देहातमे, दूसरा तुरकौलिया देहातमे और तीसरा बेलवा देहातमे खोलनेकी आशा करता हूँ। चूंकि यह प्रयास प्रयोगात्मक है; इसलिए इन स्कूलोसे कुछ निश्चित सफलता न मिलने तक मैं चार या पाँचसे अधिक स्कूल नही खोलना चाहता। मुझे आशा है कि इस प्रयोगमे मुझे स्थानीय अधिकारियोसे सहयोग प्राप्त होगा यद्यपि मैं जानता हूँ इसमें अनेक कठिनाइयाँ है। लेकिन अगर इसमे सफलता मिलती है तो महत्त्वपूर्ण परिणाम निकलनेकी सम्भावना है।[2]

आपका सच्चा,
मो० क० गांधी

महादेव देसाईके अक्षरोमे और गाधीजीके हस्ताक्षरयुक्त मूल अग्रेजी पत्र (नेशनल आर्काइव्ज ऑफ इडियासे), तथा **सिलैक्ट डॉक्यूमेंट्स ऑन महात्मा गांधीज मूवमेंट इन चम्पारन, १९१७-१८**से भी।

१. चम्पारनके जिला मजिस्ट्रेट।

२. इसके उत्तरमें मैरीमैनने १८ नवम्बरको निम्नलिखित उत्तर दिया था. १४-११-१९१७ का आपका पत्र मुझे प्राप्त हुआ। मुझे आपके द्वारा स्कूलोंकी स्थापनाके प्रयोगमें दिलचस्पी है और उनके सम्बन्धमें मैं और भी जानना चाहता हूँ। आप किस प्रकारके स्कूल और उन्हें कहाँ खोलेंगे तथा उनमें किस प्रकारकी शिक्षा दी जायेगी यह सब जानकारी पाकर मुझे प्रसन्नता होगी। गाधीजीके उत्तरके लिए देखिए "पत्र : जे० एल० मेरीमैनको", १९-११-१९१७।

२७. पत्र : मगनलाल गांधीको

बेतिया[1]
दीवाली [नवम्बर १४, १९१७]

चि० मगनलाल,

आज ही बेतिया वापस आनेपर तुम्हारी डाक पढी। यह पत्र प्रतिपदाको भेजा जा सकेगा।

ठाकोरलालको जो जवाब[2] दिया है उसे पढकर उनके पतेपर भेज देना।

नानुभाई अगर सन्तुष्ट हो गये हो तो काफी है। गलतियाँ करते हुए भी हम प्रगति करेंगे। अगर फिर हम वही गलती न करे तो काफी है। तुम जबतक बाहर रहना चाहो, रहना। यदि उमरेठ भी हो आओ तो अच्छा रहेगा। मैं समझता हूँ छगनलाल तो अहमदाबादमें ही होगा। शहर जानेका अवसर तो बहुत कम आता होगा। देवभाभी[3] और खुशालभाईको[4] मेरा प्रणाम कहना। तुम सबको नये सालके मेरे आशीर्वाद।

बापूके आशीर्वाद

गांधीजीके स्वाक्षरोंमें मूल गुजराती पत्र (सी० डब्ल्यू० ५७०६) से।
सौजन्य : राधाबेन चौधरी

२८. पत्र : हरिलाल गांधीको

मोतीहारी
[नवम्बर १५, १९१७][5]

चि० हरिलाल,

आज दीवाली है, नया वर्ष तुम्हे फले, तुम्हारी शुभेच्छाऐं पूरी हो और तुम सबके चारित्र्यकी पूंजीमें वृद्धि हो, यही मैं चाहता हूँ। यही सच्ची लक्ष्मी है, उसीका पूजन करनेमें कल्याण है। मेरी भगवान्से प्रार्थना है कि यह सत्य तुम्हें अधिकाधिक स्फूर्ति दे।

बापूके आशीर्वाद

[गुजरातीसे]
महादेवभाईनी डायरी, खण्ड ५

१. गुजराती पचागके अनुसार दीवाली १४ नवम्बरको पड़ी थी।
२. यह पत्र उपलब्ध नहीं है।
३ और ४ मगनलालके माता-पिता।
५. महादेव देसाईकी डायरीके अनुसार यह पत्र १५ नवम्बरको लिखा गया था।

२९. पत्र : मगनलाल गांधीको

मोतीहारी

नव वर्ष, सं० १९७४ [नवम्बर १५, १९१७]

आजके मगल-प्रसगपर तुम्हे मैं क्या दूँ? जिसकी तुममे मुझमे, बहुतोमे कमी है, वही देनेका प्रयत्न कर रहा हूँ। वह मिल गया, तो सब कुछ मिल गया। जिसमे कुछ हो, वही दे सकता है। इस न्यायसे मैं क्या दूँ? हम एक साथ ही माँगे।[१]

> मैं मनुष्य और देवताकी वाणी भले बोलूँ, पर मुझमे प्रेम न हो, तो मैं ढोल या खाली घडेके समान हूँ। भले ही मै भविष्यवाणी कर सकूँ, मुझे पूर्ण ज्ञान हो, मुझमे पर्वतोको खिसका सकनेकी श्रद्धा हो, पर प्रेम न हो, तो मैं तिनकेके बराबर हूँ। अगर मैं अपना सब-कुछ गरीबोको खानेके लिए दे दूँ और अपना शरीर भी जला डालूँ, पर मुझमे प्रेम न हो, तो मेरे कार्यसे कुछ भी लाभ न होगा।
>
> प्रेम बहुत सहन करता है; जहाँ प्रेम है वहाँ दया है। प्रेममें द्वेषकी गुजाइश ही नही, प्रेममे अहम्-भाव नही, प्रेममे मद नही, प्रेममें अयोग्यता नही, प्रेम स्वार्थी नही, प्रेम जल्दी नही चिढ़ता, प्रेमको दुष्ट विचार नही आते, प्रेम अन्यायसे प्रसन्न नही होता। प्रेम सत्यसे ही प्रसन्न रहता है, प्रेम सब-कुछ सहन करता है, सब-कुछ मान लेता है। प्रेम आशामय है, सब-कुछ सह लेता है। भविष्यवाणी झूठी हो जाती है, वाचा बन्द हो जाती है और ज्ञानका नाश हो जाता है, पर प्रेम कभी निष्फल नही होता।
>
> जब मैं बालक था, तब बालककी तरह बोलता था। बालकके बराबर मेरी समझ थी और बालककी तरह सोचता था। जब बड़ा हुआ, तो मैंने बचपना छोड़ दिया। अभी तो हमपर पर्दा पडा हुआ है और हम धुँधला-धुँधला देखते है। बादमे तो हम आमने-सामने खडे होकर देख सकेंगे। अभी तो मुझे थोड़ा ज्ञान है। फिर मैं जैसा जाना जाता हूँ वैसा भी जानूँगा। अन्तमे, श्रद्धा, आशा और प्रेम ये तीन चीजे ही स्थायी है। उनमें भी प्रेम श्रेष्ठ है।"

इसे पढना, इसपर विचारना और फिर पढना। इसकी अंग्रेजी पढकर हिन्दी करना। जैसे भी हो, घडीभर तो प्रेमकी खासी झाँकी ले लेना। मीराको प्रेमकी कटारी गहरी लगी थी, प्रेमकी वैसी कटारी हमारे भी हाथ लगे और हममें उसे

१. देखिए १ **कॉरिन्थियन्स**, अध्याय १३। गाधीजीने इसे गुजरातीमें दिया था। यहाँ उसीका हिन्दी अनुवाद किया गया है।

भोकनेका बल आ जाये, तो हम दुनियाको हिला दें। प्रेमके अपने अन्तरमें होते हुए भी मैं हर क्षण उसके अभावका अनुभव करता रहता हूँ। कमी तो मुझमें बहुत है। कभी-कभी अधजल घडेकी तरह हो जाता हूँ। कल ही जो लोग मुझे प्रेमसे रोक रहे थे, उनके लिए मेरे पास समय नहीं था। इसलिए मनही-मन दु:खी होता रहता हूँ। यह कोई प्रेमकी निशानी नहीं। यह तो 'अधजल गगरी छलकत जाये' जैसी बात है। नया वर्ष तुम्हारे लिए लाभदायी सिद्ध हो। अपनी शारीरिक, मानसिक और आध्यात्मिक विभूतियाँ बढाकर उन सबको तुम भारतके चरणोपर प्रेम-भावसे अर्पित-कर दो, यही मेरी इच्छा है और यही आशिष।

बापूके आशीर्वाद

[गुजरातीसे]
महादेवभाईनी डायरी, खण्ड ४

३०. पत्र : जे० एल० मेरीमैनको

मोतीहारी
नवम्बर १७, १९१७

प्रिय श्री मेरीमैन,

मैं कल कोयरी गया था। वहां शिवरत्न[1] तथा अन्य लोगोसे मुलाकात हुई। मुझे पता चला है कि जो जांच आपके आदेशानुसार की गई है उसका परिणाम शिवरत्नको इसी २३ तारीखको सूचित किया जानेवाला है, इस कारण मैं तबतक के लिए अपने विचार प्रकट करना स्थगित कर रहा हूँ।

मिराहा देहातकी रैयतका कहना है कि उस कारखानेमें कुछ इकरारनामोपर लोगोंसे अँगूठेकी छाप ली जा रही है। किन्तु मैं मसविदा देखे बिना उन्हे क्या करना चाहिए इसके बारेमें सलाह नही दे सकता। इसलिए मैंने उनसे कह दिया है कि यदि वे मेरी सलाह चाहते हैं तो उन्हे चाहिए कि जबतक मैं मजमूनको न देख लूं तबतक उन्हें किसी कागजपर हस्ताक्षर नही करने चाहिए, क्योंकि उन्हे देखे बिना मैं सलाह दे ही नही सकता। मैंने सोचा कि यह बात आपको बतला देना ठीक होगा। मैं यह भी कह दूं कि यदि जमीदार, रैयतके साथ जो इकरारनामा लिखा जाता है, वह आपको दिखा दिया करे तो इससे जमीदार और रैयतके सम्बन्ध मधुर होने लगेंगे। आपको इस बातकी जानकारी होगी ही कि रैयतकी बहुधा यह शिकायत रहा करती है कि

१. शिवरत्न नोनिया।

उन्हे अक्सर ऐसे कागजातोपर जिनको वे समझ भी नही सकते हैं[1] हस्ताक्षर देनेके लिए कहा या मजबूर किया जाता है।

आपका सच्चा,

मो० क० गांधी

महादेव देसाईके अक्षरोमे और गाधीजीके हस्ताक्षरयुक्त मूल अग्रेजी पत्र (नेशनल आर्काइव्ज ऑफ इंडिया) से, तथा सिलैक्ट डॉक्यूमेंट्स ऑन महात्मा गांधीज मूवमेंट इन चम्पारन, १९१७–१८, पृष्ठ ४२५ से भी।

३१. पत्र: रणछोड़लाल पटवारीको

मोतीहारी

कार्तिक सुदी ४ [नवम्बर १८, १९१७]

आदरणीय भाईश्री,

आपका पत्र मिलनेपर चित्तको वैसी ही शान्ति प्राप्त हुई जैसी कालाभाईके[2] पत्रको पाकर हुई थी। पटवारी-परिवारपर मैं मुग्ध हूँ। आपने मुझे संकटके समय जो सहायता दी थी वह मैं कभी नही भूल सकता।[3] मैं आपको हमेशासे बड़े भाई जैसा मानता आया हूँ। अगर आपने मुझे बम्बईमें मदद न की होती, तो, कोई नही कह सकता, मेरी क्या दशा हुई होती।

इसका मैं एक ही प्रतिदान दे सकता हूँ: मै इस प्रकारसे रहूँ, जिससे आपको लगे कि इस व्यक्तिको मदद देकर हमने ठीक किया। मुझे लगता है, आपको मेरे हरिजन-सम्बन्धी कार्योसे दुःख हुआ है। अपने इस कामको मैं छोड़ नही सकता। लेकिन आपको दुःख हो यह मेरे लिए कष्टदायक है, इसलिए जब आपका पत्र मिला तब मैंने सोचा कि मेरा हरिजन-सम्बन्धी कार्य आपको नापसन्द है किन्तु कुल मिलाकर मैं जो-कुछ कर रहा हूँ उसे आप अनुचित नही मानते। यह मुझे आशीर्वाद-समान जान पड़ा।

लेकिन, अभी मैं इससे भी अधिक की आशा रखता हूँ। वैष्णव-धर्मके नामपर इस महापवित्र धर्मका लोप हो रहा है। गो-रक्षाके नामपर गायकी हत्या हो रही है। धर्मके नामपर पाखण्डका प्रसार हो रहा है। धार्मिक होनेका ढोंग करनेवाले अधार्मिक लोग धर्म-सम्बन्धी नियमोका विधान करते हैं। मैं यह सब अनुभव करता हूँ तो फिर वैष्णव

१. मेरीमैनने नवम्बर १८ के अपने जवाबमें लिखा था, अगर वे लोग सोचते हैं कि उन्हें सताया जा रहा है तो वे अदालतमें जानेके लिए स्वतन्त्र हैं। मैं अदालतमें पेश किसी भी मुकदमेके सम्बन्धमें ऐसी कोई बात नहीं सुनना चाहता, जिससे अदालतके मनमें पक्षपातकी भावना आनेकी संभावना हो। इसलिए मुझे यह जानकर खुशी हुई कि आपका इरादा मुझे शिवरत्न नोनिया द्वारा पेश किये गये मामलेसे सम्बन्धित अपनी जानकारी बतानेका नहीं है।

२. लक्ष्मीदास गाधी, गाधीजीके बड़े भाई।

३. पटवारीजीके पिताने गाधीजीको वकालतकी शिक्षा प्राप्त करनेके उद्देश्यसे सन् १८८८ में इंग्लैंड जानेके लिए आर्थिक सहायता दी थी; देखिए खण्ड १, पृष्ठ ११।

धर्मकी प्रतिष्ठा चाहनेवाले आप यह सब कैसे नही देख पाते? यह प्रश्न निरन्तर मेरे सम्मुख रहता है। भगीका स्पर्श करनेमें कदापि पाप नही है। गायके नामपर मुसलमानका वध करनेमें कदापि पुण्य नही है, धर्म-पुस्तकोमें कदापि असत्यका प्रतिपादन नही हो सकता, स्वेच्छाचारीके हाथमें धर्मकी बागडोर कदापि नही दी जा सकती, ये सब वाक्य सूत्रो-जैसे है। इनमें मतभेद कैसे हो सकता है? वैष्णव समाजपर आपका जो अधिकार है, आप उसका उपयोग इस दिशामें क्यो नही करते? मुझ-जैसोको आप और तरह न सही, वचनसे ही मदद क्यो नही देते? जो मै देखता हूँ उसे मै आपको किस तपस्याके द्वारा दिखाऊँ? ये विचार मेरे मनमें उठते ही रहते है। आप एक बार फिर मनही-मन विचार कीजिएगा।

मै अपने भाषण[1] आपको, इस इच्छासे कि आप उपर्युक्त बातोको दृष्टिमें रखकर एक बार फिर उन्हे पढें, भेज रहा हूँ।

हालांकि मै फिलहाल पढ नही सकता फिर भी आप मुझे कहे हुए ग्रन्थ अवश्य भेजिये।

आश्रमके लिए साबरमतीके किनारे ५५ बीघे जमीन ली है। उसपर निर्माण-कार्य हो रहा है, लेकिन प्लेगके कारण उसकी रफ्तार बहुत धीमी है।

मोहनदासके प्रणाम

गाधीजीके स्वाक्षरोंमें मूल गुजराती पत्र (जी० एन० ४१२४) की फोटो-नकलसे।

३२. पत्र : जे० एल० मेरीमैनको

मोतीहारी
नवम्बर १९, १९१७

प्रिय श्री मेरीमैन,

मै जो स्कूल खोल रहा हूँ उनमें १२ बरससे कम उम्रके ही बालक दाखिल किये जाते है। ज्यादासे-ज्यादा, जितने हो सकें उतने बच्चे लेने और उनको सब तरहकी शिक्षा देनेका इरादा है, अर्थात् उन्हे हिन्दी या उर्दूका ज्ञान देना है और उसके माध्यमसे गणित, इतिहास और भूगोलके प्रारम्भिक सिद्धान्त एव सरल वैज्ञानिक सिद्धान्त सिखाने हैं और कुछ औद्योगिक शिक्षा देनी है। अभी तक कोई निश्चित पाठ्यक्रम तैयार नही किया गया है, क्योंकि मेरे लिए यह बिलकुल नया-नया अनुभव है। मुझे शिक्षाकी हमारी वर्तमान प्रणालीकी उपयोगितामें विश्वास नही है। उसमे छोटे बच्चोकी नैतिक और मानसिक शक्तियाँ विकसित होनेके बजाय कुठित हो जाती है। यद्यपि मै अपने प्रयोगमें उसकी सब अच्छी बातें ले लूँगा, किन्तु मै उसके दोषोसे बचनेका प्रयत्न करूँगा। मुख्य लक्ष्य यह है कि बच्चोका सम्पर्क सुसस्कृत और निर्दोष चरित्रके स्त्री-

१. ये भाषण उपलब्ध नहीं हैं; लगता है कि गांधीजीका संकेत जिन भाषणोंकी ओर था अनुमानतः ये वही भाषण थे अथवा उनमें वे भाषण भी शामिल थे जो उन्होंने नवम्बर ५ को गोधरामें और नवम्बर १४ को मुजफ्फरपुरमें दिये थे।

पुरुषोसे रहे। मेरी दृष्टिमें यही शिक्षा है। अक्षर-ज्ञानका प्रयोग उसी उद्देश्यकी पूर्ति-के निमित्त करना है। औद्योगिक शिक्षा उन बच्चोको, जो हमारे पास आये, आजीविकाका अतिरिक्त साधन देनेके लिए सोची गई है। इसका उद्देश्य यह नही है कि वे शिक्षा पूरी करके अपने पैत्रिक धन्धे कृषिको त्याग दे, बल्कि यह है कि वे स्कूलमे अर्जित ज्ञानका उपयोग कृषिकी और कृषकके जीवनकी दशा सुधारनेके लिए करे। हमारे शिक्षक वयस्क लोगोके जीवनको भी प्रभावित करेगे और सम्भव होगा तो पर्देमे भी अर्थात् स्त्री-समाजमे भी प्रवेश करेगे। इसलिए वयस्क लोगोको स्वास्थ्य-सफाईकी शिक्षा दी जायेगी और उन्हे सामाजिक सुख-सुविधाओमें वृद्धिके लिए संयुक्त कार्य करनेके लाभ बताये जायेंगे। इस सयुक्त कार्यका उपयोग ऐसे कार्योंमे किया जायेगा जैसे गाँवके रास्ते ठीक करना और कुँए खोदना आदि। चूँकि किसी भी स्कूलमें ऐसे स्त्री-पुरुष नियुक्त न किये जायेंगे जो सुशिक्षित न हो, इसलिए हम यथासम्भव मुफ्त दवा-दारू भी देना चाहते हैं। उदाहरणके लिए बधरवामें श्रीमती अवन्तिकाबाई गोखले, जो एक प्रशिक्षित नर्स और दाई है, स्कूलकी निर्देशिका हैं और उनके पति उनकी सहायता करते हैं। उन्होने अभी चार ही दिन काम किया है। इन दिनोमे वे बीसियो रोगियोको अंडीका तेल और कुनैन बाँट चुकी हैं एवं कई रुग्ण स्त्रियोको देख चुकी हैं।

यदि आप कुछ और जानकारी चाहते है, तो मैं अवश्य ही प्रसन्नतापूर्वक दूँगा। मै तो आशा करता हूँ कि मैं अपने कार्यमें स्थानीय अधिकारियोका पूरा सहयोग प्राप्त कर सकूँगा। मै कल अमोलवासे दो मील दूर श्रीरामपुरमे एक दूसरा स्कूल खोल रहा हूँ।

दस्तावेजोके बारेमे काश्तकारोकी शिकायतोके सम्बन्धमे प्रत्यक्ष है कि जो खास बात मै कहना चाहता था वह मैंने नही कही है। मै जानता हूँ कि जोर-जबरदस्तीके बारेमें काश्तकार अदालतमें जा सकते हैं। कठिनाई यह है कि उन्हे व्यवस्थित रूपसे कार्य करनेका न तो प्रशिक्षण मिला है और न वे उसके लिए काफी सगठित ही हैं। नैतिक दृष्टिसे जो बात जोर-जबरदस्तीमे आती है वह सम्भव है कानूनमें जोर-जबरदस्ती न भी हो। चम्पा-रनके किसानोका मेरा अनुभव तो यह है कि वे बेहद नासमझ है और उनसे कोई भी बात आसानीसे मनवाई जा सकती है। इसलिए मेरी मान्यता तो यह है कि ऐसे लोगोको उनके अपने अज्ञानसे बचानेका काम उनके सरक्षकके रूपमें सरकारको करना है। मैं यह नही कहता कि आपके ध्यानमे सरैयाका जो मामला लाया गया है उसमे कोई जोर-जबरदस्ती बरती गई है। मैंने तो केवल यही कहा है कि जैसे दस्तावेजोका जिक्र मैंने अपने पिछले पत्रमें किया है उनपर दस्तखत कर चुकनेपर जोर-जबरदस्तीका कोई आरोप न किया जा सके, इस गरजसे आप उचित समझें तो काश्तकारोको दस्तखत करनेके लिए जो करार अब दिये गये हैं उनके सम्बन्धमे पूछताछ कर ले।

आपका सच्चा,

मो० क० गांधी

महादेव देसाईके अक्षरोमें और गाधीजीके हस्ताक्षरयुक्त मूल अग्रेजी पत्र (नेशनल आर्काइव्ज ऑफ इडियासे); तथा **सिलैक्ट डॉक्यूमेंट्स ऑन महात्मा गांधीज मूवमेंट इन चम्पारन, १९१७–१८,** सं० २१०, पृष्ठ ४३०-१ से भी।

३३. पत्र : रामनवमी प्रसादको[1]

[मोतीहारी
नवम्बर २१, १९१७][2]

भाईश्री,

मैं २३ तारिखको[3] १० वजे यहासे निकलुगा. उस ट्रेनको मुजफ्फरपुर मीलीयेगा। उस वखत अरजी वारेमें सुनाउगा फीम दें तो लेनेमें कुछ हरज नहि देखता हु दूसरी मद्रसा कल खुली

मोहनदास गांधीके वन्देमातरम्

गांधीजीके स्वाक्षरोंमें मूल पत्र (जी० एन० ७३५) की फोटो-नकलसे।

३४. पत्र : जे० एल० मेरीमैनको

मोतीहारी
नवम्बर २२, १९१७

प्रिय श्री मेरीमैन,

पिछले मंगलवारको मैं भीतिहरवा गया और वहाँ एक स्कूल खोल आया। बेलगाँवके एक सार्वजनिक कार्यकर्त्ता श्री सोमण, बी० ए०, एलएल० बी० को इसकी व्यवस्था सौंपी है। गुजरातके एक नवयुवक बालकृष्ण उनकी सहायता करेंगे। श्रीमती गांधी परसों २४ तारीखको वहाँ पहुँच जायेंगी। उनका मुख्य काम स्त्रियोंसे मिलना-जुलना ही होगा।

कल मैं बबरवामें था। उसी समय श्रीमती गोखले और मेरा पुत्र एक मरणासन्न व्यक्तिसे भेंट करके लौट रहे थे। उन्होंने मुझे बताया कि जिलेके लोग मरीजोंकी ओरसे बहुत ही लापरवाह हैं। उनका विश्वास है कि उस जिलेमें बहुतेरी ऐसी मौतें होती रहती हैं जिनका होना रोका जा सकता है, क्योंकि ये मौतें स्वास्थ्य सम्बन्धी मामूली-मामूली नियमोंके पालनके अभावके कारण होती हैं। मैं जानता हूँ कि यह आपके लिए कोई नई बात नहीं है, क्योंकि यह, श्रीमती गोखले जिस जिलेमें काम कर रही

१. (१८४१–१९६३); मुजफ्फरपुरके प्रसिद्ध वकील, गांधीजीके साथ चम्पारनके आन्दोलनमें भाग लिया। १९१९–२२ में मुजफ्फरपुरमें असहयोग आन्दोलनका संयोजन किया था।

२. जिस दूसरे स्कूलका सन्दर्भ इस पत्रमें दिया गया है वह स्कूल २० नवम्बर, १९१७को नेपालकी तराईके भीतिहरवा नामक गाँवमें खोला गया था।

३. गांधीजीको मॉण्टेग्युसे भेंट करने दिल्ली जाना था।

है, वहाँकी या चम्पारनकी विशेष स्थितिके कारण नहीं हो रहा है, बल्कि हिन्दुस्तानके गाँवोंकी बहुत दिनोंसे यही हालत चली आ रही है।

इन घटनाओंकी चर्चा तो मैंने सिर्फ इसलिए की है कि ज्यों-ही मेरा यह प्रयोग थोड़ा-बहुत आगे बढ़े त्यों-ही मैं इस काममें आपकी सक्रिय सहानुभूति और सहयोग चाहूँगा क्योंकि इसमें सभी लोग बिना सकोचके मिल-जुलकर योग दे सकते हैं।

डॉ० देव[1], जो शल्य-क्रिया और चिकित्सामें प्रवीण तथा अनुभव-प्राप्त व्यक्ति है और जो भारतसेवक समाजके मन्त्री भी है, मगलवारको यहाँ आये थे। इस कामके लिए उनकी संस्थाकी ओरसे हमें उनकी सेवाएँ [कुछ कालके लिए] सुलभ कर दी गई है। उनके साथ तीन अन्य स्वयसेवक भी हैं, जिनमें से कर्वेके विधवा आश्रमकी एक महिला भी हैं। हमारी योजनाके चिकित्सा विभागकी देखरेख डॉ० देवका मुख्य कार्य होगा।

मैं यह भी कह दूँ कि पन्द्रह दिनसे कुछ अधिक समयके लिए मैं चम्पारनके बाहर जा रहा हूँ। मेरी अनुपस्थितिमें मेरा सब काम बाबू ब्रजकिशोर करेंगे।

आपका सच्चा,
मो० क० गांधी

महादेव देसाईके अक्षरोंमें और गांधीजीके हस्ताक्षरयुक्त मूल अंग्रेजी पत्र (नेशनल आर्काइव्ज ऑफ इंडिया) से; तथा **सिलैक्ट डॉक्यूमेंट्स ऑन महात्मा गांधीज मूवमेंट इन चम्पारन, १९१७–१८**, स० २१२, पृष्ठ ४३१-२ से भी।

३५. पत्र : चन्दुलालको

मोतीहारी
कार्तिक सुदी ८ [नवम्बर २२, १९१७]

भाईश्री चन्दुलाल,

आपका पत्र मिला है। आपने ठीक व्रत लिये हैं और उनका पालन भी सही ढंगसे किया है। व्रतोंके बिना चरित्रका विकास नहीं होता, ऐसी मेरी मान्यता है। जैसे जहाजके लिए लंगर है वैसे ही मनुष्यके लिए व्रत है और जैसे लंगर-विहीन जहाज इधर-उधर डोलता हुआ अन्तमें चट्टानोंसे टकराकर टूट जाता है, व्रतोंसे रहित मनुष्यकी दशा भी वैसी ही होती है। सत्य-व्रतमें और सब व्रतोंका समावेश हो जाता है। सत्यको समझनेवाला ब्रह्मचर्य कैसे तोड़ सकता है और चोरी कैसे कर सकता है? ब्रह्म ही सत्य है और सब मिथ्या है, यह सूत्र सच्चा है तो सत्यके पालनमें ब्रह्मज्ञान समाविष्ट है।

अहिंसा और सत्य पर्यायवाची व्याख्याएँ हैं। 'सत्यं ब्रूयात् प्रियं ब्रूयात्' में यही भावना ओतप्रोत जान पड़ती है। जिस सत्यमें दुःख नहीं है वही खरा है, और वही

१. डॉ० हरि श्रीकृष्ण देव।

अहिंसामय है। सत्य कड़वा लगता है लेकिन उसका परिणाम दुःखमय नहीं होता। सत्यके प्रयोगसे सामने बैठा हुआ व्यक्ति चिढ़ जायेगा, लेकिन उसकी आत्मा गवाही देगी कि उसके विषयमें जो कुछ कहा गया है वह शुद्ध उद्देश्यसे कहा गया है और सही है। सत्यका हम बहुत व्यापक अर्थ लेते हैं। सत्य अर्थात् केवल सत्यवचन नहीं बल्कि जो अर्थ ब्रह्म सत्यमें समाया हुआ है वह है। यही अर्थ 'ट्रुथ' शब्दका है।

मुझे याद है, मैंने आपसे कहा था कि आप स्त्री-शिक्षाके लिए नहीं बने हैं। [इसमें] मुझसे भूल भी हो सकती है लेकिन वह काम अपेक्षाकृत कठिन है और आपमें उस [कार्य]के लिए अपेक्षित शक्ति है, मुझे ऐसा नहीं लगा। आप स्वतन्त्र रीतिसे इस कार्य-को कर सकते हैं, ऐसा मुझे आपके विषयमें अनुभव नहीं हुआ। इतना होनेके बावजूद यदि आपको इस कार्यके प्रति लगाव है तो आप भले ही इसे करते रहिए। मुझे लगता है कि शारदाबेन[1] भी अब आपके बिना गुजारा नहीं कर सकती। इसलिए यही ठीक होगा कि आप उस कामको न छोड़ें।

मुझे आपमें शारीरिक उत्साह कम नजर आया है। आपको आश्रममें अथवा दूसरी जगहमें, जितना शरीर झेल सके, उतना शारीरिक काम — अनाज साफ करनेसे लेकर गड्ढे खोदने तक करनेकी आवश्यकता है। वैसा करते हुए आपकी मानसिक शक्तिको नया तेज मिलेगा तथा आपमें जो शिथिलता है वह जाती रहेगी। आँख, हाथ, पैर आदिको व्यायामकी जरूरत है। मैंने आपमें कार्य-शक्तिका अभाव पाया है।

मैंने भाई नन्दलाल किसनका पत्र पढ़ा है। देशी रजवाड़ोंमें क्या प्रयत्न किया जा सकता है इस विषयपर बातचीत करेंगे। दिसम्बरमें आप बम्बई अथवा अहमदाबादमें तो मिलेंगे ही।

आप अपने विषयमें श्रद्धा रखेंगे तो परिवारके लिए बहुत-कुछ कर सकेंगे। माँको वश करना लड़कोंका काम है। माँका प्रेम ऐसा होता है कि वे लड़कोंकी इच्छाओंके भी वशीभूत हो जाती हैं। लड़कियोंको आप पर्याप्त समय नहीं देते यह तो अपराध है।

मोहनदासके वन्देमातरम्

गांधीजीके स्वाक्षरोंमें मूल गुजराती पत्र (जी० एन० ३२५८) की फोटो-नकलसे।

1. एक सामाजिक कार्यकर्त्री; विद्यागौरी नीलकण्ठकी बहन।

३६. भाषण : अलीगढ़में[1]

नवम्बर २८, १९१७

. . . उन्होंने श्रोताओंको बताया कि जबतक हममें एकता नहीं हो जाती तबतक स्वराज्य प्राप्तिसे राष्ट्रका लाभ होगा, ऐसा कहना बेकार होगा। आजके दंगोंका उल्लेख करते हुए उन्होंने हिन्दुओं द्वारा प्रदर्शित घृणित और हेय बर्बरताके प्रति घृणा व्यक्त की और कहा कि हिन्दुओंको अपनी कमी पूरी करनी चाहिए। हिन्दुओं और मुसलमानोंके झगड़े पारिवारिक झगड़ोंकी तरह तय कर लिये जाने चाहिए। उन्होंने अली बन्धुओंका कई बार उल्लेख किया। . . .

[अंग्रेजीसे]

बॉम्बे सीक्रेट एब्स्ट्रैक्ट्स, १९१७

३७. भाषण : अलीगढ़ कॉलेजमें[2]

अलीगढ़

नवम्बर २८, १९१७

. . . उन्होंने कहा मुझे उम्मीद है कि मैं यहाँ इस कॉलेजमें अली बन्धुओंके साथ आऊँगा। मैंने अलीगढ़को राष्ट्र और देशके लिए कार्य करते देखा है परन्तु मुसलमान अपने देशके उत्थानकी दिशामें उस लगनसे काम नहीं कर रहे हैं, जिससे उनके हिन्दू भाई कर रहे हैं। मुझे यह देखकर प्रसन्नता होगी कि अलीगढ़ कॉलेजके यदि सब नहीं तो कुछ विद्यार्थी, श्री गोखलेकी तरह राष्ट्रोन्नायक बनें। उन्होंने अपनी पोशाककी (सफेद कुर्ता, धोती और टोपी)का जिक्र करते हुए कहा कि भारतीयोंके लिए यही उपयुक्त पोशाक है। दलित-वर्गके लोग आधुनिक वेशभूषावाले व्यक्तियोंकी अपेक्षा

१. यहाँ पहुँचनेपर छात्रोंकी भारी भीड़ने गांधीजीका स्वागत किया और स्टेशनसे लायल पुस्तकालयके मैदान तक उनका जुलूस निकाला। मैदानमें गांधीजीने २,००० लोगोंकी सभामें हिन्दू-मुस्लिम ऐक्यपर भाषण दिया। एक छात्रने स्वराज्यकी कामना करते हुए गांधीजीको माला पहनाई। १-१२-१९१७ के **लीडर**में प्रकाशित गांधीजीके भाषणकी रिपोर्टमें कहा गया है कि गांधीजीने सर सैयद अहमदखाँकी इस उक्तिका उल्लेख किया कि "हिन्दू और मुसलमान भारतमाताकी दो आँखें हैं।"

२. पुस्तकालयके मैदानमें भाषण देनेके बाद, (देखिए पिछला शीर्षक) गांधीजीने कॉलेजके कार्यकारी प्रिंसिपल श्री रेनलसे अनुमति लेकर विद्यार्थियोंके समक्ष "सत्य और मितव्ययिता" पर भाषण दिया। बादमें वे ख्वाजा अब्दुल मजीदके घर गये और वहाँसे कलकत्ता जानेके लिए स्टेशन चले गये।

भारतके प्राचीन ढंगके अनुसार वस्त्र पहननेवालोंकी बात अधिक तत्परतासे सुनेंगे और उनसे सम्मति लेने भी अधिक प्रसन्नताके साथ उनके पास पहुँचेंगे।

[अंग्रेजीसे]

बॉम्बे सीक्रेट एब्स्ट्रैक्ट्स, १९१७

३८. मगनलाल गांधीके नाम लिखे पत्रका अंश[1]

[नवम्बर ३०, १९१७ के पूर्व]

. . दोनोंके ऊपर अत्यधिक कार्यभार है। तुममें और मुझमें शायद एक अन्तर है। मुझे जो-कुछ खुशी मिलती है, सयमने मिलती है। सयमके बिना मैं जी ही नही सकता। जब-जब मुझसे नयम नहीं निभता मुझे दुःख होता है। वा पर जब भी मुझे गुस्सा आता है उनका प्रायश्चित्त मैं अपनेको कष्ट देकर पूरा करता हूँ। गोधरामें मुझे एक प्रतिनिधिपर गुस्सा आ गया था, परन्तु जबतक मैंने सबके सामने उससे माफी नहीं मांगी मुझे सन्तोष नही हुआ।

३० नवम्बरको मुझे कलकत्ता रहना होगा, इसीलिए उम्मीद है कि जल्दी ही अहमदाबाद पहुँचूँगा।[2] लेकिन रहना दो ही दिन हो सकेगा। यह भी हो सकता है कि मैं अहमदाबाद आ ही न सकूं। कोशिशमें अपनी हदतक कसर नही रखूंगा।

बापूके आशीर्वाद

गांधीजीके स्वाक्षरोंमें मूल गुजराती पत्र (सी० डब्ल्यू० ५७०७) से।
सौजन्य राधाबेन चौधरी

३९. प्लेगके सम्बन्धमें सामान्य सुझाव

नडियाद
दिसम्बर ६, १९१७

इसे कैसे रोका जाये

१ मनुष्यका रक्त यदि स्वच्छ हो तो उसमें प्रत्येक रोगके कीटाणुओंको नष्ट करनेकी शक्ति होती है।

२ इसलिए, यदि हम अपने शरीरको स्वस्थ रखें तो चाहे कितनी ही भयंकर महामारी क्यों न फैली हो, रक्तकी स्वच्छताके कारण, हम सुरक्षित रह सकते हैं।

३. रक्तको स्वच्छ बनाये रखनेके लिए मनुष्यको सादा, अल्प तथा नियमित भोजन करना चाहिए। अत्यधिक चर्बीयुक्त, मीठी अथवा चटपटी खुराक वर्जित है। सोनेसे

१. इस पत्रके पहले तीन पृष्ठ उपलब्ध नहीं हैं।
२. गांधीजी ४ और ५ दिसम्बरको अहमदाबादमें थे।

पहले कमसे-कम तीन घंटेतक मनुष्यको कुछ खाना नही चाहिए। हवा भी खुराक है, इसलिए ऐसे कमरेमें सोना चाहिए जिसमें खिडकी और दरवाजे हों; खिड़की-दरवाजे खुले रखने चाहिए और सिरपर चादर लपेट कर नही सोना चाहिए। सिरको सर्दी लगे तो टोपी पहनकर सोओ, लेकिन मुँह चादरसे बाहर ही रखना चाहिए। श्वास मुहसे नही, नाकसे लेनी चाहिए। नाकसे श्वास लेनेमें तनिक भी सर्दी लगनेकी सम्भावना नहीं होती। पानी भी साफ होना चाहिए। हमेशा उबला तथा मोटे कपड़ेसे छना हुआ पानी पीना अच्छा है। कपडेको बहुत सावधानीसे घोना चाहिए। उसी प्रकार गागर, कलश आदि भी प्रतिदिन अन्दरसे अच्छी तरह साफ किये जाने चाहिए। दो घंटे पैदल चलनेपर जितना श्रम होता है, प्रत्येक स्त्री-पुरुषको प्रतिदिन उतनी कसरत करना जरूरी है।

४. शरीरको उपर्युक्त विधिसे नीरोग रखनेके बावजूद यदि घर और [उसके] आस-पासका वातावरण स्वच्छ न हो तो भी रक्तके दूषित होनेकी सम्भावना है। घरकी खिडकियाँ, दरवाजे, छत, जमीन, सीढ़ियाँ — संक्षेपमें प्रत्येक भागको बराबर साफ किया जाना चाहिए। अर्थात् धोने योग्य भागको अच्छी तरहसे धोनेके बाद सूखने देना चाहिए। मकड़ीका जाला, धूल, घास और कूड़े-करकटको अच्छी तरह बुहारकर घरसे बाहर फेंक देना चाहिए। घरके किसी भागमें सीलन न रहे ऐसी व्यवस्था करनी चाहिए। कालीन और दरी आदिको भी प्रतिदिन झाडना चाहिए और [उन्हें] हमेशा एक ही जगहपर नही बिछाना चाहिए। डॉक्टरोका कहना है कि प्लेग पिस्सुओंकी मारफत फैलता है। स्वच्छ घरमें जहाँ हवा और उजाला काफी मात्रामें होते है वहाँ पिस्सू कदाचित् ही आयेंगे। उनका यह भी कहना है कि प्लेग चूहोंसे होता है। इसलिए मनुष्यको घरके कोनोके पलस्तर आदिकी अच्छी तरहसे जाँच करके कही भी बिल न रहने पाये, ऐसी व्यवस्था करनी चाहिए। यह काम ऐसा है कि इसे आसानीसे और बिना किसी खर्चके किया जा सकता है। सिर्फ हमारे आलस्यके कारण ही चूहे हमारे घरोमे बिल बनाकर रह सकते हैं। घरमें बिल्ली पालनेसे चूहोंका आना रुक सकता है।

५. लेकिन हिन्दुस्तानमें इस रोगके होनेका सबसे बड़ा कारण हमारी जगल जानेकी खराब और अत्यन्त हानिकारक टेव है। बहुतसे लोग बाहर जाते है और मैलेको मिट्टी अथवा अन्य रीतिसे ढँकते नही है जिसके फलस्वरूप करोड़ो मक्खियाँ पैदा होती हैं और वे मक्खियाँ मैलेपर बैठनेके बाद हमारे शरीर, हमारे वस्त्रो और हमारे भोजन-पर भी बैठती है। मैलेसे अनेक प्रकारकी विषैली गैस पैदा होती हैं और आसपासके वातावरणको बिगाड़ती हैं। इस प्रकार यह स्पष्ट है कि मनुष्योकी सर्वोत्तम खुराक, हवा, दूषित हो जाती है और उनका शरीर स्वस्थ रह ही नही सकता। हमारे पाखा-नोका मैला भी इतना ही अथवा इससे भी अधिक हानिकारक है, क्योकि वह तो अपने घरमें ही होता है। इसलिए यदि हम बाहर शौच करनेके लिए जायें तो जैसे अन्य देशोके लोग गड्ढे खोदकर शौच करनेके बाद मैलेको मिट्टीसे ढँक देते है, हमें भी वैसा ही करना चाहिए। और पाखानोकी व्यवस्था ऐसी होनी चाहिए जिससे हर बार शौच करनेके बाद हम मैलेको अच्छी तरहसे सूखी मिट्टीसे ढँक सकें। मैला किसी तरहकी बाल्टीमें इकट्ठा किया जाना चाहिए। कूड़ा-स्थानोका सर्वथा त्याग करना चाहिए तथा

मोरीमात्र बन्द की जानी चाहिए। पेशाब और पानी भी बाल्टीमें इकट्ठा किया जाना चाहिए। यदि हम मिथ्या धर्मके भ्रममें न पड़े तो हम एक दिन भी नरकके समान इस गन्दगीको सहन न करें। पाखानोंकी रचना ऐसी होनी चाहिए कि प्रत्येक भागमें भंगी प्रवेश कर सके। इन सुधारोंके बिना हिन्दुस्तानके नगर कभी भी छूतके रोगोंसे मुक्त नहीं हो सकते।

६ रास्तोंमें चाहे जहाँ पेशाब करने, थूकने, गोबर और अन्य कूड़ा-करकट आदि फेंकनेसे भी हवा दूषित होती है। डॉक्टरोंने खोज की है कि कुछ-एक [ऐसे] रोगी—उदाहरणके तौरपर क्षय रोगसे ग्रसित व्यक्ति रास्तेमें थूकते हैं, इससे भी क्षयके कीटाणु फैलते हैं और अन्य लोगोंको रोगकी छूत लग जाती है। हमें किन स्थानों-पर शौचादि क्रियाएँ करनी चाहिए इस बातपर हमें अवश्य विचार करना चाहिए। इस देशमें करोड़ों मनुष्य नंगे पाँव चलते हैं। इन व्यक्तियोंको मैलेके ऊपर चलना पड़े [क्या] यह अत्यन्त दुःखकी बात नहीं है। हमारी सड़कें, हमारी गलियाँ, हमारे आँगन इतने स्वच्छ होने चाहिए कि हमें वहाँ बैठना अथवा सोना पड़े तो तनिक भी हिचकिचाहट न हो।

जिन शहरोंमें अंग्रेज रहते हैं वहाँ प्लेगका भारी प्रकोप हो जानेपर भी उनकी बस्तियाँ [इससे] मुक्त रहती हैं, उसका क्या कारण है यह बात खूब विचार करने योग्य है। इसका कारण इन बस्तियोंका स्वच्छ होना ही है। और कुछ नहीं। स्वच्छता रखनेमें पैसेकी जरूरत नहीं विवेकपूर्वक सावधानीकी आवश्यकता है।

उपचार

७ जिन शहरोंमें उपर्युक्त नियमोंका बराबर पालन किया जायेगा उन शहरोंमें प्लेगका रोग प्रवेश नहीं कर सकता। लेकिन जहाँ इसका प्रवेश हो गया हो वहाँ क्या किया जाये, अब हम इस विषयपर विचार करते हैं। पहला काम तो यह है कि जहाँ प्लेग देखनेमें आये वहाँ उसके कारणका पता लगायें। चूहोंकी खोज करें, मरे हुए चूहे हों तो उन्हें चिमटेसे पकड़, दूर ले जाकर घास और मिट्टीका तेल डालकर जला दें अथवा जहाँ मनुष्योंका वास न हो उस स्थानपर गहरा गड्ढा खोदकर उन्हें दबा दें। जिस स्थानसे मरे हुए चूहे मिले हों उस स्थानपर गर्म राख छिड़कनी चाहिए तथा सफेदी की जानी चाहिए। उस कमरेको तुरन्त खाली करके साफ करें और फिर नीमकी पत्तियोंका धूँआँ दें। यदि दीवारें सफेदी करने लायक हों तो उनपर सफेदी की जानी चाहिए। घरमें बिल हो तो उसमें मरे हुए चूहे तो नहीं हैं, इस बातका निश्चय करके, बिलको पाट देना चाहिए। घरमें किसी स्थानपर और बिल हो तो उनकी भी वैसी ही व्यवस्था करनी चाहिए। खिड़की और दरवाजे खुले रखे जायें तथा [घरमें] खूब उजाला और गर्मी आने दी जाये, छत यदि खपरैलसे ढकी हो तो खपरे हटा दिये जाने चाहिए जिससे हवा और उजाला प्रवेश पा सके। घरको इस प्रकार साफ करनेके बाद हम उसे छोड़ दें और यदि सम्भव हो तो खुले मैदानमें तम्बू तानकर अथवा झोंपड़ी बनाकर रहें। गाँवके अन्य व्यक्तियोंका स्पर्श न करें और वस्तुएँ आदि खरीदते समय भी दुकानदारके साथ सावधानीपूर्वक व्यवहार करें। इस रीतिसे यदि तुरन्त उपचार

किया जायेगा तो प्लेग नही फैलेगा। इस प्रकार प्लेगकी छूतसे पीडित परिवारकी मारफत प्लेगका उस अथवा किसी स्थानपर भी प्रवेश नही हो सकता। इस प्रकार ३१ दिन बाहर रहनेके बाद, शहरमें किसी अन्य स्थानपर प्लेगका प्रकोप न हुआ हो, और उक्त घरमें मरे हुए चूहे देखनेमें न आयें तो परिवार वापस अपने घरमें जाकर रह सकता है।

८. जिस गाँवमें प्लेग फैलने लगे उस गाँवके अन्य व्यक्तियोको चाहिए कि वे अपने घरोकी छानबीन कर लें। सारे सामानको बाहर निकालकर चूहोकी खोजबीन करे। यदि मरा हुआ चूहा देखनेमें आये तो ऊपर दी गई सलाहके अनुसार बाहर जाकर रहे। मरे हुए चूहे दिखाई न पडे तो भी घरको खूब साफ-सुथरा बनाये रखे। घरकी सफेदी करवाई जानी चाहिए। हवाके आने-जानेकी व्यवस्था न हो तो घरमें वैसा सुधार करे। और घरके आसपास भी पूरी सफाई रह सके, ऐसे उपाय किये जाने चाहिए। पडोसियोके घर साफ न हो तो ऐसी तजवीज करनी चाहिए कि वे भी साफ कर दिये जाये।

९ रोगीको घबराने न दें। उसके पास [उसकी] सेवा-सुश्रूषा करनेवाले व्यक्तिके अलावा और किसीको भी मत जाने दीजिए। उसे ऐसे कमरेमे रखिए जहाँ उसे पुष्कल हवा और उजाला मिले। सार्वजनिक अस्पताल हो तो उसे वहाँ ले जाइए। भोजन एकदम बन्द कर दें। प्लेगके आसार नजर आते ही उसे खुराक न दी जाये और तीन घटे बीत गये हो तो एनीमा दें। रोगीको ठडे पानीके टबमे, दो मिनट अथवा उससे भी अधिक, पसन्द करे तो पाँच मिनट तक, इस प्रकार बैठाइये कि उसके पैर और छाती आदि पानीसे बाहर रहें तथा घुटनेसे जाँघ तकका भाग पानीमें रहे। रोगीको प्यास लगे तो उबला, छना हुआ और ठण्डा पानी, जितनी रोगीको जरूरत हो उतना दें। इसके अलावा अन्य कोई भी पेय पदार्थ न दे। माथा बहुत गरम हो तो उसपर मिट्टीकी पट्टी अथवा ठण्डे पानीकी पट्टी रखिए। इतने इलाजसे सम्भव है कि रोगी मौतके भयसे मुक्त हो जाये। यदि वह दूसरे दिन तक जीवित रहे और उसे भूख लगे तो नीबू अथवा नारगीके रसमें गरम अथवा ठडा पानी मिलाकर रोगीको पीनेके लिए दीजिए। बुखार उतरनेके तुरन्त बाद दूध शुरू कीजिए। शरीरमें गाँठ हो तो उसपर गरम पानीकी पट्टी रखें और उसे समय-समयपर बदलते रहे। डेढ़ फुट लम्बा और नौ इंच चौडा मोटा कपड़ा लेकर उसे गरम पानीमे अच्छी तरहसे भिगोइये, फिर उसे सूखे रूमालपर रखकर निचोडे तथा जितना रोगी सहन कर सके उतना गरम, चार तहे लगाकर गाँठपर रखकर पट्टी बाँध दे। इस पुल्टिसको हर तीस मिनटके बाद बदलिये। इस रोगमे रोगीका हृदय बहुत दुर्बल हो जाता है इसलिए उसे पूरा आराम दिया जाये।

१० सार-सँभाल करनेवाला व्यक्ति अन्य लोगोसे अलग रहे। और दूसरे कामोको, जिनमें [अन्य] व्यक्तियोके हाथ लगते हो, करना छोड़ दे। अपने शरीरकी रक्षाके लिए खुराककी मात्रा बहुत कम कर दे और शरीरका बराबर ध्यान रखे। चिन्ता बिलकुल न करे। यदि उसे पाखाना न आता हो तो वह एनीमा लेकर अतडियोको साफ करे और मात्र फलाहार करे।

११. रोगीके कपडे, नदी अथवा ऐसे स्थानपर जहाँ अन्य [लोगोंके] कपडे धोये जाते हों, न धोयें। उन्हे उबलते हुए साबुनके पानीमें डुबानेके बाद धोइये। अगर वे अत्यन्त गंदे हो गये हो तो उन्हे जला दें। लिहाफ आदिका किसी और व्यक्तिको उपयोग नही करना चाहिए — और यदि वे साफ हो तो आठ दिन तक रोज धूपमें सुखाये जायें वह भी इस प्रकार कि दोनों ओर धूप लगे। अगर उसे जला देनेकी सामर्थ्य हो तो जला ही दें।

[गुजरातीसे]

एस० एन० ६३९९ की फोटो-नकलसे।

४०. पत्र: ए० एच० वेस्टको

मोतीहारी
दिसम्बर १०, १९१७

प्रिय वेस्ट,

तुम्हारा महत्त्वपूर्ण पत्र मेरे सामने है। मेरा खयाल ऐसा है कि यदि तुम 'इंडियन ओपिनियन' शहरमें[1] ले जाये बिना चला ही नही सकते तो इसका प्रकाशन रोक दो। फुटकर छपाई या विज्ञापनोंके लिए स्पर्धा करनेका तुम्हारा विचार मुझे पसन्द नही है; मैं समझता हूँ कि यदि ऐसा करनेकी नौबत आयेगी तो इसकी कोई उपयोगिता ही न रह जायेगी। इसकी अपेक्षा तो मुझे यह ज्यादा अच्छा लगेगा कि तुम और सैम[2] फीनिक्स बेच डालो और कोई स्वतन्त्र काम करने लगो। अगर अखबारके बिना तुम फीनिक्सको कोई रूप दे सकते हो तो, वह मुझे ठीक लगेगा, परन्तु यदि तुम फीनिक्समें खेतीबारी करके अपना निर्वाह तक नही कर सकते तो फीनिक्सको बेच डालना ही चाहिए। हिल्डाकी शिक्षाका भार तुमपर रह सकता है। निःसन्देह अपने आदर्शको पूर्ण करनेके लिए [प्राय.] सख्त कदम उठाना बहुत आवश्यक हो जाया करता है।

यदि तुम फीनिक्समें पत्रको चलाते हुए अथवा उसके बिना अपना निर्वाह नही कर सकते, और अपने लिए कोई अच्छी नौकरी भी नही खोज सकते, तो मुझे तुम्हारे गुजारेके लिए यहाँसे व्यवस्था करनी होगी। उस सूरतमें तुम्हे सूचित करना होगा कि तुम्हें कितने रुपये चाहिए और कब तक के लिए। क्योंकि मैं यह तो मानता ही हूँ कि तुम वहाँ कोई न कोई काम खोज लेनेका प्रयत्न करोगे। अगर देवी[3] यहाँ आ सके तो मैं उसको बुला लेनेके लिए बिलकुल तैयार हूँ और अगर तुम अकेले कुछ समयके

१. डर्बन।
२. गोविन्दस्वामी, इंटरनेशनल प्रिंटिंग प्रेस, फीनिक्सके फोरमैन।
३. ए० एच० वेस्टकी बहन एडा।

लिए आ सको तो तुमको भी। यहाँका वातावरण या जलवायु श्रीमती पायवेल[1] और शायद श्रीमती वेस्टको भी पसन्द नही आयेगा, सो मै जानता हूँ। .

अगर मणिलाल स्वय अपने हाथसे छापकर देखना चाहता है तो उसे ऐसा करने दिया जाये।

यह मै बखूबी जानता हूँ कि पत्रका शहरसे निकालनेका प्रयास बिलकुल व्यर्थ सिद्ध होगा। हमने इसको असाध्य पाकर ही छोडा था। बडे गौरके साथ सोचने-समझनेके पश्चात्, जैसी-जैसी आवश्यकता पडती गई, हम अपनी विभिन्न मजिलोपर पहुँचे है। तुम्हारे तौर-तरीके साधारण व्यापारी जैसे नही हो सकते। तुम उनका सहारा लेनेसे जल्दी ही ऊब उठोगे। जिसका परिणाम निश्चित असफलता है, उसका प्रयोग ही क्यो किया जाये? अगर मणिलाल आजमाइश करना चाहे तो मै उसे अवसर दिया जाना पसन्द करूँगा। मै उसे भी पत्र[2] लिख रहा हूँ।

हृदयसे तुम्हारा,
मो० क० गांधी

गाधीजीके स्वाक्षरोमे मूल अग्रेजी पत्र (सी० डब्ल्यू० ४४२७) की फोटो-नकलसे।
सौजन्य: ए० एच० वेस्ट

४१. पत्र: जे० एल० मेरीमैनको

मोतीहारी
[दिसम्बर][3] १०, १९१७

प्रिय श्री मेरीमैन,

आज सुबह यात्रासे लौटनेपर मुझे मेरे नाम लिखा एक पत्र रखा मिला; उसकी नकल[4] मै इसके साथ भेज रहा हूँ।

डॉ० देवने मुझे बताया है कि मितहरवा और उसके आसपासके गाँवोकी आबादीका लगभग ५० प्रतिशत ऐसे ज्वरसे पीडित है जो प्राय जान लेकर ही जाता है। हमारे कार्यकर्त्ता यथासभव सहायता कर रहे है।

आपका सच्चा,
मो० क० गांधी

गाधीजीके स्वाक्षरोमे मूल अग्रेजी पत्र (नेशनल आर्काइव्ज़ ऑफ इंडिया) से; तथा **सिलैक्ट डॉक्यूमेंट्स ऑन महात्मा गांधीज़ मूवमेंट इन चम्पारन, १९१७–१८**, स० २२६, पृष्ठ ४६३–४ से भी।

१. ए० एच० वेस्टकी सास।

२. उपलब्ध नहीं है।

३. मूल पत्रमें गाधीजीने भूलसे नवम्बर लिख दिया है। वस्तुतः उन्होंने यह पत्र १० दिसम्बरको मोतीहारी वापस आनेपर लिखा था।

४. बबन गोखलेका पत्र; देखिए परिशिष्ट ५।

४२. पत्र : गोविन्दस्वामीको

मोतीहारी
दिसम्बर ११, १९१७

प्रिय सैम,

श्री वेस्टने मुझसे पूछा है कि क्या पत्रके प्रकाशनका कार्य शहरसे करना ठीक न होगा? मैंने कहा है "नही"। यदि तुम 'इडियन ओपिनियन'को फीनिक्ससे न चला सके तो मुझे वहुत ही दु:ख होगा। कुछ भी हो छापेखानेको वहाँसे कही मत ले जाओ। अगर तुम पत्रको फीनिक्ससे नही निकाल सकते तो वह वन्द ही कर दिया जाये। ऐसी स्थितिमें तुमको अपनी जीविका खेतीके द्वारा ही अर्जित करनी चाहिए और उसमें अपना सारा समय लगाना चाहिए। अगर इसमें भी सफलता न मिले, तो शहरमें जा कर जीविकोपार्जन करना चाहिए। मैंने मणिलालको लिखा है कि वह केवल राम,[1] देवीवहन और नागरजीकी सहायतासे गुजराती भाग ही प्रकाशित किया करे। अगर राम और नागरजीका भी गुजारा उसके द्वारा सम्भव न हो तो उनको भी चले जाना चाहिए। अगर गुजरातीके दो पृष्ठ ही हर सप्ताह प्रकाशित होते रहे तो भी मुझे वुरा नही लगेगा।

तुम्हारी कसौटी हो रही है; उसमें खरे उतरना है। जाव वर्कमें हम डर्वनके मुद्रकोंका मुकावला कर ही नही सकते।

हृदयसे आपका,
मो० क० गाधी

गावीजीके स्वाक्षरोमें मूल अग्रेजी पत्र (सी० डब्ल्यू० ४४२८) की फोटो-नकल से।
सौजन्य: ए० एच० वेस्ट

१. रामनाथ; फीनिक्स प्रेसके कार्यकर्ता, देखिए खण्ड ५, पृष्ठ ८२।

४३. पत्र : एस्थर फैरिंगको[1]

मोतीहारी
चम्पारन
दिसम्बर १२, १९१७

प्रिय एस्थर,

तुम्हारा पत्र अभी-अभी मिला; पढ़कर दुःख हुआ। तुम्हे लिखते समय एक पंक्ति याद आ रही है, "किसी भी वस्तुके प्रति आसक्ति न रखो।" यह व्यग्रता किस लिए? इन दिनो तुम संकटोसे होकर गुजर रही हो। मुझे यकीन है तुम्हारा कुछ नही बिगड़ेगा। फिलहाल तुम्हारा स्पष्ट कर्त्तव्य यही है कि जिन लोगोके हाथमे तुमने अपनी गतिविधियोकी बागडोर सौंप रखी है, उनकी आज्ञाओका पालन करो। तुम्हे उसी वक्त उनके विरुद्ध जाना उचित है, जब वे स्पष्ट रूपसे तुम्हारी आध्यात्मिक उन्नतिमें बाधक बनें। जबतक इस बातमें सन्देह हो तबतक उन्हें दोषी मत मानो। अलबत्ता तुम उन लोगोसे समझाकर कह सकती हो कि अहमदाबादका मौसम इन दिनो बड़ा सुहावना होता है; वहाँ मेरी सार-सँभाल, बड़े स्नेहके साथ की जायेगी, और मैं वहाँ हर प्रकारसे निश्चिन्त रहूँगी। स्थानके परिवर्तन-भरसे लाभ हो जायेगा। यदि तिसपर भी उनका विरोध बना रहे तो उसे समभावसे स्वीकार कर लो। परीक्षाकी फिक्र मत करो — वह तो एक बिलकुल मामूली चीज है। सबसे बड़ी परीक्षा तो तब होती है, जब हमारे पवित्र उद्देश्योकी प्राप्तिके मार्गमें बाधाएँ पहुँचाई जाती है। ईश्वरकी गति न्यारी और बुद्धिसे परे है। हमे यह मानकर चलना चाहिए कि मनुष्यकी कोई बिसात नही, परमात्माकी मर्जी ही सब-कुछ है। मुझे बराबर पत्र लिखती रहो। इस वर्षके अन्त तक मोतीहारीके पतेसे भेजना। यदि यह पत्र पाने तक तुम्हारा मन उद्वेग-रहित हो चुका हो तो तुम उसकी सूचना तार द्वारा भी दे सकती हो — मुझे अच्छा लगेगा।

सस्नेह,

तुम्हारा,
बापू

[अंग्रेजीसे]
माई डियर चाइल्ड

१. एस्थर फैरिंग "डेनिश मिशनरी सोसाइटी" के कर्मचारी-मण्डलकी एक सदस्याकी हैसियतसे सन् १९१६ में भारत आई थीं। उन्हें शिक्षण-कार्य सौंपा गया था। सन् १९१७ में वे साबरमती आश्रम आई, और उससे बहुत प्रभावित हुई। उनकी संस्थाने यह बात नापसन्द की कि वे गांधीजीसे सम्पर्क बढ़ायें या उनके साथ पत्र-व्यवहार करें। संस्थाके अधिकारियोंने उनको साबरमती आश्रममें अपनी बड़े दिनकी छुट्टियाँ बितानेकी अनुमति नहीं दी। थोड़े दिनों बाद सन् १९१९ में उन्होंने मिशनका काम छोड़ दिया और कुछ अरसेके लिए साबरमती आश्रममें आकर भी रहीं। गांधीजीने उन्हें २० वर्षोंमें जो पत्र लिखे थे, वे सन् १९५६ में **माई डियर चाइल्ड** नामसे पुस्तकके रूपमें प्रकाशित हुए।

४४. पत्र: ई० एल० एल० हैमंडको

मोतीहारी
दिसम्बर १५, १९१७

प्रिय श्री हैमंड[1],

मुझे आपका इसी १३ तारीखका संक्षिप्त पत्र अभी मिला।[2] आपके साथ जो बातचीत हुई उससे मैंने यह निष्कर्ष निकाला था कि मेरी सेवाओंकी जरूरत न होगी, इसलिए मैंने आगामी मार्च मासके अन्ततक महत्त्वपूर्ण कार्य स्वीकार कर लिये हैं और अभी एक शिक्षा-सम्बन्धी और स्वास्थ्य व सफाई-सम्बन्धी प्रयोग आरम्भ किया है। मैं इसे सबसे अधिक महत्त्व देता हूँ और उसपर मुझे लगातार ध्यान देनेकी आवश्यकता है। मैं इस कार्यको छोड़ना नहीं चाहता और फिर भी मैं वर्तमान युद्धमें जो थोड़ा-सा हिस्सा ले सकता हूँ, उसका अवसर भी नहीं खोना चाहता। मुझे ऐसी टुकड़ी बनाना, जिसमें मैं सेवा न करूँ, लगभग असम्भव लगता है। यदि मैं लोगोंको यह विश्वास न दिलाऊँ कि वे सब मिलकर, और मेरे साथ, काम करेंगे तो मुझे ऐसे लोगोंको प्राप्त करना भी मुश्किल होगा। क्या आप कृपया मुझे विस्तारसे बतायेंगे कि आपकी विभिन्न जरूरतें क्या हैं और आपको टुकडीकी जरूरत कब होगी, तब मैं देखूँगा कि मैं उसमें काम कर सकता हूँ या नहीं। आप कृपया मुझे यह बतायें कि प्रत्येक स्थितिमें कैसे कामकी जरूरत होगी और यदि बताना सम्भव हो तो यह भी लिखें कि प्रस्तावित टुकडी कहाँ भेजी जायेगी।

आपका सच्चा,
मो० क० गांधी

सिलैक्ट डॉक्यूमेंट्स ऑन महात्मा गांधीज मूवमेंट इन चम्पारन, १९१७–१८

१. एगबर्ट लॉरी ल्यूकास हैमंड, आई० सी० एस०; १९२४ में बिहार और उड़ीसा सरकारके प्रधान सचिव नियुक्त हुए, इंडियन इलेक्शन पिटीशंस; द इंडियन कैंडीडेट ऐंड रिटर्निंग ऑफिसरके लेखक।

२. देखिये परिशिष्ट ६।

४५. पत्र . 'इंडियन ओपिनियन'को¹

मोतीहारी
दिसम्वर १५, १९१७

मै जब दक्षिण आफ्रिकासे चला था, तव मैंने अपने दक्षिण आफ्रिकी भारतीय और अग्रेज मित्रोको समय-समयपर पत्र लिखते रहनेका पक्का विचार किया था, किन्तु भारतमे मेरी दशा मैंने जैसी सोची थी उससे विलकुल भिन्न हुई। मुझे यहाँ अपेक्षाकृत अधिक शान्ति और अवकाश मिलनेकी आशा थी, किन्तु मै अनिवार्यत अनेक प्रवृत्तियोमे फँस गया हूँ। मै ये प्रवृत्तियाँ और स्थानीय दैनिक पत्र-व्यवहार मुश्किलसे ही सँभाल पा रहा हूँ। मेरा आधा समय रेलगाडियोमें वीतता है। मुझे आशा है, मेरे दक्षिण आफ्रिकी मित्र, मै जो उनकी उपेक्षा करता जान पडता हूँ, उसके लिए मुझे क्षमा करेगे। मै उन्हे विश्वास दिलाता हूँ कि अवतक ऐसा एक भी दिन नही गया जिस दिन मुझे उन लोगोका और उनकी कृपालुताका खयाल न आया हो। मेरे दक्षिण आफ्रिकाके साथी-सहवासी मेरी स्मृतिसे कभी उतर नही सकते।

अव आपको यह जानकर आश्चर्य न होगा कि मुझे इन विनाशक वाढोकी खवर, 'इडियन ओपिनियन' आया, तव उसे आज पढनेपर ही मिली है। मै अपने प्रवासमें अखवार कम ही पढता हूँ और जव प्रवासमे नही होता, तव भी उनपर एक दृष्टि ही डालता हूँ। मेरे इस पत्रका उद्देश्य पीडितोके प्रति अपनी सहानुभूति भेजना है। मै अपने मनमे उनके कष्टोकी यथार्थ कल्पना कर सकता हूँ। उनसे हमें ईश्वर और उसकी शक्तिका एव इस जीवनकी क्षणभंगुरताका ध्यान आता है। उनसे हमे यह शिक्षा लेनी चाहिए कि हम सदा उस ईश्वरकी ही शरणमें जाये। कभी अपने दैनिक कर्त्तव्योमें न चूकें। धर्मराजके हिसावमे केवल हमारे कर्म ही अकित किये जाते है, हमारा कथन नही। इस समय मेरे मनमें ये और ऐसे ही विचार उठ रहे है और मै चाहता हूँ कि उन्हे मै पीडितोके सम्मुख भी रखूं। मैंने इस देशमें जो भारी गरीवी देखी है, उसके कारण मै बाढ-पीडित गृहहीन लोगोको कोई आर्थिक सहायता भेजनेका खयाल नही कर सकता। इस देशमें एक पाईका भी महत्त्व है। मै इस समय ऐसे लोगोके वीच रह रहा हूँ जिनमें से हजारोको चना-चवेना या सत्तूके सिवा कुछ नही मिलता जिसे वे नमकके साथ पानीमे घोलकर खा लेते है। इसलिए हम पीडितोको अपने हार्दिक दु खका विश्वास ही दिला सकते है।

मुझे आशा है ऐसा उग्र आन्दोलन किया जायेगा कि जिन घरोको प्राणघाती वाढोका खतरा रहता है उनमे रहना गैर कानूनी करार दे दिया जाये। गरीब लोग यदि रह सकेंगे तो परिणामोकी परवाह न करके ऐसी जगहो मे भी रहेगे। उनका ऐसी जगहोमें रहना असम्भव कर देना शिक्षित लोगोका काम है।

१. यह "दक्षिण आफ्रिकी भारतीयोंको सलाह" शीर्षकसे प्रकाशित हुआ था।

'इंडियन ओपिनियन' के जिस अंकसे वाढोंसे हुए इस विनाशकी खबर मिली उसीसे श्री अब्दुल गनीकी[1] दुःखद मृत्युकी खबर भी मिली। कृपया उनके परिवारके सदस्योंके प्रति हमारी ओरसे ससम्मान संवेदना व्यक्त कर दें। श्री अब्दुल गनीने समाजकी जो सेवाएँ की हैं वे कभी भुलाई नहीं जा सकती। अपने सन्तुलित निर्णय और सहज शिष्टताके गुणके कारण उन्होंने प्रतिष्ठा पाई थी। उन्होंने सार्वजनिक समस्याओंको जिस बुद्धिमत्तासे सुलझाया है उससे यह बात सिद्ध हो जाती है कि अंग्रेजीके ज्ञान या आधुनिक शिक्षणके बिना देशकी प्रभावकारी सेवा की जा सकती है। मैं यह भी देखता हूँ कि हमारे दक्षिण आफ्रिकावासी लोग अभीतक व्यापारिक परवानों और देशत्यागके प्रमाण-पत्रोंसे सम्बन्धित कठिनाइयोंसे मुक्त नहीं हुए हैं। मेरे भारतके अनुभवसे मेरी यह राय पक्की हो गई है कि ऐसी बुराइयोंका इलाज सत्याग्रहके सिवा दूसरा नहीं है। समाजको पहले अपेक्षाकृत नरम उपायोंका आश्रय लेना चाहिए, किन्तु मैं आशा करता हूँ कि इसके कारण सत्याग्रहकी तलवारका प्रयोग बन्द नहीं किया जायेगा और उसे जंग नहीं लगने दी जायेगी। जबतक यह युद्ध चलता है तबतक हमारा कर्त्तव्य है कि अभीष्ट सहायता प्राप्त करनेके लिए हम आवेदन-निवेदनों आदिका आश्रय लेकर ही सन्तोष करें, किन्तु मेरे खयालसे सरकारको यह जान लेना चाहिए कि जबतक उक्त प्रश्नोंका सन्तोषजनक समाधान नहीं हो जाता तबतक भारतीय समाज चैन न लेगा। यह भी उचित ही है कि मैं समाजको आन्तरिक खतरोंसे सावधान कर दूँ। दक्षिण आफ्रिकासे आये हुए लोगोंने मुझे बताया है कि हमारा समाज उन लोगोंसे कदापि सर्वथा मुक्त नहीं है जो गैर-कानूनी व्यापारमें लगे हैं। जो लोग न्याय पाना चाहते हैं उनका व्यवहार सन्देहातीत होना चाहिए; मुझे आशा है कि हमारे नेता जबतक इन आन्तरिक दोषोंको दूर न कर लेंगे, तबतक दम न लेंगे।

[अंग्रेजीसे]

हिन्दू, ४–३–१९१८

४६. भाषण : नडियादमें[2]

नडियाद

दिसम्बर १६, १९१७

. . . श्री गांधीने निकट भविष्यमें होनेवाले परिवर्तनोंका उल्लेख किया और कहा कि सबको केवल अपने देशके हितमें ही कार्य करना चाहिए। अगर सब ऐसा करें तो

१. नेटालके प्रमुख व्यवसायी, ब्रिटिश भारतीय संघके अध्यक्ष, १९०३-७।

२. गांधीजीके वहाँ पहुँचनेपर नडियादकी होमरूल लीगके सदस्योंने स्टेशनपर उनका स्वागत किया और जुलूसके साथ वे उनको गोकुलदास द्वारकादास तलातीके घर ले गये। गुजरात राजनीतिक परिषद्में पास किये हुए प्रस्तावोंको कार्यान्वित करनेके सम्बन्धमें कौन-कौनसे कारगर तरीके काममें लाये जायें इस-पर एक निजी बैठकमें विचार किया गया। तत्पश्चात् रातको ८ बजे गांधीजीने एक सार्वजनिक सभामें भाषण दिया, जिसमें लगभग ५,००० लोग उपस्थित थे। इसके उपरान्त गांधीजी हिन्दू अनाथालय देखने गये और कुछ देर बाद नडियादसे रवाना हो गये।

मॉण्टेग्युसे याचना किये बिना ही स्वराज्य मिल जायेगा। महुआ अधिनियमकी निन्दा करते हुए उन्होंने कहा कि सरकारको गलत सूचनाएँ दी गई है। उसके बाद वक्ताने प्लेगकी महामारीके बारेमें बोलते हुए कहा कि हमें चूहोंको धर्मका अंग मानकर मारना तथा सफाई रखनी चाहिए। उन्होंने इनके विषयमें अन्य उपयोगी बातें भी बतलाईं। उन्होंने इस बातकी भी चर्चा की कि आजकल फैलनेवाली अनेक बीमारियोंका कारण लोगोंको पर्याप्त मात्रामें दूधका न मिलना है, क्योंकि दुग्धशालाएँ सबका-सब दूध खरीद लेती हैं . . . ।

[अंग्रेजीसे]

बॉम्बे सीक्रेट एब्स्ट्रैक्ट्स, १९१७

४७. पत्र : मगनलाल गांधीको

मोतीहारी

अगहन सुदी ४, सम्वत् १९७४ [दिसम्बर १८, १९१७]

चि० मगनलाल,

मुझे चाहिए कि तुम्हे लम्बा पत्र लिखकर भेजूं, लेकिन इन दिनो यह सम्भव नही है। और फिर समाज सेवा सघका काम आ गया है। ऐसा लगता रहता है कि जबतक मेरा सितारा बुलन्द है तबतक अपने आदर्शोका जितना प्रसार किया जा सकता है करूँ। चूहोपर निगरानी रखने और स्वच्छता बनाये रखनेसे आश्रममें[1] प्लेगका प्रवेश रोका जा सकेगा। 'प्रेमल ज्योति तारो दाखवी[2]' पढना और उसपर विचार करना। हम भविष्यके सम्बन्धमें योजना बनायें; लेकिन उसे जाननेकी इच्छा न करे।

अध्यापकोके घर तुरन्त बनवानेकी बात थी, उसका क्या हुआ? भाई नरहरि[3] तथा ब्रजलाल दोनोकी तबीयत ठीक है। देवदास अभीतक पाठशालामे ही है। सुरेन्द्र[4] भी वही है। बा[5] मेरे पास आ गई है।

अपने स्वास्थ्यका खूब ध्यान रखना।

बापूके आशीर्वाद

गांधीजीके स्वाक्षरोमें मूल गुजराती पत्र (सी० डब्ल्यू० ५७०८) से।
सौजन्य : राधाबेन चौधरी

१. कोचरब गाँवमें प्लेग फैल जानेपर गांधीजीने उसे छोड़कर साबरमती आश्रमकी स्थापना की। देखिए आत्मकथा भाग ५, अध्याय २१ ।

२. न्यूमैनके प्रसिद्ध प्रार्थना-गीत, 'लीड काइन्डली लाइट' का नरसिंहराव दिवेटिया द्वारा किया गया गुजराती अनुवाद । यह गांधीजीको बहुत प्रिय था।

३. नरहरि द्वारिकादास परीख, स्वराज [होमरूल] आन्दोलनकारी गांधीजीके एक सहयोगी ।

४. साबरमती आश्रमके निवासी ।

५. कस्तूरबा भीतिहरवा स्कूलमें काम कर रही थीं ।

४८. पत्र : राजस्व सचिवको

मोतीहारी
दिसम्बर १९, १९१७

सेवामें
सचिव
राजस्व विभाग
बिहार और उडीसा सरकार
पटना

महोदय,

मुझे आपके ६ दिसंबर १९१७ के पत्र सं० ११६–२–टी–४४–आर० टी० की, जिसके साथ आपने चम्पारन काश्तकारी विधेयककी एक प्रति भेजी है[1] और उसके सम्बन्धमें मेरी सम्मति मांगी है, प्राप्ति स्वीकार करनेका सम्मान प्राप्त है। मेरा निवेदन इस प्रकार है :

(१) खण्ड ४ के सम्बन्धमें, मैं देखता हूँ कि यद्यपि उपखण्ड (क) और उपखण्ड (ख) एक ही समझौतेसे सम्बन्धित हैं, फिर भी उपखण्ड (क) का क्षेत्र उपखण्ड (ख) के क्षेत्रसे अधिक व्यापक है। मैं इसके कारणकी कल्पना नहीं कर सका हूँ, किन्तु मेरा सुझाव है कि उपखण्ड (ख) की भाषा उपखण्ड (क) के लिए भी जैसीकी-तैसी ले ली जाये और इसलिए उपखण्ड (क) की पंक्ति २ में जो 'शर्त' शब्द आता है उसे निकाल दिया जाये। और तदनुसार पंक्ति ३ में जो 'खण्ड ३' शब्द आते हैं उनके स्थानमें "खण्ड ३ का उप-खण्ड २" शब्द रख दिये जायें।

(२) खण्ड ५ के सम्बन्धमें, मेरा निवेदन यह है कि समितिकी सिफारिशोंके अन्तर्गत जमींदारों और उनके काश्तकारोंके करार आते हैं, जमींदारों और उनके अपने पट्टेदारों एवं उन पट्टेदारोंके करार इनके अन्तर्गत नहीं आते।

ऐसे अनेक काश्तकार हैं जो उन जमींदारोंसे करार करते हैं जिनकी जमींदारीमें वे नहीं आते। इसलिए इस खण्डकी पंक्ति २ में पड़े हुए शब्द "पट्टेदार चाहे उसका पट्टा उसकी अधीनतामें आता हो" इस प्रकार संशोधित कर दिये जायें — "पट्टेदार चाहे उसका पट्टा उसकी अधीनतामें आता हो या किसी अन्यकी अधीनतामें", और इस खण्डकी पंक्ति ३ और ४ में से ये शब्द निकाल दिये जायें, "अपनी पट्टेदारीकी जमीनमें या उसके किसी भागमें उगाये गये।"

१. विधेयकको प्रवर समितिके सुपुर्द करनेके बाद इसकी प्रतियाँ राजस्व सचिवने गांधीजी, बिहार जमींदार संघ और बिहार बागान-मालिक संघको सम्मत्यर्थ भेजी थीं

निवेदन है कि ये अन्तिम शब्द अनावश्यक हैं। अभिप्रेत यह है कि कानूनसे, पैदावारकी बिक्रीके सम्बन्धमें जमींदारों और काश्तकारोंके बीच जो भी करार हुए हैं उन सबके सम्बन्धमें, काश्तकारोंकी रक्षा की जाये।

(३) खण्ड ६के सम्बन्धमें, मुझे भय है कि उसका वर्तमान रूप जैसा है, उससे सम्भवतः सरकार और समिति द्वारा सोचे हुए परिणामसे बिलकुल विपरीत परिणाम होगा। उसके उपखण्ड (१) के अन्तर्गत एक तुच्छ-सा कारिन्दा एक बेईमान जमींदार द्वारा अबवाव[1] इकट्ठा करनेके कामपर नियुक्त किया जा सकता है। ऐसा कारिन्दा पकड़ा जायेगा तो बिना झिझक इस खण्डमें बताई गई सजाको भुगत लेगा, क्योंकि मैंने जैसा बताया वैसा जमींदार हमेशा उसकी सजा भुगतनेसे होनेवाली क्षतिकी पूर्ति करनेकी व्यवस्था कर रखेगा। इसलिए मेरा सुझाव यह है कि प्रत्येक अवस्थामें दायित्व जमींदारपर ही डालना आवश्यक है। अत. उपखण्ड (१)में संशोधन कर देना चाहिए और उसकी पंक्तिमें से "या उसका कारिन्दा" शब्द निकालकर उसी पंक्तिमे सर्वनाम "जो" के बाद "चाहे सीधे या कारिन्देके द्वारा" शब्द जोड़ देने चाहिए। उक्त खण्डके उपखण्ड ३को बिलकुल हटा देना चाहिए। सम्भव है, किसी गरीब काश्तकारका मामला ठीक हो, किन्तु फिर भी वह उसे सिद्ध करनेमें असमर्थ हो। यदि ऐसा भोलाभाला कोई किसान दण्डित हो गया तो यह सरासर अन्याय होगा। इसके अलावा ऐसा उपखण्ड रहेगा जो काश्तकार अबवाब सम्बन्धी शिकायतें पेश करनेमे डरेंगे और इन शिकायतोंका आना कारगर रूपसे रुक जायेगा। यह भी कहा जाना चाहिए कि झूठी शिकायत करनेपर शिकायत करनेवालोंको दण्ड देनेकी सत्ताका प्रयोग कम ही किया जाना चाहिए। झूठी शिकायतोंके सम्बन्धमें निश्चित परिणामपर पहुँचनेके लिए न्यायाधीश अत्यन्त कुशल और मानसिक दृष्टिसे निष्पक्ष होना चाहिए। इसलिए कलक्टरोंको, जो न्यायाधीशकी तरह तोलकर फैसले नहीं देंगे, सरसरी कार्रवाईके अधिकार दे देना खतरनाक होगा। अन्तिम बात यह है कि खण्ड ३के अन्तर्गत एक भी मामलेमें अन्याय होनेका परिणाम निश्चित रूपसे यह होगा कि एक बेईमान जमींदारकी हिम्मत बेजा कर-वसूलीके सम्बन्धमें और भी बढ़ जायगी, क्योंकि वह जान लेगा कि उपखण्ड ३के अन्तर्गत कार्रवाई करनेपर काश्तकारोंको संत्रस्त कर दिया जायेगा। ऊपर बताई स्थितियोंपर विचार करते हुए मैं विश्वास करता हूँ कि उक्त उपखण्ड हटा दिया जायेगा। किन्तु यदि खण्ड ६में मेरे बताये संशोधन करना कठिन जान पड़े तो मेरा सुझाव है कि यह समस्त खण्ड ही वापस ले लिया जाये। मैं खण्ड ६के अन्तर्गत दिये गये संदिग्ध संरक्षणके बजाय बंगाल काश्तकारी कानूनके खण्ड ७५के अन्तर्गत दिये गये कम प्रभावकारी संरक्षणको अधिक पसंद करूँगा।

(४) मैं देखता हूँ, गाड़ियोंका साटा[2], जिसके सम्बन्धमें समितिने विचार किया है, प्रस्तावित कानूनके अन्तर्गत नहीं आता। कुछ साटे ७ से २० साल तक पुराने हैं जिनमें

१. मूल लगानके अतिरिक्त जमीनपर लगाये गये दूसरे कर।

२. कुछ पेशगी लेकर लिखा गया सामान या साधन देनेका करार।

दरें शुरूसे आखीर तक एक ही रहती हैं। कुछ गोरे जमींदारोंने, जो समितिके पूछने पर अपने साटोंकी शर्तोंको उचित सिद्ध नहीं कर सके थे, कहा था कि असलमें वे इन साटोंको लागू नहीं करते। मैं नम्रतापूर्वक कहना चाहता हूँ कि एक खण्ड ऐसा रखा जाना चाहिए जिसमें इन साटोंको अवैध घोषित किया गया हो। यदि आवश्यकता हो तो अल्प अवधिके नये साटे किये जा सकते हैं और उनकी दरें डिवीजनके कमिश्नरसे सलाह करके तय की जा सकती हैं। मैं कह सकता हूँ कि इस समय भी इन साटोंको तोड़नेपर किये गये हर्जानेके कुछ दावे विचाराधीन हैं।

मैंने अखबारोंमें सर्वश्री इर्विन[1] और जेम्सनका[2] पत्र-व्यवहार पढ़ा है, एवं विवेयकपर सर्वश्री जेम्सन और केनेडी[3] द्वारा कौंसिलमें दिये गये भाषण भी देखे हैं। इन दोनोंके सम्बन्धमें मैं केवल इतना ही कहना चाहता हूँ कि इन लेखकों और वक्ताओंने जो भी बातें कही हैं उनमें से हरएक बातका पूरा उत्तर मौजूद है। मैंने सरकारपर अनावश्यक भार पड़नेके भयसे उनके बारेमें अपना मुँह बंद रखा है। किन्तु यदि इन तीनों सज्जनोंके उठाये हुए मुद्दोंके सम्बन्धमें मेरे स्पष्टीकरणकी आवश्यकता हो तो मैं आपका पत्र मिलनेपर ऐसे किसी भी मुद्देके सम्बन्धमें अपने विचार प्रसन्नतापूर्वक प्रस्तुत करूँगा।

[अंग्रेजीसे]

सिलेक्ट डॉक्यूमेंट्स ऑन महात्मा गांधीज मूवमेंट इन चम्पारन, १९१७-१८

४९. पत्र : जमनादास गांधीको

मोतीहारी
माघ सुदी ८ [दिसम्बर २१, १९१७]

चि० जमनादास,

तुम्हें मैं अपनी इच्छाके अनुरूप पत्र नहीं लिख सका। मेवाको[4] पत्र लिखनेका मन करता है। मेरे साथ ऐसा होता है कि मैं अच्छा पत्र लिखनेके लोभमें नहीं लिखता और फिर साधारण पत्र लिखना भी रह जाता है। मेरी इच्छा है कि तुम पत्र-व्यवहारमें अनियमित न रहो। तुम्हारा अनुवाद मैंने नहीं पढ़ा। आज महादेवभाईको[5] सौंप रहा हूँ। वे तो [अवश्य ही] पढ़कर तुम्हें लिखेंगे। मैं भी पढ़ जाऊँगा।

१. डब्ल्यू० एस० इर्विन, मोतीहारी इंडिगो कन्सर्नके प्रबन्धक।
२. जे० वी० जेम्सन, दुल्का फैक्टरीके प्रबन्धक।
३. प्रिंगल केनेडी; विधान परिषद्के सदस्य।
४. जमनादास गांधीकी पत्नी।
५. महादेव हरिभाई देसाई।

लेकिन मुझे देर लगेगी। मेरे पास वालजीभाई[1] द्वारा किया गया अनुवाद भी है। वह देखनेके लिए तुम्हे भेजूंगा। तुम्हारे लिये नटेसनकी पुस्तक[2] भेज रहा हूँ।

तुम निश्चिंत होकर रहना और अपना कार्य करना। तुमपर डॉक्टरका बहुत स्नेह है। तुम हारोगे नही। यदि अपनी इच्छाके अनुरूप तुम कार्य नही कर पा रहे हो तो भी प्रामाणिक रूपसे प्रयत्न करनेवाला व्यक्ति अन्य व्यक्तियोपर अच्छा प्रभाव डालता ही है। मेवाकी स्थिति क्या है यह भी बताना। तुम्हारी तबीयत कैसी रहती है?

मेरी प्रवृत्तियाँ बढती जा रही है। मेरा सितारा बुलन्द है। इस बीच मेरे जो-जो आदर्श है उनसे देशको परिचित करानेके लिए मै अपने आपको खपाये दे रहा हूँ।

यहाँकी स्थितिका अन्दाज महादेवभाई तुम्हे देंगे। वे अभी-अभी आये है लेकिन पुराने जान पड़ते है।

मणिलालकी फीनिक्समें बडी कसौटी हो रही है। उसे तथा रामदासको पत्र लिखना। रामदासने जोहानिसबर्गमे एक दर्जीके यहाँ नौकरी कर ली है। बा और देवदास मेरे साथ कलकत्ते आ रहे है। मै वहाँ २० तारीख तक पहुँचूंगा।

बापूके आशीर्वाद

चि० मेवा,

मै पत्र न लिखूँ तो भी तुम लिखना। तुम मेरे साथ अकेले रह सको तो मै तुम्हे चम्पारनमें रखनेको तैयार हूँ। लेकिन यह जोखिम तुम्हारी इच्छा होनेपर ही उठाई जा सकती है। तुम फिलहाल जमनादासके साथ रहो, मै जानता हूँ कि इससे बढकर अच्छी बात और कोई नही हो सकती।

बापूके आशीर्वाद

गाधीजीके स्वाक्षरोमे मूल गुजराती पत्र (सी० डब्ल्यू० ५७०५) से।
सौजन्य नारणदास गाधी

१. प्रोफेसर वालजी गोविन्दजी देसाई, गुजरात कॉलेज, अहमदाबादमें कुछ काल तक अंग्रेजीके प्राध्यापक, नौकरीसे त्यागपत्र देकर गाधीजीके साथ शामिल हो गये। गाधीजी कृत **दक्षिण आफ्रिकाना सत्याग्रहनो इतिहास**, तथा अन्य रचनाओंके अनुवादक।

२. **स्पीचेज़ ऐंड राइटिंग्ज ऑफ महात्मा गांधी**।

५०. पत्र : अम्बालाल साराभाईको

मोतीहारी
दिसम्बर २१, १९१७

प्रिय भाई अम्बालालजी,

व्यापारके आपके कार्यके बीचमें पड़नेकी जरा भी इच्छा नहीं होती। फिर भी भाई कृष्णलालका[1] पत्र आज मिला है; वह ऐसा है कि मुझसे लिखे बिना नहीं रहा जा सकता। मेरा खयाल है कि श्रीमती अनसूयाबहनकी[2] खातिर भी जैसे बने बुनकरोंको सन्तुष्ट करना ही चाहिए। यह माननेका कोई कारण नहीं कि इन्हें सन्तुष्ट करनेसे दूसरे शोर मचायेंगे। ऐसा हो तो भी समयपर उचित कदम उठाया जा सकता है। मिल-मालिक मजदूरोंको दो पैसा अधिक देकर खुश क्यों न हों? उनका असन्तोष दूर करनेका एक ही राजमार्ग है: उनके जीवनमें प्रवेश कीजिये और प्रेमरूपी रेशमकी डोरसे उन्हें बाँधिए। हिन्दुस्तानके लिए इसमें असम्भव कुछ भी नहीं है। देशकी भलाईके लिए यदि पैसेका उपयोग करोगे तो वह अवश्य फल लायेगा। भाई, बहनका दिल दुखानेका कारण कैसे बन सकता है? और वह भी अनसूया-जैसी बहनका। मैंने तो उनकी आत्माको अत्यन्त पवित्र पाया है। उनका वचन आपके लिए आदेश बन जाये, तो यह भी अधिक नहीं होगा। इस प्रकार आपपर तो दोहरा बोझा है। कार्यकर्त्ताओंको खुश करना और बहनका आशीर्वाद लेना। मेरी धृष्टता भी दोहरी है। मैंने एक ही पत्रमें व्यापार और कौटुम्बिक व्यवहार दोनोंमें दखल दिया है। मुझे क्षमा कीजियेगा।

मोहनदास गांधीके वन्देमातरम्

[गुजरातीसे]
महादेवभाईनी डायरी, खण्ड ४

५१. पत्र : एच० कैलेनबैकको[3]

मोतीहारी
दिसम्बर २१, १९१७

प्रिय मित्र,

इधर कुछ दिनोंसे ढर्रा बिगड़-सा गया है। मैं इतना घूम रहा हूँ कि स्नेहपत्र लिखनेका अवकाश ही नहीं मिलता, खास तौरपर तब जब वे खो जाते हैं। पिछले

१. कृष्णलाल एन० देसाई; अहमदाबादके एक सार्वजनिक कार्यकर्त्ता गुजरात-सभाके एक मन्त्री।

२. अम्बालाल साराभाईकी बहन।

३. हरमान कैलेनबैक, जर्मन वास्तुकार। दक्षिण आफ्रिकामें गांधीजीके सहयोगी। ये भी गांधीजीके साथ ही दिसम्बर १९१४ में भारत आनेवाले थे। लेकिन महायुद्ध छिड़ जानेके कारण उन्हें पासपोर्ट नहीं मिला और वे इंग्लैंडमें नजरबन्द कर दिये गये थे। देखिए आत्मकथा खण्ड ४, अध्याय ३३ और खण्ड ८, पृष्ठ १४३।

तीन महीनोंमें मुझे तुम्हारे सिर्फ तीन ही पत्र मिले हैं। हाँ, पोलक और मिस विंटर-बॉटमने[1] तुम्हारे बारेमें मुझे लिखा था। तुमसे गले मिलनेको मेरा कितना जी हुआ करता है। यहाँ मुझे आये-दिन नये-नये अनुभव होते रहते हैं। इन सबमें तुम्हें अपना हिस्सेदार बनानेकी मेरी इच्छा हुआ करती है। किन्तु इस दानवी युद्धका कोई छोर ही नजर नहीं आता। सुलहकी तमाम बातोंसे तो दिलकी उलझनें बढ ही रही हैं। फिर भी समस्त मानव-प्रवृत्तियोंकी तरह इसका भी अन्त तो होगा ही। अगर हमारी मित्रता स्थान और कालका अन्तर सहन न कर सकी तथा इस उबा देनेवाली प्रतीक्षाके परिणाम-स्वरूप और भी दृढ एव शुद्ध न बन पाई तो वह बिलकुल निकम्मी ठहरेगी। आखिर हमारा यह शरीर है क्या? कल मैं पवनके मन्द झकोरोंमें सामनेके वृक्षोंकी ओर निहारता बैठा रह गया। मैंने देखा कि नित्य परिवर्तनशील इन विराट वृक्षोंमें ऐसी कोई चीज जरूर है, जो चिरकाल तक टिकी रहती है। हरएक पत्तेका अपना अलग जीवन होता है। वह गिरता है और सूखता है, किन्तु पेड़ जिन्दा रहता है। हरएक वृक्ष भी समयकी गतिसे या क्रूर कुल्हाड़ीके प्रहारसे मौतका शिकार होता है, किन्तु जगल, जिसका यह पेड़ एक हिस्सा है, जीवित रहता है। हम भी मानव-वृक्षके ऐसे पत्ते ही हैं। हम भले ही निष्प्राण हो जायें तो भी हममें जो सनातन तत्त्व है, वह अनन्त काल तक बिना किसी परिवर्तनके कायम रहता है। कल शामको इस तरह विचारमग्न होते हुए मुझे बड़ा आनन्द मिला। मुझे तुम्हारी याद आ गई और मैंने एक गहरी साँस ली। किन्तु मैंने तुरन्त ही अपनेको सँभाल लिया और अपने-आपसे कहा: "मैं जानता हूँ कि मेरा मित्र, कोई पार्थिव शरीर नहीं है, किन्तु उसमें जीवन सचारित करनेवाली आत्मा है।"

सस्नेह,

तुम्हारा पुराना मित्र,

[अंग्रेजीसे]

महादेवभाईकी हस्तलिखित डायरी
सौजन्य: नारायण देसाई

१. फ्लॉरेंस ए० विंटरबॉटम, नैतिकता समिति सघ, लन्दन (यूनियन ऑफ एथिकल सोसाइटीज) की मत्री।

५२. भाषण: अखिल भारतीय समाज-सेवा सम्मेलनम[1]

कलकत्ता
दिसम्बर २७, १९१७

. . . अबतक कॉलेज स्क्वेयरका मैदान एक सिरेसे दूसरे सिरे तक खचाखच भर गया था; श्री गांधी उस एकत्रित जनसमूहके समक्ष हिन्दीमें बोले। उन्होंने कहा कि "सम्मेलनके प्रस्तावित कार्यक्रमको कार्यान्वित करना सम्भव नहीं रह गया है; इसलिए अब किसी और समय किसी अन्य स्थानपर कार्यान्वित किया जायेगा।" कार्यक्रम स्थगित करनेकी घोषणा श्री विपिनचन्द्र पालने की। ठीक उसी समय श्रीमती बेसेंट, माननीय सी० पी० रामस्वामी ऐयर और डॉ० वाडिया आ पहुँचे, परन्तु उनका कॉलेज स्क्वेयरमें अथवा इन्स्टीच्यूट हॉलके अन्दर पहुँचना असम्भव हो गया था।

[अंग्रेजीसे]
बंगाली, २८-१२-१९१७

५३. भेंट: 'बंगाली' के प्रतिनिधिको[2]

कलकत्ता
दिसम्बर २७, १९१७

भेंट देते हुए गांधीजीने 'बंगाली' के प्रतिनिधिसे कहा कि मैं तो पूर्ण रूपसे इस बातके पक्षमें हूँ कि यह सम्मेलन कांग्रेस अधिवेशनके समाप्त होते ही उसी पडालमें किया जाये। विभिन्न दरोंपर बेची जानेवाली टिकटों द्वारा प्रवेश सीमित होना चाहिए। टिकटोंकी बिक्रीसे जो आय हो उसे समाज-सेवाके निमित्त रख दिया जाना चाहिए।

[अंग्रेजीसे]
बंगाली, २८-१२-१९१७

१. यह सम्मेलन २७ दिसम्बरको कलकत्ता विश्वविद्यालयके इन्स्टीच्यूट हॉलमें होनेवाला था, परन्तु गांधीजी तथा अन्य लोगोंका व्याख्यान सुननेके लिए आये हुए अपार जनसमूहको बैठनेकी जगह दे सकनेकी कठिनाईके कारण सम्मेलन स्थगित करना पड़ा था। गांधीजीने अपना भाषण कॉलेज स्क्वेयरमें दिया।

२. समाज-सेवा सम्मेलनके स्थगित किये जानेके बाद (देखिए पिछला शीर्षक), गांधीजीने बंगालीके प्रतिनिधिको जो भेंट दी थी, उसका संक्षिप्त विवरण ही उपलब्ध है।

५४. प्रस्ताव : भारतीय राष्ट्रीय कांग्रेसमें[1]

कलकत्ता
दिसम्बर २९, १९१७

यह महासभा इस वातपर पुन खेद प्रकट करती है कि दक्षिण आफ्रिकाके ब्रिटिश भारतीय अब भी निर्योग्यताओसे कष्ट पा रहे है। इनका उनके व्यापारपर महत्त्वपूर्ण प्रभाव पड़ता है और इनके कारण वहाँ उनका निवास कठिन हो जाता है एव साम्राज्य-के इन भागोमे उनके प्रवास और सचारपर अनुचित और बेजा प्रतिबन्ध लगते है। यह महासभा आशा करती है कि स्थानीय अधिकारी उन भारतीयोके प्रति अपने दायित्वको अनुभव करेंगे जिन्होने इन निर्योग्यताओके बावजूद एक दल संगठित करके युद्धमें पूरा भाग लिया है, वह यह भी आशा करती है कि उनपर दूसरे मामलोमे जो निर्योग्यताएँ लगी हुई है एव जिनकी शिकायत की गई है, वे उन्हे दूर कर देंगे। यह महा-सभा अध्यक्षको अधिकार देती है कि वे इस प्रस्तावका सार सम्बन्धित अधिकारियोको भेज दें।

[अंग्रेजीसे]

भारतीय राष्ट्रीय काग्रेसके १९१७में हुए ३२वें अधिवेशनकी रिपोर्ट।

५५. प्रस्ताव : अखिल भारतीय समाज-सेवा सम्मेलनमें[2]

कलकत्ता
दिसम्बर ३०, १९१७

सरकार तथा कुछ संस्थाओने दलित-वर्गोके उत्थान और शिक्षा-दीक्षाके लिए जो साधन प्रयुक्त किये है इस सम्मेलनकी रायमे उनसे जनसाधारणका ध्यान दो बातोकी ओर आकर्षित हुआ है, एक तो यह कि पतनकारी सामाजिक विषमता मौजूद है और दूसरे यह कि उनके परिणामस्वरूप देशकी सामान्य उन्नतिमें बाधा पड़ रही है। परन्तु, इस सम्मेलनकी रायमें सरकार द्वारा अबतक काममे लाये गये साधन उक्त बुराइयोको दूर करनेमें नितान्त अपर्याप्त रहे है। अतएव, यह सम्मेलन सरकार तथा समाज-सुधार-संस्थाओसे आग्रहपूर्वक निवेदन करता है कि (१) दलित-वर्गोको शिक्षित करनेके निमित्त

१. कलकत्तेमें राष्ट्रीय महासभा काग्रेसका जो ३२ वाँ अधिवेशन हुआ था उसमें यह तेरहवाँ प्रस्ताव था और इसे गाधीजीने पेश किया था। उन्होंने अपना भाषण हिन्दीमें दिया था।

२. यह सम्मेलन काग्रेस पंडालमें डॉ० पी० सी० रायकी अध्यक्षतामें हुआ था, अन्य लोगोंके साथ श्री रवीन्द्रनाथ ठाकुरने भी इसमें भाग लिया था। गाधीजी द्वारा पेश किये गये इस प्रस्तावका समर्थन नाटोरके महाराजाने किया था और एम० आर० जयकरने इसका अनुमोदन किया था।

और अधिक सुविधाएँ प्रस्तुत की जायें और (२) हरिजनोंकी निर्योग्यताओं और उनके प्रति बरते जानेवाले द्वेषभावको दूर करनेकी दृष्टिसे समस्त सार्वजनिक संस्थाओंमें कानूनन समानताका व्यवहार प्रचलित किया जाये।

[अंग्रेजीसे]

बंगाली, ५-१-१९१८

५६. भाषण: प्रथम बंग कृषि-विशेषज्ञोंकी परिषद्में[1]

कलकत्ता

दिसम्बर ३०, १९१७

... श्री गांधीने कहा "कृषि भारतीयोंका मुख्य व्यवसाय है और यह एक बहुत प्रतिष्ठित पेशा है। मैं किसानोंके साथ काम कर चुका हूँ और इसलिए मैं उनकी सब माँगों, शिकायतों, तकलीफों और जरूरतोंको जानता हूँ। मैं खुद भी शीघ्र ही कृषिका धन्धा शुरू करनेवाला हूँ और उसे सुधारनेके लिए जो-कुछ कर सकूँगा, करूँगा। मैं हृदयसे आशा करता हूँ कि काश्तकार लोगोंकी स्थिति शीघ्र ही सुधरने लगेगी। मैं और पंडित मालवीयजी कहीं और जानेके लिए एक साथ निकले थे और यहाँ आ पहुँचे हैं; इसलिए मैं यहाँ देरतक नहीं बोलूँगा।

[अंग्रेजीसे]

अमृतबाजार पत्रिका, ४-१-१९१८

५७. भाषण: राष्ट्रीय भाषा सम्मेलनमें[2]

दिसम्बर ३०, १९१७

लोकमान्य तिलक यदि हिन्दीमें बोलते तो बड़ा लाभ होता। लॉर्ड डफरिन तथा लेडी चेम्सफोर्डकी भाँति लो० तिलकको भी हिन्दी सीखनेका प्रयत्न करना चाहिए। रानी विक्टोरियाने भी हिन्दी सीखी थी। पण्डित मालवीयजीसे मेरी अर्जी है कि यदि वे कोशिश कर दें तो अगले वर्ष अन्य किसी भी भाषामें कांग्रेसके व्याख्यान न हों। मेरा यह झगड़ा है कि कल वे कांग्रेसमें हिन्दीमें क्यों नहीं बोले?

प्रताप, ७-१-१९१८

१. परिषद् श्री सी० आर० दासकी अध्यक्षतामें मुस्लिम लीगके पंडालमें हुई थी। इसके कार्यक्रममें लगभग ५,००० लोगोंने भाग लिया था, गांधीजी पंडित मदनमोहन मालवीयके साथ कुछ ही देरके लिए परिषद्में उपस्थित हुए थे।

२. कलकत्ताके अल्फ्रेड थियेटरमें, सम्मेलनके अध्यक्ष बाल गंगाधर तिलक थे। श्रीमती सरोजिनी नायडू और पण्डित मदनमोहन मालवीयने भी सम्मेलनमें भाग लिया था।

५८. प्रस्ताव: राष्ट्रीय भाषा सम्मेलनमें[1]

कलकत्ता
दिसम्बर ३०, १९१७

इस वस्तुस्थितिको ध्यानमें रखते हुए कि भारतके भिन्न-भिन्न प्रान्तोंमें बहुत बड़े पैमानेमें लोग हिन्दीका प्रयोग करते हैं और बहुसंख्यक लोग उसको आसानीसे समझ सकते हैं, इसको भारतकी सर्व सामान्य भाषा बनाना व्यावहारिक प्रतीत होता है।

[अंग्रेजीसे]

अमृतबाजार पत्रिका, १५-१-१९१७

५९. भाषण: ऑल इंडिया मुस्लिम लीगमें[2]

कलकत्ता
दिसम्बर ३१, १९१७

श्री गांधीने उर्दूमें दिये गये अपने भाषणमें कोरे प्रस्तावोंकी निरर्थकता बतलाते हुए निवेदन किया कि सबको कुछ ठोस कार्य करना चाहिए। प्रत्येक व्यक्ति चाहे हिन्दू हो अथवा मुसलमान, सरकारसे यह कह दे कि अगर वह अली भाइयोंको रिहा नहीं करती तो उनके साथ हम सबको भी नजरबन्द कर ले। विशेष हर्ष-ध्वनिके बीच गांधीजीने कहा, नजरबन्द किये गये मुसलमान लोगोंकी रिहाईके आन्दोलनमें प्रत्येक हिन्दू उनके साथ है।

[अंग्रेजीसे]

बॉम्बे क्रॉनिकल, १-१-१९१८

१. गांधीजी द्वारा पेश किया गया था।

२. गांधीजीने लीगके अधिवेशनमें दूसरे दिन भाग लिया था। उन्होंने अली भाइयोंके साथ किये जानेवाले व्यवहारके सम्बन्धमें भी कुछ शब्द कहे थे।

६०. भाषण: विश्वविद्यालय-भवनमें[1]

कलकत्ता
दिसम्बर ३१, १९१७

. . . भारतीयोके हिन्दीके ज्ञान की कमीपर खेद प्रकट करते हुए गांधीजीने कहा कि देश-सेवा करनेके लिए उत्सुक सब हैं, परन्तु राष्ट्रसेवा तबतक सम्भव नही, जबतक कोई राष्ट्रभाषा न हो। उन्होने कहा कि दुःखकी बात है कि हमारे बंगाली भाई राष्ट्रभाषाका प्रयोग न करके राष्ट्रीय हत्या कर रहे हैं। इसके बिना देशकी आम जनताके हृदयो तक नहीं पहुँचा जा सकता। इस अर्थमें बहुत लोगोके द्वारा हिन्दीको काममें लाया जाना मानवतावादके क्षेत्रकी बात हो जाती है।

इसके बाद गांधीजीने मानवतावादके दूसरे पहलूकी चर्चा की अर्थात् देवियोंकी मूर्तियोके आगे पशुओकी बलि चढाना और भोजनके लिए पशुओको कत्ल करना। हिन्दू शास्त्र वास्तवमें पशुओंकी बलि चढ़ानेका आदेश नहीं देते। यह वर्तमान प्रथा उन अनेक बातोमें से एक है जो हिन्दुत्वके नामसे चलती आ रही हैं। हिन्दू धर्म सही अर्थमें दो परिभाषाओं द्वारा व्यक्त किया गया है -- "अहिंसा परम धर्म है"[2] और "सत्यसे बढ़कर अन्य शक्ति नहीं।"[3] पशु-बलि-जैसी नृशंस प्रथा इन सिद्धान्तोके विपरीत बैठती है।

[अंग्रेजीसे]

अमृत बाजारपत्रिका, २-१-१९१८

६१. भाषण: अखिल भारतीय समाज-सेवा सम्मेलनमें

कलकत्ता
दिसम्बर ३१, १९१७

श्री गांधीने अध्यक्ष पद ग्रहण करते हुए निम्नलिखित भाषण दिया:

यदि मैं संगीत सुनना चाहूँ तो मुझे बंगालमें आना चाहिए। यदि मैं कविता सुनना चाहूँ तो भी मुझे बंगालमें आना चाहिए। भारत बंगालमें समाविष्ट है, परन्तु बंगाल भारतमें परिव्याप्त नही है। मैंने कुछ मारवाडी लडकोका गाना सुना। वह कुछ गँवारू-जैसा था। मैंने उन्हे सलाह दी कि वे बंगालियोमें घुलें-मिले।

१. बॉम्बे ऐंड बंगाल ह्यूमैनिटेरियन फण्ड्सके तत्त्वावधानमें आयोजित सभाकी अध्यक्षता गांधीजीने की थी। श्रोताओंके अनुरोधपर उन्होंने अंग्रेजीमें भाषण दिया। यह उस भाषणका सारांश है। उसके बाद पण्डित मदनमोहन मालवीयने हिन्दीमें भाषण दिया और पशु-बलिकी निन्दा की।

२. अहिंसा परमो धर्मः।

३. सत्यान्नास्ति परं बलम्।

उसके बाद उन्होंने निम्नलिखित अध्यक्षीय भाषण[1] दिया :

मित्रो,

आपने मुझे जो सम्मान दिया है उसके लिए मैं आपको धन्यवाद देता हूँ। इस सभाकी अध्यक्षताके निमन्त्रणके लिए मैं बिलकुल तैयार नही था। मै नही जानता कि मैं इस कार्यके लिए उपयुक्त भी हूँ। मैंने राष्ट्रीय सभा-सम्मेलनोमें हिन्दीका उपयोग करनेका निश्चय किया था। तभीसे मेरी इच्छा सदैव यह रहती है कि मैं अंग्रेजीमें न बोलूं। किन्तु मैं अनुभव करता हूँ कि मेरे लिए अध्यक्षीय भाषण हिन्दीमे देनेकी अनुमति माँगनेका समय अभी नही आया है। इसके अतिरिक्त मैं सम्मेलनोमें अधिक विश्वास भी नही करता। समाज-सेवाको यदि फलदायी बनाना हो तो वह मौन रहकर ही की जानी चाहिए। जब किसीको उसका पता कानो-कान भी न चले तभी वह सर्वोत्तम होती है। सर गिबलके कार्यको कोई भी नही जानता था, इसीलिए उसका प्रभाव हुआ। वे न तो प्रशंसासे बिगड सके और न निन्दासे रुक सके। यदि हमारी सेवा भी इसी तरहकी होती तो कितना अच्छा होता। ये विचार रखते हुए भी मैंने स्वागत-समितिके आदेशका पालन किया। यह बात नही कि ऐसा करते हुए मेरे मनमे बहुत-कुछ हिचक और शंका न हुई हो। इसलिए यदि आप यह देखें कि मैं सम्मेलनको आत्मविश्वास एवं निष्ठाके साथ उसके लक्ष्य तक पहुँचानेके योग्य पर्याप्त आग्रह नही दिखाता बल्कि इसकी अपेक्षा उसकी स्पष्ट आलोचना करता हूँ तो इसके लिए मुझे क्षमा करेंगे।

फिर, मैं समझता हूँ कि यदि मैं आपका ध्यान समाज-सेवाकी उन शाखाओंकी ओर आकर्षित करूँ जिनकी हमने अबतक न्यूनाधिक रूपसे उपेक्षा की है तो यह अत्यन्त उपयुक्त होगा।

समाजकी हम जो सबसे बड़ी सेवा कर सकते है वह यह है कि हमने अंग्रेजी भाषाकी शिक्षाके प्रति जो अन्धविश्वासपूर्ण सम्मान करना सीखा है उससे स्वयं मुक्त हो और समाजको मुक्त करे। अंग्रेजी हमारे स्कूलो तथा हमारे कॉलेजोमें शिक्षाका माध्यम हैं। यह देशकी आन्तरभाषा बनती जा रही है। हमारे सर्वोत्तम विचार इसीमे व्यक्त किये जाते हैं। लॉर्ड चैम्सफोर्डने यह आशा व्यक्त की है कि अंग्रेजी कुछ ही दिनोमें उच्च परिवारोंकी मातृभाषा बन जायेगी। अंग्रेजी प्रशिक्षणकी आवश्यकताके बारेमे इस प्रकारके विश्वासने हमें गुलाम बना दिया है। इसने हमें सच्ची राष्ट्रीय सेवाके अयोग्य बना दिया है। यदि हम स्वभावसे बाध्य न होते तो हम यह अवश्य ही देख सकते थे कि अंग्रेजीको शिक्षाका माध्यम बनानेके कारण हमारी प्रतिभा एकान्तिक हो गई है और हम जनतासे दूर जा पड़े हैं। इससे राष्ट्रका सर्वोत्तम मस्तिष्क निष्क्रिय हो गया है और जनताको नये उपलब्ध विचारोका लाभ नही मिल पाया। हमने ये पिछले ६० वर्ष विचित्र शब्दो तथा उनके उच्चारणोको सीखनेमे ही व्यतीत कर दिये, तथ्योको

१. यह अध्यक्षीय भाषण २७ दिसम्बरको सम्मेलनमें उद्घाटनके दिन दिया जाना था, किन्तु सम्मेलन स्थगित कर दिया गया था, देखिए "भाषण : अखिल भारतीय समाज-सेवा सम्मेलनमें", २७-१२-१९१७। फिर भी सम्मेलनके स्थगनकी उपेक्षा करके **न्यू इंडिया**ने इसे अपने २८ दिसम्बरके अंकमें प्रकाशित कर दिया था। गांधीजीने इस सम्मेलनकी अध्यक्षता वाई० एम० सी० ए० भवनमें की थी और उसीमें यह भाषण दिया था।

आत्मसात् नही किया। हमे अपने माता-पिताओसे जो शिक्षा मिली थी उसके आधार-पर हमने नया निर्माण नही किया है, बल्कि उस शिक्षाको ही लगभग भुला दिया है। इतिहासमे इस [मूर्खता] की तुलना नही है। यह एक दारुण राष्ट्रीय विपत्ति है। पहली और सबसे बडी समाज-सेवा जो हम कर सकते है वह यह है कि हम इस स्थितिसे पीछे हटे, देशी भाषाओको अपनाएँ, हिन्दीको राष्ट्रभाषाके रूपमे उसके स्वाभाविक पदपर पुन प्रतिष्ठित करे और सभी प्रान्त अपना-अपना समस्त कार्य अपनी देशी भाषाओमें तथा राष्ट्रका कार्य हिन्दीमे प्रारम्भ कर दें। हमें तबतक विश्राम नही लेना चाहिए जबतक कि हमारे स्कूलो और कॉलेजोमें हमें देशी भाषाओके माध्यमसे शिक्षा नही दी जाती। हमारे लिए अपने अग्रेज मित्रोके निमित्त भी अग्रेजीमे बोलना आवश्यक नही होना चाहिए। प्रत्येक अग्रेज शासनिक तथा सैनिक अधिकारीको हिन्दी जाननी चाहिए। बहुतसे अग्रेज व्या-पारी हिन्दी सीखते है, क्योकि उन्हे अपना व्यापार चलानेके लिए उसकी आवश्यकता होती है। ऐसा दिन अवश्य ही जल्दी आना चाहिए जब कि हमारी विधान सभाओमें राष्ट्रीय मामलोपर देशी भाषाओमें या हिन्दीमे, जहाँ जो भी उपयुक्त हो, बहस की जायेगी। अबतक तो जनसाधारण उनकी कार्रवाईसे अपरिचित रहे है। देशी भाषाओके समाचार-पत्रोने इस खराबीको दूर करनेका कुछ प्रयत्न किया है, किन्तु यह कार्य उनकी शक्तिसे परे है। "पत्रिका" का तीखा व्यग तथा "बगाली" का पाण्डित्य उन्ही लोगोके लिए है जिनके कान अग्रेजीके अभ्यस्त है। सुसस्कृत विचारकोके इस प्राचीन देशमें ठाकुर[1] या बसु[2] या रायको[3] अपने बीच पाकर हमें आश्चर्य नही करना चाहिए। फिर भी दु खद तथ्य यह है कि यहाँ ऐसे लोग बहुत कम है। यदि मैंने ऐसे विषयकी, जो आपकी दृष्टिमे मुश्किलसे ही समाज-सेवाका अग बन सकता है, चर्चा बहुत लम्बी कर दी है तो आप इसके लिए मुझे क्षमा करे। फिर भी मैंने इस विषयकी चर्चा प्रमुख रूपसे की है, क्योकि मेरा विश्वास है कि हमारी शिक्षाके इस मूलभूत दोषके कारण सभी राष्ट्रीय प्रवृत्तियो-को वास्तविक क्षति पहुँचती है।

अब मै समाज-सेवाके अधिक परिचित विषयोकी चर्चा करता हूँ। इनकी सूची इतनी लम्बी है उसे सोचकर भय लगता है। मै इनमें से केवल उन्हीको चुनूंगा जिनका मुझे कुछ ज्ञान है।

दुर्भिक्ष तथा बाढ-जैसे कभी-कभी आनेवाले सकटोमें कार्य करना नि सन्देह आवश्यक और अत्यन्त प्रशसनीय है। किन्तु इससे कोई स्थायी परिणाम नही निकलता। समाज-सेवाके ऐसे क्षेत्र है जिनमे सभव है, प्रसिद्धिकी प्राप्ति न हो, किन्तु जिनसे स्थायी परिणाम निकल सकते है।

सन् १९१४ में ४६,३९,६६३ व्यक्ति हैजा, बुखार तथा प्लेगके शिकार हुए। यदि इतने लोग ऐसे युद्धमें, जो इस समय यूरोपका विनाश कर रहा है, मोर्चोपर मरते तो हमारी कीर्ति चारो ओर फैलती और स्वराज्यके प्रेमियोको अपने उद्देश्यके समर्थनमें

१. रवीन्द्रनाथ ठाकुर
२. जगदीशचन्द्र बसु
३. प्रफुल्लचन्द्र राय

अधिक युक्तियाँ देनेकी आवश्यकता न होती। ये ४६,३९,६६३ लोग वस्तुत. घुल-घुलकर मरे। किसीने भी उनकी मृत्युपर आँसू नही बहाये और इससे हमे अप्रतिष्ठाके सिवा और कुछ नही मिला। उस दिन एक प्रसिद्ध अग्रेजने कहा था कि हम अंग्रेजोने आपके लिए सब-कुछ सोचा-विचारा किन्तु आप हाथपर-हाथ धरे बैठे रहे। उसने आगे कहा कि बहुतसे अग्रेजोने अपने इग्लैडके अनुभवोके आधारपर अपनी रायें कायम की और जिन खराबियोकी उन्होने जाँच-पड़ताल की थी उनके बहुत कठिन और मँहगे उपाय बताये है। उपर्युक्त कथनमें बहुत-कुछ सचाई है। दूसरे देशोमे सुधारकोने महामारियोको काबूमे कर लिया है। किन्तु यहाँ अग्रेजोने प्रयत्न किया है और उसमे वे असफल रहे है। उन्होने भारत तथा यूरोपके बीच जो जलवायु-सम्बन्धी तथा अन्य बहुत बडे अन्तर है उनकी उपेक्षा करके पश्चिमी देशोके आधारपर विचार किया है, किन्तु हमारे डॉक्टरो तथा वैद्योने प्राय कुछ नही किया। मुझे विश्वास है कि जहाँ अग्रेज असफल हुए है वहाँ यदि प्रथम श्रेणीके आधे दर्जन डाक्टर भी इन तीनो अभिशापोको दूर करनेके कार्यमें अपने जीवन लगा दें तो उन्हे सफलता मिल जायेगी। मै यह सुझाव देना चाहता हूँ कि इसका उपाय उपचारोकी खोज करना नही, बल्कि रोगोकी रोक-थामके तरीके खोज निकालना, या वस्तुत उन तरीकोको लागू करना है। मै 'लागू करना' शब्दोका प्रयोग करना अधिक ठीक समझता हूँ, क्योकि उपर्युक्त साक्षीके आधारपर मै जानता हूँ कि प्लेग (और मै इसके साथ हैजा और मलेरियाको भी जोडता हूँ) का निवारण बिलकुल आसान है। रोकथामके तरीकोके बारेमे किसी प्रकार भी विचार-विरोध नही है, हम केवल उन्हे उपयोगमे नही लाते। हमे निश्चय हो गया है कि जनसाधारण उन तरीकोको नही अपनायेंगे। किन्तु यह उनपर सबसे बड़ा मिथ्या आरोप है। यदि हम केवल नम्र बनकर उनके पास जायें तो उनका मन आसानीसे जीत सकते है। सचाई यह है कि हम इस कामकी अपेक्षा सरकारसे करते है। मेरे विचारमें इस मामलेमें मार्ग-दर्शन सरकार नही कर सकती। यदि हम मार्ग-दर्शन कर सकें तो वह हमारा अनुसरण कर सकती है और हमे सहायता दे सकती है। फिर तो यहाँ हमारे डॉक्टरोके लिए काफी काम है और उन कार्यकर्त्ताओके लिए भी काफी काम है जो उनकी सहायता करेंगे। मै देखता हूँ कि बगालके लोग इस दिशामें कुछ-कुछ काम कर रहे है। मै कह सकता हूँ कि इस समय स्वयसेवकोका एक छोटा-सा किन्तु उत्साही दल चम्पारनमे इस प्रकारका कार्य करनेमें व्यस्त है। दलके सदस्य विभिन्न गाँवोंमें नियुक्त कर दिये गये है। वहाँ वे ग्रामीण बच्चोको पढाते है, बीमारोको औषधिकी सहायता देते है और ग्रामीणोको उनके कुओ तथा सड़कोको साफ करके एव मनुष्यके मैलेकी व्यवस्था आदि समझाकर स्वास्थ्य-विज्ञानकी व्यावहारिक शिक्षा देते है। भविष्यमें जो परिणाम होगे उनके बारेमें अभी कुछ कहा नही जा सकता, क्योकि अभी तो यह इस प्रयोगका आरम्भ ही है। यह सम्मेलन डॉक्टरोकी एक समिति नियुक्त कर सकता है जो वहाँ जाकर तत्काल ग्रामीण स्थितिका अध्ययन करे और कार्यकर्त्ताओ तथा आम जनताके लिए हिदायतोका एक पाठ्यक्रम तैयार करे। इस समितिकी नियुक्ति उपयोगी होगी।

रेलवेके तीसरे दर्जेके यात्री जिस महाकष्टको भोग रहे है इससे उन्हे मुक्ति दिलाकर कार्यकर्त्ता उनकी खासी सेवा कर सकते है। फिर चाहे वे पूरा समय काम करते हो

चाहे कुछ समय। उनके लिए इस कार्यकी ऐसी अच्छी सुविधाएँ मौजूद हैं जैसी अन्य किसी कार्यकी नहीं। मुझे यह कष्ट है, इसलिए मैं इसे बहुत अनुभव करता हूँ, ऐसी बात नहीं है, बल्कि चूँकि मैं इसे बहुत अनुभव करता हूँ इसलिए मैंने इसे जानबूझकर स्वय अपने ऊपर लिया है। यह मामला देशके करोडो गरीब तथा मध्यमवर्गीय भाइयोंको प्रभावित करता है। वे विवश होकर जो तमाम कष्ट तथा अपमान सह लेते हैं उसके कारण प्रत्यक्षत. राष्ट्रकी दशा उसी प्रकार गिरती जा रही है, जैसे हमारे क्रूर व्यवहारसे तथाकथित दलित-वर्ग वैयक्तिक सफाईके नियमों तथा आत्मसम्मानके विचारके प्रति उदासीन हो गये हैं। जिन्हें रेलके मनहूस डिब्बेमें बैठने लायक जगह पानेके लिए सदा लडना-झगड़ना पड़ता है, जिन्हें खडे होने लायक जगह पानेके उद्देश्यसे खिडकीमें से कुछ कह सकनेसे पहले गाली-गलौज करनी पड़ती है और बुरा-भला कहना पडता है, जिन्हें धूलमें लेटे-लेटे यात्रा करनी पड़ती है, जो कुत्तोंकी तरह खाना लेते और खाते हैं, जिन्हें शारीरिक शक्तिमें अपनेसे अधिक शक्तिशाली लोगोंके सामने झुकना पडता है और भेड-बकरियोंकी तरह ठसाठस भरे डिब्बोंमें कई-कई रातें बैठे-बैठे ऊँघ और थोड़ा-बहुत सोकर बितानी पड़ती हैं उनकी अधोगति अवश्यम्भावी है। रेलके कर्मचारी उन्हें बुरा-भला कहते हैं और ठगते हैं। हावड़ासे लाहौर जानेवाली रेलगाड़ीमें हमारे काबुली भाई तीसरे दर्जेके यात्रियोंके दुःखोंकी परिसीमा ही कर देते हैं। वे जिन डिब्बोंमें घुस जाते हैं उनपर पूरा कब्जा जमा लेते हैं। कोई उनका विरोध करे, यह सम्भव नहीं। वे नाममात्रका बहाना मिलते ही गालियाँ देते हैं और हिन्दी भाषाके समस्त अश्लील शब्दोंका उपयोग करते हैं। यदि प्रतिकार किया जाये या किसी तरहका विरोध किया जाये तो मारपीट करनेमें भी नहीं हिचकिचाते। वे अच्छी जगहोंपर जबरदस्ती कब्जा कर लेते हैं और डिब्बोंमें भीड़ होनेपर भी पैर फैलाकर सोनेकी जिद करते हैं। उनकी दृष्टिमें किसी भी डिब्बेमें अधिक भीड़ नहीं होती और वे सभीमें घुस जाते हैं। नितान्त नि सहाय होनेके कारण ही मुसाफिर उनकी सारी भयानक ढिठाईको धीरजके साथ सहते हैं। यदि उनमें सामर्थ्य होता तो वे गालियाँ देनेका साहस करनेवाले व्यक्तिको, जैसे ये काबुली करते हैं, धक्के मार कर गिरा देते, किन्तु वे शारीरिक दृष्टिसे किसी प्रकार भी काबुलियोंके मुकाबलेके नहीं होते और हर काबुली मैदानी यात्रियोंसे, चाहे उनकी संख्या कितनी ही बड़ी क्यों न हो, अपनेको अधिक शक्तिशाली समझता है। यह ठीक नहीं है। इस आतकवादका प्रभाव राष्ट्रीय चरित्रके लिए पतनकारी हुए बिना नहीं रह सकता। हम थोडेसे शिक्षित लोगोंका कर्त्तव्य है कि यात्रा करनेवाले लोगोंको इस अत्याचारसे मुक्त करें। मेरा विश्वास है कि काबुली विवेकसे वशमें किये जा सकते हैं। वे ऐसे लोग हैं जो ईश्वरसे डरते हैं। यदि आप उनकी भाषा जानते हैं तो आप उनके सद्भावको जागृत कर सकते हैं। किन्तु वे प्रकृति माँके बिगड़ैल बेटे हैं। हममें जो कायर हैं वे नि.सन्देह इनके शारीरिक बलका उपयोग अपने जघन्य उद्देश्योंके लिए करते हैं। और फलस्वरूप अब ये सोचने लगे हैं कि वे गरीबोंके साथ जैसा चाहें व्यवहार कर सकते हैं और अपनेको इस देशके कानूनसे परे मान सकते हैं। यहाँ समाज-सेवाका काम बहुत है। इस तरहका कार्य करनेके लिए स्वयंसेवक गाड़ियोंमें जा सकते हैं और लोगोंमें कर्त्तव्यकी भावना पैदा कर सकते हैं। वे अधिक भीड़-भाड़को दूर करनेके लिए गार्डों और अन्य अधिकारियोंको बुला

सकते है और ऐसी व्यवस्था कर सकते है कि मुसाफिर बिना किसी सघर्षके गाड़ियोमे चढें और उतरें। यह स्पष्ट है कि जबतक काबुलियोको धैर्यपूर्वक सद्व्यवहार करना नही सिखाया जाता तबतक उनका डिब्बा अलग रहना चाहिए और उन्हे किसी अन्य डिब्बेमें घुसनेकी अनुमति नही होनी चाहिए। अतिरिक्त स्थानकी व्यवस्थाको छोडकर रेलयात्राकी अन्य सभी खराबियाँ तुरन्त दूर की जानी चाहिए। यह तो बहुत दिनोसे चलता आ रहा है, इस अन्यायका कोई समाधान नही है। अन्याय शाश्वत अधिकार नही बन सकता।

दलित वर्गोकी समस्या भी कम महत्त्वपूर्ण नही। हिन्दू समाजने उन्हे जिस स्थितिमे पहुँचा दिया है उससे उन्हे ऊपर उठाना हिन्दू धर्मपर से एक बहुत बडे कलकको दूर करना है। इन वर्गोके साथ किया जानेवाला वर्तमान व्यवहार धर्म और मानवताके प्रति किया जानेवाला पाप है।

किन्तु इस कार्यके लिए उत्कृष्टतम सेवाकी आवश्यकता होती है। उनके लिए मात्र स्कूल खोल देनेसे हमारी प्रगति नहीके बराबर ही होगी। हमें निश्चित रूपसे जन-साधारण और रूढिग्रस्त लोगोके रुखमें परिवर्तन लाना होगा। मै बता ही चुका हूँ कि हम इन दोनोसे अलग हो गये है। उनपर हमारा प्रभाव नही पडता। हम ऐसा तभी कर सकते है जब हम उनसे उन्हीकी भाषामें बोलें। जिन भारतीयोका आगलीकरण हो चुका है उनके कथनका इनपर प्रभाव नही पड सकता। यदि हम हिन्दू धर्ममें विश्वास करते है तो हमें उनके पास हिन्दुओंके ढगसे जाना चाहिए। हमे तपस्या करनी चाहिए और हिन्दू धर्मको अकलुषित रखना चाहिए। अन्धविश्वासपूर्ण तथा अज्ञानमय धर्मनिष्ठाके विरुद्ध सज्ञान धर्मनिष्ठा खडी की जानी चाहिए। किसी भी सामाजिक संगठनके लिए हमारी कुल जनसख्याके पाँचवे भागको उपर्युक्त सामाजिक स्थितिमें पुनः प्रतिष्ठित करना एक योग्य कार्य है।

कलकत्तेकी बस्तियो तथा बम्बईकी चालोमे सेवा करनेके लिए नैष्ठिक समाजसेवी कार्यकर्त्ताओंकी आवश्यकता है। उनमें हमारे शिशु जल्दी ही मौतके मुँहमें चले जाते हैं और उनमें दुराचार, अध पतन तथा गन्दापन पनपता और बढता है।

हमारी शिक्षाकी दोषपूर्ण प्रणालीके कारण उत्पन्न होनेवाली मूलभूत बुराईको छोडकर मैंने अबतक उन बुराइयोका उल्लेख किया है जिनको दूर करनेके लिए जन-साधारणकी सेवा करनेकी आवश्यकता है। शायद विशिष्ट वर्गोकी ओर भी जनसाधारण-की अपेक्षा कम ध्यान देनेकी आवश्यकता नही है। मेरे विचारमें सभी बुराइयाँ बीमा-रियोकी तरह एक ही बुराई या बीमारीकी निशानी है। वे विभिन्न माध्यमोसे विभक्त होनेके कारण अलग-अलग दिखाई देती हैं। मूलभूत बुराई है सच्ची आध्यात्मिकताका विनाश। किन कारणोसे यह विनाश हुआ है इसका विवेचन मैं इस मचसे नही कर सकता। हमारे पूर्वजोकी सत्य, अहिंसा तथा ब्रह्मचर्यकी अखण्ड शक्तिमे जो अत्यन्त सशक्त आस्था थी वह हममें से चली गई है। हमे उनपर कुछ-कुछ विश्वास तो जरूर है। नीतिके रूपमें वे सर्वोत्तम है, किन्तु यदि हमारा अनुशासनहीन विवेक उनके उल्लंघनका आदेश दे तो हम उनका उल्लंघन कर सकते हैं। हममें यह अनुभव करने योग्य श्रद्धा नही है कि यद्यपि वर्तमान स्थिति निराशाजनक लगती है, फिर भी यदि हम सत्य या

अहिंसाके आदेशोका अनुसरण करे, या ब्रह्मचर्यका पालन करे तो अन्तिम परिणाम अवश्य-मेव अच्छा होगा। जिन लोगोकी आध्यात्मिक दृष्टि धुँधली पड गई है वे भावी हितकी रक्षा करनेकी चिन्ता नही करते। उन्हे प्राय वर्तमान हित ही दिखाई देता है। जो व्यक्ति हमें हमारी प्राचीन आध्यात्मिकतामें पुन प्रतिष्ठित कर देगा वह सबसे बडी समाज-सेवा करेगा। किन्तु चूँकि हम क्षुद्र मानव है, इसलिए हमारे लिए इतना ही पर्याप्त है कि हम इस हानिको स्वीकार करे और ऐसे तरीकोसे, जो हमारे सम्मुख है, उस व्यक्तिके लिए मार्ग तैयार करे जिसकी शक्तिसे हम अनुप्राणित हो और अपने विवेकके बलपर स्पष्ट अनुभव करने योग्य बनें।

अब एक दृष्टि विशिष्ट वर्गोपर डालें। मै देखता हूँ कि राजा-महाराजा अपने सम्पत्ति-साधनोको तथाकथित बेकार खेलोपर और शराबखोरीमें नष्ट कर रहे है। उन दिन मुझे बताया गया कि कोकीनकी कुटेवसे राष्ट्रका पौरुष नष्ट हो रहा है। यह कुटेव शराबखोरीकी लतकी तरह बढती जा रही है और इसका प्रभाव शराबखोरीसे भी अधिक घातक होता है। समाज-सेवीके लिए इस बुराईकी ओरसे आँखें मूँद लेना सम्भव ही नही है। हममें पश्चिमका अन्धानुकरण करनेका साहस नही। हमारा राष्ट्र ऐसा है जिसका गौरव तथा आत्मसम्मान चला गया है। जब हमारी जनसख्याका दसवाँ भाग लगभग भूखो मर रहा है तब हमारे लिए विलासितामें पड़नेका अवकाश ही कहाँ है। पश्चिमी देश जिस कार्यको हानिकी आशकाके बिना कर सकते है, वह हमारे लिए विनाशकारी बन सकता है। जो बुराइयाँ समाजके उच्च वर्गको नष्ट कर रही है उनके निराकरणका उपाय करना एक साधारण कार्यकर्ताके लिए कठिन है। उनके प्रति कुछ हदतक हमारे मनमें आदरका भाव बन गया है। किन्तु ये बुराइयाँ इस सम्मेलनके क्षेत्रसे बाहर नही होनी चाहिए।

हिन्दू और मुसलमान दोनो जातियोकी स्त्रियोके दर्जेका प्रश्न भी उतना ही महत्त्वपूर्ण है। उन्हे अपने पतियोंके साथ पुनर्निर्माणमें पूरा भाग लेना चाहिए या नही लेना चाहिए? उन्हे मतदानका अधिकार अवश्यमेव दिया जाना चाहिए। अब हम उनसे गुडियो और दासियो-जैसा व्यवहार करते नही रह सकते। यदि ऐसा करेगे तो समाज-रूपी शरीर सामाजिक अर्धांग रोगसे ग्रस्त रहेगा। और यहाँ फिर मै सुधारकको यह सुझाव देना चाहता हूँ कि स्त्रियोकी स्वतत्रताका मार्ग शिक्षा नही है, बल्कि पुरुषोके रुखमें परिवर्तन तथा तदनुरूप व्यवहार है। शिक्षा आवश्यक है, किन्तु वह स्वतन्त्रताके बाद आनी चाहिए। हम साहित्यिक शिक्षाके द्वारा अपने स्त्री समाजको उपयुक्त स्थानपर पुन प्रतिष्ठित किये जाने तक नही ठहर सकते। साहित्यिक शिक्षाके बिना भी हमारी स्त्रियाँ ससारके अन्य सभी देशोकी स्त्रियोके समान ही सुसस्कृत है। इसका उपचार बहुत-कुछ उनके पतियोके हाथोमें है।

जब मै देशमें भ्रमण करता हूँ और निर्जीव मासहीन और चमडेमें से उभरी हुई पसलियोके बैलोको बोझसे लदी गाडियाँ खीचते हुए या खेतमें हलमें जुते हुए देखता हूँ तो मेरा खून खौलने लगता है। अपने मवेशियोकी नस्लको उन्नत करने, उन्हे उनके गोपूजक स्वामियोके क्रूर व्यवहारसे मुक्ति दिलाने तथा कसाईखानोसे उनकी रक्षा करनेसे

हमारी गरीबीकी आधी समस्या हल हो सकती है।...हमे लोगोको मवेशियोसे दया-पूर्वक काम लेना सिखाना है और सरकारसे देशके चरागाहोको सुरक्षित रखनेकी प्रार्थना करनी है। गोरक्षा आर्थिक दृष्टिसे आवश्यक है। किन्तु गोरक्षा जोर-जबरदस्तीसे नही की जा सकती। यह तभी हो सकती है जब हम गायोको कसाईखानोसे बचानेके लिए अपने अंग्रेज मित्रो तथा अपने मुसलमान भाइयोकी सद्भावनाको उद्बोधित करे। यह प्रश्न पिंजरापोलो तथा गोरक्षा समितियोकी व्यवस्थाके पूर्ण सुधारका प्रश्न है। इस अत्यन्त कठिन समस्याके समुचित समाधानका अर्थ है हिन्दुओ और मुसलमानोके बीच पूर्ण एकताकी स्थापना तथा बकरीदके झगडोकी समाप्ति।

मेरी प्रार्थनापर बहुतसे सघोने जो साहित्य मुझे भेजा था उसे मैने सरसरी निगाहसे देखा है। ये संघ प्रशंसनीय सामाजिक सेवा कर रहे है। मै देखता हूँ कि कुछ सघोके कार्यक्रममें उन विषयोमें से, जिनका मैने यहाँ उल्लेख किया है, बहुतसे विषय शामिल है। ये सभी सघ असाम्प्रदायिक है और देशके प्रसिद्ध स्त्री-पुरुष उनके सदस्य है। इसलिए ऐसी सेवाकी बहुत गुजाइश है जिनका सुदूरगामी प्रभाव हो सकता है। किन्तु यदि कार्यको अपना प्रभाव राष्ट्रपर छोड़ना है तो, हमारे पास ऐसे कार्यकर्त्ता होने चाहिए, जो श्री गोखलेके शब्दोमें कहे तो, इस कार्यके निमित्त अपना जीवन अर्पित कर दे। मुझे ऐसे कार्यकर्त्ता दीजिए और मै वचन देता हूँ कि वे देशको उन सभी बुराइयोसे मुक्ति दिला देंगे जिनसे यह पीड़ित है।

[अंग्रेजीसे]

अमृतबाजार पत्रिका, २-१-१९१८

६२. पत्र : देवदास गांधीको

साबरमती

[१९१७ के अन्तमें]

चि० देवदास,

तुम्हारे पत्रकी राह देख रहा हूँ। तुम्हारा क्या कार्यक्रम है, लिखना। छोटालालकी, सुरेन्द्रकी और अपनी तबीयतका समाचार देना। जो कपड़ा वहाँ बनाया गया हो उसका नमूना भेजना। स्त्रियोकी पाठशालामें अवन्तिका बहन क्या काम कर रही है?

यहाँसे अब मेरे पास लिखनेको बचा ही क्या है? महादेवभाई तुम्हे खबरोसे शराबोर किये है।

जो हिन्दी अध्यापक चला गया था वह वापस आ गया है। मुझे विश्वास है कि हमारी पाठशाला लगभग पूर्णत्वको प्राप्त होगी। प्रयत्नमें तो विशेष कुछ बाकी नही रहा। दूसरी जमीन खरीदी है।

बापूके आशीर्वाद

[पुनश्च :]

चि० छगनलाल अब अनसूया बहनके पास रहता है।

ऊपरका पत्र लिखनेके बाद तुम्हारा पत्र मिला। तुम्हारे उद्‌गारोंसे मुझे बहुत सन्तोष हुआ है। किन्तु तुम्हारे अक्षरोंसे उतना ही असन्तोष हुआ। तुम अक्षर सुधारो। मुझे तुम्हारी खाँसीसे हमेशा चिन्ता बनी रहती है। खाँसी खत्म होनी ही चाहिए। तुम श्वासोच्छ्वास पूरी तरह लेते हो? जब खाँसीका दौरा हो तब दो-तीन दिन अलोना भोजन लेकर देखो। दूध और घी भी छोड़ दो, केवल दलिया और शाक खाओ। ऐसा करनेमें शरीर स्वस्थ हो जायेगा और फिर धीरे-धीरे और अच्छा होता जायेगा। लेकिन सबसे अच्छा तो यह है कि खाँसी जड़से चली जाये। उसको नष्ट करनेके लिए जब वह [खाँसी] न हो तब पूरी कोशिश की जानी चाहिए। उसमें मुख्य प्रश्न श्वास लेनेका है। श्वास लेते समय लापरवाही मत बरतना। क्या तुम सोते समय मुँह बन्द रखते हो या सिर खुला रखते हो?

बापूके आशीर्वाद

गांधीजीके स्वाक्षरोंमें मूल गुजराती पत्र (जी० एन० २०२६) की फोटो-नकलसे।

६३. पत्र : जे० एल० मैफीको

अहमदाबाद
जनवरी १, १९१८

सेवामें
जे० एल० मैफी, सी० आई० ई०, आई० सी० एस०
परमश्रेष्ठ वाइसरायके निजी सचिव,
दिल्ली

[प्रिय श्री मैफी]

परमश्रेष्ठको ऐसे अवसरपर, जब कि वे बहुत-से कठिन कार्योंमें व्यस्त हैं, कष्ट देते हुए मुझे दुःख होता है। किन्तु मेरा विचार है कि यह पत्र लिखकर मैं सेवा ही कर रहा हूँ। कहनेकी आवश्यकता नहीं कि मैं सर्वश्री मुहम्मदअली तथा शौकत-अलीकी रिहाईके आन्दोलनका ध्यानपूर्वक अध्ययन करता रहा हूँ। जब मैं कलकत्तेमें ठहरा था, उनकी मातासे मिला था। उनसे मैंने अली भाइयोंकी स्थितिके बारेमें जानकारी प्राप्त की। उन्होंने मुझे पूर्ण विश्वास दिलाया कि उनके पुत्र ब्रिटिश राज्यके द्रोही नहीं हैं और सुधार-योजनामें अली भाइयोंका मन्तव्य ब्रिटिश सम्बन्धको स्थायी बनाये रखना है। मुस्लिम लीगके यहाँ होनेवाले अधिवेशनोंमें मैं जाता रहा हूँ और प्रमुख मुसलमानोंसे भी मैं मुक्त भावसे मिलता-जुलता रहा हूँ। यह मेरा दृढ़ मत है कि दोनों भाइयोंको लगातार नजरबन्द रखने और रिहा करनेसे इनकार करनेके कारण

असन्तोष और क्षोभका भाव प्रतिदिन अधिकाधिक बढता जा रहा है। मुसलमान, और मुसलमान ही क्यो हिन्दू भी, उनकी नजरबन्दीसे बहुत नाराज है। मेरा विश्वास है कि यह स्वस्थ भावना नही है। इसमे कोई सन्देह नही कि मुसलमान बहुत क्षुब्ध है। मेरा विश्वास है कि दोनो भाइयोकी रिहाईसे यह भावना काफी हदतक शान्त हो जायेगी। जबतक युद्ध चलता रहेगा तबतक इससे सम्पूर्ण रूपसे शान्ति नही होगी। अली-भाइयोकी रिहाईके सम्बन्धमे लीगने जो प्रस्ताव पास किया है मुझे उसका समर्थन करनेका गौरव प्राप्त हुआ था।[1] जब उनकी माताका भाषण पढा जा रहा था, श्रोतागण रो रहे थे।

मै सरकारको उनके भावी आचरणके सम्बन्धमे समुचित आश्वासन दिलानेके लिए तैयार हूँ। मै अनुभव करता हूँ कि स्वस्थ सार्वजनिक जीवनके लिए यह आवश्यक है कि या तो दोनो भाइयोको छोड़ दिया जाये या उनपर उचित रूपसे मुकदमा चलाकर उन्हे सजा दी जाये। इस समय सार्वजनिक रूपसे मुकदमा चलाने और उससे सम्बद्ध परिणामोके खतरेको मै भलीभाँति समझता हूँ। किन्तु तब यह भी निश्चित है कि उन्हे लगातार-बन्दीगृहमे रखना भी कम खतरनाक नही है। इसलिए मेरा सुझाव है कि मुझे छिन्दवाडा जाकर अली-भाइयोसे मिलनेकी अनुमति दी जाये। उनकी राज-भक्तिके बारेमे मै उनसे एक सार्वजनिक घोषणा कराऊँगा, जिसके आधारपर, मेरे नम्र विचारमे, सार्वजनिक शान्तिको जोखिममे डालनेका खतरा उठाये बिना उन्हे छोड़ा जा सकता है।

इसके अलावा, इतना और कह दूँ कि मेरा अली-भाइयोसे घनिष्ठ परिचय है। अपने धर्ममे उनकी गहरी आस्था है और इतनी ही गहरी आस्था भारतके प्रति भी है। मै यह कहनेका साहस करता हूँ कि वे मेरे सामने ऐसा वक्तव्य नही देगे जिसपर चलनेके लिए वे पूर्ण रूपसे सहमत न हो। इसलिए मै आशा करता हूँ कि मैने जिस अनुमतिकी प्रार्थना की है, वह मुझे दे दी जायेगी। क्या आप मेरी इस प्रार्थनाको परमश्रेष्ठके सामने रखनेकी कृपा करेगे? कहनेकी आवश्यकता नही कि यदि दिल्लीमें मेरी उपस्थितिकी आवश्यकता हो तो मै बड़ी खुशीसे शीघ्र ही वहाँ आ जाऊँगा। इस मासकी १० तारीख तक मेरा पता अहमदाबादका होगा और १३ तारीखके बाद मोतीहारी, चम्पारन।

हृदयसे आपका,

गाधीजीके स्वाक्षरोमे दफ्तरी अंग्रेजी प्रति (एस० एन० ६४२४) की फोटो-नकलसे; तथा नेशनल आर्काइव्ज ऑफ इडिया ' होम, पोलिटिकल (डिपोजिट) जनवरी १९१८, स० ३१ से भी।

१. मुस्लिम लीगके १९१७ में हुए कलकत्ता-अधिवेशनमें।

६४. पत्र : भगवानजी मेहताको

मोतीहारी

अगहन वदी १४ [जनवरी १, १९१८]

भाईश्री भगवानजी,

काठियावाडका सवाल मेरे मनमें हमेशा बना ही रहता है।[1] अनुकूल समयकी बाट जोह रहा हूँ। कच्छ-काठियावाड़ मंडलकी हलचलोंमें मैं फिलहाल अपना योग नहीं देना चाहता; मुझे लगता है कि यह संस्था जो करना चाहती है उसका समय अभी आया नहीं है। मैंने अपना यह मत मंडलके व्यवस्थापकोंको भी बता दिया है।

मोहनदासके वन्देमातरम्

गांधीजीके स्वाक्षरोंमें मूल गुजराती पत्र (सी० डब्ल्यू० ३०२६) से।
सौजन्य : नारणदास गांधी

६५. भाषण : अहमदाबादकी सभामें[2]

अहमदाबाद

जनवरी १, १९१८

आजका कार्य बड़े ही महत्त्वका है; क्योंकि यह स्वराज्यका ही कार्य है। इसमें हम किसी प्रकारकी अतिशयोक्ति नहीं कर रहे हैं। स्वराज्य अर्थात् स्वयं अपनेपर शासन करना। ऐसी सभा, जिसमें इस विषयपर विचार किया जा रहा हो कि यहाँकी नगरपालिका अपना काम ठीक ढंगसे चला रही है या नहीं, स्वराज्यकी ही सभा कहलायेगी। आजकी सभाका विषय जनताके स्वास्थ्यसे सम्बन्धित है। खुराकके तीन मुख्य तत्त्व हैं — हवा, पानी और अनाज। हवा तो मुफ्त मिलती है परन्तु यदि वह दूषित हो तो हमारे शरीरको नुकसान पहुँचाती है। वैद्योंका कथन है कि दूषित हवासे जितनी हानि होती है उतनी दूषित पानीसे नहीं होती। दूषित वायुके सेवनसे हमारा स्वास्थ्य खराब होता है और इसलिए हमें आबोहवा बदलनेकी जरूरत हो जाया करती है। उसके बाद दूसरा स्थान पानीका है। हम लोग पानीके बारेमें बहुत लापरवाही करते हैं। यदि

१. भगवानजी अनूपचंद मेहताका वीरमगाँवकी चुंगी और काठियावाड़की समस्याओंके बारेमें गांधीजीके साथ पत्र-व्यवहार चल रहा था, देखिए "पत्र : भगवानजी मेहताको", नवम्बर १, १९१७।

२. इस सभाको आयोजित करनेका उद्देश्य अपर्याप्त और अनियमित जल-वितरण व्यवस्थाके विरुद्ध आवाज उठाना था। इसके अध्यक्ष गांधीजी थे।

हम हवा, पानी और अनाजके सम्बन्धमें उचित सावधानी बरता करें तो हमारे पास प्लेग कभी फटक नहीं सकता। अहमदाबादके कुछ मुहल्लोंको तो गत आठ वर्षोंसे पानी-की तकलीफ उठानी पड़ रही है। तीन महीनेसे तो सारा शहर पानीकी तकलीफका अनुभव कर रहा है। और इसलिए हम लोग आज अहमदाबादके जिलाधीश, उत्तरीय विभागके कमिश्नर तथा नगर-निगमके आयुक्तके पास अपनी फरियाद पेश करनेके लिए इकट्ठे हुए हैं। आजसे हम लोग अहमदाबादके लिए शुद्ध और पर्याप्त पानीकी प्राप्तिका प्रयत्न शुरू कर रहे हैं।

नगर-निगमके सदस्य जनताके नौकर हैं, हमें उनसे प्रश्न पूछनेका और यदि वे जिम्मेदारीके साथ अपना काम न करें तो उन्हें अलग कर देनेका अधिकार है। सरकार [नगर-निगम] अधिनियमके एक खण्डके अन्तर्गत आयुक्तकी नियुक्ति करती है। [किन्तु] हम लोग नगर-निगमके आयुक्त तथा इंजीनियरसे जवाब तलब करनेका हक भी रखते हैं। और यदि उससे भी आगे कदम उठानेकी जरूरत हुई तो हम वैसा भी करेंगे। जिस सभामें इस प्रकारके लोकोपयोगी विषयोंपर विचार किया जाता हो उस सभामें जितने अधिक लोग उपस्थित हों उतनी ही बुलन्द उसकी आवाज होगी। मेरा आप सब लोगोंसे निवेदन है कि इस मामलेमें जबतक सफलता प्राप्त न हो तबतक अपना प्रयत्न जारी रखें। यदि हम हरएक सवालको अत्यन्त महत्त्वपूर्ण मानकर काम करें तो सफलता मिले बिना नहीं रह सकती। हमें अपना रुपया वापस मांगनेका पूरा हक है।[1]

हमें विरोध करना ही चाहिए; वरना, अधिकारियोंको कभी मालूम ही न हो पायेगा कि हमें क्या कष्ट है; इसके लिए हमें नये चुनावों तक प्रतीक्षा भी नहीं करनी चाहिए, क्योंकि चुनाव तो एक वर्षके विलम्बसे भी हो सकते हैं।

[गुजरातीसे]

प्रजाबन्धु, १३-१-१९१८

१. इसके बादके वाक्य गांधीजीने मुख्य प्रस्तावके पास हो जानेपर सभाकी चर्चाका उपसंहार करते हुए कहे थे।

६६. पत्र : एक सार्वजनिक कार्यकर्त्ताको

[जनवरी ११, १९१८ के बाद]

मुझे तुम्हारा काम बहुत पसन्द आया। कमिश्नरने[1] अपना असली रूप एक पलमें दिखा दिया। मैं यह बात दोष दिखानेके उद्देश्यसे नहीं लिखता, अपितु भविष्यमें तुम्हारे मार्गदर्शनके लिए लिखता हूँ कि जब कमिश्नरने पूरे शिष्टमण्डलसे मिलनेसे इनकार कर दिया था तब यदि मन्त्री भी अपने सम्मानकी रक्षा करते हुए उनसे न मिलते तो अधिक अच्छा होता . . .।[2] श्री प्रैटकी भूलसे जनताका काम बन जायेगा। यदि वे गुजरात सभाका तिरस्कार करना चाहते हैं तो करें।[3] यदि तुममें हिम्मत है, तो तुम निर्भयतापूर्वक लोक-पक्षका समर्थन करो और लोगोंको लगान अदा न करनेकी सलाह दो। यदि तुम इसमें गिरफ्तार कर लिये जाओगे तो माना जायेगा कि तुमने अपना काम पूरा कर दिया . . .। परिणामकी परवाह न करो। यही सत्याग्रह है। इतना निश्चित है कि हमें इसीसे पूर्ण आत्मसम्मान मिल जायेगा। अभी फिलहाल न मिले, यह सम्भव है। अवसर आनेपर अपनी शक्ति-भर सत्याग्रहकी महिमाको प्रदर्शित करना हमारा परम धर्म है।

[गुजरातीसे]

खेड़ा सत्याग्रह

१. गुजरातके उत्तरी डिवीजनके कमिश्नर, एफ० जी० प्रैट।

२. १९१७ में खेड़ा जिलेमें अतिवृष्टिसे फसल नष्ट हो गई थी। गुजरात सभाने, जिसकी स्थापना १८८४ में लोगोंके कष्ट सरकारके सामने रखनेके उद्देश्यसे की गई थी, किसानोंकी इस माँगका समर्थन किया कि लगान निर्धारित करनेके सम्बन्धमें जो काम हो रहा है उसे मुल्तवी कर दिया जाये। पहली जनवरीको गुजरात सभाने बॉम्बे क्रॉनिकलको एक पत्र लिखा जिसमें उसने कुछ किसानोंको लगानमें छूट देने और कुछका लगान मुल्तवी करनेपर जोर दिया। गांधीजी इस समस्याका अध्ययन करनेके उद्देश्यसे अहमदाबाद गये और उन्होंने सभाको, जिसके वे अध्यक्ष थे, सलाह दी कि जबतक बम्बई सरकारकी ओरसे उत्तर नहीं मिल जाता वह लोगोंसे तबतक लगान अदा न करनेकी बात कहे। उन्होंने सभाको कमिश्नरके पास एक शिष्टमण्डल भेजनेका सुझाव भी दिया। १० जनवरीको सभाने कमिश्नरसे मुलाकात माँगी। जब शिष्टमण्डल कमिश्नरके कार्यालयमें गया तब कमिश्नरने केवल मन्त्रियों — कृष्णलाल देसाई और जी० वी० मावलंकर — से ही मिलना स्वीकार किया। गांधीजीको इस बातकी सूचना तारसे दे दी गई थी। (देखिए नरहरि परीख द्वारा लिखित **सरदार वल्लभभाई पटेल**, खण्ड १, पृष्ठ ४८-५५)।

३. भेंटमें कमिश्नरने कहा था कि वे सम्भवतः सरकारसे सभाको गैर-कानूनी घोषित करनेकी सिफारिश करेंगे।

६७. पत्र : एक सार्वजनिक कार्यकर्त्ताको

[जनवरी ११, १९१८ के बाद]

तुम्हारा पत्र और तार मिले। उनसे मुझे बहुत सान्त्वना मिली। हाथमें लिये हुये कामको बिलकुल न छोडना। असलमें तुम्हे मेरी अथवा किसी अन्य व्यक्तिकी कोई आवश्यकता नही है। जो लोग लगान देनेमे असमर्थ है, सरकार उनकी असमर्थताको स्वीकार करे अथवा न करे, असमर्थता तो रहेगी ही। फिर वे लगान क्यो दें? आपको लोगोको इतना ही समझाना है। चाहे एक ही व्यक्ति दृढ रहे, वह विजयी माना जायेगा। इससे हम नई फसल खड़ी कर सकते हैं। तुम अपना काम निर्भय होकर करना।

[गुजरातीसे]

खेड़ा सत्याग्रह

६८. उत्तर : शिक्षकोंके शिष्टमंडलको[1]

[साबरमती आश्रम
जनवरी १३, १९१८ से पूर्व]

मैं आप लोगोमे से उनको जो नौकरीकी तलाशमे है, फिलहाल दो तरहके काम दे सकता हूँ — एक तो सत्याग्रह आश्रमकी इमारत बनानेका काम जो शुरू होनेवाला है। नौकरी चाहनेवालोमें से यदि कोई व्यक्ति इस प्रकारका काम करना चाहे तो मैं उनके द्वारा की गई ऐसी सहायताको बहुत मूल्यवान मानूंगा। उन्हें मैं १५ रु० मासिक वेतन दे सकता हूँ। इससे मुझे यह भी लगता है कि यदि आश्रमकी इमारतका निर्माण ऐसी भावनावाले व्यक्तियोके योगसे हो तो वे स्वय प्रशंसाके पात्र बनेंगे और आश्रमका महत्त्व भी बढेगा। एक दूसरा भी काम है जिसकी व्यवस्था मैं कर सकता हूँ, जितने व्यक्ति स्वदेशी धंधोंकी उन्नति चाहते हो, उन्हे हाथ-करघेपर कपडा बुननेका काम मुफ्त सिखा सकता हूँ। इतना ही नही — जितने सूतकी आवश्यकता पडेगी उतना सूत भी दूंगा, और जो कपड़ा तैयार होगा उसकी बिक्री करा दूंगा। इसलिए जिनकी रुचि इस ओर हो वे मुझे सूचित कर दें। मेरे खयालमें इस प्रकारका काम स्वार्थ-साधनके साथ-साथ अच्छी खासी देशसेवा कर सकनेका अत्युत्तम साधन है।

[गुजरातीसे]

गुजराती, १३–१–१९१८

१. पत्रकी रिपोर्टके अनुसार इन शिक्षकोंने गाधीजीसे कहा था कि उन्होंने जनवरी १, १९१८ से अपनी नौकरियोंसे इस्तीफे दे दिये हैं और उनमें से कुछ गाधीजीकी मददसे स्वदेशी धधे शुरू करना चाहते है।

६९. पत्र : एस्थर फैरिंगको

मोतीहारी
जनवरी १३, १९१८

प्रिय एस्थर,

यहाँ-वहाँ भटकते रहनेके कारण मैं तुम्हारे पत्रोंका जवाब नही दे सका। मैं कलकत्तामें था, वहाँसे बम्बई गया और फिर आश्रम, और कल ही यहाँ लौटा हूँ। कई प्रकारके अनुभव हुए, पर समयाभावके कारण उनको लिख नही सकता।

यह कहना कि इस ससारमें पूर्णता प्राप्त करना सम्भव नही, ईश्वरसे इनकार करना है। हमारे लिए सर्वथा पाप-मुक्त होना सम्भव नही — स्पष्ट है कि यह कथन जीवनकी एक अवस्था विशेषके लिए ही सही है। परन्तु इसका समर्थन पानेके लिए शास्त्रोंके पन्ने पलटनेकी जरूरत नही। प्रयत्न द्वारा और यम-नियमोंके पालनसे हम मनुष्योंको हमेशा उन्नतसे उन्नततर बनते देखते है। उन्नत करनेकी सामर्थ्यकी सीमा नही बाँधी जा सकती। अगर मुझे ऐसा लगे कि मैं इस संसारमें प्रेमको प्राप्त नही कर सकूँगा, तो मुझे जीवनमें बिलकुल दिलचस्पी न रहे। सबसे बडी बात तो यह है कि हमारी प्रेमकी सामर्थ्य सतत बढती जाती है। प्रक्रिया बहुत धीमी जरूर है। जो आदमी हमें अच्छा काम करनेसे भी रोके, उससे हम कैसे प्रेम कर सकते हैं? फिर भी ऐसे अवसरोंपर ही हमारी सच्ची परीक्षा होती है।

आशा है, तुम्हारा चित्त अब अधिक शान्त हो गया होगा। भगवान् करे, आश्रमके प्रति तुम्हारा प्रेम तुम्हें वहाँ[1] अपने कर्त्तव्य-पालनके प्रयत्नमें बल दे। आश्रमका उद्देश्य हमें यही सिखाता है कि अपने हिस्सेमें आया हुआ काम हम खूब ध्यान और प्रसन्न मनसे करे। हमारी इच्छाएँ (पवित्रसे-पवित्र होनेपर भी) पूरी नही होती — इसमें भी एक गूढ अर्थ है। हमारी इच्छा नही बल्कि ईश्वरकी इच्छा पूरी होगी।

आशा है कि तुम्हारी तमिलकी पढाई ठीक चल रही होगी।

नटेसन ऐंड कं० ने मेरे भाषणों और लेखोंको एक पुस्तक[2] के रूपमें प्रकाशित किया है। वह पुस्तक तुमको उनसे मिली या नही? समाज-सेवाके सम्बन्धमें कलकत्तेके अपने भाषणकी एक प्रति मैं तुमको भेज रहा हूँ।

सस्नेह

तुम्हारा,
बापू

[अंग्रेजीसे]

माई डियर चाइल्ड

१. तिरुक्कोइलूर — दक्षिणमें, जहाँ एस्थर फैरिंग उस समय थीं।

२ स्पीचेज ऐंड राइटिंग्ज ऑफ महात्मा गांधी।

७०. पत्र : चिमनलाल चिनाईवालाको

[मोतीहारी]
पौष सुदी १ [जनवरी १३, १९१८]

भाईश्री चिमनलाल (चिनाईवाला)

आपका पत्र मिला। मजदूर-वर्ग मात्रको मदद देना हमारा काम है, इसमें मुझे कोई शक नही। वर्तमान सहकारी आन्दोलनमें मेरी श्रद्धा कम ही है। मुझे लगता है कि हमारा प्रथम कार्य मजदूरोकी स्थितिका सूक्ष्म अध्ययन करना है। वे क्या कमाते हैं? कहाँ रहते हैं? कैसे रहते हैं? कितना खर्च करते है, कितना बचाते हैं? कितना कर्ज करते हैं? उनके कितने बच्चे है? उनका पालन-पोषण वे किस तरह करते हैं? शुरूमें वे क्या करते थे? उनकी स्थितिमें परिवर्तन कैसे हुआ? अब उनकी हालत कैसी है? — इन सब प्रश्नोका उत्तर प्राप्त किये बिना एकाएक सहकारी समिति बनाना मुझे तनिक भी उचित नही लगता। हमें इस वर्गमें प्रवेश करनेकी जरूरत है। ऐसा करें, तो बहुत-सी उलझनें बहुत कम समयमें ही सुलझाई जा सकती हैं। अभी तो मैं तुम्हें उनमें घुलने-मिलने और उनकी स्थिति जाननेकी सलाह देता हूँ। अधिक बातें मिलने पर करेंगे।

[गुजरातीसे]
महादेवभाईनी डायरी, खण्ड ४

७१. पत्र : ई० एल० एल० हैमंडको

मोतीहारी
जनवरी १४, १९१८

सेवामें
श्री ई० एल० एल० हैमंड
सचिव
प्रान्तीय भर्ती निकाय
बिहार और उड़ीसा

प्रिय श्री हैमंड,

मैं आपके दिसम्बरमें प्राप्त बिना तारीखके पत्रका उत्तर जल्दी नही दे सका, इसके लिए क्षमा चाहता हूँ। बात यह है कि मैं चम्पारनसे बाहर सफरमें था। मैं अभी इस १२ तारीखको ही लौटा हूँ। इस समय मेरी कठिनाई यह है कि जबतक

किसानों और जमीदारोंके सम्बन्धोंकी स्थिति अनिश्चित है तबतक मैं आगे नहीं बढ़ सकता। कृपीय-विधेयक इस समय परिषद्में है। यह जब पास हो जायेगा तब मेरा रास्ता कुछ ज्यादा साफ हो जायेगा। तब मैं आपके सुझावको कार्यान्वित करनेका प्रयत्न करूँगा और देखूँगा कि क्या किया जा सकता है।

हृदयसे आपका,
मो० क० गांधी

[अंग्रेजीसे]
सिलैक्ट डॉक्यूमेंट्स ऑन महात्मा गांधीज मूवमेंट इन चम्पारन,

७२. पत्र : मथुरादास त्रिकमजीको[1]

मोतीहारी
जनवरी १४, १९१८

ऐसा प्रतीत होता है कि यदि इस अनुवादको हम जनताके सामने रखेंगे तो अन्याय ही होगा। इसलिए इसपर खर्च किया गया रुपया बरबाद ही हुआ, फिर भी हमारे पास कोई दूसरा प्रामाणिक मार्ग है ही नहीं। फिलहाल इतना ही निर्णय पर्याप्त है। इस अनुवादको यों ही पड़ा रहने दिया जाये, जिल्द न बँधाई जाये। दूसरे और तीसरे भागोंको प्रथम खण्डके रूपमें प्रकाशित कर सकते हैं . . .[2] अनुवादकी गुजराती भाषा सरल, स्वाभाविक, व्याकरण सम्बन्धी दोषोंसे मुक्त और ऐसी होनी चाहिए कि वह साहित्य-भण्डारमें अच्छा स्थान पा सके। इस अनुवादमें उपर्युक्त गुणों-में से एक भी गुण नहीं दीख पड रहा है। . . . मै देखता हूँ कि तुमने उस अनुवादके प्रूफोंको पढ़नेमें बहुत परिश्रम किया है। हमारा ध्येय यह होना चाहिए कि शुद्धिपत्र न छापना पड़े और किताबमें अशुद्धियाँ हो ही नहीं।

[गुजरातीसे]
बापूनी प्रसादी

१. मथुरादास त्रिकमजी, गांधीजीके भानजे; उन्होंने **महात्मा गांधीनी विचारसृष्टि** नामक गांधीजीके लेखों आदिका एक संकलन प्रकाशित किया था।
२. पुस्तकमें प्राप्त पाठमें यहाँ कुछ पंक्तियाँ छोड़ दी गयी हैं।

७३. पत्र : रामभाऊ गोगटेको

[मोतीहारी]
पौष सुदी २ [जनवरी १४, १९१८]

भाई रामभाऊ,

आपका पोस्टकार्ड मिला। रकम मुझे इन्दौरमें दे देनेसे भी काम चलेगा।[1]

मोहनदास गांधीके वन्देमातरम्

भाई रामभाऊ गोगटे
पुराना नोक खाना
मकान न० ३३२
इन्दौर

गांधीजीके स्वाक्षरोंमें मूल गुजराती पत्र (सी० डब्ल्यू० ३६१५) से।
सौजन्य : भाई कोतवाल

७४. पत्र : एल० एफ० मॉर्संहैड

मोतीहारी
जनवरी १५, १९१८

सेवामें
एल० एफ० मॉर्संहैड
कमिश्नर
तिरहुत डिवीज़न
बिहार

प्रिय श्री मॉर्संहैड,

मुझे आपका इसी १४ तारीखका पत्र[2] मिला। अबतक मैं सारा विधेयक बहुत ध्यानसे पढ चुका हूँ। मैं समझता हूँ कि मुझे अपना वह विचार जो मैंने आपसे बातें करते समय श्री कैनेडीके संशोधनके[3] सम्बन्धमें व्यक्त किया था, बदलना होगा। मेरा खयाल है कि यदि उक्त संशोधनमें समस्त खण्ड ३ का समावेश करना है तो इससे काम न चलेगा। आपने जिस संशोधनपर 'क' अंकित किया है उसे मैं खण्ड ३ की धारा

१. हिन्दी साहित्य सम्मेलनके अवसरपर।
२. देखिए परिशिष्ट ८ (क)। मॉर्संहैड और गांधीजीकी भेंटके लिए देखिए परिशिष्ट ८ (ख)।
३. इसके पाठके लिए देखिए परिशिष्ट ८ (क)।

२ की जगह स्वीकार कर सकता हूँ, किन्तु आपने श्री कैनेडीके जिस उपबन्धपर 'ख' अंकित किया है, वह मुझे सर्वथा अमान्य है। खण्ड ३की धारा १ करारबन्द तिनकठिया-को[1] रद्द करनेके लिए आवश्यक है। खण्ड ५ खुश्की[2] अनुबन्धोके अतिरिक्त समितिकी अन्य सिफारिशोको अमलमें लानेके लिए आवश्यक है; शर्त यह है कि उसमें वह संशोधन कर दिया जाये जो मैंने सरकारको लिखे गये अपने १९ दिसम्बरके पत्रमें सुझाया था। मेरी स्थिति साफ है। मैं काश्तकारोकी जमीन किन्ही विशेष फसलोको उगानेके लिए बन्धक रखवाना तिनकठियाको पुनः चालू करना समझूँगा। यदि मैंने श्री कैनेडीका आशय ठीक समझा है तो उनका प्रयत्न ऐसे बन्धककी व्यवस्था कराना ही है। ये दोनो दृष्टिकोण एक दूसरेसे इतने विपरीत है कि उनका समन्वय कही नही हो सकता।

हृदयसे आपका,
मो० क० गांधी

[अंग्रेजीसे]
सिलैक्ट डॉक्यूमेंट्स ऑन महात्मा गांधीज मूवमेंट इन चम्पारन

७५. पत्र : 'स्टेट्समैन' को[3]

मोतीहारी
जनवरी १६, १९१८

सेवामें
सम्पादक
'स्टेट्समैन'
[कलकत्ता]

महोदय,

आपके पत्रके इस मासकी १२ तारीखके अंकमें[4] श्री इर्विनका जो नवीनतम पत्र छपा है, वह मुझे आपके स्तम्भोमें कुछ लिखनेके लिए मजबूर करता है। जबतक आपके संवाददाताने अपनेको उन मामलोतक सीमित रखा था जो सीधे उन्हीको प्रभा-वित करते थे तबतक उनकी गलतबयानियोसे कोई खास फर्क नही पडता था, क्योकि वास्तविक तथ्योकी सरकारको तथा उन लोगोको भी, जिनका चम्पारनमें भूमि-व्यवस्थासे

१. बिहारके नीलकी खेतीके जिलोंमें प्रचलित प्रथा, जिसके अनुसार जमींदार अपने काश्तकारोंको मजबूर करते थे कि वे अपनी जमीनमें बीघा पीछे तीन बिस्वे नील, जई या गन्ना उगायें और जिसकी मजदूरी वे बहुत कम देते थे।

२. बिना शर्त नीलकी खेती करवानेकी प्रथा।

३. यह "श्री इर्विनको श्री गांधीका उत्तर" शीर्षकसे प्रकाशित हुआ था।

४. इर्विनका ८ जनवरीका पत्र वास्तवमें ११ जनवरीको प्रकाशित हुआ था; देखिए परिशिष्ट ९।

सम्बन्धित प्रश्नोसे सरोकार है, उतनी ही जानकारी थी जितनी कि मुझे। किन्तु उक्त पत्रमे तो श्री इर्विनने, लगता है, अपने अधिकार-क्षेत्रसे बाहर जाकर अशिष्टतापूर्वक उस महिलापर आक्रमण किया है, जो इस धरतीपर सबसे अधिक निर्दोष है (और मै यह बात इस तथ्यके बावजूद कह रहा हूँ कि वह मेरी पत्नी है) और एक अत्यन्त महत्त्व-पूर्ण प्रश्नकी ऐसे ढंगसे चर्चा की है, जिसके लिए उन्हे क्षमा नही किया जा सकता। मेरा मतलब गो-रक्षाके प्रश्नसे है। जैसा कि किसी सज्जन व्यक्तिके लिए उपयुक्त होता, उन्हे तथ्योके बारेमें स्वयं जानकारी प्राप्त करनेकी सावधानी तो बरतनी ही चाहिए थी, किन्तु उन्होने ऐसा नही किया।

मैंने गोरक्षिणी सभामें[1] जो भाषण दिया था, उसे वे मुझे लिखकर आसानीसे मँगवा ले सकते थे। मानव मानवके बीच जैसा व्यवहार होता है, उसके अनुसार उन्हे मेरे प्रति कमसे-कम इतना सौजन्य तो दिखाना ही चाहिए था। आपके सवाददाताने मुझ पर आक्षेप लगाया है कि "मैंने साहब लोगोपर (उनके भूस्वामियोपर), जो रोज गायको मार कर खाते हैं, मिलजुल कर हमला किया है"। इससे तो यह व्यजित होता है कि मै बागान-मालिकोके काश्तकारोकी एक अपेक्षाकृत छोटी श्रोता-मण्डलीमें भाषण दे रहा था। तथ्य यह है कि श्रोताओमे अधिकतर लोग गैर-काश्तकार वर्गके ही थे। किन्तु जब मै बोल रहा था तो मुझे अपने सामने उपस्थित कुछ ही हजार श्रोताओके समूहका नही, बल्कि उससे बहुत बडे श्रोतासमूहका ध्यान था। मैंने अपने उत्तरदायित्वको पूरी तरह समझते हुए भाषण दिया था। मेरे विचारमें गो-रक्षाका प्रश्न उतना ही विशाल है जितना कि वह साम्राज्य, जिसमे मै और श्री इर्विन दोनो रहते हैं। म जानता हूँ कि श्री इर्विन उस २४ वर्षीय नवयुवकके गौरवशाली पिता हैं, जिसने अपनी वीरताके कारण इस आयुमे ही कर्नलके पदका अद्वितीय सम्मान प्राप्त किया है। यदि श्री इर्विन चाहे तो गो-रक्षासे सम्बन्धित प्रश्नका अध्ययन करके उसे सुलझानेमें अपना पूरा योगदान देकर वे स्वय इससे भी बडा सम्मान प्राप्त कर सकते हैं। मै विश्वास दिलाता हूँ कि तब वे अपने समयका अधिक अच्छा उपयोग करेगे, जिसे आज वे अखबारोमें अपनी गलतबयानियोको अधाधुध भेजते रहनेमे और—सिर्फ यह सोच-सोचकर एक संदिग्ध आनन्द प्राप्त करनेके लिए कि इस सबकी जिम्मेदारी मुझपर है—अपने किसानोके खिलाफ २,२०० मुकदमे चलानेकी नितान्त अनावश्यक तैयारीमें गँवा रहे हैं।

मैंने यह बताया था कि जबतक हिन्दू लोग स्वयं ही, अपने हिन्दू मालिकोके हाथो भयकर दुर्व्यवहार झेलते हुए हजारो गाय-बैलोको तिल-तिल कर मारने और कलकत्तेकी अमानवीय गोशालाओकी गौओसे प्राप्त दूधका पान करनेमे भागीदार हैं, और जबतक वे शान्तिपूर्वक भारतके यूरोपीय तथा ईसाई निवासियोको गो-मास उपलब्ध करानेके लिए भारतके कसाईखानोमे हजारो गायोका वध होते देखते रहते हैं, तबतक उन्हे अपने मुसलमान भाइयो द्वारा धार्मिक विश्वासके कारण गो-कशीपर क्षुब्ध होनेका कोई अधिकार नही है। मैंने यह कहा था कि गौओके लिए पूर्ण सरक्षण प्राप्त करनेका पहला उपाय यह है कि हिन्दू लोग स्वय हिन्दुओके द्वारा गौओके साथ किये जानेवाले दुर्व्यवहारसे

१. देखिए "भाषण : सच्ची गोरक्षापर", अक्तूबर ९, १९१७ के आसपास।

उन्हे पूरी मुक्ति दिलाकर अपने-आपको सुधारे, और तब यूरोपीयोसे भारतमे रहते हुए गोमास न खाने या कमसे-कम उसे भारतके बाहरसे मँगानेका अनुरोध करे। मैंने यह भी कहा था कि यदि हमें गोरक्षाके प्रचारको धार्मिक विश्वासपर आधारित करना है, तो गौओकी जान बचानेके लिए मुसलमानोके वध को किसी प्रकार भी सहन नही किया जा सकता, और मुसलमानो तथा ईसाइयोसे भी गौओके लिए सरक्षण प्राप्त करनेका धार्मिक तरीका यह है कि वे उनकी करुणाकी भावनाको जगानेके लिए खुशी-खुशी स्वय अपना बलिदान करनेके लिए तैयार हो जायें। चाहे उचित हो या अनुचित, गो-पूजा हिन्दुओके स्वभावमें रम गई है, और मेरी समझमें इस प्रश्नपर हिन्दुओ और ईसाइयो तथा मुसलमानोके बीच कट्टरतम तथा घोर हिंसापूर्ण सघर्षसे बचनेका इसके सिवा और कोई रास्ता दिखाई नही देता कि अहिंसा धर्मको पूर्ण रूपसे स्वीकार करके उसपर आचरण करे। और इसी धर्मके प्रचारको मैंने स्वेच्छया अपने जीवनका नम्र उद्देश्य बनाना है। सत्यसे मुँह नही मोडना है। यह नही मान लेना चाहिए कि यूरोपीयोके लिए जो गो-वध हो रहा है, उसके बारेमें हिन्दू कुछ भी महसूस नही करते। मैं जानता हूँ कि आज उनका क्रोध, उनके मनपर अग्रेजी शासनका जो रोब छाया है, उसके कारण दबा हुआ है। किन्तु सारे भारतमें कोई भी हिन्दू ऐसा नही है जो एक दिन अपने देशको गो-वधसे मुक्ति दिलानेकी आशा नही लगाये हुए है। किन्तु, हिन्दू-धर्मको मैं जिस रूपमें जानता हूँ, उसकी प्रवृत्तिके प्रतिकूल वह लोगोको — चाहे वे ईसाई हो या मुसलमान — तलवारके जोरपर गो-वध बन्द करनेके लिए मजबूर करनेको बुरा नही समझता। मैं ऐसे अनर्थको रोकनेके लिए अपनी विनम्र भूमिका निभाना चाहता हूँ, और मैं श्री इर्विनको धन्यवाद देता हूँ कि उन्होने मुझे आपके पाठकोको तथा स्वय श्री इर्विनको भी अपने कठिन प्रयत्नमें सहायता देनेके लिए आमन्त्रित करनेका अवसर दिया। हो सकता है, यह प्रयत्न गो-वध रोकनेमे सफल न हो। किन्तु कोई कारण नही कि धैर्यपूर्वक उद्योगरत रहने तथा उसके अनुसार निरन्तर आचरण करते रहने पर लोगोको अपने साथी पशुको बचानेके लिए साथी मानवको मारनेके अपराधमें निहित भूल, बेवकूफी और अमानवीयताका एहसास करानेमें भी सफलता न मिले।

इतना तो बेचारी गौओके बारेमें हुआ। अब मैं दो शब्द अपनी निरपराध पत्नीके बारेमें कहूँगा, जिन्हे कभी यह भी मालूम नही हो पायेगा कि आपके सवाददाताने उनके प्रति क्या अपराध किया है। उन्हे श्री इर्विन द्वारा उल्लिखित दोनो बाजारोके बारेमें कोई जानकारी नही है — ठीक वैसे ही जैसे अभी हालतक, और श्री इर्विन द्वारा बताये गये प्रतिद्वद्वी बाजारकी स्थापनाके कुछ समय बादतक, मुझे उसका कोई ज्ञान नही था। यदि श्री इर्विनको उनके साथ परिचय प्राप्त करनेका सम्मान मिले तो उन्हे तुरन्त मालूम हो जायेगा कि श्रीमती गाधी एक सीधी-सादी महिला है — लगभग अनपढ। उनसे मिलनेपर वे अपनेको इस सम्बन्धमें और भी आश्वस्त कर सकेगे कि श्रीमती गाधीका इसकी स्थापनामें कोई हाथ नही है और वे ऐसे बाजारका प्रबन्ध करनेमें सर्वथा असमर्थ है। और अन्तमें उन्हे तुरत मालूम हो जायेगा कि श्रीमती गांधीका समय श्री इर्विनके पत्रमें उल्लिखित देहातमें स्थापित स्कूल चलानेवाले अध्यापको-

के लिए खाना बनाने तथा उनकी देख-भाल करने, डॉक्टरी सहायता देने तथा देहाती महिलाओंको स्वास्थ्यके सामान्य नियम बतानेके उद्देश्यसे उनके बीच घूमने-फिरनेमें व्यतीत होता है। मैं यह भी कह दूँ कि श्रीमती गांधीने भाषण देने या अखबारोंको पत्र भेजनेकी कला नहीं सीखी है।

पत्रके शेष भागके बारेमें जितना कम कहा जाये, उतना ही अच्छा है। यह गलत-बयानियोंसे, जिन्हें बिल्कुल साफ देखा जा सकता है, इस तरह भरा पड़ा है कि इसका उत्तर देते समय अपने ऊपर पर्याप्त नियन्त्रण रख सकना कठिन है। मैं इतना ही कह सकता हूँ कि मैंने बागान-मालिकों तथा काश्तकारोंके बीच सद्भाव लानेके लिए जो दायित्व उठाया है, मैं उसे निभानेके लिए अपने तईं पूरा प्रयत्न कर रहा हूँ। और यदि मैं असफल भी होऊँगा तो इसका कारण यह नहीं होगा कि मेरे प्रयत्नोंमें कोई कमी रह गई। उसका कारण तो, यदि पूर्णतः नहीं तो अधिकांशतः, वह शरारत-भरा प्रचार होगा जो चम्पारनमें श्री इर्विन खुलेआम और कुछ अन्य लोग छिपे तौरपर कर रहे हैं और जिसका उद्देश्य जाँच समिति द्वारा प्रकाशित रिपोर्टको प्रभावहीन बनाना है। श्री इर्विनका कहना है कि उक्त समिति मेरे निवेदनपर नियुक्त की गई, किन्तु, जैसा कि आपकी फाइलोंसे प्रकट होगा, इसकी नियुक्ति श्री इर्विन और उनके आंग्ल-भारतीय संघके मित्रों द्वारा चलाये गये आन्दोलनके परिणामस्वरूप हुई थी। यदि वे समझदार हैं तो वे उन वचनोंपर डटे रहेंगे जो उन्होंने काफी विचार-विमर्श करने और सोचने-विचारनेके बाद राँचीमें दिये थे।

आपका, आदि,
मो० क० गांधी

[अंग्रेजीसे]
स्टेट्समैन, १९-१-१९१८

७६. पत्र : एस० के० रुद्रको

मोतीहारी
जनवरी १६, १९१८

प्रिय श्री रुद्र,[1]

यह पत्र मैं भाई देसाईसे लिखवा रहा हूँ। मेरी बाईं तरफ बड़ा दर्द हो रहा है। इसलिए बहुत लिखनेको जी नहीं करता। आपसे मुझे मिल सके, तो हमारी प्रान्तीय भाषाओंके लिए, उनके बारेमें जल्दीमें लिखा हुआ पत्र नहीं, उत्साहपूर्ण और सुन्दर समर्थन मुझे चाहिए, जिसका उपयोग मैं लोगोंकी कर्त्तव्य-बुद्धि जाग्रत करनेमें कर सकूँ। आप पढ़ाई प्रादेशिक भाषामें और परीक्षाके उत्तर अंग्रेजीमें लिखनेकी व्यवस्था क्यों रखना चाहते हैं? हरएक विद्यार्थीको अंग्रेजी क्यों जाननी ही चाहिए? क्या इतना

१. सुशीलकुमार रुद्र, सेंट स्टीफन्स कॉलेज, दिल्लीके प्रधानाचार्य।

काफी नही कि हरएक प्रान्तमे कुछ आदमी अंग्रेजीकी विशेष शिक्षा प्राप्त कर ले, जिससे वे नये विचारो और वैज्ञानिक खोजोका ज्ञान प्रादेशिक भाषाओके द्वारा आम जनतामे फैला सके? ऐसा करके हम अपने लड़के-लड़कियोको नये ज्ञानसे ओत-प्रोत कर सकेगे और जो नवजागरण हम पिछले साठ वर्षोमें अनुभव नही कर पाये, उसे अनुभव करनेकी आशा सँजो सकेगे। रोज़-रोज़ मेरी यह प्रतीति दृढ होती जा रही है कि हमारे बच्चे तभी भिन्न-भिन्न विज्ञानोको पचा सकेगे जब वे प्रादेशिक भाषाओमें शिक्षा पाने लगेंगे। इस अत्यन्त आवश्यक सुधारके लिए अधकचरे कदम उठानेसे काम नही चलेगा। जबतक हम यह स्थिति प्राप्त नही कर लेगे, तबतक मुझे डर है कि अपने लिए विचार करनेका काम हमें अग्रेजोपर ही छोड़ देना पड़ेगा और हमारा काम गुलामोकी तरह उनकी नकल करना ही रहेगा। जबतक यह बहुत ही आवश्यक और महत्त्वपूर्ण परिवर्तन नही हो जाता, तबतक स्वराज्यकी कोई भी योजना इस विडम्बनाको टाल नही सकेगी। यदि आप इस मामलेमें मुझसे सहमत हों, तो उपर्युक्त विचार अपनी भाषामें प्रकट करते हुए एक पत्र मुझे लिख भेजिए।

कलकत्तेमें समय बड़ा अच्छा कटा, लेकिन कांग्रेसके मण्डपमें[1] नही, मडपके बाहर ही। कविवर और उनकी मडलीने 'डाकघर'[2] नाटक खेला, जिसे देखकर मैं मुग्ध हो गया। यह लिखते समय भी कविकी मनोहर और मीठी आवाज मेरे कानोमें गूँज रही है। बीमार बच्चेका अभिनय भी उतना ही सुन्दर रहा। बँगला सगीतने मुझे मोह लिया। यद्यपि मुझे अधिक सुननेको नही मिला, फिर भी जितना सुना, उससे मेरे ज्ञान-तन्तुओको, जो हमेशा तनावकी स्थितिमें रहते है, बडा आराम मिला।

आपको यह जानकर प्रसन्नता होगी कि समाज सेवा सम्मेलनमें मैंने अपने अध्यक्ष-पदके विशेषाधिकारका पूरा उपयोग किया। बगाली जीवनमें जो बहुतेरा अच्छा है, उसके प्रेमीकी हैसियतसे मैंने बगाली प्रान्तीयताके बारेमें कड़े शब्द बोलनेकी छूट पा ली।[3] श्रोताओमेंसे किसीने बुरा भी नही माना। वे मेरी आलोचनाओकी कद्र करते दीख पडे। मै अपने भाषणकी एक प्रति आपको भेज रहा हूँ। अलबत्ता, मैंने जो व्यक्तिगत अपील की थी, वह इसमें नही है।

अपने अनुभवोका दसवाँ हिस्सा भी मैंने आपको नही बतलाया है, किन्तु भाई देसाई मुझे याद दिला रहे है कि एक और अनुभव तो मुझे आपको बतलाना ही चाहिए। वहाँ 'मानव-दया सघ' (ह्यूमैनिटेरियन लीग) की बैठकमें भी मै गया था। उसमें भी मै अध्यक्ष था। मुझे लगा कि कालीघाटपर होनेवाली आसुरी पूजाके बारेमें अगर मैं न बोलूँ, तो वह खुद अपने और श्रोताओके प्रति ईमानदारी नहीं होगी। इसलिए मै तो बिना किसी लाग-लपेटके साफ-साफ बोला।[4] बोलते समय श्रोताओकी ओर बराबर देखता रहा। कह नही सकता कि मेरे कहनेका उनपर असर हुआ या

१. २९-३१ दिसम्बरको कांग्रेसका अधिवेशन चल रहा था।
२. रवीन्द्रनाथ ठाकुरका एक नाटक।
३. देखिए "भाषण: अखिल भारतीय समाज सेवा सम्मेलनमें", ३१-१२-१९१७।
४. देखिए "भाषण: विश्वविद्यालय भवनमें", ३१-१२-१९१७

नही, लेकिन इस विषयका विस्तारसे उल्लेख करके मैंने अपना जी हलका कर लिया। मुझमे यदि पूरा जोश-खरोश होता तो मैं घाटपर जानेवाली गलीके नुक्कडपर खडा होकर हर स्त्री-पुरुषको धर्मके नामपर ईश्वरको लाछित करनेसे रोकता।

प्रादेशिक भाषाओके सम्बन्धमे आपका पत्र इसलिए लौटा रहा हूँ कि स्मरण रखनेमे आपको सहायता मिले।

[अग्रेजीसे]

महादेव देसाईकी हस्तलिखित डायरीसे
सौजन्य : नारायण देसाई

७७. तार : गुजरात-सभाको[1]

[मोतीहारी
जनवरी १६, १९१८ के बाद]

श्री पारेख और श्री पटेलको,[2] जिन्होने मौकेपर पहुँच कर जाँच की है, दृष्टान्तो और दलीलोके साथ विश्वासके योग्य जवाब देना चाहिए। स्वतन्त्र जाँचके लिए आग्रह करे। आन्दोलन प्रजाने आरम्भ किया है — और आपको यह साबित करना चाहिए कि सर्वश्री पारेख और पटेल तथा गुजरात सभा जनताके अनुरोध पर इसमें पडे है। यह सलाह देनेमे मुझे कोई सकोच

१. गुजरात-सभाने १० जनवरीको खेड़ा जिलेके किसानोंको फसल खराब होनेके कारण लगान न देनेकी सलाह दी थी। इस सलाहकी आलोचना करते हुए खेडा जिलेके कलक्टरने अपने १४ जनवरीके वक्तव्यमें कहा कि "कलक्टरको लगान वसूल करने या मुलतवी रखनेका पूरा अधिकार है; मैंने अपने अन्तिम आदेश जिलेकी फसलके बारेमें पूरी जाँच-पड़ताल करनेके बाद ही जारी किये थे। जिलेके जिन कुछ गाँवोंमें मुझे राहत देना आवश्यक जान पड़ा, उनके सम्बन्धमें मैंने लगानके एक हिस्सेकी वसूली मुलतवी रखनेके हुक्म जारी कर दिये हैं। इसलिए अब काश्तकारोंको लगान और तकावीकी बकाया रकम अदा कर देनी चाहिए। लेकिन अगर इतनेपर भी कोई काश्तकार गलत सलाह देनेवालोंके बहकावेमें आकर लगान देनेसे इनकार करता है तो मुझे उसके विरुद्ध सख्त कानूनी कार्रवाई करनेको मजबूर होना पड़ेगा।" कलक्टरके इस वक्तव्यके बाद बम्बई सरकारने १८ जनवरी, १९१८ को एक वक्तव्य निकाला जिसमें कलक्टरकी कार्रवाईका समर्थन किया गया था। साथ ही उसमे खेड़ाके काश्तकारोंको सलाह देनेके सम्बन्धमें अहमदाबादकी गुजरात-सभाके हस्तक्षेप करनेके अधिकार (लोकस स्टैंडी) की वैधतामें भी सन्देह व्यक्त किया गया था, और सभाकी इस कार्रवाईको "विचारहीन और शरारत-भरी" बताते हुए कहा गया था कि सरकार इस "धन-धान्यसे पूर्ण और उपजाऊ जिले" में "लगान-वसूलीके स्वाभाविक कार्यमें किसी प्रकारका हस्तक्षेप" बरदाश्त नही करेगी। गाधीजीने तार द्वारा इसी वक्तव्यके सम्बन्धमें जानकारी प्राप्त होनेपर यह तार भेजा था।

२. गोकुलदास पारेख और विट्ठलभाई पटेल; इन दोनोंने १२ दिसम्बरको नडियाद जाकर कपड़वज और ठासरा तालुकोंके कोई २० गाँवोंका निरीक्षण किया था और मौकेपर पहुँचकर समस्याका अध्ययन करनेके बाद इन्होंने गुजरात-सभाके सामने एक रिपोर्ट पेश की थी।

नही होगा कि जिन किसानोको लगान चुकानेके लिए कर्ज लेना पड़ता हो या अपने मवेशी बेचने पड़ते हों, वे लगान न दें। सरकार जो चाहे सो करे। यदि लोगोके कष्ट वास्तविक होंगे और काम करनेवाले होशियार होंगे, तो जीत होगी ही।

[अंग्रेजीसे]

सरदार वल्लभभाई पटेल, खण्ड १

७८. पत्र : डी० जे० रीडको

मोतीहारी
जनवरी १७, १९१८

प्रिय श्री रीड,[1]

जब मैं आपके साथ काम कर रहा था, उन दिनो मुझे नही मालूम था कि आपके लिए समितिमें होनेका क्या अर्थ है। मुझे अब मालूम हुआ कि आपने अपने सिर कैसा खतरा ले रखा था। मैं आपसे सहानुभूति नही प्रकट करता, क्योकि मैं जानता हूँ कि सर्वश्री इर्विन और जेम्सनके नेतृत्वमें मिथ्या आरोप लगानेका जो एक आंदोलन-सा चला हुआ है, उसका आपपर कोई असर नही हुआ है। ईमानदारीके साथ काम करनेकी इच्छा रखनेवाले लोक-सेवी व्यक्ति केवल अपने अन्तःकरणकी सम्मति-पर ही विश्वास कर सकते है। कोई अन्य प्रमाण उनके लिए कुछ भी अर्थ नही रखता। आप जिस आगसे होकर गुजर रहे हैं, ईश्वर आपको उसे सहनेकी शक्ति प्रदान करे।

आशा है, लंकामें आपका समय अच्छी तरह कटा होगा।

हृदयसे आपका,
मो० क० गांधी

[अंग्रेजीसे]

फोटो-नकल (सी० डब्ल्यू० ४४४७) से।

१. बिहार बागान-मालिक संघके जनरल सेक्रेटरी तथा बिहार और उड़ीसा विधान-परिषद्के सदस्य; उन्होंने उत्पादन-कार्यमें लगे श्रमिकोंके प्रश्नकी जाँच-पड़तालके लिए १६ जून, १९१७को नियुक्त चम्पारन जाँच-समितिमें काम किया था।

७९. पत्र : जमनादास गांधीको

मोतीहारी
पौष सुदी ५ [जनवरी १७, १९१८]

चि० जमनादास,

तुम्हारा पत्र मिला। यदि मेवा मेरे साथ अकेली रह सके तो उसे यहाँ बुला लेनेकी व्यवस्था की जा सकती है। डॉक्टर उसे किसी अच्छे जाने-बूझे व्यक्तिके साथ अथवा तुम्हारे साथ भेज सकते हैं। उसे यहाँ पहुँचाकर तुम वापस जा सकते हो।

यहाँ चार महिलाएँ काम कर रही हैं; भाई नरहरिकी पत्नी, भाई महादेवकी पत्नी, आनन्दीबाई (एक विधवा) और अवन्तिकाबाई। सबको जुदा-जुदा गाँवोंमें भेज देनेका विचार है। तीन तो अभी गाँवमें ही रहती हैं। बा भी गाँवमें है और वहाँकी स्त्रियोंमें काम कर रही है।

कील लग जानेके कारण तुमने बहुत कष्ट भोगा। अब तो बिलकुल ठीक हो गये होगे।

रामदासने सोच-समझकर दर्जीका काम सीखना शुरू किया है। वह कुछ कमाई और कुछ कटु अनुभव प्राप्त करना चाहता है। वह नाराज होकर नहीं गया है। उसके वहाँ जानेसे मुझे प्रसन्नता हुई है। इस अनुभवसे वह बनेगा। रामदास मुझसे आर्थिक सहायताकी आशा नहीं रखता; रखनी भी नहीं चाहिए।

तुमने जो प्रश्न उठाया है वह इसीलिए उठता है कि मेरे जीवनमें परिवर्तन हुए हैं। यदि मैं शुरूसे ही गरीब होता, देश-सेवाभिलाषी ही होता, तो मुझसे किसी और बातकी आशा ही नहीं की जाती। उस सूरतमें मैं अपने बच्चोंका पालन-पोषण अपने आदर्शोंके अनुसार करता और वे बड़े होनेपर कोई और मार्ग ग्रहण करना चाहते तो कर सकते थे। परन्तु [उस हालतमें] वे मुझसे आशीर्वादके सिवाय और किसी वस्तुकी अपेक्षा न रखते। यदि मैं शुरूसे ही गरीब होता तो मुझे ऐसा अधिकार होता; तब फिर [यह अधिकार मुझे] आज भी होना चाहिए। माता-पिता अपने आदर्श बदल सकते हैं और यदि वे ऐसा करें तो बच्चोंको या तो उनके रास्ते जाना चाहिए या शान्तिपूर्वक अपना अलग रास्ता चुन लेना चाहिए। इसी तरह सब लोगोंको स्वराज्यका सुख मिल सकता है।

जब मालिककी वैसी दशा हो जाये जैसी कि तुमने चित्रित की है तो नौकरको नौकरी छोड़ देनेका हक है। हाँ, छोड़ते समय वह इस बातका ध्यान रखे कि [उससे] मालिकको उस समय कोई हानि न हो। मालिक यदि पशु बन जाये तो उसके कारोबारका क्या हाल होगा, नौकर इसका कोई भी विचार किये बिना उससे अलग हो जाये। मालिकके मातहतोंका व्यवहार भी वैसा ही हो तो भी वह नौकरी छोड़ सकता है। परन्तु सब परिस्थितियोंके लिए एक ही नियम नहीं बनाया जा सकता है। स्थितिके अनुसार ही निर्णय किया जा सकता है।

क्षत्रियके हाथमें जब कोई शस्त्र शेष नही रह जाता तब वह हाथ-पैरसे लड़ता है और लड़ते-लड़ते मर जाता है, इसके सम्बन्धमें भी कोई निश्चित नियम नही सुझाया जा सकता। कभी-कभी ऐसे अवसर भी आते हैं जब शस्त्रोंके न रहनेपर क्षत्रिय हार मान लेता है और बादमें शस्त्र प्राप्त करके पुन. सग्राम-स्थलमें आ डटता है।

सत्यका शोध पश्चिममें ही हुआ है, यह कहना उचित नही है। सत्य और अहिंसा एक जैसे हैं; यह धारणा ठीक है। एकमें दूसरेका समावेश हो जाता है। अहिंसक असत्य बोले अथवा असत्यका आचरण करे तो उसका व्रत भग हो जाता है। सत्याचरण करनेवाला व्यक्ति हिंसा करे तो उसका भी व्रत भग हो जाता है। यदि कोई व्यक्ति भयके कारण उत्तर ही न दे तो वह अहिंसा व्रतको तोड़ता है।

श्रीकृष्णको हम मनुष्य न मानकर यदि एक महान् तत्त्व [शक्ति ?] मानें तो सब शंकाएँ नष्ट हो जाती हैं। श्रीकृष्ण काल्पनिक व्यक्ति हैं परन्तु हिन्दुओंके हृदयमें वे इतनी दृढतापूर्वक विराजमान हैं कि वे, हम जितने साकार हैं, उससे कही अधिक साकार हैं। इसमें सन्देह नही कि जबतक हिन्दू धर्म जीवित है तबतक श्रीकृष्ण तो रहेंगे ही।

और भी लिख सकता हूँ परन्तु अब बस करता हूँ। [इतना जो] लिखा है वह भी कठिन परिस्थितियोंके बीचमें लिखा है।

बापूके आशीर्वाद

चि० मेवा,

अगर तुम साहसपूर्वक मेरे साथ अकेली रहनेके लिए आना चाहो तो आ जाना। तुम्हारा स्वास्थ्य सुधारूँगा और मुझे पुत्रीका अभाव है, उस अभावको तुम पूरा करनेका प्रयत्न करना।

बापूके आशीर्वाद

गांधीजीके स्वाक्षरोंमें मूल गुजराती पत्र (सी० डब्ल्यू० ५७२४) से।
सौजन्य : नारणदास गांधी

८०. पत्र : जमनादास गांधीको

मोतीहारी
पौष सुदी ६ [जनवरी १८, १९१८]

चि० जमनादास,

आज यह पत्र स्वय न लिखकर, बोलकर लिखवा रहा हूँ। ऐसा न करूँ तो इस पत्रके बिलकुल रह जानेका भय है। महँगाईके विषयमें तुमने जो लिखा है, सो ठीक है। अत्यन्त स्वादिष्ट भोजनोंसे घिरे रहकर अस्वादका व्रत लेना निश्चय ही महान् व्रत है। विरला मनुष्य ही इसका पालन कर पाता है और विरले मनुष्यको ही मोक्ष प्राप्त होता है। हम तो फिलहाल केवल प्रयत्न ही कर सकते हैं। तुम जितना बन सके उतना इसका पालन करना। मुझे लगता है कि मैं स्वय इस समय, इस सम्बन्धमें अधिक अधिकारसे लिखनेके अयोग्य हूँ। परसों आचार्य कृपलानी जेल गये, इसलिए हमने उपवास किया।

उस दिन बडे आनन्दका अनुभव किया, मैं आज वैसे आनन्दका अनुभव नही करता। कल उपवास छोड़ा, फलाहार किया। फल बहुत सुस्वादु थे लेकिन मैंने उन्हे स्वाद लेकर नही खाया, इसलिए आनन्दका अनुभव तो किया, मगर वह [पिछले दिनकी अपेक्षा] कम था। मै जानता हूँ कि आज बिना स्वादके भोजनमे स्वाद लेनेका प्रयत्न करते हुए मैंने विशेष खाया और इससे आनन्दित होनेके बदले मन दु खी हो रहा है। इस प्रकार [एक दिनमें] गिनतीकी पाँच वस्तुएँ खानेकी हद बॉधनेपर भी, और उन्हे षट्रस स्वादोसे रहित रूपमे बनानेपर भी जिह्वा रस लिया करती है, इससे आत्माको क्लेश होता है। यदि मैं ४९ वर्षका होनेपर, सयमपूर्वक रहते हुए अपनी स्वादेन्द्रियको पूरी तरहसे नियन्त्रित नही कर सका तो तुम भरी-जवानीमें सब रसोके बीच रहते हुए क्या कर सकते हो? इस त्रैराशिकका उत्तर मैं सहज ही पा सकता हूँ। मेरी तो तीव्र आकाक्षा है कि तुम और अन्य युवक जिन्होंने सयमके इस रहस्यको समझ लिया है और जो मेरे साथ उसके पालन करनेका प्रयत्न कर रहे हैं, मुझसे आगे निकल जाये। यह हो भी सकता है। मैंने पूर्ण विजय प्राप्त करनेमे बहुत समय गँवाया है। इससे अधिक मै तभी लिखूँगा जब इसके योग्य हो जाऊँगा।

गहरे घावके ऊपर कभी-कभी मिट्टी असर न करे, यह सम्भव है। [घावमें कपडेकी] बत्ती भरनेका जो इलाज चल रहा है, उसे धीरजके साथ जारी रखना। यदि अच्छी तरहसे बत्ती न भर सको तो डॉक्टरकी मदद लेना। घावका लम्बी अवधि तक न भरना ठीक नही है।

तुम्हे जो प्रश्न पूछना हो, सो पूछना। अवकाश मिलनेपर उत्तर दूँगा।

बापूके आशीर्वाद

महादेव देसाई द्वारा लिखित तथा गाधीजीके हस्ताक्षरयुक्त मूल गुजराती पत्र (सी० डब्ल्यू० ५७२५) से।

सौजन्य : नारणदास गाधी।

८१. पत्र : के० वी० मेहताको

मोतीहारी
जनवरी १८, १९१८

प्रिय कल्याणभाई,

तुम्हारा पत्र मिला। मार्ग दो ही दिखाई देते है। इनमें से एक जो उत्तम है यह है: यह बहन अपनी विद्याका शुद्ध उपयोग करे और भाग्यके सयोगसे प्राप्त पतिको सुधारनेका प्रयत्न करे। पहले स्त्रियोने ऐसे काम किये हैं और यदि यह बहन आज इतना साहस करे तो सम्बन्धित सभी लोग जल्दी सुखी हो सकते हैं। इसके लिए इस बहनको आत्मबोध होना चाहिए। अगर इतना जर्फ पास न हो, तो वह निडर होकर अपने पतिके पास जानेसे साफ इनकार कर दे। अगर पिताके घरसे उसके जबरदस्ती भेजे-जानेकी सम्भावना हो, तो उसे वहाँसे चले आनेका अधिकार है और तब कोई मित्र

उसे आश्रय दे। अगर उसे देहातमें आश्रय न दिया जा सके, तो उसे वहाँसे ले आना चाहिए। मैं चाहता हूँ कि आप अपनी मित्रताका उपयोग इस बहनके रक्षार्थ करे। उत्तम मार्ग पहले आजमाएँ।

[गुजरातीसे]
महादेवभाईनी डायरी, खण्ड ४

८२. पत्र : मगनलाल गांधीको

मोतीहारी
पौष सुदी ८ [जनवरी २०, १९१८]

चि० मगनलाल,

लगता है कि मुहम्मदअलीके बारेमें विकट संघर्ष करना होगा। अगर हिन्दुस्तान मेरे कहेपर चलेगा तो भारत-सरकारको अच्छी तरह मुँहकी खानी पडेगी। हिन्दू-मुसलमान जो कभी एक नही रहे, एक हो जायें; गोमाताकी रक्षा हो और दुनियामें अहिंसा-धर्मका जयनाद गूँजने लगे, किन्तु इस हद तक सफलता मिलनेके पूर्व मुझे कठिन अग्नि-परीक्षासे होकर गुजरना होगा। जिस सत्ताने आजतक किसी भारतीयको कुछ नही गिना, वह सत्ता मुट्ठी-भर भारतीयोंके द्वारा ललकारी जानेपर जरूर लडेगी और उस समय उसका प्रकोप असहनीय होगा। तथापि मैंने तो उसे झेलनेकी ठान रखी है। मैं यह पत्र तुम्हें इस बातकी याद दिलानेके लिए लिख रहा हूँ कि तुम सावधान रहना कि उस झंझावातमें कही आश्रमको मिला हुआ धन हम जाने-अनजाने खो न दें। यह तो मैं तुमसे कह ही चुका हूँ कि मेरे नामसे कोई चीज किसी भी जगह न रहे। सब-कुछ अपने ही नाम रखना। जहाँ-जहाँ मेरा नाम हो वहाँ-वहाँ अपना करा लेना। बम्बई बैंकमें रेवाशंकरभाईने जो रकमें जमा की हैं उनकी रसीदपर शायद हम दोनोंके, मेरे और उनके नाम हैं। उसमें मेरी जगह तुम्हारा नाम आ जाना चाहिए। दुर्घटना आदि आकस्मिक प्रसंगोंके खयालसे अपना वसीयतनामा कर देना और उसमें अपना वारिस[1]... और डॉक्टरको नियुक्त करना। इस प्रकार मैंने तुम्हारे कार्यकी रूपरेखा निश्चित कर दी है। तुम्हें कपडा बुनने तथा खेतीके काममें ही लगे रहना है। सन्तोकको[2] ऐसी तालीम देनी है कि वह उस कार्यमें तुम्हे पूरे मनसे योग दे सके। इस कामके साथ-साथ और इसकी सफलताके लिए तुम्हे राधा[3] और रुखीको[4] आदर्श कुमारिकाएँ बनानेका भगीरथ प्रयत्न करना है। यह सब करते हुए तुम्हे श्रेष्ठ धर्मका पालन करना ही पडेगा। इसलिए तुम दिन-प्रतिदिन स्वभावत मोक्षकी दिशामें अग्रसर होते रहोगे। इस प्रकार इस कार्यके द्वारा तुम्हारा सत्याग्रह और तुम्हारी देशसेवा कृतार्थ होगी। जो-कुछ भी धन हमारे पास है वह इन्ही दो प्रवृत्तियोंके लिए तथा राष्ट्रीय पाठशालाके लिए है। कानूनमें भी यही स्थिति रहेगी। जो रकमें तुम्हारे नाम की जानेवाली हैं वे तुम्हारी मिल्कियत नही

१. मूलमें यहाँ कुछ शब्द छोड दिये गये हैं।
२. मगनलाल गांधीकी पत्नी।
३ व ४. मगनलालकी कन्याएँ।

होगी। वे हमारी प्रवृत्तियोकी सहायतार्थ प्राप्त दान मानी जायेंगी। परन्तु कानूनकी मेरे द्वारा की गई व्याख्यापर भरोसा मत कर बैठना। भाई कृष्णलाल तथा मावलंकर इत्यादि के साथ सलाह-मशविरा कर लेना। प्रेमरस जहाँसे भी हाथ लगे — चोरी द्वारा भी — पी लेना, वैसे ही जैसे द्वारिकाके उस ग्वालेने पिया था। जितना पियोगे उतना तुम्हारा आनन्द बढता जायेगा। और तुम्हारा हेतु पूर्ण होगा। यदि [पुरानी चालके] खड्डीवाले करघे आज चलते होते और हम अपनी जरूरतका सूत खुद कात लेते होते तो आज रुईके इतनी मात्रामें उपलब्ध होते हुए भी कपड़ेकी इतनी ज्यादा मँहगाई हमें न भोगनी पड़ती। यहाँ वस्त्राभावके कारण लोग सरदीसे काँप रहे है। कपडेका महत्त्व प्रति क्षण मेरी समझमें आता जा रहा है। या तो मै बहुत सारे कपडे ओढकर बाहर सोऊँ और तब प्राणवायुका सेवन करूँ या कपड़ोके अभावके कारण एक डिब्बे-जैसी तग कोठरीमे पड़ा अपना दम घुटने दूँ और अपनी ही उगली कार्बोनिक गैसका फिरसे पान करता पड़ा रहूँ। ईश्वरसे मेरी प्रार्थना और तुम्हारे लिए आशीर्वाद यही है कि वह तुम्हे मेरी और तुम्हारी आकाँक्षाएँ सफल करनेकी शक्ति दे।

तुम जो-कुछ भी करो आश्रमवासियोंकी तथा राष्ट्रीय पाठशालाके शिक्षकोकी सलाहसे करो। मै १७ तक या ज्यादासे-ज्यादा १८ फरवरी तक वहाँ पहुँच ही जाऊँगा। परन्तु आज प्रात कालकी मगल घडीमें मुझे सूझा कि यह सब तो तुम्हे तुरन्त ही लिख डालूँ।

बापूके आशीर्वाद

मूल गुजराती पत्रकी प्रतिलिपि (सी० डब्ल्यू० ५७२६) से।
सौजन्य राधाबेन चौधरी

८३. पत्र : जे० एल० मैफीको

मोतीहारी
जनवरी २१, १९१८

प्रिय श्री मैफी,

आपके दोनो पत्रोके लिए आपको धन्यवाद।

मुझे भय है, मै अपने पत्रमें[1] अपना सारा आशय, शायद, समझा नही पाया हूँ। सर्वश्री अली भाइयोके जैसे नाजुक मामलोको पत्र-व्यवहारके जरिये किसी सन्तोषजनक रीतिसे समझाया भी नही जा सकता। यदि आप उचित समझें तो मेरा तुरन्त दिल्ली आकर पहले आपसे बात करना शायद अच्छा रहेगा; आवश्यक हुआ तो बादमें परमश्रेष्ठसे भेंट करूँगा। मेरे सुझावपर विचार करके-लिखें कि इस विषयमें आपका क्या खयाल है?

हृदयसे आपका,

[अंग्रेजीसे]

नेशनल आर्काइव्ज ऑफ इंडिया : होम, पोलिटिकल (डिपॉजिट). फरवरी १९१८, सं० २९ से।

१. देखिए "पत्र : जे० एल० मैफीको", १-१-१९१८।

८४. पत्र : मेसर्स लिजियर ऐंड कम्पनी, मदुराको

मोतीहारी (बिहार)
जनवरी २१, १९१८

मेसर्स लिजियर ऐंड क.
मदुरा
[महोदय,]

जिन लोगोंने बुनाई छोड दी है, उनके पुनर्वासके लिए मैंने यह पद्धति अपनाई है कि उनको सस्तेसे-सस्ते बाजार-भावपर सूत मुहैया कराया जाये और वे जितना कपडा बुनें उसे ऊँचेसे-ऊँचे बाजार-भावपर नकद दामों खरीद लिया जाये। अपनी सहूलियतके अनुसार वे सूतके दाम किस्तोंमें चुका दें, और इसपर ब्याज न लिया जाये। इस पद्धतिसे वे औसतन १७) मासिक तक कमा सकते हैं। ये जुलाहे अपना सारा समय बुनाईमें नही देते और बहुत मोटा कपडा बुनते हैं। इससे ज्यादा कमानेकी उनकी इच्छा भी नही। इतनेमें उनकी जरूरतें पूरी हो जाती हैं। मैं जानता हूँ कि जुलाहा होशियार हो, बारीक सूत बुने और थोडी कारीगरी भी करे, तो २५ रुपये महीना कमा सकता है। मेरी रायमें अगर किसी जुलाहेको अपना धन्धा छोडना पडता है, तो उससे राष्ट्रको भी उतनी ही हानि होती है; और जितने जुलाहोंको हम फिरसे धन्धेमें लगा देते हैं, उतना राष्ट्रको लाभ होता है। आप कोई भी योजना शुरू करें, किन्तु मैं चाहता हूँ कि समय-समयपर खबर देकर मुझे अपने काममें परिचित बनाये रखें।

[अंग्रेजीसे]

महादेव देसाईकी हस्तलिखित डायरीसे।
सौजन्य : नारायण देसाई

८५. पत्र : रवीन्द्रनाथ ठाकुरको

मोतीहारी
जनवरी २१, [१९१८]

प्रिय गुरुदेव,

हिन्दी साहित्य सम्मेलनके अधिवेशनमें इन्दौरमें मैं जो भाषण[1] दूंगा उसके लिए मैं निम्नलिखित प्रश्नोंपर विचारवान् नेताओंके मत एकत्र करनेका प्रयत्न कर रहा हूँ :

१. क्या हिन्दी (भाषा या उर्दू) अन्तर्प्रान्तीय व्यवहार तथा अन्य राष्ट्रीय कार्रवाइयोंके लिए उपयुक्त एकमात्र सम्भव राष्ट्रीय भाषा नही है?

१. यह भाषण २९ मार्च, १९१८को दिया गया था, देखिए "भाषण : हिन्दी साहित्य सम्मेलनमें", २९-३-१९१८

२. क्या हिन्दी कांग्रेसके आगामी अधिवेशनमें मुख्यत. उपयोगमे लाई जानेवाली भाषा न होनी चाहिए?

३ क्या हमारे विद्यालयो और महाविद्यालयोमें ऊँची शिक्षा देशी भाषाओके माध्यमसे देना वाछनीय और सम्भव नही है? और क्या हमें प्रारम्भिक शिक्षाके बाद अपने विद्यालयोमे हिन्दीको अनिवार्य द्वितीय भाषा नही बना देना चाहिए?

मैं महसूस करता हूँ कि यदि हमें जनसाधारण तक पहुँचना है और यदि राष्ट्रीय सेवकोंको सारे भारतवर्षके जनसाधारणसे सम्पर्क करना है तो उपर्युक्त प्रश्न तुरन्त हल किये जाने चाहिए और उन्हे अत्यन्त आवश्यक समझकर उनपर विचार किया जाना चाहिए। क्या आप कृपया जल्दीसे-जल्दी उत्तर देकर मुझे अनुगृहीत करेंगे?[1]

हृदयसे आपका,
मो० क० गांधी

महादेव देसाई द्वारा लिखित तथा गाधीजीके हस्ताक्षर-युक्त मूल अंग्रेजी पत्र (जी० एन० २७६५) की फोटो-नकलसे।

८६. पत्र: एक मित्रको

[मोतीहारी]
जनवरी २१, १९१८

मेरे भाषणो और लेखोकी पुस्तककी[2] प्रस्तावना कौन लिखे, अथवा उसकी आवश्यकता है या नही, इस प्रश्नका निर्णय प्रकाशकका नाम और उद्देश्य जाननेके बाद किया जा सकता है। यदि उसे कोई प्रकाशक रुपये कमानेकी नीयतसे छपवाये, तो उसके लिए सरोजिनीकी[3] प्रस्तावनाकी जरूरत होगी। यदि कोई श्रद्धालु वैष्णव छपवाए, तो वह जरूर रणछोडभाईके[4] पास जाये। यदि मेरे लेख आदि किसी ऐसे तीसरे व्यक्तिके हाथोमें हो जो मुझसे अपरिचित हो और वह किसीसे पुस्तककी विक्री सुनिश्चित करा लेना चाहे, तो मेरे मित्र अर्थात् डॉक्टर मेहताको ढूँढे। यदि तुम या मथुरादास मालिक बनो, तो प्रस्तावना होगी ही नही। अभी फिलहाल तो मैं फेलिक्स सरकसके जानवरोकी तरह प्रसिद्ध हूँ। इसलिए उक्त कारणोके अतिरिक्त किसी अन्य कारणसे मेरे ऊपर किसीकी छाप लगानेकी आवश्यकता नही रहती। जहाँ ज्वार आ रहा हो, वहाँ मेरे विचारोके समुद्रमे, जितने आदमी डुबकी लगा सकें, जल्दीसे लगा ले, इस प्रकाशनका वास्तविक

१. रवीन्द्रनाथ ठाकुरने उत्तरमें लिखा था: "वास्तवमें भारतमें अन्तर्प्रान्तीय व्यवहारके लिए उपयुक्त राष्ट्रीय भाषा हिन्दी ही है। किन्तु . . . मैं समझता हूँ कि दीर्घकाल तक हम इसे लागू नहीं कर सकते।"

२. मथुरादास त्रिकमजी द्वारा सम्पादित महात्मा गांधीनी विचारसृष्टि।

३. सरोजिनी नायडू।

४. रणछोडलाल पटवारी।

हेतु यही है। मुझे तो उन विचारोंपर ममत्व है, इसलिए आम तौर पर उनका लाभ जितने लोग ले सकें, उतने लोगोंको उनका लाभ लेनेका अवसर देनेकी इच्छा होती है। इस प्रकार इसे छपवानेमें अभी तो मैं भी प्रेरक हूँ। ऐसी स्थितिमें प्रस्तावनाकी जरूरत ही क्या है? मेरा आचरण ही शुद्ध प्रस्तावना है। जो पढ सकते हैं पढकर देख लेंगे।

[गुजरातीसे]

महादेवभाईनी डायरी, खण्ड ४

८७. पत्र : राजस्व सचिवको

मोतीहारी
जनवरी २४, १९१८[1]

सेवामें
सचिव
राजस्व-विभाग
बिहार और उडीसा सरकार

महोदय,

माननीय रायबहादुर पूर्णेन्दुनारायण सिंहको[2] चम्पारन कृषि-विधेयकके सम्बन्धमें जो कागजात दिये गये थे वे उन्होंने मुझे उपलब्ध कर दिये हैं। मैं देखता हूँ कि उनमें एक स्मृतिपत्र है जो बिहार बागान-मालिक संघ, चम्पारनके सदस्योंने दिया है[3], उसके साथ सिरनी संस्थानके प्रबन्धकोंका भेजा हुआ एक और स्मृतिपत्र भी है। प्रवर-समितिके विचारके लिए इन ज्ञापनों तथा कुछ अन्य पत्रोंका उत्तर देना आवश्यक है।

किन्तु अपने विचार व्यक्त करनेसे पहले मैं यह निवेदन करना चाहता हूँ कि यदि सरकार विधेयकमें कोई महत्त्वपूर्ण परिवर्तन करना ही चाहती है तो किसानोंका एक प्रतिनिधि परिषद्में नियुक्त किया जाना चाहिए और प्रवर-समितिमें भी रहना चाहिए। और मैं महसूस करता हूँ कि बाबू ब्रजकिशोर प्रसाद या मेरे सिवा दूसरा कोई व्यक्ति ऐसा नहीं कि जो इन हितोंका भलीभाँति प्रतिनिधित्व कर सके। मैं आशा करता हूँ कि मेरी इस प्रार्थनापर सरकार उचित ध्यान देगी।

विधेयकके उपबन्धोंपर विचार करते हुए मेरी नम्र रायमें सभी सम्बन्धित लोगोंके लिए यह स्मरण रखना अत्यन्त आवश्यक है कि सरकारने समितिकी सिफारिशोंपर

१. मूल प्रतिमें सन् १९१७ है जो स्पष्टतः छपाईकी भूल है।

२. बिहार और उड़ीसा विधान परिषद्के सदस्य। वे उस प्रवर समितिके सदस्य भी थे जिसे चम्पारन कृषि-विधेयक विचारके लिए सौंपा गया था।

३. ५ जनवरीको या उसके आसपास। देखिए परिशिष्ट १०।

एक घोषणा निकालकर अपना निर्णय[1] किसानोको बता दिया है। हम आदरपूर्वक कहना चाहते हैं कि उपर्युक्त घोषणामें किसानोको जो आश्वासन दिये गये हैं उनको कार्यरूप देनेके लिए विधेयक प्रस्तुत किया गया है। इसलिए विधेयकमें किसी महत्त्वपूर्ण मामलेमें परिवर्तनकी कोई गुंजाइश नही है। ऐसी स्थितिमे अखबारोमें जो कटुता-भरे पत्र छप रहे हैं तथा सम्बन्धित पक्षो द्वारा जो भाँति-भाँतिकी अफवाहें फैलाई जा रही हैं उनसे किसान क्षुब्ध हो रहे हैं। 'तुरत दान महा कल्यान' यह कहावत इस मामलेमें बहुत सटीक बैठती है। विधेयकको पास करनेमें अनुचित विलम्ब करनेसे भारी अनर्थ हो सकता है। इसलिए, मैं अनुरोध करता हूँ कि विधेयक जितनी जल्दी हो सके प्रान्तकी कानून-संहितामें आ जाना चाहिए।

अब मैं इन उक्त पत्रोकी जाँचपर आता हूँ। सबसे पहले मैं चम्पारनके जमीदारोके स्मृतिपत्रको लूँगा। साधारणत यह ऐसी गलतबयानियोसे भरा है, जिनके कारण यह तनिक भी महत्त्व देने योग्य नही रह जाता। इसमें कहा गया है कि कृषीय जाँच-समिति असंदिग्ध रूपसे एक कृत्रिम आन्दोलनको बन्द करनेके लिए नियुक्त की गई थी। तथ्य यह है कि समिति जमीदारोके उस आन्दोलनके फलस्वरूप नियुक्त की गई थी, जिसे उन्होने इस आशासे आरम्भ किया था कि उससे किसानोका आन्दोलन बन्द हो जायेगा या दबा दिया जायेगा। इसके समर्थनमें मैं 'पायनियर' से, जो देशमें आंग्ल भारतीयोके विचारोको व्यक्त करनेवाला एक प्रमुख पत्र है, एक उद्धरण प्रस्तुत करता हूँ। उसने १९१७ की मईके मध्य एक अकमे लिखा था·

> हमें लगता है कि बिहार और उड़ीसा सरकार, नीलकी खेतीके जिलोमें जमींदारो और किसानोके मतभेदोकी जाँच करनेके लिए तुरन्त एक आयोग नियुक्त कर देगी तो ठीक होगा। यह समझना कठिन है कि श्री गांधीकी जाँचसे क्या लाभ हो सकता है। किन्तु एक ऐसे आयोग द्वारा, जिसमें एक गैर-सरकारी तत्त्व रह सके, की गई निष्पक्ष जाँचसे दोनों पक्षोंको अपना-अपना मामला पेश करनेका अच्छा अवसर प्राप्त होगा और इसके परिणामस्वरूप अवश्य ही स्थायी शान्ति हो जायेगी।

और जूनके प्रारम्भमें बिहार और उड़ीसा सरकारने चम्पारन कृषीय जाँच-समिति नियुक्त करनेका निर्णय किया है। यूरोपीय संघके मन्त्रीने[2] ८ जून, १९१७ को बिहार और उडीसा सरकारके मुख्य सचिवको एक पत्र लिखा था, जिसमें कहा गया था .

> मेरी परिषद्को यह देखकर बहुत सन्तोष होता है कि आपकी सरकारने बिहार और उड़ीसा प्रान्तमें जमींदारों तथा किसानोके आपसी सम्बन्धोंकी जाँचके लिए एक समिति नियुक्त करनेका निर्णय किया है।

१. ये आदेश सरकारके अक्तूबर १८, १९१७ के उस प्रस्तावमें सन्निहित किये गये थे, जिसे जाँच समितिकी रिपोर्टके साथ-साथ बिहार और उड़ीसा 'गजट' में तथा रैयतके लिए प्रान्तीय भाषामें छापा गया था।

२. एलेक मार्शं।

स्मृतिपत्रमें कहा गया है कि किसानोका आन्दोलन 'कृत्रिम' था और उसका सगठन चम्पारनके वाहर किया गया था। तथ्य यह है कि यह केवल चम्पारन तक ही सीमित था और अभीतक चम्पारन तक ही सीमित रहा है तथा जिस आन्दोलनमें वड़ी संख्यामें जनसाधारणने भाग लिया हो उसे 'कृत्रिम आन्दोलन' कहना कठिन है। स्मृतिपत्रमें कहा गया है : "आन्दोलन व्यापक शिकायतका परिणाम कदापि नही था।" इसका खण्डन सरकारकी अपनी जाँचसे तथा सरकार द्वारा समितिके सामने प्रस्तुत किये गये वहुतसे कागजातसे हो जाता है।

मेरे लिए यह शोभाजनक न होगा कि मै उन वहुत-से आक्षेपोकी ओर ध्यान दूँ जो जाँच-समितिपर अनुचित रूपसे अकारण लगाये गये है।

चम्पारनके जमीदारोने अपने स्मृतिपत्रमें विधेयकके उपवन्धोमें जो विभिन्न सशोधन प्रस्तुत किये हैं अव मै उनपर विचार करता हूँ।

खण्ड ३ की धारा (१) का संशोधन : स्मृतिपत्रमें यह कहकर असावधानीकी हद ही कर दी गई है कि विधेयकका उद्देश्य

> **"विना क्षतिपूर्तिके तथा विना पर्याप्त कारणके उस प्रथा (तिनकठिया) को रद करना है जो १०० वर्षसे भी अधिक समयसे प्रचलित है।"**

यह वात इस तथ्यके वावजूद कही गई है कि जमीदारोने इस प्रथाको, जो अव लाभप्रद नही रही है, समाप्त करनेके लिए वहुत ज्यादा हर्जाना वसूल किया है और इस विधेयकका मंशा उस वेजा हर्जानेसे आंशिक रूपसे और मेरे विचारमें अपर्याप्त रूपसे राहत दिलाना है। एक जमीदारने अपने किसानोसे तावानके रूपमें ३,२०,००० रु० वसूल किये और इस आयके अतिरिक्त उसे ५२,००० रु० वार्षिककी आय शरहवेशीसे हुई। उसने इस तथ्यका उल्लेख अखवारो तकमें वड़े गर्वसे किया है। और ऐसे जमीदार अनेक हैं।

स्मृतिपत्रमें खुश्की प्रणालीके वारेमें जो तर्क दिया गया है उस सवसे यही जाहिर होता है कि स्मृतिपत्रके दाता तिनकठियाको खुश्कीके नामसे परिवर्तित रूपमें पुनरुज्जीवित करना चाहते है। मेरे खयालसे खुश्की प्रणाली वह करार है जिसे किसान स्वेच्छया जमीदारके साथ करता है और जिसके अनुसार वह आपसमें तय किये गये उचित भावसे अपनी कोई खास उपज जमीदारको देता है। करारमें कोई ऐसी धारा रखनेसे जिससे किसान अपनी सारी जमीनमें या उसके एक भागमें या उसके किसी खास खेतमें, भले ही उसे उसने स्वयं चुना हो, कोई विशेष फसल वोनेके लिए वँधता हो, तो उस करारका रूप ऐच्छिक नही रह जाता और किसान अपनी जमीनको अपनी इच्छानुसार उपयोगमें लानेके अधिकारसे वंचित हो जाता है। इस तरहकी धारा वंगाल कृषि-अधिनियमके खण्ड १७८ (३) (ख) और खण्ड २३ की सयुक्त व्यवस्थाके विरुद्ध है। पेशगी देनेकी प्रथा अवतक प्रलोभन और जाल ही सिद्ध हुई है। खुश्की करारका किसानकी जमीनसे कोई सम्वन्ध न होना चाहिए। इसमें केवल यह शर्त होनी चाहिए कि किसान जमीदारको आपसमें तय किये गये भावसे निश्चित मात्रामें नील देगा। किसान नीलको अपनी जमीनमें पैदा कर सकता है या दूसरे किसानोसे खरीद सकता है, अथवा किसी अन्य साधनसे प्राप्त कर सकता है। यदि एक वार उसकी जमीन करारके अन्तर्गत आ गई तो इसका

अनिवार्य परिणाम यह होगा कि बाध्यताकी वही भावना, जो अबतक नील उगानेके साथ सम्बद्ध रही है और जाँच-समिति तथा सरकारकी इच्छा जिलेकी भावी शान्तिके लिए जिसे दूर कर देनेकी है, धीरे-धीरे किसानके मस्तिष्कमें घुसने लगेगी और समय आनेपर उसपर हावी हो जायेगी। यहाँ मैं इसका उल्लेख कर दूँ कि विधान सभाका मुख्य ध्येय उद्योगको समृद्ध करना या कायम रखना उतना नही है जितना किसानोका कल्याण करना। यदि किसानको तिनकठिया या खुश्की प्रथाके घातक प्रभावोसे सर्वथा मुक्त करना है तो यह आवश्यक है कि (क) उस विशेष फसलको जिसे उपलब्ध करानेका जिम्मा उसने लिया है वह कहाँसे प्राप्त करना चाहता है और कैसे प्राप्त करना चाहता है, इसके लिए उसे स्वतन्त्र छोड दिया जाये और उसकी जिम्मेदारी परस्पर स्वीकृत मात्राको उपलब्ध कराने तक ही सीमित रहे, (ख) खुश्की करारोकी अवधि यथासम्भव छोटी हो, और वह जिस उत्पादनको मुहैया करता है उसकी कीमत उसे बाजार दरपर दी जाये।

स्मृतिपत्रमें खण्ड ३ (१) मे सुझाये गये (ख) और (ग) सशोधन उपर्युक्त कसौटियोपर खरे नही उतरते इसलिए किसानोके दृष्टिकोणसे वे पूर्ण रूपसे अमान्य हैं।

अब मैं स्मृतिपत्रमें खण्ड ३ (१) में प्रस्तावित सशोधन (क) पर आता हूँ जिसमें तिनकठिया प्रथाको, चाहे वह पट्टेकी शर्तके रूपमें हो अथवा साटे या करारोसे अस्तित्वमें आई हो, १९२० तक बढानेकी बात कही गई है। यह प्रस्ताव अत्यन्त खतरनाक है और इससे समितिकी रिपोर्टमें उल्लिखित तीन प्रमुख सस्थानो द्वारा दिया गया वचन भी भग होता है। समितिकी सिफारिश है कि इसे अक्तूबर १९१७ से समाप्त कर देना चाहिए और इसपर कार्रवाईकी जा चुकी है। अब यदि चम्पारनके नील-उत्पादकोका, जिन्होंने स्मृतिपत्रपर हस्ताक्षर किये हैं, प्रस्ताव स्वीकार कर लिया जाये तो इससे घाव फिर हरा हो जायेगा और इसके अकल्पनीय परिणाम होगे। वास्तवमें प्रस्तावका अभिप्राय समितिकी रिपोर्ट और उसके आधारपर की गई सरकारी घोषणाके प्रभावको बेकार करना है। इस प्रथाको जारी रखनेका मुख्य कारण यह बताया जाता है कि नील-उत्पादक बीज ले चुके हैं और वे नीलकी अगली फसल बोनेकी पूरी तैयारी कर चुके हैं। किन्तु यह नही भूलना चाहिए कि वे खुश्कीकी प्रथाका आश्रय ले सकते हैं और वे बीज, यन्त्रो तथा अन्य सब वस्तुओका उपयोग उसके अन्तर्गत कर सकते हैं। यह सच है कि वास्तविक खुश्की प्रथासे किसानोपर उनका प्रभुत्व उतना न रहेगा, जितना साटेसे रहता है और न उन्हें उतना भारी लाभ ही होगा जितना अबतक होता रहा है। किन्तु उन्हे न्यायकी दृष्टिसे इस तरहकी एक पक्षीय सुविधाएँ लेनेका अधिकार कभी नही था। हम चाहे कैसे ही सोचें इस प्रथाको जारी रखनेका औचित्य सिद्ध करना कठिन है।

रही खण्ड ३ (१) के सशोधन (ग) की बात, जिसमें इस बाध्यताको पेशगीकी वापसी तक जारी रखवानेका प्रयत्न किया गया है। मुझे यह देखकर दुःख होता है कि राजस्व निकाय भी उसके जालमे फँस गया है। क्षण-भर विचार करनेसे ही मालूम हो जायेगा कि यदि यह बाध्यता इस प्रकार जारी रखी गई तो उसे अनन्तकाल तक जारी रखना पड सकता है, उससे किसान परेशान किये जा सकते हैं और बहुत-से

मुकदमे खड़े हो सकते हैं। तब यदि नील-उत्पादक चाहेगा तो किसानसे पेशगी कभी वापस ही न माँगेगा और तब सम्भव है, भोला किसान सदा गुलामीमें ही जकड़ा रह जाये। मुझे आशा है कि यह दलील न दी जायेगी कि नील-उत्पादकोंको पेशगीकी वापसीका भरोसा होना चाहिए। वस्तुतः उन्हें इसकी आवश्यकता नहीं है। किसान उनके आसामी हैं और उनपर उनका अधिकार होता है जिसके बलपर वे किसी भी देनदारीको उनसे वसूल कर सकते हैं। इसलिए मुझे यह कहना पड़ता है कि प्रस्तावित संशोधन इस अनिष्टकारी प्रथाको ज्यादासे-ज्यादा दिन तक जारी रखनेकी एक चाल-मात्र है। यदि उक्त संशोधन स्वीकार कर लिया गया तो इससे प्रस्तावित विधानका सान्त्वनाप्रद प्रभाव लगभग नष्ट हो जायेगा और चम्पारनमें आग भड़क उठेगी।

खण्ड ४ (शरहबेशी) में प्रस्तावित संशोधन . इस खण्डके सम्बन्धमें पहला संशोधन सिरनी संस्थानके प्रबन्धक द्वारा किये गये आवेदनपर आधारित है। किन्तु यह संशोधन जिस रूपमें है, उसमें कहा गया है कि कमीकी दरके प्रश्नपर न केवल सिरनीके सम्बन्धमें बल्कि जलहा तथा मोतीहारीके संस्थानोंके सम्बन्धमें भी पुनर्विचार किया जाये। इस मामलेपर पुनर्विचारका कोई भी कारण नहीं है। मोतीहारी संस्थानके मैनेजर श्री इर्विन समझौतेमें शामिल थे। जहाँतक सिरनीके प्रश्नका सम्बन्ध है, मैं नहीं जानता कि मैं जाँच-समितिके रुखकी व्याख्या करनेके लिए स्वतन्त्र भी हूँ। मैं केवल इतना ही कह सकता हूँ कि जाँच-समितिको मामला पुनः सौंपे बिना उन अंकोंपर विचार नहीं किया जा सकता, क्योंकि वे उस सुचिन्तित समझौतेके परिणाम हैं जो केवल समिति और नील-उत्पादकोंका ही समझौता नहीं है, बल्कि उन विभिन्न हितोंका भी समझौता है जिनका स्वयं समितिमें प्रतिनिधित्व था। समझौता एक पूरी चीज और अखण्ड है और पूरी चीजको भंग किये बिना उसके एक अंशका भंग नहीं किया जा सकता। यह सच नहीं है कि श्री बायन[1] जैसा उन्होंने अपने आवेदनमें कहा है, गवाही देनेके लिए बुलाये गये या उन्हें अपना वक्तव्य दर्ज करानेका अवसर नहीं दिया गया। सब लोगोंके लिए आम सूचना निकाली गई थी कि यदि वे कोई गवाही देना चाहें तो अपना वक्तव्य भेज दें, वह उनपर भी लागू होनी थी। इतना ही नहीं, बल्कि समितिकी रिपोर्टमें उनसे यह दिखानेके लिए खास तौरपर कहा गया था कि शरहबेशीमें किस दरसे कमी की जाये? इसका निश्चय मुख्यतः इस बातको ध्यानमें रखकर न किया जाना चाहिए कि शरहबेशी किस दरसे की गई थी। जो दलील इस मामलेमें लागू होती है वही आम तौरपर जलहाके मामलेमें भी लागू होती है।

खण्ड ४ (२)में संशोधन : एक मुद्दा ऐसा है जिसपर चम्पारनके नील-उत्पादकोंके स्मृतिपत्रसे सहमत होना सम्भव है। वह यह है कि इस विधेयकके अन्तर्गत जो लगान निश्चित किया जाये वह अन्तिम तथा अनिवार्य हो। यह उचित है। किन्तु जो भी संशोधन किया जायेगा उसमें अनियमितता तथा अधिकारपत्रके उल्लंघनकी बिनापर अपील करनेका अधिकार सावधानीसे सुरक्षित करना होगा।

विधेयकका खण्ड ५ : मैं इस आशयका संशोधन भेज ही चुका हूँ कि इस खण्डमें से "अपने पट्टेकी जमीनपर या उसके किसी भागपर लगाई गई" शब्द निकाल दिये

१. सिरनी संस्थानके मालिक।

जायें। तिनकठियापर विचार करते हुए इस पत्रके पूर्व भागमें मैं बता चुका हूँ कि खुश्की करारमें किसानकी जमीनका उल्लेख क्यों नही किया जाना चाहिए।

चम्पारनके नील-उत्पादकोंने स्मृतिपत्र द्वारा इस खण्डमे दो सशोधन प्रस्तावित किये हैं।

पहला यह है कि धारा (१) मे 'तीन' शब्द के स्थानमें 'पाँच' शब्द कर देना चाहिए। दूसरे शब्दोमे कहे तो साटेकी अवधि केवल तीन वर्षकी नही, बल्कि पाँच वर्षकी कर दी जाये। सचाई यह है कि तीन वर्षकी अवधि भी रियायतके रूपमें रखी गई है। खुश्की करारकी अवधि यथासम्भव छोटी होनी चाहिए। स्मृतिपत्रमें लम्बी अवधिके साटोकी समाप्तिके प्रस्तावपर खेद प्रकट किया गया है और इस बातको भुला दिया गया है कि समितिके सामने साक्षी देनेवाले किसी भी नील-उत्पादकने लम्बी अवधिके साटोके समर्थन करनेका साहस नही किया था और उनमेंसे कुछने तो यहाँतक कहा था कि वे साटोको लागू नही करते। गन्नेके साटोके बारेमें भी गॉर्डन कैनिंगने[1] कहा था कि "जब उन्होंने गन्ना बोना प्रारम्भ किया था तब साटे किये गये थे, किन्तु वे लागू नही किये गये थे, इसलिए उन्हे रद समझा जाये।"

स्मृतिपत्रमे एक अन्य सुझाव यह है कि किसान इस बातको सदा बहुत ज्यादा पसंद करेंगे कि उन्हे मालकी तोल या कूतकी अपेक्षा जमीन, जिसमे निर्दिष्ट फसल बोई गई हो, के रकबेके आधारपर एक बँधी दरसे दाम दिया जाये। यह मेरे अनुभवके प्रतिकूल है। यह समझ लेना चाहिए कि इस सम्बन्धमें भी अन्य बातोकी तरह वास्तविक उद्देश्य तिनकठियाको[2] पुनर्जीवित करना ही है।

[अंग्रेजीसे]

सिलैक्ट डॉक्यूमेंट्स ऑन महात्मा गांधीज़ मूवमेंट इन चम्पारन

८८. पत्र : डॉ० कुलकर्णीको

[मोतीहारी]
जनवरी, २४, १९१८

प्रिय श्री कुलकर्णी,

अपना पिछला पत्र भेजने तक मैं आपका भेजा हुआ साहित्य पढ चुका था, किन्तु मुझे वह अपने प्रयोगोंसे विमुख करने योग्य समर्थ नही लगा। आप जो कहते हैं, सभव है वह सच हो और न भी हो। नमक तमाम रोगोके लिए रामबाण हो, तब तो उसका उपयोग दुगुना या चौगुना करानेकी कोशिश करनेमें भी कुछ उठा नही रखना

१. पुरसा संस्थानके प्रबन्धक।

२. कोई एक सप्ताह बाद गाधीजीने बिहार और उड़ीसा सरकारकी कार्यकारिणी परिषदके सदस्य श्री डब्ल्यू० मौंडसे भेंट की और उनसे खुश्की, शरहबेशी आदिके सम्बन्धमें विस्तृत रूपसे चर्चा की। इस भेंटके विषयमें केवल श्री मौंडकी टिप्पणी ही उपलब्ध है। देखिए परिशिष्ट ११।

चाहिए। मुझे तो प्लेग वगैरा रोगोंको नमकके प्रयोगसे सफल रूपमें दूर करनेके बारेमे आंकडे चाहिए। निरामिष-आहार सम्बन्धी पुस्तकोमें नमकके प्रयोगके विरुद्ध मैंने काफी पढा है, इसीलिए मैंने स्वयं नमक छोड़कर देखा। लगभग सात वर्ष पहले कस्तूरबा सख्त रक्तस्रावसे बीमार थी। कूनेके कटिस्नान और खुराकके कड़े प्रयोगोंसे मैं उसका उपचार कर रहा था। जब मैं लगभग निराश हो गया, तब मुझे विचार आया कि श्रीमती वेलैंसने नमक और डॉ० हेगने दालके विरुद्ध खूब कहा है। डॉ० वेलैंसकी दलील यह है कि नमक उत्तेजक और प्रदाह-जनक है। वह प्राणिज न होनेके कारण बिना पचे ही बाहर निकल जाता है और निकलते-निकलते काफी नुकसान कर जाता है। वह पाचन-रसकी ग्रन्थियोंको जरूरतसे ज्यादा उत्तेजित करता और मेदेमें प्रदाह उत्पन्न करता है और मनुष्यको जरूरतसे ज्यादा खिला देता है। इस प्रकार वह पाचन-तन्त्रपर जरूरतसे ज्यादा बोझ डालता और उनको कमजोर करता है। सब लोगोंकी तरह कस्तूरबा और मैं नमकको पसन्द करते थे। उसे खासी मात्रामें लेते थे। मैंने अपने मनसे दलीलकी कि शरीरको जो नमक मिलता है, वही शायद उनकी बीमारीको लम्बा करनेके लिए जिम्मेदार है। दालके मामलेमें मैंने जो दलील की, उसमें उतरनेकी कोई जरूरत नहीं देखता। उस समय मैं खुद काफी स्वस्थ था। स्वास्थ्यके कारण मुझे कोई परिवर्तन करनेकी जरूरत ही नहीं थी। फिर भी मैंने देख लिया कि मैं नमक और दाल न छोड दूं, तो कस्तूरबाको वैसा करनेपर राजी न कर सकूंगा। इसलिए ये दोनों चीजें मैंने छोड दी और कस्तूरबासे भी छुडवा दी। उसके उपचारमें मैंने और कोई परिवर्तन नहीं किया। एक हफ्तेमें ही खून बन्द हो गया और उनका अस्थिपंजर-जैसा शरीर भरने लगा। तबसे अभीतक मैंने नमक नहीं खाया, किन्तु कस्तूरबाको तो नमककी आदत ऐसी पडी थी कि उसे छोड देनेकी जरूरत समाप्त होनेपर वह उसे फिर शुरू करनेके लालचका मुकाबला न कर सकी। इसलिए पूरी तरह अच्छी हो जानेके बाद उसने नमक लेना शुरू कर दिया। अब भी समय-समयपर जब उसे रक्तस्राव हो जाता है, तब नमक छोड देने और घर्षण-स्नान करनेसे वह बिलकुल अच्छी हो जाती है। अपने प्रयोगके इन सात वर्षोंमें मैंने दमा और फेफडोंकी दूसरी व्याधियोंवाले रोगियोंका इलाज बिना नमककी खुराक देकर किया और इसके हमेशा अच्छे ही परिणाम निकले हैं। अपने विषयमें मैं कह सकता हूँ कि जिन-जिन लोगोंके सम्पर्कमें आया हूँ, नमक न लेनेके कारण मैं उन सबसे कुछ-ज्यादा बीमार नहीं रहा। मैं मानता हूँ कि बिना नमककी खुराकसे अपने ब्रह्मचर्य-व्रतके पालनमें मुझे काफी मदद मिली है। ये सारे अनुभव मेरे सामने मौजूद होनेके कारण नमककी आपकी साग्रह हिमायतसे मुझे जरा आघात लगा है। हाँ, मैं अपने शरीरमें एक बडा परिवर्तन देख रहा हूँ और उसके बारेमें मैंने डॉक्टरोंके साथ चर्चा भी की है, किन्तु वे उसपर कोई प्रकाश नहीं डाल सके। मुझे कोई चोट लगती है, तो वह पहलेसे बहुत जल्दी अच्छी हो जाती है। लम्बे सफरके बाद भी मुझे बहुत अधिक थकावट महसूस नहीं होती। लेकिन मालूम पडता है कि मैं एक हरी टहनीकी तरह नाजुक और लचीला बन गया हूँ। मेरी चमडी बहुत नाजुक और नरम हो गई है। यह छुरीसे अपेक्षाकृत ज्यादा आसानीसे कट जाती है। यद्यपि मैं हमेशा नंगे पैर चलता हूँ, फिर भी मेरे पैरके तलवे औरोंकी तरह कडे और मोटे नहीं पड रहे हैं। मेरे मसूड़े नरम हो गये हैं और मुँहमें जो थोडेसे दाँत हैं,

वे उपयोगकी अपेक्षा शोभाके लिए ही अधिक हैं। क्या यह भी सम्भव है कि यह नाजुकपन बिना नमककी खुराकका परिणाम हो? अलबत्ता, अपने जीवनके तरीकेमें मैंने और बहुत-से परिवर्तन किये हैं, इसलिए अकेले नमकको इसके लिए जिम्मेदार मानना मुश्किल है। अपने शरीरकी इस खराबीके प्रति — अगर उसे खराबी माना जा सकता हो तो — मेरा ध्यान न खिचा होता, तो और बहुत-से लाभोके कारण, जिनका मैंने अनुभव किया है, मैं बिना नमककी खुराककी बड़ी जोरदार हिमायत करता। अगर आपसे मुझे कोई नई जानकारी मिले, तो थोडे ही समयके लिए क्यो न हो मैं नमक खाना शुरू करना चाहूँगा और अपने शरीरपर उसके क्या परिणाम होते हैं, यह देखूँगा। अपना प्रयोग थोडे समयके लिए बन्द रखना वाछनीय है या नही, इसकी चर्चा डॉक्टर देवके साथ कर ही रहा था कि आपका पत्र आ गया। मैंने अपना पिछला पत्र उसीके उत्तरमे लिखा था। इस मामलेमे आपके पास निश्चित जानकारी हो और आप वैज्ञानिक दृष्टि रखनेपर इतना आग्रह करते हो कि उत्साह के आवेगमे भी सत्यके मार्गसे जरा भी विचलित होनेसे इनकार करे, तो मैं प्लेगकी जाँच और इस बातकी खोज करनेके लिए कि मनुष्यके भोजनमें नमकका मूल्य वास्तवमें कितना है, आपका सहयोग प्राप्त करना चाहूँगा। आपकी बताई हुई पुस्तकें जुटानेकी कोशिश करूँगा।

[अग्रेजीसे]

महादेव देसाईकी हस्तलिखित डायरीसे।
सौजन्य : नारायण देसाई

८९. पत्र : काका कालेलकरको[1]

[मोतीहारी]
जनवरी २४, १९१८

आरोप सच भी हो सकता है और झूठ भी। अगर सच हो तो अपराधीको प्रायश्चित्त स्वरूप जेल जाना चाहिए; और यदि व्यक्ति निरपराध हो [फिर भी उसे सजा दी गई हो तो] उसे चाहिए कि वह न्यायाधीशको शिक्षा देनेके विचारसे जेल जाये। यदि सभी निर्दोष व्यक्ति अपनेको निर्दोष घोषित करते हुए जेल जाने लगें तो हो सकता है किसी दिन कोई निर्दोष व्यक्ति सजा ही न पाये। इतना तो हुआ साधारण दृष्टिसे विवेचन। प्रोफेसरके मामलेमें बहुत-सी विशेषताएँ हैं। उनपर मामला घोडेको तेजीसे हाँकनेके कारण ही नही चलाया गया था। सरकारको यह तो एक बहाना मिल गया था। इस मामलेको चलानेका हेतु यही था कि जैसे भी हो मुझे और मेरी आडमें

१. यह पत्र उनके इस प्रश्नका उत्तर देते हुए लिखा गया था कि प्रोफेसर कृपलानीका जेल जाना सत्याग्रह कैसे हो सकता है और इस सम्बन्धमें अपील क्यों नहीं की गई।

इस आन्दोलनको अप्रिय बनाया जाये। मेरे विरुद्ध न सही मेरे किसी सहयोगीके विरुद्ध भी कुछ किया जा सके, तो मेरे प्रतिपक्षी खुश होंगे, ऐसी कुछ मान्यता इसके पीछे थी। ऐसे समय प्रोफेसरका जेल जाना और अपना स्वरूप दिखाना जरूरी था। फिर यहांके लोग जेलमें जानेसे बहुत डरते हैं। उनका भय निकालनेका यह एक सुन्दर अवसर था। इसे छोड़ा नहीं जा सकता था। खुद प्रोफेसरके लिए भी यह अनायास प्राप्त अनुभव छोड़ देना ऐसा ही होता, जैसा लक्ष्मीके तिलक लगानेके लिए आनेपर कोई मुंह छिपा ले। स्वयं कष्ट भोगना और अन्यायका विरोध करना ही 'सत्याग्रह' है। न्यायाधीशका निर्णय खालिस अन्याय था। जेल-यात्राका कष्ट स्वीकार करके प्रोफेसरने सत्याग्रह किया। अपील करना सत्याग्रहके क्षेत्रमें ही नहीं आता। शुद्ध सत्याग्रहमें सफाईकी गुंजाइश नहीं होती। हम जिस सत्याग्रहको देख रहे हैं, वह शुद्ध नहीं, मिश्रित सत्याग्रह है। यह मिश्रण हमारी कमजोरीका माप और लक्षण है। जब शुद्ध सत्याग्रह किया जायेगा, तब दुनिया उसका आश्चर्यजनक प्रभाव देखेगी, यह मेरा दृढ़ विश्वास है। इसलिए सत्याग्रह की दृष्टिसे तो अपील करनी ही नहीं थी, किन्तु अपील नहीं की गई इसमें सत्याग्रहका शुद्ध रूपमें पालन करनेकी इच्छा गौण थी। मेरे खयालसे मामला इतना कमजोर था कि हमने अपील वगैरह करके उसे बड़ा रूप नहीं दिया और इस प्रकार हम न्यायाधीशका पक्षपात और अज्ञान दोनों आसानीसे दिखा सके। फिर कोई भी वकील यह आश्वासन नहीं दे सका कि अपील करेंगे तो उसमें हम जीतेंगे ही। वकीलोंने मैंने कह दिया था कि उनकी इच्छा हो तो वे अपील करें, किन्तु हारकर आयें, तो मैं जरूर दोष दूंगा। इस मुकदमेमें अपील नहीं की जा सकती थी, नजरसानी ही कराई जा सकती थी। नजरसानी में बड़ी अदालत भी तथ्योंपर विचार नहीं करती, सिर्फ कानूनी गलती ही सुधारती है। इस मामलेमें बचावकी कानूनी गुंजाइश नहीं थी। तुम देखोगे कि इसमें सत्याग्रह और संसार जिसे 'व्यावहारिकता' कहता है, उसकी भी रक्षा हुई है।

[गुजरातीसे]

महादेवभाईनी डायरी, खण्ड ४

९०. पत्र : जमनादास गांधीको

[मोतीहारी]
जनवरी २४, १९१८

चि० जमनादास,

तुम्हें अपना काम छोड़कर मेरे पास रहनेसे कुछ मिलेगा नहीं। थोड़े दिन बाद तुम्हीं ऊब जाओगे और अपने उपेक्षित कर्त्तव्यको याद करोगे।

इसलिए तुम्हें वहीं रहकर आनन्द खोजना चाहिए। तुम्हारी इस समय मेरे पास रहनेकी इच्छा एक प्रकारका 'विषय' है। और जिस तरह विषयके उपभोगके बाद हममें थकान और निराशा आती है, उसी तरह तुममें भी अभी मेरे पास थोड़े समय रहने

के वाद निराशा आ जायेगी। यह आदर्श अपने सामने रखो कि तुम्हे किसी दिन मेरे पास आना है और इस बीच हाथके कामोको पूरा करके आनेके योग्य बनो।

बापूके आशीर्वाद

[गुजरातीसे]
महादेवभाईनी डायरी, खण्ड ४

९१. पत्र: मगनलाल गांधीको

मोतीहारी
पौष सुदी १२, [जनवरी २४, १९१८]

चि० मगनलाल,

प्रोफेसरकी जेल-यात्रापर तुम लोगोने उत्सव मनाया सो अच्छा ही किया, सगीत-शास्त्रीपर भी ठीक रग चढ गया है। काकाके नाम भेजे गये पत्रसे[1] प्रोफेसरके वारेमें तुम्हे सव कुछ मालूम हो जायेगा। अगर फकीराने[2] राजोको स्वयसेवकोके रूपमें काम करनेको भेजा है तो इससे प्रकट होता है कि उसके अन्तस्तलमें अभी भी आश्रमके लिए स्थान है। ठाकुरलालकी वीमारीने तो वहुत दिन ले लिये। भाई व्रजलाल जैसा स्वास्थ्यकर ले वहाँ पहुँचे, वैसा ही वनाये रखें तो ठीक है। यहाँ वागान-मालिक वडी चीख-पुकार कर रहे हैं। मैं जितना सावधान हूँ उतना ही निश्चिन्त भी हूँ; मुझे तो मुख्यत. इतनी ही निगरानी रखनी है कि किसान कोई गलत कदम न उठा पाये। मैं नरहरिको भरसक जल्दी ही वापस भेज दूंगा। मुझे भी ऐसा लगता है कि राष्ट्रीय शालाको किसी प्रकारका धक्का नही लगना चाहिए। तुम्हारा स्वास्थ्य ठीक होगा। प्रभुदाससे कहना कि पत्र लिखा करे।[3]

वापूके आशीर्वाद

मूल गुजराती पत्रकी महादेव देसाई द्वारा की गई प्रतिलिपि (एस० एन० ६३३२) की फोटो-नकलसे।

१. देखिए "पत्र: काका कालेलकरको", २४-१-१९१८।
२. फीनिक्स आश्रमके एक कार्यकर्ता; देखिये खण्ड ११, "डायरी: १९१२"।
३. इसके बाद महादेव देसाईने छगनलाल गांधीके नाम निम्नलिखित पंक्तियाँ जोड़ी थीं: "बापूजी लिखाते हैं कि पोलकके खातेमें रु० ३,००० जमा करना; यही ठीक होगा। साथके कागज मावलंकरको देना।"

९२. पत्र : छगनलाल गांधीको

मोतीहारी
पौष सुदी १४ [जनवरी २५, १९१८]

चि० छगनलाल,

तुम्हारा पत्र मिला। चि० मथुरादासको सौंप देनेमें हेतु यह है कि वह उन्हें अपनी मरजीके मुताबिक प्रकाशित कराये। अंग्रेजी भाषणोंका अनुवाद अवश्य होना चाहिए। इस कामको वह कर सकता है, उसमें काफी योग्यता है, उसे यह काम पसन्द भी है। "अनुवाद करते-करते कदाचित् विशेष आत्मदर्शन कर पाऊँ"—यह लोभ भी उसके मनमें है। वह बहुत चरित्रवान् युवक है। देश-सेवा करनेका इच्छुक है। मेरे साथ लगा रहा है और उसने अपनी यह इच्छा बड़ी सुन्दर भावनासे प्रेरित होकर प्रकट की है। इस प्रकार अनेक कारणोंसे मेरे मनमें यह आया कि यह काम उसीको सौंपना ठीक होगा। प्रूफ इत्यादि पढ़नेके लिए उसके पास समय भी पर्याप्त है। किन्तु जबतक तुम उसकी सहायता नहीं करते तबतक तो वह पखहीन पंछी-जैसा है। जब हम ये लेख उसके हवाले करेंगे तभी वह सामग्री इकट्ठी कर सकेगा। वह केवल नटेसन द्वारा प्रकाशित पुस्तकका अनुवाद कर लेनेसे सन्तुष्ट होनेवाला नहीं है। अगर तुम इसका अनुवाद करनेके कामसे मुक्त हो सको तो तुम्हारे सामने अन्य अनेक काम पड़े हैं। अब एक ही प्रश्न रह जाता है। अगर तुमने अखण्डानन्दजी आदिको वचन दे रखा है और वे तुम्हें उस वचनसे मुक्त न करें तो मथुरादासको निराश करना ही होगा। अगर वे इन्हें प्रकाशित करें तो भी प्रूफोंके बारेमें कुछ व्यवस्था तो करनी होगी।

मैंने तुम्हारा नोट पढ़ लिया है। तुम यदि उसे बढ़ाना चाहो तो उसमें अभी काफी बढ़ानेकी गुंजाइश है। 'इंडियन ओपिनियन' में मेरे अनेक लेख ऐसे हैं जो मुझे बहुमूल्य प्रतीत हुए हैं। उनमें से चुनाव किया जा सकता है। दक्षिण आफ्रिकामें मैंने जो अनेक प्रार्थनापत्र लिखे थे उनमें बहुत-सा इतिहास आ गया है। 'खुली चिट्ठी'[1] 'हरी पुस्तिका'[2] नामक दो चौपतियों, जिनमें से पहली सन् १८९४ में लिखी गई थी और दूसरी यहाँ, में अनेक सरकारी रिपोर्टोंका सारांश है। गिरमिट प्रथाके बारेमें मैंने १८९४ में जो आवेदन-पत्र[3] तैयार किया था उसमें गिरमिट प्रथाके सम्बन्धमें अनेक सरकारी खरीतोंका निचोड़ दिया हुआ है। इस तरह यदि तुम दक्षिण आफ्रिकावाला सन्दूक खोलोगे तो उसमें तुम्हें हर तरहकी बहुत-सी उपयोगी सामग्री मिलेगी। जो व्यक्ति इन

१. देखिए "खुली चिट्ठी", दिसम्बर १८९४, खण्ड १, पृष्ठ १४२-६६।

२. देखिए "दक्षिण आफ्रिकावासी ब्रिटिश भारतीयोंकी कष्ट-गाथा", १४-८-१८९६, खण्ड २, पृष्ठ १-५९।

३. शायद गांधीजीका अभिप्राय "प्रार्थनापत्र : लॉर्ड रिपनको", जुलाई १७, १८९४ से है; देखिए खण्ड १, पृष्ठ ११७-१२८।

लेखो इत्यादिका संकलन करना चाहेगा उसे इस काममें कमसे-कम छ. माह तो लगाने ही पड़ेंगे। और अगर 'धर्म नीति'[1] आदि पुस्तके छापने बैठेंगे तो यह काम और भी लम्बा हो जायेगा। १८९०–९१में जो लेख[2] मैंने विलायतमें लिखे थे उन्हे भी शामिल किया जा सकता है। वे कहाँ होगे यह मुझे याद नही है ऐसा स्मरण आ रहा है कि मणिलाल या हरिलालने उन्हे सँभालकर रख छोडा है।

बापूके आशीर्वाद

महादेव देसाई द्वारा लिखित तथा गांधीजीके हस्ताक्षर-युक्त मूल गुजराती पत्र (एस० एन० ६३३४)की फोटो-नकलसे।

९३. पत्र: ग० वा० मावलंकरको

[मोतीहारी]
जनवरी २७, १९१८

भाईश्री मावलंकर,

सभा द्वारा तैयार किये गये खेड़ा सम्बन्धी प्रेस नोटके जवाबके मसविदेके बारेमें आपका पत्र मिला। जवाबका पहला भाग मुझे जितना अच्छा लगा, आखिरी उतना ही कमजोर। मैं उसे सुधारनेके झझटमें नही पड़ता। खेडा जिलेके बाहरकी किसी संस्थाका जिलेसे कुछ सरोकार नही है, सरकारके इस खयालका बड़ा जोरदार जवाब दिया जा सकता है। सभामें खेड़ा जिलेसे कोई भी सदस्य न आया हो, तो भी सभाको [वहांके और यहांतक कि] गुजरातके किसी भी हिस्सेके सम्बन्धमें सरकारको लिखनेका अधिकार है। इतना ही नही बल्कि यह उसका कर्त्तव्य है। जाँच समितिके सदस्योके नाम लेना जरूरी था। नये [जूनियर] और पुराने [सीनियर] अधिकारियोमें जो भेद दिखाया गया है, यह अनुचित है। इससे हमने, अनजाने ही सही, यह मान लिया जान पड़ता है कि पुराने अधिकारी होते, तो वे बारीकीसे और उचित जाँच करते। हमारा दावा तो यह है कि सरकारी अधिकारी होनेके कारण ही वे अनुभवी और अपनी जिम्मेदारी समझनेवाले प्रजाजनोकी अपेक्षा कम विश्वासपात्र हैं; क्योकि वे [अधिकारी] अपने स्वार्थकी रक्षाके लिए ही लिये जाते है और उनकी आदत जनताकी बातको ठुकरानेकी होती है, जब कि जनताके नेताओमें स्वार्थ नही होता वे तटस्थ होते हैं और जानते है कि उनकी भूलको दरगुजर नही किया जायेगा; इस कारण उनकी जाँच ज्यादा विश्वसनीय होती है। ये सारी बातें हमें अच्छी तरह बतानी चाहिए थी। इस झगड़ेसे हम [जनताको] शिक्षित करना चाहते है और यह दिखाना चाहते हैं कि जैसे

१. खण्ड ६ में "नीतिधर्म अथवा धर्मनीति" शीर्षकसे प्रकाशित।

२. गांधीजीके शुरू-शुरूमें लिखे गये ये लेख सन् १८९१ **वेजिटेरियन** और **वेजिटेरियन मेसेंजरमें** प्रकाशित हुए थे। इनके लिए देखिए खण्ड १।

सरकार अपनी प्रतिष्ठाकी रक्षा के लिए उत्सुक है, वैसे ही हम भी अपनी प्रतिष्ठाकी रक्षाके लिए उत्सुक हैं। सरकार अपनी प्रतिष्ठाको प्राय अपनी सत्ताके जोरसे कायम रखती है, किन्तु हमें इसको केवल अपने न्यायपूर्ण कार्यसे कायम रखना चाहिए। जनताको इस तरहका विस्तृत अनुभव और निश्चित पथ-प्रदर्शन मिले, तो उससे उसे स्वराज्यकी बड़ी तालीम मिलेगी। मैंने इस हदतक यह आलोचना इसीलिए की है।

दूसरी बात जो मैं कहना चाहता हूँ यह है कि ऐसे समय किये हुए कामका मूल्य आसानीसे आँका जा सकता है। समितिको दूसरे सारे कामोको छोड़कर भी तुरन्त अपनी बैठक करनी चाहिए। सार यह है कि समितिका कार्य स्थगित नही किया जा सकता। समितिमें ऐसे होशियार और जिम्मेदार लोग होने चाहिए, जो जब जरूरत पड़े, उपस्थित हो सके। अगर हमारा मामला सच्चा हो, तो उससे हजारो गरीब लोगोकी रक्षा हो सकती है। जैसे हम अपने निजी स्वार्थके लिए सब कुछ त्याग देना न्याय-संगत मानते हैं, वैसा ही आचरण हम इस सार्वजनिक स्वार्थकी खातिर करनेके लिए बाध्य हैं। यह हरएक सार्वजनिक कार्यकर्त्ताकी गुप्त प्रतिज्ञा होनी चाहिए। मेरा खयाल है कि हमारा जवाब बहुत देरसे गया माना जायेगा। अक्सर सरकार अपेक्षाकृत अधिक सावधान होनेके कारण ही सार्वजनिक आन्दोलनको दबा पाती है। न्याय 'सोनेवालेको नही, जागनेवालेको ही सहायता दे पाता है।' यह वाक्य अदालतमें दुहरानेके लिए ही नही है; यह हमारे हर व्यवहारमें लागू होता है।

आप सब बहुत अच्छा काम कर रहे हैं और आप अडिग रहे हैं, इसीलिए मैंने आपकी उक्त आलोचना की है। अगर मेरा यह कहना होता कि आप आलसी हैं, तो यह बात मैंने अपनी चुप्पीसे ही बता दी होती। ऐसा कहनेके लिए कालक्षेप करना मेरा तरीका ही नही है। आप अधिकाधिक सावधान बनें और तीस वर्ष पुरानी इस सभाका सम्मान बढे, इसी उद्देश्यसे उक्त प्रेमोद्गार प्रकट किये हैं। उन्हे प्रहार समझनेकी भूल न करे और खिन्न न हों।

मोहनदासके वन्देमातरम्

[गुजरातीसे]

महादेवभाईनी डायरी, खण्ड ४

९४. पत्र : रेलवे बोर्डके सचिवको

मोतीहारी
जनवरी २९, १९१८

सेवाम
सचिव
रेलवे बोर्ड

[महोदय,]

आपका इस मासके दिनाक २२ का पत्र, सख्या ५५२–टी–१७ मिला। लम्बे उत्तरके लिए धन्यवाद। आशा है, पत्रके कुछ मुद्दोके बारेमे बादकी किसी चिट्ठीमें लिख पाऊँगा।

फिलहाल मै आपको अपने उस भाषणकी[1] एक प्रति भेज रहा हूँ, जो मैंने कलकत्तामें हालमें ही हुए समाज-सेवा सम्मेलनमें दिया था। उसमें मैंने रेलवे-सम्बन्धी शिकायतोसे सम्बद्ध अनुच्छेदको चिह्नित कर दिया है। शायद आप मुझसे इस बातमें सहमत होगे कि मैंने मुसाफिरोके साथ काबुलियोके जिस आचरणका उल्लेख किया है उसपर तुरन्त ध्यान देना आवश्यक है। मुझे विश्वास है कि यदि उनके लिए पृथक् स्थानका प्रबन्ध कर दिया जाये तो उससे साधारण मुसाफिर काफी हदतक कष्टोसे बच सकेंगे।

[अंग्रेजीसे]

नेशनल आर्काइव्ज ऑफ इडिया : रेलवे, मार्च १९१८, ५५२–टी–१७/१–२४

९५. पत्र : कुमारी एडा वेस्टको

[पटना]
जनवरी ३१, १९१८

प्रिय देवी,

मणिलालका मामला दुःखदायक है। मैंने उसे धीरज बँधाते हुए एक पत्र लिखा है। उसके विवाहकी बात स्वीकार करना मेरे लिए कठिन है। और कुछ वर्ष वह अविवाहित जीवन बिता सके, तो फिर उसे अभ्यास हो जायेगा। मैंने उसे लिखा है कि वह अपनेको बिलकुल स्वतन्त्र माने और मेरी सलाहको एक मित्रकी सलाह ही समझे। अभी तुम सबकी अग्नि-परीक्षा हो रही है। भगवान् करे, तुम सब कोई आँच आये बिना इसमें उत्तीर्ण हो सको।

१. देखिए "भाषण : अखिल भारतीय समाज-सेवा सम्मेलनमें", ३१–१२–१९१७।

यहाँ सत्याग्रहके तीन संघर्ष बिलकुल सिरपर ही आ गये है।[1] कहना मुश्किल है कि इनमें से कौन-सा संघर्ष छिड जायेगा। किन्तु अभी तो मेरा सारा समय इसीमें जाता है और मुझे हर समय रेल-यात्रा करनी पडती है। ये बहुत थकानेवाली होती हैं, पर इनके बिना छुटकारा भी नही है।

सस्नेह,

तुम्हारा भाई

[अंग्रेजीसे]

महादेव देसाईकी हस्तलिखित डायरीसे।
सौजन्य : नारायण देसाई

९६. पत्र : मणिलाल गांधीको

[पटना]
जनवरी ३१, १९१८

[चि० मणिलाल,]

मुझे देवीबहनने लिखा है कि तुमने सैमके समक्ष अपने अविवाहित रहनेपर असन्तोष प्रकट किया था। तुम अपने विचार मेरे सामने रखनेमें कोई अड़चन न समझना। तुम मेरे कैदी नही, मित्र हो। मैं तुम्हे अच्छी सलाह दूँगा। उसपर विचार करके तुम्हे जो सूझे, सो रास्ता लेना। मैं चाहता हूँ कि तुम मेरे डरसे कोई पाप-कर्म न करो। मेरी कामना है कि तुम्हें मेरा या और किसीका भय न हो।

मेरे विचारके अनुसार तो तुम्हे विवाह नही करना चाहिए। इसीमें तुम्हारा श्रेय है। अगर यह स्थिति असह्य हो, तो तुम्हें जब वहाँसे छुट्टी मिल सके, तब यहाँ आकर विचार करना। यह स्पष्ट है कि वहाँ तो कुछ भी नही होगा। मैं मानता हूँ कि यदि तुम्हें विवाह करना ही हो, तो कन्या मिल जायेगी। मै आशा करता हूँ कि तुम विवाहकी खातिर ही अपना वहाँका काम नही छोडोगे। 'इंडियन ओपिनियन' को व्यवस्थित-करके ही तुम विवाहका विचार कर सकोगे। अपनी प्रसन्नता न गँवाना। स्वप्नोंमें मत भटकना। हम हजारो वस्तुओंकी इच्छा करते हैं। वे सभी नही मिल सकती, यह समझकर पूर्णत शान्त रहना। जो कुछ करना है, सो शुद्ध और खुले रूपमें करना है, यह निश्चय रखना। फिर तो सब कुशल ही है।

मुहम्मद अलीके मामलेमें मुझे शायद बडी लडाई छेडनी पड़े। अभी कोई फैसला नही हुआ है।

बापूके आशीर्वाद

[गुजरातीसे]

महादेवभाईनी डायरी, खण्ड ४

१. यहाँ पर ही खेडा सत्याग्रह, अहमदाबादमें मिल-मजदूरों सम्बन्धी परिस्थिति और होमरूल आन्दोलनका उल्लेख है।

९७. पत्र : ग० वा० मावलंकरको

[पटना]
जनवरी ३१, १९१८

[भाईश्री मावलकर,]

मै आपके धर्मसकटको भलीभाँति समझ सकता हूँ। जब दमयन्तीको नल-जैसे ही कई अन्य व्यक्ति दिखाई दिये तभी तो उसके सामने भारी सकट उपस्थित हुआ था। ऐसे समय की दृढता ही दृढता मानी जाती है। लेकिन यह आसान नही, इसलिए ऐसे समय भूले हो जाये तो वे बहुधा क्षम्य होती है। मुझे एक लाख रुपये इकट्ठे करके लगान चुकानेमें कुछ सार तो जरूर दिखता है, किन्तु ऐसा प्रयोग सरकारके सुधारके लिए बिलकुल उपयोगी नही है। मुझे ऐसा नही लगता कि हम किसानोकी तरफसे लगान चुकाये तो सरकार इससे तनिक भी दुखी होगी। किन्तु किसानोके मवेशी बेचना लोहेके चने चबाने जैसा है। सत्याग्रहका उद्देश्य लोगोको साहसी और स्वतन्त्र बनाना है, हमारी नाक रखना नही। डरके मारे या हमारा अविश्वास करके कायर बनकर लोग रुपया दें, तो वे कर देनेके योग्य माने जायेंगे। हमें अपनी साख रखनेके लिए और अधिक प्रयत्न करना चाहिए। यह सत्याग्रहका प्रशस्त मार्ग है। मेरे पास एक लाख रुपये हो, तो मै घर-घर जाकर लोगोसे कहूँ कि तुम चाहे अपने ढोर बिक जाने दो, परन्तु ऋण लेकर रुपया मत दो, चाहे बिना ब्याजके ही ऋण क्यो न मिलता हो। मै नीलाम होनेपर एक लाख रुपयेमें लोगोके ढोर ले लूँ और जो सकटके समय अडिग रहे, उन्हे समय आनेपर वापस सौप दूँ। मै लोगोसे यह न कहूँ कि मै उनके ढोर बचा लूँगा। यह ऐसा समय है कि यदि कार्य सागोपाग सफल हो, तो सरकारको लगभग माफी माँगनी पड़ेगी।

मेरा यह सब लिखना समय बीतनेपर बुद्धिमानी दिखाने जैसा माना जायेगा, इसलिए उसका मूल्य कम है। आप समयपर जो उचित प्रतीत हो, वही करते रहे। मुझे आपके कार्यकी जाँच दूरसे करनेका अलभ्य लाभ मिलता है और आपको यह अनुभव मिलता है कि इस दुनियामे किसी भी मनुष्यके बिना काम चलाया जा सकता है।

[गुजरातीसे]

महादेवभाईनी डायरी, खण्ड ४

९८. देवदास गांधीको लिखे पत्रका अंश

[बम्बई]
फरवरी २, १९१८

देवा,

जिस दिन तू मेरी गद्दी लेनेके लिए तैयार हो जायेगा, उस दिन तुझे रोकनेकी ताकत किसीमें नही होगी। मैं सिर्फ इतना ही चाहता हूँ कि तू मजबूत बन। यह मत समझना कि तुझमें योग्यता नही है, काम जैसे-जैसे सामने आयेंगे, वैसे-वैसे मार्ग सूझता जायेगा।

[बापूके आशीर्वाद]

[गुजरातीसे]
महादेवभाईनी डायरी, खण्ड ४

९९. पत्र : प्रभुदास गांधीको[1]

[बम्बई]
फरवरी २, १९१८

[चि० प्रभुदास,]

मैं चाहता हूँ कि तुम यह समझ सको कि आश्रममें मैं न होऊँ तो भी वहाँ बहुत कुछ है। यदि मेरा शरीर वहाँ होनेसे ही आश्रममें जीवन दिखाई देता हो, तो यह स्थिति ठीक नही है, क्योंकि शरीर तो आखिर नष्ट होगा ही। यदि वहाँ आत्माकी उपस्थिति मालूम होती हो तो [ठीक है क्योकि] वह वहाँ सदा बनी हुई है। हम जिसपर प्रेम रखते है, उसके शरीरके प्रति अपनी आसक्ति ज्यो-ज्यो छोडते है, त्यो-त्यो उसके प्रति हमारा प्रेम विशुद्ध और विस्तीर्ण होता है। यदि हम सब आश्रममें जैसा वातावरण उत्पन्न करनेका प्रयत्न करते है, अपनी भावना भी उसके अनुकूल बना सके, तो आश्रम कभी सूना न लगे, इतना ही नही, उसमें सामाजिक भावना जल्दी पैदा हो।

यह पत्र अनायास तुम्हारी बुद्धिके बाहर लिखा गया है। जो न समझ सको, वह चि० छगनलालसे पूछकर समझ लेना। इसे दूसरोको भी पढने देना, क्योंकि यह पत्र

१. प्रभुदासने गांधीजीको लिखा था कि देवदास काकाके बिना आश्रम अच्छा नहीं लगता और बापू, आप न हों तो आश्रम सूना और जीवन-हीन लगता है। इसके उत्तरमें ही यह पत्र लिखा गया था।

ऐसा है, जिससे सभीका उपकार हो सकता है। इसे तुम सँभालकर रख लेना और बार-बार पढ़कर इसके एक-एक शब्दको अच्छी तरह समझ लेना।

बापूके आशीर्वाद

[गुजरातीसे]

महादेवभाईनी डायरी, खण्ड ४

१००. पत्र: रांचीके एक सज्जनको

[बम्बई]
फरवरी २, १९१८

आश्रममें रहे बिना भी जो मनुष्य आश्रमके नियमोंका पालन करे, वह आश्रमवासी है। और जो आश्रममें रहते हुए भी उनका जान-बूझकर उल्लंघन करे, वह आश्रमसे बाहरका है।

[गुजरातीसे]

महादेवभाईनी डायरी, खण्ड ४

१०१. श्रीमती जिनराजदासको लिखे पत्रका अंश

[बम्बई]
फरवरी २, १९१८

श्रीमती गांधी लगभग निरक्षर हैं। वह अंग्रेजीमें तो अपना नाम भी नहीं लिख सकतीं। क्या आपको अपने रजिस्टरकी शोभाके लिए ही नाम चाहिए?[1]

[अंग्रेजीसे]

महादेव देसाईकी हस्तलिखित डायरीसे।
सौजन्य : नारायण देसाई

१. यह सूचित किये जानेपर कि कस्तूरबाको अखिल भारतीय महिला संघकी सदस्या बना लिया गया है, गांधीजीने यह टिप्पणी की थी। देखिए "श्रीमती जिनराजदासको लिखे पत्रका अंश", १०-२-१९१८से पूर्व।

१०२. भाषण : खेड़ाकी स्थितिपर[1]

बम्बई
फरवरी ४, १९१८

मैं ज्यादा नही कहना चाहता। मुझे एक पत्र मिला है, जिसमें मुझसे कहा गया है कि मैं कलके उस शिष्टमण्डलके[2] बीच उपस्थित रहूँ जो परमश्रेष्ठ गवर्नर महोदयसे भेंट करने जा रहा है। मुझे विश्वास है कि मैं वास्तविक तथ्य समझा सकूंगा। फिर भी मुझे यह स्पष्ट कर देना चाहिए कि गुजरात-सभाने जो विज्ञप्ति[3] जारी की है, उसका उत्तरदायित्व मुझपर है। इस विज्ञप्तिके जारी किये जानेके पूर्व ही मैं अहमदाबाद पहुँच गया था, जहाँ खेडा जिलेकी स्थितिपर विचार-विमर्श हो रहा था, और इसी विचार-विमर्शके दौरान यह निर्णय किया गया कि इस मामलेमें गुजरात सभाको भाग लेना चाहिए। मेरा खयाल है कि इस विज्ञप्तिको लेकर तिलका ताड बनाया गया है। जव विज्ञप्ति तैयार की जा रही थी, उस समय सभीको मालूम था कि वह क्या है। तव किसीने स्वप्नमें भी यह नही सोचा था कि सरकार इसका गलत अर्थ लगायेगी। सभाके पास लोगोकी दुर्दशाके वारेमें काफी सामग्री थी। उसे मालूम हुआ कि सरकारी अधिकारी लगान एकत्र कर रहे हैं और लोग लगान देनेके लिए अपने मवेशियो तक को वेच रहे हैं। मामला इस नाजुक स्थिति तक पहुँच गया था, और सभाको इसकी जानकारी भी थी, इसलिए उसने, जो लोग इन कठिनाइयोको झेल रहे थे, उन्हे सान्त्वना देनेके लिए एक विज्ञप्ति जारी करना उचित समझा। यह विज्ञप्ति उसी जानकारीका परिणाम थी, और मुझे पूरी आशा है कि जो शिष्टमण्डल गवर्नरसे भेंट करने जा रहा है उसकी वातचीतका परिणाम लोगोकी सफलताके रूपमें ही प्रकट होगा।

यदि कमिश्नर हमसे नाराज न होते तथा जो शिष्टमण्डल उनसे भेंट करने गया था, वे उसके साथ नम्रतासे वार्ते करते और यदि उन्होने बम्बई सरकारको गलत निर्देश न दिया होता तो ऐसा भयानक सकट उपस्थित न हुआ होता, और हमें आज सायकाल यहाँपर एकत्र होनेका कष्ट न उठाना पडता। सभाने निवेदन किया था कि वातचीत समाप्त होनेतक बकाया वसूलीका काम रोक रखा जाये। किन्तु सरकारने यह उचित मार्ग नही अपनाया और एक रोष-भरी प्रेस-सूचना जारी कर दी। मेरा यह दृढ विश्वास था — और अब भी है — कि जनता तथा सरकार दोनोके प्रतिनिधि मिल-जुलकर उपयुक्त कदम उठा सकते थे। किन्तु मुझे दु खके साथ कहना पडता है कि

१. यह सार्वजनिक सभा मूलजी जेठा मार्केटमें हुई थी। इसमें मुख्यत' दूकानदारों और व्यापारियोंने भाग लिया था। जमनादास ठाकुरदासने सभाकी अध्यक्षता की थी।

२. इसमें गाधीजीके अतिरिक्त विट्ठलभाई पटेल, दिनशा वाछा तथा गोकुलदास पारेख भी शामिल हुए थे। शिष्टमण्डलकी बातचीतकी कोई रिपोर्ट उपलब्ध नहीं है।

३. विज्ञप्ति १० जनवरीको खेडा जिलेके किसानोंमें प्रचारित की गई थी। इसमें उन्हें लगान न देने की सलाह दी गई थी।

सरकारने गलती की है। शायद सरकारके निचले दर्जेके अफसर उससे कहेगे कि विज्ञप्ति शुद्ध उद्देश्यसे नही, बल्कि किसी प्रच्छन्न उद्देश्यसे जारी की गई थी। यदि सरकार इस गलत विश्वाससे प्रभावित होती है तो मुझे आशा है कि जो लोग किसानोका साथ देते रहे है वे अन्ततक उनका साथ देते रहेगे और पीछे कदम नही हटायेंगे। कोई भी जिम्मेदार तथा ठीक विचार करनेवाला व्यक्ति उन्हे यही सलाह दे सकता था। जनताको भी वैसे ही अधिकार प्राप्त है, जैसे अधिकारियोको और जन-सेवियोको पूरा अधिकार है कि वे जनताको उसके अधिकारोके बारेमे सलाह दें। जो लोग अपने अधिकारोके लिए नही लड़ते वे गुलामो-जैसे है (तालियाँ), और ऐसे लोग स्वराज्यके योग्य नही है।[1] जब अधिकारी सोचते है कि वे जनतासे कोई भी चीज ले सकते है और उसके कामकाजमें हस्तक्षेप कर सकते है तो इससे एक कठिन स्थिति उत्पन्न हो जाती है। और यदि ऐसी स्थिति उत्पन्न हो जाये तो मै स्पष्ट शब्दोंमें कहूँगा कि जिन लोगोने जनताको उचित सलाह दी है, वे अन्ततक उसका साथ दें।

मै अभीतक किसी निष्कर्षपर नही पहुँचा हूँ। मेरा आन्तरिक विश्वास है कि जो लोग अपना उत्तरदायित्व समझते है वे न्याय प्राप्त करनेके लिए कष्ट उठानेमें संकोच नही करेगे। (तालियाँ)। और मै आशा करता हूँ कि ऐसी परिस्थिति उत्पन्न होनेपर आप लोग अपने कदम पीछे हटाकर अपकीर्तिके भाजन नही बनेंगे। सत्याग्रहका पहला और अन्तिम सिद्धान्त यह है कि हम दूसरोको कष्ट न पहुँचायें, बल्कि न्याय प्राप्त करनेके लिए स्वय कष्ट उठायें। यदि हम ऐसा निश्चय करते है तो सरकारको डरनेकी आवश्यकता नही, क्योकि शुद्ध न्याय प्राप्त करना ही हमारा सकल्प है, और कुछ नही। उस न्यायको प्राप्त करनेके लिए हमें अधिकारियोके साथ संघर्ष करना ही है और जो इस प्रकार सघर्ष नही करते वे गुलामके सिवा और कुछ नही है। ऐसे अवसरोपर हम केवल दो हथियार रख सकते है — विद्रोह या सत्याग्रह, और मै तो हमेशा दूसरे उपायसे काम लेनेकी ही प्रार्थना करूँगा। कष्ट सहना, न्यायके लिए लड़ना और अपनी माँगें पूरी कराना प्रत्येक व्यक्तिका जन्म-सिद्ध अधिकार है। इसी प्रकार, हमें कष्ट-सहनके द्वारा ही सरकारसे न्याय प्राप्त करना है। हमें वीर पुरुषोकी तरह कष्ट सहना चाहिए। मुझे जो कहना है, वह यह कि गुजरातके लोग जिन मुसीबतोसे होकर गुजर रहे है उन्हे दूर करनेके लिए हमें ठीक साधनका सहारा लेना है, और बहुत ही दृढताके साथ। मेरा यह दृढ़ विश्वास है कि यदि हम ब्रिटिश सरकारको सत्यसे अवगत करा दे तो अन्तत. वह यकीन कर सकती है। यदि हम अपने निश्चयपर दृढ रहे, तो विश्वास रखिए कि खेड़ाके लोगोको अब और अधिक अन्याय नही सहना पड़ेगा।[2]

[अग्रेजीसे]

बॉम्बे क्रॉनिकल, ५–२–१९१८

१. गुजराती दैनिक **प्रजाबन्धुके** १० फरवरीके अंकमें छपी एक रिपोर्टके अनुसार गाधीजीने यह भी कहा था: "हमें सरकारके सामने अपनी माँग रखनी चाहिए, चाहे इसके परिणाम-स्वरूप हमें कष्ट ही क्यों न उठाने पड़ें। भारतमें चार विभिन्न धर्मोंके अनुयायी रहते हैं और हिन्दू, इस्लाम, जरथुस्त्रवाद तथा ईसाइयत — इन चारो धर्मोंके सदस्योंको अनेक बार सत्याग्रह करनेकी आवश्यकता होगी।"

२. इस भाषणकी सक्षिप्त रिपोर्ट **सरदार वल्लभभाई पटेल और खेड़ा सत्याग्रहमें** भी उपलब्ध है।

१०३. पत्र : बम्बईके गवर्नरको

बम्बई
फरवरी ५, १९१८

[महानुभाव,]

आशा है, आपकी सरकारके लिए मेरा सुझाव[1] मान लेना सम्भव होगा, और वह एक स्वतन्त्र जाँच-समितिकी नियुक्ति कर देगी। यदि इस प्रकारकी कोई समिति नियुक्त की जाये तो मेरी यह जोरदार सिफारिश है कि उसमें श्री पारेख और श्री पटेलको जरूर शामिल किया जाये। वे दोनो सज्जन इस आन्दोलनमें शुरूसे ही गहरी दिलचस्पी लेते रहे हैं, और उनके द्वारा अनुमोदित किसी भी निर्णयका विरोध कोई नही करेगा। समितिके अध्यक्षके रूपमें डॉ० हेरॉल्ड मैनका नाम सबको स्वीकार्य होगा। विकल्पके रूपमें श्री यूबैंकके नामपर भी विचार किया जा सकता है। उनके चुनावका भी लोग उतना ही स्वागत करेंगे। मैं आज साबरमती लौट रहा हूँ। वहाँ दो-तीन दिन ठहरूँगा। मेरी जरूरत पड़े, तो मुझे सूचित कीजियेगा।[2]

[आपका, आदि,]

[अंग्रेजीसे]
सरदार वल्लभभाई पटेल, खण्ड १

१. स्पष्ट ही तात्पर्य उसी दिन सुबह गवर्नरके साथ हुई शिष्टमण्डलकी मुलाकातमें दिये गये सुझावसे है।

२. गवर्नरके सचिवने इसके उत्तरमें गांधीजीको फरवरी ९ को इस प्रकार लिखा:

"न तो ५ तारीखको परमश्रेष्ठ गवर्नर महोदय और आपके बीच हुई बातचीतसे और न अखबारोंमें प्रकाशित विवरणोंसे गवर्नर महोदयको ऐसा लगता है कि स्थानीय अधिकारियोंने सख्तीसे काम लिया है। इसलिए, उनको यह भरोसा नहीं है कि कोई स्वतन्त्र जाँच-आयोग नियुक्त करनेसे कोई लाभ होगा। आपकी ही तरह वे भी लोगोंके मनसे सन्देह-शंका दूर करनेको उत्सुक हैं; और उन्हें आशा है कि कलक्टर और कमिश्नरने जो कदम उठाये हैं — और जिसका विवरण आपको ५ तारीखको ही दे दिया गया था — उनके परिणाम-स्वरूप आप इस सम्बन्धमें सन्तुष्ट होंगे, तथा लोगोंके मनसे दुःशंकाएँ दूर करनेके लिए सभी सम्बन्धित व्यक्तियोंकी सहायता करेंगे।"

१०४. पत्र: उत्तरी क्षेत्रके कमिश्नरको

साबरमती
फरवरी ७, १९१८

एफ० जी० प्रैट,
अहमदाबाद

[महोदय,]

कपडवंजके मामलतदारके हस्ताक्षरोंसे जारी किये गये कुछ नोटिस[1] मैंने पढ़े हैं। उनमे से एकमें लिखा है कि यदि ११ जनवरीसे पहले लगान नही चुका दिया गया, तो जमीनें जब्त कर ली जायेंगी। जिन आसामियोंपर यह नोटिस जारी किया गया है, उनमें से कुछ मुझसे मिल चुके हैं। मुझे तो वे इज्जतदार आदमी मालूम होते हैं। उनकी आपत्ति सिद्धान्तपर आधारित है। उनमें से कुछकी जमीनें खास पट्टोंपर हैं। मुझे पूरा यकीन है कि सरकारका अन्तिम निर्णय चाहे जो हो, वह ऐसे कदम नही उठाना चाहेगी जिनका नतीजा अन्तमें कटुता फैलानेके अलावा और कुछ नही निकल सकता। मैंने इसी मामलतदार द्वारा जारी किया गया एक और नोटिस भी देखा है। उसमें बहुत ही प्रतिष्ठित जमीदारोंके लिए "डाडाई" शब्दका प्रयोग किया गया है। इस शब्दका अर्थ "दुरात्मा" के सिवा कुछ नही होता। मैं यह कहे बिना नही रह सकता कि नोटिसकी भाषा अशोभनीय है और अनावश्यक रूपसे दुःखद है।[2]

[आपका, आदि,]

[अंग्रेजीसे]
सरदार वल्लभभाई पटेल, खण्ड १

१. फरवरी ६ को गांधीजीके साबरमती आश्रम लौटनेपर उन्हें मामलतदारों और कलक्टर द्वारा जारी कि गये नोटिस और परिपत्रोंकी प्रतिलिपियाँ दिखाई गईं; देखिए "पत्र: उत्तरी क्षेत्रके कमिश्नरको", फरवरी १०, १९१८के बाद।

२. कमिश्नरने १० फरवरीको इसका निम्नलिखित उत्तर दिया: "लगान अदा न करनेका दण्ड राजस्व विधान (लैंड रेविन्यू कोड) में साफ शब्दोंमें लिखा हुआ है। कानूनके खिलाफ न तो कुछ किया गया है और न कुछ किया ही जायेगा। इसलिए मेरी समझमें नहीं आता कि जो कार्रवाई कानूनकी रूसे की गई है, उसे आप खीझ पैदा करनेवाली और कटुता बढ़ानेवाली क्यों बताते हैं।"

१०५. भाषण : अहमदाबादके मिल-मजदूरोंकी सभामें[1]

फरवरी ८, १९१८

आप लोग अपनी तकलीफोके बारेमें मिल-मालिकोको एक पत्र लिखिये। दोनो पक्षोके बीच कटुता पैदा नही होनी चाहिए। हम एकदम ५० या ६० फीसदी वृद्धिकी माँग नही कर सकते। हम उनसे दृढतापूर्वक निवेदन करेगे; फिर भी यदि वे न मानें तो दोनो पक्षोंसे पाँच-पांच व्यक्ति लेकर एक समिति बनायेंगे और हम उसका निर्णय स्वीकार करेगें। इस पच-समितिका निर्णय दोनो पक्षवालोको अवश्य स्वीकार करना होगा। वे हमारी मुनासिब माँगोपर विचार जरूर करेगे। वे भी हमारी तरह ही भारतीय है इसलिए निराश होनेका कोई कारण नही है। आप लोग न्यायके मार्गका अनुसरण करे और कटुताके बिना काम निकालें। इससे आपका पक्ष और अधिक मजबूत बनेगा। अनसूयाबेन आप लोगोके लिए ही पैदा हुई है। (जोरसे तालियाँ)। वेतनमे वृद्धि माँगनेके परिणामस्वरूप जितना धन प्राप्त हो उससे स्वच्छ रहनेकी आदत डालें। व्यसनोसे दूर रहे और अपने बाल-बच्चोको शिक्षित करे। अपने हकको निर्भयतापूर्वक अपने मालिकोके समक्ष रखें। आप लोगोके इस काममें मै यथासम्भव सहायता करनेकी इच्छा रखता हूँ।

[गुजरातीसे]

गुजराती, १७-२-१९१८

१०६. श्रीमती जिनराजदासको लिखे पत्रका अंश[2]

[साबरमती
फरवरी १०, १९१८ से पूर्व]

कस्तूरबाईको अग्रेजीमें हस्ताक्षर करना न आनेके बारेमें लिखे गये वाक्यकी शब्दावली ठीक नही। उससे पूरे विचारको अभिव्यक्ति नही मिलती। कस्तूरबाई 'शिक्षित'

१. खेड़ाके किसानोंकी समस्याके सिलसिलेमें फरवरी २ को गाधीजी बम्बई गये थे। वहाँ अहमदाबादके मिल-मालिक सेठ अम्बालाल साराभाईसे उनकी मुलाकात हुई। साराभाईने अपने मिलके मजदूरोंमें बोनसके सम्बन्धमें फैले हुए असन्तोषकी चर्चा की और उनसे इस मामलेको हाथमें लेकर बीच-बचाव करनेकी प्रार्थना की। गाधीजी अहमदाबाद गये, और वहाँ पहुँचकर मामलेकी पूरी जानकारी खुद हासिल की। प्लेगका बोनस एकाएक बन्द कर देनेके निर्णयसे मजदूरोंको बड़ी कठिनाईमें पड़ जानेका डर था। उन्होंने इस बोनसकी जगह वेतनका ५० फीसदी मँहगाईके भत्तेके रूपमें माँगा। कदाचित् मजदूरोंकी यह पहली सभा थी जिसमें गाधीजीने भाषण दिया था।

२. गाधीजीके २ फरवरीके पत्रके उत्तरमें श्रीमती जिनराजदासने उन्हें मीठा उलाहना भरा जवाब दिया था, यह उसीका प्रत्युत्तर है।

शब्दके प्रचलित अर्थमे शिक्षित नही है। गुजराती लिखना-पढ़ना भी उसे बहुत-थोड़ा आता है। कस्तूरबाई अग्रेजीमें अपने दस्तखत नही कर सकती यह लिखनेका उद्देश्य अग्रेजी शिक्षाको महत्त्व देनेवाले लोगोको यह बताना था कि जिस सस्थाकी सभी सदस्याएँ अपनी-अपनी भाषा या अग्रेजीकी पण्डिता है, उस संस्थाकी सदस्या बननेके लिए कस्तूरबाई बिलकुल अयोग्य है।

[अंग्रेजीसे]

महादेव देसाईकी हस्तलिखित डायरीसे।
सौजन्य, नारायण देसाई

१०७. पत्र: हृदयनाथ कुंजरूको[1]

सत्याग्रहाश्रम
साबरमती
फरवरी १०, १९१८

[2]. . . इस समय मै एक बडी खतरनाक परिस्थितिसे जूझ रहा हूँ और एक उससे भी ज्यादा खतरनाक परिस्थितिमें कूद पडनेकी तैयारी कर रहा हूँ।[3] . . . अब आप समझ लेंगे कि मै मेलेमें क्यो नही आया।[4] हिन्दू धर्मको उसके आसुरी और दिव्य दोनों स्वरूपोमें देखनेका वहाँ जो अवसर मिल सकता है, मै बहुत चाहता था कि उसका उपयोग करूँ। मै जानता हूँ कि मुझपर आसुरी स्वरूपका कोई असर नही हो सकता। किन्तु मै चाहता था कि उसके दिव्य स्वरूपका मुझपर वही प्रभाव पडे जो हरद्वारमें पडा था।[5] साथ ही वहाँ आपसे मिलना भी हो जाता और भारत-सेवकोको हर दूसरे महीने बीमार पड़नेकी कुटेव न डालनी चाहिए, इस बारेमें आपको थोड़ा उपदेश देनेका मौका भी मिलता। लेकिन शायद ऐसा बदा नही था।

आपका
मो० क० गांधी

[अंग्रेजीसे]

महादेव देसाईकी हस्तलिखित डायरीसे।
सौजन्य, नारायण देसाई

१. पण्डित हृदयनाथ कुजरू (जन्म १८८७–), १९३६ से भारत सेवक समाजके अध्यक्ष और राज्यसभाके सदस्य।

२ व ३. मूलमें कुछ अंश छोड दिये गये है।

४. उनको कुम्भ मेलेके अवसरपर आमन्त्रित किया गया था।

५. गाधीजी १९१५ के कुम्भ मेलेके अपने अनुभवका उल्लेख कर रहे हैं। उन्होंने दिनभरमें पाँचसे अधिक खाद्य वस्तुएँ न खाने और रात हो जानेपर भोजन न करनेका व्रत वहीं लिया था। देखिए **आत्मकथा**, भाग ५, अध्याय ७।

१०८. पत्र : उत्तरी क्षेत्रके कमिश्नरको

सावरमती
[फरवरी १०, १९१८ के वाद]

[महोदय,]

सायमें कलक्टरके हस्ताक्षरसे जारी किये गये नोटिसकी[1] नकल भेज रहा हूँ। नोटिसके जिस अंशकी भाषाको मैं अशोभनीय और अनावश्यक रूपसे दुःखद मानता हूँ, उसपर निशान लगा दिया है। उस वाक्यसे सभाके मन्त्रियो और सभाकी सलाह माननेवालोका भी अपमान होता है। मुझे पूरा यकीन है कि गुजराती भाषामें उन शब्दोका जो अर्थ होता है, वैसा लिखनेका उनका इरादा नही रहा होगा। मामलतदारका एक बयान[2] भी सायमें भेज रहा हूँ। आप देखेंगे कि उसकी भाषा भी वहुत आपत्तिजनक है। जब्तीके नोटिसोके वारेमें मुझे कहना चाहिए कि लगानकी एक छोटी-सी रकम अदा न कर पानेके कारण हजारो रुपयेकी जमीन जब्त कर लेना वहुत ही अनुचित और वडी सजा है, और उसे तो प्रतिशोधात्मक ही कहा जा सकता है।[3]

[अग्रेजीसे]

सरदार वल्लभभाई पटेल, खण्ड १

१०९. पत्र : विनायक नरहर भावेको[4]

[सावरमती
अहमदावाद
फरवरी १०, १९१८ के वाद]

[चि० विनोवा,]

समझमें नही आता, तुम्हारे लिए किस विशेपणका प्रयोग करूँ। तुम्हारा प्रम और तुम्हारा चरित्र मुझे मुग्ध कर लेता है। तुम्हारी परीक्षा मुझे मोहमें डुवा देती है। मैं

१ व २. ये उपलब्ध नहीं है।

३. इस पत्रकी जो प्रतिक्रिया श्री प्रैटके मनपर हुई उसके विषयमें उन्होंने गांधीजीको १६ फरवरीके अपने पत्रमें लिखा : "विभिन्न बयानोंकी भाषाके बारेमें आपने बहुत कड़े शब्दोंका प्रयोग किया है। मैंने उन सब बयानोंको स्वयं ही ध्यानपूर्वक पढ़ा है, और मुझे विश्वास है कि आपकी शिकायतका कोई उचित आधार नहीं है।"

४. विनोवाने गांधीजीको एक पत्रमें लिखा था कि वे एक वर्षसे आश्रममें क्यों नहीं लौटे। इस पत्रको पढ़कर गांधीजीने कहा. 'गोरखने मछन्दरको हरा दिया। भीम है, भीम।' दूसरे दिन प्रातः उन्होंने विनोबाको यह पत्र लिखाया था।

तुम्हारी परीक्षा करनेमे असमर्थ हूँ। तुम्हारी अपने-आप की हुई परीक्षाको मैं स्वीकार करता हूँ और तुम्हारे प्रति पिताका पद ग्रहण करता हूँ। मालूम पडता है, मेरा लोभ तुमने लगभग पूरा कर दिया। मेरी मान्यता है कि सच्चा पिता अपनेसे अधिक चरित्र-वान् पुत्रको जन्म देता है। सच्चा पुत्र वह है, जो पिताकी कृतिमें वृद्धि करे। पिता सत्य-वादी, दृढ़ निश्चयी और दयावान् हो, तो पुत्र अपने भीतर इन गुणोको और अधिक पैदा करे। मालूम होता है, तुमने ऐसा ही किया है। मुझे यह तो नही जान पड़ता कि ऐसा तुमने मेरे प्रयत्नसे किया है। इसलिए तुम मुझे जो पद दे रहे हो, उसे मैं तुम्हारे प्रेमकी भेटके रूपमे स्वीकार करता हूँ। मैं इस पदका पात्र बननेका प्रयत्न करूँगा और जब मैं हिरण्यकशिपु साबित होऊँ, तब तुम भक्त प्रह्लादकी तरह मेरा सादर निरादर करना।

तुम्हारी यह बात सही है कि तुम बाहर रहकर आश्रमके नियमोका बहुत अच्छी तरह पालन करते रहे हो। तुम्हारे आनेके विषयमें मुझे कोई शका ही नही थी। तुम्हारे लिखे हुए सन्देश मुझे मामाने पढकर सुना दिये थे। ईश्वर तुम्हे दीर्घायु करे और मैं चाहता हूँ कि तुम्हारा उपयोग भारतकी उन्नतिके लिए हो।

तुम्हारी खुराकमे हेरफेर करने लायक अभी तो कोई बात नजर नही आती। फिलहाल दूध नही छोडना, बल्कि जरूरत मालूम हो, तो उसकी मात्रा बढा देना।

रेलवेके मामलेमे सत्याग्रहकी आवश्यकता नही है। लेकिन इस बारेमें ज्ञानवान् प्रचारकोकी जरूरत है। सम्भव है, खेडा जिलेके मामलेमें लड़ाई लडनी पड़े। मै तो अभी रमता राम हूँ। एक-दो दिनमे दिल्ली जाना होगा।

और बाते जब तुम आओगे, तब। सब तुमसे मिलनेको उत्सुक हैं।[१]

बापूके आशीर्वाद

[गुजरातीसे]

महादेवभाईनी डायरी, खण्ड ४

१. महादेव भाई लिखते हैं कि जब गाधीजी पत्र लिखा चुके तो बोले: "बहुत जबरदस्त आदमी है। मेरा खयाल रहा है कि मेरा महाराष्ट्रीयों और मद्रासियोंके साथ भारी ऋणानुबन्ध है। मद्रासी तो अब रहे नही, किन्तु किसी भी महाराष्ट्रीयने मुझे निराश नहीं किया है। उनमें विनोबा सबसे आगे बढ़ गया है।"

११०. पत्र : भगवानजी मेहताको

आश्रम
पौष वदी [फरवरी ११, १९१८]

भाईश्री भगवानजी,

आपका पत्र मिला। उसमे जाहिर होता है कि कभी-कभी सहायता करनेके हेतुसे किये हुए कार्यका परिणाम उलटा होता है। 'गुजराती' में प्रकाशित लेखके बारेमें मुझे ऐसा ही लगा है। काठियावाडका काम मैं अपने ही ढंगसे कर सकूंगा।

मोहनदासके वन्देमातरम्

गाधीजीके स्वाक्षरोमें मूल गुजराती पत्र (सी० डब्ल्यू० ३०२७) की फोटो-नकलसे।
सौजन्य नारणदास गाधी

१११. पत्र : रलियातबेनको

[साबरमती]
फरवरी ११, १९१८

पूज्य बहन,

तुम्हें पत्र तो नही लिखता, किन्तु तुम्हारी मूर्ति मेरी आँखोसे घडी-भर भी दूर नही रही। तुम मेरे पास नही हो, इसका जो घाव मुझे लगा है, वह कभी भर नही सकेगा। उसे तुम्ही भर सकती हो। तुम मेरे पास रहोगी तो तुम्हारा मुंह देखकर मुझे मांकी कुछ-न-कुछ याद तो आयेगी ही, इसलिए भी तुमने मुझे दूर रख छोडा है। मैं तुम्हारे विरुद्ध यह शिकायत तो करता ही रहूँगा। तुम मुझे अभिमानपूर्वक यह कहनेका अवसर देती ही नहीं कि मेरी बहन भी मेरे काममें मेरी मदद कर रही है। मैं पत्र लिखूं, तो उसमें भी अपने मनका दुःख बताने और जैसे ताने अभी मार रहा हूँ वैसे ताने मारनेके सिवा क्या कर सकता हूँ। मैं इसलिए भी पत्र लिखनेमें ढिलाई करता हूँ। मैं जानता हूँ कि आजकल महँगाई है। किन्तु मैं तुम्हे अधिक रुपया कहाँसे दूं? मुझे मित्रसे लेकर रुपये देने होते हैं। मैं किस मुंहसे रुपया मांगूं। वे भी कहेंगे "तुम्हारी बहनको तो तुम्हारे साथ ही रहना चाहिए।" इसका जवाब मैं क्या दूं? दुनिया मुझे भ्रष्ट नही मानती, परन्तु तुम्हारे लिए तो मैं भ्रष्ट हूँ। ऐसी हालतमें मैं एक ही बात कह सकता हूँ। तुम जो दुःख भोग रही हो, मैं उससे कम नही भोग रहा। इसलिए तुम्हारे दुःख मुझे असह्य प्रतीत नही होते। तुम पिसाई-कुटाई करके पैसेकी कमी पूरी करती हो, इसमें मुझे जरा भी शर्म नही लगती। मेरी तो इतनी ही प्रार्थना है कि तुममें कुछ भी दयाभाव हो, तो तुम यहां आकर मेरे साथ रहो और मेरे काममें भाग लो। ऐसा करोगी तो अभी

तुम्हे जो ऐसा महसूस होता है कि तुम्हारे कोई भाई नही है, वैसा फिर न होगा। तुम्हे यहाँ एकके बजाय बहुत-से भाई दिखाई देंगे और तुम यहाँ बहुत-से बच्चोकी माँ बनकर रहोगी, यही शुद्ध वैष्णव धर्म है। जबतक तुम्हे यह न जँचे, तबतक हमें वियोगका दु.ख सहना ही पडेगा।

मोहनदासके प्रणाम

[गुजरातीसे]

महादेवभाईनी डायरी, खण्ड ४

११२. पत्र : निर्मलाको

[साबरमती]
फरवरी ११, १९१८

चि० निर्मला[1],

यह पत्र रलियातबेनको पढवा देना। तुम्हे तो मैं क्या लिखूं? तुम्हारे लिए मुझे इतने अधिक काम दिखाई देते हैं कि मैं उनसे तुम्हारे समस्त जीवनको सौन्दर्यसे भर दूं और तुम्हारा वैधव्य विस्मृत करा दूं। कुछ स्त्रियाँ मुझे सहायता दे रही हैं। दुर्भाग्यसे तुम्हारी सहायता मुझे नही मिल पाती। जैसे मैं रलियातबेनको दोष देता हूँ, वैसे तुम्हे नही दे सकूंगा, क्योंकि तुम्हे तो बुजुर्गोंको खुश करना पडता है, पिताको और बहनको। किन्तु यदि तुम्हारी इच्छा मेरी सहायता करनेकी हो, तो तुम उनसे अपने लिए अनुमति ले सकती हो। इतना ही नही, बल्कि तुम रलियातबेनको भी यहाँ ला सकती हो, क्योकि तुम्हारे बिना तो वह जियेगी ही नही। मैं यह मानता हूँ कि किसी-न-किसी दिन तो तुम मेरे पास जरूर आओगी। तुम इतना तो समझती होगी कि अगर गोकुलदास जीवित होता तो वह मुझसे एक क्षण भी दूर नही रह सकता था। मेरे साथ रहकर तुम गोकुलदासकी आत्माको भी शान्ति दे सकती हो।

बा बिहारमें है। वह अक्सर तुम्हारी याद करती है। मुझे अभी कुछ समय तक इधर ही रहना पड़ेगा।

[गुजरातीसे]

महादेवभाईनी डायरी; खण्ड ४

१. गांधीजीके भानजे गोकुलदासकी विधवा पत्नी।

११३. पत्र : एक सहयोगीको

[साबरमती]
माघ सुदी २ [फरवरी १२, १९१८]

भाई श्री

आपका पत्र मिला। आपके ऊपर शब्द-प्रहार करना बेकार मालूम होता है। कई बार मनुष्य अपने दोषोंका वर्णन उन्हें अपना गुण मानकर करता है। ऐसी ही दशा आपकी है। कहा जा सकता है कि चूंकि आपमें साधारण मनुष्योंसे कुछ अलग बात है, इसलिए आप सार्वजनिक जीवनमें भाग लेते हैं। परन्तु अपने कार्योंमें आप साधारण मनुष्योंसे कुछ अधिक कमजोरी दिखा रहे हैं। आपने अपनी पहली पत्नीकी मृत्युसे गहरी चोट लगनेका दावा किया। आपने बताया कि उसके अन्तिम वचनोंका आपके हृदयपर गहरा असर हुआ। किन्तु आप उस चोटको भूल गये और उन अन्तिम वचनोंका असर उड़ गया। तीव्र वेदनासे रोता हुआ मनुष्य एकाएक हँसने लगे, तो वह अभिनयकर्त्ता माना जायेगा या यो कहा जायगा कि वह पागल होकर हँसने लगा है। आप कल रो रहे थे, और आज हँसने लगे। आपके लिए कौन-सा विशेषण प्रयुक्त किया जाये? जिस मनुष्यकी इच्छाएँ उसके वशमें न रहें और जो जरा भी सयम न रख सके, वह क्या सार्वजनिक सेवा करनेके योग्य माना जायेगा? आपसे घटिया लोग सार्वजनिक प्रवृत्तियोंमें सलग्न देखे जाते हैं, उनसे तो मैं ठीक हूँ। इस तरहका जवाब देकर आप जितने गिरे हैं, अब उससे और अधिक न गिरें।

आपने जो कदम उठाया है, वह कदम हिन्दू-गार्हस्थ्य जीवनके सुधारमें बड़े महत्त्वका विषय है। विधवाओंके विवाहसे ज्यादा जरूरी यह है कि विधुर थोडी-सी तो मर्यादा रखें। आपने तो मूल सिद्धान्तोंको भी भग किया है। यदि गुजरात सेवा-मडल बने और मुझे[1] उसके साथ निकटका सम्बन्ध रखना पडे, तो उसमें आपको लिया जाये या नहीं, यह तय करना मेरे लिए बडे धर्म-सकटकी बात होगी। तब मैं आपका न्याय नहीं करूँगा, आपका न्याय तो भगवान् ही करेंगे। किन्तु अपने जीवनके साथियोंको चुननेका अधिकार मैं नहीं छोड़ूंगा।

आपकी पहली पत्नीके मरनेसे आपको कितनी चोट पहुँची, इसका अन्दाज आपने दुनियाको बता दिया। आपके कार्यसे मुझपर तो वज्रपात हुआ है। ईश्वर आपकी रक्षा करे और आपको सद्बुद्धि दे।

मोहनदास गांधी

[गुजरातीसे]
महादेवभाईनी डायरी, खण्ड ४

१. मूलमें यहां 'आपको' है जो भूल है।

११४. पत्र : ए० एच० वेस्टको

[साबरमती]
फरवरी १३, १९१८

प्रिय वेस्ट,

मैं आशा करता हूँ कि मेरे सब पत्र तुम्हे मिल गये होगे।[1] मुझे तुम्हारे दो पत्रोकी पहुँचकी सूचना देनी बाकी है। सचमुच मुझे नही सूझता कि क्या लिखूँ। रिच और डीबियरके पत्र मैंने पढे है। अपने दृष्टिकोणके अनुसार वे सही है। मेरी रायसे तो अच्छे किसान बनकर तुम अपने आदर्शकी अधिक अच्छी सेवा कर सकोगे। मणिलालकी जोहानिसबर्गसे दी हुई सलाह मुझे पसन्द नही आई। उसे फीनिक्समें रहकर गुजराती विभाग[2] सँभालना चाहिए। किन्तु जैसा मैंने कहा है, अन्तिम निर्णय तुम्हारा होगा। तुम्हे जो अच्छा लगे, वही तुम्हे करना चाहिए। अपनी तरफसे तो मैं कहता हूँ कि सम्पत्ति जितनी मेरी है, उतनी ही तुम्हारी भी है। यही बात हमारे आदर्शकी है। फीनिक्सके सम्बन्धमें इतना कहकर यहाँके अपने कामके बारेमें कहूँगा। मैं पत्र कम लिखता हूँ — इससे यही जाहिर होता है कि यहाँ मैं कितना व्यस्त हूँ। मैं इतना काम करता हूँ कि सबको आश्चर्य होता है। किन्तु कोई भी काम मैं ढूँढने नही गया। काम जैसे-जैसे आता गया, वैसे-वैसे मैंने हाथमें ले लिया। बिहार धारा-सभामें कानून बनानेका जो काम हो रहा है, उसपर निगाह रखनेके अतिरिक्त, मैंने वहाँ कुछ पाठशालाएँ भी खोली है और उनको चला रहा हूँ। उनकी व्यवस्था देखनी पडती है। शिक्षक आम तौरपर विवाहित है। पति और पत्नी दोनो काम करते है। हम गाँवके बच्चोको पढाते है, पुरुषोको स्वास्थ्य और सफाई सिखाते है। देहातकी स्त्रियोसे भी मिलते है और उन्हे पर्दा छोड देने और अपनी लडकियोको हमारी पाठशालामें भेजनेकी बात समझाते है। हम दवा मुफ्त देते है। रोजमर्राकी इन परिचित बीमारियोका हम साधारण इलाज करते है। इसलिए यह काम तालीम न पाये हुए स्त्री-पुरुषोको, अगर वे दूसरी तरहसे विश्वासपात्र हो, सौपनेमें मुझे कोई आपत्ति नही दीखती। उदाहरणके लिए, श्रीमती गाधी एक पाठशालामें काम करती है और बडे मजेसे दवाइयाँ भी देती है। अबतक हम शायद मलेरियाके तीन हजार रोगियोको राहत पहुँचा चुके है। हम देहातके कुएँ और रास्ते साफ करते है और इसमें ग्रामवासियोका सक्रिय सहयोग लेते है। अबतक हमने तीन पाठशालाएँ खोली है। उनमें लडके और बारह वर्षसे नीचेकी लड़कियाँ मिलाकर २५० से ऊपर विद्यार्थी है। सारे शिक्षक स्वयसेवक है।

१ देखिए खण्ड १३।
२. इंडियन ओपिनियनका

गुजरातमें भी काम हो रहा है। गोधरा और भड़ौंचके भाषणोंमें[1] मैंने जो कार्यक्रम बताया था उसके अनुसार ही यह काम चल रहा है। अभी तो सत्याग्रहका एक प्रसग नजदीक दिखाई देता है। उससे निपट लेनेका प्रयत्न मैं कर रहा हूँ। गुजरातका काम विविध प्रकारका है। साथ ही अलीभाइयोंके छुटकारेके लिए आन्दोलन शुरू करनेका भी विचार कर रहा हूँ। इसके सिवा गोसेवा, सफाई, शिक्षाकी राष्ट्रीय पद्धति, हाथकी बुनाई और हिन्दुस्तानकी राष्ट्रभाषाके रूपमें हिन्दीका प्रचार आदिका कार्यक्रम चला रहा हूँ। आश्रम और वहाँकी राष्ट्रीय पाठशाला तो चल ही रही है।

सौभाग्यसे इन सब कामोंमें मुझे अच्छे साथी मिल गये है, और इन्हीके सिलसिलेमें काफी घूमना पडता है।

आश्रम साबरमती नदीके किनारे सुन्दर स्थानपर स्थित है। हम रोज नदीमें नहाते है। सब लड़कोंको तैरना आ गया है। पाठशालाको सुयोग्य आचार्य[2] मिल गये हैं। वे गुजरात कॉलेजमें प्रोफेसर थे। आश्रमकी व्यवस्था मगनलालके हाथमें है। यह नही कहा जा सकता कि इस आश्रम या पाठशालाका भविष्य कैसा सिद्ध होगा। अभी तो ये दोनो संस्थाएँ लोकप्रिय बनी हुई हैं।

इन सब कामोंमें अकसर वहाँके साथियोंका सहयोग पानेकी कामना होती है। किन्तु मैं जानता हूँ कि यह सम्भव नही। फिर भी इतना तो निश्चय समझना कि एक क्षण भी ऐसा नही जाता, जब तुममें से किसी-न-किसीका विचार मेरे मनमें न आता हो। तुम्हारे बहादुरीके कई कामोंका उल्लेख मैं यहाँ उचित दृष्टान्तोंके रूपमें करता रहता हूँ। मैं वहाँके अनुभवके आधारपर यहाँका अपना काम आगे बढा रहा हूँ।

श्रीमती वेस्टसे कहना कि वे पल-भरके लिए भी यह न सोचें कि उन्हे या दादी माँको मैं भूल गया हूँ। मैं अपने दिये हुए वचन भी नही भूला हूँ। नये सम्बन्धो और नये परिचयोंके कारण मैं पुरानोंको भूलनेवाला नही हूँ।

यह पत्र प्रकाशनके लिए नही है। अपने कामके बारेमें मैं सार्वजनिक रूपसे कुछ नही कहना चाहता।

सस्नेह,

हृदयसे तुम्हारा,
मो० क० गांधी

[अंग्रेजीसे]

महादेव देसाईकी हस्तलिखित डायरीसे।

सौजन्य : नारायण देसाई

गांधीजीके स्वाक्षरोंमें मूल पत्र (सी० डब्ल्यू० ४४२६) के एक अंशकी फोटो-नकलसे भी।

सौजन्य . ए० एच० वेस्ट

१. देखिए "भाषण: द्वितीय गुजरात शिक्षा-सम्मेलनमें," २०-१०-१९१७ और "भाषण: प्रथम गुजरात राजनीतिक परिषद्में", ३-११-१९१७।

२. साकलचन्द शाह।

११५. पत्र : पार्वतीको

[मोतीहारी]
फरवरी १३, १९१८

चि० पार्वती[1],

तुम्हे यह पत्र मैंने गुजरातीमें लिखना शुरू किया था, क्योकि लडको और लड़कियोको मैं शायद ही कभी अग्रेजीमे लिखता हूँ। किन्तु मैं जानता हूँ कि मुझे तुम्हे अग्रेजीमे पत्र लिखना चाहिए। तुम कहोगी कि मैंने तुम्हे गुजराती और हिन्दी पढाने-की व्यवस्था की होती, तो तुम मेरे गुजराती और हिन्दी पत्र समझ लेती। तुम्हे यह कहनेका हक है। मैं भी इतना कहूँगा कि यदि तुम मेरे साथ हिन्दुस्तान आई होती और मेरे साथ रही होती, तो तुम मेरी सच्ची लडकी बनती और हिन्दी तथा गुजराती सीखती।

सैमसे कहना कि मैं यह आशा रखता हूँ कि वह फीनिक्सकी खेतीको सफल बनाये। वहाँके अपने कामके बारेमें लिखना। राधा[2] और रुखी[3] तो बहुत बड़ी हो गई है। रुखी राधाके बराबर दीखती है। दोनोने हिन्दीकी पढाईमे अच्छी प्रगति की है।

तुम सबको प्यार।

तुम्हारा,
गांधी[4]

[अग्रेजीसे]

महादेव देसाईकी हस्तलिखित डायरीसे।
सौजन्य नारायण देसाई

११६. उत्तरी क्षेत्रके कमिश्नरको लिखे पत्रका अंश

[साबरमती
फरवरी १५, १९१८]

[महोदय,]

मैं आपको विश्वास दिलाना चाहता हूँ कि सेत-मेत एक आन्दोलन खड़ा कर देने या किसी निरर्थक आन्दोलनको प्रोत्साहन देनेकी मेरी कोई इच्छा नही है। मैं सत्यकी खोजमें, असलियत क्या है इसे जाननेके लिए, खेड़ा जिलेमें जा रहा हूँ। जान पड़ता है, जबतक आपके स्थानीय अफसरोकी रिपोर्ट गलत साबित नही हो जाती, तबतक आप

१. दक्षिण आफ्रिकामें गाधीजीके सहयोगी गोविन्दस्वामीकी कन्या।
२ और ३. मगनलाल गांधीकी पुत्रियाँ।
४. मूल पत्रमें हस्ताक्षर तमिलमें किये गये हैं।

हमारे प्रार्थनापत्रोपर जरा भी ध्यान न देंगे। इसलिए, यद्यपि जिलेके प्रतिष्ठित नेताओंने मुझे पूरा विश्वास दिलाया है, फिर भी स्वयं तथ्योंकी छान-बीन कर लेना मैं अपना फर्ज समझता हूँ। मेरी जाँचका परिणाम मालूम होने तक यदि आप लगानकी वसूली स्थगित कर सकें, तो लोगोंमें फैले हुए असन्तोषको कम करनेमें बड़ी सहायता मिलेगी। यदि आप कलक्टरको यह निर्देश भेजनेकी कृपा करें कि एक लोकसेवकके नाते मुझे वे यथासम्भव पूरी सहायता करें तो मुझे प्रसन्नता होगी। मेरी जाँचके दरम्यान अगर आप अपने किसी प्रतिनिधिको मेरे साथ भेजना चाहें तो मुझे कोई एतराज न होगा।[1]

[अंग्रेजीसे]

सरदार वल्लभभाई पटेल, खण्ड १

११७. पत्र : बड़ौदाके एक सज्जनको[2]

[साबरमती]
फरवरी १५, १९१८

भाईश्री . . .,

आपका पत्र मेरे लिए अत्यन्त दुःखद सिद्ध हुआ है। जो कुछ आपने लिखा है, वह सब जब आपने प्रतिज्ञाकी तब आपके ध्यानसे बाहर नहीं था। आपका सारा परिवार भूखों मरता तो भी आपका कर्त्तव्य अपनी प्रतिज्ञाका पालन करना था। ऐसे ही मनुष्योंसे जातिका निर्माण होता है। दूसरोंकी तो मनुष्योंमें गिनती ही नहीं की जा सकती। किसीने आपपर जोर नहीं डाला था कि आप प्रतिज्ञा करें ही। विचारके लिए आपके पास पर्याप्त समय था। हमारी उन्नति तीव्र गतिसे नहीं होती, इसका कारण केवल हमारी जबरदस्त कमजोरी ही है। इस पत्रका उद्देश्य यह नहीं है कि आप अब प्रतिज्ञाका पालन करें। यदि आप आयेंगे, तो भी अब आपको स्वीकार नहीं किया जायेगा। अब आप कुटुम्ब-पालनके काममें लगें। जो पाप हो गया, उसका विचार करें और नम्र बनकर शान्त जीवन बितायें। आप फिर कभी पूर्व निश्चयके बिना प्रतिज्ञा न करें, यही आपका प्रायश्चित्त है।

मोहनदास गांधीके वन्देमातरम्

[गुजरातीसे]

महादेवभाईनी डायरी, खण्ड ४

१. कमिश्नरने उसी दिन लिख भेजा : "आपकी जाँच समाप्त होने तक लगानकी वसूली स्थगित रखनेका मुझे तो कोई कारण दिखाई नहीं देता। मुझे विश्वास है कि यदि आप कहेंगे तो कलक्टर, श्री घोषाल निश्चय ही आपको सारी आवश्यक जानकारी और सहायता देंगे।"

२. उक्त सज्जनने आश्रमवासी होनेकी प्रतिज्ञा ली थी, बादमें लाचारी बताते हुए पत्र लिखा।

११८. पत्र : डाह्यालालको

[साबरमती]
फरवरी १५, १९१८

भाईश्री डाह्यालाल,

आपका कार्ड मिला। भाई अमृतलालकी मृत्युका समाचार पढकर मनमें बहुत विचार आते हैं। अभी-अभी भाई नवलरामने खबर दी है कि आपके साथियोमें से कुछ और भी प्लेगके बीमारोकी सेवा करते-करते चल बसे। अगर सब इस तरह सेवा करते-करते गये हो तो मुझे इसमें खेदका कोई कारण नही दिखाई देता, बल्कि यह तो हर्षका कारण है। हम सबके लिए ऐसी मृत्यु वाछनीय है। 'सग्राममें प्राप्त मृत्युसे अधिक इष्ट मृत्यु नही हो सकती', यह उक्ति इस सम्बन्धमें लागू होती है। शरीर तो जब जीर्ण हो जायेगा, तब नष्ट होगा ही। हम यह चाहते भी हैं कि वह नष्ट हो जाये। इसलिए हम मान लें कि भाई अमृतलाल, मोतीलाल और उनके साथियोकी आत्माएँ नये और अधिक समर्थ शरीर धारण करके समय आनेपर भारतकी सेवा करेगी।

भाई अमृतलालके परिवारको मेरी ओरसे सान्त्वना दें।

भाई मोतीलालकी पत्नीको, जहाँतक हो सके, जल्दी यहाँ भिजवानेका प्रयत्न करे। यह भी एक सेवा होगी।

मो० गांधीके वन्देमातरम्

[गुजरातीसे]
महादेवभाईनी डायरी, खण्ड ४

११९. पत्र : आनन्दीबाईको

[साबरमती]
फरवरी १६, १९१८

आपकी भाभी चल बसी, यह सुनकर बहुत दु ख हुआ। किन्तु आपको आत्माका ज्ञान है, यह मुझे मालूम है। इसलिए मुझे विश्वास है कि यह बात आसानीसे समझ जायेंगे कि असलमे जन्म और मरण ये दोनो स्थितियाँ एक ही जैसी है। फिर भी मृत्युके समय दु.खी होना मनुष्यका स्वभाव बन गया है। मै आपके इस दु.खमें शरीक होना चाहता हूँ, इसलिए प्रार्थना करता हूँ कि आपको जितनी शान्ति मिल सकती हो मिले। आप जैसे लोगोके लिए, जिन्होने सेवा करनेका निश्चय और सकल्प किया

हो, उचित रूपमें शोक मनानेका एक ही मार्ग है, और वह यह है कि वे और भी अधिक सेवापरायण बनें।

आपका,
मोहनदास गांधी

[मराठीसे]
महादेवभाईनी डायरी, खण्ड ४

१२०. पत्र : देवदास गांधीको

[साबरमती]
फरवरी १६, १९१८

चि० देवदास,

यहां एक दिनके लिए आया था, उसके बजाय महीनाभर होता आता है। आज दिल्ली जानेका विचार था, लेकिन अब खेडाके काममें नडियाद जाना पडेगा। अगर यहांसे चला जाऊं, तो हजारों लोगोंका बडा नुकसान हो जाये। लोग दब जायें और बिल्कुल हताश हो जायें। ऐसी स्थितिके कारण अभी तो रुक गया हूँ। उम्मीद तो है कि मैं यहांसे दस दिनमें छूट सकूंगा। तुम्हारी याद हमेशा आती है। मैं जानता हूँ कि तुममें लगन है और तुम सब बातोंमें रस ले सकते हो। तुम यहां होते, तो सत्यको महिमा और प्रभाव क्षण-क्षणमें देखते। तुम्हारे लिए मेरे पास यही विरासत है। मैं मानता हूँ कि वह अटूट है। जो पहचान ले, उसके लिए यह अमूल्य है। वह दूसरी कोई विरासत न मांगेगा और न चाहेगा। मैं यह समझता हूँ कि तुम इस विरासतको पहचान सके हो और इसके प्रेमी हो। आज मुझे सपना आया कि तुमने मुझे धोखा दिया है। तुमने पेटीमें से नोट चुराकर उन्हे भुना लिया और मौज-शौकमें खर्च कर दिया। मुझे पता लगा तो मैं घबराया और बहुत व्याकुल हुआ। इतनेमें नींद खुल गयी और मैंने देखा कि यह तो सपना है। मैंने ईश्वरका उपकार माना। मेरा सपना तुम्हारे प्रति मेरी आसक्तिका सूचक है। तुम तो यह आसक्ति चाहते हो। तुम्हे इसका कोई विशेष भय नही मानना चाहिए कि यह आसक्ति इस जन्ममें बिलकुल चली जायेगी। मैं सबके प्रति समभाव रखनेका भारी प्रयत्न कर रहा हूँ, किन्तु तुमसे अन्योकी अपेक्षा अधिक प्राप्त करनेकी आशा तो रहती ही है।

चि० छोटालाल और चि० सुरेन्द्रको अलग पत्र नही लिख रहा हूँ। तुम इसे उन्हें पढवाना चाहो, तो पढवा सकते हो या तुम उन्हे इसमें के समाचार दे देना। यह पिता-पुत्रके पवित्र सम्बन्धको ध्यानमें रखकर लिखा गया है, इसलिए यह तुम्हारे लिए ही संग्रहणीय है। तुम इस कारण इसे उन्हे न पढवाओ, तो भी कोई हर्ज नही।

बापूके आशीर्वाद

[गुजरातीसे]
महादेवभाईनी डायरी, खण्ड ४

१२१. गोखले और उनका महामंत्र

[फरवरी १९, १९१८ के पूर्व]

गोखलेकी पुण्यतिथिके अवसरपर उस स्वर्गीय महात्माके भाषणोका अनुवाद प्रकाशित करनेकी बात पहले-पहल मुझे ही सूझी थी इसलिए एक तरहसे यह ठीक ही है कि इस पहले खण्डकी प्रस्तावना मैं ही लिखूँ। हमने माना है कि गोखलेकी पुण्यतिथि हम हर साल मनाते रहेंगे। [मामूली रिवाजके अनुसार] हर बार भजन-कीर्तन करके और भाषण देकर सभा विसर्जित कर देनेसे अकसर समयका व्यय-मात्र होता है; उससे किसीका कोई लाभ नही होता। भाषणोकी अपेक्षा कार्यका महत्त्व बढे और ऐसे आयोजनोसे लोग प्रतिवर्ष कुछ ठोस लाभ उठा सकें, इस विचारसे गत वर्ष पुण्यतिथिके प्रबन्ध-कर्त्ताओंने इस अवसरपर मातृभाषामे कोई उपयोगी पुस्तक प्रकाशित करनेका निश्चय किया। उसके साथ ही उन्होने पुस्तकका चुनाव भी कर डाला; जैसा कि स्वाभाविक है उन्होने इसके लिए स्वर्गीय महात्माके भाषणोका सग्रह प्रकाशित करना तय किया।

हरएक यह चाहता था कि अनुवाद ऐसा आदर्श होना चाहिए कि गुजराती साहित्यमें उसका एक विशिष्ट स्थान हो और इस महापुरुषके पवित्र वचन मूलमें जैसे भव्य है हमारी भाषामें भी उनकी वह भव्यता सुरक्षित रहे, फिर चाहे इसके लिए कितना ही प्रयत्न क्यो न करना पडे। यह काम ऐसा नही था कि पैसा देकर कराया जा सके, इसे तो कोई स्वयसेवक ही कर सकता था। ऐसे स्वयसेवक तो हमें मिल गये किन्तु यह तो भविष्य ही बतायेगा कि वह जैसा हम चाहते थे वैसा हुआ है या नही। यह प्रस्तावना जिस भागकी है उसके अनुवादक रा० रा० महादेव हरिभाई देसाई हैं। यहाँ उनका विशेष परिचय देनेकी आवश्यकता नही है। इतना ही कहना बस है कि वे गुजराती साहित्यके प्रेमी हैं, विषय उनके लिए अज्ञात नही था और स्वर्गीय महात्माके हजारो पुजारियोमें वे भी एक हैं। अपना कार्य उन्होने अत्यन्त उत्साह और प्रेमभावसे किया है इसलिए यह आशा की जा सकती है कि यह अनुवाद गुजराती साहित्यमें स्थान प्राप्त करेगा।

गत वर्षकी पुण्यतिथिके अवसरपर ज्यो ही बम्बईकी होमरूल लीगको यह खबर मिली कि पुस्तक प्रकाशित करनेका प्रस्ताव किया जानेवाला है त्यो ही उसके मन्त्रियोंने [इस कार्यके लिए] उदार सहायता देनेका तार किया और बादमे इसके लिए तीन हजार रुपयेकी बडी रकम भी मजूर की। अत व्यवस्थापक-मण्डलको द्रव्य इकट्ठा करनेकी कोई चिन्ता नहीं करनी पडी और इस महँगाईके कालमे भी पुस्तककी छपाई, कागज, आवरण इत्यादिमें सुन्दरताका निर्वाह करनेकी उसकी इच्छा आसानीसे पूरी हो गई। इस उदारताके लिए होमरूल लीग हमारे धन्यवादकी पात्र है।

ऊपर जो-कुछ कहा गया है वह तो प्रस्तावनाकी प्रस्तावना हुई। असली प्रस्तावनाके रूपमें तो हमें इस स्वर्गीय महापुरुषके विषयमे कुछ लिखना चाहिए, किन्तु

शिष्य गुरुके विषयमें क्या लिखे? कैसे लिखे? शिष्यका गुरुके विषयमें कुछ लिखना एक तरहकी उद्धतता ही होगी। सच्चा शिष्य तो गुरुमें समा जाता है। इसलिए वह टीकाकार तो हो ही नही सकता। जो दोष देखती है, वह भक्ति ही नही है, और जो गुण-दोषका पृथक्करण नही कर सकता, ऐसे लेखककी स्तुतिको अगर लोग स्वीकार न करे, तो शिकायत नही की जा सकती। गुरुके बारेमें शिष्यकी टीका तो शिष्यका आचरण ही है। गोखले मेरे राजनीतिक गुरु थे, ऐसा मैंने कई बार कहा है। इसलिए उनके विषयमें कुछ लिखनेके लिए मैं अपनेको असमर्थ मानता हूँ। जो लिखूंगा वह मुझे न्यून ही लगेगा। मुझे लगता है कि गुरु-शिष्यका सम्बन्ध शुद्ध आध्यात्मिक सम्बन्ध है। उसका निर्माण गणित-शास्त्रकी पद्धतिपर नही होता। मानो अनायास हुआ हो, इस तरह क्षणमात्रमें यह सम्बन्ध बँधता है और एक बार बँधनेपर फिर कभी टूट नही सकता।

सन् १८९६ में हमारे बीच यह सम्बन्ध बँधा।[1] उस समय तो मुझे इस सम्बन्धका कुछ भी भान नही था। उनको भी नही था। उसी समय मुझे गुरुके गुरु[2], लोकमान्य तिलक, सर फीरोजशाह मेहता[3], न्यायमूर्ति बदरुद्दीन तैयबजी[4], डा० भाण्डारकर[5], और इसी तरह बंगाल तथा मद्रासके नेताओंको नमस्कार करनेका शुभ अवसर प्राप्त हुआ था। मैं उस समय बिलकुल नवयुवक था। सभीने मेरे ऊपर प्रेमकी वर्षा की थी। वे ऐसे सुखद प्रसंग थे जिन्हे मैं जीवनभर भूल नही सकता। लेकिन जो शीतलता मुझे गोखलेके सम्पर्कमें मिली, वह मैं दूसरोंके पास नही प्राप्त कर सका। गोखलेने मेरे ऊपर अधिक प्रेम उँडेला हो, ऐसा मुझे बिलकुल स्मरण नही है। किसने कितना प्रेम किया, यही बताना हो तो मुझे ऐसा स्मरण है कि डॉ० भाण्डारकरने मेरे प्रति जैसा अपूर्व प्रेमभाव प्रदर्शित किया वैसा किसी और ने नही किया। उन्होने मुझसे कहा, "मैं आजकल सार्वजनिक प्रवृत्तियोंमें भाग नही लेता, लेकिन मैं तुम्हारी खातिर तुम्हारे प्रश्नसे सम्बन्धित सभामें[6] सभापतित्व करना स्वीकार करूँगा।" तो भी मुझे केवल गोखले ही प्रेमबन्धनमें बाँध सके। हमारे इस सम्बन्धने तुरन्त ही कोई आकार नही ग्रहण किया। सन् १९०२ में[7] जब मैं कलकत्तेकी कांग्रेसमें उपस्थित था, अपनी शिष्य-दशाका सम्पूर्ण ज्ञान मुझे उस समय हुआ। लगभग सभी वरिष्ठ नेताओंके दर्शनका लाभ मुझे इस बार फिर मिला। मैंने देखा कि गोखले मुझे भूले नही थे। इतना ही नही, उन्होने मुझे आश्रय भी दिया। स्थूल परिणाम इसके अनुसार ही आये। मुझे वे अपने घर खींच ले गये। विषय-निर्धारिणी सभामें मुझे लगा कि मैं यहाँ व्यर्थ ही आया। प्रस्तावोंकी चर्चा चल रही थी, उस

१ देखिए खण्ड २, पृष्ठ ९७।

२ न्यायमूर्ति महादेव गोविन्द रानडे (१८४२–१९०१); एक यशस्वी न्यायाधीश, समाज-सुधारक और ग्रंथकार। भारतीय राष्ट्रीय कांग्रेसके एक संस्थापक। देखिए खण्ड २, पृष्ठ ४२०

३ (१८४५–१९१५); भारतीय कांग्रेसके एक प्रमुख नेता। देखिए खण्ड १, पृष्ठ ३९५

४ (१८४४–१९०६), न्यायाधीश, विधानसभाके सदस्य; १८८७ में मद्रास कांग्रेस-अधिवेशनके अध्यक्ष।

५ डॉ० रामकृष्ण गोपाल भाण्डारकर (१८३७–१९२५), प्राच्य विद्याविशारद और समाज-सुधारक।

६ देखिए "पूनामें भाषण", खण्ड २, पृष्ठ १४७–४८।

७ 'सन् १९०१ में' होना चाहिए।

समय अन्ततक मेरी यह कहनेकी हिम्मत न हुई कि दक्षिण आफ्रिकाके विषयमे एक प्रस्ताव मेरी जेबमें ही पड़ा हुआ है। रात तो मेरे लिए रुकनेवाली नही थी। नेता काम समाप्त कर डालनेके लिए अधीर हो रहे थे। ये लोग अभी उठ जायेंगे, इस डरसे मेरा जी काँप रहा था। गोखलेको भी याद दिलानेकी मेरी हिम्मत नही होती थी। इतनेमे वे बोल उठे, "गाधीके पास दक्षिण आफ्रिकाके भारतीयोके विषयमें एक प्रस्ताव है, उसपर हमे विचार करना पड़ेगा"[१]। मेरे आनन्दका पार नही रहा। काग्रेस-का यह मेरा पहला अनुभव था, इसलिए काग्रेसमे पास होनेवाले प्रस्तावोकी कीमत मेरी नजरमें बहुत थी। इसके बादके भी अनेक स्मरणीय प्रसग है और वे सब पवित्र है। परन्तु अभी तो जिसे मैंने उनका महामंत्र माना है, उसका वर्णन करके ही प्रस्तावना पूरी करना उचित मालूम होता है।

इस कठिन कलिकालमें शुद्ध धर्मवृत्ति विरली ही जगह देखनेमे आती है। ऋषियों, मुनियो, साधुओ आदिके नामसे जो लोग आज हमे भ्रमण करते हुए दिखाई देते है, उनमे यह वृत्ति शायद ही कभी दिखाई पडती हो। यह तो सभी देख सकते है कि धर्मके कोषकी चाबी उनके पास नही है। धर्म क्या है, इसे भक्त शिरोमणि कवि नरसिंह मेहताने एक ही सुन्दर वाक्यमें बहुत अच्छी तरह प्रकट किया है। वे कहते है:

'ज्या लगी आतमा-तत्व चीन्यो नही,
त्या लगी साधना सर्व जूठी।'[२]

यह अपने अनुभव-सागरमें से निकला हुआ उनका वचन है। इससे हमारी समझमे आ जाता है कि महातपस्वी या योगकी सारी क्रियाएँ जाननेवाले महायोगीमे भी हमेशा धर्मका वास नही होता। गोखलेने इस आत्म-तत्त्वको भली-भाँति पहचान लिया था, इस विषयमें मुझे जरा भी शंका नही है। उन्होने धर्मका दिखावा कभी नही किया, पर उनका जीवन धर्ममय था। प्रत्येक युगमें मोक्षकी ओर ले जानेवाली कुछ प्रधान प्रवृत्तियाँ दिखाई पड़ती है। जब-जब धर्मकी शिथिलता दिखाई देती है, तब-तब ऐसी ही किसी प्रधान प्रवृत्तिके जरिए धर्म-जागृति होती है। ऐसी प्रवृत्ति हमेशा तत्कालीन वातावरणके अनुरूप हुआ करती है। इस समय हम अपनी राजनीतिक स्थितिमे अपनी अवनत दशाका अनुभव करते है। अपूर्ण विचारके कारण हम ऐसा मान लेते है कि राजनीतिक स्थिति सुधरते ही हमारी उन्नति होगी। लेकिन यह धारणा अंशत ही सही है। यह ठीक है कि जबतक राजनीतिक स्थिति नही सुधरती तबतक हमारी उन्नति नही हो सकती। लेकिन राजनीतिक स्थितिमें चाहे जिस तरहके साधनोसे परिवर्तन हो, उन्नति ही होगी, ऐसी बात नही है। इस परिवर्तनको लानेवाले साधन यदि दूषित हो, तो परिवर्तनसे उन्नतिके बजाय अव-नति होनेकी ही अधिक सम्भावना है। राजनीतिक स्थितिमें शुद्ध साधनो द्वारा लाया हुआ परिवर्तन ही हमे उच्च मार्गकी ओर ले जा सकता है। यह गोखलेने अपने सार्वजनिक जीवनके आरम्भमें केवल समझ ही नही लिया था, बल्कि इस सिद्धान्तपर अमल भी

१ प्रस्ताव पेश करते हुए गाधीजीने जो भाषण दिया था उसके लिए देखिए खण्ड ३, पृष्ठ २२९-२३२।

२ जहाँतक आत्म-तत्त्वको नहीं पहचाना, सारी साधना व्यर्थ है।

किया था। लोक-जागृति राजनीतिक प्रगति द्वारा ही हो सकती है, यह तो सबके ध्यानमें आ गया था, [किन्तु] गोखलेने अपने भारत सेवक समाज और जनताके समक्ष यह भव्य विचार पेश किया कि यदि इस प्रवृत्तिको धर्मका स्वरूप दिया जाये तो राजनीतिक प्रवृत्ति मोक्षका रास्ता दिखानेवाली भी होगी। उन्होंने दृढ़तापूर्वक कहा कि हमारी राजनीतिक प्रवृत्तिमें जबतक धर्मवृत्तिका प्रवेश नही होता, तबतक वह शुष्क ही रहेगी।

'टाइम्स ऑफ इंडिया' के लेखकने गोखलेकी मृत्युपर लिखते हुए उनके कार्यकी इस विलक्षणताकी ओर ध्यान खींचा था और इस तरह राजनीतिक सन्यासी निर्माण करनेका उनका प्रयत्न सफल होगा या नहीं, इस विषयमें शका प्रकट करके उनके द्वारा स्थापित भारत सेवक समाजको सावधान किया था। इस जमानेमें राजनीतिक सन्यासी ही सन्यासकी शोभा बढा सकेंगे, दूसरे तो प्राय भगवेको लजायेंगे ही। शुद्ध धर्म-मार्गपर चलनेवाला कोई भी भारतवासी राजनीतिक कार्योंमें भाग लिये बिना नही रह सकता। दूसरे शब्दोंमें कहें तो शुद्ध धर्ममार्गी लोकसेवाको अपनाये बिना रह ही नही सकता। और राजतन्त्रके जालमें हम सब इतन अधिक जकडे हुए है कि उसमें पडे बिना लोकसेवा सम्भव ही नहीं है। जो किसान पुराने समयमें राज्याधिकारी कौन है यह जाने बिना ही अपना सरल जीवन निर्भयतापूर्वक बिता सकते थे, उनकी भी अब वैसी निराली स्थिति नहीं रह गई है। ऐसी हालतमें उन्हें धर्माचरणके निर्णयमें राजनीतिक परिस्थितिका विचार करना ही होगा। इस बडी बातको यदि हमारे साधु, ऋषि, मुनि, मौलवी और पादरी स्वीकार करें, तो जगह-जगह भारत सेवक समाज खड़ा हो जाये और हिन्दुस्तानमें धर्मवृत्ति इतनी व्यापक बन जाये कि आजका अप्रिय और अरुचिकर मालूम होनेवाला राजतन्त्र शुद्ध हो जाये, हिन्दुस्तानमें किसी समय जो धार्मिक साम्राज्य फैला हुआ था उसकी पुन स्थापना हो जाये, भारतमाताके बन्धन एक क्षणमें टूट जायें और एक प्राचीन द्रष्टाकी अमर वाणीमें वर्णित यह स्थिति उत्पन्न हो जाये — तब लोहेका उपयोग तलवार बनानेमें नही, हल बनानेमें होगा और सिंहके साथ बकरी मित्रभावसे विचरण करेगी।[1] ऐसी स्थिति उत्पन्न करनेवाली प्रवृत्ति ही गोखलेका जीवन-मन्त्र थी। यही उनका सन्देश है और मैं मानता हूँ कि जो भी व्यक्ति उनके भाषण सरल मनसे पढेगा, उसे यह मन्त्र उनके शब्द-शब्दमें गूंजता मालूम होगा।

मोहनदास करमचन्द गाधी

[गुजरातीसे]

गोपालकृष्ण गोखलेना व्याख्यानो, खण्ड १

१ उद्धरण बाइबिलका है।

१२२. भाषण : भगिनी समाज, बम्बईमें[1]

[फरवरी २०, १९१८]

भगिनी समाजके प्यारे भाइयो, और बहनो

भगिनी समाजके इस वार्षिक सम्मेलनमें मुझे अध्यक्ष पद देनेके लिए मैं आप सब बहनोका आभार मानता हूँ। मेरी हार्दिक इच्छा तो यह है कि आप अपने कार्योंमें पुरुषोकी सहायता अथवा सलाह तो भले ही लें, परन्तु अध्यक्षका पद तो किसी स्त्रीको ही देना उचित है। इस सस्थाका सदुद्देश्य स्त्री जातिकी उन्नति करना है। जैसे दूसरेकी तपस्यासे हम स्वर्ग नही जा सकते वैसे ही पुरुषोके द्वारा स्त्री जातिकी उन्नति नही की जा सकती। यहाँ मेरे कहनेका आशय यह नही है कि पुरुष स्त्रियोकी उन्नतिके इच्छुक नही है अथवा स्त्रियाँ पुरुषोकी सहायतासे उन्नति न करे, मैं तो आपके सम्मुख यह सिद्धान्त प्रस्तुत करना चाहता हूँ कि कोई भी व्यक्ति या जाति अपनी शक्तिसे ही उन्नति कर सकती है। यह सिद्धान्त कोई नया सिद्धान्त नही है, किन्तु हम प्राय इसे कार्यान्वित करनेमें चूक जाते है।

इस समय यह सस्था बहुत-कुछ भाई करसनदास चितलियाके उत्साहसे चल रही है। मैं उस समयको आया देखना चाहता हूँ कि जब आप बहिनोमे से कोई भाई चितलियाका स्थान ग्रहण कर लेगी और जब वे इस संस्थासे हटकर अन्य कार्योके लिए मुक्त हो सकेंगे। जिसने स्त्री-सेवाको ही धर्म मान लिया है वह तो इस दिशामें दूसरा कार्य भी ढूँढ लेगा। किन्तु इस सस्थाका सच्चा स्वरूप तो तभी प्रकट होगा जब यह सस्था अपने अधिकारियोका चुनाव स्त्रीवर्गमें से ही करेगी और जब उसका कार्य जितना अच्छा इस समय है उससे भी अधिक अच्छा होगा। जैसा कि आप जानती है, मैं स्त्रियो और पुरुषो—दोनोके निकट सम्पर्कमें रहता हूँ, और यह बात मेरी समझमें आ गयी है कि स्त्रियोकी सेवाके कार्यमें जबतक स्त्रियाँ न आयें तबतक मैं उस कार्यको नही चला सकता। इसीलिए मुझे जब-जब अवसर मिलता है तब-तब मैं पुकार-पुकारकर कहता हूँ कि जबतक भारतमें स्त्रियाँ तनिक भी दबी हुई रहेंगी, अथवा उन्हे पुरुषोकी अपेक्षा कम अधिकार प्राप्त होगे तबतक भारतका सच्चा उद्धार न होगा। इसलिए यदि यह सस्था इस प्रकारसे अपने उद्देश्यको पूरा कर सकेगी तो उससे भारतके गौरवमें वृद्धि होगी।

परन्तु हमें यह समझना आवश्यक है कि स्त्रियोकी उन्नतिका अर्थ क्या है। उनकी उन्नतिका प्रश्न तभी उठता है जब उनकी अवनति हुई हो। अब यदि उनकी अवनति हुई है तो हमें यह सोचना चाहिए कि उस अवनतिका कारण क्या है और वह किस प्रकार दूर किया जा सकता है। हमारा प्रथम कर्त्तव्य यह है कि हम इन सब मुद्दोपर

१. बम्बईकी महिला-कल्याण संस्था भगिनी-समाजका वार्षिक सम्मेलन बुधवारको साय ४ बजे मोरारजी गोकुलदास भवनमें हुआ था। गाधीजीने इस समारोहकी अध्यक्षता की थी और छात्राओंको पुरस्कार वितरित करनेके बाद 'स्त्री-शिक्षा' पर यह भाषण दिया था।

भली-भाँति विचार कर लें। भारतमें सर्वत्र यात्रा करते हुए मैंने यह देखा है कि इस सम्बन्धमें जो आन्दोलन चल रहा है वह अनन्त आकाशमें एक छोटी-सी बदलीकी तरह बहुत-थोड़े लोगो तक ही सीमित है। करोडो लोगोको इस आन्दोलनका कोई भान नही है। पचासी प्रतिशत लोग हमारी गतिविधियोसे अलिप्त रहकर निर्दोष जीवन बिता रहे हैं। ये सभी स्त्री-पुरुष जीवनमें अपना-अपना भाग उचित रूपसे पूरा कर रहे हैं। दोनो वर्गोंमें शिक्षा अथवा कहें तो शिक्षाका अभाव समान है और दोनो एक-दूसरेकी सहायता कर रहे हैं। यदि इनके जीवनमें कोई अपूर्णता दिखाई देती है तो वह शेष पन्द्रह प्रतिशत लोगोंके जीवनकी अपूर्णताकी ही झलक है। मैं यह मानता हूँ कि यदि भगिनी समाजकी बहनें इन पचासी प्रतिशत लोगोके जीवनका भली-भाँति अध्ययन करेंगी तो वे समाजके कार्यक्रमकी रूपरेखा बहुत अच्छी तरहसे बना सकेंगी।

मैं इस समय जो विचार कर सकूँगा वे बहुत-कुछ इन पन्द्रह प्रतिशत लोगोपर ही लागू होंगे। उनमें भी जिन मामलोंमें स्त्री-पुरुष दोनो अवनत हैं उनका विचार करना यहाँ अप्रासंगिक होगा। इसलिए जिन मामलोंमें पुरुषोंकी अपेक्षा स्त्रियोकी अवनति विशेष हुई है, हमें उन्हींपर विचार करना है। कानून-निर्माणका कार्य प्राय पुरुषोंके हाथोंमें रहा है और पुरुषोंने सदा विवेकका उपयोग नही किया दिखता। स्मृतिकारोंने स्त्रियोंके सम्बन्धमें जो-कुछ लिखा है उसका सर्वथा समर्थन नही किया जा सकता। स्मृतियोंके वचन ही बाल-विवाह और विधवाओंपर लगाये गये नियन्त्रण आदिके मूलमें हैं। उन्हें शूद्र वर्णके साथ रखनेसे हिन्दू समाजको कल्पनातीत आघात लगा है। आपको मेरे इन वचनोंमें और ईसाइयोंके द्वारा प्राय किये जानेवाले आक्षेपोंमें भाषा-साम्य दिखाई देगा। किन्तु इसके अतिरिक्त हममें अन्य किसी बातमें साम्य नही है। ईसाई लेखकोंके आक्षेप हिन्दू धर्मका मूलोच्छेद करनेके उद्देश्यसे किये गये हैं। मैं अपने आपको बहुत ही पक्का हिन्दू मानता हूँ। मेरा आक्षेप इस हेतुसे किया गया है कि हिन्दू धर्मकी न्यूनता दूर हो जाये और उसे अपना वास्तविक भव्य स्थान प्राप्त हो जाये। ईसाई आलोचक हमारी स्मृतियोंकी अपूर्णता बताकर उनको सामान्य ग्रन्थ सिद्ध करना चाहते हैं। मैं यह बतानेका प्रयत्न करता हूँ कि स्मृतियोंकी अपूर्णताका कारण या तो उनमें प्रक्षिप्त श्लोकोका मिलाया जाना है या हमारे अध पतनके कालमें मान्यता प्राप्त स्मृतिकारो द्वारा अपने-अपने श्लोको-का जोडा जाना है। इन श्लोकोको निकालकर शेष स्मृतियोंकी अपूर्वता सिद्ध की जा सकती है। मिथ्याभिमान या अज्ञानसे स्मृतियोंमें और हिन्दू धर्मके अन्य सब ग्रन्थोंमें कोई भी दोष नही है, ऐसा मानकर और दूसरोंसे मनवाकर मैं हिन्दू धर्मका लँगडा बचाव कदापि नही करना चाहता। मेरा दृढ विश्वास है कि ऐसा करनेसे हिन्दू धर्मकी उन्नति नही होती, बल्कि अवनति ही होती है। जिस धर्ममें सत्यको उत्कृष्ट स्थान दिया गया है उसमें असत्यका समर्थन कदापि नही हो सकता।

तब स्त्री जातिकी उन्नतिके लिए यह आवश्यक है कि हिन्दुओंके धर्मशास्त्रोंमें स्त्रियोंके सम्बन्धमें जो आक्षेप हैं उनके निवारणका महान् प्रयत्न किया जाये। किन्तु इस प्रयत्नको कौन कर सकता है और यह कैसे किया जा सकता है। मेरी अल्पमतिसे हमें इसके लिए मुख्यत सीता, दमयन्ती और द्रौपदी-जैसी पवित्र, अत्यन्त दृढ-सकल्प और सयमी नारियाँ उत्पन्न करनी होंगी। उस युगमें जिन हिन्दुओंने उनकी पूजा की थी वे आज इन

आधुनिक सती-साध्वियोकी भी पूजा करेगे। हिन्दू उनके वचनोको शास्त्र-वचनोके समान प्रमाण मानकर ग्रहण कर लेंगे और स्मृति आदि शास्त्रोमें जो आक्षेप है उनसे लजायेंगे एव उन्हे विस्मृत कर देंगे। हिन्दू धर्ममें ऐसे परिवर्तन सदा ही होते आये है और होते रहेंगे। इसीलिए तो यह धर्म अवतक जीवित है और भविष्यमें भी जीवित रहेगा। मेरी ईश्वरसे प्रार्थना है कि यह सस्था शीघ्र ही ऐसी नारियोको उत्पन्न करे।

जैसा ऊपर वताया, हम अपने देशकी नारियोकी अवनतिके उन कारणोपर विचार कर चुके है जिनको साधन वनाकर उनकी उन्नतिकी जा सकती है। इस ध्येयको साध सकनेवाली स्त्रियाँ तो इनी-गिनी ही हो सकेंगी। परन्तु अब हमें सोचना यह है कि सामान्य स्त्रियोको क्या करना उचित है। प्रथम कार्यतो यह करना है कि यथासम्भव अधिकसे-अधिक स्त्रियोको उनकी दुरवस्थाका ज्ञान कराया जाये। मै उन लोगोमें से नही हूँ जो यह मानते है कि यह कार्य सामान्य शिक्षाके विना सम्पन्न नही हो सकता। यदि ऐसा माना जाये तो इस कार्यकी सिद्धिके लिए दीर्घ-काल चाहिए। मै प्रतिक्षण यह अनुभव करता हूँ कि इतने समयकी कोई आवश्यकता नही है। उन्हे उनकी दुरवस्थाका ज्ञान अभी, सामान्य शिक्षाकी प्रतीक्षा किये बिना ही कराया जा सकता है। मै अभी विहारके एक जिलेसे आ रहा हूँ वहाँ मै उच्च कुलोकी वहुत-सी वहनोसे मिला। वे सभी पर्दानशीन थी। उन्होने मेरे सम्मुख आकर जैसे वहन भाईसे पर्दा नही करती वैसे ही पर्दा हटा दिया। ये वहनें पढी-लिखी नही थी। उनसे मिलनेसे जरा पहले एक अग्रेज वहन मुझसे मिलकर गई थी। यह वहन जब मै कई भाइयोके साथ वैठा था तब उनके वीच आकर ही वात करके चली गई। किन्तु हिन्दू वहनोसे मिलनेके लिए मुझे अलग कमरेमें जाना पडा। मैने उनसे विनोदमें कहा कि चलो, हम सब वही चलकर बैठें जहाँ सब पुरुष वैठे है। उन्होने उत्साहपूर्वक कहा "हम तो इसमें वहुत प्रसन्न है, किन्तु हमारी प्रथाके अनुसार हमें अनुमति दी जानी चाहिए। हमें यह पर्दा तनिक भी नही रुचता। इसे आप हटवा दें।" यह वात जितनी करुणाजनक है उतनी ही मेरे उक्त कथनकी समर्थक भी है। इन वहनोको सामान्य शिक्षाके पूर्व ही अपनी स्थितिका भान हो गया था। इन वहनोने मुझसे सहायता माँगी, यह तो उचित ही था। किन्तु मै चाहता हूँ कि उनकी मुक्तिकी शक्ति स्वय उनमें ही हो। और उन्होने स्वीकार भी किया कि यह शक्ति उनमें है। मै अपने मनमें यह आशा लेकर आया हूँ कि हमें इन वहनोके पर्देसे मुक्त होनेकी खबर कुछ दिनोमें ही मिल जायेगी। साधारणत अपठित मानी जानेवाली ये वहनें चम्पारनमे अच्छा काम कर रही है। वे जिस स्वतन्त्रताका उपभोग कर रही है उसका ज्ञान वे अपनी इन अति ज्ञानहीन वहनोको दे रही है। स्त्री पुरुषकी सहचारिणी है, उसकी मानसिक शक्ति पुरुषके समान ही है और उसे पुरुषकी छोटीसे-छोटी प्रवृत्तिमें भाग लेनेका अधिकार है। जितनी स्वतन्त्रता पुरुषको है, उतनी स्वतन्त्रता भोगनेका अधिकार उसे भी है और जैसे पुरुष अपने क्षेत्रमें सर्वोपरि है वैसे ही स्त्री अपने क्षेत्रमें सर्वोपरि है। यह स्थिति स्वाभाविक होनी चाहिए। यह लिखने-पढनेका परिणाम नही हो सकती। अज्ञान-रूप अन्धकूपमें पतित जड़ पुरुष भी रूढ प्रथाके कारण स्त्रीके ऊपर ऐसे अधिकारका उपभोग कर रहा है कि जो न तो उसे शोभा दे सकता है और न जिसे वह सामान्यत भोग ही सकता है। स्त्रियोकी इस दुरवस्थाके कारण हमारी बहुतसी प्रवृत्तियाँ बीचमें ही ठप हो

जाती है और हमारे बहुतसे कार्योका पूरा परिणाम नही निकलता। हमारी स्थिति उस अदूरदर्शी व्यापारीकी स्थिति-जैसी है जो आधी पूंजीसे व्यापार करता है। यदि मेरा कहना ठीक हो तो इस सस्थाकी बहुत-सी बहनें, जिन्हे अपनी दशाका भान नही है उन बहनोको अपनी दशाका भान करानेमें लग जायेंगी। इसका अर्थ यह हुआ कि वे जितना समय मिले उतना बम्बईके पिछडे हुए वर्गोमें जाकर उन्हे ज्ञान देनेमें लगायें। यदि आप पुरुप-वर्गकी धार्मिक, राजनीतिक और सासारिक प्रवृत्तिमें भाग लेने लगी है, तो आप उन्हे उसका भी ज्ञान दें। यदि आपने बच्चोके पालन-पोषणका समस्त ज्ञान प्राप्त किया है तो आप वह ज्ञान भी उन्हे दें। यदि आपने स्वच्छ वायु, स्वच्छ जल, शुद्ध और सात्विक भोजन एव व्यायाम आदिके स्थूल और सूक्ष्म लाभ पढे है और उनका अनुभव प्राप्त किया है तो वह ज्ञान और अनुभव इन बहनोको बतायें। इस प्रकार आप अपनी और उन सभीकी उन्नति करेगी।

यद्यपि इस प्रकार पढे-लिखे विना बहुतसे कार्य किये जा सकते है तो भी मेरा खयाल यह है कि सदा पढे-लिखे विना काम नही चल सकता। पढने-लिखनेसे बुद्धि विकसित और तीव्र होती है एव हमारी परोपकार करनेकी क्षमता बहुत बढ जाती है। किन्तु मैंने पढने-लिखनेकी कीमत कभी ऊँची नही आंकी। मैंने तो उसे केवल उचित स्थान देनेका प्रयत्न किया है। मै समय-समयपर यह बताता रहा हूँ कि पुरुषोका स्त्रियोसे उनके स्वाभाविक मानवीय अधिकार छीन लेने अथवा उन्हे प्रदान न करनेका कारण, स्त्रियोमें विद्याका अभाव नही होना चाहिए, किन्तु निश्चय ही इन स्वाभाविक अधिकारोको कायम रखने, उनमें वृद्धि करने और उनको प्रचारित करनेके लिए विद्याकी आवश्यकता है। फिर विद्याके विना लाखों लोगोको तो शुद्ध आत्मज्ञान भी प्राप्त नही हो सकता। अनेक लेखोमें ऐसा अखूट ज्ञानभण्डार भरा है जिससे हमें निर्दोप आनन्द प्राप्त हो सकता है, यह आनन्द भी विद्याके विना प्राप्त नही किया जा सकता। विद्याके विना मनुष्य पशुवत् है, इस कथनमें कोई अतिशयोक्ति नही है। बल्कि यह यथार्थ है। इसलिए पुरुपोकी भाँति स्त्रियोके लिए भी शिक्षा प्राप्त करना आवश्यक है। मेरा खयाल यह नही है कि जैसे पुरुषोको शिक्षा दी जाती है वैसे ही स्त्रियोको दी जानी चाहिए। प्रथम तो जैसा मैंने कही-कही कहा है, हमारी सरकारी शिक्षा प्राय भ्रमपूर्ण और हानिकर है और यह दोनो वर्गोके लिए पूर्णत त्याज्य है। यदि उसके दोप दूर भी कर दिये जायें तो भी मैं नही मानता कि वह स्त्रियोके लिए सर्वथा उपयुक्त ही है। स्त्री और पुरुपका दर्जा समान है, एक ही नही है। दोनोकी जोडी अपूर्व है, दोनो एक-दूसरेके पूरक है और एक-दूसरेके यहाँतक सहायक है कि एकके अभावमें दूसरेका अस्तित्व सम्भव ही नही है। किन्तु यदि पुरुष अथवा स्त्री स्थान-भ्रष्ट हो जाये तो दोनो ही नष्ट हो जायेंगे यह सार ऊपर किये गये विवेचनसे ही निकलता है। इसलिए स्त्री-शिक्षाकी योजना तैयार करनेवाले लोगोको यह बात सतत् स्मरण रखनी चाहिए। दम्पतीकी बाह्य प्रवृत्तिमें पुरुप प्रमुख होता है, इसलिए बाह्य प्रवृत्तिका विशेप ज्ञान उसके लिए आवश्यक है। आन्तरिक प्रवृत्तिमें स्त्री प्रमुख होती है, इसलिए गृह-व्यवस्था और बाल-बच्चोकी शिक्षा-दीक्षा आदि विषयोका विशेप ज्ञान उसके लिए आवश्यक है। खयाल यह नही है कि किसीके लिए कोई

विशेष ज्ञान प्राप्त करनेका निषेध रहे। बल्कि यह कि शिक्षा-क्रम इन मुद्दोको ध्यानमे रखकर तैयार न किया जायेगा तो दोनो ही वर्गोको अपने-अपने क्षेत्रोमे पूर्णता प्राप्त करनेका अवसर न मिलेगा।

मुझे इस सम्बन्धमें भी दो शब्द कहनेकी आवश्यकता है कि स्त्रियोके लिए अंग्रेजी शिक्षा आवश्यक है या नही। मेरा अनुभव तो यह है कि हमारे सामान्य जीवन-क्रममें स्त्री अथवा पुरुष दोनोमें से एकके लिए भी अंग्रेजीकी आवश्यकता नही है। आजी-विका कमाने अथवा राजनीतिक प्रवृत्तिको चलानेके लिए ही पुरुषोको अंग्रेजी भाषाके ज्ञानकी आवश्यकता हो सकती है। मैं यह नही मानता कि स्त्रियोको नौकरियाँ ढूंढने या व्यापार चलानेकी चिन्ता करनेकी आवश्यकता है। इसलिए यदि कुछ स्त्रियोको अंग्रेजी भाषाका ज्ञान प्राप्त करना हो तो वे उसे पुरुषोके लिए स्थापित विद्यालयोमें प्राप्त कर सकती है। स्त्रियोके लिए स्थापित स्कूलोमे अंग्रेजीका प्रवेश करना हमारी पराधीनताको लम्बा बनानेका कारण हो जायेगा। मैंने यह बात अनेक लोगोके मुँहसे सुनी है और अनेक जगह पढी है कि अंग्रेजी भाषामें निहित भारी ज्ञान-कोष पुरुषोकी भाँति स्त्रियोके लिए भी उपलब्ध होना चाहिए। मैं नम्रतापूर्वक कहना चाहता हूँ कि हम इस सम्बन्धमें कुछ भूल कर रहे है। मैं यह तो कहता नही कि अंग्रेजी भाषाका ज्ञान-भण्डार पुरुषोके लिए तो खोल दिया जाये किन्तु स्त्रियोके लिए न खोला जाये। यदि किसीकी रुचि साहित्य पढनेकी है तो वह समस्त ससारका साहित्य पढे। उससे उसको रोकनेवाला कोई व्यक्ति ससारमें जन्मा नही है। किन्तु जहाँ समस्त लोक-समुदायकी आवश्यकताओको ध्यानमें रखकर शिक्षा-क्रम बनाया गया है, वहाँ ऊपर बताये गये साहित्य-प्रेमियोके लिए कोई योजना नही बनाई जा सकती। ऐसे लोगोके लिए उन्नति-कालमें यूरोपकी भाँति हमारी पृथक्-पृथक् सस्थाएँ होगी। एक सुव्यवस्थित शिक्षा-क्रमके अन्तर्गत जब बहुतसे स्त्री-पुरुष शिक्षा लेने लग जायेंगे और अशिक्षित लोग अपवाद माने जायेंगे तब अन्य भाषाओके साहित्यके रसका स्वाद चखानेवाले हमारी भाषामे ही दलके-दल निकल आयेंगे। यदि हम साहित्यका रस सदा अंग्रेजी भाषासे ही लेते रहेंगे तो हमारी भाषा सदा निष्प्राण बनी रहेगी अर्थात् हमारी जाति सदा निष्प्राण बनी रहेगी। यदि आप मुझे इस उपमाके लिए क्षमा कर दे तो मुझे कहना चाहिए कि पराई भाषामे से आनन्द प्राप्त करनेका स्वभाव ऐसा ही है जैसा किसी चोरका चुराये हुए मालमें से आनन्द लेनेका स्वभाव। पोपने 'इलियड'मे से जो आनन्द प्राप्त किया वह उसने अपनी जातिको अद्भुत अंग्रेजीमें दिया। फिट्जेराल्डने उमर खय्यामकी रुबाइयोमें से जो आनन्द प्राप्त किया उसे ऐसी प्रभावशाली अंग्रेजीमे प्रस्तुत किया कि उनके काव्यको लाखो अंग्रेज 'बाइबिल'की भाँति सँजोकर रखते है। एडविन आर्नोल्डने 'भगवद्गीता'में से रसपान किया, किन्तु उन्होने उस रसका पान करनेके लिए अंग्रेज लोगोसे सस्कृत पढनेका आग्रह नही किया, बल्कि अंग्रेजी भाषामें अपनी आत्माको उँडेलकर सस्कृत अथवा पालीके साथ उपयुक्त अंग्रेजीमे उस रसको प्रस्तुत करके अंग्रेज लोगोको उसका पान कराया। चूंकि हम बहुत पिछड गये है, इसलिए हममें ऐसी प्रवृत्ति बहुत अधिक होनी चाहिए। यह प्रवृत्ति तभी सम्भव होगी जब हम अपना शिक्षा-क्रम वैसा बना लेंगे जैसा मैंने ऊपर बताया है और उसपर दृढतापूर्वक कायम रहेंगे। यदि हम अंग्रेजीका झूठा मोह त्याग सकें और अपनी अथवा अपनी भाषाकी

शक्तिमें अपना अविश्वास छोड सकें तो यह कार्य कुछ कठिन नही है। मै कहता हूँ कि हमारे देशके स्त्री-पुरुष अग्रेजी भाषा पढनेके लिए कम समय दें। मेरे कहनेका हेतु यह नही है कि उनको कम आनन्द मिले, बल्कि यह है कि जिस आनन्दको अग्रेजी पढनेवाले बहुत कष्ट सहकर प्राप्त करते है वह आनन्द हमें सुगमतासे प्राप्त हो सके। इस ससारमें अनेक अमूल्य रस भरे हुए है। सभी साहित्य सबधी रत्न अग्रेजी भाषामें ही नही है, अन्य भाषाओमें इन रत्नोकी बहुलता है। ये सभी हमारे देशके आम लोगोके लिए उपलब्ध होने चाहिए। इसका मार्ग एक ही है और वह यह है कि हममें से कुछ लोग, जिनमें उचित सामर्थ्य हो, उन-उन भाषाओको सीखकर उनके उन रत्नोको हमारी भाषाके द्वारा हमें उपलब्ध करायें।

हमने यहाँ इतना विचार शिक्षा-प्रणालीके सम्बन्धमें किया। इससे बालिकाओके विवाह होने बन्द हो गये और स्त्रियोको उनके स्वाभाविक अधिकार मिल गये, यह माननेका कोई कारण नही है। इसलिए जो बालिकाएँ विवाहके पश्चात लुप्त हो जाती है उनके सम्बन्धमें कुछ कहें। वे अब अपनी शालाओमे न आयेंगी। एक बार बाल-विवाहका पाप करनेके बाद उनकी माताएँ भी अपने पापका ज्ञान होनेपर उन बालिकाओको शिक्षा दिलाने अथवा कोई अन्य आश्वासन देनेमें असमर्थ हो जाती है। जो पुरुष बालिकाके साथ विवाह करता है वह परोपकार भावनासे नही, बल्कि बहुत-कुछ विषयासक्तिके वशीभूत होकर करता है। इन बालिकाओकी रक्षा कौन करे? इस प्रश्नमें स्त्रियोके उद्धारका कार्य बहुत-कुछ आ जाता है। इसका उत्तर कठिन, किन्तु एक ही है। पुरुषके अतिरिक्त इनका सासारिक रक्षक कोई अन्य नही है। बालिकासे विवाह करनेवाले पुरुषको, उसकी पत्नी ही समझा सके, यह लगभग असम्भव है। इसलिए यह अति कठिन सुधार-कार्य समझदार पुरुषको करना है। यदि मुझमें इतनी शक्ति हो तो मै इन बालिका-वधुओकी एक सूची बनाऊँ, उनके पतियोके मित्रोको खोजूँ और उनके मारफत एव जो भी अन्य धर्मानुकूल और विनययुक्त कदम मुझे सूझें, उन्हे उठाकर ऐसे पतियोको मै यह कहलाऊँ आपने अज्ञानवश एक बालिकासे विवाह करनेका पाप किया है। जबतक इस बालिकाकी अवस्था परिपक्व नही हो जाती और जबतक यह शिक्षा प्राप्त नही कर लेती, तबतक आप शुद्ध ब्रह्मचर्यका पालन करके इसे स्वय शिक्षा देकर अथवा अन्य किसीकी मारफत शिक्षा दिलाकर सतान उत्पन्न करने और उसका पालन-पोषण करने योग्य नही बना लेते तबतक आप इस पापसे किसी भी प्रकार मुक्त न हो सकेंगे।

इस प्रकार भगिनी समाज निश्चय करे तो उसके सम्मुख बहुतसे कार्यक्षेत्र पडे है जिनमें कार्य करनेसे सुन्दर फल उपलब्ध हो सकते है। उसका यह कार्यक्षेत्र इतना विस्तृत है कि यदि सकल्पपूर्वक कार्य किया जाये तो बडा आन्दोलन उसके सम्मुख कुछ भी न रहे एव स्वराज्य शब्दका उच्चारण किये बिना ही उस दिशामें बहुत बडी सेवा हो जाये। जब छापेखाने नही थे और भाषणोकी सुविधा भी कम थी, जब चौबीस घटेमे एक हजार मीलके बजाय लोग केवल २४ मीलकी ही यात्रा कर सकते थे, तब अपने विचारोके प्रचारका एक ही मुख्य साधन होता था। वह था हमारा कर्म, और उसका प्रभाव बहुत होता था। अब हम वायुके वेगसे दौड रहे है, भाषण दे रहे है और लेख लिख रहे है। उसके बावजूद हम अपने विचारोपर अमल करवानेमें लगभग असमर्थ रहते है। हर ओरसे

निराशाकी ध्वनि सुनाई देती है। मुझे तो लगता है कि हम आज भी पहलेकी भाँति अपने कर्मसे लोगोको इतना प्रभावित कर सकते है जितना अपने भाषणो और लेखोसे कभी नही कर सकते । इस समाजसे मेरी प्रार्थना है कि वह ऐसे मौन कर्मको ही प्रधानता दे।

[गुजरातीसे]

महात्मा गांधीनी विचारसृष्टि

१२३. पत्र : जी० एस० अरुण्डेलको

[साबरमती]
फरवरी २१, १९१८

[प्रिय श्री अरुण्डेल,]

आपका पत्र मिला। अभी तो मैं एक-दो टेढे मामलोके सिलसिलेमें व्यस्त हूँ। मुझे जब चाहूँ, तब विचार नही आते। किसी विषयपर लोगोको कुछ देने लायक चीज लिख सकूँ, उससे पहले मुझे अपने मनको उस विषयमें रमाना पडता है। मैं इतना ही कह सकता हूँ कि आपका पत्र मैं ध्यानमें रखूंगा और कुछ-न-कुछ भेजनेका प्रयत्न करूँगा। लेकिन अधिक सम्भव है कि न भेज सकूँ। हाँ, जो काम मैंने हाथमें ले रखे है, वे सोचे हुए समयसे पहले पूरे हो जायें, तो अलग बात है।[1]

महादेव देसाईकी हस्तलिखित डायरीसे।

सौजन्य : नारायण देसाई

१. महादेव देसाईने अपनी डायरीमें इस पत्रके सम्बन्धमें लिखा है: "यह पत्र अरुण्डेलके लिए लिखा गया था, जिन्होंने राष्ट्रीय शिक्षा प्रसारक समिति [नेशनल एजूकेशन प्रमोशन सोसाइटी] के मन्त्रीकी हैसियतसे गांधीजीसे शिक्षा-सप्ताहके लिए एक लेख लिखनेका अनुरोध किया था। बादमें जब गांधीजीने देखा कि लेख भेजनेकी अन्तिम तिथि २० फरवरी थी, तो उन्होंने कहा: 'जान बची, ईश्वरको धन्यवाद'। फिर उन्होंने मुझसे कहा कि अरुण्डेलको लिख दूँ: "आपने जो तिथि निश्चित की है उससे पहले मैं लेख भेज ही नहीं सकता, क्योंकि आपका पत्र मुझे कल ही मिला।" लगभग इसी कालमें स्लाईको लिखे एक पत्रमें गांधीजीने लिखा है: "किसी भी चीजसे छुटकारा मिले तो सचमुच बड़ी राहत मिलती है।"

१२४. पत्र : फ्लॉरेंस ए० विंटरबॉटमको

[साबरमती]
फरवरी २१, १९१८

[प्रिय कुमारी विंटरबॉटम,]

मैंने तुम्हे हफ्तोसे पत्र नही लिखा, पर इसका कारण तुम जानती ही हो। यहाँके अपने कामके बारेमें कुछ लिखनेसे पहले मेरा विचार तुम्हारे पूछे हुए एक महत्त्वपूर्ण प्रश्नका उत्तर देनेका है। प्रश्नसे मालूम होता है कि तुम इस देशमें मेरे कामका बहुत बारीकीसे निरीक्षण करती रही हो। लन्दनमें मैं कहता था कि जनताके प्रति सदय, निरकुश शासन-प्रणाली ही सर्वोत्तम राज्यतन्त्र है। तुम यह बात याद दिलाकर मुझसे पूछती हो कि मैं जो 'होमरूल' आन्दोलनमें भाग ले रहा हूँ, उसका उपर्युक्त कथनके साथ मेल कैसे बैठता है? लन्दनमें मैंने जो कहा था, उसपर मैं अब भी कायम हूँ। किन्तु वर्तमान कालमें ऐसा राज्यतन्त्र असम्भव बन गया है। हिन्दुस्तानके लिए ससदीय पद्धतिके शासन-तन्त्रमें से गुजरनेके सिवा कोई उपाय नही, इस बातका निश्चित रूपसे अनुभव हो जानेके कारण मैं स्वाभाविक रूपमें ऐसे एक आन्दोलनका समर्थन कर रहा हूँ, जिसके द्वारा अच्छीसे-अच्छी ससदीय शासन-प्रणाली प्राप्त की जा सके और वर्तमान वर्णसकर शासन-प्रणालीको — जो न ससदीय है और न सदय निरकुशता — मिटाया जा सके। इतना ही नही मैं इस आन्दोलनमें उसी हदतक भाग लेता हूँ, जिस हदतक मैं अपने उन सिद्धान्तोको, जिन्हे मेरी समझमें उपयोगी बननेके लिए हर तन्त्रको स्वीकार करना ही पडेगा, लोगोसे स्वीकार करा सकूँ और उनपर अमल करा सकूँ। नटेसनने मेरे भाषणोका एक सग्रह छापा है। मैंने उन्हे उसकी एक प्रति तुम्हारे पास भेजनेके लिए कहा है। उसमें यहाँके गुजरात राजनीतिक सम्मेलनके अध्यक्षकी हैसियतसे दिये गये मेरे भाषणका अग्रेजी अनुवाद छपा है। मैं जो कहना चाहता हूँ, वह उसमें पूरी तरह बता दिया गया है।

मैंने यह सोचकर कि और मामलोके बारेमें भी लिख सकूँगा, पत्र लिखनेमें एक सप्ताहकी देर की। किन्तु अब अधिक विलम्ब करना ठीक नही। और बातें लिखनेके लिए फिर मौका ढूँढूँगा।

हृदयसे तुम्हारा,
मो० क० गांधी

[अग्रेजीसे]

महादेव देसाईकी हस्तलिखित डायरीसे।
सौजन्य . नारायण देसाई।

१२५. पत्र : गोरधनदास पटेलको

[साबरमती]
फरवरी २०, १९१८

प्रिय श्री गोरधनभाई,[1]

पूज्य अनसूयाबहन, भाई शकरलाल बैंकर और मैं अभी-अभी जुलाहोकी सभामें से आये हैं। जुलाहोंने कहा कि मिल-मालिक आठ आने बढाकर उनसे कुछ लिखा लेना चाहते हैं। मैंने उन्हे सलाह दी है कि वे अपने सलाहकारकी सलाह लिये बिना किसी भी कागजपर हस्ताक्षर न करें और यह भी कहा है कि एक-दो दिनमें हम उन्हे यह सलाह देंगे कि उन लोगोको उचित वृद्धिके रूपमे क्या माँगना चाहिए; हम यह भी कहेंगे कि यदि वे इस सलाहके अनुसार चलेंगे और सुझाया हुआ वेतन पसन्द कर लेंगे, तो उनका भला होगा। इस काममें मैं अपनी जिम्मेदारी कल मिल ग्रूपके सदस्योको विनयपूर्वक बता चुका हूँ। मुझे लगता है कि पच-फैसलेका सिद्धान्त बहुत गूढ है और मजदूरोकी आस्था उसपर से उठ जाये, यह तनिक भी वाछनीय नही है।[2] इसलिए मैं अपने ऊपर अनायास आये हुए इस कर्त्तव्यको छोड नही सकता। भाई शकरलाल बैंकर और भाई वल्लभभाई पटेल भी इस विचारसे सहमत हैं। मजदूरोका काम-धन्धेके बिना अनिश्चित स्थितिमें रहना उनके लिए, आपके लिए और सबके लिए अवाछनीय है। बम्बईकी मिलोमे दिये जानेवाले वेतनो-की दरें भाई बैंकर ले आये हैं। यहाँकी मिलें जो वेतन देती हैं, उनकी सूची आप मुझे तुरन्त भेज सकें तो आभारी होऊँगा। मैं चाहता हूँ कि यदि मिल ग्रूप हमारी रायसे किसी भी प्रकारसे बँधे बिना अलग-अलग विभागके मजदूरोके बारेमें अपनी राय दे सके, तो दे। अगर हममे से कोई भी किसी बन्धनके बिना सलाह-मशविरेमें शामिल हो सके, तो उस हदतक हमारा प्रस्ताव अधिक ज्ञानपूर्वक प्रस्तुत किया गया माना जायेगा। मुझे मजदूरोके प्रति उनके मजदूर होनेके कारण ही कोई खास पक्षपात नही है, मुझे तो न्यायके प्रति पक्षपात है और चूँकि वह अक्सर मजदूरोके पक्षमें पाया जाता है, इसलिए आम तौर-पर यह खयाल पैदा हुआ है कि मेरा उनके प्रति पक्षपात है। मुझसे अहमदाबादके महान् उद्योगका अनिष्ट हो ही नही सकता। इसलिए मुझे आशा है कि आपकी सस्था इस कठिन काममें हमें पूरी मदद देगी।[3] मुझे आशा है कि इस पत्रका उत्तर आप तुरन्त

१. मन्त्री, अहमदाबाद मिल-मालिक संघ।

२. एक पच-मण्डल १४ फरवरीको नियुक्त किया गया था। इसमें दोनों पक्षोंके प्रतिनिधि थे और सरपचकी हैसियतसे कलक्टर थे। किन्तु कुछ मिलोंके मजदूरोंने गलतफहमीके कारण हड़ताल कर दी।

३. गांधीजीने अहमदाबाद और बम्बईकी मजदूरीकी दरोंका अध्ययन करनेके बाद यह निष्कर्ष निकाला कि वेतनोंमें ३५ प्रतिशत वृद्धिकी माँग उचित होगी। मिल-मालिक इस आधारपर निश्चित सम्मति देकर गांधीजीकी सहायता न कर सके, इसलिए स्थिति बिगड़ गई।

देंगे। मैं जल्दी इसलिए कर रहा हूँ कि मैंने, सभव हो तो, अपने इस सलाह-मशविरेका परिणाम, अधिकसे-अधिक बुधवार तक मजदूरोको बता देनेके लिए कहा है।

मो० क० गांधी

[गुजरातीसे]

महादेवभाईनी डायरी, खण्ड ४

१२६. तार: ए० एच० वेस्टको[1]

[अहमदाबाद
फरवरी २४, १९१८ के आसपास][2]

आप अपनी योजनापर अमल कर सकते हैं। शुभ कामना।

वेस्टके टाइप किये हुए मूल अंग्रेजी पत्र (जी० एन० ७६०५) की फोटो-नकलसे।

१२७. पत्र: गो० कृ० देवधरको

नडियाद
फरवरी २६, १९१८

प्रिय देवधर[3],

आपके दोनो पत्र और रिपोर्ट मुझे मिल गये हैं। मेरा निश्चित विचार है कि आपने अनजानेमें सघर्षको नुकसान पहुँचाया है और अपने-आपको श्री प्रैटके हाथका खिलौना बन जाने दिया है। आपका यह कथन बिलकुल ही अपर्याप्त जानकारीपर आधारित है कि किसानोने फसलका अनुमान कम लगाया है। अमृतलाल ठक्कर,[4] जिन्होंने तफसीलमें इस प्रश्नकी जाँच की है, ऐसा नही मानते कि साढे तीन आनेका

१. गाधीजीने १० दिसम्बर, १९१७ के पत्रमें वेस्टको आजीविकाके लिए खेतीका सहारा लेनेका सुझाव दिया था, जिसके उत्तरमें उन्होंने तार द्वारा सूचित किया कि खेती करना उनके लिए असम्भव है, किन्तु साथ ही उन्होंने छपाई सम्बन्धी कुछ काम करनेकी इच्छा बताते हुए गाधीजीसे मुद्रण-साधनोंकी सहायताकी याचना की थी। उसीके उत्तरमें गाधीजीने उपर्युक्त तार दिया था।

२. मार्च ३, १९१८ के अपने पत्रमें इस तारको उद्धृत करते हुए वेस्टने गाधीजीको सूचित किया था कि उन्हें यह एक सप्ताह पूर्व मिल गया था।

३. गोपाल कृष्ण देवधर (१८७१–१९३५); पूनामें महिला समाज सेवा सगठन, सेवा-सदन और भारत सेवक समाज [सर्वेन्ट्स ऑफ इंडिया सोसाइटी] के एक प्रमुख कार्यकर्ता।

४. (१८६९–१९५१), ठक्कर बापाके नामसे प्रसिद्ध; आपने अपना सारा जीवन हरिजन और आदि-वासियोंके उत्थानमें लगा दिया था।

अनुमान किसी तरह कम है। आप जानते हैं कि सरकारी अन्दाजमे भी बादमें घटा-बढी की गई है।

और यह कैसे कहा जा सकता है कि काफी ठोस रियायतें दी गई है, जब हम जानते हैं कि अभी तक एक भी रियायत नही दी गई? प्रैटने जब कहा कि रबीकी फसल पचीस फीसदीसे कम होगी, तो माफी दी जायेगी, तब वह हमें केवल बहला रहा था। क्या आप जानते हैं कि रबीकी फसलमे कपास, तम्बाकू, तुअर और अरडा नही गिने जाते?

और आपको रिपोर्ट प्रकाशित करनेकी जरुरत ही क्या थी? जब इस सघर्षमें मै पड़ा हुआ हूँ, तो रिपोर्ट प्रकाशित करनेके समयका निर्णय करनेका काम आपको मेरे ऊपर छोड देना चाहिए था।

अन्तमें आप यह क्यो समझ लेते है कि जितना अधिकारी मजूर करे, उतना ही हमे मिल सकता है? आप यह क्यो नही मानते कि जितना पानेके हम अधिकारी है, उतना हमे मिलना ही चाहिए?

मेरे खयालसे आप जरूरतसे ज्यादा काम हाथमे ले लेते है और इससे न तो अपने साथ और न कामके साथ ही आप न्याय कर पाते है। आप बीमार है और जितना काम सभाल सकते है, उससे कही ज्यादा काम आपने ले रखा है। आपको हिम्मतके साथ कहना चाहिए था कि इस जाँचका काम मै अपने सिर नही ले सकता।

मै जानता हूँ कि आप मेरे पत्रका गलत अर्थ नही लगायेगे। मै आपको इतना स्नेह करता हूँ कि जान-बूझकर आपके प्रति अन्याय नही कर सकता। आपके प्रति अपना आदर, मै इमी तरह प्रदर्शित कर सकता हूँ कि अपने हृदयके द्वार आपके सामने खोल दूँ और उसमें जो-कुछ है, उसे आपको देखने दूँ। कोई भी मित्र इससे अधिक कुछ नही कर सकता। जो इससे कम करता है, वह उतना ही कम मित्र माना जायेगा।

आपको मेरी प्रार्थना सुननी चाहिए और अमृतलालको गुजरातके काममें लगा देना चाहिए। इस प्रकार वह 'सोसाइटी' की अधिक अच्छी सेवा कर सकेगा, क्योकि गुजरात-के काममे उसकी प्रतिभा सबसे अधिक निखरेगी। धारासभाका काम ऐसा व्यक्ति ही कर सकता है, जिसमें बुद्धि हो। किन्तु अस्पृश्योका काम तो जिसमें बुद्धिको रास्ता बताने-वाला हृदय हो, उसीसे हो सकना है। अमृतलाल इसी प्रकारके मनुष्य हैं।

हृदयसे आपका,

मो० क० गांधी

[अंग्रेजीसे]

महादेव देसाईकी हस्तलिखित डायरीसे।

सौजन्य नारायण देसाई

१२८. अहमदाबादके मिल-मजदूरोंकी हड़ताल

फरवरी २६, १९१८

पत्रिका — १[1]

तारीख २२ फरवरीसे यह तालाबन्दी [लॉक आऊट] शुरू है, और उसी दिनसे बुनाई विभागके कारीगरोंके पास कोई काम नही है। जब मिल-मालिकोने महामारीके कारण दिये जानेवाले भत्तेको बन्द करनेकी सूचना निकाली और उसके सम्बन्धमें गलत फहमियाँ खडी हुई, तो मालिकोकी ओरसे यह कहा गया था कि मजदूरो और मालिकोके आपसी झगड़ेका फैसला पच द्वारा करा लिया जाये। यह मान लिया गया था कि मजदूर भी इसमे सहमत ही होगे। आखिर, तारीख १४–२–१९१८ के दिन मिल-मालिकोने यह तय करनेके लिए कि महामारीके भत्तेके बदलेमें महँगाईका कितना भत्ता देना उचित होगा, पंच नियुक्त करनेका निश्चय किया। फलत मजदूरोकी ओरसे महात्मा गाधी, श्री शकरलाल बैंकर और श्री वल्लभभाई पटेल, और मालिकोकी ओरसे सेठ अम्बालाल साराभाई, सेठ जगाभाई दलपतभाई और सेठ चन्दुलाल पच कायम किये गये और कलक्टर साहब इस पंच-समितिके सभापति बनाये गये। इसके बाद ही किन्ही गलतफहमियोकी वजहसे कुछ मिलोमें मजदूरोने हड़ताल कर दी। यह मजदूरोकी भूल थी। मजदूर अपनी भूल सुधारनेको तैयार भी हुए। पर मालिकोने सोचा कि जब मजदूरोने पचोके फैसलेसे पहले ही हडताल करनेकी गलती की है, तो अब वे अपने पच सम्बन्धी प्रस्तावको रद कर सकते है, और उन्होने यह प्रस्ताव रद कर दिया। इसके साथ उन्होने यह भी तय किया कि मजदूरोको उनकी चढी हुई तनख्वाह चुका दी जाये, और अगर २० प्रतिशत भत्तेसे उन्हे सन्तोष न हो, तो उनको रुखसत दे दी जाये। बुनकरोको सन्तोष न हुआ इसलिए उन्होने काम छोड़ दिया, और मालिकोकी तालाबन्दी शुरू हुई। मजदूर पक्षके पचोने जब अपनी जिम्मेदारीका विचार किया, तो वे इस नतीजेपर पहुँचे कि उन्हे मजदूरोको कुछ-न-कुछ सलाह तो देनी ही चाहिए और उनको यह भी बताना चाहिए कि वे उचित रूपसे कितना इजाफा माँग सकते है। अत इस सम्बन्धमें उन्होने चर्चा चलाई, मालिको और मजदूरोके हितका विचार किया, आस-पासकी परिस्थितिकी जाँच की, और

१. मिल-मालिकों और मिल-मजदूरोंकी इस लड़ाईमें मजदूरोंका समुचित मार्ग-दर्शन करनेके लिए जो अनेक उपाय किये गये उनमें से एक इन पत्रिकाओंको निकालना भी था। "उद्देश्य यह था कि सत्यके सिद्धान्त और उसका रहस्य उनके दिलमें सदाके लिए अंकित हो जायें,' उन्हें सरल और उच्च कोटिका साहित्य मिलता रहे जिससे उनका मानसिक और बौद्धिक विकास हो और उन्नतिके इन साधनोंको वे अपने बाल-बच्चोंके लिए बपौतीके रूपमें छोड़ सकें।" पत्रिकाएँ अनसूयाबेन साराभाईके नामसे निकली थीं किन्तु जैसा महादेव देसाईने अपनी पुस्तक *एक धर्मयुद्ध* में कहा है उनके लेखक, गांधीजी थे। यह पत्रिका तालाबन्दीके पाँचवें दिन निकली थी। पत्रिकाएँ शामको आम सभामें पढ़ी जाती थीं।

यह तय किया कि ३५ फीसदी इजाफेकी माँग उचित है, और मजदूरोको इतना इजाफा माँगनेकी सलाह देनी चाहिए। मजदूरोको यह सलाह देनेसे पहले उन्होने मालिकोको अपने इस निर्णयकी सूचना दी और लिखा कि अगर उन्हे इसके विरोधमें कुछ कहना हो, तो उसपर विचार किया जायेगा। पर मालिकोने इस सम्वन्धमें अपना कोई विचार प्रकट नही किया। मजदूरोकी अपनी माँग ५० प्रतिशत की थी, उसे कम करके उन्होने ३५ प्रतिशत माँगनेका निश्चय किया।

मजदूरोंकी प्रतिज्ञा

मजदूरोने नीचे लिखा निश्चय किया है·

१. जुलाईके वेतनपर जबतक ३५ प्रतिशत इजाफा न मिलेगा, वे कामपर न जायेंगे।
२. तालाबन्दीके दिनोमें किसी भी प्रकारका दंगा-फसाद न करेंगे, मारपीटसे बचेंगे, लूटपाटसे दूर रहेंगे, मालिकोकी सम्पत्तिको नुकसान न पहुँचायेंगे, गाली-गलौचसे बचेंगे और शान्तिपूर्वक रहेंगे।

मजदूर अपनी इस प्रतिज्ञाको किसप्रकार पूर्ण कर सकते हैं, इसका विचार पत्रिकाके अगले अंकमे किया जायेगा। मजदूरोको मेरी[1] सलाह है कि यदि उन्हे कुछ कहना हो तो वे किसी भी समय मेरे बंगलेपर आकर मुझसे कह सकते हैं।

[गुजरातीसे]
एक धर्मयुद्ध

१२९. पत्र: कलक्टरको[2]

नडियाद
फरवरी २६, १९१८

[प्रिय महोदय,]

मैंने स्वय जो जाँच की उससे और मेरे साथी कार्यकर्त्ताओ द्वारा की गई जाँचसे[3] मुझे विश्वास हो गया है कि लगान-वसूली मुल्तवी रखना उचित है। फिर भी यदि हम सबके निष्कर्ष आपको स्वीकार न हो तो निवेदन है कि स्वतन्त्र वृत्तिवाले लोगोके एक ऐसे निकाय द्वारा, जिसमें सरकार और जनता दोनोके प्रतिनिधि शामिल हो, सारे मामलेकी जाँच करवा लेनेके लिए अब भी समय शेष है। देखता हूँ, कई हजार किसानोने

१. अनसूयाबेन साराभाई।

२ खेड़ाके कलक्टर श्री चैटफील्ड, जो पच-फैसलेके लिए अंतिम निर्णायक चुने गये थे।

३. फरवरी १६ को गांधीजी नड़ियाद पहुँचे। उसके बाद उन्होंने तथा उनके साथियोंने कई टोलियोंमें बँटकर बहुत-सारे गावोंमें फसलकी स्थितिकी जाँच करनेका काम शुरू किया। एक हफ्तेमें ६०० में से ४२५ गांवोंके बारेमें रिपोर्ट तैयार हो गई। गाधीजीने ३० गाँवोंमें जाँचका काम स्वय किया था। उन्होंने जिला अधिकारियोंको जो पत्र लिखा, उसका आधार इसी जाँचके निष्कर्ष थे।

जबरदस्त दवाव डाले जानेके कारण लगानकी पहली किस्त चुका दी है, और कुछने तो एक ही साथ दोनो किस्ते चुका दी है। इसके लिए बहुतोको अपने मवेशी आदि बेच देने पडे। मै साथमें ऐसे गाँवोकी एक सूची[1] भेज रहा हूँ, जहाँ फसल चार आने या उससे कम हुई है। मुझे भरोसा है कि आप यह सब देखनेके बाद लगान-वसूली मुल्तवी करनेका हुक्म जारी कर देंगे।

[अंग्रेजीसे]

सरदार वल्लभभाई पटेल, खण्ड १

१३०. पत्र: खेड़ाकी स्थितिके सम्बन्धमें[2]

[नडियाद]
फरवरी २६, १९१३

[प्रिय मित्र,]

आपका गुजरात-सभाके सम्बन्धमें लिखा पत्र मैने पढा है। खेडा जिलेके किसानोके लिए काम करना हम सबका फर्ज है। मै तो मानता हूँ कि यदि सभा यह काम नही करती तो उसे गुजरात-सभा कहलानेका कोई हक नही है।

किसानोको जो सलाह दी जाती है उसकी मुख्य जिम्मेदारी मेरे सिरपर है। किसानोका कहना है कि फसल चार आनेसे कम हुई है। सरकार यह बात स्वीकार करती है कि जिस वर्ष फसल चार आनेसे कम हो, उस वर्ष किसानोसे लगान वसूल न किया जाये। अगर सरकार किसानोकी बात न माने तो उनके पास एक ही उपाय है कि वे सरकारको स्वय लगान न देकर उसे अपना माल-असवाव वेच डालने दें। यदि किसान ऐसा नही करते तो यह बात झूठे ठहराये जानेके लिए पैसा देने-जैसी होगी।

लगान जमीनकी उत्पादन-क्षमताके अनुसार निर्धारित किया जाता है। तब स्पष्ट है कि यदि जमीनमें उपज कुछ भी नही हो तो लगान नही लिया जा सकता। सरकारने किस्तोकी व्यवस्था की है, लेकिन यह कोई कृपाका कार्य नही, बल्कि निरी आवश्यकता है।

लेकिन मुझे तो सभावना एसी दिखाई देती है कि इस सम्बन्धमें आपके और सभाके बीच मतभेद बना रहेगा। मगर मतभेद बरदाश्त करना तो सार्वजनिक कार्यकर्त्ताओके कामका एक हिस्सा है। जनताके सामने दोनो मत रखे जा सकते है, और फिर उनके बीच चुनाव करनेकी बात जनतापर रह जायगी।

१. यह उपलब्ध नहीं है।
२. नाम-पता अनुपलब्ध है।

मुझे तो यह बात बिलकुल स्वयंसिद्ध-सी लगती है कि अन्यायके खिलाफ अपनी भावना प्रकट करनेके लिए नम्रतापूर्वक लगान देनेसे इनकार करने और सरकारको उसे जबरदस्ती वसूल करने देनेमें कुछ भी गैरकानूनी नही है।

आपका,

मोहनदास

[गुजरातीसे]

महादेवभाईनी डायरी, खण्ड ४

१३१. भाषण: अहमदाबादके मिल-मजदूरोंकी सभामें[1]

साबरमती

फरवरी २६, १९१८

आज तालाबदीका पाँचवाँ रोज है। आपमें से कई मानते होंगे कि पाँच-पन्द्रह दिन दुःख सह लेनेसे सब कुछ ठीक हो जायेगा। मैं आपसे बार-बार कहता हूँ कि हम यह उम्मीद जरूर रखें कि हमारा काम कुछ ही दिनोंमें पूरा हो जायेगा, लेकिन इसके साथ ही हमारा यह दृढ निश्चय भी हो कि यदि हमारी आशा पूरी न होगी तो हम मर मिटना कबूल करेंगे, लेकिन कामपर हरगिज न जायेंगे। मजदूरोंके पास रुपये-पैसे नही है, लेकिन रुपये-पैसेसे भी अधिक कीमती धन उनके पास है, और वह है, उनके हाथ-पैर, उनकी हिम्मत, और उनकी आस्तिकता। ऐसा समय भी आ सकता है, जब आपको भूखों मरना पड़े। उस वक्तके लिए आपको यह विश्वास रखना चाहिए कि आप लोगोंको खिलाकर ही हम खायेंगे, आपको भूखों हरगिज न मरने देंगे।[2]

कई भाई कहते है कि हम ३५ प्रतिशतसे ज्यादा माँग सकते है। मैं तो कहता हूँ कि आप १०० प्रतिशत भी माँग सकते है। लेकिन यदि आप उतना माँगने लगें, तो वह अन्याय ही कहा जायेगा। मौजूदा हालतमें आपने जो-कुछ माँगा है, उसीमें सन्तोष रखिए। यदि आप इससे ज्यादा माँगेंगे, तो मुझे दुःख होगा। हमें किसीके भी सामने कोई गैरवाजिब माँग पेश नही करनी चाहिए। मेरी रायमें ३५ प्रतिशतकी माँग मुनासिब माँग है।[3]

[गुजरातीसे]

एक धर्मयुद्ध

१. हड़तालके दिनोंमें हड़ताली मिल-मजदूर प्रतिदिन शामको साबरमतीके किनारे, एक बबूलके झाड़के नीचे, इकट्ठे हो जाते थे और गांधीजी उनकी सभामें भाषण करते थे।

२. मजदूरोंके सलाहकारोंने ऐसी शपथ ली थी।

३. भाषणका शेषांश उपलब्ध नहीं है। गांधीजी मूक कार्यको ज्यादा महत्त्व देते थे इसलिए भाषणोंकी रिपोर्ट जानबूझकर समाचारपत्रोंको नहीं दी जाती थी। गांधीजीके इन भाषणों या प्रवचनोंके अंश महादेव देसाईने अपनी पुस्तक **एक धर्मयुद्ध**में दिये हैं। महादेव देसाईने अपनी डायरीमें लिखा है: उस बबूलके वृक्षके तले कितने ऐतिहासिक प्रसंग घटे इसका ज्ञान इन सभाओंमें उपस्थित लोगोंके अतिरिक्त शायद ही अन्य व्यक्तियोंको रहा हो।

१३२. प्रवचन : आश्रममें प्रातःकालीन प्रार्थनाके बाद[1]

फरवरी २७, १९१८

मैं कहता आया हूँ कि सत्याग्रह केवल सरकारके विरुद्ध ही नही किया जा सकता, वह किसी भी [अन्यायपूर्ण] स्थितिमें किसीके भी विरुद्ध किया जा सकता है। इसके उदाहरण हम आज देख रहे हैं। खेडामें सरकारके विरुद्ध सत्याग्रह चल रहा है, अहमदावाद में धनिकोके विरुद्ध सत्याग्रह चल रहा है और अस्पृश्योके प्रश्नपर शास्त्रोके विरुद्ध सत्याग्रह चल रहा है। मेरा यह खयाल है कि इन सब मामलोमें जीत हमारी ही होगी। सत्य हमारे ही पक्षमें है। खेडामें सरकारने उद्धततासे काम लिया है। उसके विरुद्ध सत्याग्रह किये बिना काम नही चल सकता था। अगर उसमें हमारी जीत नही होगी, तो इसका कारण केवल हमारी ही अपूर्णता होगी, सत्याग्रहकी अपूर्णता नही। बिहारमें सत्याग्रहकी विजय हुई। उसका कारण यह था कि वहाँ मुझे कार्यकर्त्ता बहुत ही पवित्र मिल गये थे। यहाँ मैं देखता हूँ कि इतनी पवित्रता नही है। फिर भी मुझे, जितना मैं सोचता था, उससे अधिक मिल रहा है। अहमदाबादमें जो स्थिति हो गई है, वह भी अच्छी है। कल कलक्टरने मुझसे एक बात कही थी। उसे आप सबसे कहनेका जी हो रहा है। यह बात मैंने कही अन्यत्र नही कही है। मुझे इस बातको आश्रममें कहना ठीक लगता है। कलक्टरने यह बात कहने-भरके लिए नही कही, बल्कि ये उनके हृदयके सच्चे भाव थे। उन्होंने कहा 'मिल-मालिको और मजदूरोके बीच इतने स्नेहसे हुई लडाई मैं अपनी जिन्दगीमें पहले-पहल यही देख रहा हूँ।' मुझे भी ऐसा लगता है कि दोनो पक्षोंके बीच इतना अच्छा सम्बन्ध कभी नही देखा गया। तुम देखते हो कि अम्बालाल-भाई[2] इस लडाईमें विरोधी पक्षके हैं, फिर भी कल खाना खाने आये थे और मैंने जब फिर कहा कि कल आपको भोजन यही करना है, तब वे स्थिति समझ गये। वे समझ गये कि भोजनके लिए क्यो कह रहा हूँ। और उन्होंने तुरन्त ही यह बात मजूर कर ली। इससे अधिक अच्छी बात और क्या हो सकती है? मेरा खयाल है कि हममें अवसरके अनुरूप दृढता, पवित्रता और एकाग्रता होगी, तो हम हारेंगे नही। यह आन्दोलन जो चल रहा है, उससे मैं तुम सबको परिचित नही रख सकता, इसलिए अपरिचित रहनेमें ही तुम्हारा सयम है। इतना ही है कि इस स्थितिमें जरूरत पडे तो हम काम करनेके लिए तैयार रहें। इसके लिए हमें अपने भीतर दृढता और सयम ही पैदा करने हैं।

[गुजरातीसे]

महादेवभाईनी डायरी, खण्ड ४

१. गांधीजी आश्रममें प्रार्थनाके पश्चात् प्राय. प्रवचन किया करते थे।

२ अम्बालाल साराभाई।

१३३. अहमदाबादके मिल-मजदूरोंकी हड़ताल

फरवरी २७, १९१८

पत्रिका — २

कलके अकमें हम देख चुके है कि मजदूरोकी प्रतिज्ञा क्या है। अब हमें यह देखना है कि उस प्रतिज्ञाका पालन कैसे किया जाये। हम जानते है कि मालिकोके पास करोडो रुपये है, और मजदूरोके पास कुछ भी नही। हालाँकि मजदूरोके पास पैसा नही है, तो भी उनके पास काम कर सकने लायक हाथ-पैर है। और, दुनियाका कोई हिस्सा ऐसा नही, जहाँ मजदूरोके बिना काम चल सकता हो। इसलिए अगर मजदूर समझ ले, तो उसे सहज ही पता चल जाये कि सच्ची सत्ता तो उसीकी है। मजदूरके बिना पैसा असहाय बन जाता है। अगर मजदूर इस बातको समझ जाये, तो उसे यह विश्वास भी हो जाये कि विजय उसीकी होगी। लेकिन इस तरहकी सत्ता धारण करनेवाले मजदूरमें कुछ गुण होने चाहिए। अगर उसके पास ये गुण नही है, तो वह कुछ कर नही सकता। अब हम देखें कि ये गुण क्या हो सकते है:

१. मजदूरको सत्यवादी होना चाहिए। उसके लिए झूठ बोलनेका कोई कारण ही नही रहता। लेकिन अगर वह झूठ बोलता है, तो उसे मुंहमाँगी मजदूरी नही मिल सकती। सच बोलनेवाला हमेशा अपनी बातपर कायम रहता है, और जो अपनी बात-पर कायम रहता है, वह कभी हारता नही।

२. हरएकमें हिम्मत होनी चाहिए। 'मेरी नौकरी गई, अब मेरा क्या होगा' इस तरहकी झूठी दहशतके कारण हममें से कइयोंको हमेशा गुलामी करनी पडती है।

३. हममें न्यायबुद्धि होनी चाहिए। अगर हम अपनी योग्यतासे अधिक माँगेंगे, तो हमें बहुत-थोडे मालिक मिलेंगे, और शायद न भी मिलें। [लेकिन] हमने अपनी इस लड़ाईमें जिस इजाफेकी माँग की है, वह मुनासिब ही है। इसलिए हमें विश्वास रखना चाहिए कि देरमें या जल्दी ही हमें इन्साफ मिलेगा और जरूर मिलेगा।

४. मालिकोपर हमें किसी तरहकी नाराजी न रखनी चाहिए, और न उनके लिए दिलमें दुश्मनीके कोई खयाल आने देना चाहिए। आखिर हमें नौकरी तो उन्हीके यहाँ करनी है। गलती हरएक आदमीसे होती है। हमारा अपना खयाल है कि माँगा हुआ इजाफा न देकर मिल-मालिक गलती कर रहे है। अगर हम आखिरतक सीधे-सच्चे रहे, तो मालिक अपनी भूल जरूर सुधार लेंगे। इस समय तो वे गुस्सेमें है। उनके दिलमें यह शक भी पैदा हो गया है कि अगर वे आज मजदूरोकी माँग मजूर कर लेंगे, तो फिर मजदूर उन्हे हमेशा परेशान किया करेंगे। इस शकको मिटानेके लिए हमें अपने बरतावसे मालिकोको अधिकसे-अधिक विश्वास दिलाना चाहिए। इस सम्बन्धमें हमारा पहला काम तो यह होना चाहिए कि हम उनके प्रति वैर-भाव न रखें।

५. हरएक मजदूरको यह अच्छी तरह याद रखना चाहिए कि इस जगी लडाईमें मुसीबतोका सामना तो करना ही पडेगा। लेकिन जो मुसीबतें जानबूझ कर उठाई जाती

हैं, वे अन्तमें सुख देनेवाली होती हैं। यह दुःखकी बात है कि हमें पेटभर खानेको भी नहीं मिलता। फिर भी अपने अज्ञानके कारण हम इस दुःखको सहते हैं, और जैसे-तैसे जिन्दगीके दिन बिता देते हैं। इस दुःखको मिटानेके लिए हमने एक तरीका अख्तियार किया है: हम मालिकोंके सामने अपनी यह माँग पेश कर चुके हैं कि जो इजाफा हम चाहते हैं, उसके बिना हम अपना पेट भली-भाँति पाल नहीं सकते। अगर रोज-रोजकी इस भूखको मिटानेके लिए माँगा हुआ इजाफा हमें न मिले, तो हमें जानबूझ कर आज ही भूखके दुःखको सह लेना चाहिए। आखिर मालिक भी कबतक कठोर बने रहेंगे?

६. आखिरी बात यह है कि गरीबोंका रक्षक भगवान् है। हमें समझ लेना चाहिए कि तदबीर करना हमारा काम है, फल हमें अपनी तकदीरके अनुसार मिल ही जायेगा। यह समझकर हमें भगवानपर भरोसा रखना चाहिए और जबतक हमारी दरख्वास्त मंजूर नहीं होती, हमें शान्तिपूर्वक अपनी बातपर मजबूतीके साथ डटे रहना चाहिए।

जो मजदूर इस तरहका बरताव करेंगे, उन्हें अपनी प्रतिज्ञाके पालनमें कभी कठिनाई न आयेगी।

तालाबन्दीके दिनोंमें मजदूर अपना समय किस प्रकार बितायें, इसका विचार कलकी पत्रिकामें किया जायेगा।

[गुजरातीसे]

एक धर्मयुद्ध

१३४. पत्र : शुएब कुरैशीको

फरवरी २७, १९१८

प्रिय मित्र,

मुझे अपनेपर शर्म आ रही है। मैं वहाँ पहुँच जानेको अत्यन्त उत्सुक हूँ, किन्तु घटनाओंने मेरे खिलाफ जैसे साजिश कर रखी है। हड़ताल अभी जारी ही है और परिस्थिति इतनी नाजुक है कि उसे छोड़कर कहीं भी जानेकी हिम्मत नहीं कर सकता। खेड़ाके मामलेमें भी लाखों आदमियोंके हकका सवाल है, इसलिए मुझे उसपर पूरा ध्यान देना ही पड़ेगा। मैं जानता हूँ कि अली भाइयोंके मामलेमें ढिलाई करना भी खतरनाक होगा। इसलिए यहाँके कामसे जबतक मुक्त नहीं हो जाऊँ, तबतक तो मुझे यहीं रहना है। मेरी समझमें यहाँके कामको बीचमें छोड़ दूँ, यह आप भी हरगिज नहीं चाहेंगे। क्या आप मेरी तरफसे मौलाना साहबसे माफी माँग लेंगे? वहाँ जो-कुछ हो रहा हो, उसकी मुझे जानकारी देते रहिए।

हृदयसे आपका,
मो० क० गांधी

[अंग्रेजीसे]

महादेव देसाईकी हस्तलिखित डायरीसे।
सौजन्य : नारायण देसाई

१३५. पत्र : रामदास गांधीको

फरवरी २७, १९१८

चि० रामदास,

आज मैं तुम्हारे बारेमें सोचता रहा हूँ। तुम्हारे पत्रोंमें मुझे निराशा दिखाई देती है। तुम्हें शिक्षाकी कमी महसूस होती है। तुम्हें ऐसा भी लगता है कि तुम ठीक ठिकानेपर नही हो। तुम मेरे सामने होते तो मैं तुम्हे अपनी गोदमे लेकर आश्वासन देता। तुम्हे सन्तोष नही दे पाता; अपनी इतनी कमी समझता हूँ। मेरे प्रेममें कहीं-न-कहीं कमी होनी चाहिए। मेरी सभी त्रुटियाँ अनजाने हुई होगी, यह समझकर मुझे क्षमा करना। बच्चोंका माता-पितापर बड़ा हक है। वे माता-पिताके सम्मुख सदा विनीत अवस्थामे रहते हैं। माता-पिताकी भूल उन्हे बरबाद कर देती है। हमारे शास्त्रोंने माता-पिताकी परमेश्वरसे तुलना की है। ऐसी जिम्मेदारी उठा सकनेवाले माता-पिता दुनियामें विरले ही होते हैं। माता-पिताके अत्यन्त ससारी होनेके कारण विरासतमें उनकी सासारिकता बच्चोमें आ जाती है और इस प्रकार उत्तरोत्तर स्वार्थमय शरीर उत्पन्न होते रहते हैं। तुम अपनेको अयोग्य पुत्र क्यों मानते हो? क्या तुम यह समझ सकते हो कि तुम अयोग्य होगे, तो मैं भी अयोग्य ठहरूँगा? मैं अयोग्य ठहरना नही चाहता, इसलिए तुम अयोग्य कैसे बन सकते हो? तुम धन प्राप्त करनेका प्रयत्न करते हुए भी उसके लोभसे सत्यको न छोडोगे। तुम विवाहकी इच्छा रखते हुए भी विवेकसे काम लोगे। अत. मैं तुम्हें योग्य पुत्र ही मानूँगा।

तुम मुझसे क्षमा न माँगो। मुझे तुमने असन्तोष नही दिया। मैं चाहता हूँ कि तुम अपने वहाँके प्रयोग पूरे करके मेरे पास आओ। तुम्हारे विवाहमें मैं भाग लूँगा। तुम्हे अध्ययन करना हो, तो मैं उसमें मदद दूँगा। तुम अपना शरीर लोहे-जैसा मजबूत बना लोगे, तो दूसरी चीजोंसे मैं निपट लूँगा। अभी तो हम सब बिखर गये हैं। तुम वहाँ, मणिलाल फीनिक्समें, देवा बबरखामें, बा भीतीहरवामें, हरिलाल कलकत्तेमें और मैं भटकनेमें। सम्भव है इस वियोगमें देश-सेवा होगी, इसीमे आत्माकी उन्नति होगी। कुछ भी हो, आगत कष्टोंको प्रसन्नचित्तसे भोगना ही चाहिए।

बापूके आशीर्वाद

[गुजरातीसे]

महादेवभाईनी डायरी, खण्ड ४

१३६. भाषण : अहमदाबादके मिल-मजदूरोंकी सभामें

फरवरी २७, १९१८[1]

नेक सलाह देने और हिम्मतका सबक सिखानेवाले आपको कम मिलेंगे। पस्त-हिम्मत करनेवालोंकी कमी न रहेगी। इनमें से कई आपके मित्र भी हो सकते हैं। खुदाके नामपर जितना मिल जाये, उतना ले लेनेकी सलाह देनेवाले भी आपको बहुतेरे मिलेंगे। उनकी ऐसी सलाह यों सुननेमें बहुत मीठी हो सकती है, लेकिन दरअसल उससे कड़वी कोई सलाह नहीं हो सकती। हमें परमात्माको छोड़ और किसीके सामने अपनी दीनता नहीं दिखलानी है। यह कोई जरूरी नहीं कि गरीबीके कारण हम अपनेको दीन ही समझें। भगवान्ने हाथ-पैर तो हममें से हरएकको दिये हैं। उनका उपयोग करके ही हम स्वराज्यका आनन्द उठा सकेंगे। मालिकोंके साथ अच्छी तरह रह सकनेके लिए हमें दृढ़ बननेकी जरूरत है। आज जिस हालतमें हम पड़े हुए हैं, उसे देखते हुए हमें अपने मालिकोंसे यह कहना चाहिए कि हम उनका यह दबाव बरदाश्त नहीं कर सकते। आप मेरी सलाहपर चलें या किसी औरकी सलाहपर, इतना मैं आपसे कह सकता हूँ कि इन मामलेमें तो मेरी या दूसरे किसीकी सलाह और सहायताके बिना भी आप विजयी बन सकेंगे। यों, मेरी या दूसरे लाखों आदमियोंकी मदद पाकर भी आप जीत नहीं सकते, क्योंकि आपकी जीतका आधार आपके ही ऊपर है। आपकी ईमानदारी, ईश्वरमें आपकी आस्था और श्रद्धा, तथा आपकी हिम्मत ही आपको विजयी बना सकती है। हम तो सिर्फ आपकी सहायता कर सकते हैं, आपको टेका या सहारा दे सकते हैं, लेकिन खड़ा तो खुद आप ही को होना पड़ेगा। बिना लिखे और बिना बोले जो प्रतिज्ञा आपने की है, उसपर डटे रहिए और यकीन रखिए कि जीत आपकी ही है।

इस दिनकी पत्रिकाका मर्म समझाते हुए गांधीजीने कहा :

यदि आप पहलेसे ही हार मानकर बैठ जाते, तो मुझे या अनसूया बहनको आपके पास आनेकी कोई जरूरत न रह जाती। लेकिन आपने तो लड़ लेनेका निश्चय किया। और अब यह बात सारे हिन्दुस्तानमें फैल गई है। आगे चलकर दुनिया भी सुनेगी कि अहमदाबादके मजदूरोंने ईश्वरको साक्षी रखकर इस बातकी शपथ ली है कि जबतक उनकी अमुक माँग पूरी न होगी, वे कामपर नहीं लौटेंगे। भविष्यमें आपके बाल-बच्चे इस पेड़को देखकर कहेंगे कि इसीकी छायामें बैठकर हमारे माता-पिताओंने परमात्माकी साक्षीमें कठिन प्रतिज्ञाएँ की थीं। यदि आप उन प्रतिज्ञाओंका पालन न करेंगे, तो वे बच्चे आपके बारेमें क्या सोचेंगे? आपपर आपके बाल-बच्चोंकी आशाएँ निर्भर करती हैं। मैं आपमें से हरएकको चेताता और कहता हूँ कि खबरदार! किसीके बहकाने या फुसलानेमें आकर ली हुई टेक न छोड़ना, प्रतिज्ञासे मुँह न मोड़ना, उसपर दृढ़तापूर्वक अड़े रहना। आपको भूखों मरना

१. यह भाषण तालाबन्दीके छठे दिन दिया गया था।

पडे तो भी आप साफ कह दीजिए कि परमेश्वरको साक्षी रखकर जो प्रतिज्ञा आपने की है, उससे आपको कोई डिगा नही सकता। आपकी वह टेक गांधीकी खातिर नही, खुदाकी खातिर है। आप इसपर यकीन रखिए, कायम रहिए, और लड़ लीजिये। हिन्दुस्तान देखेगा कि मजदूर मर-मिटनेको तैयार थे, कसम छोडनेको नही। आप इन पत्रिकाओको बरजबान कर लीजिये, और ली हुई अपनी प्रतिज्ञापर सोच-समझकर डटे रहिए। मगर इन्हे खाली रट लेनेसे भी कोई फायदा नही। यो तो तोता रटनके ढँगपर कइयोको 'कुरान शरीफ' और 'गीता' जबानी याद होती है, तुलसीदासकी 'रामायण' भी कइयोको कण्ठाग्र रहती है। लेकिन इतना ही काफी नही। इन्हे याद करके अगर आप इनपर अमल भी करेंगे, तो यकीन रखिये कि पैंतीसके पौने पैंतीस कोई आपको न दे सकेगा।[1]

[गुजरातीसे]

एक धर्मयुद्ध

१३७. पत्र : रावजीभाई पटेलको

[फरवरी २७, १९१८ के बाद]

भाईश्री रावजीभाई,

भाई अम्बालालकी[2] मृत्यु हमें सिखाती है कि सेवाधर्मके पालनमे हम एक क्षणकी भी ढिलाई नही कर सकते। यमराज हमें चाहे जब बुला सकते है। और यदि हमें देश-सेवाके केवल हवाई किले ही बाँधना हो, उसके लिए सक्रिय प्रयत्न न करना हो तो बहुत सम्भव है कि हमे खाली हाथ ही चले जाना पडे और हमारे सारे मनोरथ मिथ्या सिद्ध हो। भाई अम्बालाल अपने पीछे जिन लोगोको छोड गये है उन्हे मेरी ओरसे आश्वासन देना और कहना कि भाई अम्बालालका सच्चा स्मरण तो इसीमे है कि हम उनके चारित्र्यका अनुकरण करे।

बापूके आशीर्वाद

[गुजरातीसे]

जीवननां झरणां

१. इस भाषणका बाकी हिस्सा उपलब्ध नहीं है।

२. चरोतर शिक्षा समितिके सदस्य तथा उसके प्रथम मंत्री।

१३८. अहमदाबादके मिल-मजदूरोंकी हड़ताल

फरवरी २८, १९१८

पत्रिका – ३

मजदूरोकी प्रतिज्ञाके बारेमें हम लिख चुके हैं और इस बातका विचार भी कर चुके हैं कि उस प्रतिज्ञाका किस प्रकार पालन किया जाये। अब आज हम यह देखें कि मजदूर तालाबन्दीके दिनोमें अपना समय किस प्रकार बितायें। कहावत है कि बेकारके सिरपर शैतान सवार रहता है। इसलिए अहमदाबादमें दस हजार आदमियोका बेकार रहना कभी अच्छा हो ही नही सकता। जो आदमी हमेशा दिनभर काममें जुटा रहता हो वह अचानक बेकार हो जाये तो उसे बहुत अटपटा मालूम होता है। हम जो-कुछ चाहते हैं, उसे पानेके लिए आजकी चर्चाका विषय बहुत ही महत्त्वका है। समयके सदुपयोगकी चर्चा करनेसे पहले यह बता देना जरूरी है कि बेकारीके इन दिनोमें मजदूरोको क्या-क्या नही करना चाहिए :

१. जुआ खेलनेमें समय न गँवाना चाहिए।

२. दिनमें सोकर समय न खोना चाहिए।

३. मिल-मालिकको और तालाबन्दीकी ही बातें करनेमें दिन नही काटने चाहिए।

४. कइयोको चायकी दूकानोमें जाकर बैठने, वहाँ फजूलकी गपशप लडाने और गैरजरूरी चीजें खाने-पीनेकी आदत पड़ जाती है। मजदूरोको ऐसे स्थानोपर बिलकुल नही जाना चाहिए।

५. जबतक तालाबन्दी जारी है, मजदूरोको मिलोमें न जाना चाहिए।

अब हम देखें कि हमें क्या करना चाहिए :

१. बहुतेरे मजदूरोके घर और उनके आसपासकी जगह गन्दी पाई जाती है। कामके दिनोमें आदमी इन बातोकी ओर ध्यान नही दे सकता। अब चूंकि लाजिमी तौरपर छुट्टी मनानेका मौका मिला है, मजदूर अपना कुछ समय अपने घर और आँगनकी सफाई करने तथा घरोकी मरम्मत करनेमें बिता सकते हैं।

२. जो पढे-लिखे हैं, उन्हे पुस्तकें पढने और अपना ज्ञान बढानेमें समय बिताना चाहिए। वे अनपढोको पढा भी सकते हैं। इस तरह मजदूर एक-दूसरेकी मदद करना सीख सकेंगे। जिन्हे पढनेका शौक है, उनको चाहिए कि वे दादाभाई पुस्तकालय और वाचनालयमें, अथवा ऐसी दूसरी संस्थाओमें जहाँ मुफ्तमें पढनेको मिलता है, जायें और वहाँ अपना समय बितायें।

३. जिन्हें कौशल-साध्य दस्तकारियोका ज्ञान है, यानी जो दर्जीका, बढईका या नक्काशी वगैराका नफीस काम जानते हैं, वे खुद अपने लिए काम तलाश कर सकते हैं, और न मिलनेपर हमसे भी इसमें मदद ले सकते हैं।

४. जिस धन्धेसे आदमीकी अपनी जीविका चलती है, उसके सिवा भी किसी दूसरे धन्धेका थोडा-बहुत ज्ञान उसे प्राप्त कर लेना चाहिए। इसलिए मजदूर कुछ नये और आसान धन्धोको सीखनेमे भी अपना समय बिता सकते हैं, और इस काममे भी वे हमसे मदद पा सकते हैं।

भारतमे एक धन्धा करनेवाला आदमी दूसरे धन्धेको अपनानेमे हलकेपनका अनुभव करता है, कुछ धन्धे यहाँ अपने-आपमे हलके माने जाते हैं। ये दोनो विचार गलत हैं। जिन धन्धोकी आदमीको अपने जीवनके लिए जरूरत है, उन धन्धोमें नीच-ऊँचका कोई भेद होता ही नही। इसी तरह अपने जाने हुए धन्धेके सिवा दूसरा धन्धा करनेमें भी शर्मकी कोई बात नही। हम मानते हैं कि कपडा बुनने, पत्थर फोडने, लकडी काटने या चीरने अथवा खेतोमें मजदूरी वगैरा करनेके सभी धन्धे जरूरी हैं, और सम्मानके योग्य हैं। इसलिए आशा की जाती है कि मजदूर निकम्मे बैठकर वक्त गँवानेके बदले ऊपर लिखे अच्छे कामोमे लगकर अपना समय बितायेंगे।

मजदूरोंके कर्त्तव्योका विचार करनेके बाद अब यह बता देना भी जरूरी है कि मजदूर मुझसे क्या आशा रख सकते हैं। अगली पत्रिकामें हम इसीका विचार करेंगे।

[गुजरातीसे]

एक धर्मयुद्ध

१३९. पत्र : एफ० जी० प्रैटको

साबरमती
फरवरी २८, १९१८

प्रिय श्री प्रैट,

मुझसे कल[१] आपने साफ दिलसे बातें की, उससे मुझे यह पत्र लिखनेका प्रोत्साहन मिला है।

हिन्दुस्तान भरमे परिस्थिति इस प्रकार है। पुरानी व्यवस्थाके स्थानपर एक नई व्यवस्था आ रही है। नई व्यवस्थाकी स्थापना शान्तिमय मार्गसे हो सकती है या उससे पहले कुछ दुःखद अव्यवस्था भी हो सकती है। इन दोनोमें से क्या होगा, इसका दारोमदार सम्राट्के बिलकुल चोटीके प्रतिनिधियोकी अपेक्षा ज्यादातर 'सिविल सर्विस' के आप-जैसे अधिकारियोपर ही है। आपकी इच्छा भला करनेकी है, पर आप प्रेमके अधिकारसे नही, बल्कि भयके जोरपर हुकूमत करना चाहते हैं। जनता तो यही समझती है कि सिविल सर्विसके कर्मचारियोकी शक्ति ही ब्रिटिश सविधानकी शक्ति है। इस सविधानका सच्चा अर्थ आप पूर्ण रूपसे लोगोको समझा नही पाये। इसमे शायद आपका कोई दोष न हो। लेकिन परिणाम यह है कि आपकी सजा देनेकी शक्तिका लोगोको डर लगता है और भला करनेकी आपकी इच्छाको वे समझ नही पाते। जिनको 'होमरूल' वाले कहा जाता

१. स्पष्ट ही गाधीजी कमिश्नरसे २७ फरवरीको मिले थे, किन्तु इस मुलाकातका कोई विवरण उपलब्ध नहीं है।

है उनको आपकी सत्ता असह्य है। उनकी शक्ति दिन दूनी बढ़ती जा रही है। लोगोंको सिविल सर्विसकी हुकूमतका भयोत्पादक पहलू दिखानेमें उन्हें किसी तरहकी कठिनाई नहीं होती। लोग उन्हें अपना मुक्तिदाता समझकर उनका स्वागत करते हैं। मातृभूमिके प्रेम और अधिकारियोंके प्रति अपने अविश्वाससे प्रेरित होकर, वे जनतामें वैमनस्यके बीज बोते हैं। जिस तन्त्रके आप प्रतिनिधि हैं, वह इस चीजको अच्छी तरह जानता है और स्वाभाविक ही है कि इस अपमानपर उसे क्रोध आता है। इस प्रकार दोनोंके बीचका अन्तर बढ़ता जा रहा है। मैं यह माननेकी धृष्टता करता हूँ कि इस खाईको मैं पाट सकता हूँ और नई व्यवस्था आनेसे पहले होनेवाली दुःखद अव्यवस्थाको रोकनेमें सफल हो सकता हूँ। मैं चाहता हूँ कि अन्तमें परस्पर अविश्वास और जबरन लादी हुई हुकूमतके बजाय परस्पर विश्वास और प्रेमके शासनकी स्थापना हो। मैं यह चीज लोगोंको तभी बता सकता हूँ, जब उन्हें अन्यायको दूर करनेका अधिक अच्छा और ज्यादा कारगर उपाय बता सकूँ। यह तो स्पष्ट ही है कि भयके कारण उनका अन्यायपूर्ण आज्ञाओंके सामने सिर झुकाना और मनमें द्वेष-भाव बढ़ाते रहना बुरा है। वे गलत रास्ते जायें और हिंसाका आश्रय लें, यह उससे भी ज्यादा बुरा है। लोगोंके लिए अपनी नाराजगी दिखानेका गरिमापूर्ण, वास्तवमें राजभक्तिपूर्ण और उनकी भी उन्नति करनेवाला मार्ग यही है कि आपके जो हुक्म उन्हें अन्यायपूर्ण मालूम हों, उनको भंग करके वे अपनी असहमति जाहिर करें और इस आज्ञा-भंगकी जो सजा हो, उसे समझ-बूझकर सादर सहन कर लें। मेरा तो खयाल है कि हर प्रकारके अन्यायमें यही सलाह लोगोंको बिना किसी आशंकाके दी जा सकती है, और खासकर जब इससे पहले अन्याय दूर करनेके अन्य सभी उचित उपाय आजमाये जा चुके हों। मैं चाहता हूँ कि जो दृष्टिकोण मैंने पेश किया है, उसे आप समझ लें। मैंने आपको यह पत्र लिखनेकी जो धृष्टता की है, मैं जानता हूँ कि आप मुझे उसके लिए अवश्य क्षमा कर देंगे। अलबत्ता मैंने यह पत्र खेड़ाके सवालको अलग रखकर आपको लिखा है। बहुत सम्भव है कि मुझे कई ऐसे मामलोंमें जिनमें कोई मतभेद न हो आपके साथ मिलकर काम करनेका सौभाग्य प्राप्त हो। मैं समझता हूँ कि ज्यादा अच्छा यही रहेगा कि आप सभी चीजोंके बारेमें मेरे विचार जान लें।

आपका,
मो० क० गांधी

[अंग्रेजीसे]

महादेव देसाईकी हस्तलिखित डायरीसे।
सौजन्य : नारायण देसाई

१४०. भाषण : अहमदाबादके मिल-मजदूरोंकी सभामें

फरवरी २८, १९१८

पत्थर तोडनेसे जो गरमी और ताकत आती है, वह कलम पकड़नेसे नही आ सकती।[1]

[गुजरातीसे]

एक धर्मयुद्ध

१४१. अहमदाबादके मिल-मजदूरोंकी हड़ताल

मार्च १, १९१८

पत्रिका – ४

हमने यह तो देख लिया कि मजदूर अपनी प्रतिज्ञा किस तरह पालें और ताला-बन्दीके दिनोमे अपना समय किस प्रकार बितायें। अब इस पत्रिकामें यह बताना है कि हम उनकी क्या मदद करेंगे। मजदूरोको हमारी प्रतिज्ञा जाननेका अधिकार है और हमारा फर्ज है कि हम उन्हे अपनी प्रतिज्ञा बतायें।

पहले हम यह देख लें कि हमसे क्या नहीं हो सकेगा :

१. हम मजदूरोको उनके किसी गलत काममें मदद नही पहुँचायेंगे।

२ अगर मजदूर कोई गलत काम करते हैं, उचितसे अधिक माँगते हैं, या किसी भी तरहका दंगा-फसाद करते हैं, तो हमारा फर्ज हो जाता है कि हम उन्हे छोड दें, और उनको मदद पहुँचाना बन्द कर दें।

३. हम मालिकोकी बुराई कभी नही चाह सकते; हमारे हरएक कार्यमे उनके हितका विचार भी रहता ही है। मालिकोके हितकी रक्षा करके हम मजदूरोका हित साधेंगे।

अब हम क्या मजदूरोंके लिए करेंगे सो देखिए :

१. मजदूरोने जैसा सुन्दर व्यवहार आजतक किया है, वैसा ही जबतक वे कायम रखेंगे, हम बराबर उनका साथ देंगे।

२. उन्हे ३५ फीसदीकी बढोतरी दिलानेके लिए हम भरसक कोशिश करेंगे।

३. फिलहाल तो हम मालिकोसे प्रार्थना ही कर रहे हैं। आम लोगोकी सहानुभूति प्राप्त करने और लोकमतको जगानेकी कोशिश अभी हमने नही की है। लेकिन अवसर आनेपर हम सारे हिन्दुस्तानके सामने मजदूरोकी स्थिति रखनेको तैयार हैं, और हमे आशा है कि हम आम जनताकी सहानुभूति अपनी ओर आकर्षित कर सकेंगे।

१ गांधीजीने यह वाक्य ता० २८ फरवरीके भाषणमें पत्रिका—३ के अन्तिम अनुच्छेदका विवेचन करते हुए कहा था। भाषणका बाकी हिस्सा उपलब्ध नहीं है।

४ जबतक मजदूरोको उनका अधिकार प्राप्त न हो जायेगा, हम चैन नही लेंगे।

५. मजदूरोकी आर्थिक, नैतिक और शिक्षा-सम्बन्धी स्थितिको जाननेका प्रयत्न हम कर रहे हैं। हम उन्हें यह बतानेकी कोशिश करेंगे कि उनकी माली हालत कैसे सुधर सकती है; हम उनके नैतिक स्तरको उठानेकी कोशिश करेंगे, अगर वे गन्दे रहते हैं, तो हम सफाईसे रह सकनेके उपाय ढूंढेंगे और उन्हे समझायेंगे, और वे अपढ हैं, तो हम इस बातका प्रबन्ध करेंगे कि उनको ज्ञान मिले — हम उसके लिए प्रयत्न और परिश्रम करेगे।

६. इस लडाईमें जिन्हे भूखो मरनेकी नौबत आयेगी, या काम न मिल सकनेके कारण बेकार रहना पडेगा, उनको खिलाकर हम खायेंगे और ओढाकर हम ओढेंगे।

७. बीमार मजदूरोकी सार-सँभाल करेंगे; उनके लिए डॉक्टरो और वैद्योकी मदद प्राप्त करेगे।

हम अपनी जिम्मेदारीको समझकर इस काममें पडे है। हम मजदूरोकी माँगको बिल्कुल उचित समझते हैं और मानते हैं कि उसे पूरी करनेसे मालिकोका कोई नुकसान नही, बल्कि अन्तमें लाभ ही होगा। इसलिए हमने इस कामको अपने हाथमें लिया है।[1]

'अगले अंकमें हम मालिकोंकी स्थितिका विचार करेंगे।

[गुजरातीसे]

एक धर्मयुद्ध

१४२. पत्र : सर ई० ए० गेटको

साबरमती
मार्च १, १९१८

सर ई० ए० गेट[2]
लेफ्टिनेंट-गवर्नर बिहार तथा उडीसा
पटना

पिछले महीनेकी १८ तारीखका आपका कृपा-पत्र यहाँके मेरे पतेपर भेज दिया गया था।[3] मै एक-दो नाजुक-से सवालोके सिलसिलेमें गुजरातमें घूम-फिर रहा था।

१ महादेव देसाई अपनी पुस्तकमें कहते हैं कि इस पत्रिकामें कही गई हरएक बातका अक्षरशः पूरा-पूरा पालन हुआ था। देखिए एक धर्मयुद्ध, पृष्ठ ३।

२. सर एडवर्ड अल्बर्ट गेट; 'सिविल सर्विस' की अपनी सेवाके ३६ वर्षोंके दौरान विभिन्न पदोंपर और १९१५-२० के कालमें लेफ्टिनेंट-गवर्नर रहे।

३. सर एडवर्ड गेटने लिखा था :

"चम्पारन जाँच समितिकी सिफारिशोंको कार्यान्वित करनेके लिए कानून बनानेके सम्बन्धमें सर्वश्री नॉर्मन और हिल कहते हैं कि रैयतके साथ उनके कई मुकदमे चल रहे हैं जिनमें शरहबेशीकी वृद्धिको लेकर ही विवाद है। हमने मामलेके बारेमें श्री स्लाईकी राय माँगी थी। उनका कहना है कि समिति

इसीलिए उत्तर देनेमें विलम्ब हुआ। सर फ्रैंक स्लाईका कहना बिलकुल ठीक है, कानूनकी शक्लमें विधेयकके आते ही मैं मुकदमे वापस करवानेकी कोशिश करूँगा। हमने जब इस मामलेपर चर्चा की थी, तब हमने समझौतेको वैध बनानेकी बात नही सोची थी। अब चूँकि सन् १३२५[1] के बाद कटौतीकी गुंजाइश रखते हुए बढी हुई दरोको वैध बनाया जा रहा है, इसलिए बागान-मालिकोकी रक्षा पूरी तौरपर इसपर निर्भर नही करेगी कि रैयतपर मेरा कितना प्रभाव है। फिर भी मैं अदालतमें पहुँचनेसे पहले ही मुकदमे वापस करवानेके लिए हर तरहसे कोशिश करूँगा। पर हो सकता है कि रैयतके कुछ लोग अपनी बातपर अड जाये।

[अंग्रेजीसे]

सिलैक्ट डाक्यूमेंट्स ऑन महात्मा गांधीज मुवमेंट इन चम्पारन, १९१७–१८

१४३. पत्र: अम्बालाल साराभाईको

साबरमती

मार्च १, १९१८

भाईश्री,

आज सवेरे उठते ही मैं विचारमे पड गया कि हम कर क्या रहे हैं। मेरी प्रवृत्तिका परिणाम क्या होगा? आपकी प्रवृत्तिका परिणाम क्या होगा? मेरे खयालसे मेरी प्रवृत्ति सफल हो, तो आप मजदूरोकी माँग स्वीकार कर लेंगे या अगर अन्त तक खीचेंगे तो मजदूर दूसरे धन्धोमें लग जायेंगे। अगर मजदूर अपना निश्चय छोड देंगे और आपका निश्चित किया वेतन मजूर कर लेंगे तो माना जायेगा कि मेरी प्रवृत्ति निष्फल हो गई। किन्तु उपर्युक्त परिणामोसे जनताको आघात नही पहुँचेगा।

लेकिन आपकी प्रवृत्तिका परिणाम क्या होगा? आप सफल हो जायेंगे तो दबे हुए गरीब और भी अधिक दब जायेंगे, उनकी नामर्दी बढ जायेगी और यह भ्रम दृढ हो जायेगा कि रुपया सबको वशमें कर सकता है। अगर आपकी प्रवृत्तिके बावजूद मजदूरोको वृद्धि मिल जायेगी तो आप इसे अपनी असफलता मानेंगे और दूसरे लोग भी

और बागान-मालिकोंके प्रतिनिधियोंने विचाराधीन मुकदमोंके बारेमें चर्चा की थी और तब आप रैयतकी ओरसे इस बातपर सहमत हो गये थे कि ऐसे मुकदमोंका निबटारा समझौतेकी शर्तोंके अनुसार किया जाना चाहिए अर्थात रैयतको शरहबेशीके वैध या अवैध होनेका प्रश्न उठाये बिना दर्ज किया हुआ पूरा लगान फसली १३२५ तक अदा करना चाहिए। श्री स्लाईका कहना है कि इस बातमें उनको आपका समर्थन मिलनेका पूरा भरोसा है और यदि यह ठीक है तो मेरा अनुरोध है कि आप कृपया समझौता पूरा करनेके लिए रैयतसे कहें। आपने ही उनकी ओरसे समझौता किया था।" (**सिलैक्ट डॉक्यूमेन्ट्स ऑन महात्मा गांधीज मूवमेन्ट इन चम्पारन**, पृष्ठ ४९१)।

१. सम्राट् अकबर द्वारा चलाया हुआ फसली सम्वत्, ईसवी सन् १९१८ के बराबर।

आपको असफल समझेंगे। क्या आपकी पहली सफलता वांछनीय हो सकती है? क्या आप चाहेंगे कि धनका मद बढ़े? क्या आपकी यह इच्छा होगी कि मजदूर बिलकुल निःसत्व हो जायें? क्या आप मजदूरोंसे इतना द्वेष करेंगे कि उन्हें उनके हक मिलें या उनकी भी अपेक्षा उन्हें दो पैसे अधिक मिलें, तो उस स्थितिको आप सफलता न समझेंगे? क्या आप नहीं देखते कि आपकी असफलतामें ही आपकी सफलता है और आपकी सफलता आपके लिए भयावह है? रावण सफल हुआ होता तो? क्या आप नहीं देखते कि आपकी सफलतासे सारे संसारको आघात पहुँचेगा? इस प्रवृत्तिमें दुराग्रह[1] है। मेरी प्रवृत्तिमें सफलता मिले तो उसे सभी सफलता मानेंगे, किन्तु मेरी निष्फलतासे भी किसीको आघात नहीं पहुँचेगा। इतना ही सिद्ध होगा कि मजदूर आगे बढ़नेके लिए तैयार नहीं थे। ऐसी प्रवृत्तिमें सत्याग्रह है। आप गहरा सोचिए। अपने अन्तरात्माकी सूक्ष्म वाणीको सुनिए और उसके अनुसार चलिए, यह मेरी माँग है। क्या आप यही भोजन करेंगे?

हृदयसे आपका
मो० क० गांधी

[गुजरातीसे]
महादेवभाईनी डायरी, खण्ड ४

१४४. भाषण : अहमदाबादके मिल-मजदूरोंकी सभामें

मार्च १, १९१८[2]

अबतक हमने मजदूरोंकी प्रतिज्ञा और मजदूरोंके कर्त्तव्योंकी चर्चा की है। अब हमें आपको यह लिखकर देना है कि हमारी प्रतिज्ञा क्या है और हम क्या-क्या करनेवाले हैं। आज हम आपको यह बतायेंगे कि आप हमसे क्या-क्या आशाएँ रखते हैं और परमात्माको साक्षी रखकर हम आपके लिए क्या-क्या करते हैं। इस प्रतिज्ञाके आधारपर आपका काम होगा कि जब-जब आपको हम गलती करते हुए, अथवा प्रतिज्ञाके पालनमें कमजोरी दिखाते हुए दिखें, तब-तब आप हमें इन वचनोंकी याद दिलायें और उलाहना दें।[3]

[गुजरातीसे]
एक धर्मयुद्ध

१. मिल-मालिकोंने इस अवसरपर दुराग्रह किया था। महादेव देसाईने तत्कालीन स्थितिका विश्लेषण इस प्रकार किया है:

"...ऐसा लगता था कि मिल-मालिकोंने मजदूरोंकी माँग मंजूर नहीं की, इसका कारण यह नहीं था कि वे वेतनमें ३५ प्रतिशत वृद्धि नहीं दे सकते थे, बल्कि यह उनका दुराग्रह था। उन्होंने यह अयुक्त रुख इस भयसे इख्तियार किया था कि यदि मजदूर एक बार सफल हो जायेंगे तो वे सदा तंग करते रहेंगे और मजदूरोंके सलाहकार स्थायी रूपसे जम जायेंगे।

२. यह भाषण पत्रिका—४ के सिलसिलेमें दिया गया था।

३. पूरा भाषण उपलब्ध नहीं है।

१४५. अहमदाबादके मिल-मजदूरोंकी हड़ताल

मार्च २, १९१८

पत्रिका — ५

हम अपनी स्थितिका विचार कर चुके। मालिकोकी स्थितिपर विचार करना कठिन है। मजदूरोकी हलचलके दो नतीजे हो सकते हैं

१. मजदूरोको ३५ प्रतिशत इजाफा मिले।

२. मजदूरोको इजाफा पाये बिना ही कामपर जाना पडे।

इजाफा मिलनेसे मजदूरोका कल्याण होगा, और मालिकोको यश मिलेगा। अगर मजदूरोको इजाफा प्राप्त किये बिना ही कामपर जाना पडा, तो वे शौर्यहीन और गुलाम बनकर मालिकोकी शरण जायेंगे। अतएव इजाफा मिलनेसे दोनो दलोको लाभ होगा। मजदूरोके लिए उनकी हार बहुत नुकसानदेह होगी।

मालिकोकी हलचलके भी दो नतीजे हो सकते हैं।

१ मालिक मजदूरोको इजाफा दे।

२. मालिक मजदूरोको इजाफा न दें।

अगर मालिक मजदूरोको इजाफा देंगे, तो मजदूर सन्तुष्ट होंगे, उन्हे न्याय मिलेगा। मालिकोको डर है कि मजदूरोको मुँहमाँगा देनेसे वे सिरपर चढ जायेंगे। यह डर बेबुनियाद है। मुमकिन है कि मजदूर आज दब जायें, पर यह नामुमकिन नही कि वे मौका पाकर फिर सिर उठायें। यह भी मुमकिन है कि दबे हुए मजदूर मनमें दुश्मनी रखें। दुनियाका इतिहास बताता है कि जहाँ-जहाँ मजदूर दबाये गये है, वहाँ-वहाँ उन्होंने मौका पाकर मुखालिफत की है। मालिकोका खयाल है कि मजदूरोकी माँगको मजूर कर लेनेसे उनपर उनके सलाहकारोका प्रभाव बढ जायेगा। अगर सलाहकारोका कहना सही है, और वे मेहनती हैं, तो मजदूर हारे या जीते, वे अपने सलाहकारोको न छोडेंगे; और इससे भी बढकर ध्यान देने लायक बात तो यह है कि सलाहकार भी मजदूरोको कभी न छोडेंगे। जिन्होने सेवा-धर्मको स्वीकार किया है, वे तो अपने उस धर्मको प्रतिपक्षियोका विरोध होनेपर भी नही छोडेंगे। ज्यो-ज्यो वे निराश होंगे, त्यो-त्यो अधिक सेवा-परायण बनते जायेंगे। इसलिए मालिक कितनी ही कोशिश क्यो न करे, वे सलाहकारोको मजदूरोके सम्पर्कसे दूर नही रख सकेंगे। ऐसी हालतमें मजदूरोको हराकर वे क्या पायेंगे? इसका यही एक उत्तर हो सकता हैं कि मजदूरोके असन्तोषको छोड और-कुछ उनके पल्ले न पडेगा। दबे हुए मजदूरोको मालिक हमेशा शककी निगाहसे देखेंगे।

मजदूरोको माँगा हुआ इजाफा देकर मालिक उन्हे खुश कर सकेंगे। अगर मजदूर अपने फर्जमें चूकेंगे, तो मालिक हमेशा उनके सलाहकारोकी मदद पा सकेंगे, और इस

समय दोनों दलोंका जो नुकसान हो रहा है, उसे रोक सकेंगे। अगर मजदूर सन्तुष्ट हुए, तो वे हमेशा मालिकोंका आभार मानेंगे, और दोनोंमें बराबर प्रेम बढ़ेगा। इस प्रकार मजदूरोंकी सफलतामें ही मालिकोंकी भी सफलता है, और मजदूरोंकी हारमें मालिकोंकी भी हार है। इन सीधे-सच्चे न्यायके बदले मालिकोंने पश्चिमी अथवा आजकलका राक्षसी न्याय अपनाया है।

यह न्याय कैसा है, इसका विचार हम अगले अंकमें करेंगे।

[गुजरातीसे]

एक धर्मयुद्ध

१४६. अहमदाबादके मिल-मजदूरोंकी हड़ताल

[मार्च ३, १९१८][1]

पत्रिका — ६

जिस न्यायमें सहानुभूति और दयाका भाव है, वह शुद्ध न्याय है। इसे हम हिन्दुस्तानवाले पूर्वी अथवा प्राचीन न्याय कहते हैं। जिसमें सहानुभूति या दयाका भाव नही रहता, उसे हम राक्षसी, पश्चिमी अथवा आजकलका न्याय कहते हैं। दया अथवा सहानुभूतिके कारण अकसर बेटा बापके लिए और बाप बेटेके लिए बहुत-कुछ त्याग करता है, जिससे अन्तमें दोनोंको लाभ ही होता है। त्याग करनेवाला त्यागमें एक प्रकारके शुद्ध अभिमानका अनुभव करता है, और इस तरह त्यागको वह अपनी कमजोरीकी नही, बल्कि ताकतकी निशानी समझता है। हिन्दुस्तानमें एक जमाना वह भी था, जब नौकर एक ही घरमें पीढ़ियों तक काम करते थे। जिस घरमें वे काम करते थे उसके कुटुम्बी समझे जाते थे और वैसा सम्मान पाते थे। वे अपने मालिकके दुःखसे दुःखी होते और मालिक उनके सुख-दुःखमें शरीक रहते थे। जब यह सब था, तब हिन्दुस्तानका सामाजिक जीवन बहुत सरल माना जाता था, और हजारों सालतक वह इसी तरीकेपर चलकर टिका रहा। आज भी इस भावनाका नाश नहीं हुआ है। जहाँ ऐसी व्यवस्था रहती है, वहाँ किसी तीसरे आदमीका या पंचका काम शायद ही कभी पड़ता है। मालिक और नौकर अपने आपसी झगड़ोंका फैसला आपसमें मिलकर कर लेते हैं। एक-दूसरेकी जरूरतको देखकर तनख्वाहें घटाने या बढ़ानेकी कोई बात इसमें थी ही नही। नौकरोंकी कमी देखकर न तो नौकर ज्यादा तनख्वाह माँगते थे, और न नौकरोंकी बहुलता देखकर मालिक उसे घटाते थे। इस पद्धतिमें पारस्परिक सद्भाव, औचित्य, शालीनता और प्रेमकी प्रधानता थी, और यह धर्म अव्यावहारिक नही माना जाता था, बल्कि आमतौरपर सबके ऊपर इसकी सत्ता चलती थी। हमारे पास इस बातके ऐतिहासिक प्रमाण

1. पत्रिकाकी क्रमसंख्या ५ और ८ को महादेव देसाईने क्रमशः २ और ५ मार्चकी कहा है, तदनुसार संख्या ६ और ७ की पत्रिकाएँ ३ और ४ मार्चको प्रकाशित हुई होंगी।

मौजूद है कि इस शुद्ध न्यायके अनुसार चलनेवाली हमारी प्रजाने अनेक भगीरथ कार्य करके दिखाये हैं। यह हुआ पूर्वका अथवा प्राचीन न्याय।'

पश्चिममें आजकल ठीक इससे उलटा हो रहा है। कोई यह न सोचे कि वहाँके सब लोगोंको यह आजकलका न्याय पसन्द है। पश्चिममें ऐसे बहुतेरे साधु पुरुष पड़े हैं, जो प्राचीन नीतिको अपनाकर निर्दोष जीवन बिताते हैं। फिर भी पश्चिमके जीवनकी मुख्य हलचलोंमें आजकल दया-मायाको कोई स्थान नहीं है। अगर मालिक अपना सुभीता देखकर वेतनकी नीति ठहराता है, तो वह उचित मानी जाती है। नौकरकी जरूरतोंका विचार करनेकी कोई आवश्यकता ही नहीं मानी जाती। इसी तरह मजदूर भी अपनी इच्छाके अनुसार मालिकके धन्धेकी हालतका विचार किये बिना तनख्वाह माँग सकता है, और वह न्यायोचित माना जाता है। वहाँ न्याय यह है कि सब अपनी-अपनी फिकर कर ले; दूसरा कोई किसीकी फिकर करनेको बँधा हुआ नहीं है। इसी नीतिके अनुसार यूरोपमें आजकल यह लड़ाई चल रही है। दुश्मनको किसी भी तरह परास्त करनेमें मर्यादाके पालनकी कोई जरूरत नहीं समझी जाती। पुराने जमानेमें भी ऐसी लड़ाइयाँ तो हुई होंगी। लेकिन उसमें प्रजा शरीक नहीं होती थी। इष्ट है कि हम हिन्दुस्तानमें इस अघोरी न्यायको न अपनायें। जिस दिन अपने बलको समझकर, मालिकोंका विचार किये बिना, मजदूर अपनी माँग पेश करेंगे, उस दिन माना जायेगा कि उन्होंने आधुनिक राक्षसी न्यायको अपनाया है। मालिक मजदूरोंकी माँगोंपर ध्यान न देकर यही कर रहे हैं — उन्होंने अनजाने उसी राक्षसी-न्यायको अपनाया है। मजदूरोंके मुकाबिलेमें मालिकोंका संगठन चींटियोंके खिलाफ हाथियोंका दल खड़ा करनेके समान है। अगर मालिक धर्मका विचार करें, तो उन्हें मजदूरोंका विरोध करते हुए काँपना चाहिए। हमारी जानमें पहले हिन्दुस्तानमें लोगोंने ज्ञानपूर्वक इस तरहका न्याय कभी नहीं अपनाया कि मजदूरोंके भूखों मरनेको मालिक अपने लाभका अवसर समझें। न्याय वही हो सकता है, जिससे किसीका कभी कोई नुकसान न हो। हमें दृढ आशा है कि गौरवशाली गुजरातकी इस राजधानीके श्रावक अथवा वैष्णवधर्मी मालिक मजदूरोंको झुकानेमें या हठपूर्वक उन्हें कम पगार देनेमें कभी अपनी जीत न समझेंगे। हमें विश्वास है कि पश्चिमका यह बवण्डर जितनी तेजीसे उठा है, उतनी ही तेजीसे बैठ भी जायेगा। वह बैठे या न बैठे, हम अपने मजदूरोंको आज पश्चिमकी इस प्रवृत्तिका पाठ पढाना नहीं चाहते। हम तो अपने देशका पुराना न्याय, जैसा हमने उसे जाना और समझा है, पालना चाहते हैं और उनसे पलवाना चाहते हैं, और ऐसा करके उनके अधिकारोंको सिद्ध करनेमें उनकी मदद करना चाहते हैं।

इस पश्चिमी न्यायके कुछ बुरे नतीजोंके उदाहरणोंपर हम अगली पत्रिकामें विचार करेंगे।[2]

[गुजरातीसे]

एक धर्मयुद्ध

१. न्यायके विषयमें गाधीजीकी इस व्याख्याके सम्बन्धमें महादेव देसाई **एक धर्मयुद्ध**की प्रस्तावनामें लिखते हैं: "कई बरस पहले गाधीजीने **इंडियन ओपिनियन**में रस्किनकी **अन्टु दिस लास्ट** पुस्तकके आधारपर **सर्वोदय** नामक एक लेख प्रकाशित किया था। ये विचार अब समयके साथ अधिक दृढ बन चुके थे, इसलिए इन पत्रिकाओंमें ज्यादा सरल, सीधी और जोरदार भाषामें प्रकट किये गये हैं।"

२. यह और इसके बादकी पत्रिकाएँ मिल-मालिकों और मजदूर दोनोंके लिये थीं।

१४७. पत्र : मगनलाल गांधीको

अहमदाबाद
माघ वदी ५ [मार्च ३, १९१८]

चि० मगनलाल,

सन्तोक और रामदास कल यहाँ आ गये। कल राजकोटके लिए रवाना होंगे।

पूज्य खुशालभाई और नारणदासकी राय कृष्णा और परसोत्तमको भेजनेके पक्षमें नहीं है। इसलिए उन्हें भेजनेका विचार छोड़ दिया है। मुझे उनका खयाल ठीक लगा। अगर परसोत्तमको राजकोट भेजते हैं तो उसे मोरवी भी भेजना पड़ेगा। यदि कृष्णा आज राजकोट जाता है तो दूसरोंको दूसरी जगह भेजना चाहिए। अत मुझे लगा कि सब बुजुर्ग लोगोंकी राय यदि ऐसी है तो तुम्हारी इच्छा होनेपर भी न भेजना ही . [1]

गांधीजीके स्वाक्षरोंमें मूल गुजराती पत्र (सी० डब्ल्यू० ५७३३) से।

१४८. एक पत्रका अंश[2]

मार्च ३, १९१८

भाईश्री,

. . जीनेके लिए हम इतने अधिक व्यग्र रहते हैं कि मृत्युके अवसर और उसमें भी प्रियजनोंकी मृत्युके अवसर सदा भय उत्पन्न करते हैं। मुझे तो बहुत बार यही खयाल आया है कि ऐसे अवसर हमारी सच्ची परीक्षाके अवसर होते हैं। जिसे आत्माका तनिक भी भान हो, वह मृत्युका स्वरूप समझता है। वह वृथा शोक क्यों करे? ये विचार नये नहीं हैं; पर संकटके समय कोई उनका स्मरण कराये, तो उनसे सान्त्वना मिलती है। यह सान्त्वना आपको मिले, इसी उद्देश्यसे यह पत्र लिखा गया है।

[गुजरातीसे]
महादेवभाईनी डायरी, खण्ड ४

१. बाकी अंश उपलब्ध नहीं है।
२. पानेवालेका नाम अज्ञात है।

१४९. मणिलाल गांधीको लिखे पत्रका अंश

मार्च ३, १९१८

*   *   *

बिना समझे लोग मेरी पूजा करें, यह तो केवल परेशानीकी बात है। मैं जैसा हूँ, वैसा ही लोग मुझे जानें और फिर भी मेरा आदर करें, तो मैं उनका उपयोग लोक-सेवामें कर सकता हूँ। मैं अपने धार्मिक विश्वासोंको दबाकर किसी भी प्रकारका सम्मान नहीं लेना चाहता। सदाचरण करते हुए मेरा सर्वथा तिरस्कार हो, तो उसका भी मैं स्वागत करूँगा। . . .[1]

हम हजारों वस्तुओंकी इच्छा करते हैं, परन्तु उन सबको प्राप्त नहीं कर सकते। यह समझकर हमें अपना मन पूर्णतः शान्त रखना चाहिए।

[गुजरातीसे]

महादेवभाईनी डायरी, खण्ड ४

१५०. अहमदाबादके मिल-मजदूरोंकी हड़ताल

मार्च ४, १९१८

पत्रिका — ७

दक्षिण आफ्रिका एक महान् अंग्रेजी उपनिवेश है। गोरे लोग वहाँ चार सौ सालसे बसे हुए हैं। उन्हें स्वराज्यका अधिकार प्राप्त है। वहाँकी रेलवेमें बहुतेरे गोरे मजदूर काम करते हैं। इन मजदूरोंके साथ वेतनके सम्बन्धमें कुछ अन्याय हो रहा था। इसपर मज-दूरोंने केवल अपना वेतन [बढ़वाने]का विचार करनेके बजाय समूची राज्यसत्ता हथियाने-का विचार किया। यह अन्याय था, राक्षसी न्याय था। इसके परिणामस्वरूप सरकार और मजदूरोंके बीच कटुता बढ़ी और दक्षिण आफ्रिकामें चारों ओर भयका वातावरण फैल गया। उन दिनों वहाँ कोई भी अपनेको सुरक्षित न समझता था। आखिर दिन-दहाड़े दोनों दलोंके बीच मार-काट मची और कई निर्दोष मनुष्य मारे गये। सारा प्रदेश फौजी सिपाहियोंसे घिर गया। दोनों दलोंका काफी नुकसान हुआ। दोनोंका इरादा एक-दूसरेको हरानेका था। शुद्ध न्यायकी किसीको परवाह न थी। दोनों एक-दूसरेकी चर्चा बढ़ा-चढ़ा कर करते थे। आपसी सद्भावकी चिन्ता किसीको न थी।

१. यहाँ मूलमें कुछ अंश छूटा हुआ है।

जब यह सब हो रहा था, तभी हमारे मजदूर वहाँ शुद्ध न्यायका पालन कर रहे थे। जब गोरोकी यह रेल-हड़ताल हुई उस समय २०,००० भारतीय मजदूरोकी हड़ताल[1] चल रही थी। हम वहाँकी सरकारसे शुद्ध न्यायके लिए लड़ रहे थे। हमारे मजदूरोका हथियार सत्याग्रह था। उन्हें सरकारसे कोई दुश्मनी न थी, वे सरकारका बुरा नही चाहते थे, न सरकारको पदसे हटानेका कोई लोभ उनके सामने था। गोरे मजदूर उनकी इस हडतालमे लाभ उठाना चाहते थे। पर हमारे मजदूरोने साफ इनकार कर दिया। उन्होने कहा . "हमारी लडाई सत्याग्रहकी लडाई है। हम सरकारको परेशान करनेके लिए नही लड रहे हैं। इसलिए जबतक आप लडते हैं, हम अपनी लडाई मुलतवी रखेंगे।" यो कहकर हमारे मजदूरोने हडताल तोड दी।' इसे हम शुद्ध न्याय कह सकते हैं। आखिर हमारे मजदूरोकी जीत हुई, और उससे सरकारका भी नाम हुआ, क्योकि हमारी माँगोको मजूर करनेमें न्याय था। हमारे मजदूरोने हमदर्दीसे काम लिया, विरोधीके सकटका लाभ नही उठाया। लडाईके अन्तमें सरकार और प्रजाके बीच शत्रुता बढनेके बदले मित्रता बढी, प्रेम बढा और हमारे मानकी वृद्धि हुई। इस प्रकार शुद्ध न्यायके साथ लड़ी जानेवाली लडाई दोनो पक्षोके लिए लाभप्रद साबित होती है।

यदि हम इसी प्रकार न्यायपूर्वक अपनी लडाईका सचालन करेंगे, मालिकोसे शत्रुता नही रखेंगे और सदा सचाईपर कायम रहेंगे, तो न सिर्फ हम जीतेंगे, बल्कि मालिको और मजदूरोके बीच प्रेमकी वृद्धि होगी।

ऊपरके उदाहरणसे जो दूसरी चीज हमें मिलती है, वह यह है कि सत्याग्रहके लिए दोनो पक्षोका सत्याग्रही होना जरूरी नही है। यदि एक पक्ष भी सत्याग्रही बना रहे, तो अन्तमें विजय सत्याग्रहकी ही होती है। जो शुरूमें मनमें कटुता रखकर लडता है, उसकी कटुता भी, जब इस कटुताको प्रतिपक्षीमें कटुता नही मिलती, खत्म हो जाती है। जब आदमी हवामें अपनी ताकत आजमाना चाहता है, तो उसका हाथ उतर जाता है। इसी तरह कटुताका जहर तभी बढता है, जब सामनेसे भी उसे जहर मिलता है।

अतएव अब हम इस बातको भली-भाँति समझ सकते हैं कि अगर हम मजबूतीसे लडेंगे और हिम्मत न हारेंगे, तो अन्तमें जीत हमारी ही होगी।

अगली पत्रिकामें हम कुछ सत्याग्रहियोके दृष्टान्तोका विचार करेंगे।

[गुजरातीसे]

एक धर्मयुद्ध

१ देखिए खण्ड १२, पृष्ठ ३२६–२७

१५१. भाषण : अहमदाबादके मिल-मजदूरोंकी सभामे

मार्च ४, १९१८[1]

दक्षिण आफ्रिकामे यूरोपीय मजदूरोकी हडतालके कारण जिस समय आफ्रिकी सरकार सकटमें पडी हुई थी हमारे मजदूरोने उस समय उसके सकटसे लाभ नही उठाया, बल्कि उस समय अपनी लड़ाई बन्द करके सरकारकी सहायता की और दुनियामें नाम कमाया, उसी प्रकार यदि मिल-मालिकोपर कोई आकस्मिक सकट आ पडे, तो हमे उससे लाभ उठानेका या मालिकोको परेशान करनेका खयाल छोडकर उनकी मददके लिए दौड पडना चाहिए।[2]

[गुजरातीसे]

एक धर्मयुद्ध

१५२. अहमदाबादके मिल-मजदूरोंकी हड़ताल

मार्च ५, १९१८

पत्रिका — ८

इस अकमे हम ससार-प्रसिद्ध सत्याग्रहियोका वर्णन नही करेगे, बल्कि यह बतानेकी कोशिश करेगे कि हमारे-आपके जैसे आदमी भी कितना दु ख उठानेमें समर्थ हुए है। यह हमारे लिए अधिक लाभदायक होगा, और हमें अधिक दृढ बना सकेगा। हजरत इमाम हसन और हुसैन बडे वीर-वीर सत्याग्रही थे। हम उनके नामकी पूजा करते है, लेकिन उनके स्मरणसे सत्याग्रही नही बन पाते। हम सोचते है कि उनकी ताकतका हमारी ताकतसे क्या मुकाबला? ऐसा ही स्मरण करने योग्य नाम भक्त प्रह्लादका है। लेकिन हम यह सोचकर रह जाते हैं कि उनकी-सी भक्ति, वैसी दृढता, वह सत्य और शौर्य हम कहाँसे लाये? फलत हम जैसे थे, वैसे ही बने रहते हैं। इसलिए आज हम यह देखे कि हमारे-आपके जैसे आदमियोने क्या किया। हरबतसिंह[3] ऐसा ही एक सत्याग्रही था। वह ७५ वर्षका एक बूढा आदमी था। वह सात रुपये माहवारपर पांच सालकी गिरमिटपर दक्षिण आफ्रिकाके खेतोमे मजदूरी करने पहुँचा था। पत्रिकाके पिछले अकमे २०,००० भारतीयोकी जिस हडतालका जिक्र आया है, उसमें हरबतसिंह भी शरीक हुआ था। कुछ हडतालियोको जेलकी सजा हुई थी, इनमें बूढा हरबतसिंह भी था। उसके साथियोने उसे समझाया। कहा "बाबा, दु खके इस समुद्रमें पडना तुम्हारा काम नही है। तुम जेलके

१. यह भाषण तालाबन्दीके ग्यारहवें दिन दिया गया था।

२. भाषणका बाकी हिस्सा उपलब्ध नही है।

३. देखिए खण्ड १२, पृष्ठ ३१४–१६

लायक नहीं हो। अगर तुम इस लड़ाईमें शामिल न भी हुए, तो कोई तुम्हारी तरफ अँगुली नहीं उठा सकेगा।" जवाबमें हरबर्तसिंहने कहा "जब आप स्वयं अपने सम्मानके लिए इतना दुःख उठा रहे हैं, तब अकेला मैं ही बाहर रहकर क्या करूँ? मैं इस जेलखानेमें मर भी जाऊँ, तो क्या बुरा है?" और सचमुच हरबर्तसिंह उसी जेलखानेमें मरा और अमर हो गया। वह जेलके बाहर मरता तो कोई उसका नाम भी न लेता। चूँकि वह जेलके अन्दर मरा, इसलिए देशवासियोंने जेलवालोंसे उसकी लाश माँगी और सैकड़ों हिन्दुस्तानी उसकी लाशके पीछे श्मशान गये।

हरबर्तसिंहकी तरह ही ट्रान्सवालके व्यापारी अहमद मुहम्मद काछलियाका नाम भी स्मरणीय है। ईश्वरकी दयासे वे अभी जीवित हैं, और हिन्दुस्तानियोंको संगठित रखकर उनकी प्रतिष्ठाको बनाये हुए हैं। वे दक्षिण आफ्रिकामें रहते हैं। जिस लड़ाईमें हरबर्तसिंहने अपने प्राण दिये, उसीमें सेठ अहमद मुहम्मद काछलिया कई बार जेल गये। अपना सारा व्यापार उन्होंने नष्ट होने दिया। आजकल वे गरीबीसे रहते हैं, फिर भी वहाँ सब कोई उनका मान करते हैं। अनेक संकट सहकर भी वे अपनी टेकपर डटे रहे हैं।

जिस प्रकार एक बूढ़ा मजदूर और अधेड़ उम्रके एक प्रसिद्ध व्यापारी अपनी टेकके लिए जूझे और अनेक कष्टोंमें से गुजरे, उसी प्रकार सत्रह वर्षकी एक नौजवान कुमारिकाने भी सब संकट सहे। उसका नाम वलिअम्मा[1] था। वह भी इस लड़ाईमें कौमकी टेककी खातिर जेल गई थी। जेल जाते समय वह बीमार थी। उसे बुखार आता था। जेलमें बुखार बढ़ गया। जेलरने उससे जेल छोड़ देनेको कहा। वलिअम्माने जेल छोड़नेसे इनकार किया और दृढ़तासे जेलकी मीयाद पूरी की। जेलसे रिहा होनेके चौथे या पाँचवें दिन वह मर गई।

इन तीनोंका सत्याग्रह शुद्ध सत्याग्रह था। तीनोंने दुःख सहे, तीनों जेल गये और अन्त तक अपनी टेकपर कायम रहे। हमारे सामने तो ऐसा कोई संकट नहीं है। हमें अपनी प्रतिज्ञाको निबाहनेके लिए अधिकसे-अधिक जो सहन करना है, वह इतना ही है कि हम अपने मौज-शौकको कुछ कम करें और अबतक जो तनख्वाह हमें मिलती थी उसके बिना जैसे-तैसे अपना काम चलायें। यह कोई बहुत बड़ी बात नहीं है। जो काम इस जमानेमें हमारे ही भाई-बहिन कर सके हैं, वैसा ही कुछ करना हमारे लिए कठिन न होना चाहिए।

इसका कुछ अधिक विचार हम अगले अंकमें करेंगे।

[गुजरातीसे]

एक धर्मयुद्ध

१ देखिए खण्ड ९, पृष्ठ ४१।

२ देखिए खण्ड १२, पृष्ठ ४७७-७९।

१५३. भाषण: अहमदाबादके मिल-मजदूरोंकी सभामें

मार्च ५, १९१८[1]

ये तीनो[2] जेल गये और सरकारसे लडे, किन्तु इन्हे न तो तनख्वाह लेनी थी, न भत्ता। इन तीनोको कर भी नही देना पडता था। काछलिया बड़े व्यापारी थे। उन्हे कर नही देना पड़ता था। हरबतसिंह करका कानून बननेसे पहले आये थे, इसलिए करके बोझसे वे भी बरी थे। वलिअम्मा जिस जगह रहती थी, वहाँ करका यह कानून उस वक्त नक जारी नही हुआ था। फिर भी टेककी खातिर ये लोग सबके साथ लडाईमें शामिल हुए थे। आपकी लड़ाई तो स्वार्थकी है। इसलिए आपका इसपर डटे रहना अधिक आसान है। मै चाहता हूँ कि यह विचार आपको बल दे और मजबूत बनाये।

[गुजरातीसे]

एक धर्मयुद्ध

१५४. अहमदाबादके मिल-मजदूरोंकी हड़ताल

मार्च ६, १९१८

पत्रिका — ९

कल हम तीन सत्याग्रहियोके दृष्टान्तोपर विचार कर चुके है। लेकिन इसका यह मतलब नही कि उस लड़ाईमे सिर्फ तीन ही सत्याग्रही थे। २०,००० आदमी एक साथ बेकार हो गये थे, और उनकी वह बेकारी दस-बारह दिनमे दूर नही हो गई थी। यह लड़ाई पूरे सात साल तक चली, और इतने समय तक सैकड़ो आदमियोने डॉवाडोल स्थितिमे रहकर अपनी टेक निभाई। करीब तीन महीने तक २०,००० मजदूर बिना घरबार, बिना वेतनके रहे। कइयोने अपने पासकी थोडी या बहुत-सारी सम्पत्ति बेच डाली। उन्होने अपनी झोपड़ियाँ खाली कर दी, ओढने-बिछानेका सामान, चारपाई और चौपाये वगैरा बेच डाले और कूचपर निकल पडे। उनमें से सैकडोने कई दिन तक बीस-बीस मीलकी मजिले तय की और सिर्फ डेढ पाव आटेकी रोटी और ढाई तोले चीनीपर अपने दिन गुजारे। उनमे हिन्दू भी थे, और मुसलमान भी थे। बम्बईकी जुम्मा मसजिदके मुअज्जिनके फरजद भी उनमें शामिल थे। उनका नाम इमाम साहिब अब्दुल कादिर बावजीर है।[3] जिन्होने कभी मुसीबतका मुँह तक नही देखा था, उन्होने जेलकी मुसीबते सही, और जेलके अन्दर रास्तोकी सफाई करने, पत्थर तोड़ने वगैराकी मजदूरी की, और महीनो तक बहुत ही सादी

१. यह प्रवचन पत्रिका — ८ के सन्दर्भमें ही था और उसी दिन दिया गया था।

२ काछलिया, हरबतसिंह और वलिअम्मा।

३. देखिए खण्ड १०, पृष्ठ १६९

और नीरस खुराकपर रहे। आज उनके पास अपनी कहनेको एक फूटी कौडी भी नही है। सूरत जिलेके दादामियाँ काज़ी भी ऐसे ही लोगोंमें थे। सत्रह साल से कम उम्रके नारायण स्वामी[1] और नागप्पन[2] नामक दो मद्रासी बालकोने इसी लडाईमें अपने प्राण होमे। उन्होने धूप सहन की, लेकिन पीछे न हटे।

हमें याद रखना चाहिए कि जिन स्त्रियोंने कभी मजदूरी नही की थी, वे इस लडाईमें फेरीवाली बनकर घूमी और जेलमें उन्होंने धोबिनका काम किया।

इन उदाहरणोका विचार करते हुए ऐसा कौन मजदूर हममें होगा, जो अपनी टेकको निबाहनेके लिए मामूली तकलीफें उठानेको तैयार न हो?

हम देखते हैं कि मालिकोने जो पर्चे निकाले है, उनमें गुस्सेमे आकर कुछ ऐसी बातें लिखी है, जो अशोभनीय हैं, कुछ बातोको जानमें या अनजानमें बढाकर लिखा है, और कुछको तोड-मरोडकर लिखा गया है। हम गुस्सेका जवाब गुस्सेसे तो दे ही नहीं सकते। उनमें दी गई गलत बातोको सुधारना भी ठीक नही मालूम होता। उनके सम्बन्धमें सिर्फ यह कहना ही काफी होगा कि न तो हम उनमें दी गई बातोके चक्करमें पड़ें, और न झल्लायें। मजदूरोके सलाहकारोके खिलाफ जो शिकायतें की गई है, वे अगर सच होगी, तो यहाँ उनका जवाब देनेमे वे झूठ साबित न हो सकेगी। हम जानते है कि वे अनुचित हैं। यहाँ जवाब देकर उनको अनुचित सिद्ध करनेकी अपेक्षा हम यह ठीक समझते है कि हमारा भावी व्यवहार इसको सिद्ध करे।

अगली पत्रिकामें इस सवालपर कुछ-और विचार करेंगे।

[गुजरातीसे]

एक धर्मयुद्ध

१५५. पत्र: मिली ग्रॅहम पोलकको

साबरमती
मार्च ६, १९१८

प्रिय मिली[3],

मैं यहाँ खेडा-संघर्ष और एक बडी हडताल चला रहा हूँ। इस प्रकार अब मेरा सत्याग्रह जीवनके सभी क्षेत्रोंमें खुलकर खेलने लगा है। इन दो संघर्षोंके कारण मैं अहमदाबादमें रुका पडा हूँ। इनसे सम्बन्धित कुछ कागजात मैं हेनरीको सीधे भेज रहा हूँ। उनके जीवनकी प्रगतिको मैं ध्यानसे देखता रहा हूँ। प्रगतिकी दिशामे हेनरी चाहे जितने बढें, मुझे आश्चर्य नही होगा। अगर वे थोडे भी ढीले पडे तो मुझे अफसोस जरूर होगा। सर विलियम वेडरबर्नके[4] उठ जानेसे उन्हे कमी तो महसूस होगी, किन्तु वे अपने समयसे

१ व २. देखिए खण्ड १२, पृष्ठ ४३६, ४३८, ४६६, ४७८।

३. एच० एस० एल० पोलककी पत्नी।

४. बम्बई सिविल सर्विसके सदस्य, अवकाश प्राप्त करनेपर संसद-सदस्य; भारतीय राष्ट्रीय कांग्रेसकी ब्रिटिश समितिके अध्यक्ष, १८९३; कांग्रेसके अध्यक्ष १९१०।

पहले इस दुनियासे विदा नही हुए। तुम अम्बालालभाईको पत्र लिखती हो? हड़तालके सबसे जबरदस्त विरोधी वे ही है।

[अंग्रेजीसे]

महादेव देसाईकी हस्तलिखित डायरीसे।

सौजन्य नारायण देसाई

१५६. पत्र : जी० के० देवधरको[1]

[अहमदाबाद]
बुधवार, मार्च ६, १९१८

[प्रियश्री देवधर,]

आप जरूर यहाँ आयें। हम अच्छी तरह चर्चा करेंगे और फिर जरूरी हुआ तो यह मान लेंगे कि हमारे बीच मतभेद है। मै प्रैट और घोषाल दोनोके निकट सम्पर्कमें आया हूँ और मेरा खयाल है कि मैं दोनोको समझता हूँ। मेरा खयाल है कि आप हमें आधा सहयोग ही देंगे तो भी हमें उतनेसे सन्तोष करना पड़ेगा। जो आदमी अपने जीवनमें आधे समय बीमार रहे, वह आधा ही उपयोगी होता है। ठीक है या नही? तन्दुरुस्ती अच्छी बना लेनेके लिए एक चीज जरूरी है। किन्तु आप वह करते कहाँ हैं।

अत्यन्त हार्दिकतासे,
मो० क० गांधी

[अंग्रेजीसे]

महादेव देसाईकी हस्तलिखित डायरीसे।

सौजन्य : नारायण देसाई

१ देवधरने गांधीजीके २६ फरवरी, १९१८ के पत्रके उत्तरमें अपने बारेमें गांधीजी द्वारा कही गई बातोंको स्वीकार नही किया था और अपने स्वास्थ्यके बारेमें शिकायत की थी। गांधीजीने यह उसीके उत्तरमें लिखा था।

१५७. मथुरादास त्रिकमजीको लिखे पत्रका अंश

मार्च ६, १९१८

वह[1] तुम्हे उलाहनेके रूपमें नही लिखा गया था। यदि विनोदमें उलाहना भी आ गया हो तो वह भाई महादेवका ही था। उसमें मेरा तो कोई हाथ नही है। तुम्हारे कामसे मुझे सन्तोष ही हुआ है। असन्तोष तो नजर ही नही आया। तुमसे तो अभी मुझे बहुत-सा काम लेना है।

[गुजरातीसे]

बापूनी प्रसादी

१५८. अहमदाबादके मिल-मजदूरोंकी हड़ताल

मार्च ७, १९१८[2]

पत्रिका — १०

अपनी इस स्थितिमें ऊपरके सवालका विचार करना बहुत जरूरी है। तालाबन्दीको अभी करीब पन्द्रह दिन हुए हैं, इतनेमें ही कुछ लोग कहने लगे हैं कि उनके पास खानेको नही है, कुछ कहते हैं कि वे मकानका किराया भी नही चुका सकते। बहुतेरे मजदूरोके घरोकी हालत बहुत खराब पाई गई है। उनमें हवा और उजालेका अभाव रहता है। घर पुराने हो गये हैं। आसपास बहुत गन्दगी है। मजदूर साफ कपड़े तक नही पहन पाते। कुछ तो धोबीका खर्च न उठा सकनेके कारण गन्दे कपड़े पहनते हैं, और कुछ कहते हैं कि वे साबुनका खर्च बरदाश्त नही कर सकते। मजदूरोके बालक मारे-मारे फिरते हैं। उन्हे अनपढ़ रहना पड़ता है। और कुछ मजदूर तो अपने सुकुमार बालकोको भी कमाईके कामोंमें लगा देते हैं। यह घोर कंगाली सचमुच शोकजनक है। अकेले ३५ प्रतिशतकी बढोतरी इसका कोई इलाज नही। अगर दूसरे उपाय न किये जायें तो सम्भव है कि तनख्वाह दुगनी हो जानेपर भी, कंगाली जैसीकी-तैसी बनी रहे। इस गरीबीके अनेक कारण हैं। आज हम उनमें से कुछका विचार करेंगे। मजदूरोको पूछनेसे पता चलता है कि जब उनका हाथ तंग होता है, वे फी रुपया एक आनेसे लेकर चार आने तक का ब्याज हर महीने देते हैं। यह एक थर्रा देनेवाली बात है। जो आदमी एक बार भी इस तरहका ब्याज देना कबूल करता है, उसका इसके चंगुलसे छूटना बहुत मुश्किल है। कैसे, सो देखिए। सोलह रुपयोपर फी रुपया एक आनेके हिसाबसे ब्याजके सोलह आने हुए। इतना ब्याज देनेवाला मूलधनके बराबर ब्याज एक वर्ष और चार महीनेमें दे चुकता है। यह ७५ प्रतिशत ब्याज हुआ। बारहसे सोलह प्रतिशत ब्याज देना भी मुश्किल

१ सम्भवतः वह पत्र जो गांधीजीने उन्हें १४ जनवरीको लिखा था। देखिए पृष्ठ १३५।

२ देखिए पत्रिका — ९ का अन्तिम वाक्य।

माना जाता है, तब ७५ प्रतिशत देनेवाला कैसे टिक सकता है? फिर रुपयेपर चार आनेका ब्याज देनेवालेकी तो बात ही क्या? ऐसे आदमीको सोलह रुपयेपर महीनेमें चार रुपये देने पड़ते हैं, और चार महीनेमें तो मूलधनके ही बराबर रकम दे देनी पड़ती है। यह ३०० प्रतिशत ब्याज हुआ। ऐसे लोग हमेशा कर्जमें डूबे रहते हैं; वे उससे कभी उबर नहीं सकते। ब्याजका यह भार पैगम्बर मुहम्मद साहबने बुरी तरह महसूस किया था, यही वजह है कि कुरान-शरीफमें हमें सूदके बारेमें सख्त आयतें पढ़नेको मिलती हैं। मालूम होता है कि उन्हीं कारणोंसे हिन्दू शास्त्रोंमें 'दामदुप्पट'[1] के नियमको स्थान मिला होगा। अगर इस लड़ाईके सिलसिलेमें हिन्दू और मुसलमान सभी मजदूर इतनी ऊँची दरका ब्याज न देनेकी प्रतिज्ञा कर ले, तो उनके सिरका बहुत बड़ा बोझ उतर जाये। बारह फीसदीसे ज्यादा ब्याजपर रकम किसीको नहीं लेनी चाहिए। कोई पूछेगा कि बात तो ठीक है, लेकिन जो रकम ब्याजपर ली जा चुकी है, वह कैसे लौटाई जाये? वह तो अब जीवनके साथ जुड़ी हुई चीज है। इसका सबसे अच्छा इलाज तो यही है कि मजदूरोंके बीच ऐसी समितियाँ खड़ी की जायें, जिनसे उन्हें आपसमें पैसेकी भी मदद मिल सके। कुछ मजदूरोंकी स्थिति ऐसी भी है कि वे चाहें तो ब्याजके बोझ तले दबे हुए अपने भाइयोंको उससे छुड़ा सकते हैं। बाहरवाले इसमें ज्यादा दखल नहीं दे सकते। जिसे हमपर पूरा विश्वास है, वही हमारी मदद कर सकता है। कैसे भी क्यों न हो, एक बार साहसके साथ मजदूरोंको इस महादुःखसे छूटना चाहिए। ब्याजकी ये भारी-भारी दरें गरीबीका एक बहुत बड़ा कारण हैं। दूसरे कारण शायद इतने बड़े न हों। उनका विचार आगे करेंगे।

[गुजरातीसे]

एक धर्मयुद्ध

१५९. पत्र : मनसुखलाल मेहताको

मार्च ७, १९१८

श्री मनसुखलाल,

तुम्हारी आलोचनासे मुझे दुःख नहीं होता। काठियावाड़का प्रश्न मुझे तुच्छ नहीं लगता। वह मुझे तो इतना बड़ा लगता है कि अभी वह मेरी शक्तिके बाहर है। मैंने उसपर विचार न किया हो, ऐसी बात भी नहीं है। मैंने इस प्रश्नको विचारपूर्वक ही छोड़ा है। इसमें मेरी कमजोरी हो सकती है। ऐसा हो, तो मुझे बल देना चाहिए। लेकिन तुम्हारे बल देनेसे वह मुझमें आ जायेगा, ऐसा नहीं है। जो भीतरकी आग चाहिए, सो नहीं है।

[गुजरातीसे]

महादेवभाईनी डायरी, खण्ड ४

१. ब्याज मूलधनके दुगनेसे कभी ज्यादा न हो—यह नियम।

१६०. पत्र : प्राणजीवन मेहताको

मार्च ७, १९१८

भाई प्राणजीवन,

खेड़ा जिलेमें परिणाम तो चाहे जो आये, पर अधिकारी-वर्ग और प्रजा-वर्गको भारी शिक्षण मिल रहा है। लोगोंमें असीम जागृति हुई है। करबन्दीकी बात कहना पहले राजद्रोह माना जाता था, लेकिन अब लोग निडर होकर उसकी चर्चा करने लगे हैं। शिक्षित-वर्गके जो लोग स्वयंसेवक बने हैं, उन्हें अलभ्य लाभ हुआ है। जिन्होंने कभी गाँव नहीं देखा था, उन्हें लगभग ६०० गाँव देखनेका अवसर मिला। अभी खेड़ा जिलेमें काम पूरा नहीं हुआ। इसी तरह मजदूरों और मालिकोंका मामला चल रहा है। भारतमें जीवनके हरएक विभागमें मेरा प्रवेश हो रहा है। दस हजार मजदूर शान्तिसे रहे और उनमें एक रुपया भी खर्च नहीं करना पड़ा, यह कोई साधारण बात नहीं है, फिर भी यह नहीं है। लोग समझ गये हैं कि आत्मबलके बराबर दूसरा कोई बल नहीं। दोनों जगह इन दो वाक्योंपर जीत निर्भर है "तुम हमारे बल-बूतेपर नहीं, बल्कि अपने ही बल-बूतेपर जीतोगे" और "ज्ञानपूर्वक दुःख उठाये बिना नहीं जीतोगे।"

*   *   *

तुम्हारा व्यवसायमें[1] ज्यादा समय देना अच्छा है या बुरा, यह केवल हेतुपर निर्भर है। जीवनकी कोई सीमा नहीं है। अच्छा काम करनेके लिए रुपया कमायें, परन्तु कमाते-कमाते ही मर जायें तो पछतावा रह जाता है। किन्तु पैसा बढ़ाना ही ध्येय हो और पैसेकी वृद्धि करनेमें ही अन्त्येष्टिकी कल्पना की हो या व्यापारिक उन्नतिके उद्देश्यसे व्यापारको अधिक फैलाना ही कर्तव्य मान लिया हो, तो व्यापार बढ़ाना ही एकमात्र मार्ग है।

[गुजरातीसे]

महादेवभाईनी डायरी, खण्ड ४

१ डॉ० मेहताका विचार जहाजी व्यवसायमें लगनेका था।

१६१. पत्र : एच० एस० एल० पोलकको

साबरमती

मार्च ८, १९१८

प्रिय हेनरी,

मैं तुमको पत्र लिखनेमे अधिकसे-अधिक तत्पर रहा हूँ। इसलिए मेरी समझमें तो मेरे पत्र कहीं और पहुँच गये होंगे। पहला पत्र मिलनेके तुरन्त बाद मुझे तुम्हारा दूसरा पत्र मिला। मैंने मिलीको लिखकर तुम्हारे पहले पत्रका उत्तर दे दिया है।

तुम अब 'इंडिया'का सम्पादन कर रहे हो। आशा है कि तुम मुझे उसकी प्रतियाँ नियमित रूपसे भेजते रहोगे। मैंने 'हिबर्ट्स जरनल' पढ लिया है। मलेरियाने मेरा पीछा छोड दिया है और अब मै बहुत अच्छा हूँ।

हसन इमाम तुमको कुछ भी नही भेज रहे हैं, मैं उनसे इस बारेमें बात करूँगा।

मै श्री देसाईसे[1] कह रहा हूँ कि वे तुमको मेरी गतिविधियोंके बारेमें सूचित करते रहें। उन्होने मेरे कामके लिए अपनेको समर्पित कर दिया है। वे एक बड़े सुयोग्य सहायक है, और उनकी महात्त्वाकांक्षा तुम्हारे स्थानकी पूर्ति करना है। है तो टेढी खीर, लेकिन वे पूरा प्रयत्न कर रहे हैं।

सस्नेह,

तुम्हारा,

भाई

गांधीजीके स्वाक्षरोंमें मूल अंग्रेजी पत्र (जी० एन० ३७९०) की फोटो-नकलसे।

१६२. पत्र : जमनालाल बजाजको

साबरमती

महा कृष्ण १३ [मार्च १०, १९१८]

भाई जमनालालजी[2],

आपका खतका उत्तर देनेमें देरी हुई है। मै यहाँ दो बडे कार्यमें गीरफ्तार हो गया हुं। मुझे क्षमा कीजीएगा। पुस्तकालयके लीये मेरा नाम रखना उचित हो तो वैसा कीजीये।

मोहनदास गांधीका वन्देमातरम्

गांधीजीके स्वाक्षरोंमें मूल हिन्दी पत्र (जी० एन० २८३६)की फोटो-नकलसे।

१. महादेव देसाई।

२. जमनालाल बजाज (१८८९-१९४२); प्रसिद्ध गांधीवादी उद्योगपति जिन्होंने गांधीजीकी रचनात्मक योजनाओंमें भरपूर सहयोग दिया था। गांधीजीके निकटतम साथियों और सलाहकारोंमें से एक।

१६३. अहमदाबादके मिल-मजदूरोंकी हड़ताल

माच ११, १९१८

पत्रिका — ११

ज्यो-ज्यों दिन बीतते जाते हैं, मजदूरोंको गुमराह करनेवाली पत्रिकाएँ भी निकलती जाती हैं। यह भी सुना गया है कि मगलवारको तालाबन्दी खत्म होगी, और जो मजदूर कामपर जायेंगे, उन्हें ले लिया जायेगा। इसके साथ यह भी सुननेमें आया है कि पाँच या पाँचसे अधिक मजदूरोंको अपने साथ लानेवाले मजदूरोंको कुछ इनाम भी दिया जायेगा। इन दोनों हलचलोंके खिलाफ हमें कुछ करना नहीं है। दूसरे आदमियोंको काम देकर मजदूरोंको फिरसे मिलमें बुलानेका अधिकार मालिकोंको है। लेकिन मजदूरोंका फर्ज क्या है? मजदूरोंने कहा है कि २० प्रतिशत इजाफा उनके लिए काफी नहीं है। उन्होंने मालिकोंको इसकी सूचना भी दी है। ३५ प्रतिशतसे कम इजाफा न लेनेकी प्रतिज्ञा भी वे कर चुके हैं। ऐसी हालतमें कोई मजदूर अपनी टेक, अपना नाम और अपनी मर्दानगीको छोड़े बिना तबतक वापस कामपर नहीं जा सकता, जबतक उसे ३५ प्रतिशत इजाफा न मिले। लेकिन मुमकिन है कि हरएक मजदूरकी यह टेक न हो। प्रत्येक मजदूरने ऐसी प्रतिज्ञा न भी की हो। कुछ मजदूर गुजरातके बाहरके भी हैं। मुमकिन है कि वे हमारी शामकी सभामें न आते हों। अगर वे भी २० प्रतिशत इजाफा लेकर कामपर जाते हैं, तो हम इसे बुरा मानेंगे। किन्तु हमारा फर्ज सिर्फ इतना ही है कि हम ऐसे अज्ञानी मजदूरोंका पता लगाकर उन्हें सच्ची हालत समझा दें। हममें से हरएकको याद रखना चाहिए कि हमारी ओरसे इन लोगोंपर भी किसी प्रकारका दबाव नहीं पड़ना चाहिए।

मगलवारको यानी कल[1] सुबह ७।। बजे हम अपने रोजके मुकामपर मिलेंगे। मालिकोंकी ओरसे मिलें चलानेकी जो लालच दी जा रही है, उसमें फँसनेसे बचनेका अच्छेसे-अच्छा रास्ता यही है कि हरएक मजदूर रोज सुबह ७।। बजे सभाके मुकामपर खुद हाजिर रहे, और जो लोग अबतक सभामें नहीं आये हैं, ऐसे अज्ञात और परदेशी मजदूरोंका पता लगाकर उन्हें सभामें आनेको कहे और सभामें लाये। लालचके इन दिनोंमें सबके दिलमें तरह-तरहके विचार उठेंगे। कामकाजी आदमीके लिए बेकार रहना बहुत दुःखदायक होता है। ऐसे सब लोगोंको सभामें आनेसे कुछ धैर्य मिलेगा। जिन्हें अपनी शक्तिका ज्ञान है, उनके लिए बेकारीका कोई सवाल नहीं रहता। दरअसल मजदूर इतना अधिक स्वतन्त्र है कि अगर उसे अपनी दशाका ठीक-ठीक भान हो जाये, तो नौकरीके जानेसे यह जरा भी न घबराये। धनवानके धनका अन्त हो सकता है, वह चुराया जा सकता है, बुरे कामोंमें खर्च होनेपर देखते-देखते नष्ट हो सकता है, और कभी अन्दाजकी भूलके कारण धनवानको अपना दिवाला भी निकालना पड़ता है। लेकिन

१. अर्थात् १२ मार्चको।

मजदूरका धन अखूट है, उसे कोई चुरा नही सकता, और उसपर मनचाहा ब्याज हमेशा मिला करता है। उसके हाथ-पैर, मजदूरी करनेकी उसकी शक्ति, उसकी एक अखूट पूँजी है। मेहनतपर जो मेहनताना उसे मिलता है, वही उसका ब्याज है। एक सीधा नियम है कि अधिक शक्तिका उपयोग करनेवाला मजदूर आसानीसे अधिक ब्याज कमा सकता है। हाँ जो आलसी है, उसे जरूर भूखो मरना पडता है। उसे निराशा सहनी पड सकती है। उद्योगीको एक क्षणकी भी चिन्ता करनेका कोई कारण नही रहता। मगलवारको सुबह सब ठीक समयपर सभामें आइये। सभामें आनेसे आपको अपनी इस स्वतत्रताकी कुछ अधिक प्रतीति हो सकेगी।

[गुजरातीसे]

एक धर्मयुद्ध

१६४. पत्र : जीवनलाल देसाईको[1]

[अहमदाबाद
मार्च १२, १९१८ से पहले]

प्रिय मित्र,

मुझे समझाने-बुझानेकी आपको जरूरत ही क्यो पडी?[2] आपको ऐसा सन्देह भी क्यो हुआ कि आप जो कहे उसे यदि मैं वास्तवमे कर सकता हूँ तो भी नही करूँगा। किसी दुराग्रहपर अडकर तो मैं अपना काम नही कर सकता। ससारके और लोग मुझे गलत समझ सकते हैं, परन्तु आप तो नही। मेरे हृदयमें अत्यधिक सहानुभूति है। मेरे लिए यह तालाबन्दी कोई छोटी-मोटी चीज नही। मुझसे जितना-कुछ बन सकता है, मैं कर रहा हूँ। मेरी एक ही इच्छा यह है कि इसका शीघ्रसे-शीघ्र कोई हल निकल आये — इसीके लिए मैं प्रयत्नशील हूँ। पर मेरे मिल-मालिक मित्र गत्यावरोधको और लम्बा खीच रहे है। मुझको समझाने-बुझानेसे कोई लाभ नही — ऐसा मानकर आप मिल-मालिकोको समझाने-बुझानेकी कोशिश क्यो नही करते? मजदूरोके अपमानित होनेसे किसको खुशी होगी? आप इस बातसे निश्चिन्त रहे। शिक्षित और धनिक-वर्गोमें कोई कटुता नही रह जायेगी। धनिकोसे लडाई ठाननेका हमारा कोई मशा नही।

[गुजरातीसे]

एक धर्मयुद्ध

१. बैरिस्टर तथा अहमदाबादके सार्वजनिक कार्यकर्त्ता।

२. परिस्थितिके एक बड़े संकटापन्न दौरमें, जबकि मिल-मजदूर अपने संघर्षके कष्टोंको काफी अधिक महसूस करने लगे थे, कुछ लोग धीरज हाथसे खोकर ऐसी सलाहें भी देने लगे थे कि मजदूरोंको समझा-बुझाकर वेतनमें १५ या २० प्रतिशत वृद्धि स्वीकार करने और समझौता कर लेनेपर राजी करना चाहिए। यह पत्र, और इसके बादका पत्र १२ मार्चको तालाबन्दी समाप्त होनेसे पहले लिखे गये थे।

१६५. पत्र : मंगलदास पारेखको[1]

[अहमदाबाद
मार्च १२, १९१८ के पूर्व]

कई मित्र मेरे पास आये और उन्होंने मुझसे आग्रह किया कि मजदूरों और मिल-मालिकोंके बीच झगड़ा समाप्त करानेके लिए मुझे कुछ-न-कुछ करना चाहिए। यदि मेरे वशमें होता तो मैं अपनी जानकी बाजी लगाकर भी झगड़ा बन्द करा देता। परन्तु वह सम्भव नहीं। उसे बन्द कराना तो मालिकोंके हाथमें है। मजदूरोंने ३५ प्रतिशत वृद्धिकी माँग की है, केवल इसीलिए उतना न देना एक प्रतिष्ठाका प्रश्न क्यों बना लिया जाये? यह बात बिलकुल तय क्यों मान ली जाती है कि मैं जो भी चाहूँ उसे स्वीकार करनेके लिए मजदूरोंको राजी कर सकता हूँ? मेरा दावा है कि मैंने जो तरीके अपनाये हैं उनके कारण ही मजदूर मेरी बात मानते हैं। क्या अब मैं दूसरे ऐसे तरीके अपनाऊँ कि जो उनको अपनी प्रतिज्ञा भंग करनेपर विवश कर दें? यदि मैं ऐसा करूँगा तो वे मेरा सिर धड़से अलग क्यों न कर देंगे? मैंने सुना है कि मिलोंके मालिक मुझपर दोषारोपण करते हैं। मुझे उसकी चिन्ता नहीं। एक दिन आयेगा जब वे खुद ही स्वीकार करेंगे कि मैं गलतीपर नहीं था। मैं किसीके भी प्रति हृदयमें कटुता नहीं रखूँगा, इसलिए उनके और मेरे बीच किसी भी प्रकारकी कटुता की गुंजाइश नहीं। कटुताके भावको भी जब-तब उकसाते रहना पड़ता है, परन्तु मैं वैसा नहीं करूँगा। पर आप इसमें हाथ क्यों नहीं बँटाते? इस इतने बड़े संघर्षको अलगसे केवल खड़े-खड़े देखना आपको शोभा नहीं देता।

[गुजरातीसे]

एक धर्मयुद्ध

१६६. अहमदाबादके मिल-मजदूरोंकी हड़ताल

[मार्च १२, १९१८][2]

पत्रिका — १२

आजसे नया अध्याय शुरू होता है। मालिकोंने तालाबन्दी खत्म करनेका निश्चय किया है और जो २० प्रतिशत इजाफा लेकर कामपर जानेको तैयार हैं, उन्हें लेनेकी इच्छा प्रकट की है। इसलिए आजसे मालिकोंके तालाबन्दीकी जगह मजदूरोंकी हड़ताल शुरू होती है। मालिकोंके इस निश्चयकी आम सूचना आप सबने देखी है। उसमें वे

१. अहमदाबादके उद्योगपति; आपने अहमदाबादमें आश्रमकी स्थापनाके समय गांधीजीकी आर्थिक सहायता की थी।

२. इस दिन तालाबन्दी समाप्त कर दी गई थी।

लिखते हैं कि बहुतसे मजदूर कामपर आनेको तैयार हैं। मगर तालाबन्दीके कारण वे कामपर नही आ सके थे। मजदूरोकी रोज-रोज होनेवाली सभाओ और उनकी प्रतिज्ञाके साथ मालिकोको मिली हुई यह खबर मेल नही खाती। या तो मालिकोके पास पहुँची हुई खबर सच है, या यह सच है कि मजदूर रोज-रोज सभाओमें हाजिर होते हैं, और वे अपनी प्रतिज्ञासे बँधे हुए हैं। प्रतिज्ञा करनेसे पहले मजदूरोने आगा-पीछा सब सोच लिया है, अतएव अब उन्हें कितना ही लालच क्यो न दिया जाये, और कैसी ही मुसीबतें क्यो न उठानी पड़ें, जबतक ३५ प्रतिशत इजाफा नहीं मिलता, वे कामपर नही लौट सकते। इसमें उनका ईमान है। अगर वचनको लाखोके धनके साथ तोला जाये तो उसमे वचनका पलडा ही भारी रहेगा। हमें विश्वास है कि मजदूर इस बातको कभी नही भूलेंगे। अपने वचनपर डटे रहनेके सिवा मजदूरोके लिए उन्नतिका दूसरा कोई उपाय है ही नहीं। और, हम तो मानते हैं कि अगर मिल-मालिक समझें तो उनकी उन्नति भी मजदूरोके प्रतिज्ञा-पालनमें ही है। जो अपनी टेकको निबाह नही सकते, उन लोगोसे काम लेकर आखिर मालिक भी कोई फायदा नही उठा सकेंगे। धार्मिक वृत्तिवाला मनुष्य दूसरेकी प्रतिज्ञाको तुड़वानेमे कभी रस नही लेता; कभी हाथ नही बँटाता। लेकिन आज मालिकोके फर्जका विचार करनेकी फुरसत हमे नही है। वे अपना फर्ज समझते हैं। हम तो उनसे विनती ही कर सकते हैं, लेकिन मजदूरोको इस समय अपना फर्ज पूरी तरह समझ लेनेकी जरूरत है। यह समय फिर लौटकर नही आयेगा।

अब हम देखे कि मजदूर अपनी प्रतिज्ञा भग करके क्या पा सकेंगे। आजकल हिन्दुस्तानमें ईमानदार आदमीको होशियारीके साथ काम करनेपर बीस-पच्चीस रुपये कही भी मिल सकते हैं। अतएव मजदूरोकी बडीसे-बडी हानि तो यही हो सकती है कि मालिक हमेशाके लिए उन्हे छोड़ दें, और उनको कही दूसरी जगह नौकरी करनी पडे। समझदार मजदूरको जान लेना चाहिए कि कुछ दिनोकी कोशिशसे वह कही भी नौकरी पा सकेगा। लेकिन हम मानते है कि मालिक इस आखिरी हदतक जाना नही चाहते है। अगर मजदूर अपनी टेकपर डटे रहेंगे, तो कठोरसे-कठोर दिल भी एक दिन पिघलेगा।

मुमकिन है कि गैर-गुजराती मजदूरोको (उत्तर भारतसे और दक्षिण भारत यानी मद्राससे आये हुए मजदूरोको) इस लडाईका पूरा खयाल न हो। हम अपने सार्वजनिक काममें हिन्दू, मुसलमान, गुजराती, मद्रासी, पंजाबी वगैराका कोई भेद नही रखते, न रखना चाहते हैं। हम सब एक ही है, अथवा एक होना चाहते है। इसलिए गुजरातके बाहरसे आये हुए इन मजदूरोको हमें हमदर्दीसे इस लडाईका मर्म समझाना चाहिए, और उनको यह बता देना चाहिए कि हमारे साथ रहनेमें उनका और सबका हित है।

[गुजरातीसे]

एक धर्मयुद्ध

१६७. अम्बालाल साराभाईको लिखे पत्रका सारांश[1]

[साबरमती]
मार्च १२, १९१८

आपका पत्र मुझे मिल गया और मैंने उसे पढ़कर फाड़ दिया। मैंने यह चाहा ही नहीं कि मजदूरोंपर दबाव डाला जाये। मजदूरोंपर दबाव डालनेवाले लोगोंके सम्बन्धमें आप अधिक निश्चित विवरण लिखेंगे, तो मैं जरूर कुछ बन्दोबस्त करूँगा। मजदूर कामपर जाते हैं या नहीं, इस बारेमें मैं उदासीन हूँ। किसी भी आदमीको मिलमें जाते हुए जबरन न रोकनेकी हिदायत मैं देता रहा हूँ। मैं यह कदापि नहीं चाहता कि किसी मजदूरको उसकी इच्छाके विरुद्ध मिलमें न जाने दिया जाये। कोई मजदूर मिलमें जानेकी इच्छा प्रकट करे तो मैं उसे खुद मिलमें छोड़ आनेके लिए तैयार हूँ। मजदूर कामपर जाते हैं या नहीं जाते, इस बारेमें मैं बिलकुल उदासीन हूँ।

आपने मुझे जैसा काम सौंप रखा है, उसे देखते हुए मैं आपके साथ रहनेका आनन्द कैसे ले सकता हूँ? आपके बच्चोंसे मिलनेकी मेरी बहुत इच्छा है, परन्तु अभी तो यह भी कैसे सम्भव है? यह सब तो भविष्यकी बात है।

[गुजरातीसे]
महादेवभाईनी डायरी, खण्ड ४

१६८. अहमदाबादके मिल-मजदूरोंकी हड़ताल

मार्च १३, १९१८[2]

पत्रिका — १३

ऐसी अफवाह हमारे सुननेमें आई है कि बहुतेरे मजदूर कामपर जानेको तैयार हैं, लेकिन दूसरे मजदूर उन्हें जोर-जुल्मके साथ, मार-पीटकी धमकी देकर रोके हुए हैं। हरएक मजदूरको हमारी यह प्रतिज्ञा याद रखनी चाहिए कि अगर मजदूर दूसरोंको दबाकर या धमकाकर कामपर जानेसे रोकेंगे, तो हम उनकी मदद न कर सकेंगे। इस लड़ाईमें जीत उसीकी होगी, जो अपनी टेकपर अड़ा रहेगा। टेक किसीसे जबरदस्ती नहीं पलवाई जा सकती। यह चीज ही ऐसी है कि जबर्दस्ती हो ही नहीं सकती। अपनी टेकपर कायम

१. महादेवभाईने डायरीमें लिखा है: गांधीजी नहीं चाहते थे कि किसी भी रूपमें इस पत्रकी कोई नकल रखी जाये, किन्तु स्मृतिसे इसका सारांश तैयार करके रखनेपर उन्हें कोई आपत्ति नहीं थी।
२. यह पत्रिका तालाबन्दी समाप्त होनेके दूसरे दिन निकाली गई थी।

रहकर ही हम आगे बढ़ना चाहते हैं। जो आदमी मारे डरके कोई काम न करे, वह किस बलपर आगे बढ़ सकता है? उसके पास तो कुछ रहता ही नहीं। अतएव हर मजदूरको यह याद रखना चाहिए कि वह किसी भी दूसरे मजदूरपर किसी प्रकारका दबाव न डाले। अगर दबावसे काम लिया गया, तो सम्भव है कि सारी लड़ाई कमजोर पड़ जाये और एकदम बैठ जाये। मजदूरोंकी लड़ाईका सारा दारोमदार उनकी माँगपर और उनके कार्यकी न्यायोचिततापर है। अगर माँग अनुचित है, तो मजदूर जीत नहीं सकते। और अगर वह उचित है किन्तु उसको पानेके लिए अन्यायसे काम लिया जाये, झूठ बोला जाये, दगा-फसाद किया जाये, दूसरोंको दबाया जाये, आलस्य किया जाये, और फिर इनसे होनेवाले दुःख उठाने पड़ें, तो उस हालतमें भी वे हार जायेंगे। किसीको न दबाना और अपने गुजारेके लिए आवश्यक मजदूरी करना ये इस लड़ाईकी बहुत जरूरी शर्तें हैं।

[गुजरातीसे]

एक धर्मयुद्ध

१६९. भाषण : अहमदाबादकी सभामें[1]

मार्च १३, १९१८

मैं श्रीमती एनी बेसेंटका पूरा-पूरा परिचय देनेमें असमर्थ हूँ। मेरा तो यह खयाल है कि कोई भी व्यक्ति उनका परिचय नहीं दे सकता। मैं उन्हें तीस वर्षोंसे जानता हूँ परन्तु इतने वर्षोंसे वे मुझे जानती हों — सो नहीं कहा जा सकता। मैं अपने बाल्य-कालसे ही उनके कार्योंका अवलोकन करता आया हूँ। होमरूल शब्द भारतवर्षमें चारों ओर फैल गया है और बड़े-छोटे सभी प्रकारके गाँवोंमें भी उसका प्रवेश हो चुका है — यह सब करामात इन्हीं बहनकी है। मैंने अनेक बार कहा है कि मेरे तथा उनके बीच मतभेद रहे हैं और वे रहेंगे। आज भी बहुतसे मतभेद हैं। यदि होमरूल आन्दोलनकी बाग-डोर मेरे हाथमें होती तो मैं उसे कुछ भिन्न ढंगसे संचालित करता। किन्तु मुझसे उनकी पूजा किये बिना, उन्हें सम्मानित किये बिना — उनके गुणोंकी प्रशंसा किये बिना नहीं रहा जाता। कारण यह है कि उन्होंने अपनी आत्मा भारतको अर्पित कर दी है। वे भारतके लिए ही जीती हैं और यही उनकी महत्त्वाकांक्षा है। उनसे सैकड़ों गलतियाँ हों तो भी हम उनकी इज्जत करेंगे। मैं समझता हूँ कि अहमदाबादने इतना बड़ा उपकार करनेवाली बहनको सम्मानित करके स्वयं अपना अपूर्व मान किया है। आज जो व्याख्यान दिया जानेवाला है उसके विषयको देखते हुए कहा जा सकता है कि उपस्थित श्रोता उसके अनुरूप नहीं हैं। श्रीमती बेसेंटने अभी-अभी मुझसे कहा है कि इस श्रोता-समाजके

१. सभाका आयोजन श्रीमती एनी बेसेंटका भाषण सुननेके लिए हुआ था, वे "राष्ट्रीय शिक्षा" पर बोलनेवाली थीं। सभाकी अध्यक्षता गांधीजीने की थी।

सामने स्वराज्यपर भाषण देना तो ठीक होगा परन्तु राष्ट्रीय शिक्षापर बोलना बेकार-सा है। इस सभामें जितने शिक्षित व्यक्ति होने चाहिए थे उतने मौजूद नहीं हैं। फिर भी वे आपके सामने बोलेंगी। मैं जो आपके सामने गुजरातीमें बोल रहा हूँ, उनकी अनुमतिसे बोल रहा हूँ। मुझे आपके समक्ष अपने विचार गुजरातीमें ही व्यक्त करने चाहिए। उनके भाषणका भावार्थ गुजरातीमें बादमें सुना दिया जायेगा। उन्होंने वर्तमान वातावरणमें जो आन्दोलन खड़ा किया है उससे अनेक लाभ हुए हैं। भारत उनकी संगठन-शक्ति और उनकी भाषण कला और उनके कार्योंसे लाभान्वित हुआ है। उन्हें सम्मानित करनेका सबसे पहला कदम शान्तिपूर्वक उनका भाषण सुनना है।

[गुजरातीसे]

प्रजाबन्धु, १७–३–१९१८

१७०. भाषण : अहमदाबादकी सभामें[1]

मार्च १३, १९१८

भाषणके प्रारम्भमें गांधीजीने सभामें उपस्थित लोगोंसे शान्त रहनेको कहा और सभाओंमें समयपर आनेका महत्त्व समझाया। उन्होंने यह भी कहा कि अब बादमें आनेवाले लोगोंको फाटकके बाहर ही खड़े रहना पड़ेगा।

आजके भाषणका विषय हमारे ही हितसे सम्बन्धित है और वह स्वराज्यके बारेमें है। धन, सम्मान और शक्ति ये सब वस्तुएँ स्वराज्यमें ही निहित हैं। इस महिलाके भाषणकी एक बात हमें और वैसे ही सरकारको भी हृदयंगम कर लेनी चाहिए और वह बात यह है कि भारतमें या तो स्वराज्य होना चाहिए या भूख-हड़ताल होनी चाहिए। यह बात सब लोगोंको समझ लेनी है। भारत फिलहाल सत्ताके अभावमें दिन-प्रतिदिन निर्धन होता जा रहा है और गरीबी इस अवस्था तक पहुँच गई है कि जिसके कारण हजारों व्यक्तियोंको अकरणीय कार्य करने पड़े हैं। भूख हड़तालका अर्थ यह है कि चार दिनोंसे भूखा व्यक्ति क्या नहीं कर सकता? श्रीमती बेसेंट आज इसी बातको स्पष्ट करनेके लिए भाषण देनेवाली हैं। यदि श्रीमती बेसेंटके कुछ आलोचकोंको सफलता मिलती है तो उसका कारण केवल यही है कि वे कर्मठ हैं और अपने कार्यमें लीन रहती हैं। उसमें उन्होंने अपना तन, मन और धन न्योछावर कर दिया है। वे जो-कुछ कहना चाहती थीं उसे वे हमारे सामने रख चुकी हैं परन्तु उनके सुझाये मार्गपर चलकर हम अपने लक्ष्यकी प्राप्ति नहीं कर सकते; हमारा बेड़ा तो अपने ही मार्गपर चलनेसे पार हो सकता है। आज अहमदाबादने उनका जो सम्मान किया है वह यदि सच्चे हृदयसे स्फुरित हुआ है तो आप लोग ईश्वरसे यह प्रार्थना करें कि उसने जो शक्ति उन्हें दी है

१. शामको गांधीजीकी अध्यक्षतामें एक और सभा हुई थी जिसमें श्रीमती बेसेंटने "वर्तमान राजनीतिक स्थितिमें हमारा कर्तव्य" विषयपर भाषण दिया था।

वही हमें भी दे। इसी भावसे आप उनका व्याख्यान शान्तिपूर्वक सुनियेगा। जो अंग्रेजी नहीं समझते वे लोग कल सुबह इस भाषणका अनुवाद पढ़ सकते हैं।

सभाकी कार्रवाई समाप्त करते हुए श्री गांधीने कहा कि श्रीमती बेसेंटके भाषणका गुजरातीमें अनुवाद किया जाना चाहिए और उस अनुवादकी प्रतियाँ लोगोंमें वितरित की जानी चाहिए। उन्होंने आगे कहा कि यह भाषण ऐतिहासिक महत्त्व रखता है। तत्पश्चात् गांधीजीने उन लोगोंके नाम पढ़ सुनाये जिन्होंने श्रीमती बेसेंटको पैसोंकी थैलियाँ भेंट की थीं और उन्हें धन्यवाद दिया। अन्तमें उन्होंने सबको श्रीमती बेसेंटके भाषणपर मनन करनेकी सलाह दी।

[गुजरातीसे]

प्रजाबन्धु, १७–३–१९१८

१७१. भाषण: अहमदाबादके मिल-मजदूरोंकी सभामें

[मार्च १५, १९१८ से पूर्व][1]

आप यन्त्रोंको "निरे ढाँचे"[2] कहकर उनका मजाक उड़ाते हैं, यह उचित नहीं है। बेचारे यन्त्रोंने आपका कोई नुकसान नहीं किया है। अभी कल आप उन्हींकी मददसे अपनी रोजी कमाते थे। इसीलिए अपने कवियोंसे मैं निवेदन करूँगा कि वे कड़वी बातें न कहें, मालिकोंपर किसी तरहके आक्षेप न करें। यह कहनेमें कोई सार नहीं कि हमारी वजहसे मालिक मोटरोंमें सैर करते हैं। ऐसी बातोंसे हमारी कीमत घटती है। मैं तो यह कहता हूँ कि सम्राट् जॉर्ज भी हमारे प्रतापसे अपना राज्य चलाते हैं। लेकिन इन बातोंसे हमारी कोई कीमत नहीं रहती। यह कहकर कि अमुक आदमी बुरा है, हम अच्छे नहीं बन जाते। बुरेकी बुराईको देखनेवाला ऊपर बैठा हुआ है। वह उसे सजा देता है। हम न्याय करनेवाले होते कौन हैं? हम तो सिर्फ यही कहें कि मिल-मालिक हमें ३५ प्रतिशत भत्ता नहीं देते, यह उनकी भूल है।[3]

[गुजरातीसे]

एक धर्मयुद्ध

१. स्पष्ट है कि यह भाषण उपवासके पूर्व दिया गया था।

२. एक मजदूर-कविने मिलोंकी हँसी करते हुए सभामें एक व्यंग्य-कविता पढ़ी थी।

३. भाषणका शेष हिस्सा उपलब्ध नहीं है।

१७२. मिल-मजदूरोंके हितैषियोंको उत्तर[1]

[मार्च १५, १९१८से पूर्व][2]

अगर मजदूर इस आशासे सत्याग्रहमें शामिल हुए हों कि आप पैसे-टकेसे मदद करके सत्याग्रह करायेंगे, अथवा अपनी आर्थिक मददसे उनको इस लड़ाईमें टिकाये रखेंगे, तो फिर सत्याग्रहका अर्थ ही क्या हुआ? उसका महत्त्व क्या रहा? सत्याग्रहकी खूबी तो इसीमें है कि सत्याग्रही सब तरहके दुःखोंको राजी-खुशी सहन करें। वे जितना अधिक दुःख सहते हैं, उतनी ही अधिक उनकी परीक्षा होती है।

[गुजरातीसे]

एक धर्मयुद्ध

१७३. अहमदाबादके मिल-मजदूरोंकी हड़ताल

मार्च १५, १९१८[3]

पत्रिका — १४

जैसे धनवान्‌का हथियार धन है, वैसे ही मजदूरी मजदूरका हथियार है। अगर धनवान् अपने धनका उपयोग न करे, तो भूखों मरे। इसी तरह मजदूर अपने धन — मजदूरी — को काममें न लाये, वह मजदूरी न करे, तो उसे भूखों मरना पड़े। जो मजदूरी नहीं करता, वह मजदूर कैसा? जो मजदूर मजदूरी करनेमें शरमाता है, उसे खानेका कोई अधिकार ही नहीं। इसलिए अगर मजदूर इस महान् लड़ाईमें अपनी प्रतिज्ञाका पालन करना चाहते हैं, तो उन्हें मजदूरी करना सीख लेना होगा। चन्दा इकट्ठा करके और बेकार रहकर जो लोग चन्देके पैसेसे अपना पेट भरते हैं, उन्हें जीतनेका कोई हक नहीं। मजदूर यह लड़ाई अपनी टेकके लिए लड़ रहे हैं। कहना होगा कि जो बिना काम किये खाना चाहते हैं, वे नहीं जानते कि टेक क्या चीज है। जो हयादार हैं, और जिन्हें अपनी इज्जत प्यारी है, वे ही टेक निबाहते हैं। जो सार्वजनिक चन्दोंकी रकमसे बिना हाथ-पैर हिलाये जीना चाहते हैं, उन्हें हयादार कौन कहेगा? इसलिए हमारा फर्ज है कि हम किसी-न-किसी तरहकी मजदूरी करके अपना गुजारा करें। मजदूरका मजदूरीसे जी चुराना ऐसा है, जैसा शक्करका मिठास छोड़ देना।

१. अहमदाबादके मिल-मजदूरोंके हितैषियोंको दिया गया यह उत्तर किसी पत्रका अंश है या जबानी बातचीतका यह निश्चयपूर्वक नहीं कहा जा सकता।

२. जाहिर है कि यह उत्तर गांधीजीने मजदूरोंके पक्षमें अपना उपवास शुरू करनेसे पहले दिया होगा।

३. यह पत्रिका गांधीजीने जिस दिन उपवास आरम्भ किया उस दिन प्रकाशित हुई थी।

यह लड़ाई सिर्फ ३५ प्रतिशत बढ़ोतरी पानेके लिए नहीं है, बल्कि यह साबित करनेके लिए है कि मजदूर अपने हकके लिए मुसीबतें उठानेको तैयार हैं। यह लड़ाई अपनी टेककी रक्षाके लिए है। हम अपनी तरक्कीके खयालसे, यानी अच्छे बननेके लिए, इसे चला रहे हैं। अगर हम सार्वजनिक धनका दुरुपयोग करते हैं, तो अच्छे बननेके बदले बिगड़ते हैं। अतएव हम किसी भी तरह सोचें, नतीजा यही निकलेगा कि हमें मज-दूरी करके ही अपना पोषण करना है। शीरींके खातिर फरहादने पत्थर तोड़े थे। मज-दूरोंकी शीरीं उनकी टेक है, उसके लिए वे पत्थर क्यों न फोड़ें? सत्यके लिए हरिश्चन्द्र बिके। अगर मजदूरी करनेमें दुःख है तो क्या अपने सत्यके लिए मजदूर उतना दुःख न सहेंगे? टेककी खातिर हजरत इमाम हसन और हुसैनने बड़ी-बड़ी तकलीफें उठाईं। हम अपनी टेक निबाहनेके लिए क्यों न मरनेको तैयार रहें? हमें घर बैठे पैसे मिलें, और उनपर हम लड़ें, तो यह कहना ही गलत होगा कि हम लड़े।

इसलिए हमें उम्मीद है कि हरएक मजदूर अपनी टेककी रक्षाके लिए मजदूरी करके अपना पेट पालेगा और दृढ़ रहेगा। अगर यह लड़ाई देर तक चली, तो उसका कारण हमारी कमजोरी ही होगी। जबतक मिल-मालिकोंको यह खयाल रहेगा कि मजदूर दूसरी मजदूरी नहीं करेंगे और आखिर हार जायेंगे, तबतक वे पसीजेंगे भी नहीं और विरोध करते रहेंगे। जबतक उन्हें यह विश्वास न हो जायेगा कि मजदूर अपनी टेक कभी छोड़ेंगे ही नहीं, तबतक उन्हें दया नहीं आयेगी और वे अपने मुनाफेसे हाथ धोकर भी विरोधी बने रहेंगे। जिस दिन उन्हें विश्वास हो जायेगा कि मजदूर अपनी टेक किसी भी दशामें नहीं छोड़ेंगे, उस दिन वे जरूर पसीजेंगे और तब वे मजदूरोंका स्वागत करेंगे। आज तो उनका यह खयाल है कि मजदूर दूसरी मजदूरी करेंगे ही नहीं, और आज या कल घुटने टेक देंगे। अगर मजदूर अपने गुजारेके लिए दूसरोंके पैसेका सहारा लेंगे, तो मालिक सोच लेंगे कि यह पैसा तो किसी-न-किसी दिन खत्म होने ही वाला है। इसलिए वे मजदूरोंको न्याय न देंगे। जिन मजदूरोंके पास खाने-पीनेका साधन नहीं है, वे अगर मजदूरी करने लग जायेंगे, तो मालिक भी समझ लेंगे कि जल्दीसे ३५ प्रतिशत इजाफा न दिया, तो वे मजदूरोंको हाथसे खो बैठेंगे। इस तरह लड़ाईको बढ़ाने या घटानेवाले हम ही हैं। इस समय ज्यादा दुःख सहकर हम जल्दी छुटकारा पा सकते हैं। अगर दुःख नहीं सहेंगे, तो लड़ाई जरूर आगे बढ़ेगी। हमें आशा है कि इन सब बातोंको सोचकर जो आज कच्चे पड़ गये हैं, वे झट पक्के बन जायेंगे।

खास सूचना

कुछ मजदूरोंका यह खयाल हो गया है कि जो कमजोर पड़ गये हैं, उनको शह-जोर बननेके लिए समझाया नहीं जा सकता। यह खयाल बिलकुल अनुचित है। जो किसी भी कारणसे कच्चे पड़ गये हैं, उनको विनयपूर्वक समझाना हममें से हरएकका काम है। जो लड़ाईसे वाकिफ नहीं हैं, उन्हें समझाना भी हमारा काम है। हमारा कहना तो यह है कि हमें किसीको धमकाकर, झूठ बोलकर, मारकर या दूसरा कोई दबाव डालकर रोकना नहीं है। जो समझानेपर भी न समझें और कामपर जाना चाहें, वे

भले जायें। हमें उससे बिलकुल निडर रहना है। जबतक एक भी आदमी बाहर रहेगा, हम कभी उसका साथ नही छोडेंगे।

[गुजरातीसे]

एक धर्मयुद्ध

१७४. भाषण : अहमदाबादके मिल-मजदूरोंकी सभामें

[मार्च १५, १९१८][1]

आप लोगोंको पता चला होगा कि आज सुबहकी सभामें क्या-क्या हुआ। कइयोको बडा सदमा पहुँचा; कई रो पडे। मैं नही समझता कि सुबह जो-कुछ हुआ, वह गलत हुआ या शरमाने जैसा हुआ। जुगलदासकी चालवालोंने जो टीका की,[2] उससे मुझे गुस्सा नही आया, उलटे उससे तो मुझे अथवा जिन्हे हिन्दुस्तानकी कुछ सेवा करनी है उनको, बहुत-कुछ समझ लेना है। मैं मानता हूँ कि अगर हमारी तपस्या, यानी समझकर दुःख सहनेकी शक्ति, सच्ची है, तो वह कभी निष्फल नही हो सकती — उसके सुफल फलकर ही रहेंगे। मैंने आपको एक ही सलाह दी। आपने उसके अनुसार प्रतिज्ञा ली। इस युगमें प्रतिज्ञाका मूल्य, टेककी कीमत, नष्ट हो गई है। लोग जब चाहते हैं और जिस तरह चाहते हैं, ली हुई प्रतिज्ञा तोड देते हैं, और इस तरह प्रतिज्ञाका पानी उतार देनेसे मुझे दुःख होता है। साधारण आदमीको बाँधनेके लिए प्रतिज्ञासे बढकर दूसरी कोई डोर नहीं। परमात्माको अपना साक्षी बनाकर जब हम किसी कामको करनेके लिए तैयार होते हैं, तो वही हमारी प्रतिज्ञा हो जाती है। जो उन्नत हैं, वे बिना प्रतिज्ञाके भी अपना काम चला सकते हैं। लेकिन हमारे समान अवनत या पिछडे हुए लोग वैसा नही कर सकते। हम लोगोंके लिए, जो जीवनमें हजारो बार गिरते हैं, इस तरहकी प्रतिज्ञाओंके बिना ऊपर चढना असम्भव है। आप मजूर करेंगे कि अगर हमने प्रतिज्ञा न ली होती और रात-दिन उसका रटन न किया होता, तो हममें से बहुतेरे कभीके फिसल चुके होते। आप लोगोंने ही मुझसे कहा है कि इससे पहले इतनी शान्तिसे चलनेवाली कोई हडताल आपने नही देखी। फिसलने या हारनेका कारण पेटकी आग है। मेरी सलाह है कि आप लोगोंको पेटकी इस आँचको सहकर भी अपनी टेकपर कायम रहना चाहिए। इसके साथ ही मेरी और मेरे साथ काम करनेवाले भाई-बहनोंकी भी यह प्रतिज्ञा है कि किसी भी दशामें हम आपको भूखों न मरने देंगे। अगर हम अपने सामने आपको भूखों मरने दें, तो आपका फिसलना — पीछे हटना — स्वाभाविक है। इस तरहकी दुहरी सलाहके साथ एक तीसरी चीज़ और रह जाती है। वह यह कि हम आपको भूखों न मारें, बल्कि आपसे भीख मँगवायें। अगर हम ऐसा करते हैं, तो भगवान्के सामने गुनहगार ठहरते

१. जिस दिन उपवास शुरू हुआ उस दिन शामको यह भाषण दिया गया था।

२. एक दिन पूर्व जब छगनलाल गांधी इस चालमें रहनेवाले मजदूरोंसे सुबहकी सभामें आनेका अनुरोध करनेके लिए वहाँ गये थे तब उन लोगोंने ताना मारते हुए कहा था. "गांधीजी और अनसूया-बेनका क्या? उन्हें तो मोटरमें आना और मोटरमें जाना और बढिया-बढिया खाना-पीना। लेकिन हम तो मर रहे हैं। निरे सभाओंमें उपस्थित होनेसे पेट थोडे ही भर सकता है।"

है, चोर साबित होते है। लेकिन यह मै आपको किस तरह समझाऊँ कि आप मजदूरी करके अपना पेट भरिये। मै मजदूरी कर सकता हूँ, मैंने मजदूरी की है। आज भी करना चाहता हूँ, पर मुझे मौका नही मिलता। मुझे अभी बहुत-कुछ करना है, इसलिए सिर्फ कसरतके तौरपर थोडी मजदूरी कर लेता हूँ। अगर आप मुझसे यह कहे कि हमने तो करघेकी मजदूरीकी है, दूसरी मजदूरी हम नही कर सकते, तो क्या यह कहना आपको शोभेगा? हिन्दुस्तानमें इस तरहका वहम घुस गया है। उसूलन यह ठीक है कि एक आदमीको एक ही काम करना चाहिए, लेकिन जब इसका उपयोग बचावके तौरपर किया जाता है, तो बात बिगड जाती है। मैंने इस मसलेपर बहुत सोचा है। जब मुझपर दो एक सीधे हमले हुए, तो मैंने सोचा कि अगर मुझे आप लोगोसे आपका अपना धर्म पलवाना हो, प्रतिज्ञा और मजदूरीकी कीमत आपको समझानी हो, तो मुझे आपके सामने इसका कोई जीता-जागता सबूत पेश करना चाहिए। आपके साथ हम लोग कोई खिलवाड नही कर रहे है, कोई नाटक नही दिखा रहे है। जो बाते हम आपसे कहते है, उन्हे हम स्वय भी पालनेको तैयार है, यह मै आपको कैसे समझाऊँ? मै कोई परमात्मा या खुदा नही हूँ कि किसी दूसरे तरीकेसे सब आपको दिखा दूँ। मै तो आपके सामने कुछ ऐसा कर दिखाना चाहता हूँ, जिससे आप भी समझ जाये कि इस आदमीके साथ तो साफ बात करनी होगी, नाटक-चेटकसे काम नही चलेगा। दूसरा कोई लालच या धमकी देकर भी प्रतिज्ञाका पालन नही करवाया जा सकता। लालच तो केवल प्रेमका ही दिया जा सकता है। जिसे अपना धर्म प्यारा है, टेक प्यारी है, देश प्यारा है वही अपनी टेकपर कायम रह सकता है, इसे आप समझ सकते है।

मुझे इस तरहकी प्रतिज्ञाएँ लेनेकी आदत है, लेकिन इस डरसे कि कही लोग उनकी झूठी नकल न करे, मै प्रतिज्ञा करना ही छोड देता हूँ। किन्तु मुझे तो करोडो मजदूरोके सम्पर्कमें आना है। अतएव उसके लिए मुझे अपनी आत्माके साथ खुलासा कर लेनेकी जरूरत रहती है। मै आपको यह दिखाना चाहता था कि आप लोगोके साथ मुझे खिलवाड नही करना है।

मैंने आपको अपने कार्य द्वारा यह दिखानेकी कोशिश की है कि प्रतिज्ञाका जो मूल्य मै आँकता हूँ, वही आप भी आँके। आपने एक काम कर दिखाया है। आपके दिलमे यह खयाल आ सकता था "हमे आपकी प्रतिज्ञासे क्या मतलब? हम टिक नही सकते। हम तो कामपर जायेंगे।" लेकिन आपने यह नही सोचा। आपने हमारी सेवाको पसन्द किया। और मैंने आपकी बहुत कीमत आँकी। आपके साथ मरना मुझे सुन्दर लगा, आपके साथ-साथ तरना भी मुझे सुन्दर मालूम हुआ।[1]

[गुजरातीसे]

एक धर्मयुद्ध

१. भाषणका बाकी हिस्सा उपलब्ध नहीं है। गांधीजीके उपवाससे सभी लोग चिन्तित हो उठे थे। मिल-मालिकोंने उनसे उपवास छोड देनेके लिए बहुत आग्रह किया और वे उनकी खातिर ३५ प्रतिशत भी देनेको तैयार हो गये। गांधीजीने इस बातसे इनकार करते हुए कहा, "मुझपर दया करके नहीं, बल्कि मजदूरोंकी प्रतिज्ञाका आदर करके उनके साथ न्याय करनेके लिए उन्हें ३५ प्रतिशत दीजिये।"

१७५. अहमदाबादके मिल-मजदूरोंकी हड़ताल

[मार्च १६, १९१८][1]

पत्रिका — १५

गांधीजीकी प्रतिज्ञाका हेतु और अर्थ समझ लेना जरूरी है। याद रखने योग्य पहली बात यह है कि उन्होंने मालिकोंपर असर डालनेके लिए अपना व्रत शुरू नहीं किया। अगर इस हेतुसे व्रत लिया जाये, तो उससे हमारी लड़ाईको धक्का पहुँचेगा और हमारी बदनामी होगी। मालिकोंसे हम इन्साफ चाहते हैं, महज दया नहीं चाहते। जितनी दया चाहते हैं, वह मजदूरोंको मिले तो अच्छा। हम यह मानें कि मजदूरोंपर दया करना मालिकोंका फर्ज है। लेकिन गांधीजीपर दया करके वे मजदूरोंको ३५ प्रतिशत इजाफा दें, और मजदूर उसे लें, तो उसमें हमारी ही हँसी होगी। मजदूर ऐसा इजाफा स्वीकार नहीं कर सकते। अगर गांधीजी मालिकोंके अथवा सर्वसाधारणके साथके अपने सम्बन्धका ऐसा उपयोग करें, तो कहा जायेगा कि उन्होंने अपनी स्थितिका दुरुपयोग किया है। उससे गांधीजीकी प्रतिष्ठा घटेगी। गांधीजी उपवासका मजदूरोंकी तनख्वाहके साथ क्या सम्बन्ध हो सकता है? ५० आदमी मालिकोंके घर जाकर अनशन करें, किन्तु यदि मजदूरोंको ३५ प्रतिशत इजाफा पानेका हक न हो, तो मालिक उनकी माँग कैसे स्वीकार कर सकते हैं? अगर इस तरह हक हासिल करनेका रिवाज चल पड़े, तो जन-समाजका काम चलना करीब-करीब असम्भव हो जाये। गांधीजीके इस उपवासपर मिल-मालिक न तो ध्यान दे सकते हैं, न उन्हें ध्यान देना चाहिए। साथ ही यह भी नहीं हो सकता कि गांधीजीके ऐसे कार्यका प्रभाव मालिकोंपर बिलकुल ही न पड़े।

जिस हदतक यह प्रभाव पड़ेगा, उसका उतना ही दुःख हमें होगा। किन्तु यदि गांधीजीके उपवाससे दूसरे महत्त्वपूर्ण परिणाम निकलते हों, तो हम उनका त्याग न करें।

जिस हेतुकी सिद्धिके लिए उपवास शुरू किया गया है, उसपर भी थोड़ा विचार कर लें। गांधीजीने महसूस किया कि मजदूरोंके मनमें प्रतिज्ञाका महत्त्व कम होने लगा है। अपनी कल्पित भूखके डरसे उनमें से कुछ प्रतिज्ञा तोड़नेको तैयार हो गये थे। दस हजार आदमियोंका अपनी प्रतिज्ञासे मुँह मोड़ना एक असह्य-सी बात है। प्रतिज्ञाका पालन न करनेसे आदमी कमजोर पड़ता है, और अन्तमें अपनी मनुष्यतासे हाथ धो बैठता है। इसलिए आज प्रतिज्ञा-पालनके काममें लोगोंकी भरसक मदद करना, यह हम सबका धर्म बन गया है। गांधीजीने सोचा कि अगर वे उपवास करेंगे, तो यह साबित हो सकेगा कि वे स्वयं प्रतिज्ञाको कितना महत्त्व देते हैं। फिर मजदूर भूखों मरनेकी बात कर रहे थे। गांधीजीका कथन है कि भूखों मरकर भी प्रतिज्ञा पालनी चाहिए। इसका पालन उन्हें तो सचमुच करना ही चाहिए। और यह तभी सच हो सकता है, जब वे खुद भूखों

१. यह पत्रिका उपवासके दूसरे दिन निकली होगी। उसके अगले दिन, यानी ता० १७को पत्रिका श्री शंकरलाल बैंकरने निकाली थी। ता० १८ के सुबह समझौता हो गया था।

मरनेको तैयार हो। मजदूर कहने लगे कि वे मजदूरी नहीं करेंगे, फिर भी उन्हें पैसेकी मददकी जरूरत तो है। गांधीजीको यह चीज बहुत भयावनी मालूम हुई। मजदूरोंके ऐसे व्यवहारसे देशमें जो अव्यवस्था उत्पन्न होगी, उसका कोई पार ही न रहेगा। मजदूरी करनेमें जो कष्ट है, उसे सह लेनेकी बात लोगोंको पुरअसर ढंगसे समझानेका गांधीजीके पास एक ही तरीका था। वह यह कि वे खुद कष्ट उठायें। वे खुद मजदूरी तो करते थे, लेकिन उतना काफी न था। उपवासको उन्होंने कई दृष्टियोंसे अर्थ-साधक समझा और शुरू किया। अब यह उपवास तभी छूट सकता है, जब या तो मजदूरोंको ३५ प्रतिशत इजाफा मिल जाये, या वे अपनी प्रतिज्ञासे टल जायें। नतीजा वही हुआ, जो सोचा था। जो लोग प्रतिज्ञा लेनेके वक्त हाजिर थे, उन्होंने वह देखा भी। मजदूर जागे, उन्होंने मजदूरी करना शुरू किया, उनका धर्म और उनका ईमान बचा।

मजदूर अब यह समझ चुके हैं कि अगर वे अपनी प्रतिज्ञापर कायम रहेंगे, तो उन्हें इन्साफ मिलेगा। गांधीजीकी प्रतिज्ञासे उनका बल बढ़ा है, लेकिन जूझना तो उन्हें अपनी ही ताकतपर है। मजदूरोंका उद्धार मजदूरोंके हाथमें है।

[गुजरातीसे]

एक धर्मयुद्ध

१७६. पत्र: बम्बईके गवर्नरको

[मार्च १७, १९१८ से पूर्व]

[महानुभाव,]

आशा है, मैंने और मेरे मित्रोंने जाँच-पड़ताल करके जो तथ्य प्राप्त किये हैं, उनके आधारपर तथा महामारी, प्लेग और निर्वाह-व्ययकी वृद्धिसे उत्पन्न कष्टोंको ध्यानमें रखते हुए या तो लगानकी वसूली मुलतवी कर दी जायेगी, या मेरे मूल सुझावके अनुसार किसी स्वतन्त्र निकाय द्वारा सारे मामलेकी जाँच करवाई जायेगी। लेकिन, यदि मेरे इस अन्तिम निवेदनकी उपेक्षा कर दी जाती है और जायदादें छीनी, बेची अथवा जब्त की जाती हैं तो मुझे काश्तकारोंको खुलेआम लगान न अदा करनेकी सलाह देनेको विवश हो जाना पड़ेगा।[1]

खेड़ा जिलेमें सर्वप्रथम प्रवेश करते समय मैंने आपको आश्वासन दिया था कि कोई भी उग्र मार्ग अपनानेसे पूर्व मैं आपको सूचना दे दूँगा। मुझे आशा है कि इस पत्रमें

१. अफसरोंने जोर-जबरदस्ती करके किसानोंसे यह कहलवा लिया था कि लगान चुकानेकी दृष्टिसे फसल काफी हुई है। गांधीजीने इस जोर-जबरदस्तीका विरोध किया। कमिश्नर प्रैटने गांधीजी तथा उनके सहयोगियोंकी बातसे असहमति व्यक्त करते हुए कहा कि किसानोंके लिए सही रास्ता यही है कि वे बकाया रकम चुका दें। इन सब बातोंको ध्यानमें रखते हुए गांधीजीने गवर्नरको पत्र लिखा था।

निवेदित विभिन्न तथ्योंपर आप ध्यान देंगे। यदि आप मुझसे मिलना चाहें तो मैं तुरन्त आ जाऊँगा।[1]

[आपका,
मो० क० गांधी]

[अंग्रेजीसे]
सरदार वल्लभभाई पटेल, खण्ड १

१७७. प्रवचन : आश्रममें प्रार्थनाके बाद

मार्च १७, १९१८

मैंने अभी जो कदम उठाया है, वह बहुत भयंकर है। किन्तु उसके पीछे एक बड़ा विचार है। यह भयंकर इसलिए है कि इसे सुनकर भारतमें जितने लोग मुझे जानते हैं, उन सभीको बहुत दुःख होगा, वे अत्यन्त शोक प्रकट करेंगे। लेकिन इसके साथ ही मुझे अब उन लोगोंको एक सुन्दर तत्त्व समझानेका अवसर भी मिला है। उस अवसरको मुझे न चूकना चाहिए। इस विचारसे मैंने यह कदम उठाया है। आप सबको उसका उद्देश्य समझानेके लिए मैं दो दिनसे बहुत अधीर रहा हूँ, किन्तु ऐसा शान्तिका समय मिल ही नहीं रहा था। यदि मैं प्रातःकाल और सन्ध्याकालकी प्रार्थनाके समय आश्रममें न रह सकूँ तो यह मुझे बहुत खलता है। और इसके अतिरिक्त कल तो संगीतशास्त्री आये थे, इसलिए उनका मधुर स्वर सुननेका सुख तो मैं हरगिज नहीं छोड़ सकता था। मैंने बहुत-से मोह छोड़ दिये हैं, किन्तु अभी कई मोह मुझमें बचे हुए हैं। आजकल तो, संगीतके बारेमें जितना मोह था, उतना संगीत मुझे आश्रममें उपलब्ध है। इसलिए कल अनसूयाबहनका वहाँ रहनेका बहुत आग्रह होनेपर भी मैं यहाँ आ ही गया। ऐसे मौकेपर यहाँके संगीतसे मुझे बड़ी शान्ति मिलती है। आप लोगोंके सामने अपनी आत्मा उँडेलनेके लिए यही ठीक अवसर है। किसी अन्य समयमें जब आप अपने कर्तव्य-कर्ममें लगे हुए हों, तब उसे छुड़वाकर आपको यहाँ इकट्ठा करना भी ठीक नहीं।

मुझे अपने देश भारतकी प्राचीन संस्कृतिमें से एक ऐसा तत्त्व मिला है, जिसे यदि यहाँ बैठे हुए हम थोड़ेसे लोग ही जान लें, तो भी समस्त जगत्के साम्राज्यका उपभोग कर सकते हैं। किन्तु उस तत्त्वको बतानेसे पहले मुझे एक बात कहनी है। इस समय भारतमें एक ही ऐसे व्यक्ति हैं, जिनके पीछे लाखों लोग पागल हैं, जिनके लिए देशके लाखों लोग अपने प्राण देनेको तैयार हो जायेंगे। वे व्यक्ति हैं तिलक महाराज। मुझे कई बार ऐसा

१. उत्तरमें १७ मार्चको गवर्नरने इस प्रकार लिखा : "खेड़ा जिलेमें जो-कुछ हो रहा है, उससे सरकारने अपने-आपको पूरी तरह अवगत रखा है, और उसे पूरा सन्तोष है कि कलक्टर तथा राजस्व विभागके अधिकारियोंने नियम-कानूनकी सख्त पाबन्दी रखते हुए जो-कुछ किया है, उसमें किसानोंके हितोंका बराबर ध्यान रखा है।"

२. अभिप्राय मिल-मजदूरोंकी हड़तालके सम्बन्धमें अपने उपवासके निर्णयसे है।

लगता है कि तिलक महाराजके पास यह बडी पूँजी है। यह उनका महाधन है। उन्होने 'गीता-रहस्य'[1] ग्रन्थ लिखा है। किन्तु मुझे ऐसा लगता ही रहता है कि उन्होने भारतकी प्राचीन भावनाको, भारतकी आत्माको नही पहचाना और इसीलिए इस समय देशकी यह दशा बनी हुई है। उनके मनकी गहराईमें यही बात है कि हम यूरोपीयोके जैसे बन जायें। आजकल यूरोपकी जैसी शोभा हो रही है — अर्थात् जिनके मनमे यूरोपीय विचार घुस गये हैं, उन्हे यूरोप जितना शोभायमान लगता है — वैसा ही भारतको शोभायमान करना उनका उद्देश्य है। उन्होने छ वर्ष तक कारावासका कष्ट सहन किया, यूरोपके ढंगकी बहादुरी दिखानेके लिए और इस विचारसे कि जो लोग इस समय हमे सता रहे है, वे यह देख लें कि हम जेलमे दस-बीस वर्ष कैसे रह सकते हैं। साइबेरियाकी जेलोमे रूसके बहुतसे बडे-बडे लोग उम्र-भर सडे, परन्तु वे कोई आत्म-ज्ञानके कारण जेलमें नही गये थे। इस तरह जीवन गँवा देना अपना परम धन बेकार गँवा देने जैसा है। तिलक महाराजने कारावासका यह कष्ट आध्यात्मिक दृष्टिसे भोगा होता, तो आज हालत दूसरी ही होती और उनकी जेल-यात्राके परिणाम दूसरे ही होते। मैं उन्हे यही बात समझाना चाहता हूँ। बहुत बार अत्यन्त विनयपूर्वक जितना मुझसे कहा जा सकता है उतना मैंने उनसे कहा है। हा, मैंने उन्हें यह बात स्पष्ट नही कही या लिखी। मैंने उन्हे जो-कुछ लिखा है, उसमें मेरा कहना गौण तो जरूर रह जाता है। किन्तु तिलक महाराजकी निरीक्षण-शक्ति इतनी जबरदस्त है कि वे समझ जाते हैं। फिर भी यह बात ऐसी है कि कहकर या लिखकर नही समझाई जा सकती। उसका अनुभव करानेके लिए मुझे उन्हे प्रत्यक्ष उदाहरण देना चाहिए। परोक्ष रूपमें मैंने उन्हे कई बार कहा है, परन्तु प्रत्यक्ष दृष्टान्त देनेका अवसर मुझे मिले तो उसे कभी नही छोडना चाहिए और यह ऐसा ही अवसर है।

ऐसे ही दूसरे व्यक्ति है मदनमोहन मालवीय। भारतके नेताओमें अर्थात् राजनैतिक पुरुषोमें और जिन्हे हम जानते है, उनमें वे इस समय पवित्रतम पुरुष है। अदृश्य पवित्र पुरुष तो बहुत होगे। किन्तु इतने पवित्र होते हुए भी और धर्मका ज्ञान रखते हुए भी उन्होने भारतकी भव्य आत्माको अच्छी तरह नही पहचाना, ऐसा मुझे लगता है। यह मैंने बहुत कह दिया। मालवीयजी यह सुनकर मुझपर क्रोध कर सकते हैं कि 'यह बहुत अभिमानी मनुष्य है।' किन्तु बात बिलकुल सच्ची है, इसलिए इसे कहते हुए मुझे जरा भी हिचकिचाहट नही होती। मैंने उनसे बहुत बार कहा है। उनके साथ मेरा बहुत ही प्रेमपूर्ण सम्बन्ध है, इसलिए मैंने उनसे बहुत झगडा भी किया है। फिर भी मेरे सारे तर्कके अन्तमें उन्होने यही कहा है कि यह सारी बात सही है, पर वे उसे मान नही सकते। उन्हे भी प्रत्यक्ष उदाहरण देनेका यह अवसर मुझे मिला है। मैं इस समय इन दोनोको बता सकता हूँ कि भारतकी आत्मा क्या है।

बीस दिनसे मैं दस हजार मजदूरोसे मिलता-जुलता रहा हूँ। उन्होने मेरे सामने खुदा या ईश्वरको बीचमे रखकर प्रतिज्ञा ली है और प्रतिज्ञा लेते समय उन्होने बहुत उत्साह दिखाया। वे लोग कैसे भी हो, परन्तु यह तो मानते ही है कि खुदा या ईश्वर है।

१. मांडले जेलमें लिखित।

उनकी धारणा यह थी कि उन्होंने बीस दिन प्रतिज्ञाका पालन किया, इसलिए भगवान् उनकी मदद जरूर करेगा। किन्तु भगवान्ने इतने अर्सेमें मदद नहीं की और उनकी ज्यादा परीक्षा ली, इसलिए उनकी आस्था कमजोर पड़ गई। उन्हें यह महसूस हुआ, 'हमने इतने दिनोंतक इस एक व्यक्तिके कहनेपर भरोसा रखकर दुःख उठाया, परन्तु हमें कुछ न मिला। हमने इसका कहना न माना होता और दगे-फसाद किये होते, तो हमें पैंतीस फीसदी तो क्या उससे भी ज्यादा थोड़े ही समयमें मिल जाता।' यह उनके मनका विश्लेषण है। मैं इस स्थितिको कदापि सहन नहीं कर सकता। मेरे सामने ली हुई प्रतिज्ञा इस तरह आसानीसे तोड़ दी जाये और ईश्वरके प्रति श्रद्धा कम हो जाये, यह तो धर्मका लोप हुआ ही कहा जायेगा। और इस तरह जिस काममें मैं शामिल होऊँ, उसमें धर्मका लोप होता देखूँ, तो मैं भी जी ही नहीं सकता। मुझे मजदूरोंको यह समझाना चाहिए कि प्रतिज्ञा लेनेका क्या अर्थ है। इसके लिए मैं क्या कर सकता हूँ, यह भी मुझे उन्हें बताना चाहिए। यदि मैं उन्हें यह न बताऊँ, तो मैं कायर कहलाऊँगा। यदि कोई व्यक्ति एक व्यो [व्याम] कूद सकनेका दावा करे और एक बित्ता भी न कूद सके तो यह उसकी कायरता ही होगी। तब मैंने इन दस हजार लोगोंको पतनसे बचानेके लिए यह कदम उठाया। इसीलिए मैंने यह प्रतिज्ञा ली और उसका बिजलीका-सा असर हुआ। मैंने यह सोचा ही नहीं था। वहाँ हजारों आदमी थे। उनकी आँखोंसे आँसुओंकी धारा बहने लगी। उन्हें अपनी आत्माका भान हुआ, उनमें चैतन्य आया और उन्हें अपनी प्रतिज्ञाका पालन करनेका बल मिला। मुझे तुरन्त यह विश्वास हो गया कि भारतसे धर्मका लोप नहीं हुआ है। यहाँके लोग आत्माको पहचान सकते हैं। यह बात तिलक महाराज तथा मालवीयजीकी समझमें आ जाये, तो भारतमें जबरदस्त काम किया जा सकता है।

मैं इस समय आनन्द-विभोर हो रहा हूँ। इससे पहले जब मैंने ऐसी प्रतिज्ञा ली थी, तब मेरे मनमें ऐसी शान्ति नहीं थी। शरीरकी जरूरतें भी मुझे महसूस होती थीं। इस बार मुझे शरीरकी जरूरतें मालूम ही नहीं होतीं। मेरे मनमें पूरी शान्ति है। ऐसा जीमें आता है कि अपनी आत्मा आप लोगोंके सामने उँडेल दूँ। लेकिन मैं आनन्दसे विह्वल भी हो गया हूँ।

मेरी प्रतिज्ञा मजदूरोंसे उनका प्रण पलवानेके लिए है, लोगोंको प्रतिज्ञाका मूल्य समझानेके लिए है। देशमें लोग चाहे जब प्रतिज्ञा लें और चाहे जब उसे तोड़ें, यह देशकी हीन अवस्थाका सूचक है। फिर यदि दस हजार मजदूर अपनी प्रतिज्ञा तोड़ देते तो इससे देशकी अधोगति ही हो जाती। मजदूरोंका सवाल तो फिर कभी उठाया ही नहीं जा सकता। जहाँ-तहाँ यह उदाहरण दिया जाता कि दस हजार मजदूरोंने बीस दिन तक भारी दुःख उठाया था और गांधी जैसा व्यक्ति उनका नेता था, फिर भी वे न जीते। इसलिए मुझे यह सोचना पड़ा कि मजदूर अपनी बातपर किस तरह दृढ़ रह सकते हैं और इस कार्यको मैं अपने-आपको कष्ट दिये बिना कैसे कर सकता हूँ? प्रतिज्ञाका पालन करनेके लिए ऐसे कष्ट भी उठाने पड़ते हैं, यह उदाहरण उनके सामने रखना जरूरी मालूम हुआ। बस मैंने यह प्रतिज्ञा ली। मैं समझता हूँ कि मेरी प्रतिज्ञा दोषयुक्त है। यह सम्भव है कि इस प्रतिज्ञाके कारण मिल-मालिक मुझपर दया करके मजदूरोंको ३५

प्रतिशत वृद्धि दे दे। मेरी इच्छा तो यही है कि यदि उन्हे न्याययुक्त मालूम हो, तो ही वे ३५ प्रतिशत वृद्धि दे, दयाभावसे कुछ भी न दें। फिर भी उसका स्वाभाविक परिणाम वही होगा और उस हदतक यह प्रतिज्ञा मेरे लिए लज्जाजनक ही है। किन्तु मैंने दो बातोंका विचार किया. अपनी लज्जाका और मजदूरोकी प्रतिज्ञाका। पलडा दूसरी तरफ झुका और मैंने मजदूरोके लिए लज्जाका भार उठा लेनेका निश्चय किया। सार्वजनिक कार्य करनेमे इस तरहकी लज्जाका भार उठानेके लिए भी मनुष्यको तैयार रहना चाहिए। इस प्रकार मेरी प्रतिज्ञा मिल-मालिकोके लिए धमकीके रूपमे है ही नही और मै तो यही चाहता हूँ कि मिल-मालिक साफ तौरपर इस बातको समझे और यदि मजदूरोकी माँग न्यायपूर्ण प्रतीत हो, तो ही उनको ३५ प्रतिशत वृद्धि दें। मजदूरोसे मेरी यह प्रार्थना है कि वे मिल-मालिकोके पास जाकर उनसे यही बात कहे।

[गुजरातीसे]

महादेवभाईनी डायरी, खण्ड ४

१७८. अम्बालाल साराभाईको लिखे पत्रका अंश

साबरमती

[मार्च १७, १९१८]

मुझे जिमानकी इच्छाके बदले आप अपनी न्यायवृत्तिका अधिक खयाल रखियेगा। मेरा उपवास मेरे लिए तो अतिशय आनन्ददायक है। अतएव मित्रोके उससे दुःखी होनेकी कोई वजह मै नही देखता। मजदूरोको जो न्यायपूर्वक मिलेगा, वही अच्छी तरह हजम होगा —— अधिक निभेगा। सामान्य मनुष्योको तो साफ बात ज्यादा अच्छी लगती है। ३५ प्रतिशत, २० प्रतिशत और पच —— यह सारी 'मूर्खता, अपने धर्म या गर्व' की रक्षाके लिए हम कर सकते है, सह सकते है। मजदूर इसे प्रपच मानेंगे, क्योकि वे सरल है। इसलिए मुझे अधिक अच्छा तो तब मालूम होगा, जब दूसरा कोई बेहतर रास्ता मिले। 'आप ऊपरकी शर्तें मंजूर कराना चाहेगे, तो मै उन्हे भी मजूर करूँगा, पर जल्दबाजी न होने दूंगा।' पच मिलकर तुरन्त ही फैसला कर डाले और उन्ही दरोका हम ऐलान करे, यानी पहले दिन ३५, दूसरे दिन २० और तीसरे दिन पच-फैसलेके मुताबिक। इसमें भी मूर्खता तो है, लेकिन स्पष्टता भी है। तीसरे दिनके आँकड़ेका ऐलान आज ही करना होगा।

[गुजरातीसे]

एक धर्मयुद्ध

१७९. भाषण : अहमदाबादके मिल-मजदूरोंकी सभामें

[मार्च १७, १९१८]

मिल-मालिकोंने आकर मुझसे कहा "आपकी खातिर हम ३५ प्रतिशत दे देंगे।" लेकिन उनका मेरी खातिर ३५ प्रतिशत देना मुझे तलवारकी धारकी तरह खटकता है। मैं इस चीजको जानता था, फिर भी मैं अपनी प्रतिज्ञा नहीं छोड़ सका, क्योंकि मैंने दूसरी तरफ यह सोचा कि १०,००० आदमियोंका अपनी प्रतिज्ञासे मुंह मोड़ना एक ईश्वरीय प्रकोप ही होगा। मेरे लिए तो यह बहुत ही शरमकी बात है कि मेरी खातिर आपको ३५ प्रतिशत मिले।

[गुजरातीसे]

एक धर्मयुद्ध

१८०. पत्र : जमनालाल बजाजको

साबरमती

माघ कृष्ण [मार्च १८, १९१८[1] से पूर्व]

सुज्ञ भाई श्री जमनालालजी

आपका पत्र मीला है। मेरा नागपुर आनेका मोकुफ रहा है। इस वखत तो यहाका कार्य मेरी सब क्षण ले लेता है। मजदूरोंकी हड़ताल चल रही है और खेडामें कीमानोंपर सरकारका जुलम चल रहा है। दोनों कार्य भारी हैं।

आपका

मोहनदास गांधी

गांधीजीके स्वाक्षरोंमें मूल हिन्दी पत्र (जी० एन० २८३९) की फोटो-नकलसे।

१. अहमदाबादके मिल-मजदूरोंकी हड़ताल इस दिन समाप्त हुई थी।

१८१. भाषण: आश्रम-सदस्योंके सम्मुख[1]

मार्च १८, १९१८

समझौता बहुत करके आज दस बजेसे पहले हो जायेगा। इस समझौतेपर मैं प्रमाद-रहित स्थितिमे विचार कर रहा हूँ। यह ऐसा समझौता है कि जिसे मैं कभी स्वीकार न करता। किन्तु इसमें मेरी प्रतिज्ञाका दोष है। मेरी प्रतिज्ञामे बहुत-से दोष थे। इसका अर्थ यह नही है कि उसमें गुण कम और दोष अधिक थे, बल्कि यह है कि जैसे वह अनेक गुणोसे युक्त थी, वैसे ही बहुतसे दोषोसे युक्त भी थी। मजदूरोके सम्बन्धमें वह महान् गुणोसे युक्त थी और तदनुसार उसके परिणाम भी सुन्दर हुए हैं। मालिकोके सम्बन्धमे वह दोष-युक्त थी और उस हदतक मुझे झुकना पडा है। मालिकोपर मेरे उपवासका दबाव पडा है। मैं इससे कितना ही इनकार करूँ, तो भी यह लोगोको महसूस हुए बिना नही रह सकता और दुनिया मेरी बात मानेगी भी नही। "मालिक मेरी इस अनिष्ट दशाके कारण स्वतन्त्र नही रहे और जब कोई मनुष्य दब रहा हो, तब उससे कुछ लिखवा लेना, उससे कोई शर्त मजूर करा लेना या उससे कुछ ले लेना न्याय-विरुद्ध है। सत्याग्रही कभी ऐसा नही कर सकता और इसीलिए मुझे इस मामलेमें झुकना पडा है। लज्जासे दबा हुआ मनुष्य आखिर क्या कर सकता है?" मैं थोडी-थोडी माँग करता गया। उसमे से उन्होने खुशीसे जितनी स्वीकार की, उतनी ही मुझे लेनी पडी। मैं पूरी माँग रखता तो वे पूरी स्वीकार कर लेते। किन्तु उन्हे ऐसी स्थितिमें डालकर उनसे मैं उस सबको ले ही नही सकता था। यदि मैं लेता तो वह मेरे लिए उपवास तोडकर नरकका भोजन करनेके बराबर होता। और अमृतका भोजन भी यथासमय ही करनेवाला मैं नरकका भोजन कैसे कर सकता था?

मेरा यह खयाल है कि हमारे शास्त्रोमे कुछ वचन महान् अनुभवके परिणामस्वरूप लिखे गये है। थोरो कहता है कि जहाँ अन्याय प्रवर्तित हो वहाँ शुद्ध मनुष्य धनवान् हो ही नही सकता और जहाँ न्याय प्रवर्तित हो, वहाँ उसे किसी चीजकी तगी नही हो सकती। हमारे शास्त्रोमे इससे भी अधिक कहा गया है। वे कहते हैं कि जहाँ अन्याय प्रवर्तित हो वहाँ शुद्ध मनुष्य जीवित ही नही रह सकता। इसीलिए हममें से कुछ लोग किसी प्रवृत्तिमें नही पडते। इसका कारण यह नही है कि वे प्रवृत्तिसे ऊब जाते हैं, बल्कि यह है कि वे कोई प्रवृत्ति चला ही नही सकते। उन्हे दुनियामे इतना अधिक दम्भ दिखाई देता है कि वे उसमें रह ही नही सकते। बहुत-से पाखडियोमें एक शुद्ध मनुष्य हो, तो उसे उन पाखडियोको छोड देना चाहिए या खुद अशुद्ध बन जाना चाहिए। दुनियाके कुछ शुद्ध मनुष्य हिमालय या विन्ध्याचलमे चले जाते हैं और अपने शरीरोको सुखा देते हैं। कुछ लोगोको यह शरीर मिथ्या लगता है। जो आत्माकी अमरता और सर्वव्यापकतामें विश्वास रखते है, वे अपने शरीरोको वही त्याग देते हैं और केवल मोक्षको

१. यह समझौतेके दिन प्रात.काल दिया गया था।

प्राप्त करते हैं। कुछ वहाँसे वापस भी आ जाते हैं, किन्तु इतने शुद्ध होकर कि बादमें दुनियाके दम्भमें रहकर भी वे अपने निश्चित विचारोंपर चल सकते हैं। ऐसे ज्ञानियोंके साथ जब मैं अपनी इस स्थितिकी तुलना करता हूँ, तब मैं अपने-आपको इतना पामर अनुभव करता हूँ कि कुछ न पूछो। फिर भी मुझे अपनी शक्तिका अन्दाज न हो, ऐसी बात नहीं है। लेकिन बाहर उसका अन्दाज जितना लगाया जाना चाहिए, उससे बहुत अधिक लगाया जाता है। मुझे दिन-प्रतिदिन दुनियामें इतना अधिक दम्भ दिखाई दे रहा है कि कई बार ऐसा प्रतीत होता है कि मैं यहाँ जी ही नहीं सकता। मैंने फीनिक्समें कई बार कहा है कि किसी दिन मैं तुम सबके बीच न दिखाई दूँ, तो कोई आश्चर्य न करना। मुझे किसी दिन ऐसी तीव्र अनुभूति हो गई तो मैं ऐसी जगह चला जाऊँगा, जहाँ मुझे कोई न पा सकेगा। उस समय तुम घबराना मत, बल्कि मैं तुम्हारे पास ही हूँ, यह समझकर अपने हाथमें लिये कामको करते चले जाना।

[गुजरातीसे]

महादेवभाईनी डायरी, खण्ड ४

१८२. भाषण: अहमदाबादके मिल-मजदूरोंकी सभामें

[मार्च १८, १९१८][1]

जो समझौता मैं आपके सामने पेश करनेवाला हूँ, उसमें सिवा इसके कि मजदूरोंकी टेक रह-भर जाती है, और कोई बात नहीं है। मैंने मालिकोंको अपनी शक्ति-भर समझाया, हमेशाके लिए ३५ प्रतिशत देनेको कहा। परन्तु यह बात उन्हें बहुत भारी मालूम हुई। अब मैं आपसे एक बात कह दूँ। वह यह कि हमारी माँग एकतरफा थी। लड़ाईसे पहले हमने मालिकोंका पक्ष जाननेकी माँग पेश की थी, परन्तु तब उन्होंने उसे माना नहीं था। अब वे इस प्रस्तावको मंजूर करते हैं कि मामला पंचको सौंप दिया जाये। मैं भी कहता हूँ कि यह झगड़ा पंचके सामने जरूर जाये। पंचसे[2] मैं ३५ प्रतिशत ले सकूँगा। अगर पंच कुछ कम देनेका निर्णय देंगे, तो मैं मान लूँगा कि हमने माँगनेमें ही भूल की थी। मालिकोंने मुझसे कहा कि जैसी हमारी प्रतिज्ञा है, वैसी उनकी भी प्रतिज्ञा है। मैंने उन्हें कहा कि ऐसी प्रतिज्ञा करनेका उन्हें अधिकार नहीं। लेकिन उनका आग्रह रहा कि उनकी प्रतिज्ञा भी सच है। मैंने दोनोंकी प्रतिज्ञापर विचार किया। मेरे उपवास मार्गमें बाधक बने। मैं उनसे यह तो नहीं कह सकता था कि मुँहमाँगा दोगे, तभी मैं उपवास तोड़ूँगा, यह तो वीरताकी बात न होती। इसलिए मैंने मान लिया कि फिलहाल तो दोनों पक्षोंकी प्रतिज्ञाएँ रहें, और बादमें पंच जो फैसला दे दें, सो सही।

१. समझौता १८ तारीखको सवेरे हुआ। उसी दिन ११ बजेके करीब गांधीजीने मजदूरोंको उसकी सूचना दी। इस सभामें कमिश्नर और अहमदाबादके प्रमुख नागरिकोंने भाग लिया था।

२. दोनों पक्षोंने प्रो० आनन्दशंकर ध्रुवको पंच बनाना स्वीकार किया।

इसलिए थोड़ेमे हमारे समझौतेका सार यह है कि पहले दिन हमे अपनी प्रतिज्ञाके अनुसार ३५ प्रतिशत ज्यादा मिले, दूसरे दिन मालिकोकी प्रतिज्ञाके अनुसार २० प्रतिशत मिले। और तीसरे दिनसे पचका फैसला होने तक २७।। प्रतिशत मिले। बादमे पच ३५ प्रतिशतका फैसला दे, तो मालिक ७।। प्रतिशत हमे और दे और २७।। से कमका फैसला दे तो उतनी रकम हम मालिकोको लौटा दे।

आपके लिए मै जो-कुछ लाया हूँ, वह हमारी प्रतिज्ञाके शब्दोकी पूर्तिके लिए काफी होगा, आत्माके लिए नही। आत्मावाले अभी हम नही है, इसलिए शब्दके पालनसे ही हमे सन्तोष करना होगा।

हम आपसमे मिलकर विचार-विमर्श करते रहे है, अब हमसे बिना मिले आप कोई प्रतिज्ञा न कर बैठना। जिसे अनुभव नही, जिसने कुछ किया-धरा नही, वह प्रतिज्ञाका भी अधिकारी नही। बीस वर्षोके अनुभवके बाद मै इस परिणामपर पहुँचा हूँ कि प्रतिज्ञा लेनेका मुझे अधिकार है। मैने देखा है कि आप अभी प्रतिज्ञा लेनेके लायक नही हुए है। अतएव अपने बुजुर्गोसे पूछे बिना प्रतिज्ञा न लेना। प्रतिज्ञा लेनी ही पडे, तो हमसे आकर मिलना। जब ऐसा समय आयेगा, तो विश्वास रखिए कि आजकी तरह तब भी हम आपके लिए मरनेको तैयार रहेगे। लेकिन याद रखिए कि जो प्रतिज्ञा आप हमारे सामने लेगे, उसीके लिए हम आपकी मदद कर सकेगे। भूलसे की जानेवाली प्रतिज्ञा तोडी भी जा सकती है। आपको तो अभी यह भी सीखना है कि प्रतिज्ञा कब और किस तरह लेनी चाहिए।[1]

[गुजरातीसे]

एक धर्मयुद्ध

१८३. भाषण : अहमदाबादके मिल-मजदूरोंकी सभामें[2]

[मार्च १८, १९१८]

मुझे लगता है कि जैसे-जैसे दिन बीतते जायेगे, वैसे-वैसे अहमदाबाद तो ठीक, सारा हिन्दुस्तान इन २२ दिनोकी लडाईके लिए गर्वका अनुभव करेगा, और हिन्दुस्तानवाले यह मानेंगे कि जहाँ इस तरहकी लड़ाई चल सकती है, वहाँ आशाकी बहुत-कुछ गुंजाइश है। इस लडाईमे वैर-भावको कोई स्थान नही रहा है। मैने ऐसी लडाईका अभीतक अनुभव नही किया था। वैसे प्रत्यक्ष या अप्रत्यक्ष रीतिसे कई लडाइयोका अनुभव मुझे है, लेकिन उनमें से एक भी ऐसी नही याद पडती कि जिसमे दुश्मनी या कडवाहट इतनी कम रही हो। आशा है, जैसी शान्ति आपने लडाईके दिनोमें रखी थी, वैसी आप हमेशा बनाये रखेगे।

१. भाषणका बाकी हिस्सा उपलब्ध नहीं है।

२. जिस दिन समझौता हुआ उस दिन शामको अम्बालाल साराभाईके घरके अहातेमें एक सभा हुई थी; मिल-मालिकोंने मजदूरोंको मिठाई बाँटी थी; समझौतेके स्वागतमें अम्बालाल साराभाईके भाषणके बाद सभाको सम्बोधित करते हुए गांधीजीने उपर्युक्त उद्गार प्रकट किये थे।

मैं आपकी [मजदूरोंकी] ओरसे मालिकोंसे क्षमा माँगता हूँ। मैंने उन्हें बहुत दुःख दिया है। मेरी प्रतिज्ञा तो आपके लिए थी, लेकिन दुनियामें हमेशा हर चीजके दो पहलू रहते आये हैं, इसी कारण मेरी प्रतिज्ञाका प्रभाव मालिकोंपर भी पड़ा है। मैं नम्रतासे उनसे क्षमा चाहता हूँ। मैं जितना मजदूरोंका सेवक हूँ, उतना ही आपका [मालिकोंका] सेवक भी हूँ। मेरी प्रार्थना केवल यही है कि आप मेरी सेवाओंका ठीक-ठीक उपयोग कीजिएगा।

[गुजरातीसे]

एक धर्मयुद्ध

१८४. तार: एनी बेसेंटको

[मार्च १८, १९१८]

ईश्वरको धन्यवाद। सब निबट गया। सम्मानप्रद समझौता हो गया। निर्माणका कठिन कार्य अब आरम्भ। हम सभी आपके कृपा-भावके कृतज्ञ।[1]

गांधी

[अंग्रेजीसे]

न्यू इंडिया, १९–३–१९१८

१८५. अहमदाबादके मिल-मजदूरोंकी हड़ताल

मार्च १९, १९१८

पत्रिका — १७

दोनोंकी जीत

पिछली पत्रिकाओंमें हम देख चुके हैं कि सत्याग्रहमें हमेशा दोनों पक्षोंकी जीत होती है। जो सत्यके लिए लड़ा और जिसने सत्यको प्राप्त किया, वह तो जीता ही लेकिन जिसने सत्यका विरोध किया और अन्तमें सत्यको पहचाना और उसे स्वीकार किया वह भी जीता ही माना जाता है। इस विचारके अनुसार चूंकि मजदूरोंकी प्रतिज्ञा रही है, इसलिए विजय दोनों पक्षोंकी हुई है। मालिकोंने भी प्रतिज्ञा की थी कि वे २० प्रतिशतसे ज्यादा नहीं देंगे, हमने उनकी इस प्रतिज्ञाका भी मान रखा है। मतलब यह कि दोनोंकी लाज रही है। अब यह देखें कि समझौता क्या हुआ है

१. मजदूर कल, यानी तारीख २० को कामपर जायें। ता० २० के दिन उन्हें ३५ प्रतिशत इजाफा मिले, और ता० २१ को २० प्रतिशत।

१. आशय 'धर्मयुद्ध' में जीतसे है। इस तारको एनी बेसेंटने इस टिप्पणीके साथ प्रकाशित किया: "बतलाना मुश्किल है कि इस समाचारसे कितनी राहत मिली। हम उनके ही शब्दोंमें केवल इतना कह सकते हैं: 'ईश्वरको धन्यवाद'।"

२. ता० २२ से आगे, ३५ प्रतिशत तक, पच जितना प्रतिशत तय करे, उसके अनुसार इजाफा दिया जाये।

३. गुजरात्के विद्वत् शिरोमणि, साधुपुरुष, गुजरात कॉलेजके अध्यापक और वाइस प्रिंसिपल श्री आनन्दशकर ध्रुव, एम० ए०, एल एल० बी० पच नियुक्त किये जायें।

४ पच महोदयका फैसला तीन महीनेके अन्दर प्रकट हो जाये। इस बीच मजदूरो को २७।। प्रतिशत इजाफा दिया जाये। यानी आधी रकम मजदूर छोडें और आधी मालिक छोड़ें।

५. पंच-फैसलेके अनुसार २७।। प्रतिशतपर घट-बढ लेनी-देनी मानी जाये। यानी अगर पच २७।। प्रतिशतसे ज्यादाका फैसला दे, तो मालिक उतना इजाफा मजदूरोको और दें, और अगर २७।। से कमका फैसला दें, तो मजदूर उतनी रकम मालिकोको वापस लौटा दें।

इसमें दो बड़ी चीजें हासिल हुई है। एक तो मजदूरोकी प्रतिज्ञाकी रक्षा हो गई, दूसरे यह तय हुआ कि दोनो पक्षोके बीच किसी महत्त्वके प्रश्नपर झगडा खडा हो, तो उसका निर्णय हडताल द्वारा न करके पच द्वारा किया जाये। समझौतेमें यह शर्त तो नही है कि आगे दोनो पक्ष अपने आपसी झगड़ोका फ़ैसला पंचकी मारफत ही करायेंगे, लेकिन चूँकि समझौतेमे पचको मान्य रखा गया है, इसलिए माना जा सकता है कि ऐसे मौकोपर आगे भी पचकी नियुक्ति होगी। कोई यह न माने कि मामूली-मामूली बातोके लिए पच मुकर्रर किये जायेंगे। मालिको और मजदूरोके बीच खडे होनेवाले मतभेदोको मिटानेके लिए हमेशा किसी तीसरे पक्षको बीचमें पड़ना पड़े, यह दोनोके लिए शर्मनाक है। मालिक तो इसे बरदाश्त कर ही नही सकते। वे इस शर्तपर अपना धन्धा कभी न चलायेंगे। दुनिया सदासे लक्ष्मीका सम्मान करती आई है और लक्ष्मी सदा सम्मान पायेगी। अतएव अगर मजदूर जरा-जरासी बातोके लिए मालिकोको हैरान करेंगे, तो मालिकोसे उनका कोई सम्बन्ध न रह सकेगा। हम मानते हैं कि मजदूर ऐसा कभी करेंगे ही नही। हम यह कह देना जरूरी समझते हैं कि मजदूर कभी बिना सोचे हडताल न करे। अगर वे हमसे बिना पूछे हडताल करेंगे, तो हम उनकी मदद न कर सकेंगे। पूछा गया है कि एक दिन ३५ प्रतिशत लेकर बैठ जानेमें प्रतिज्ञाका पालन क्या हुआ? यह तो बालकोको बहलाने-फुसलाने जैसी बात हुई। कुछ समझौतोमें ऐसा हुआ है। लेकिन इसमें ऐसा नही हुआ। हमने जानबूझकर, समयका विचार करके, एक ही दिनके ३५ प्रतिशत मजूर किये हैं। हम ३५ प्रतिशत लिये बिना कामपर नही जायेंगे, इसके दो अर्थ होते हैं। एक तो यह कि हम हमेशा ३५ प्रतिशत इजाफा चाहेंगे, उससे कम कभी मंजूर नही करेंगे, दूसरा यह कि हम ३५ प्रतिशत लेकर कामपर जायेंगे, फिर वह एक दिनके लिए भी मिले, तो काफी है। जिसने निश्चय किया हो कि हमेशाके लिए ३५ प्रतिशत माँगनेमें शुद्ध न्याय है, और उतना पानेके लिए जिसके अन्दर अनन्त शौर्य हो, वह तो तभी अपनी प्रतिज्ञा सफल हुई समझेगा, जब उसे ३५ प्रतिशत हमेशाके लिए मिलेंगे। लेकिन हमारा निश्चय ऐसा नही था। हम पचसे न्याय करानेको हमेशा तैयार थे। ३५ प्रतिशतका निश्चय हमने एकतरफा विचार करके किया था। ३५ प्रतिशतकी सलाह देनेसे पहले हम मालिकोका पक्ष उन्होके मुँहसे सुन लेना चाहते थे। दुर्भाग्यसे वैसा न हो सका। इसलिए हमने जितना

हो सका उतना उनके पक्षका विचार करके ३५ प्रतिशतकी सलाह दी। लेकिन हम यह नही कह सकते कि हमारे द्वारा निश्चित ३५ प्रतिशत इजाफेकी माँग सही ही है। हमने ऐसा कभी कहा भी नही। अगर मालिक हमें हमारी भूल बतायें, तो जरूर ही हम कम इजाफा लेनेकी सलाह दें। यानी अगर पचको कम इजाफा देना ठीक मालूम पडे और उतना हम मंजूर कर लें, तो उसमे हमारी टेकको जरा भी आँच नही आती। हमने पचके उसूलको हमेशासे माना है। हमें आशा है कि ३५ प्रतिशत ठहरानेमें हमने कोई भूल नही की है। इसलिए हमारा खयाल है कि उतना मिलेगा। लेकिन अगर हमें अपनी भूल मालूम हो जाये, तो हम खुशीसे कम ले लेंगे।

तीन महीनेकी मुद्दत खास तौरपर हमारी ओरसे ही माँगी गई है। मालिक तो पन्द्रह दिनकी मुद्दत मजूर करनेको तैयार थे। लेकिन हमें अपनी माँगको सही साबित करनेके लिए बम्बईमे थोडी जाँच-पडताल करनेकी जरूरत है। पच महोदयको यहाँकी स्थिति समझाने और मजदूरोके रहन-सहन की जानकारी करानेकी भी जरूरत है। जबतक वे इन सब बातोको न समझ लें, उन्हे परिस्थितिका पूरा खयाल नही आ सकता। इस तरहका सच्चा और पक्का काम कुछ ही दिनोमें पूरा नही हो सकता। फिर भी जहाँ-तक हो सकेगा काम जल्दी ही पूरा किया जायेगा।

कुछ भाइयोने तालाबन्दीके दिनोकी तनख्वाह लेनेकी इच्छा जाहिर की है। हमें कहना चाहिए कि हम यह तनख्वाह नही माँग सकते। हमने २० प्रतिशत लेनेसे इनकार किया इसीलिए तो तालाबन्दी या हडतालमें से किसी एककी जरूरत खडी हुई। हमने २५ दिन तक जो तकलीफ उठाई, वह हमारे लिए कर्त्तव्य-रूप थी और उसमें हमारा स्वार्थ था। इन दुःखकी कीमत हमने प्राप्त कर ली है। यह समझौता ही वह कीमत है। अब हम तालाबन्दीके दिनोकी तनख्वाह कैसे माँग सकते हैं? उन दिनोकी तनख्वाह माँगनेका मतलब यह होगा कि हम मालिकोके पैसेसे लडाई लडें। मजदूरोके लिए यह एक शरमानेवाला विचार है। लडवैये अपनी ताकतपर ही लड सकते हैं। दूसरे, मालिकोने मजदूरोको तनख्वाह चुका दी थी। अब तो यह भी कहा जा सकता है कि मजदूर नये सिरेसे नौकरी शुरू करते हैं। इन सब बातोका विचार करते हुए मजदूरोको तालाबन्दीके समयकी तनख्वाह लेनेका खयाल छोड देना चाहिए।

मजदूरोको तनख्वाह २० दिन बाद मिलेगी। इस बीच मजदूर क्या करें? बहुतोकी जेबें बिलकुल खाली होगी। जिन्हे तनख्वाह मिलनेके दिनसे पहले मददकी जरूरत हो, उन्हें चाहिए कि वे मालिकोंसे नम्रतासे विनती करें, हमें विश्वास है कि मालिक उनकी इस प्रार्थनापर कुछ सहूलियत कर देंगे।

मजदूरोको याद रहे कि अबसे आगेकी उनकी हालतका आधार उनके कामपर रहेगा। यदि वे सच्ची नीयतके साथ, नम्रता और उत्साहसे नौकरी करेंगे, तो मालिकोकी मेहरबानी पा सकेंगे और उनसे बहुत-कुछ मदद ले सकेंगे। यह सोचना कि सब-कुछ हमारे मारफत ही मिल सकेगा, गलत होगा। सकटके अवसरपर मजदूरोकी सेवा करनेके लिए हम तैयार हैं। लेकिन जहाँतक हो सके, मालिकोको माँ-बाप समझकर उन्हींसे सब-कुछ लेनेमें मजदूरोका हित है।

अब शान्तिकी आवश्यकता है। छोटी-मोटी तकलीफें सहन कर लेनी हैं।

अगर आप इजाजत देंगे, तो आपमें से जिन्हें कुछ बुरी आदतें पड़ी हुई हैं, उनकी उन आदतोंको सुधारनेमें कुछ मदद करनेका हमारा इरादा है। हम आपको और आपके बालकोंको तालीम देनेकी भी उम्मीद रखते हैं। हम चाहते हैं कि आपकी नैतिकता बढ़े, आपकी और आपके बच्चोंकी तन्दुरुस्ती बढ़े और आपकी माली हालत सुधरे। अगर आप इजाजत देंगे, तो हम इसके लिए आवश्यक काम शुरू करेंगे।

मजदूरोंकी बड़ीसे-बड़ी जीत तो यह है कि भगवानने — खुदाने — उनकी टेक या लाज रख ली है। जिसका ईमान रह गया, उसका सब-कुछ रह गया। ईमान जाये और दुनियाका राज भी मिले, तो वह धूलके बराबर है।

[गुजरातीसे]

एक धर्मयुद्ध

१८६. पत्र : एक सार्वजनिक कार्यकर्त्ताको

मार्च १९, १९१८

भाईश्री,

आपका पत्र मिला। अगर आपको मेरे हाथों न्याय मिला ही नहीं, तो आप मेरा त्याग क्यों नहीं करते? आपसे मैंने जो बात कही, वह सलाहके रूपमें ही कही थी। मैंने आपसे कहा था कि मैंने जो-कुछ कहा उसपर आप तभी चलें जब आप उसे मानें। आपने मेरी सलाह पसन्द की, इसीलिए सार्वजनिक कार्य छोड़नेका निश्चय किया। अब आपको मेरी सलाहमें कठोरताके सिवा और कुछ न दिखाई देता हो, तो आप मेरी सलाहको उठाकर ताकमें रख सकते हैं। अब मेरी सलाह है कि आप जैसे काम कर रहे थे उसी तरह फिर करें, यह मैं रोषमें नहीं लिख रहा हूँ, बल्कि ठीक समझकर लिख रहा हूँ। आपमें पहले कही हुई बातको याद रखनेकी शक्ति नहीं है, इसलिए मुझे लगता है कि अभी तो आपको केवल अपना स्वतन्त्र मार्ग ही ग्रहण करना चाहिए। इसीसे आपकी उन्नति होगी। आप मेरी सलाहको भी आज्ञा मानें और यह समझें कि उससे जरा भी इधर-उधर नहीं हुआ जा सकता, तो आपकी अधोगति होगी। मेरे खयालसे आपके लिए ठीक मार्ग होमरूलकी अपनी प्रवृत्तिमें गिरफ्तार होना ही है और आप उसीको ग्रहण करें। आप यह निश्चित समझें कि यदि आप सम्मेलनमें और ऐसे ही अन्य कार्योंमें पूरी तरह संलग्न हो जायेंगे तो मैं तनिक भी रोष नहीं करूँगा। आप जब मेरी सलाह और मेरी आज्ञाके बीचका भेद जान लें, तब मेरी सलाह भी लेते रहें। मैंने यह पत्र केवल आपके चित्तको शान्ति देनेके लिए लिखा है, दुःखी करनेके लिए नहीं।

मोहनदास गांधी

[गुजरातीसे]

महादेवभाईनी डायरी, खण्ड ४

१८७. भाषण : अहमदाबादकी सभामें[1]

मार्च २१, १९१८

श्री सी० एफ० एन्ड्रयूजका परिचय मैं इससे पहले आपको दे चुका हूँ। उन्हें हम निःसन्देह ऋषि कह सकते हैं, क्योंकि उनमें एक पवित्र ऋषिके सब गुण मौजूद हैं। वे अभी हालमें फीजीसे लौटे हैं। वहाँ वे हमारे ही कामके सिलसिलेमें गये हुए थे। वे वहाँके होटलमें नहीं ठहरे और न वे किसी धनाढ्य व्यक्तिके यहाँ ही रहे। वे मजदूरोंके घरोंमें उन्हींके बीच रहे और मजदूरोंके रहन-सहनका अध्ययन किया। इस वक्त खेडा जिलेके किसानोंका आन्दोलन चल रहा है। अब मैं अपने व्यक्तिगत विश्वासके बलपर कह सकता हूँ कि इस जिलेके कितने ही तालुकोंमें चार आनेसे कम फसल हुई है। दूसरी ओर मैं बडी जल्दी दिल्ली जाना चाहता हूँ और वहाँ जाना आवश्यक भी है। मैं यह भी नहीं चाहता कि खेडा जिलेके काममें ढील पडे। आप लोगोंको यह जानकर प्रसन्नता होगी कि फिलहाल वहाँका काम श्री एन्ड्रयूजने अपने जिम्मे ले लिया है। वे आज माननीय गवर्नर महोदयसे मिलनेके लिए बम्बई जा रहे हैं। वे मेरी ओर से उनके समक्ष खेडा जिलेके सम्बन्धमें कुछ तथ्य प्रस्तुत करेंगे और मेरा निवेदन भी कह सुनायेंगे। यदि इसका कुछ [अच्छा] परिणाम निकला, तो ठीक, अन्यथा वे उसी रविवारको नडियाद लौट जायेंगे। आप देखेंगे कि इस प्रकार उन्होंने हमारे कार्यमें भी अपना सहयोग देना शुरू कर दिया है।[2]

मुझे यह देखकर खुशी हुई कि श्री एन्ड्रयूजने अपना भाषण हिन्दीमें दिया। परन्तु उनके हिन्दीमें बोलनेका कारण मैं नहीं था। वे अंग्रेजीमें भी बहुत अच्छा बोलते हैं। कैम्ब्रिजके 'डॉन'की अंग्रेजीके सम्बन्धमें तो कहा ही क्या जा सकता है? यदि उन्हें विद्यार्थियोंकी सभामें मिल्टन या शेक्सपीयरपर व्याख्यान देना होता तो उनका अंग्रेजीमें बोलना ठीक होता। श्री एन्ड्रयूज जब पहले-पहल फीजी[3] गये थे तब उनके साथ श्री पियर्सन भी थे, परन्तु दूसरी मर्तबा वे वहाँ अकेले ही गये। इस बातका ध्यान रखनेके लिए कि फीजीमें गिरमिट-प्रथाके स्थानपर कहीं और कोई हानिकर प्रथा दाखिल न हो जाये, मैंने ही उन्हें वहाँ जानेकी सलाह दी थी। श्री एन्ड्रयूजने जिन अस्पतालोंका उल्लेख किया है उन्हें वास्तवमें अस्पताल नहीं अत्याचारके केन्द्र कहा जाना चाहिए। क्योंकि उनमें भारतीय स्त्रियोंकी दशा बहुत ही शोचनीय है। उस स्थानपर श्री एन्ड्रयूजने जब सरकारसे जनाने अस्पताल खोले जानेके लिए कहा तब उसने उत्तरमें यह सूचित किया कि यह काम बागान-मालिकोंका है और बागान-मालिकोंने यह कहा कि

१. गांधीजीने सभाके अध्यक्षकी हैसियतसे श्री एन्ड्रयूजका परिचय देते हुए ये शब्द कहे थे। श्री एन्ड्रयूजने फीजीके गिरमिटिया भारतीयोंके विषयमें भाषण दिया था।

२. एन्ड्रयूजके भाषणके पश्चात् गांधीजीने निम्नलिखित विचार व्यक्त किये थे।

३. यह बात सन् १९१५ की है।

गिरमिट-प्रथाके समाप्त हो जानेपर [वहाँकी] सरकार सब काम सभाल लेगी। स्कूलोमें बालकोंको शुरूसे ही ईसाई धर्मकी शिक्षा दी जाती है। यह बात हिन्दू और मुसलमान दोनो जातियोके बच्चोके हितमें नही है। इसके अतिरिक्त यह तालीम अग्रेजीके माध्यमसे दी जाती है, उससे हमारे देशके लोगोको कोई फायदा नही होता। नेटालमे भी ऐसी ही स्थिति है। नेटालमे भारतीय शिक्षक नही मिलते और फीजीमे भी वैसा ही है। हम उसमें इस तरह सहायता कर सकते हैं, यदि कुछ शिक्षक जो थोडी आमदनीसे ही सन्तुष्ट हो सकें, वहाँ जायें तो वे मदद कर सकते हैं। अन्य लोग एक पैसेसे लेकर दो लाख रुपये तक देकर इस उद्देश्यमे सहायक हो सकते हैं। आस्ट्रेलियाकी जिस महिलाने अपने फीजी जानेकी स्वीकृति दी है उसका खर्चा फिलहाल श्री एन्ड्रयूज देंगे। श्री एन्ड्रयूजको इम्पीरियल सिटीजनशिप सघसे कुछ सहायता मिलेगी परन्तु सहायताकी और भी जरूरत है। इस प्रकार श्री एन्ड्रयूजने जो कार्य किये हैं उनका मैं मूल्यांकन नही कर सकता। वे एकान्तप्रेमी हैं और दूसरोकी सेवा करना ही उनका महामन्त्र है। मैंने उन्हे जानबूझकर ऋषि कहा है। उनके जैसे परोपकारी व्यक्तिका हम जितना उपकार माने उतना ही कम है।

[गुजरातीसे]

प्रजाबन्धु, २४–३–१९१८

१८८. पत्र : उत्तरी क्षेत्रके कमिश्नरको

[मार्च २२, १९१८ से पूर्व]

[महोदय,]

सत्याग्रहके प्रतिज्ञापत्र प्रकाशित करने और सार्वजनिक सभाएँ करनेसे पहले मैं आपसे एक अन्तिम प्रार्थना करना चाहता हूँ। वह यह कि कृपया इस आशयकी घोषणा कर दीजिये कि दूसरी किस्तकी वसूली सारे जिलेमे मुलतवी रखी जायेगी, साथ ही उसमे इस बातपर भी आग्रह रखिए कि जिनके पास जमीन खास पट्टेपर है, वे पूरा बकाया लगान चुका दे। इसका लोगोपर अच्छा असर होगा, और मेरा खयाल है कि वर्तमान परिस्थितियोमे इसे मेहरबानीसे दी गई एक राहत माना जायेगा।[1]

[अंग्रेजीसे]

सरदार वल्लभभाई पटेल, खण्ड १

१. गांधीजीके पत्रके उत्तरमें बम्बईके गवर्नरने १७ मार्चको रूखा पत्र भेजा था। उसके बाद गांधीजीने यह पत्र भेजा। आपसकी बातचीत या लिखापढी द्वारा समझौता करानेका यह गांधीजीका अंतिम प्रयास था किन्तु कमिश्नरने गांधीजीकी प्रार्थना नामजूर कर दी, और उन्हें लिखा कि जितनी राहत ठीक समझी गई, दी जा चुकी है, अब मैं कलक्टरको आदेश भेज रहा हूँ कि वह लगानकी बकाया रकम वसूल करे।

१८९. भाषण : नडियादमें[1]

मार्च २२, १९१८

जिस अवसरपर हम आज यहाँ इकट्ठे हुए है वह इतना महत्त्वपूर्ण है कि उसकी याद हमारी स्मृतिमें सदा बनी रहेगी। कुछ महीनेसे इस जिलेमें सरकारसे लगान मुलतवी करवानेका आन्दोलन किया जा रहा है। इस साल फसल रुपयेमें चार आनेसे भी कम हुई है, इसलिए कानूनके मुताबिक लगान मुलतवी किया जाना चाहिए।

गुजरात-सभाके प्रस्तावके अनुसार मैंने जिलेके कई गाँवोमें घूमकर जाँच की। मेरे साथियोने भी जाँच की। जो गवाहियाँ दी गई है उनसे सिद्ध होता है कि तमाम जिलेमें फसल रुपयेमें चार आनेसे ज्यादा नही हुई है। सरकार कहती है कि उसने भी जाँच की है, किन्तु वह किसानोको जरूरी राहत देनेके लिए तैयार नही है। उसने लगान वसूल करनेका निश्चय किया है। वह कहती है कि लोग लगान न देंगे तो वह सख्त कार्रवाई करके वसूल करेगी। लगानकी वसूलीके और वसूली न होनेपर जमीनें जब्त करनेके नोटिस निकाल दिये गये है। तलाटियोके जुल्मकी शिकायतें भी आ रही हैं। जो तलाटी और मुखिया इस सभामें आये हो उनसे मुझे इतना ही कहना है कि वे सरकारके प्रति वफादार रहे, किन्तु वफादारी जुल्म करनेमें नही है। उन्हे सरकारी आज्ञाके अनुसार लगान वसूल करना चाहिए, किन्तु सरकार ऐसा तो नही कह सकती कि वे लोगोको मारें पीटें। ऐसा जुल्म करनेका हुक्म कानूनके मुताबिक हरगिज नही दिया जा सकता। यदि ऐसा कोई हुक्म दिया भी गया हो तो तलाटी उसे माननेके लिए बँधे नही हैं। जो ऐसा कृत्य करता है वह देशद्रोही, राजद्रोही और ईश्वरद्रोही है। वे निष्ठापूर्वक अपने ऊपरी अधिकारियोका हुक्म अवश्य बजायें, किन्तु उन्हे लोगोको हैरान करनेका कोई अधिकार नही है।

यदि उन्हे यह विश्वास हो जाये कि फसल रुपयेमें चार आनेसे कम हुई है तो वे हिम्मत के साथ अपने ऊँचे अफसरोसे यह बात कह दें। मै उन्हे यह सलाह दो कारणोसे दे रहा हूँ। सरकारका तरीका यह रहा है कि वह अपनी बातको ही सच बताती है। लॉर्ड चेम्सिफोर्डसे मेरी बातचीत हुई थी। इसमें उन्होने मेरे सम्मुख अपनी यह राय प्रकट की कि भारतके लोग अपने सच्चे विचार प्रकट नही करते। उनमें अपने मनकी बात कहनेकी हिम्मत नही होती। वे अपने विरोधीको प्रसन्न करनेके लिए कुछ भी कह देते है, उनमें नैतिक साहस नही होता।[2]

१. गांधीजीने लगभग ५,००० लोगोंकी सभामें खेडाकी स्थितिके सम्बन्धमें भाषण दिया था। खेडा सत्याग्रहका आरम्भ इसी सभासे किया गया था और उसका संचालन गांधीजीने अनाथाश्रम, नडियादमें रहकर किया था। गांधीजीके भाषणका यह विवरण बम्बई सरकारकी १९१८ की गुप्त रिपोर्टों [बॉम्बे सीक्रेट एब्स्ट्रैक्ट्स, १९१८] में प्राप्त विवरणसे मिला लिया गया है।

२. यह अतिरिक्त अनुच्छेद 'बॉम्बे सीक्रेट एब्स्ट्रैक्ट्स' से अनूदित है।

इस स्थितिमे लोगोको क्या करना चाहिए? जिनकी फसल रुपयेमे चार आनेसे कम हुई हो उन्हे नम्रतापूर्वक सरकारसे यह कह देना चाहिए: "हम इस अन्यायको सहन नही कर सकते। फसल मारी गई है, फिर भी हम लगान दे दें और झूठे बनें यह नही हो सकता। यदि सरकारको जुल्म करके लगान वसूल करना हो तो भले ही करे।" आप लोगोको यह सलाह देनेके लिए ही यह सभा बुलाई गई है।

यह जिला बहुत सुन्दर है। लोगोके पास पैसा है। यह हरा-भरा भी खूब है। बिहारके अतिरिक्त पेड पौधोसे भरा-पूरा ऐसा सुन्दर उपवन मैने अन्यत्र नही देखा।

जहाँ बिहारको प्रकृतिने सुन्दर बनाया है, यह जिला स्वयं अपने किसानोकी लगन और निजी मेहनतसे सुन्दर बना है। इस जिलेमें ही ऐसे निपुण और उद्योगी किसान है कि उन्होने प्रदेशको ऐसे सुन्दर उपवनका रूप दे दिया है। इसपर हम गर्व कर सकते है। इसका अर्थ यह नही कि फसल न हुई तो भी लोगोको लगान देना चाहिए। जिलेका ऐसा उद्योगी वर्ग [गरीबीमे] दबता जा रहा है। ऐसा समय आ गया है जब लोग खेती छोडकर मजदूरी करने लगे है। इस प्रकार खेती छोडकर मजदूरी करना बडी दुःख-जनक स्थिति है। जिस देशके किसानोको ऐसा करना पडता है उस देशका अधःपतन ही समझना चाहिए।

असलमें जो फसल होती है उसीमे से लगान दिया जाना चाहिए। सरकार फसल खराब होनेपर भी दबावसे लगान वसूल करे यह असह्य है। किन्तु इस देशमें यह नियम ही बन गया है कि सरकारका मत हमेशा ठीक होना ही चाहिए। लोग चाहे जितने सचाईपर हो तो भी सरकार अपनी मनमानी करती है — यह स्थिति असह्य है। यदि बात न्यायकी है तब तो यह ठीक है कि वह दूसरोसे स्वीकार कराई जाये किन्तु यदि वह अन्यायपूर्ण है तब तो वह बदली ही जानी चाहिए। किसानो और जाँच करनेवालोकी गवाहीसे पता चलता है कि फसल हुई ही नही, फिर भी सरकार कहती है कि फसल अच्छी हुई है। इस स्थितिमें लोगोको सरकारसे यह कहनेका अधिकार है कि उनके भी आँखे है, कान है और उन्हें भी बुद्धि मिली है और वे अधिकारियोके अन्यायके सामने कदापि न झुकेंगे। यह बात मानने योग्य नही है कि लोग एक वर्षका लगान मुलतवी करवाने और इस प्रकार एक वर्षका ब्याज बचानेके लिए झूठ बोलेंगे। अधिकारी जो यह कहते है कि हजारो लोग झूठ बोलते हैं, यह असह्य है। इसलिए हमें यह सिद्ध कर देना चाहिए कि न्याय-दृष्टिसे हमारा आग्रह उचित है। ऐसी स्थितिमे मेरी सलाह यह है कि यदि सरकार हमारी माँग मजूर न करे तो हमे सरकारसे कह देना चाहिए कि हम लगान नही देंगे और इसके लिए जो-कुछ कष्ट सहने पडेंगे उन्हे सहनेके लिए तैयार है।

जिन-जिन जातियोका उत्थान हुआ है उन्हे पहले कष्ट सहने पडे है। यदि लोगोको अपनी जमीनें छोडनी पडें तो उन्हे छोडकर उनको कष्ट-सहनके लिए तैयार हो जाना चाहिये। कुछ लोग यह भी कह सकते है कि यह तो विद्रोह या राजद्रोह कहा जायेगा। किन्तु इसमें ऐसी कोई भी बात नही है। इसमे हमें कष्ट तो सहना है, किन्तु द्रोह कुछ नही है। फसल न होनेपर भी डरकर लगान दे दे, यह तो कायरता है। हम मनुष्य है, पशु नही है। सत्यकी खातिर दृढतापूर्वक साफ 'न' कहनेका नाम ही सत्याग्रह है।

हम लोग आज यहाँ सत्याग्रहकी नीव रखकर उसपर मण्डप रचनेकी आशा लेकर इकट्ठे हुए हैं। हमें सरकारको लगान नही देना है, बल्कि उससे जूझना है। और जूझनेमें हमारे ऊपर जो भी कष्ट आयें उन्हे सहनेके लिए तैयार रहना है। इसमें हमारे ऊपर जो भी कष्ट आनेकी सभावना है उनपर विचार कर लेना उचित है:

१. सरकार हमारा सामान बेचकर लगान वसूल कर सकती है।
२ चौथाई जुर्माना देना पड सकता है।
३ इनामकी जमीनोको जब्त किया जा सकता है, और
४ लोग उद्दण्डता करते है, ऐसा कहकर सरकार उन्हे जेल भेज सकती है।

"उद्दण्डता" शब्द सरकारका है और वह मुझे बहुत अखरता है। जो सच्ची बात कहे उसे उद्दण्ड कैसे कहा जा सकता है? वह उद्दण्ड नहीं बल्कि वीर है। सम्पन्न आसामी सुविधा होनेपर भी गरीबकी रक्षाकी खातिर लगान न दे, यह उद्दण्डता नहीं, बल्कि वीरता है। ऐसा करते हुए उसे गाँव भी छोडना पडे तो वह छोड देगा और जो उसके लिए तैयार है वही इस व्रतको ले भी सकता है।

सत्याग्रहकी प्रतिज्ञा लेना बहुत कठिन है, किन्तु उसे पूरा करना उससे भी अधिक कठिन है। लोग प्रतिज्ञा लेकर उसे तोडें और ईश्वरसे विमुख हो यह मुझे असह्य लगता है। आप जब मुझे धोखा देंगे या झूठी प्रतिज्ञा करेंगे तब मुझे अत्यन्त दुःख होगा और उस दुःखके आवेगमें मुझे कडा कदम भी उठाना पड सकता है। मैं उपवास कर सकता हूँ। मुझे उपवाससे दुःख न होगा। कोई मुझे धोखा दे, उसके दुःखसे मुझ उपवासका दुःख कम लगता है। सत्याग्रहमें प्रतिज्ञाका मूल्य सबसे अधिक होता है, और उसका पालन अन्त तक करना चाहिए। ईश्वरके नामपर ली गई प्रतिज्ञा कदापि भग नही की जा सकती। और यदि मेरी आत्माहुतिसे हजारो लोगोंकी प्रतिज्ञाका पालन होता हो तो यह देह भले ही जाये। जिसे लडना है उसे दृढ निश्चय करना चाहिए। यदि कोई यह कहता है कि "यथासम्भव तो डटा रहूँगा, किन्तु जब बहुत-ज्यादा जुल्म किया जायेगा तब कह नहीं सकता", तो मुझे इससे दुःख नहीं होता। प्रतिज्ञा भग करके मुझे आघात पहुँचानेकी अपेक्षा यदि कोई रातमें आकर मेरी गर्दन काट दे तो मैं उसे क्षमा कर दूँगा। जो मेरी गर्दन काटेगा उसे क्षमा करनेके लिए मैं ईश्वरसे प्रार्थना करूँगा। किन्तु जो प्रतिज्ञा भग करके मुझे आघात पहुँचायेगा उसे मैं कदापि क्षमा न करूँगा।

इसलिए मैं आप सब भाइयोंसे विनयपूर्वक कहता हूँ कि आप इस सम्बन्धमें जो भी निर्णय करें उसे अत्यन्त सावधान होकर करें। जो लोग अपनी प्रतिज्ञापर दृढ रहेंगे, वे ही उठेंगे। इस प्रकार आप ऊपर उठेंगे तो सरकार आपका आदर करेगी और यह समझेगी कि ये लोग अपनी प्रतिज्ञाका पालन करनेवाले हैं, उसको भग करनेवाले नही। प्रतिज्ञा भग करनेवाले न तो देशके कामके होते है, न सरकारके कामके और न ईश्वरके कामके।

इस कारण मैं आप लोगोंकी सम्मति लेना और आपसे पूछना चाहता हूँ कि आप लडनेके लिए तैयार हैं या नही। मैं प्रतिज्ञापत्र तैयार करूँगा। जिन भाइयोंकी

इच्छा इस प्रतिज्ञाको लेनेकी हो वे आश्रममें आकर उसपर हस्ताक्षर करें। मेरी एक ही प्रार्थना है कि आप कष्ट सहें और अपनी प्रतिज्ञाका पालन करें किन्तु लगान अदा न करें। और इस प्रकार सरकारके सम्मुख यह सिद्ध कर दें कि आप कष्ट सहनेके लिए तैयार हैं। सरकार सब लोगोंके ऊपर तो जोर-जुल्म नहीं कर सकेगी।[1]

जिन लोगोंके पास इनामी जमीनें हैं उन्हें मेरी सलाह है कि वे लगान दे दें। श्री एन्ड्रयूजने, जो गवर्नरसे भेंट करने गये हैं, तार दिया है कि मैं दिल्ली जाऊँ और उनसे मिलूँ। श्री एन्ड्रयूज और वल्लभभाई पटेल यहाँ काम करते रहेंगे। मैं श्री मुहम्मद अली और शौकत अलीके कार्यके सम्बन्धमें दिल्ली जा रहा हूँ।

[गुजरातीसे]

खेड़ा सत्याग्रह

१९०. प्रतिज्ञा[2]

[नडियाद

मार्च २२, १९१८]

हमारे गाँवमें फसल चार आनेसे भी कम हुई है इसलिए हमने सरकारसे आगामी वर्ष तक के लिए लगान वसूली स्थगित करनेका अनुरोध किया था। लेकिन सरकारने हमारी प्रार्थना स्वीकार नहीं की। इसलिए हम — हस्ताक्षरकर्त्ता — संकल्पपूर्वक घोषित करते हैं कि हम इस सालका लगान — पूरा या अधूरा, कुछ भी अदा नहीं करेंगे, हम उसकी वसूलीके लिए सरकारको, वह जो भी ठीक समझे, कानूनी कार्रवाई करने देंगे और हम लगानकी गैर-अदायगीके सभी परिणाम खुशीसे भोगेंगे। अगर वे हमारी जमीनें जब्त करें तो हम अपनी जमीन जब्त हो जाने देंगे, परन्तु हम अपनी ओरसे अदायगी करके और इस तरह झूठे होकर अपना आत्मसम्मान नहीं खोयेंगे। यदि सरकार उदारतापूर्वक बाकी सारे गाँवोंमें बकाया लगानकी वसूली स्थगित करनेका निर्णय करेगी तो हम लोगोंमें से जो लोग अदा करनेकी स्थितिमें होंगे पूरा या बकाया लगान अदा कर देंगे। हममें से जिन लोगोंके पास पैसा है और जो अदा कर सकते हैं, वे भी इसलिए अदायगी नहीं कर रहे हैं कि यदि हम अदा कर देंगे तो गरीब किसान डरकर लगानकी अदायगीके लिए या तो अपनी जमीन-जायदाद बेचेंगे या कहींसे उधार लेंगे और इस तरह कष्टमें पड़ जायेंगे।

हमारा विश्वास है कि इस कष्टकी परिस्थितिसे गरीबोंका बचाव करना पैसे-वालोंका कर्त्तव्य है।

[अंग्रेजीसे]

यंग इंडिया, १२–६–१९१८

१. इसके बादका अनुच्छेद 'बॉम्बे सीक्रेट एब्स्ट्रैक्ट्स' से अनूदित है।

२. नडियादकी सभामें गांधीजीका भाषण समाप्त होनेपर लगभग २०० व्यक्तियोंने इस प्रतिज्ञापर हस्ताक्षर किये थे; देखिए पिछला शीर्षक। बादके कुछ दिनोंमें और लोगोंने भी यही प्रतिज्ञा की थी।

१९१. पत्र : वाइसरायके निजी सचिवको

सेंट स्टीफेंस कॉलेज
दिल्ली
मार्च २५, १९१८

सेवामें
महामहिम वाइसरायके निजी सचिव
[महोदय,]

मैं बयान नहीं कर सकता कि अली भाइयोंके इस मामलेको लेकर मुझे कितनी दिमागी परेशानी रही है, परन्तु आज सुबह आपसे बातचीत करके मुझे बड़ी राहत और शान्ति मिली। यह देखकर कितनी खुशी हुई कि आपको मेरी बात समझनेमें थोड़ी भी देर नहीं लगी। यदि किसी औरकी जानकारीके बिना ही उनकी रिहाईका आदेश भेज दिया जाये तो वह सरकारका एक बड़ा प्रशंसनीय कार्य माना जायेगा। इस ढंगसे उनकी रिहाई हो जानेसे उन तमाम उत्तेजनापूर्ण प्रदर्शनोंसे भी बचा जा सकता है जो अन्य किसी प्रकारसे उनकी रिहाई होनेपर उनके स्वागतमें आयोजित किये ही जायेंगे।

उनकी रिहाई होनी चाहिए। उसके कुछ कारण ये हैं

(क) उनको इसलिए नजरबन्द रखा जा रहा है कि वे सरकारके खिलाफ कुछ न कर सकें, यह उद्देश्य तो अपने-आपमें विफल हो जाता है क्योंकि वे अपनी मर्जीके मुआफिक लोगोंसे पत्र-व्यवहार तो करते ही हैं और सन्देश भी भेजते हैं।

(ख) उनकी नजरबन्दीसे दिन-दिन उनका प्रभाव बढ़ता ही है।

(ग) उनकी नजरबन्दीसे उनके मित्रोंके दिलमें कटुता बढ़ती है और आम मुसलमानोंका असन्तोष और गहरा होता जाता है, जिसमें हिन्दू भी कुछ हद-तक उनके साथ हैं।

(घ) हजारों मुसलमानोंपर मौलाना अब्दुल बारी साहबका काफी-अधिक असर है। धर्म सम्बन्धी चीजोंमें वे मुसलमानोंके सलाहकार हैं और सरकार अली भाइयोंको रिहा करके, मौलानाको अपने पक्षमें कर सकती है।

(ङ) जहाँतक मेरी जानकारी है, दोनों भाइयोंकी इच्छा-शक्ति दृढ़ है, उनका खानदान बड़ा ऊँचा है और वे सुसंस्कृत तथा ज्ञान-सम्पन्न हैं। शिक्षित मुसलमानोंपर उनका बड़ा असर है और वे स्वयं काफी खुले दिमागके और सीधी बात कहनेवाले लोग हैं। उनको नजरबन्द करना एक भारी गलती थी। सरकारको तो सदा ही ऐसे व्यक्तियोंको अपने पक्षमें रखनेकी जरूरत है। और मेरी विनम्र रायमें तो उनको नजरबन्द रखनेसे कोई फायदा नहीं हो सकता।

एक महान् सरकारको तो यही शोभा देगा कि उनकी रिहाईके लिए चीख-पुकार और आन्दोलन फिर शुरू हो, इससे पहले ही उनको रिहा कर दिया जाये।

यदि मेरी उपस्थिति आवश्यक समझी जाये, तो मैं **महामहिमसे कभी भी मिलनेके लिए तैयार रहूँगा।**

कृपया इस पत्रका उत्तर दीजिए। मैं २९ से ३१ तारीख तक हिन्दी साहित्य सम्मेलनकी अध्यक्षताके सिलसिलेमें इन्दौरमें रहूँगा, उसके बाद अहमदाबादमें।

[आपका,
मो० क० गांधी]

[अंग्रेजीसे]

नेशनल आर्काइव्ज ऑफ इंडिया होम, पॉलिटिकल (क): जून १९१८, सं० ३५९–६०

१९२. खेड़ाकी परिस्थितिके बारेमें परिपत्र[1]

हिन्दू अनाथ आश्रम
नडियाद
फाल्गुन सुदी १५, मार्च २७, १९१८

खेड़ा जिलेकी रैयतका कर्त्तव्य

चूंकि खेडा जिलेमें फसल बहुत कम हुई है, अर्थात् अधिकांश गाँवोंमें चौथाईसे भी कम रह गई है, इसलिए सरकारी नियमके अनुसार इस वर्ष लगान-वसूली मुलतवी कर देनी चाहिए। इसके लिए रैयतकी ओरसे सरकारके पास बार-बार प्रार्थनाएँ भेजी गई हैं। जनताकी ओरसे 'गुजरात-सभा,' माननीय सर्वश्री जी० के० पारेख और भारत सेवक समाज [सर्वेंट्स ऑफ इंडिया सोसाइटी] के वी० जे० पटेल और सर्वश्री देवधर, अमृतलाल ठक्कर और जोशीने फसलोंके बारेमें जाँच-पडताल की है और सभी इस निष्कर्षपर पहुँचे हैं कि खरीफकी फसल तो लगभग सारी खराब हो चुकी है। मैंने भी कई जिम्मेदार और सम्माननीय सहायकोंकी मददसे लगभग ४०० गाँवोंकी फसलोंके बारेमें काफी ब्यौरेवार पडताल करके देखा है कि लगभग उन सभी गाँवोंमें फसल रुपयेमें चार आने-भरसे भी कम रह गई है। मैंने यह भी पाया कि रैयतके बहुतसे लोगोंके

१. मूल परिपत्र गुजरातीमें था। गुजरातीने इसे अपने ३१–३–१९१८ के अंकमें प्रकाशित किया था। 'बॉम्बे सीक्रेट एब्स्ट्रैक्ट्स' में खेड़ाके जिला मजिस्ट्रेटका जो नोट छापा गया था, उसके अनुसार २७ मार्चको दिल्लीसे नडियाद लौटनेके बादसे गांधीजी कई परिपत्र जारी करनेमें व्यस्त रहे। पहला परिपत्र जिले-भरमें दीवारोंपर लगाया गया था। उसकी प्रति अब अप्राप्य है। उसमें किसानोंसे कहा गया था कि वे सरकारकी दमनकारी कार्रवाईके बारेमें गांधीजीसे लिखा-पढ़ी करें। यह परिपत्र भी जारी किये गये उन अनेक परिपत्रोंमें से एक है।

पास पैसा नहीं है और अन्नकी बहुत-सी खत्तियाँ बिलकुल रीती पड़ी हैं, और यह भी कि इस जिलेमें कई किसान अपने खानेके लिए यहाँ पैदा होनेवाले अन्नके स्थानपर बाहरसे बड़े पैमानेपर मकई मँगाकर काम चला रहे हैं। मैंने यहाँतक देखा है कि जहाँ लोगोंने लगान अदा कर भी दिया है, वह तलाटी इत्यादिके भयसे ही किया है। कई स्थानों-पर जनताने अपने पेड़ इत्यादि बेचकर लगान भरा है। मैंने यह भी पाया है कि जनता बहुत ही अधिक बढ़ी हुई कीमतोंके बोझसे कराह रही है। इतना ही नहीं लोग प्लेग फैलनेके डरसे झोपड़ियोंमें अत्यधिक चिन्तित रहते हैं।[1] कलक्टर और कमिश्नरको ये सभी तथ्य बतला दिये गये हैं, उन्होंने कुछ रियायतें भी दी हैं। पर लोगोंकी आवश्यक-ताओंको देखते हुए वे नगण्य-सी हैं। ऐसी परिस्थितिमें जनताको केवल एक ही सलाह दी जा सकती है, वह यह कि अपनी सचाई सिद्ध करनेके लिए उनको लगान तो अदा नहीं करना चाहिए। पर यदि सरकार उनकी सम्पत्ति बेचकर लगान वसूल करना चाहे तो उसे करने देना चाहिए। भयके कारण लगान अदा करके अपनेको झूठा साबित करनेसे कहीं अच्छा है कि लगान अदा न करके अपना सर्वस्व होम होने दिया जाये। जो भी हो, जनताको मेरी तो यही पक्की सलाह है कि उसे लगान अदा नहीं करना चाहिए और उसके फलस्वरूप होनेवाले सभी कष्ट और जुल्म उसे बर्दाश्त करने चाहिए। सर-कारको लोकमतके आगे सिर झुकाना पड़ेगा, लेकिन यह तभी होगा जब अपने आचरणसे जनता सरकारको अपनी रायका सम्मान करना सिखायेगी। कई प्रमुख सज्जन इस संघ-र्षमें जनताकी सहायता करनेके लिए तैयार हैं, और यदि किसीको घरसे बेदखल किया गया है तो उसके रहने और खानेका प्रबन्ध भी किया गया है। लगानकी अदायगी न करनेका साहस जिन लोगोंमें है, उनके हस्ताक्षरोंके लिए प्रतिज्ञा-पत्र जारी किये जा चुके हैं। आशा है कि वे सभी किसान उनपर हस्ताक्षर करेंगे जिन्होंने अभी लगान अदा नहीं किया है। मेरी यही सलाह है कि हस्ताक्षर करनेसे पहले ही भलीभाँति विचार कर लेना चाहिए, परन्तु यह याद रखना चाहिए कि एक बार हस्ताक्षर कर देनेके बाद फिर पैर पीछे नहीं हटाना है।

मो० क० गांधी

[अंग्रेजीसे]
बॉम्बे सीक्रेट एब्स्ट्रैक्ट्स

1. गुजराती द्वारा प्रकाशित विवरणमें यह वाक्य नहीं है।

१९३. पत्र : अखबारोंको[1]

नडियाद
मार्च २७, १९१८

सम्पादक
'लीडर'
इलाहाबाद

महोदय,

मैं समझता हूँ कि मुझे अपने हालके उपवासके सम्बन्धमें जनताके सामने अपनी स्थिति स्पष्ट करनी चाहिए। कुछ मित्र मेरे इस कार्यको मूर्खतापूर्ण समझते हैं, कुछ इसमें नामर्दी देखते हैं, और दूसरे कई इसे उससे भी खराब समझते हैं। लेकिन मैं यह मानता हूँ कि अगर मैंने यह कदम न उठाया होता, तो मैं अपने सिरजनहारके प्रति और मैंने जिसका सकल्प किया है उस उद्देश्यके प्रति सच्चा सिद्ध नहीं होता।

कोई एक महीने पहले मैं बम्बई गया था। वहाँ मुझसे कहा गया था कि अहमदाबादके मिल-मजदूरोंने धमकी दी थी कि यदि महामारीके दिनों उनको मिलनेवाला बोनस बन्द किया गया तो वे हड़ताल और हिंसाका मार्ग अपनायेंगे। मुझे मध्यस्थ बननेको कहा गया और मैंने मंजूर कर लिया। पिछले अगस्त महीनेसे मजदूरोंको महामारीके कारण ७० फीसदी तक बोनस मिल रहा था। इस बोनसको बन्द करनेकी कोशिशके कारण मजदूरोंमें भारी असन्तोष फैला। मिल-मालिकोंने महामारीके कारण दिये जानेवाले बोनसके बदले और बढ़ी हुई मँहगाईके कारणसे उनकी मजदूरीमें २० फीसदी इजाफा कर देनेकी बात बहुत देरसे कही। परन्तु मजदूरोंको इससे सन्तोष न हुआ। सारा सवाल पंचके सुपुर्द किया गया और अहमदाबादके कलक्टर मि० चैटफील्ड सरपंच नियुक्त किये गये। इसपर भी कुछ मिलोंमें मजदूरोंने हड़ताल कर दी। मालिकोंने सोचा कि मजदूरोंने यह सब बिना किसी उचित कारणके किया है, इसलिए उन्होंने पंच-प्रस्ताव वापस ले लिया और तालेबन्दीका ऐलान कर दिया। उन्होंने यह भी तय कर लिया कि जिस २० फीसदी इजाफेका ऐलान उन्होंने किया है, जबतक मजदूर उसको मंजूर करनेके लिए हारकर विवश नहीं हो जाते, तबतक तालेबन्दी जारी रखी जाये। मजदूरोंकी ओरसे भाई शकरलाल बैंकर, भाई वल्लभभाई पटेल और मैं पंच नियुक्त किये गये थे। हमने देखा कि अगर हम तुरन्त और मजबूतीके साथ कोई कदम नहीं उठायेंगे तो मजदूर दबा दिये जायेंगे। इसलिए हमने इजाफेके सिलसिलेमें जाँच शुरू की। हमने मिल-मालिकोंकी सहायता पानेकी कोशिश की, किन्तु उन्होंने हमें कोई सहायता न दी। उनका मंशा यही था कि मिल-मालिकोंका एक ऐसा संयुक्त संगठन तैयार कर लिया जाये जो

१. स्पष्ट ही यह पत्र लगभग सभी समाचारपत्रोंको भेजा गया था। इसे मद्रासके हिन्दू और इलाहाबादके लीडरने प्रकाशित किया था।

मजदूरोंके संगठनसे मोर्चा ले सके। अतएव एक दृष्टिसे हमारी जाँच-पड़ताल एकतरफा थी। फिर भी हमने मालिकोंके पक्षको ध्यानमें रखनेका यत्न किया। हम इस निश्चय-पर पहुँचे कि ३५ प्रतिशतका इजाफा उचित माना जा सकता है। मजदूरोंको अपना आँकड़ा बतानेसे पहले हमने अपनी जाँचका परिणाम मिल-मालिकोंको बतलाया और उनसे यह भी कहा कि अगर वे उसमें कोई भूल सुझायेंगे, तो हम उसे सुधार लेनेको तैयार हैं। लेकिन उन्होंने हमारे साथ किसी प्रकारका समझौता करना पसन्द ही न किया। उन्होंने अपने जवाबमें यह बताया कि बम्बईके मालिकों और सरकारकी तरफसे जो दर दी जाती है, वह हमारे द्वारा ठहराई हुई दरसे बहुत कम है। मैंने महसूस किया कि उनके जवाबका यह हिस्सा अनावश्यक था। अतएव एक विराट् सभामें[1] मैंने ऐलान किया कि मिल-मजदूर ३५ फीसदी इजाफा मंजूर करेंगे और यहाँ यह ध्यानमें रखने योग्य है कि मजदूरोंको महामारीके कारण उनकी मजदूरीपर ७० फीसदी इजाफा मिलता था और उन्होंने अपना यह इरादा जाहिर किया था कि बढ़ती हुई मँहगाईके आधार-पर वे ५० प्रतिशतसे कम इजाफा मंजूर नहीं करेंगे। परन्तु उनसे कहा गया कि वे अपने ५० प्रतिशत और मिल-मालिकोंके २० प्रतिशतके बीचकी इस दरको मंजूर करें। (बिलकुल संयोगकी बात है कि हमने जो दर निश्चित की वह दोनोंके बीचकी थी।) थोड़ी बुदबुदा-हटके बाद सभाने ३५ प्रतिशतका इजाफा लेना स्वीकार किया, इसके साथ ही यह भी मान लिया गया था कि जिस क्षण मिल-मालिक पंचकी मारफत फैसला कराना स्वीकार कर लें, उसी क्षण मजदूर भी वैसा ही करें। इसके बाद यानी पिछली २६ फरवरीके बादसे रोज हजारों आदमी गाँवके कोटके बाहर एक पेड़की छाया तले इकट्ठे होते थे। उनमें से कई तो बड़ी दूरसे पैदल चलकर आते थे, और सच्चे दिलसे परमात्माको साक्षी रखकर ३५ प्रतिशतसे एक पाई भी कम न लेनेका अपना निश्चय मजबूत करते थे। उन्हें पैसेकी कोई मदद नहीं दी गई थी। अब यह तो हर कोई समझ सकता है कि ऐसी हालतमें उनमें से कईको भूखे रहना पड़ता था और जबतक वे बेकार थे, उन्हें कोई कर्ज भी न देता था। दूसरी तरफ, उनके सहायकोंकी हैसियतसे हमने यह निश्चय किया कि अगर उनमें से काम करने योग्य लोग कड़ी मेहनत-मजदूरी करके अपना गुजारा करनेको तैयार न हों, और हम चन्दा इकट्ठा करके उसका उपयोग उनके भरण-पोषणमें करें, तो उससे हम उनको नुकसान ही पहुँचायेंगे। जिन लोगोंने साँचोंपर काम किया था, उनको रेत या ईंटकी टोकरियोंको ढोनेकी बात समझाना बहुत कठिन था। वे यह काम करते तो थे, लेकिन बड़ी नाराजीके साथ। मिल-मालिकोंने भी अपने दिल कठोर बना लिये थे। उन्होंने भी २० प्रतिशतसे ज्यादा न देनेका निश्चय कर लिया था, और मजदूरोंको फुसलाकर उनसे घुटने टिकवानेके लिए अपने आदमी लगा रखे थे। तालेबन्दीके शुरूमें ही हमने काम न करनेवालोंकी मदद न कर सकनेका ऐलान कर दिया था, लेकिन इसके साथ हमने उन्हें यह विश्वास भी दिलाया था कि उन्हें खिलाकर और पहनाकर ही हम खायेंगे और पहनेंगे। इस तरह २२ दिन बीत गये। भूखकी तकलीफका और मिल-मालिकोंके जासूसोंका असर काम करने लगा। शैतान उनको बहकाने लगा, उनसे

१. देखिए "अहमदाबादके मिल-मजदूरोंकी हड़ताल", फरवरी २६, १९१८।

कहने लगा कि इस ससारमे ईश्वर नामकी ऐसी कोई चीज नही जो उनकी मदद करे, और ये व्रत वगैरह तो कमजोरोकी कमजोरीको छिपानेके लिए अख्तियार की गई तरकीबें है। मै हमेशा देखता था कि लोग पाँचसे लेकर दस हजार तक की तादादमें रोज उत्साह और उमगके साथ इकट्ठे होते थे। उनके चेहरोसे उनकी दृढता टपकती थी। लेकिन इसके बदले एक दिन मैंने सिर्फ दो हजार आदमियोको एकत्र देखा, जिनके चेहरोपर निराशा छाई हुई थी। इसी अर्सेमें हमने यह भी सुना कि किसी एक चालमे रहनेवाले मिल-मजदूरोने सभामे आनेसे इनकार किया है, और वे वीस प्रतिशतका इजाफा मजूर करके कामपर जानेकी तैयारीमे है। उन्होने हमे ताने भी दिये (और मै समझता हूँ कि उनका कहना वाजिव था) कि हमारे पास मोटरे है, खाने-पीनेका पूरा प्रवन्ध है, इसलिए सभामें हाजिर रहने और मौतके मुकावलेमे भी दृढ रहनेकी सलाह देना हमारे लिए वडा आसान है। ऐसी दशामें मुझे क्या करना चाहिए? मुझे उनकी आपत्ति उचित मालूम हुई। ईश्वरपर मुझे उतना ही विश्वास है, जितना इस वातपर कि मै यह पत्र लिख रहा हूँ। और मै मानता हूँ कि किसी भी दशामें वचनका पालन करना आवश्यक है। मै जानता था कि हमारे सामने खडे हुए लोग परमात्मासे डरते है, परन्तु तालेवन्दी और हडतालके कई दिनो तक चलनेके कारण उनपर असह्य वोझ आ पडा है। मै हिन्दुस्तानमें वहुत घूमा हूँ। अपनी इन यात्राओमें मैंने सैकडो आदमी ऐसे भी देखे है, जो पलमें प्रतिज्ञा करते है और पलमें उसे तोडते है। मै यह भी जानता था कि हममें जो लोग सवसे अच्छे माने जाते है, ईश्वर और आत्मवलके सम्वन्धमें उनकी श्रद्धा भी ढीली और अस्पष्ट ही होती है। मैंने देखा कि मेरे लिए यह एक पवित्र अवसर है। मुझे अपनी श्रद्धा कसौटीपर कसी हुई प्रतीत हुई। फलत मै विना किसी सकोचके उठ खडा हुआ और मैंने कहा कि जो प्रतिज्ञा शपथपूर्वक ली गई है, मिल-मजदूरो द्वारा उसका भग होना मेरे लिए असह्य है। इसलिए मैंने प्रतिज्ञा की कि जवतक मजदूरोको ३५ प्रतिशत इजाफा नही मिलेगा अथवा जवतक वे हारकर घुटने नही टेक देगे, तवतक मै अन्न नही खाऊँगा। इस समय तक सभामे पिछली सभाओका-सा उत्साह न था, उदासी थी। लेकिन अव उसमे जैसे जादूसे एकाएक उत्साह आ गया। एक-एक आदमीके गालपर टप-टप आँसू टपकने लगे, और वे एकके वाद एक उठकर यह ऐलान करने लगे कि जवतक उनकी माँग मजूर नही होती, वे कभी भी मिलमें काम करने नही जायेंगे, और जो लोग इस सभामे हाजिर नही है, उनसे मिलकर उन्हे भी अपने पक्षमे ले आयेंगे। सत्य और प्रेमके प्रभावको प्रत्यक्ष देखनेका यह एक अमूल्य अवसर था। हरएक यह महसूस करने लगा कि परमेश्वरकी पालक शक्ति जितनी प्राचीन कालमे हमारे आसपास रहती थी, उतनी ही आज भी है। इस प्रतिज्ञाका कोई पछतावा मुझे नही। वल्कि मै तो श्रद्धापूर्वक यह मानता हूँ कि अगर मैंने इससे कुछ कम किया होता तो मैंने अपने-आपको लोगोके उस विश्वासके अयोग्य सिद्ध किया होता जो उन्होने मुझको दिया था। प्रतिज्ञा करनेसे पहले भी मै जानता था कि उसमें कुछ वडी त्रुटियाँ रह गई है। मिल-मालिकोके निश्चयपर किसी प्रकारका असर डालनेके लिए इस प्रकारकी प्रतिज्ञा करना तो उनके साथ एक कायरतापूर्ण अन्याय करना है। मै जानता था

कि उनमें से कुछकी मित्रताका सौभाग्य मुझे प्राप्त है, लेकिन अपने इस कामसे अब मैं इस योग्य भी नहीं रह गया हूँ। मैं यह भी समझता था कि मेरे इस कार्यके कारण गलतफहमी बढ़नेका डर है। मेरे लिए यह सम्भव न था कि मैं उनके निर्णयपर अपने उपवासके प्रभावको पड़नेसे रोकूँ। दूसरे, उनके परिचयके कारण मेरी जिम्मेदारी इतनी बढ़ गई थी कि मैं उसे उठानेमें असमर्थ था। आम तौरपर इस तरहकी लड़ाई-में मजदूरोंके लिए जो राहत मैं उचित रूपसे हासिल कर सकता था, उसीके लिए यहाँ मैं असमर्थ हो उठा। मैं जानता था कि मिल-मालिकोंसे मैं कमसे-कम ले सकूँगा, और मजदूरों द्वारा की गई प्रतिज्ञाके तत्त्वोंकी सिद्धिके बदले उसके स्थूल अर्थकी सिद्धिसे ही मुझे सन्तोष करना पड़ेगा, और हुआ भी वही। मैंने तराजूके एक पलड़ेमें अपनी प्रतिज्ञाके दोष रखे, और दूसरेमें गुण। मानव-प्राणीके बिलकुल निर्दोष कर्म तो बिरले ही हो सकते हैं। मैं जानता था कि मेरा काम तो खास तौरपर दोषभरा है। मैंने देखा कि हमारी आनेवाली सन्तान हमारे बारेमें यह कहे कि दस हजार आदमियोंने बीस-बीस दिनतक ईश्वरको साक्षी रखकर जो प्रतिज्ञा की थी, वह अचानक तोड़ डाली, इसकी अपेक्षा मिल-मालिकोंकी स्वतन्त्रताको और उनकी स्थितिको अनुचित रीतिसे विषम बनानेमें मेरी जो बदनामी होगी, वह ज्यादा अच्छी है। मेरा दृढ़ विश्वास है कि जबतक लोग फौलादकी तरह मजबूत नहीं बनते, और जबतक दुनिया उनकी टेकको 'मीड' और 'फारसी' जातियोंके कानूनकी तरह अटूट और अचल नहीं समझती, तबतक वे एक राष्ट्र नहीं बन सकते। मित्रोंकी राय चाहे जो बनी हो, तथापि इस समय तो मैं यही मानता हूँ कि आगे भी कभी ऐसा मौका आया, तो जैसा कि इस पत्रमें कहा गया है, मैं इसी ढंगसे काम करनेमें हिचकूँगा नहीं।

इस पत्रको समाप्त करनेसे पहले मैं दो व्यक्तियोंके नामोंका उल्लेख करना चाहता हूँ। हिन्दुस्तान उनपर गर्व कर सकता है। श्री अम्बालाल साराभाई मिल-मालिकोंके प्रतिनिधि थे। वे एक सुयोग्य सज्जन, बड़े सुशिक्षित और सजग व्यक्ति हैं। साथ ही वे दृढ़ निश्चयी भी हैं। उनकी बहन अनसूयाबेन मिल-मजदूरोंकी प्रतिनिधि थीं। उनका हृदय कुन्दनकी तरह निर्मल है और गरीबोंके लिए उनके दिलमें बहुत दया है। मिल-मजदूर उन्हें पूजते हैं, और उनकी बातको कानूनका-सा मान देते हैं। ऐसी किसी लड़ाईके बारेमें मैं नहीं जानता, जिसमें कटुता नाम-मात्रकी ही हो, और दोनों पक्षोंके बीच इतना सौजन्य रहा हो। इस मधुर परिणामका श्रेय मुख्यत: उस सम्बन्धको है जो श्री अम्बालाल साराभाई और अनसूयाबेनने इस संघर्षके साथ बनाये रखा था।

आपका,
मो० क० गांधी

[अंग्रेजीसे]
लीडर, ३-४-१९१८

१९४. पत्र : जे० बी० कृपलानीको[1]

नडियाद
मार्च २७, १९१८

प्रिय मित्र,

मैं तुम्हे इससे पहले पत्र नही लिख सका, इसके लिए क्षमा करना। आशा है गिरधारीने मेरा सन्देश तुम तक पहुँचा दिया होगा। मैं तुमको ऐसा पत्र लिखना चाहता था कि जिसे पढकर तुमको शान्ति और आनन्द मिले। इसीलिए देर हुई। अब भी ऐसा पत्र लिख सकूँगा या नही, इसके बारेमे शका है। लेकिन अब मै तुमको लिखनेमें ज्यादा देर नही कर सकता। तुम्हारे पत्रमें व्यक्त की गई मार्मिक वेदना तो मेरे सामने स्पष्ट है[2]; किन्तु मृत्यु हमारे प्रियसे प्रियजनोको एकाएक छीन ले, जैसा तुम्हारे भाईके मामलेमें हुआ है, तो इससे हमें पंगु क्यो बन जाना चाहिए? क्या मृत्यु केवल एक परिवर्तन और विस्मरण-मात्र नही है? वह एकाएक आ जाये, तो क्या उसके स्वरूपमें कोई फर्क पड जाना है? तुमको तो एक दुर्लभ अवसर मिला है। तुम्हारी श्रद्धा और तुम्हारे तत्त्वज्ञानकी परीक्षा हो रही है। तुम प्रामाणिक मार्गसे कुटुम्बके दो आदमियोका भरण-पोषण करो, तो इसमें भी सच्ची राष्ट्र-सेवा है। कुटुम्वका भरण-पोषण करनेवाले सभी लोग अगर तथाकथित राष्ट्र-सेवक बन जायें, तो राष्ट्रका क्या होगा? यही तुम्हारी परीक्षाका समय है। और मै जानता हूँ कि उसमे तुम कच्चे साबित नही होगे। तुम्हारे तमाम मित्रोकी परीक्षाका भी यही समय है। तुम क्या करना चाहते हो, सो बता दो। अगर आ सको, तो मुझसे मिल जाओ। तुम्हारी योजनाओपर हम चर्चा कर लेगे। यह तो तुम जानते ही हो कि मुझसे जो मदद हो सकती है, वह मै करनेको तैयार हूँ।

हार्दिक स्नेह और सहानुभूति,

सदा तुम्हारा,
बापूजी

[अंग्रेजीसे]

महादेव देसाईकी हस्तलिखित डायरीसे।
सौजन्य . नारायण देसाई।

१. जीवतराम बी० कृपलानी (१८८६–); शिक्षाविद्, राजनीतिज्ञ और १९४६ में भारतीय राष्ट्रीय काग्रेसके अध्यक्ष।

२. गाधीजीने यह पत्र श्री कृपलानीके उस पत्रके उत्तरमें लिखा था जिसमें उन्होंने अपने भाई और भाभीकी मृत्यु की सूचना देते हुए शका प्रकट की थी कि अब शायद उन्हें समाज-सेवाका काम छोड़ देना पड़े।

१९५. वक्तव्य : खेड़ाकी परिस्थितिके बारेमें समाचारपत्रोंको

नडियाद
मार्च २८, १९१८

सभी मानते हैं कि खेड़ा जिलेमें इस वर्ष १९१७–१८ की फसल काफी खराब हो गई है। मालगुजारी-कानूनके मुताबिक चार आनेसे कम फसल रह जानेपर किसानोंको हक हो जाता है कि उस सालकी लगान-वसूली मुलतवी कर दी जाये। और अगर फसल छः आनेसे कम हुई हो तो आधे लगानकी वसूली मुलतवी कर दी जाये। जहाँतक मुझे जानकारी है, सरकारने लगानकी वसूली लगभग ६०० गाँवोंमें से केवल एक गाँवमें पूरी और १०३ से कुछ अधिक गाँवोंमें आधी मुलतवी करनेकी कृपा की है। रैयतका कहना है कि वास्तविक स्थितिको देखते हुए यह बहुत कम है। सरकार कहती है कि ज्यादातर गाँवोंमें फसल छः आनेसे ऊपर रही है। इसलिए अब सवाल सिर्फ यह रह जाता है कि फसल चार आने-भर हुई है या छः आने-भर या उससे भी ज्यादा। सबसे पहली चीज तो यह कि सरकारने जो निर्धारण किया है, वह वास्तवमें गाँवोंके मुखियोंकी मददसे तलातियोंने किया है। उनके दिये हुए आँकड़ोंकी जाँच कराना कभी जरूरी नहीं माना जाता, क्योंकि फसल खराब होनेपर ही सरकारके निर्धारणके बारेमें कोई शंका उठानेका सवाल उठता है। तलाती लोगोंका पूरा वर्ग ही चापलूस, बेईमान और अत्याचारी होता है, और जो जी-हुजूरी करते हैं, गाँवके मुखिया भी विशेषकर वे ही चुने जाते हैं। तलातियोंका बस एक ही उद्देश्य होता है — जितनी जल्दी हो सके पूरा लगान वसूल किया जाये। हमें कभी-कभी ऐसे मेहनती तलातियोंके किस्से पढ़नेको मिलते हैं जिनको पूरी वसूली करनेके उपहार-स्वरूप पगड़ियाँ भेंट की गई हैं। मैंने तलातियोंके वर्गके लिए जिन विशेषणोंका प्रयोग किया है उनको निरपवादरूपमें उनपर लागू करनेका मेरा कोई मंशा नहीं। मैं तो एक तथ्य-भर सामने रख रहा हूँ। वे तलाती पैदा तो नहीं होते, बनते ही हैं और लगान-वसूल करनेवालोंको अपने अन्दर एक हृदयहीनता पैदा करनी ही पड़ती है, उसके बिना वे अपने प्रभुओंको खुश रखने लायक काम नहीं कर सकते। संसार-भरमें यही देखनेमें आता है। लगान-वसूलीका काम आजकल मुख्यतः तलाती ही करते हैं। उनके बारेमें रैयत द्वारा कही जानेवाली बातोंका ब्यौरा पेश करना मुमकिन नहीं। तलातियोंके बारेमें इतना सब लिखनेका मेरा प्रयोजन यही दिखलाना है कि सरकारके फसल कूतनेका आधार दोषपूर्ण है और वह शायद जान-बूझकर रैयतके खिलाफ कूती जाती है। तलातियोंके निर्धारणके खिलाफ रैयतके गरीब-अमीर सभी लोगों द्वारा दिये गये सबूत मौजूद हैं; इनमें से कुछ बड़े-बड़े ओहदोंपर हैं, कुछके पास काफी दौलत भी है और उन्हें गलत बात कहनेपर अपनी प्रतिष्ठा-हानिका भय है। बढ़ा-चढ़ाकर बात कहनेमें इन्हें कुछ मिलना नहीं है, सिवाय तलातियों और शायद उच्च अधिकारियोंके क्रोधके। मैं यहाँ स्पष्ट कर देना चाहता हूँ कि इस आन्दोलनका मंशा सरकार या व्यक्तिगत रूपसे किसी अधिकारीको बदनाम करनेका नहीं है।

आन्दोलनका मशा जन-जीवनसे सम्बन्ध रखनेवाले मामलोंमे जनता द्वारा अपनी बात सुनाये जानेके अधिकारपर आग्रह करना है।

जनता जानती है कि माननीय श्री जी० के० पारेख और श्री वी० जे० पटेलने गुजरात-सभाके आमन्त्रणपर और उसकी सहायतासे, भारत सेवक समाजके सर्वश्री देवधर, जोशी और ठक्करके साथ इस सम्बन्धमें जाँच-पडताल की थी। उनकी जाँच-पडताल प्रारम्भिक और सक्षिप्त ही हो सकती थी और इसीलिए वह कुछ ही गाँवोतक सीमित थी। लेकिन उनकी जाँचके परिणामसे सिद्ध हो गया कि अधिकाश गाँवोमे फसल चार आनेसे कम हुई थी। चूँकि उनकी जाँच काफी विस्तृत नही थी, इसलिए उसके बारेमे शकाएँ की जा सकती थी और की भी गई। इसलिए मैंने लगभग २० सुयोग्य, अनुभवी, निष्पक्ष और प्रभावशाली तथा प्रतिष्ठित व्यक्तियोकी सहायता लेकर पूरी तरह जाँच करना प्रारम्भ किया। मै स्वय ५० से अधिक गाँवोमे जाकर जितना हो सकता था, ज्यादासे-ज्यादा लोगोसे मिला और मैंने उन गाँवोमे जाकर उनके खेत देखे। गाँववालो से हर तरहकी पूछताछ करनेके बाद मै इसी निष्कर्षपर पहुँचा कि उनकी फसल चार आने से कम रह गई है। मैंने देखा कि मेरे पास आनेवाले लोगोमे से कुछ ऐसे भी थे जो बढा-चढाकर कही गई बातो और वक्तव्योमे काट-छाँट करनेके लिए तैयार थे। वे जानते थ कि सत्यसे डिगनेकी उनको क्या-कुछ कीमत चुकानी पडेगी। रबीकी फसल और खेतोमें खडी खरीफकी फसलके बारेमें किसानो द्वारा दिये गये बयानोकी सचाई मैंने अपनी आँखोसे देखी। मेरे सहयोगियोने भी ऐसे ही तरीके अपनाये थे। इस तरह लगभग ४०० गाँववालोसे पूछताछ की गई और केवल कुछको छोडकर अन्य सभी जगह हमने फसल चार आनेसे कम ही पाई, और केवल तीन जगह हमें छ आनेसे अधिक फसल मिली। खरीफकी फसलके बारेमे हमने यह तरीका अपनाया था कि अलग-अलग प्रत्येक गाँवकी कुल उपज-का अन्दाज करके फिर देखा जाये कि उन गाँवोमे सामान्यतया हरसाल कितनी फसल होती रही है। किसानोके बयानोको सही मान लेनेपर, जाँचका यही तरीका सोलहो आने खरा बैठता है, किसी भी दूसरे तरीकेको अवैज्ञानिक करार दिया जाना चाहिए और उसे छोड दिया जाना चाहिए। मै पहले ही बतला चुका हूँ कि अपनी जाँचके तरीकेमे मैंने अतिशयोक्तिकी गुजाइश नही रहने दी थी। खेतोमे खडी रबीकी फसल की जाँच तो हमने अपनी आँखोसे फसल देखकर की थी और ऊपर बतलाये गये तरीकेसे उसका मिलान कर लिया था। सरकारतो अपने निर्धारणका आधार आँखसे देखकर लगाये गये अनुमानको ही बनाती है, इसलिए उसमें अटकलकी बडी गुजाइश रह जाती है। इतना ही नही उसपर कुछ बुनियादी किस्मकी आपत्तियाँ की जा सकती है, जो मैंने जिला कलक्टरको लिखे अपने पत्रमे गिनाई हैं। मैंने उनसे अनुरोध किया था कि वे वडथल गाँवको कसौटी बनाये। वडथल जिलेका एक प्रसिद्ध और सामान्यतया खाता-पीता गाँव है, उसके पाससे रेलवे लाइन गुजरती है और वह एक व्यापारिक केन्द्रके समीप स्थित है। मेरा सुझाव था कि यदि उस गाँवकी फसल चार आनेसे कम निकले, जो कि मै समझता हूँ कि निकलेगी, तो अन्य अपेक्षाकृत प्रतिकूल स्थितिवाले गाँवो-में वह चार आनेसे अधिक हो ही नही सकती। अनुरोधके साथ मैंने एक सुझाव भी दिया था कि जाँचके समय मुझे उपस्थित रहनेकी इजाजत दी जाये। उन्होने जाँच तो की पर

मेरा सुझाव नही माना, इसलिए उनकी जाँच एकतरफा रही। कलक्टरने उस गाँवकी फसलके बारेमें एक बड़ी ब्यौरेवार रिपोर्ट तैयार की है, जिसका मैंने अपनी समझसे बडी सफलताके साथ खण्डन कर दिया है। मैं समझता हूँ कि सरकारका अनुमान शुरूमें बारह आनेका था, लेकिन कलक्टरने कमसे-कम अनुमान सात आनेका किया है। कलक्टरने फसलका अनुमान लगानेके लिए जो गलत तरीके अपनाये हैं और जिनकी ओर मैंने उनका ध्यान आकर्षित किया है, यदि उनकी ओर ध्यान दिया जाये तो उनके अपने हिसाबसे भी अनुमान छ आनेसे कम बैठेगा और किसानोके अनुसार वह चार आनेसे कम बैठेगा। कलक्टरकी रिपोर्ट और मेरा उसका जवाब–दोनो ही इतने प्राविधिक हैं कि जनता उनको समझ नही पायेगी। परन्तु मैंने सुझाव दिया है कि चूँकि सरकार और किसान दोनो ही अपनी-अपनी बातको सही मानते हैं, इसलिए यदि सरकार लोकमतकी जरा भी परवाह करती है तो उसे जाँच करनेके लिए एक ऐसी निष्पक्ष समिति नियुक्त करनी चाहिए जिसमें किसानोके प्रतिनिधि भी शामिल हो, या फिर सरकारको जनताकी बात मान लेनी चाहिए। सरकारने दोनों ही सुझाव ठुकरा दिये हैं और वह लगान-वसूलीके लिए अत्याचारपूर्ण तरीके अपनानेका आग्रह करती है। यहाँ मैं इसका भी उल्लेख कर दूं कि इस बीच वे अत्याचारपूर्ण तरीके पूरी तौरपर तो कभी बन्द नही किये गये और कही-कही रैयतने सिर्फ दबावके कारण लगान अदा भी कर दिया। तलाटी उनके मवेशी हाँक ले जाते थे और निर्धारित लगानकी अदायगीके बाद ही मवेशी लौटाये गये हैं। एक जगह तो मैंने एक बड़ी दर्दनाक घटना देखी। एक किसानकी एक दुधारू भैंस उससे छीन ली गई थी, और मेरे उस गाँवमें सयोगवश पहुँचनेपर ही वह वापस की गई। वह भैंस ही उस किसानकी सबसे बडी सम्पत्ति थी और उसीसे उसकी रोजकी रोटी चलती थी। ऐसे बीसियो मामले हो चुके हैं। और यदि जनताकी सही आवाज उठाई नही जाती तो नि सन्देह ऐसे और भी मामले होते रहेंगे। प्रार्थनाके जरिए कष्ट-निवारण करानेके सभी उपाय विफल हो चुके हैं। कलक्टर, कमिश्नर और यहाँतक कि परमश्रेष्ठ तक से इस सम्बन्धमें भेंट की जा चुकी है। इसके बारेमें अन्तिम सुझाव यह दिया गया था, कि हालाँकि अधिकाश गाँवोको हक है कि उनमें पूरे लगानकी वसूली मुलतवी कर दी जाये फिर भी सिवाय उन गाँवोके जहाँ सभी मानते हैं कि फसल छ. आनेसे ऊपर हुई है, जिले-भरमें आधे लगानकी वसूली मुलतवी कर दी जाये–इस कृपापूर्ण रियायतके साथ ही यह घोषणा की जा सकती है कि सरकार आशा करती है कि जिन लोगोके पास गुंजाइश हो वे खुद ही बकाया लगान अदा कर देंगे, हम कार्यकर्ता लोग ऐसे किसानोको अदायगी करनेके लिए समझायेंगे। इससे केवल बहुत ही गरीब किसानोको सरक्षण मिलेगा। मैं पूरे विश्वासके साथ कह सकता हूँ कि इस सुझावको स्वीकार कर लेनेपर सरकारको बल मिलेगा और उसकी साख भी बढ जायेगी। लोकमतको ठुकरानेसे असन्तोष ही बढेगा। खेड़ाके भयभीत किसानो-जैसे लोगोमें अन्दर ही अन्दर असन्तोष सुलगता रहेगा, और इस तरह उनको पस्त कर देगा। वर्तमान आन्दोलनका उद्देश्य ऐसी गलत स्थितिको बचानेकी कोशिश करना ही है, क्योंकि वह सरकार और जनता दोनोके लिए बडी अपमानपूर्ण स्थिति होगी। सरकार अपनी स्थिति और तथाकथित प्रतिष्ठाको जमानेके लिए क्या करना सोच रही है? उसके पास राजस्व-संहिता है जिसमें उसे बड़ी

व्यापक शक्तियाँ प्रदान की गई है और जिनके अनुसार रैयतको राजस्व-अधिकारियोके फैसलोके खिलाफ कोई अपील करनेका अधिकार भी नही है। जिस तरहके मामले दर-पेश है, जिनमे रैयत सिद्धान्तको लेकर चल रही है और अधिकारी लोग प्रतिष्ठाके सवालपर डटे हुए है; उनमे इन शक्तियोका प्रयोग करना न्यायकी भावनाका दुरुपयोग करना होगा, औचित्यकी हर सीमासे इनकार करना होगा। सहितामें प्रदान की गई शक्तियाँ ये है:

१. तुरत-फुरत फैसला करनेका अधिकार।
२. लगानके एक-चौथाईके बराबर जुर्माना वसूल करनेका अधिकार।
३. रैयतवारी ही नही, इनामी या सनदिया जमीनकी भी जब्तीका अधिकार; और किसीको हवालातमे रखनेका अधिकार।

इन उपायोका एक-एक करके या सभीका एक-साथ प्रयोग किया जा सकता है और जनताको यह सुनकर आश्चर्य होगा कि अन्तिमको छोड़कर बाकी दोनो शक्तियोको लागू करनेका नोटिस सरकार जारी कर चुकी है। इस प्रकार यदि किसीके पास हजारो रुपयेके मूल्यकी दो सौ एकड मौरूसी भूमि हो, जिसपर वह थोडा लगान अदा करता हो और यदि वह सिद्धान्तकी खातिर निर्धारित लगान अपनी ओरसे अदा करनेसे इनकार करे और उसके लिए विनम्रतासे लेकिन जोरदार विरोध प्रदर्शित करते हुए कानून द्वारा विहित दण्डको भोगनेके लिए तैयार हो तो अधिकारी उसकी सारी जमीन जब्त कर सकता है। कानूनका पालन करते हुए यदि व्यवस्थित ढगसे अवज्ञा की जाये, तो उसका पुरस्कार यह तो नही ही दिया जाना चाहिए कि सारी जमीन जब्त कर ली जाये। यह तो बदला लेना हुआ। ऐसी परिस्थितिमें यदि ठीक ढगसे काम किया जाय तो उसके फलस्वरूप चतुर्दिक प्रगति होगी और सरकारकी किसान-प्रजामें साहस पैदा होगा, वह सरकारसे दुराव-छिपाव नही करेगी और उसमें अपनी इच्छा-शक्ति भी होगी।

खेडाके किसान जिस बातको उचित और न्यायपूर्ण समझते है, उसके लिए उन्होने सघर्ष छेड़नेका साहस किया है, और मै इस न्यायपूर्ण सघर्षमे उनकी सहायता करनेके लिए समाचारपत्रो और जनताको आमन्त्रित करता हूँ। जनताको यह भी ध्यानमें रखना चाहिए कि खेड़ामे इस बार जैसी भयकर प्लेग फैली है वैसी पहले कभी नही फैली थी और उसने जनसंख्याका दशाश नष्ट कर दिया है। लोग अपने-अपने घर छोड़कर बाहर खास तौरपर खड़ी की गई फूसकी झोपड़ियोमे बसर कर रहे है, जिससे उनका खर्च भी काफी बढ गया है। कुछ गाँवोमें तो मरनेवालोकी सख्या भी काफी अधिक है। [अनाजकी] कीमतें चढी है, लेकिन फसल खराब हो जानेके कारण वे उसका फायदा नही उठा सकते; और उसका सारा नुकसान तो उन्हें भुगतना ही पडता है। खेडाकी जनताको आपके पैसेकी इतनी आवश्यकता नही जितनी कि एक दृढ, सर्वसम्मत और दो-टूक लोकमतकी है।[1]

[अंग्रेजीसे]

हिन्दू, १–४–१९१८

१. यह वक्तव्य ३–४–१९१८ के **यंग इंडिया**में भी प्रकाशित हुआ था।

१९६. भाषण: हिन्दी साहित्य सम्मेलनमें[1]

[इन्दौर
मार्च २९, १९१८]

युवराज, सभापति, भाइयो और बहनो,

हमारे पूजनीय और स्वार्थत्यागी नेता पण्डित मदनमोहन मालवीय नही आ सके। मैंने उनसे प्रार्थना की थी कि जहाँतक बने सम्मेलनमें उपस्थित रहियेगा। उन्होंने वचन दिया था कि वे जरूर आयेंगे। पण्डितजी सम्मेलनमें तो उपस्थित नही हुए, पर उन्होंने एक पत्र भेज दिया है। मैं उम्मीद करता था कि यदि पडितजी नही आयेंगे, तो उनका पत्र अवश्य आयेगा, और उसे मैं आप लोगोके सामने उपस्थित कर सकूँगा। यह पत्र मुझे आज मिला है। मैंने स्वागतकारिणी सभाको हिन्दीके विषयमें विद्वानोसे दो प्रश्नोपर सम्मति लेनेके लिए कहा था, उन्हींका उत्तर पडितजीने अपने पत्रमें दिया है।[2]

[मालवीयजीका पत्र पढकर गाधीजीने इस प्रकार कहा]

भाइयो और बहनो,

मैं दिलगीर हूँ कि जो व्याख्यान सम्मेलनमें देनेका मेरा इरादा था, वह आपके सामने नही रख सका हूँ। मैं बड़ी झंझटोंमें पड़ा हूँ। मेरी इस समय बडी दुर्दशा है। इससे मैं काम नही कर सका। पर मैंने वादा किया था कि मैं आऊँगा, और आ गया, किन्तु जो चीज सामने रखनेका इरादा था, नही रख सका।

यह भाषाका विषय बडा भारी और बड़ा ही महत्त्वपूर्ण है। यदि सब नेता सब काम छोड़कर केवल इसी विषयपर लगे रहे, तो बस है। यदि हम लोग भाषाके प्रश्नको गौण समझें या इधरसे मन हटा लेंगे, तो इस समय लोगोमें जो प्रवृत्ति चल रही है, लोगोंके हृदयोंमें जो भाव उत्पन्न हो रहा है, वह निष्फल हो जायेगा।

भाषा माताके समान है। मातापर हमारा जो प्रेम होना चाहिए, वह हम लोगोमें नही है। वास्तवमें मुझे तो ऐसे सम्मेलनोसे प्रेम नही है। तीन दिनका जलसा होगा। तीन दिन कह-सुनकर हमें [आगे] जो करना चाहिए, उसे हम भूल जायेंगे। सभापतिके भाषणमें तेज नही है, जिस वस्तुकी आवश्यकता है, वह वस्तु उसमें नही है। इससे बडी कंगालीकी मैं कल्पना नही कर सकता। हमपर और हमारी प्रजाके ऊपर एक बडा आक्षेप यह है कि हमारी भाषामें तेज नही है। जिनमें विज्ञान नही है, उनमें तेज नही है। जब हममें तेज आयेगा, तभी हमारी प्रजामें और हमारी भाषामें तेज आयेगा। विदेशी भाषा द्वारा आप जो स्वातन्त्र्य चाहते हैं, वह नही मिल सकता, क्योंकि उसमें हम योग्य

१. यह भाषण गाधीजीने १९१८में इन्दौरके टाउन हॉलमें हुए हिन्दी साहित्य सम्मेलनके आठवें अधिवेशनके समय सभापति-पदसे दिया था।

२. गाधीजीने यहा पण्डित मालवीयका पत्र पढ़कर सुनाया, जिसमें उन्होंने अपना दृढ़ विश्वास व्यक्त किया था कि हिंदी ही भारत की आन्तर्प्रान्तीय भाषा है।

नही है। प्रसन्नताकी बात है कि इन्दौरमें सब कार्य हिन्दीमे होता है। पर क्षमा कीजियेगा, प्रधान मन्त्री साहबका जो पत्र आया है, वह अंग्रेजीमे है। इन्दौरकी प्रजा यह बात नही जानती होगी, पर मैं उसे बतलाता हूँ कि यहाँ अदालतोमे प्रजाकी अर्जियाँ हिन्दीमें ली जाती है, पर न्यायाधीशोके फैसले और वकील-बैरिस्टरोकी बहस अंग्रेजीमें होती है। मैं पूछता हूँ कि इन्दौरमें ऐसा क्यो होता है? हाँ, मैं यह मानता हूँ कि अंग्रेजी राज्यमें यह आन्दोलन सफल नही हो सकता, यह ठीक है, पर देशी राज्योमे तो सफल होना ही चाहिए। शिक्षित-वर्ग, जैसा कि माननीय पडितजीने अपने पत्रमें दिखाया है, अंग्रेजीके मोहमे फँस गया है और अपनी राष्ट्रीय मातृभाषासे उसे असन्तोष हो गया है। पहली माता [अंग्रेजी] से हमे जो दूध मिल रहा है, उसमे जहर और पानी मिला हुआ है, और दूसरी माता [मातृभाषा] से शुद्ध दूध मिल सकता है। बिना इस शुद्ध दूधके मिले हमारी उन्नति होना असम्भव है। पर जो अन्धा है, वह देख नही सकता, गुलाम यह नही जानता कि अपनी बेडियाँ किस तरह तोडे। पचास वर्षोसे हम अंग्रेजीके मोहमे फँसे है। हमारी प्रजा अज्ञानमे डूबी रही है। सम्मेलनको इस ओर विशेष रूपसे खयाल रखना चाहिए। हमें ऐसा उद्योग करना चाहिए कि एक वर्षमे राजकीय सभाओमे, कांग्रेसमें प्रान्तीय भाषाओमे और अन्य सभा-समाज और सम्मेलनोमें अंग्रेजीका एक भी शब्द सुनाई न पडे। हम अंग्रेजीका व्यवहार बिलकुल त्याग दें। अंग्रेजी सर्वव्यापक भाषा है, पर यदि अंग्रेज सर्वव्यापक न रहेंगे, तो अंग्रेजी भी सर्वव्यापक न रहेगी। हमें अब अपनी मातृभाषाकी और उपेक्षा करके उसकी हत्या नही करनी चाहिए। जैसे अंग्रेज अपनी मादरी जबान अंग्रेजीमे ही बोलते और सर्वथा उसे ही व्यवहारमे लाते है, वैसे ही मैं आपसे प्रार्थना करता हूँ कि आप हिन्दीको भारतकी राष्ट्रभाषा बननेका गौरव प्रदान करे। हिन्दी सब समझते है। इसे राष्ट्रभाषा बनाकर हमें अपने कर्त्तव्यका पालन करना चाहिए। अब मैं अपना लिखा हुआ भाषण पढता हूँ।

श्रीमान् सभापति महाशय, प्यारे प्रतिनिधिगण, बहनो और भाइयो,

आपने मुझे इस सम्मेलनका सभापतित्व देकर कृतार्थ किया है। हिन्दी साहित्यकी दृष्टिसे मेरी योग्यता इस स्थानके लिए कुछ भी नही है, यह मैं खूब जानता हूँ। मेरा हिन्दी भाषाका असीम प्रेम ही मुझे यह स्थान दिलानेका कारण हो सकता है। मैं उम्मीद करता हूँ कि प्रेमकी परीक्षामें मैं हमेशा उत्तीर्ण होऊँगा।

साहित्यका प्रदेश भाषाकी भूमि जाननेपर ही निश्चित हो सकता है। यदि हिन्दी भाषाकी भूमि सिर्फ उत्तर प्रान्तकी होगी, तो साहित्यका प्रदेश संकुचित रहेगा। यदि हिन्दी भाषा राष्ट्रीय भाषा होगी, तो साहित्यका विस्तार भी राष्ट्रीय होगा। जैसे भाषक वैसी भाषा। भाषा-सागरमे स्नान करनेके लिए पूर्व-पश्चिम, दक्षिण-उत्तरसे पुनीत महात्मा आयेंगे, तो सागरका महत्त्व स्नान करनेवालोके अनुरूप होना चाहिए। इसलिए साहित्यकी दृष्टिसे भी हिन्दी भाषाका स्थान विचारणीय है।

हिन्दी भाषाकी व्याख्याका थोडा-सा खयाल करना आवश्यक है। मैं कई बार व्याख्या कर चुका हूँ कि हिन्दी भाषा वह भाषा है, जिसको उत्तरमें हिन्दू व मुसलमान बोलते है, और जो नागरी अथवा फारसी लिपिमें लिखी जाती है। यह हिन्दी एकदम संस्कृतमयी नही है, न वह एकदम फारसी शब्दोसे लदी हुई है। देहाती बोलीमें जो

माधुर्य मैं देखता हूँ, वह न लखनऊके मुसलमान भाइयोकी बोलीमें और न प्रयागके पडितो की बोलीमें पाया जाता है। भाषा वही श्रेष्ठ है, जिसको जनसमूह सहजमें समझ ले। देहाती बोली सब समझते हैं। भाषाका मूल करोड़ो मनुष्यरूपी हिमालयमें मिलेगा, और उसमें ही रहेगा। हिमालयमें से निकली हुई गगाजी अनन्त कालतक बहती रहेगी। ऐसा ही देहाती हिन्दीका गौरव रहेगा। और जैसे छोटी-सी पहाडीसे निकला हुआ झरना सूख जाता है, वैसे ही सस्कृतमयी तथा फारसीमयी हिन्दीकी दशा होगी।

हिन्दू-मुसलमानोके बीच जो भेद किया जाता है, वह कृत्रिम है। ऐसी ही कृत्रिमता हिन्दी व उर्दू भाषाके भेदमें है। हिन्दुओंकी बोलीसे फारसी शब्दोका सर्वथा त्याग और मुसलमानोकी बोलीसे सस्कृतका सर्वथा त्याग अनावश्यक है। दोनोका स्वाभाविक सगम गगा-जमुनाके सगम-सा शोभित और अचल रहेगा। मुझे उम्मीद है कि हम हिन्दी-उर्दूके झगडेमें पडकर अपना बल क्षीण नही करेगे। लिपिकी कुछ तकलीफ जरूर है। मुसलमान भाई अरबी लिपिमें ही लिखेंगे, हिन्दू बहुत करके नागरी लिपिमें लिखेंगे। राष्ट्रमें दोनोको स्थान मिलना चाहिए। अमलदारोको दोनो लिपियोका ज्ञान अवश्य होना चाहिए। इसमें कुछ कठिनाई नही है। अन्तमें जिस लिपिमें ज्यादा सरलता होगी, उसकी विजय होगी। भारतवर्षमें परस्पर व्यवहारके लिए एक भाषा होनी चाहिए, इसमें कुछ सन्देह नही है। यदि हम हिन्दी-उर्दूका झगडा भूल जायें, तो हम जानते है कि मुसलमान भाइयोकी तो उर्दू ही राष्ट्रीय भाषा है। इस बातसे यह सहजमें ही सिद्ध हो जाता है कि हिन्दी या उर्दू मुगलोके जमानेसे राष्ट्रीय भाषा बनती जाती थी।

आज भी हिन्दीसे स्पर्धा करनेवाली दूसरी कोई भाषा नही है। हिन्दी-उर्दूका झगडा छोडनेसे राष्ट्रीय भाषाका सवाल सरल हो जाता है। हिन्दुओको फारसी शब्द थोड़े-बहुत जानने पड़ेंगे। इस्लामी भाइयोको सस्कृत शब्दोका ज्ञान सम्पादन करना पडेगा। ऐसे लेन-देनसे इस्लामी भाषाका बल बढ जायेगा, और हिन्दू-मुसलमानोकी एकताका एक बडा साधन हमारे हाथमें आ जायेगा। अग्रेजी भाषाका मोह दूर करनेके लिए इतना अधिक परिश्रम करना पडेगा कि हमें लाजिम है कि हम हिन्दी-उर्दूका झगडा न उठावें। लिपिकी तकरार भी हमको नही करनी चाहिए।

अग्रेजी भाषा राष्ट्रीय भाषा क्यो नही हो सकती, अग्रेजी भाषाका बोझ प्रजाके ऊपर रखनेसे क्या हानि होती है, हमारी शिक्षाका माध्यम आजतक अग्रेजी होनेसे प्रजा कैसे कुचल दी गई है, हमारी जातीय भाषा क्यो कगाल हो रही है, इन सब बातोपर मैं अपनी राय भागलपुर और भडौंचके व्याख्यानोमें दे चुका हूँ, इसीलिए यहाँ मैं फिर नही देना चाहता। इन दोनो व्याख्यानोमें से भाषा-सम्बन्धी भाग मैं इस व्याख्यानके परिशिष्टमें रख दूंगा। हकीकतमें, इस बातमें सन्देह नही हो सकता कि हमारे कविवर सर रवीन्द्रनाथ टैगोर, विदुषी एनी बेसेंट, लोकमान्य तिलक और अन्यान्य प्रतिष्ठित और आप्त व्यक्तियोका मन्तव्य इस विषयमें ऐसा ही है। कार्यकी सिद्धिमें कठिनाइयाँ तो होगी ही, किन्तु उसका उपाय करना इस सभापर निर्भर है। लोकमान्य तिलक महाराजने अपना अभिप्राय कार्य करके बता दिया है। उन्होने 'केसरी' और 'मराठा' में हिन्दी विभाग शुरू कर दिया है। भारतरत्न पडित मदनमोहन मालवीयजीका अभिप्राय भी

हिन्दुस्तानमें अज्ञात नही है। तो भी हमे मालूम है कि हमारे कई विद्वान् नेताओका अभिप्राय है कि कुछ वर्षोतक तो एक अग्रेजी ही राष्ट्रीय भाषा रहेगी। इन नेताओसे हम विनयपूर्वक कहेगे कि अग्रेजीके इस मोहसे प्रजा पीडित हो रही है। अग्रेजी शिक्षा पानेवालोके ज्ञानका लाभ प्रजाको बहुत-ही कम मिलता है, और अंग्रेजी शिक्षित-वर्ग और आम लोगोके बीच बड़ा दरियाव आ पडा है।

कहना आवश्यक नही कि मैं अग्रेजी भाषासे द्वेष नही करता हूँ। अग्रेजी साहित्य-भडारसे मैंने भी बहुत रत्नोका उपयोग किया है। अग्रेजी भाषाकी मारफत हमें विज्ञान आदिका खूब ज्ञान लेना है। अंग्रेजीका ज्ञान भारतवासियोके लिए बहुत आवश्यक है। लेकिन इस भाषाको उसका उचित स्थान देना एक बात है उसकी जड पूजा करना दूसरी बात है।

हिन्दी-उर्दू राष्ट्रीय भाषा होनी चाहिए, इस बातको सिर्फ स्वीकार करनेसे हमारा मनोरथ सिद्ध नही हो सकता है। तो फिर किस प्रकार हम सिद्धि पा सकेंगे? जिन विद्वानोने इस मण्डपको सुशोभित किया है, वे भी अपनी वक्तृतासे हमको इस विषयमें जरूर कुछ सुनायेगे। मैं सिर्फ भाषा-प्रचारके बारेमे कुछ कहूँगा। भाषा-प्रचारके लिए 'हिन्दी-शिक्षक' होना चाहिए। हिन्दी-बगाली सीखनेवालोके लिए एक छोटी-सी पुस्तक मैंने देखी है। वैसी मराठीमें भी है। अन्य भाषा-भाषियोके लिए ऐसी किताबे देखनेमे नही आई है। यह काम करना जैसा सरल है, वैसा ही आवश्यक है। मुझे उम्मीद है कि यह सम्मेलन इस कार्यको शीघ्रतासे अपने हाथमे लेगा। ऐसी पुस्तकें विद्वान् और अनुभवी लेखकोके द्वारा लिखवानी चाहिए।

सबसे कष्टदायी मामला द्राविड़ भाषाओके लिए है। वहाँ तो कुछ प्रयत्न ही नही हुआ। हिन्दी भाषा सिखानेवाले शिक्षकोको तैयार करना चाहिए। ऐसे शिक्षकोंकी बडी ही कमी है। ऐसे एक शिक्षक प्रयागसे आपके लोकप्रिय मन्त्री भाई पुरुषोत्तमदासजी टण्डनके द्वारा मुझे मिले है।

हिन्दी भाषाका एक भी सम्पूर्ण व्याकरण मेरे देखनेमें नही आया। जो है सो अग्रेजीमे विलायती पादरियोके बनाये हुए है। ऐसा एक व्याकरण डॉ० केलॉगका रचा हुआ है। हिन्दुस्तानकी अन्यान्य भाषाओका मुकाबला करनेवाला व्याकरण हमारी भाषामे होना चाहिए। हिन्दी-प्रेमी विद्वानोसे मेरी नम्र विनती है कि वे इस त्रुटिको दूर करे। हमारी राष्ट्रीय सभाओमें हिन्दी भाषाका ही इस्तेमाल होना आवश्यक है। काग्रेसके कार्यकर्त्ताओ और प्रतिनिधियो द्वारा यह प्रयत्न होना चाहिए। मेरा अभिप्राय है कि यह सभा ऐसी प्रार्थना आगामी काग्रेसमें उसके कर्मचारियोके सम्मुख उपस्थित करे।

हमारी कानूनी सभाओमें भी राष्ट्रीय भाषा द्वारा कार्य चलना चाहिए। जबतक ऐसा नही होता, तबतक प्रजाको राजनीतिक कार्योमे ठीक तालीम नही मिलती है। हमारे हिन्दी अखबार इस कार्यको थोडा-सा करते तो है, लेकिन प्रजाको तालीम अनुवादसे नही मिल सकती है। हमारी अदालतोमे जरूर राष्ट्रीय भाषा और प्रान्तीय भाषाका प्रचार होना चाहिए। न्यायाधीशोकी मारफत जो तालीम हमको सहज ही मिल सकती है, उस तालीमसे आज प्रजा वंचित रहती है।

भाषाकी जैसी सेवा हमारे राजा-महाराजा लोग कर सकते हैं, वैसी अंग्रेज सरकार नहीं कर सकती। महाराजा होल्करकी कौंसिलमें, कचहरीमें और हरएक काममें हिन्दीका और प्रान्तीय बोलीका ही प्रयोग होना चाहिए। उनके उत्तेजनसे भाषा और बहुत ही बढ़ सकती है। इस राज्यकी पाठशालाओंमें शुरूसे आखिर तक सब तालीम मादरी जबानमें देनेका प्रयोग होना चाहिए। हमारे राजा-महाराजाओंसे भाषाकी बड़ी-भारी सेवा हो सकती है। मैं उम्मीद रखता हूँ कि होल्कर महाराज और उनके अधिकारी-वर्ग इस महान् कार्यको उत्साहसे उठा लेंगे।[1]

ऐसे सम्मेलनसे हमारा सब कार्य सफल होगा, ऐसी समझ भ्रम ही है। जब हम प्रतिदिन इसी कार्यकी धुनमें लगे रहेंगे, तभी इस कार्यकी सिद्धि हो सकेगी। सैकड़ों स्वार्थत्यागी विद्वान् जब इस कार्यको अपनायेंगे तभी सिद्धि सम्भव है।

मुझे खेद तो यह है कि जिन प्रान्तोंकी मातृभाषा हिन्दी है, वहाँ भी उस भाषाकी उन्नति करनेका उत्साह नहीं दिखाई देता है। उन प्रान्तोंमें हमारे शिक्षित-वर्ग आपसमें पत्र-व्यवहार और बातचीत अंग्रेजीमें करते हैं। एक भाई लिखते हैं कि हमारे अखबार चलानेवाले अपना व्यवहार अंग्रेजीमें मारफत करते हैं। अपने हिसाब-किताब वे अंग्रेजीमें ही रखते हैं। फ्रांसमें रहनेवाले अंग्रेज अपना सब व्यवहार अंग्रेजीमें रखते हैं। हम अपने देशमें अपने महान् कार्य विदेशी भाषामें करते हैं। मेरा नम्र लेकिन दृढ़ अभिप्राय है कि जबतक हम हिन्दी भाषाको राष्ट्रीय और अपनी-अपनी प्रान्तीय भाषाओंको उनका योग्य स्थान नहीं देंगे, तबतक स्वराज्यकी सब बातें निरर्थक हैं। इस सम्मेलन द्वारा भारतवर्षके इन बड़े प्रश्नोंका निराकरण हो जाये, ऐसी मेरी आशा है और प्रभुके प्रति प्रार्थना है।

राष्ट्रभाषा-हिन्दुस्तानी

१९७. प्राचीन सभ्यता

इन्दौर
मार्च ३०, १९१८[2]

३० मार्च, १९१८को इन्दौरमें व्याख्यान-मालाकी ओरसे दत्त मन्दिरके विशाल मैदानमें महात्मा गांधीका एक महत्त्वपूर्ण भाषण हुआ था। संसारमें आजकल जो परिवर्तन हो रहा है उसकी ओर लक्ष्य करके आपने कहा :

हमारे मनमें ये विचार आते हैं कि यूरोपमें जैसा परिवर्तन होगा, हिन्दुस्तानमें भी वैसा ही होगा। जब कोई बड़ा परिवर्तन होता है उस समय जो लोग यह समझ लेते हैं कि किस प्रकार उस परिवर्तनके लिए तैयारी करनी चाहिए, वे जीतते हैं, जो लोग

१. २-४-१९१८के बॉम्बे क्रॉनिकलके एक समाचारके अनुसार, गांधीजीने हिन्दी-प्रचारार्थ दस हजार रुपयेके दानके लिये महाराजा होल्करको धन्यवाद दिया।

२. पाठ-क्रमके अनुसार तिथि निर्धारित की गई है।

यह विचार नही करते वे नष्ट हो जाते है। गति ही प्रगति है और उसीमें हमारी उन्नति है। हम यो समझते है कि हमारे लिए यूरोप-खण्डसे जो बड़े-बडे शोध हुए है उनसे हम उन्नति कर लेगे; पर यह केवल भ्रम है। हम ऐसे मुल्कके रहनेवाले हैं जो अभी तक अपनी सभ्यतापर निर्भर रह सका है। यूरोपकी कई सभ्यताएँ नष्ट हो गईं, पर हमारा यह भारतवर्ष अबतक अपनी सभ्यताका साक्षी होकर बना है। सब विद्वान् साक्षी देते है कि भारतवर्षकी जो सभ्यता हजारो वर्षके पहले थी वही अब भी है। पर अब हमे सन्देह होने लगा है कि हमारा विश्वास हमारी सभ्यतापर नही है। हम रोज उठकर सध्या-वन्दन आदि करते है, अपने पूर्वजोके बनाये हुए श्लोकोका पाठ करते हैं, पर हम उनका रहस्य नही जानते। हमारी श्रद्धा दूसरी ओर झुकती चली जा रही है।

जबतक ससार चलता रहेगा तबतक पाडवो और कौरवोका युद्ध भी चलता रहेगा। प्राय. सब धर्म-ग्रथोंमें लिखा है कि शैतान और देवताओका युद्ध हमेशा चलता रहेगा। प्रश्न यह है कि हम अपनी तैयारी किस तरह करें। मै आप लोगोसे यह कहने आया हूँ कि आप अपनी सभ्यतापर विश्वास करे और उसपर दृढ रहें। ऐसा करनेसे हिन्दुस्तान सारे ससारपर विजय पा लेगा। (हर्षध्वनि)

हमारे नेता कहते है कि पश्चिमके साथ युद्ध करनेके लिए पश्चिमकी रीति ग्रहण करनी होगी। पर स्पष्ट समझिए, इससे हिन्दुस्तानकी सभ्यता नष्ट हो जायेगी। जिस हिन्दुस्तानको आप नही पहचानते हैं वह हिन्दुस्तान आपकी आधुनिक प्रवृत्तिसे विरत है। मैने सफर करके हिन्दुस्तानकी प्रवृत्तिको जाना है और मुझे मालूम हुआ है कि अपनी प्राचीन सभ्यतापर अब भी उसका विश्वास बना हुआ है। जिस स्वराज्यकी ध्वनि हम सुन रहे है और उसके लिए जिस ढगसे काम किया जा रहा है उससे स्वराज्य नही मिलेगा। काग्रेस-लीगकी स्कीम तथा इससे भी बढिया कोई स्कीम हमें स्वराज्य नही दिला सकती। स्वराज्य तो हमें अपने जीवनसे मिलेगा। वह माँगनेसे नही मिल सकता। हम यूरोपकी नकल करके किसी तरह लाभ नही उठा सकते।

यूरोपकी सभ्यता आसुरी है, यह हम देख रहे है। इसका प्रत्यक्ष प्रमाण आधुनिक दारुण युद्ध है। यह इतना भीषण है कि महाभारतका युद्ध इसके सामने कोई चीज नही। हमे इससे सावधान होना चाहिए और याद रखना चाहिए कि हमारे ऋषियोने हमें अचल और अखडित तत्त्व दे रखे है कि हमारी सारी प्रवृत्ति दैवी होनी चाहिए, और उसका मूल धर्ममें होना चाहिए। हमें उसीका पालन करना चाहिए। जबतक कि हम धर्मका पालन नही करेंगे, कितनी भी बडी-बड़ी स्कीमें हम बना डालें — मॉण्टेग्यु साहब हमें यह कह दें कि हम तुम्हे आज ही पूर्ण स्वराज्य देते है — तो भी हम कभी सफल मनोरथ नही हो सकते, हम ऐसे स्वराज्यको बरदाश्त नही कर सकते। हमें तो चाहिए कि हमारे ऋषि-मुनियोने हमारे लिए जो वारसा [वसीयत] रख छोड़ा है उसकी हम सिद्धि करे।

हम सब कोई संसारमे देख सकते है कि जैसी तपश्चर्या भारतमें हुई थी, वैसी संसारमें कही नही हुई। अगर हम हिन्दुस्तानके लिए साम्राज्य भी चाहते है तो उसे अन्य उपायोसे नही, पर सयमसे ले सकते है। निश्चय समझ रखिए कि अगर हमारा जीवन सयममय हो जायेगा तो हम जो चाहेगे प्राप्त कर सकेंगे।

सत्य और अहिंसा ही हमारे ध्येय हैं। 'अहिंसा परमो धर्म' से भारी शोध दुनियामें दूसरा नही है। जवतक हम ससारके व्यवहारोमे रहते है—जवतक हमारी आत्माका व्यवहार शरीरके साथ रहता है, तवतक कुछ-न-कुछ हिंसा हमसे होती ही रहती है, पर जिस हिंसाको हम छोड सकते है हमें उसे छोड देना चाहिए। जिस धर्ममें जितनी ही कम हिंसा है, समझना चाहिए कि उस धर्ममें उतना ही ज्यादा सत्य है। हम अगर भारतका उद्धार कर सकते हैं तो सत्य और अहिंसासे ही कर सकते हैं। वम्बईके गवर्नर लॉर्ड विलिंग्डनने एक समय कहा था कि जव मै हिन्दुस्तानी लोगोसे मिलता हूँ तव मुझे वडी निराशा होती है; वे अपने दिलकी वात नही करते, पर मेरे दिलकी वात करते है, इससे मै असली हालत नही जान सकता। वहुत-से लोगोकी यह आदत होती है कि वे हृदयके भावोको छिपाकर वडे आदमीके रुखपर वात करते है। पर वे इससे अपनी आत्माको कितना धोखा देते हैं, सत्यका भारी घात करते हैं, यह समझते नही। जैसी तुम्हारे दिलमें हो वैसी ही वात करो। विवेकके विरुद्ध जाना धृष्टता है। चाहे राज्यका मिनिस्टर हो, चाहे उससे भी वडा आदमी हो, सत्य और अपने दिलकी वात कहनेमें रत्तीभर सकोच मत करो। हरएकके साथ सत्य और अहिंसाका वरताव करो।

प्रेम एक ऐसी जडी-बूटी है कि कट्टर दुश्मनको भी मित्र वना देती है और यह बूटी अहिंसासे प्रकट होती है। सुषुप्त अवस्थामें जिस चीजका नाम अहिंसा है, जाग्रतावस्थामें उसीका नाम प्रेम है। प्रेमसे द्वेष नष्ट हो जाता है। क्या मुसलमान, क्या अग्रेज, सभीके साथ हमें प्रेम करना चाहिए। यह वात अवश्य है कि हम गोरक्षा करे, पर मुसलमानोके साथ लडाई कर हम ऐसा नही कर सकते। मुसलमानोको मारनेसे हम गौका वचाव नही कर सकते। हमें प्रेम ही से काम करना चाहिए और इसीसे हमें कामयावी होगी। जवतक हमारी अचल श्रद्धा सत्य, प्रेम और अहिंसापर नही रहेगी तवतक हम उन्नति नही कर सकते। इन वातोको छोडकर अगर हम यूरोपकी सभ्यताका अनुकरण करेंगे तो हमारा नाश हो जायेगा। मै सूर्यनारायणसे प्रार्थना करता हूँ कि भारत अपनी सभ्यता न छोडे। आप निर्भय हो जाइए। जवतक आपको तरह-तरहके भय लगे रहेंगे, तवतक आप कभी उन्नति नही कर सकते; कभी आप विजय नही पा सकते। कृपा कर प्राचीन सभ्यताको मत भूल जाइए। सत्य और प्रेमको हरगिज न छोडिए। शत्रु और मित्रके साथ प्रेमपूर्वक व्यवहार कीजिए। अगर हिन्दीको राष्ट्र-भाषा वनाना है तो सत्य और अहिंसाके तत्त्वोंसे आप उसे शीघ्र वैसा वना सकते है।

महात्मा गाधी

१९८. पत्र : अखबारोंको[1]

इन्दौर
मार्च ३१, १९१८

हिन्दी साहित्य सम्मेलनका अधिवेशन समाप्त होने जा रहा है। सम्मेलनने अपने कुछ प्रस्तावोको अमलमे लानेके लिए माननीय रायबहादुर बिशनदत्त शुक्ल, रायबहादुर सरयूप्रसाद, बाबू शिवप्रसाद गुप्त, बाबू पुरुषोत्तमदास टण्डन, बाबू गौरीशंकर प्रसाद, पंडित वेंकटेशनारायण तिवारी और मुझे लेकर एक विशेष समितिके रूपमें हमारी नियुक्ति की है। तमिल और तेलगु-भाषी छ ऐसे होनहार, सच्चरित्र तरुणोके नाम दे जो तमिल और तेलगु-भाषी जनतामे हिन्दीका प्रचार करना ही अपने जीवनका ध्येय बनानेकी दृष्टिसे हिन्दी सीखना शुरू करे। प्रस्तावके अनुसार इनको इलाहाबाद या बनारसमें रखकर हिन्दी सिखाई जायेगी। समिति उनके रहने-खाने और साथ ही शिक्षा ग्रहण करनेका खर्च उठायेगी। अनुमान है कि उनको पाठ्यक्रम पूरा करनेमे अधिकसे-अधिक एक वर्ष लगेगा और हिन्दीमे कुछ थोड़ी योग्यता हासिल करते ही उनको उच्चादर्शपूर्ण कार्य — अर्थात् यथास्थिति तमिल या तेलगु-भाषी जनताको हिन्दी पढानेका कार्य — सौप दिया जायेगा, और उसके एवजमे उनको निर्वाहके लिए उचित वेतन दिया जायेगा। समिति कमसे-कम तीन वर्षतक उनको सेवाकी गारटी देती है और प्रार्थियोसे आशा करती है कि वे पूरी ईमानदारी और योग्यताके साथ निर्दिष्ट अवधि तक उक्त सेवा करनेका करार समितिके साथ करेगे। समितिको आशा है कि इन तरुणोकी सेवाकी अवधि अनिश्चित काल तक बढती रहेगी और वे अपनी तथा देशकी सेवामें रत रहेगे। समितिकी इच्छा है कि इन तरुणोको अच्छा वेतन दिया जाये और उनसे पूरी-पूरी निष्ठा तथा सचाईकी उम्मीद की जाये। मुझे भरोसा है कि आप सम्मेलनकी इस बातसे सहमत होगे कि केवल हिन्दी ही एक ऐसी भाषा है जो विभिन्न प्रान्तोके परस्पर काम-काजके लिए प्रयुक्त की जा सकती है, उसका रूप चाहे सस्कृत-तत्समताका हो या उर्दूका। सारे भारतके मुसलमान और मद्रास प्रेसीडेंसीके अतिरिक्त अन्य प्रदेशोके हिन्दू तो अब भी उसका प्रयोग कर रहे है। मै अग्रेजीके माध्यमसे पढे शिक्षित भारतीयोकी बात नही करता। उन्होने तो आपसी बोलचालकी भाषा अग्रेजी ही बना ली है और ऐसा करके, मेरी विनम्र रायमे देशको काफी हानि पहुँचाई है। यदि हमे स्वराज्यका आदर्श पूरा करना है, तो हमे एक ऐसी भाषाकी जरूरत पड़ेगी ही, जिसे देशकी विशाल जनता आसानीसे समझ और सीख सके। ऐसी भाषा तो सदासे हिन्दी या उर्दू ही रही है और मेरा व्यक्तिगत अनुभव तो यही है कि वह अभी भी बनी हुई है। मुझे मद्रास प्रान्तकी जनताकी देशभक्ति, आत्मत्याग और बुद्धिमत्तापर काफी भरोसा है, मै जानता हूँ कि जो भी लोग राष्ट्रकी सेवा करना चाहेगे या अन्य प्रान्तोके साथ सम्पर्क रखना चाहेगे,

१. गाधीजीने हिन्दी साहित्य सम्मेलनकी कार्रवाई समाप्त होते ही यह पत्र प्रकाशनके लिए समाचारपत्रोंको दे दिया था।

उनको त्याग करना ही पड़ेगा, यदि हिन्दी सीखनेको त्याग ही माना जाये। वैसे मेरा तो खयाल है कि अपने करोड़ो देशवासियोंके साथ हिलने-मिलने योग्य बना देनेवाली एक भाषा सीखना तो अपना एक अहोभाग्य माना जाना चाहिए। यह प्रस्ताव अस्थायी तौरपर एक प्रबन्ध करनेके लिए ही है। वैसे तो देशमें एक बड़ा प्रबल आन्दोलन खड़ा होना चाहिए जो हिन्दीको द्वितीय भाषाके रूपमें पब्लिक स्कूलोंमें लागू करानेपर शिक्षा-अधिकारियोंको विवश कर दे। परन्तु सम्मेलनने महसूस किया कि मद्रास प्रान्तमें हिन्दीका प्रचार तुरन्त ही आरम्भ किया जाना चाहिए। इसीलिए उपर्युक्त प्रस्ताव रखा गया है। मुझे आशा है कि आप इसे अपने पाठकों तक पहुँचा देंगे। साथमें मैं यह भी बतला दूँ कि समिति हिन्दी सीखनेके इच्छुक लोगोंको निःशुल्क हिन्दी पढ़ानेके लिए तमिल और आन्ध्र जिलोंमें हिन्दी-अध्यापक भेजनेकी बात सोच रही है। आशा है उन कक्षाओंका लाभ अनेक लोग उठायेंगे। उल्लिखित प्रशिक्षणके लिए आवेदनपत्र देनेके इच्छुक तरुणोंको अप्रैल मासकी अन्तिम तिथिसे पहले अपने प्रार्थनापत्र हिन्दी साहित्य सम्मेलन, इलाहाबादकी मारफत मेरे नाम भेजने चाहिए।

[अंग्रेजीसे]

स्पीचेज ऐंड राइटिंग्ज ऑफ महात्मा गांधी

१९९. पत्र : वी० एस० श्रीनिवास शास्त्रीको

नडियाद

अप्रैल १, १९१८[1]

खेड़ाकी परिस्थितिके बारे में मेरा वक्तव्य[2] शायद आपने पढ़ा होगा। यह संघर्ष लोगोंके जोशको कुचल डालनेके अधिकारियोंके प्रयत्नके विरुद्ध है। ऐसी परिस्थितिमें मैं मानता हूँ कि किसानोंकी मदद करना हमारा स्पष्ट कर्तव्य है। युद्ध चल रहा है, इस कारण ऐसे जुल्मोंपर पर्दा नहीं डाला जा सकता। मुझे मालूम हुआ है कि लोगोंके प्रति सहानुभूति दिखानेके लिए बम्बईमें एक सार्वजनिक सभा होनेवाली है। हो सके तो आप इस सभामें जाइये और बोलिये भी।[3]

[अंग्रेजीसे]

महादेव देसाईकी हस्तलिखित डायरीसे।

सौजन्य : नारायण देसाई

१. श्री शास्त्रीके उत्तरमें इस तिथिका उल्लेख है।

२. देखिए "वक्तव्य : खेड़ाकी परिस्थितिके बारेमें समाचारपत्रोंको", २८-३-१९१८।

३. श्री शास्त्रीने इसका उत्तर इस प्रकार दिया : "नडियादसे आपका दिनांक अप्रैल १ का पत्र मुझे मिल गया है। कहनेकी जरूरत नहीं कि इस प्रकार आपने मुझे जो सम्मान दिया है मैं उसका महत्त्व समझता हूँ। जो लोग अनुभव और स्थानीय परिस्थितिकी जानकारीके कारण इस विषयमें अपना मत देनेके लिए मुझसे अधिक योग्य हैं मैं नहीं चाहता कि उनके बारेमें अपना कोई मत दूँ। तथापि आप

२००. भाषण : कठानामें

अप्रैल १, १९१८

सरकार कहती है कि उसे लगान वसूल करना ही है, मैं कहता हूँ कि "हमारी जमीनोंमें से ले लो, हमारी मिल्कियतको जब्त कर लो या हमें हिरासतमें ले लो; किन्तु हम अपने हाथसे लगानका रुपया न देंगे और झूठे न बनेंगे।" इस लड़ाईमें न्यायकी जीत होनी ही चाहिए। जबतक मैं जीवित हूँ, तबतक मैं आपके लिए लड़ूँगा। अभी तो जमीनें जब्त होनेकी कोई बात नहीं है। आभूषण, भैंसे और जंगम सम्पत्तिकी बात है। इसमें कोई बड़ी हानि नहीं है। सरकार जब्त करके दस रुपयेकी जगह हजार रुपयेकी जमीनें ले लेगी तो उसे ईश्वर भी सहन न करेगा।

बहनोंको सम्बोधित करते हुए उन्होंने कहा :

आपने अपने पतियोंसे विवाह किया है, उनके आभूषणों या पशुओंसे नहीं। अपने पतियोंको उनकी प्रतिज्ञाके पालनमें सहायता देना आपका धर्म है।

[गुजरातीसे]
खेड़ा सत्याग्रह

यह पसन्द नहीं करेंगे कि मैं अपने मतके अतिरिक्त अन्य किसीके मतके अनुसार काम करूँ, विशेषकर महत्त्वपूर्ण मामलोंमें। साफ बात तो यह है कि यह मान लेनेपर भी कि हक रैयतके पक्षमें है, खेड़ाकी परिस्थितिमें सत्याग्रह छेड़नेके औचित्यके बारेमें मैं सन्तुष्ट नहीं हूँ। अलबत्ता मैं सरकारके अत्याचारको भी ठीक नहीं मानता। मैं कल सर इब्राहीम रहमतुल्ला और सर जेम्स डुबोलेसे मिला था। मैंने तो यथाशक्ति उन दोनोंसे यही आग्रह किया था कि तत्काल मैत्रीपूर्ण नीति अपनाई जानी चाहिए। मुझे तो यह सोचकर दुःख होता है कि मैं आपके आह्वानपर तुरन्त ही निस्संकोच होकर आपके साथ खड़ा नहीं हो पा रहा हूँ, पर साथ ही मैं जानता हूँ कि आप मुझसे इस परिस्थितिमें कोई ऐसा काम करनेकी अपेक्षा नहीं करेंगे जिसका समर्थन मेरा हृदय नहीं करता।" गांधीजी द्वारा इसके उत्तरके लिए देखिए "पत्र : वी० एस० श्रीनिवास शास्त्रीको", ५-४-१९१८

२०१. पत्र : कठानाके निवासियोंको

[अप्रैल १. १९१८के बाद]

[प्यारे भाइयो,]

आपके मालके नीलाम होनेकी खबर मिली। ऐसा नुकसान आपको असह्नीय जान पडेगा इसे मैं अच्छी तरह समझता हूँ। लेकिन मुझे लगता है कि हम इसी तरह आगे बढ सकेंगे। मेरी इच्छा है आप लोग नुकसानसे होनेवाले दुःखको धैर्यके साथ आनन्द-पूर्वक सहन करें। यदि सरकारने चौथाई[1] लागू कर दी है तो उसके लिए हम लडेंगे और मुझे उम्मीद है कि हम उसे वापस ले सकेंगे। माल नीलाम होने देनेमें आप सबने जो बहादुरी दिखाई है उसके लिए मैं आपको बधाई देता हूँ। आपने जो त्याग किया है वह अवश्य फल लायेगा, ऐसा मेरा विश्वास है। मैं आशा करता हूँ कि सब भाई अपने वचनका पालन करेंगे। सत्यकी इस लडाईमें विजयी होकर पार उतरनेके लिए भगवान् आपको दैवी शक्ति और धीरज दें।

[आपका,]

[गुजरातीसे]

खेडा सत्याग्रह

२०२. भाषण : लिम्बासीमें

अप्रैल २, १९१८

हम इस संघर्षको 'सत्याग्रहकी लडाई'का नाम देते हैं। हमने सत्यको अपना हथियार बनाया है, इसलिए यदि आप असत्य बोलेंगे और मुझे धोखा देंगे तो आप गिरेंगे और देश-भरमें यह कहा जायेगा कि हमारी लडाई कायरोंकी लडाई थी। अब जिन्होंने सरकारी लगान पूरा न दिया हो वे अपने हाथ ऊँचे करें।[2] अब जिन्होंने पूरा लगान दे दिया हो वे अपने हाथ ऊँचे करें।[3] इससे सिद्ध होता है कि अधिकांश किसानोंने लगान नहीं दिया है। सचमुच यह प्रसन्नताकी बात है। यदि इतने लोग अपनी बात-पर जमे रहें तो हमारी जीत होगी। हमें जीतका अर्थ समझना चाहिए। हम किसलिए लडाई लड रहे हैं? हम यह लडाई इसलिए लड रहे हैं कि सरकार लगान मुलतवी कर दे। नियम ऐसा है कि चार आनेसे कम फसल हो तो सारा लगान और चार आने

१. लगान न भरनेवालोंपर किया जानेवाला जुर्माना जो कि लगानका एक चौथाई होता था।

२. इसपर कोई २०० लोगोंने हाथ उठाये।

३. इसपर केवल तीन लोगोंके हाथ उठे।

और छ. आनेके बीच फसल हो तो आधा लगान मुलतवी किया जाना चाहिए। कितने ही लोगोकी फसल चार आनेसे कम हुई है, फिर भी उनमे से कुछ लोग अपना लगान आधा दे चुके है। बाकी लगान नही देना है, यही हमारी लड़ाईका उद्देश्य है। सरकारका कहना है कि बहुत जगह फसल छ. आनेसे अधिक हुई है। इसपर हमने न्यायकी दृष्टिसे सरकारसे पच नियुक्त करनेका निवेदन किया; किन्तु उसने हमारे निवेदनको अस्वीकार कर दिया। किन्तु यहाँ प्रश्न केवल लगानका ही नही है। मुझे तो यह देखकर दु ख होता है कि सरकार सदा अपनी बात सच्ची बताती है और लोगोकी सदा झूठी। यह गुलामीकी हालत है। हम अब उसे सहन न करेंगे; हरगिज सहन करना नही चाहते। आपकी इच्छा यही होनी चाहिए। आपको स्वतन्त्रताका सुख प्राप्त कराना इस लड़ाईका उद्देश्य है। यह सघर्ष प्रजा-हठ और राज-हठके बीच है। हमारा हठ सच्चा है, इसीलिए हम उसे सत्याग्रह कहते है। यदि सरकार इस लड़ाईमें हमारी समस्त सम्पत्तिको कुर्क कर ले और हम फिर भी लगान न दे तो जीत हमारी ही होगी। स्त्रियाँ भी अपने पतियोको यही सलाह दे। यदि हमारी फसल कम हो और सरकार उसे अधिक बताये तो हमें अपनी सच्ची बातपर कायम रहना चाहिए। यदि दूसरोसे डरकर कोई ऐसा काम करे जो उसे नही करना चाहिए तो उसकी आत्मा पतित हो जाती है। यदि वह डरसे अकर्त्तव्य न करे तो यह उसका पौरुष और वीरत्व होगा। हम गुलाम नही हैं, बल्कि स्वतन्त्र है। सरकार कहती है कि यदि वह लोगोको एक बार सिर उठाने देगी तो वे अपना सिर सदा ऊँचा ही रखेंगे। किन्तु लोगोके पास अपना सिर व्यर्थ ऊँचा उठानेका समय नही है। उनका बहुत-सा समय अपनी रोटी कमानेमें ही चला जाता है। हम तो स्वय कष्ट उठाकर लड़ रहे है। यदि कोई करोडपति आपका लगान स्वय दे देनेका प्रस्ताव करे तो आप उसे माननेसे साफ इनकार कर दे। ऐसी सहायतासे हम गिरेंगे। लोगोको अपने बल-बूतेपर ही लड़ना चाहिए। उन्हे दु खमे सुख मानना चाहिए। मेरी सहायता तो इतनी ही होगी कि मै आपके दु खमें भागी रहूँगा। मै आपको अपने अनुभव और परामर्शका लाभ दूँगा। इसके अलावा मै और कोई सहायता नही दे सकता। लड़ाई तो आपको ही लड़नी है। यदि आपको सुख और शाति न मिले तो हम भी आपके दु ख-सुखके भागी होगे। आपके चारो ओर आग धधक रही हो तो हम कैसे सुखी हो सकते है। आप कदाचित् इन नोटिसोसे घबराये और फसल जब्त होनेके भयसे काँप उठे; किन्तु यदि आप इनका सामना शातिपूर्वक और मुसकराते चेहरेसे करेंगे तो सरकार दूसरी बार ऐसा न कर सकेगी। सरकार आपको भयभीत करनेके लिए यह सब कर रही है। हमारे धर्मशास्त्रोमें सत्यकी खातिर कष्ट सहनेके अनेक उदाहरण मिलते है।

यदि लिम्बासीके किसान सत्यके निमित्त बरबाद हो जायेंगे तो हम कहेंगे कि राजा नलकी कहानी सच्ची है। यह भी कहा जायेगा कि लिम्बासीमें आज सैकडो राजा नल हैं। खलिहानोको जब्त हो जाने दे और जमीनोको भी। जिस दिन हम अपनी जमीनें जब्त हो जानेपर प्रसन्न होकर ढोल बजाते हुए गाँवसे बाहर निकलेंगे, वह दिन सोनेका दिन होगा, क्योकि उसी दिन यह सिद्ध होगा कि हमारी प्रतिज्ञा पूरी हो गई। जो लोग बरबाद होगे उन्हे हम भूखो न मरने देंगे। यदि आपको लघन करना पडेगा तो आपके

साथ में और मेरे समान और सैकड़ो व्यक्ति लंघन करेंगे। यदि आप कष्ट सहन करेंगे तो सुख आपके पीछे दौड़ता हुआ आयेगा। यह प्रकृतिका नियम है।

जहाँ तलाटी, मुखिया और चौकीदारका आतंक है वहाँ तहसीलदारका कहना ही क्या है? एवं कलक्टरकी ओर तो देखा भी कैसे जा सकता है? आपके मनमें यह झूठा भ्रम पैठ गया है। अधिकारियोंसे डरना चाहिए ऐसा कानूनमें कहीं नहीं है। हम डरेंगे नहीं तो कानूनके अन्तर्गत भी हमें दण्ड नहीं दिया जा सकता। हमें तो ईश्वरसे ही डरना चाहिए।

जिन लोगोंके ऊपर अत्याचार किये जा रहे हैं उन्हें घबराना नहीं चाहिए। सरकारसे जूझनेका यह नया ही अवसर है। यह सत्यकी लड़ाई है। भाई इन्दुलाल[1] और भाई हरिप्रसाद[2] इन ताल्लुकोंमें ही रहेंगे। आप उन्हें अपने कष्टोंकी जानकारी देते रहें। हम अन्य ताल्लुकोंमें भी ऐसा ही प्रबन्ध करेंगे। हम नित्यप्रति एक हस्तलिखित पत्रिका निकालेंगे, उसमें दैनिक स्थिति बताते रहेंगे। इससे आपको विश्वास हो जायेगा कि हम एक भी क्षण आलस्यमें नष्ट न करके आपकी लड़ाईमें ही खर्च करते हैं। इसी शुक्रवारको, यहाँकी स्थितिके सम्बन्धमें एक सभा बम्बईमें की जायेगी।[3] धीरे-धीरे समस्त भारत जग जायेगा। इसका श्रेय आपको ही मिलेगा। खेड़ा जिलेने समस्त देशको मार्ग दिखाया है। इससे समस्त देशका कल्याण होगा। जब किसान यह कहेंगे कि 'हम मर्द हैं, बहादुर हैं, और सत्यकी खातिर त्याग करनेके लिए तैयार हैं', तब मैं कहूँगा कि वे मनुष्य नहीं हैं, बल्कि देवता हैं। मैं आपकी जीतकी कामना करता हूँ।

[गुजरातीसे]

खेड़ा सत्याग्रह

२०३. भाषण : करमसदमें

अप्रैल ४, १९१८

कुछ दिन पहले जब हम नडियादमें इकट्ठे हुए थे और हमने सत्याग्रहका निश्चय किया था तब मैंने कहा था कि मैं मुहम्मद अली और शौकत अलीके कार्यके सम्बन्धमें दिल्ली जा रहा हूँ। ऐसा लगता है कि मानो मैं अलीबन्धुओंके मामलेमें गहरी दिलचस्पी नहीं ले रहा हूँ, किन्तु उनके कार्यमें मैं कितना रत हूँ, यह मैं ही जानता हूँ। आज यहाँ जो मेहमान मौजूद हैं उनमें भाई शुएब[4] भी उसी कोटिके व्यक्ति हैं जैसे कि अलीबन्धु। मैंने मुस्लिम लीगकी सभामें कहा था कि मैं भारतमें जहाँ-जहाँ जाता हूँ, वहाँ-वहाँ जो मुसलमान खुदा-परस्त और सत्य-भक्त होते हैं उनसे प्रेमपूर्वक भेंट करता हूँ।

१. इन्दुलाल याज्ञिक, एक सक्रिय राजनैतिक कार्यकर्ता; गांधीजीने इन्हींसे नवजीवन लेकर उसे साप्ताहिकका रूप दिया था।

२. डॉ० हरिप्रसाद; जिन्होंने खेड़ा सत्याग्रहमें कार्य किया था।

३. यह सभा बादमें स्थगित कर दी गई थी, देखिए अगला शीर्षक।

४. सभामें बाबू राजेन्द्रप्रसाद, न्यू इराके सम्पादक श्री शुएब कुरैशी और अन्य कई लोग उपस्थित थे।

भाई मुहम्मद अली और शौकत अली ऐसे ही मुसलमान है। इन दोनो भाइयोका परिचय प्राप्त करनेके सिलसिलेमे मेरी भेट श्री शुएबसे हो गई। वे यहाँ मेरे अनुरोधपर आये है। वे विद्वान् और सत्यके समर्थक है। उन्होने कष्ट-सहनमे कोई कसर नही रखी है।

दूसरे भाइयोका परिचय किन शब्दोमे दूँ? मेरे भाई गुजर गये है; किन्तु जिनको देखकर मुझे अपने भाइयोका अभाव विस्मृत हो जाता है वे भाई राजेन्द्रबाबू यहाँ आये हुए है। इनसे मुझे इतना प्रेम मिला है कि मै उन्हे कदापि भूल नही सकता। भाई बदरीनाथ वर्मा भी राजा जनककी भूमि बिहारके वासी है। बहन आनन्दीबाई मेरी बेटीका अभाव पूरा कर रही है। वे विधवा है। वे अब भी पढ रही है। चम्पारनमें जब स्त्रियोकी आवश्यकता हुई थी तब डॉ० देवने इन्हे मुझे सौपा था। आज हम इन सब लोगोकी उपस्थितिमे यहाँ सत्याग्रह-सग्रामकी बात करेगे।

बम्बई तो धनाढ्योकी नगरी है। उसे सत्याग्रहका मर्म समझाना कठिन काम है और इससे भी कठिन काम है बम्बई सरकारको समझाना, क्योकि वह तो जहाँ-तहाँ कानूनी धाराएँ लागू करती रहती है। फिर भी अभी हालकी बातचीतके फलस्वरूप एक समिति नियुक्त की गई है। वह सरकारसे मिलेगी। बम्बईमें सार्वजनिक सभा बुलानेकी बात फिलहाल मुलतवी कर दी गई है। आप लोगोको छोडकर बम्बई जानेकी इच्छा नही होती। मै आपको छोड़कर कही जा ही नही सकता। यह लड़ाई बम्बईके लोगोकी सहायतासे नही जीतनी है। यदि खेड़ाके किसान सरकारके डरसे एकके बाद एक गिरते जाये तो बम्बईके लोगोकी सहायता क्या काम देगी? आप सरकारको छाती ठोककर कहे कि आपकी यह लड़ाई सत्यकी लडाई है और इसमे आप कष्ट सहनेके लिए तैयार है।

यह अच्छा ही हुआ कि मै अपने साथ अपने इन मेहमानोको यहाँ ले आया। यह वल्लभभाईकी जन्मभूमि है। वल्लभभाई यद्यपि अभी भट्टीमे है, और उन्हे अभी भली-भाँति तपना है फिर भी मुझे विश्वास है कि हमें अन्तमे कुन्दन ही मिलेगा। आप इन्हे प्रसन्नतापूर्वक आशीर्वाद देकर विदा करे। आपने उन्हे लड्डुओकी दावत दी, यह उचित ही है, किन्तु उसके बाद दक्षिणा भी तो देनी चाहिए। और उनकी दक्षिणा यही हो सकती है कि आपको सरकार चाहे उस तालाबमे डुबा दे अथवा आगमे झोक दे, किन्तु आप उसे लगानकी एक पाई भी न दे।

इस सभामे बडौदा राज्यके किसान भाई भी आये है, यह बहुत अच्छी बात है। सत्याग्रहमे हमारी जमीन चली जायेगी तब, मै उनसे ऐसी अपेक्षा करता हूँ कि वे अपनी जमीने हमे दे देगे। यदि हम यह कहते हो कि फसल चार आनेसे कम हुई है तो सरकार एक पाई भी ले जाये, इसे हम कैसे सहन करेगे? इस सघर्षमे एक महत्त्वपूर्ण तत्त्व दूसरा भी है। और वह यह है कि सरकारकी बात रहे या रैयतकी। अधिकारियोकी झूठी जिदसे लडनेमे लोगोकी सरकारके प्रति वफादारी है। हमे मनुष्यता प्राप्त करनी है। जब हम जाग्रत हुए है तब हमें सावधान होकर चलना चाहिए। देशमे उथल-पुथल हो रही है। विदेशोमे रक्तकी नदियाँ बह रही है। यूरोपमे अग्रेजोने अपनी वीरता प्रमाणित कर दी है। हम इन वीरोके सहभागी होना चाहते है। हम वीरोके साथ वीर बनेंगे तो ही शोभा पायेगे। यदि हम वीर न बनेगे तो उन्हे भी नामर्द बना देंगे।

यदि हम दीन बन जायेंगे तो उनको भी दीन कर देंगे। हम देशमें जाग्रति उत्पन्न करने और लोगोको सत्याग्रहका पाठ पढानेके लिए यह लड़ाई लड रहे है।

लडाईमें शस्त्र लेनेसे वीरता नही आती। शस्त्र हो, किन्तु हृदयमें कायरता हो तो शस्त्र व्यर्थ हैं। वीरता निभर्यतासे तलवारका प्रहार सहकर भी अविचलित बने रहनेमें है। इस वीरताके तत्त्व पुरुषो, स्त्रियो और बालको सभीमें हो सकते हैं। मैं चाहता हूँ कि खेडाके किसानोमें ऐसा शौर्य हो। हमारा शस्त्र सत्यपर आग्रह करना है। खेड़ाके किसान अपना सर्वस्व गँवा दें, किन्तु लगान न दें। मुझे विश्वास है कि करमसदके किसान कभी पीछे न हटेंगे। हमे दुःख सहन करना है। हमें अपनी सम्पत्तिकी आहुति देनी है। यह विचार अवश्य आता है कि खानेके लिए मिलेगा या नही, किन्तु जिसने दाँत दिये हैं वह खानेके लिए भी देगा।[1]

यह संघर्ष सर्वस्वकी बलि देनेका है। फिर भी जो बुरी नीयतसे हमारी जमीनो-पर हाथ डालेंगे वे उसे पचा न सकेंगे। यदि सरकार ऐसा करेगी तो हम विद्रोही बन जायेंगे। यदि वह सौ रुपयेका लगान वसूल करनेके लिए दस हजार रुपयेकी जमीनको नीलाम करेगी तो उस जमीनको जो भी लेगा पचा न सकेगा। इस सरकारका आधार लूट-पाट नही, न्याय है। आप विश्वास रखें कि जिस दिन मुझे यह पता चल जायेगा कि इस राज्यका आधार लूट-पाट है, उसी दिन उसके प्रति मेरी वफादारी चली जायेगी। हमारी जमीनें चली जायेंगी तब हम क्या करेंगे, यह भय क्यो करना चाहिए? ऐसा कोई नही है जो हमारी जमीनोको पचा सके।

[गुजरातीसे]

खेड़ा सत्याग्रह

२०४. पत्र: के० नटराजनको

[अप्रैल ५, १९१८ से पूर्व]

भाईश्री नटराजन,[2]

यह देखकर मुझे दु:ख होता है कि कई बार आप जल्दीमें निर्णय कर लेते हैं और दूसरे पक्षकी बात सुननेका धीरज नही दिखाते। आप राष्ट्रकी सेवा तो करना ही चाहते हैं, किन्तु मेरा नम्र विचार है कि आपकी इस आदतके कारण राष्ट्र-सेवा करनेकी आप-की शक्तिपर उलटा असर पड़ता है। इस खेड़ा-प्रकरणको ही लीजिए। आप मुझसे भिन्न मत रखें, इसका मैं बुरा नही मानता, बल्कि मैं तो इस बातके लिए आपका आदर करता हूँ कि आप अपने विश्वासोको व्यक्त कर देते हैं, यद्यपि अपने मित्रोके मनके विरुद्ध उनपर डटे रहनेमें आपको कष्ट भी हो सकता है। मेरी शिकायत इस बातके खिलाफ है कि आप जल्दबाजीमें फैसला कर लेते हैं। आप खेडाकी लड़ाईकी भीतरी बातें नही

१. इसके बाद गांधीजीसे कुछ प्रश्न पूछे गये जिनमें से एकका उत्तर अगले अनुच्छेदमें दिया गया है।

२. कामाक्षी नटराजन, इंडियन सोशल रिफॉर्मरके सम्पादक।

जानते, और न उनका अध्ययन करनेके लिए आपके पास समय है। गोधरामें एक सम्मेलन[1] हुआ था; और उसी सम्मेलनमें आम जनताने पहली बार सक्रिय भाग लिया। सम्मेलनके अन्तमे कुछ लोगोने नेताओपर ताना कसते हुए कहा था, "ऐसे सम्मेलनोका आयोजन करने और उनमे हमे बुलानेसे क्या लाभ? खेड़ा जिलेमें आज स्पष्ट रूपसे फसलके लगभग मारे जानेकी समस्या उपस्थित है, और किसानोको यह अधिकार है कि लगानकी वसूली मुलतवी कर दी जाये। आप लोग इस मामलेमें क्या कर रहे है?" सुननेवालोमें से कुछ लोगोने इस तानेको उचित समझकर स्वीकार कर लिया और वचन दिया कि वे इस सम्बन्धमे कार्रवाई करेगे। इसीके परिणामस्वरूप लगानको मुलतवी रखनेके लिए हजारो आदमियोके दस्तखतसे प्रार्थनापत्र[2] भेजा गया। वसूली मुलतवी रखनेके लिए यह अर्जी ही काफी थी। इससे सरकारको केवल ब्याजका नुकसान होता, किन्तु उसके बदलेमें वह लोगोका सद्भाव प्राप्त कर सकती थी। लेकिन अधिकारियोने अनिश्चित और गलत रास्ता अपनाया। उन्होने फसलका अन्दाजा लगानेके लिए आनावारी पत्रक मँगाने शुरू किये। इन पत्रकोके बारेमें मैं कह सकता हूँ कि निष्पक्ष और बारीकीसे जाँच करने पर वे खरे नही उतर सकते। राहत प्राप्त करनेके जितने रास्ते हो सकते थे, किसानोंने उन सबको आजमा लिया है। हरबार उनके सामने ये गलत कागजात रख दिये जाते थे। ऐसी हालतमे वे लोग क्या करते? अपने ढोर-डंगर, पेड-पौधे और दूसरी सम्पत्ति बेचकर चुपचाप लगान चुका देते? मैं तो कहूँगा कि मेरी ही तरह आप भी व्यक्तिश: मौकेपर उपस्थित हो और किसानोको वैसा करनेकी सलाह देकर देख ले। किसानोके पास अनाज-वनाज तो है नही। ऐसी स्थितिमे उनसे लगान वसूल करनेके लिए कैसे-कैसे उपाय काममे लाये जाते है, यह आपको जानना चाहिए। मेरी नजरोके सामने किसानोको पौरुषहीन बनाया जाता और मैं चुपचाप देखता रहता, यह मुझसे नही हो सकता था। आपसे भी नही हो सकता। मेरे विचारसे किसी भी जातिके लिए ऐसा कहना बिलकुल वैध, न्यायसगत और उचित है कि "आप हमारी अर्जियोको नामजूर करते है, इसलिए यदि अब हमे लगान अदा करना है, तो हम कर्ज लेकर या अपनी सम्पत्ति बेचकर ही अदा कर सकते है।" आप जरा आकर देखिए तो कि किसान लोग यह लड़ाई किस प्रकार पूरे उल्लासके साथ लड रहे है, किस प्रकार वे हर तरहकी क्षति उठानेके लिए अपना दिल कडा कर रहे है, और किस प्रकार बड़े-बूढे तथा स्त्रियाँ भी प्रदर्शनमें भाग ले रही हैं। कमसे-कम आपको तो यह देखना ही चाहिए कि इस स्वेच्छया कष्ट-सहनसे राष्ट्रका गौरव बढेगा, जब कि अबतक यही कष्ट अनिच्छापूर्वक सहते रहनेसे उसका पतन ही हुआ है। यह तो रोटीकी लड़ाई है। राहत देनेकी प्रार्थना करनेवाली हजार सभाएँ आयोजित करनेका भी क्या फायदा है, यदि वे ऐसे अवसरपर, जब कि एक संवैधानिक आन्दोलन चलाया जा रहा है, लोगोको यही सलाह दें कि अपने पेड़-पौधे, ढोर-डगर, गहना-गाँठा बेचकर भी लगान अवश्य चुका दो? यह तो रोटी माँगनेपर पत्थर देने-जैसी बात हुई।

१. देखिए "भाषण: समाज-सम्मेलनमें", ५-११-१९१७।

२. यह प्रार्थनापत्र सर्वप्रथम १५ नवम्बर, १९१७ को कठलालके किसानोंने पेश किया था। बादमें १८,००० किसानोंके हस्ताक्षरोंसे इसी प्रकारके और भी प्रार्थनापत्र सरकारको भेजे गये थे।

मेरी कामना है कि यह पत्र आपकी अन्तरात्माका स्पर्श करे, आपकी शोध-वृत्तिको उत्तेजित करे और आपको खेडा आकर लडाईको अपनी आँखो देखनेकी प्रेरणा दे। और तब यदि आप अपनी रिपोर्ट देना चाहेंगे तो मैं उसके लिए न केवल सहर्ष तैयार रहूँगा, बल्कि आपको वैसा करनेके लिए आमन्त्रित करूँगा, चाहे वह रिपोर्ट हमारे उद्देश्यके लिए कितनी भी हानिकर क्यो न हो। उस दशामे मुझे यह जाननेका सन्तोष तो रहेगा कि आपने कमसे-कम प्रश्नका भली-भाँति अध्ययन किया है। इतना कर देना अपने-आपके प्रति, एक मित्रके प्रति और अपने राष्ट्रके प्रति आपका फर्ज है। यदि आप इस उद्देश्यके लिए इतना समय भी — और इतना समय दिये बिना तो काम ही नही चल सकता — देनेको तैयार न हो तो आपको खेडाके मामलेमे कोई मत रखनेका अधिकार नही है।

आशा है, आपको इस प्रकार लिखकर मैंने जो धृष्टता की है, उसके लिए आप मुझे क्षमा करेंगे। मैंने आपसे कई बार कहा है कि अपने काममें आपका सहयोग और सहायता प्राप्त करनेके लिए मैं बराबर प्रयत्नशील रहता हूँ। फिर भी, यदि आप पूरा विचार करनेके बाद मुझे यह मदद न दे सकें, तो मुझे कोई शिकायत न होगी। आपको "सत्याग्रह" शब्दके पीछे भटक नही जाना चाहिए। आपके सामने एक ठोस मामला मौजूद है, और उसके सम्बन्धमें उसीके गुण-दोषके आधारपर मत स्थिर कीजिये।[1]

आपका,
मो० क० गांधी

[अंग्रेजीसे]

महादेव देसाईकी हस्तलिखित डायरीसे।
सौजन्य: नारायण देसाई

१. इस पत्रके सम्बन्धमें महादेवभाई अपनी डायरीमें कहते हैं: "बापूसे कहा गया कि इससे नटराजनको बहुत दु.ख होगा। बापूने पत्रको फिर पढ़ा। दो वाक्य अपूर्ण रह गये थे। बापूने इसके लिए मुझे फटकारते हुए कहा: 'मेरा तो खयाल है कि कमसे-कम तुम ऐसी बातोंकी ओर मेरा ध्यान अवश्य दिलाओगे। लेकिन तुमने ऐसा किया क्यों नहीं?' मैंने जवाब दिया: 'मैंने इसे वल्लभभाई और बैंकरको दिखाया था।" बापूने कहा: "यह तो बिल्कुल ठीक है। वे कहेंगे कि मैं लिखना नहीं जानता। लेकिन इसमें दलील तो है ही। मैंने यह पत्र उनकी बुद्धिको झकझोरनेके लिए लिखा है, उनके मनको कष्ट पहुँचानेके लिए नहीं। यह पत्र पूछता है, भैया! तुम्हारी बुद्धि काम क्यों नहीं करती?'"

२०५. पत्र : वी० एस० श्रीनिवास शास्त्रीको

अप्रैल ५, १९१८

[प्रिय श्री शास्त्रियर,]

आपके पत्रके[1] लिए आभारी हूँ। अपने हरएक कामके लिए आपकी सम्मति प्राप्त करनेकी मुझे कितनी ही उत्सुकता हो, फिर भी आपकी यह दलील मैं स्वीकार करता हूँ कि आपकी अन्तरात्मापर किसी भी तरहका दबाव नहीं पड़ना चाहिए। मैं जानता हूँ कि खेड़ाका सवाल दिनोदिन जैसे आगे बढ़ता जायेगा, आप उसके साथ सम्पर्क बनाये ही रहेंगे।

[हृदयसे आपका,]

[अंग्रेजीसे]

महादेव देसाईकी हस्तलिखित डायरीसे।
सौजन्य : नारायण देसाई

२०६. भाषण : वड़थलमें

अप्रैल ५, १९१८

इस संघर्षमें वडथल गाँवके लोगोंने आरम्भसे ही मुख्य हिस्सा लिया है। मैं यहाँ एक-एक खेतपर गया हूँ और मुझे विश्वास हो गया है कि इस गाँवमें फसल औसतन चार आनेसे कम हुई है। यहाँ कलक्टर फिर जाँच करने आया था। मैंने उसे लिखा कि मैंने स्वयं जाँचकी है और इस बातका इतमीनान कर लिया है कि फसल चार आनेसे कम हुई है, किन्तु उन्होंने मेरी बात स्वीकार नहीं की।

मैंने आप लोगोंको बताया ही है कि हमारी यह लड़ाई स्वयं कष्ट-सहनकी लड़ाई है। आपको जितना कष्ट सहना पड़ रहा है, सत्याग्रहकी लड़ाईमें उसकी अपेक्षा मैंने और लोगोंको ज्यादा कष्ट सहते देखा है। मुझे तो आपको कड़वे घूँट पिलाने हैं। वड़थलमें जिस दिन सरकार आपकी भैंसें नीलाम करे, आपकी चीजें नीलाम करे और आपकी सम्पत्ति जब्त करे उस दिनको आप खुशीका दिन समझें। यदि किसी वड़थलवासी-को कैदकी सजा हुई तो कैदखाना पवित्र हो जायेगा। स्त्रियोंको तो उनके पति जिस दिन जेल जायें उस दिन अवश्य ही दावत करनी चाहिए।

जब्तीके नोटिस आये हैं। ये धमकियोंके रूपमें हैं। उनके बावजूद जमीनोंके मालिक तो हम ही हैं। जमीन चाहे जितनी कीमती हो, किन्तु इस कारण हम अपने कर्तव्यके

१. देखिए "पत्र : वी० एस० श्रीनिवास शास्त्रीको", १-४-१९१८ की पादटिप्पणी-३।

पालनसे तनिक भी झिझकें नही। यदि इस लडाईमें आपका सर्वस्व चला जायेगा तो इससे आपको किसीको भी भूखो नही मरना पडेगा। हम भीख माँगेगे, किन्तु आपकी जरूरत पूरी करेगे। आप अपनी प्रतिज्ञाकी खातिर दु ख सहें।

यदि मैं भैंसोका पैसा दूँ तो इससे यही निष्कर्ष निकाला जायेगा कि मैंने और आप सभीने लोगोको धोखा दिया है। आपको पैसेकी मदद मिले और तव आप सत्याग्रह की लडाई लड़ें, यह अनुचित होगा। सरकार जोर-जुलम करे तो आपके साथ खडा हुआ जा सकता है, आपको हिम्मत बँधाई जा सकती है और नैतिक सहायता दी जा सकती है। मुझे आपके भीतर पैंठी हुई पस्तहिम्मती निकाल देनी है। मैं भारतके प्राचीन गौरवको वापस ले आना चाहता हूँ।

यदि प्राचीन कालमे सीता हुई थी तो इस कालमें भी होनी चाहिए, ऐसा मेरा विश्वास है। भारतमें एक युगमें रामचन्द्र-जैसे युग-पुरुष हुए हैं, ऐसे पुरुष इस युगमें भी होने चाहिए। हमारे पूर्वजोकी यह विरासत हममें भी आनी चाहिए। आपने हरिश्चन्द्र और ध्रुवकी कथाएँ सुनी ही हैं। जैसा हरिश्चन्द्रने किया हम विलकुल वैसा नही कर सकते, किन्तु उसका एक अग तो कर ही सकते हैं। वहिनें भी इस प्रतिज्ञाकी महिमाको समझें। यदि वहिनें अपने टेककी पक्की न हो तो उनके वच्चे भी साहसहीन होगे। जिस ईश्वरने हमें उत्पन्न किया है वही हमें न्याय देगा। यदि हम इस लडाईमें टिके रहेगे तो भविष्यमें स्वराज्य भी ले सकेंगे। वड्थलके किसानोकी रक्षा करनेके लिए मुझे एक वार मरना भी पडे तो मैं प्रसन्नतापूर्वक मरनेके लिए तैयार हूँ।

अव लगानकी वमूलीमें आपकी भैंसें वेची जा रही हैं, इससे मैं अपरिचित नही हूँ। भैंसें वेचकर लगान भरनेकी अन्य अनेक घटनायें भी हुई हैं। ऐसा सकट आपके ऊपर हर साल न आये, इसलिए आप इस वार सरकारको अपनी भैंसें वेच लेने दें। सरकार इस वार भले ही ऐसा कर ले, किन्तु आप विश्वास रखिये अगले सालसे वह भैंसें कदापि न वेच सकेगी और दूसरे जुल्म भी न कर सकेगी।

आत्म-सम्मानकी भावना तो पशुओ और पक्षियो तक में होती है, फिर आप तो मनुष्य कहे जाते हैं। इसलिए आप अपनी प्रतिज्ञाका पालन करनेमे न चूकें। प्रतिज्ञा लेनेसे पूर्व आपको सव स्थिति भली-भाँति समझा दी गई थी। यद्यपि हमारी इस लडाईमें हमें धनिकोकी सहायता प्राप्त है, किन्तु उनकी सहायता लेकर लडना ऐसा ही है जैसे सूजनसे किसीका मोटा-ताजा दिखाई देना। आप ईश्वरमें श्रद्धा रखें, न्याय और सत्यके पथपर चलते हुए आपकी रक्षा वही करेगा। न्याय अथवा दया उसके सिवा किसी दूसरेसे नही मिल सकती।

अव जो लोग आपके साथ काम कर रहे हैं, आप उनकी स्थितिपर विचार करें। चौवीस घंटोमें एक क्षणके लिए भी मैं खेडा-सत्याग्रहकी वात नही भुला सकता। डॉ० हरिप्रसाद देसाईने तो खेडाको अपना घर ही वना लिया है। अहमदावादमें उनके पास सार्वजनिक कामकी कमी नही है। उस सवको छोड़कर वे यहाँ आकर इस काममें लग गये है और आपके साथ रह रहे हैं। आप देखते ही है कि श्री वल्लभभाई और श्री केशवप्रसाद अभी महुधासे चले आ रहे हैं।

दो भाई चम्पारनके हैं। वे राजा जनकके देशसे आप लोगोके दर्शन करनेके लिए आये हैं। मुझे आशा है कि आप इन सब बातोंको भूल नही जायेंगे और वदथलकी लाज न खोयेंगे।

[गुजरातीसे]

खेड़ा सत्याग्रह

२०७. पत्र : एक युवकको

नडियाद

फाल्गुन वदी १० [अप्रैल ६, १९१८]

भाईश्री,

आपके सम्बन्वमें भाई पोलकका तार मिला है और उस सम्बन्धमें उत्तर भी आ गया है। मैंने . . [1] के साथ काफी देरतक बातचीत की है। उन्होंने आपको सब-कुछ लिखा होगा। आप थोड़ा धैर्य रखें तो अच्छा हो। वे आपको अवश्य मुक्त करेंगे; वे इसका वचन देते हैं। इतना ही पर्याप्त होना चाहिए? अभीसे बात जाहिर करनेमें नुकसान है। ऐसा भाई . . .[2] कहते हैं।

और हाँ, एक बात और है। आपकी तबीयत बिलकुल ठीक हो जानेकी हम अवश्य उम्मीद रखते हैं। और यदि ऐसा हो तो सब लोगोकी इच्छा है कि आप विवाह करनेमें आनाकानी न करे। ऐसा कहनेवालोमें मैं सबसे पहले हूँ। आपके सम्बन्धमें मुझे केवल इतना ही कहना है कि आप और . . .[3] विवाह न करेंगे तो यह केवल स्वास्थ्यके कारण ही होगा, दूसरा कोई कारण नही हो सकता। इसमें पिताजीको शान्ति मिलेगी और . . .[4] का जीवन सुखमय होगा। आप निश्चिन्त होकर अपने स्वास्थ्यको सुधारे। आप यदि तनिक भी अस्वस्थ होगें तो कोई आपसे [विवाहके लिए] आग्रह नही करेगा। मेरी ख्वाहिश यह है कि आप अपने शुभचिन्तकोकी खातिर प्रसन्नतापूर्वक [विवाहकी] स्वीकृति दें, परन्तु अपने स्वास्थ्यको बिगाड़कर नही।

मोहनदास गाधीके वन्देमातरम्

[गुजरातीसे]

महादेव देसाईकी हस्तलिखित डायरीसे।
सौजन्य : नारायण देसाई

१, २, ३ व ४. मूलमें यहाँ कुछ शब्द छोड दिये गये हैं।

२०८. भाषण: खेड़ामें

अप्रैल ६, १९१८

सत्यके लिए प्राण उत्सर्ग कर देना अच्छा है। लेकिन आर्थिक हानिके भयसे पशुओ-के समान दुःख भोगनेसे अधिक बुरी दूसरी बात कुछ नही है। बहनें सत्यकी इस लड़ाईमें अपने पतियोका साथ दें और इस प्रकार उन्हे अपनी टेक दृढतापूर्वक निभानेमें सहायता देकर अपने धर्मका पालन करे।

[गुजरातीसे]

खेड़ासत्याग्रह

२०९. भाषण: उत्तरसंडामें[1]

अप्रैल ६, १९१८

मुझे आशा थी कि इस सभामें बहनें भी आयेंगी। इस कार्यमें जितनी जरूरत पुरुषोंकी है उतनी ही बहनोकी भी है। यदि हमारी लड़ाईमें बहनें सम्मिलित हो जायें और हमारे कष्टोंमें साथ दें तो हम बहुत-अच्छा काम कर सकते है।

मैं देखता हूँ कि लोगोंका उत्साह बढता जाता है। यह लड़ाई लोगोकी है और यदि वे समझ जायें तो सरकार जबतक चाहे लड़ती रहे, हम हारेंगे नही। लोगोकी हिम्मत देखनेका वक्त तो आखिर अब आया है। हमारा माल-असबाब जब्त किया जाता है और हमारी भैंसें ले जाई जाती हैं। जैसे सोना आगमें तपकर शुद्ध होता है उसी तरह ऐसे कष्टोंमे हमारी कसौटी होती है। इस लड़ाईमें आप हिम्मत, दृढता और धीरता सीखते हैं।

इस कस्बेमें सरकारने यथासम्भव कड़ी कार्रवाई की है। किन्तु हमें ससारको दिखा देना है कि हममें तेज है, कष्ट सहनेकी शक्ति है और हम अपनी प्रतिज्ञासे कभी पीछे पाँव न हटायेंगे। उत्तरसडा पाटीदारोंसे भरा है और यदि इस लड़ाईमें हमारी जीत होनी है तो वह आपकी जातिके ही बलपर होगी। आपने वैभव देखा है, अच्छे दिन देखे हैं और बुरे दिन भी देखे है। मैं चाहता हूँ कि इस लड़ाईमें आप वीरतापूर्वक उत्तीर्ण हो। आपने इस लड़ाईमें भाग लिया है यह आपकी कुलीनताका, आत्मसम्मानकी भावना का सूचक है।

कुछ लोग शायद आपको शस्त्रबल आजमानेकी सलाह दें। किन्तु आपको याद रखना चाहिए कि जो लाठी चलाता है वह लाठीका प्रहार रोक भी सकता है। मैं चाहता

१ गांधीजी उत्तरसंडामें कस्तूरबा, वल्लभभाई पटेल, महादेव देसाई, शंकरलाल बैंकर और अनसूया-बेनके साथ गये थे। सभामें लगभग दो हजार किसान आये थे।

हूँ कि आप अपनी शक्तिका अच्छा और सच्चा उपयोग करें। खेड़ामें एक "सत्याग्रही सेना" का जन्म हो और वह भारतके सम्मानकी रक्षाके लिए सदा लड़नेके लिए तैयार रहे, यह अत्यन्त वांछनीय है। आपके कस्बेसे, जहाँ बहुतसे बलवान और वीर लोग रहते हैं, देशको बहुत-सी आशाएँ रखनेका अधिकार है।

खेड़ा जिलेके लोगोंमें जो अद्भुत शक्ति है उसका मुझे इन दिनों अच्छा अनुभव हो रहा है। यदि इस लड़ाईमें ली गई धर्म-प्रतिज्ञाका पालन सभी भाई करें तो इसमें सन्देह नहीं कि हमें चौबीस घंटेमें स्वराज्य मिल सकता है।

इसलिए आप सबसे मेरी एक ही प्रार्थना है कि सरकार आपके बर्तन-भांडे बेचे, आपकी चारपाइयाँ बेचे और आपके ढोर-डंगर बेचे तो उसे बेचने दें; परन्तु आप डरें नहीं; डिगें नहीं। आपसे मैं यही वचन-दान चाहता हूँ। मैं इस वचनका भूखा हूँ। आप मुझे यह दान देकर सन्तुष्ट कर सकते हैं। इस प्रतिज्ञाका पालन करनेके लिए आपको प्रेमभावकी पूँजी लेकर जूझना है। आपकी शक्तिको परखकर ही मैंने आपको सत्याग्रह-की लड़ाईमें उतारा है। आप प्रसन्नतापूर्वक शुद्ध हृदयसे और मुसकराते हुए मुझे यह वचन देकर निर्भय करें।

[गुजरातीसे]

खेड़ा सत्याग्रह

२१०. भाषण : नवागाँवमें[1]

अप्रैल ७, १९१८

हम लोग यहाँ तोरणासे सीधे चले आ रहे हैं। जैसे नवागाँव और दसकोसी [ताल्लुके] के दूसरे गाँवोंके किसान डटे हुए हैं वैसे ही तोरणाके किसान मजबूतीसे सामना कर रहे हैं। मुझे विश्वास है कि ऐसा भारी हमला होनेपर भी तोरणाका पतन नहीं होगा। आप सत्यकी नींवपर खड़ी की गई इस लड़ाईको चालू रखें। आप अपने कार्यमें बहनोंको भी साथ रखें। उनका साहस और धैर्य हमारे काम आयेगा। बहनें कहें कि भैंसोंका जाना तो बरदाश्त नहीं होता और हम इस नुकसानके डरसे हार जायें तो हमारे लिए खड़े होनेकी जगह न रहेगी। यदि वे हमें हिम्मत देती रहें तो हम इस लड़ाईमें जीत जायेंगे। स्वराज्यकी ओर पहला पग है धर्मपूर्वक ली गई टेकको पूरा करना। इस शक्तिको प्राप्त करनेमें ही स्वराज्य है। अपने अधिकारोंको जानना और उनकी रक्षा करना हमारा कर्त्तव्य है। इस लड़ाईका मूल उद्देश्य यह है कि सरकार लोकमतका सम्मान करके हमारे अधिकारोंको स्वीकार करे।

हमें इस लड़ाईमें सामान्य शिष्टताकी मर्यादाओंका उल्लंघन नहीं करना चाहिए। ऐसी शिकायतें आई हैं कि हममें से कुछ लोगोंने अधिकारियोंको तंग किया है। असत्य और

१. गाँवोंमें दौरा करते समय गांधीजी यहाँ भी अपनी मण्डलीके साथ गये थे। उनका भाषण सुननेके लिए ३,००० से अधिक किसान आये थे।

अविवेकका आचरण करना एवं उद्धत होकर दूसरोंको तंग करना हमें शोभा नहीं देता। ये तो अनुशासनहीनताके सूचक हैं। इस लड़ाईमें हमें सम्मानपूर्वक और शिष्टतापूर्वक व्यवहार करना सीखना है। सत्याग्रहकी लड़ाईमें सत्य और शिष्टताके गुण स्पष्ट दिखने चाहिए।

इस लड़ाईमें सत्य, साहस और उत्साह आवश्यक है। फिर उत्साहके बिना तो हमारे पैर एक क्षण भी नहीं जम सकते। यदि हम इन गुणोंको शिष्टतासे ढँक दें तो वे छलकेंगे नहीं। हमारी प्रतिज्ञा कुछ महीनोंके लिए नहीं, अनन्त कालके लिए है। जबतक सरकार हमारी माँगें पूरी नहीं कर देती तबतक हमें एक इंच भी पीछे नहीं हटना है, भले ही इसके लिए हमें अपना सर्वस्व गँवा देना पड़े। आपको मुझमें या किसी अन्य व्यक्तिमें नहीं, बल्कि अपने आपमें अविचल श्रद्धा रखनी चाहिए। यह लड़ाई केवल लगान मुल्तवी करानेके लिए नहीं लड़ी जा रही है, बल्कि इसके पीछे जो टेक है उसे पूरा करनेके लिए लड़ी जा रही है। इस लड़ाईका उद्देश्य यह सिद्ध करना है कि किसकी बात ठीक है — हमारी या सरकारकी। सरकार तबतक नहीं टिक सकती जबतक जनता उसका साथ नहीं देती। अपनी प्रतिज्ञाका पालन करनेसे आपको जितना सन्तोष मिलेगा उतना अपनी जमीनसे कभी नहीं मिलेगा। भाट और चारण आपके पौरुषके गीत गायेंगे। उन्हें सुनकर आपकी सन्तानमें भी वीरताका संचार होगा। आप अपनी सन्तानको प्रतिज्ञा-पालनके लिए धर्मबुद्धिकी विरासत दे जायेंगे, और वह अमूल्य होगी। आपने जो प्रतिज्ञा ली है उसका पालन करनेके लिए आप वीरोंकी भाँति जूझें। भारतको स्वराज्य दिलानेका सच्चा मूलमन्त्र इसीमें निहित है।

सत्यकी खातिर कष्ट-सहन करके आप अपना नाम अमर कर जायें, यही आपका सच्चा धर्म है। इसीमें आपकी और समस्त देशकी प्रतिष्ठा है।

[गुजरातीसे]

खेड़ा सत्याग्रह

२११. पत्र: एस्थर फैरिंगको

ट्रेनसे

अप्रैल ८, १९१८

प्रिय एस्थर,

लगता है कि तुम्हारे साथ पत्र-व्यवहार करनेमें मैं बहुत निर्दय और लापरवाह बन गया हूँ। तुम्हें एक-आध पंक्ति लिख दूँ, इससे मुझे सन्तोष नहीं होगा। मेरी इच्छा तो तुम्हें एक लम्बा स्नेह-पत्र लिखनेकी थी, किन्तु ऐसा पत्र लिखने लायक शान्ति मुझे नहीं मिल पाई और अब ज्यादा विलम्ब करनेकी मेरी हिम्मत नहीं।

मैं नहीं जानता कि अपनी गतिविधियोंका, जिनमें से एक भी मैंने खुद मोल नहीं ली, क्या वर्णन करूँ। वे मेरे सिरपर ऐसी एकाएक आ पड़ी हैं कि उन्हें टाला नहीं जा सकता। सब तरफसे घिरा हुआ सिपाही कर ही क्या सकता है? क्या एक

ही हमलेका सामना करनेमें अपनी सारी शक्ति लगा दे; किन्तु जब उसके साथ ही दूसरे हमले हो रहे हो, तो यह कैसे हो सकता है कि वह उनकी उपेक्षा करके अपने विनाशको निमन्त्रण दे? यह तो स्पष्ट है कि सुरक्षा यथाशक्ति सभी हमलोंका सामना करनेमे ही है। मेरी स्थिति लगभग ऐसी ही है। चारो तरफसे आफतमें पड़े हुए लोग मुझे पुकार रहे है। जब मैं उपाय जानता हूँ, तब मदद देनेसे कैसे इनकार कर सकता हूँ?

अहमदाबादकी हड़तालसे मुझे जीवनके कीमतीसे-कीमती सबक मिले। तालेबन्दीके दिनो प्रेमकी शक्तिका जो चमत्कारक प्रदर्शन हुआ, वैसा पहले कभी नही हुआ था। ज्यो ही मैंने उपवास की घोषणा की, त्यो ही मेरे सामने बैठे हुए विशाल जन-समुदायको ईश्वरके अस्तित्वका भान हुआ। तुम्हारा तार सबसे अधिक भावनापूर्ण और सबसे अधिक सच्चा था। ये चार दिन मेरे लिए शान्ति, ईश्वरीय कृपा और आध्यात्मिक उन्नतिके थे। इन दिनों खानेकी मुझे जरा भी इच्छा नही हुई।

मैंने अखबारोंको[1] जो पत्र भेजा है, उससे तुम खेड़ाका प्रकरण तो समझ ही गई होगी। अपने उपवासके बारेमे भी मैंने एक पत्र लिखा[2] था। ये पत्र तुमने न देखे हो, तो मुझे बताना।

तुम्हारी तबीयत अच्छी होगी। जिगरकी शिकायतोमे उपवाससे बढकर कोई दवा नही है।

मुझे अहमदाबादके, बल्कि साबरमतीके पतेसे लिखना।

सस्नेह,

तुम्हारा,
बापू

[अंग्रेजीसे]
माई डियर चाइल्ड

२१२. पत्र: दुर्गा देसाईको

[बोरसद]
अप्रैल ८, १९१८

चि. दुर्गा,[3]

तुम मुझे भूल गई हो, तो भले ही भूल जाओ, मैं तो तुम्हे नही भूला। आनन्दीबहनने[4] तुम्हारे समाचार दे दिये हैं। मेरा खयाल था, तुम भाई महादेवसे इससे भी अधिक अरसे तक जुदा रही हो। मैंने उनसे कह दिया है कि वे वहाँ जब चाहें तब जा सकते

१. देखिए "वक्तव्य: खेड़ाकी परिस्थितिके बारेमें अखबारोंको", २८-३-१९१८।
२. देखिए "पत्र: अखबारोंको", २७-३-१९१८।
३. महादेव देसाईकी पत्नी, जिन्होंने १ फरवरीसे भीतीहरवा-चम्पारनकी शालामें पढाना शुरू किया। उन्होंने छः मासके लिए काम करना स्वीकार किया था।
४. चम्पारनमें काम करनेवाली एक अध्यापिका।

है। किन्तु यदि तुम चाहो तो मैं उन्हें वहाँ तुरन्त भेजनेके लिए तैयार हूँ। अलबत्ता भाई महादेवको वहाँ जबरदस्त अनुभव मिल रहे हैं। उनका लाभ तुम्हें भी मिलेगा। तुम इनसे सन्तोष करके वियोगके दुःखका शमन कर सको, तो भाई महादेव यहाँ रुके रहें। मगर इसमें एक खतरा यह है कि अगर मैं इससे भी बड़ी लड़ाईमें जुट जाऊँ, तो फिर तुम चाहो, तो भी वे वहाँ नहीं आ सकेंगे। इसलिए उनके लिए तुमसे मिल आनेका ठीक समय यही होगा। यदि तुम वहाँ ऊब गई हो, तो यहाँ आ सकती हो। किन्तु तुम नड़ियाद में रह सकोगी, इसमें मुझे कुछ शक है। जो-कुछ तुम्हें वहाँ मिल रहा है, वह यहाँ हर्गिज नहीं मिलेगा। फिर भी जिसमें तुम प्रसन्न रहो, मैं वही करना चाहता हूँ।

बापूके आशीर्वाद

[गुजरातीसे]
महादेवभाईनी डायरी, खण्ड ४

२१३. पत्र: हरिभाई देसाईको[1]

[बोरसद]
अप्रैल ८, १९१९

आदरणीय भाई,

आपको पत्र लिखनेका विचार बहुत दिनसे कर रहा था; किन्तु अवकाश ही नहीं मिलता था, बात कुछ ध्यानसे भी उतर गयी थी। आशा है, आप मुझे इसके लिए क्षमा करेंगे।

मैं यह कहनेकी इजाजत चाहता हूँ कि भाई महादेवको मुझे सौंपनेमें आपने भूल नहीं की है। उनके जीवनके विकासके लिए यह अनुभव जरूरी था। पैसा ही हमेशा सब सुख नहीं देता। भाई महादेवकी ऐसी प्रकृति नहीं है कि उन्हें पैसा सुख दे सके। मुझे लगता है कि जैसी वृत्ति भाई महादेवकी है, वैसी ही चि० दुर्गाकी भी हो जायेगी। उसे अमूल्य अनुभव मिल रहे हैं।

मुझे तो दोनोंके मिलनेसे लाभ ही हुआ है। भाई महादेवने मुझे बहुत-सी झंझटोंसे मुक्त कर दिया है। मैं उनके जैसे चरित्रवान्, विद्वान् और प्रेमी सहायककी खोज कर रहा था। भाई महादेवने मेरी खोज सफल कर दी है। मुझे सपनेमें भी खयाल न था कि चि० दुर्गाका इतना अधिक सदुपयोग कर सकूँगा। ईश्वरकी गति न्यारी है।

मैं चाहता हूँ और आपसे प्रार्थना करता हूँ कि आप इस दम्पतीकी चिन्ता न करें और उन्हें पूर्ण आशीर्वाद दें।

आपका,
मोहनदास गांधी

[गुजरातीसे]
महादेवभाईनी डायरी, खण्ड ४

१. महादेव देसाईके पिता।

२१४. सन्देश : राष्ट्रीय शिक्षाके सम्बन्धमें[1]

अप्रैल ८, १९१८

यदि जनताको समझाया जा सके कि सच्ची राष्ट्रीय शिक्षा क्या है, और उसके प्रति रुचि जाग्रत की जा सके, तो सरकारी स्कूलोंमें कोई झाँकेगा भी नही और जबतक सरकारी संस्थाओंमें दी जानेवाली शिक्षाका ढंग बुनियादी तौरपर बदलकर, उसमें राष्ट्रीय आदर्शोंका समावेश नही किया जाता तबतक लोग उसे नही अपनायेंगे।

[अंग्रेजीसे]

इंडियन रिव्यू, अप्रैल १९१८

२१५. भाषण : बोरसदमें[2]

अप्रैल ८, १९१८

श्री गांधीने कहा कि सरकार लोगोंको डरा-धमका कर नहीं, उनकी मरजीसे ही लगान (राजस्व) ले सकती है। उन्होंने बहुत स्पष्ट कहा कि ब्रिटिश शासनमें अंधेर नहीं हो सकता।

[अंग्रेजीसे]

बॉम्बे क्रॉनिकल, ११-४-१९१८

२१६. पत्र : एन० एम० जोशीको[3]

[नड़ियाद]

अप्रैल ९, १९१८

प्रिय मित्र,

मैंने अभी-अभी सुना कि आप मित्रोंसे यह कहते हैं कि फसलके अनुमान सम्बन्धी आपकी जाँच और मेरी जाँचका परिणाम एक ही है, मेरे इस कथनका विरोध आपने मेरे लिहाजके कारण नही किया। साथ ही आपका यह खयाल है कि मैंने लोगोंको नाहक

१. राष्ट्रीय शिक्षा-सप्ताहके उद्घाटनके अवसरपर गोखले हॉल, मद्रासमें एनी बेसेंट द्वारा पढ़कर सुनाया गया संदेश।

२. गांधीजी अपने दलके साथ गाँव पहुँचे थे। उन्होंने लगभग ४,००० किसानोंकी एक सभामें भाषण दिया था।

३. नारायण मल्हार जोशी; भारतमें मजदूर आन्दोलनका सूत्रपात करनेवाले; भारत सेवक समाजके प्रमुख कार्यकर्ता।

दुःखमें डाल रखा है। मैंने जो-कुछ सुना है, वह अगर सच हो, तो मुझे बड़ा दुःख है। जो सही मालूम हो, उसे कहनेका आपको पूरा हक है और एक मित्रके प्रति आपका यह फर्ज भी है और मैं अपने-आपको आपका मित्र मानता हूँ। सार्वजनिक जीवनमें तो ऐसे सैकड़ों मौके आ सकते हैं, जब मित्रोंमें मतभेद अनिवार्य हो जाता है, फिर भी वे मित्र ही बने रहते हैं। इसलिए कृपया मुझे बताइये कि वहाँ समितिके सामने आप क्या कहते हैं, और यह भी कि मेरे सारे कार्यके बारेमें आपकी क्या राय है? मैं जानता हूँ कि यदि आपकी राय प्रतिकूल हो [और] मैं उससे सहमत न होऊँ, तो भी आप कोई खयाल नहीं करेंगे। इतना विश्वास रखिए ही कि आपकी रायको मैं उचित महत्त्व दूँगा।

हृदयसे आपका,
मो० क० गांधी

[अंग्रेजीसे]

महादेव देसाईकी हस्तलिखित डायरीसे।
सौजन्य : नारायण देसाई

२१७. सन्देश : हिन्दी कक्षाको[1]

[नडियाद]
अप्रैल १०, १९१८

मैं कामना करता हूँ आपके प्रयासको पूर्ण सफलता प्राप्त हो। मुझे पूर्ण विश्वास है कि अन्य कई क्षेत्रोंकी तरह, हिन्दीको एक सामान्य माध्यम बनाने और इस प्रकार अंग्रेजीके प्रयोगमें लगनेवाली मानसिक शक्तिकी हानिसे देशको बचानेके क्षेत्रमें भी दक्षिण ही हमारी रहनुमाई करेगा।

[अंग्रेजीसे]

बॉम्बे सीक्रेट एब्स्ट्रैक्ट्स, १९१८ तथा महादेव देसाईकी हस्तलिखित डायरीसे।
सौजन्य : नारायण देसाई

१. यह सन्देश डॉ० नायकके एक तारके उत्तरमें भेजा गया था। तार इस प्रकार था : "आपके आशीर्वादसे हिन्दी कक्षा ११ तारीखको माननीय कामतकी अध्यक्षतामें एक सार्वजनिक सभामें शुरू हो रही है।" 'हिन्दी शिक्षण प्रसारक मण्डल' का उद्घाटन दूसरे दिन न्यू पूना कॉलेज, पूनाकी इमारतमें माननीय बी० एस० कामतकी अध्यक्षतामें आयोजित एक समारोहमें किया गया था।

२१८. पत्र : जे० एल० मैफीको[1]

नड़ियाद
अप्रैल १०, १९१८

[प्रिय श्री मैफी,]

आपने अली भाइयोके सम्बन्धमे उत्तर देनेका वचन दिया था। मैं रोज-रोज उसकी प्रतीक्षा कर रहा हूँ।

आपको शायद मालूम होगा कि खेडाकी फसलोके सिलसिलेमें स्थानीय अधिकारियोके साथ स्थानीय तौरपर मेरा झगडा चल रहा है। मुझे आशा है कि जनताकी आवाजको उचित महत्त्व दिया जायेगा और उसकी रायकी कद्र की जायेगी।

लेकिन मुझे परेशानी तो असलमें अली भाइयोके मामलेको लेकर हो रही है। लगता है कि मैं जब भी साम्राज्यके एक सम्माननीय नागरिककी हैसियतसे युद्धमें हाथ बँटानेकी कोशिश करता हूँ, तभी देशके प्रशासकोको चिन्ता होने लगती है। ज्यादा अच्छा होता कि मैं मेसोपोटैमिया या फ्रासमे होता। मैं अपनी सेवाएँ देनेके लिए दो बार लिख चुका हूँ। पर उनको स्वीकार नही किया गया। मुझे इससे बड़ी शर्म लगती है कि मैं भारत आनेके बादके कालमे युद्धके कामका, आमतौर पर जिसे युद्धका काम कहा जाता है, अपना कोई अनुभव पेश नही कर सकता।

बल्कि ऐसा लगता है मानो इसके ठीक विपरीत मैंने सरकारके लिए असुविधाजनक परिस्थितियाँ पैदा की है और फलस्वरूप हो सकता है, मुझे किसी ऐसे आन्दोलनमें भाग लेना पड़े जो फैलनेपर सरकारकी गम्भीर चिन्ताका कारण बन जाये। मैं लॉर्ड चैम्स-फोर्डका बहुत अधिक आदर करता हूँ और उनकी चिन्ता और बढानेकी बात नही सोच सकता, फिर भी मैं अली भाइयोके सिलसिलेमे अपने स्पष्ट कर्त्तव्यसे भी मुँह नही मोड़ सकता। उनकी नजरबन्दीसे मुसलमानोमे कटुता पैदा हो गई है। मैं एक हिन्दूके नाते महसूस करता हूँ कि मैं अपने-आपको उनसे अलग नही रख सकता। यदि मैं सरकार द्वारा उनके विरुद्ध की गई कार्रवाईको जनताके सामने औचित्यपूर्ण नही ठहरा सकता, तो मुझे उनकी रिहाई करानेमे मदद करनी ही चाहिए। इसलिए यदि सरकारके पास उन भाइयोके खिलाफ वास्तवमे कोई सबूत है तो उसे पेश करके वातावरण शान्त किया जाना चाहिए। परन्तु यदि सरकारके पास पेश करने लायक कोई सबूत नही है तो मैं आग्रह करता हूँ कि अली भाइयोंको रिहा कर दिया जाये।

यदि लॉर्ड चैम्सफोर्डकी राय इसके विपरीत हो, तो सरकारको एक आन्दोलनका सामना करना और फलस्वरूप उसके नेताओको जेलमें बन्द करना पडेगा। परन्तु मैं अपनी पूरी शक्तिके साथ अनुरोध करता हूँ कि उनको रिहा किया जाये। लोकमतका सम्मान

१. यह वास्तवमें १४ अप्रैलको एक अलग टिप्पणीके साथ भेजा गया था। देखिए "पत्र : जे० एल० मैफीको", १४-४-१९१८।

करनेसे सरकारकी प्रतिष्ठा बढ़ेगी ही और जहाँतक राज्यके लिए खतरा उत्पन्न होनेकी बात है, यदि उनकी रिहाईका मतलब कोई विश्वासघात सिद्ध हुआ तो राज्यकी रक्षाके लिए मैं अपना जीवनतक होम करनेके लिए तैयार रहूँगा।

[हृदयसे आपका,
मो० क० गांधी]

[अंग्रेजीसे]

नेशनल आर्काइव्ज ऑफ इंडिया : होम : पॉलिटिकल — ए : जून १९१८, संख्या ३५९।

२१९. पत्र : हनुमन्तरावको

[नडियाद]
अप्रैल १०, १९१८

प्रिय भाई हनुमन्तराव,

हिन्दीके मामलेमें अगर श्री शास्त्रियर मेरे विचारसे सहमत हों, तो मैं चाहूँगा कि मेरी अपील[1] जवाबमें तुम अपना नाम हिन्दीके विद्यार्थीके रूपमें दे दो और मेरी तरफसे दो और तेलुगु भाइयोंको भी तुम्हीं चुन लो। मुझे तीन तमिल भाई तो मिल गये हैं।

हृदयसे तुम्हारा,
मो० क० गांधी

महादेव देसाईकी हस्तलिखित डायरीसे।
सौजन्य : नारायण देसाई

२२०. पत्र : एच० एस० एल० पोलकको

[नडियाद]
अप्रैल १०, १९१८

प्रिय हेनरी,

मैं तुम्हें नियमित रूपसे नहीं लिख सका। मेरे पास लिखनेका समय भी नहीं और शक्ति भी नहीं। मैं इस समय इतने नये-नये रचनात्मक काम हाथमें ले रहा हूँ कि दिन पूरा होनेपर थककर चूर हो जाता हूँ और दूसरा कुछ भी काम करनेकी शक्ति नहीं रह जाती। लिखना, भाषण देना और बातें करना भी मेरे लिए कष्टदायक है। मैं केवल चिन्तन करना चाहता हूँ। सत्याग्रह संघर्षका क्रम, शुरूसे अन्ततक एक

१. देखिए "पत्र: अखबारोंको", ३१-३-१९१८।

अत्यन्त कष्टसाध्य प्रयास रहता है जिसकी पीड़ा जैसे-तैसे ही सहन कर पाता हूँ। मेरे खयालसे प्रसूतिकी पीड़ा कुछ ऐसी ही होती होगी।

मैं भाई देसाईसे कह रहा हूँ कि तुम्हे ब्यौरेवार पत्र लिख दें।

[हृदयसे तुम्हारा,
मो० क० गांधी]

[अंग्रेजीसे]

महादेव देसाईकी हस्तलिखित डायरीसे।
सौजन्य नारायण देसाई

२२१. पत्र : हरिहर शर्माको[1]

[नडियाद]
अप्रैल १०, १९१८

भाईश्री अन्ना,

तुम्हारे पत्रको पाकर मैं अत्यन्त प्रसन्न हुआ। यह जानकर बहुत बड़ा आश्चर्य हुआ कि मैं तुम्हारे चित्तसे कभी दूर नही होता। तुम, गोमतीबेन और तुम्हारी पसन्दका कोई तीसरा व्यक्ति — बस और क्या चाहिए? शेष बातोके बारेमे महादेव तुम्हे लिखेंगे।

मोहनदासके वन्देमातरम्

[गुजरातीसे]
महादेवभाईनी डायरी, खण्ड ४

२२२. भाषण : अकलाचामें

अप्रैल १०, १९१८

यहाँ कुछ लड़कोंके पास झडे है। मैं देखता हूँ कि इनमे एक झडा वह भी है जिसे अहमदाबादमें मिल-मजदूरोंने फहराया था और जिसमें "एक टेक" शब्द लिखे हैं। इस झंडेको फहरानेका अधिकार तो उन्हीको है जिनके हृदयोमें "एक टेक" शब्द अंकित हो गये हैं।

इस समय खेड़ा जिले पर समस्त भारतकी दृष्टि जमी हुई है। यदि इस लडाईमें खेड़ा जिला हार गया तो यह समझना चाहिए कि भारतके लोग फिर बहुत समयतक उठ न सकेंगे। कार्य आरम्भ करनेसे पूर्व विचार करनेमें बुद्धिमानी है। किन्तु यदि बादमें

१. गंगानाथ विद्यालय, बड़ौदाके अध्यापक। वे १९१५ से आश्रममें रहने लगे थे।

उसे छोड दें तो कायरोकी उपाधि मिलेगी। जिस देशके लोग कायर हो जाते हैं वह देश निष्प्राण हो जाता है। खेडामें जो लडाई चल रही है वह लगान मुलतवी करानेके लिए आरम्भ की गई है; किन्तु उसका मर्म बहुत ही महत्त्वपूर्ण है। सरकार जो-कुछ कहे वह सत्य है और लोग जो-कुछ कहें वह असत्य है, यह सिद्धान्त कैसे सहन किया जा सकता है। सरकार कहती है कि सत्ताका सम्मान किया ही जाना चाहिए। सत्ता अंधी है, अन्यायी है। जो सरकार उस सत्ताका सम्मान करनेकी बात कहती है वह टिक नहीं सकती। हमें बचपनसे ही बताया गया है कि अंग्रेजोंका राज्य न्यायका राज्य है। न्याय उनका आदर्श है। मुझे लगता है कि इस आदर्शके स्थानपर अब मनमानी चल रही है। इसलिए मैं कहता हूँ कि हमें इस सरकारके विरुद्ध विद्रोह करना चाहिए। मैं खेडा जिलेमें आया, और जब मैंने फसलके सम्बन्धमें जाँच की तब आप लोगोंने मेरे और मेरे साथियोंके सम्मुख यह सिद्ध कर दिया कि खेडा जिलेमें फसल चार आनेसे कम हुई है। यदि यह बात सच है तो हमारी माँग पूरी करना सरकारका कर्त्तव्य है। और हमारी माँग भी क्या है? केवल यही कि एक सालके लिए लगान मुलतवी कर दिया जाये। और यह कि यदि सरकार लगान मुल्तवी करनेकी घोषणा कर देगी तो हममें से जो लोग अधिक साधन सम्पन्न है, वे अपना लगान देनेके लिए तैयार हैं।

हमारी ऐसी उचित माँगको भी सरकार स्वीकार न करे तो फिर लोगोंका कर्त्तव्य क्या है? शास्त्रोंमें कहा गया है कि राजा भूल करे तो लोग उसे बतायें। सत्ता अंधी होती है और उसे आसानीसे अपनी भूल नहीं दिखाई देती। इस मामलेमें सरकार असत्य आचरण और लोगोंके प्रति अन्याय कर रही है, जब कि हम लोग सच्ची बात कह रहे हैं और न्याय माँग रहे हैं। सत्यकी सदा जीत ही होती है। आपको यह विश्वास हो जाना चाहिए कि यदि सत्यकी खातिर दृढतापूर्वक अपनी प्रतिज्ञाका पालन करते रहेंगे तो ऐसी कोई सरकार नहीं है जो प्रजाको नाहक बरबाद कर दे।[1] मैं सुनता हूँ लोग कहते हैं कि वे दुःखमें डूबे हुए हैं। किन्तु यदि हम ज्ञानपूर्वक कष्ट सहें तो हमारा उद्धार ही हो जाये, मैं यहाँ यही कहनेके लिए आया हूँ। मैंने खेडा जिलेके लोगोंपर विश्वास किया है। कुछ लोगोंने अपनी प्रतिज्ञा तोड दी है। उस हदतक हमारा दायित्व बढ गया है। यात्रामें दो-तीन गाडियाँ होती हैं। यदि उनमें से एकाध गाडी टूट जाये तो बाकी गाडियोंको अधिक भार ढोना पडता है। मेरी इच्छा है कि आप इस लडाईसे खेडाकी कीर्ति उज्ज्वल करें। इस इच्छाको पूरा करना आपके हाथोंमें है। कमिश्नर साहबने लोगोंको परसों नडियादमें बुलाया है। जिन्होंने सरकारी लगान दे दिया है यह बुलावा उनके लिए नहीं, किन्तु जिन्होंने लगान नहीं दिया है विशेष रूपसे उनके लिए है। वे उनसे बातें करना चाहते है। इसलिए जिन्होंने लगान न दिया हो उन्हें वहाँ अवश्य जाना चाहिए। और आपने जो प्रतिज्ञा ली है उसके सम्बन्धमें आपको जो-कुछ कहना हो वह निर्भय होकर कहें। कमिश्नर साहब कहेंगे कि गांधी आपको गुमराह कर रहा है और उसने आपको अच्छी

१. १८-४-१९१८को प्रकाशित बॉम्बे क्रॉनिकलकी रिपोर्टमें ये शब्द अधिक हैं: "इससे हम संसारकी दृष्टिमें ऊँचे उठ जायेंगे। हमारे मनमें उसके प्रति कोई दुर्भाव नहीं है, प्रत्युत बहुत अधिक सद्भाव है।"

सलाह नहीं दी है। कदाचित् वे यह भी कहेंगे कि वह आदमी तो अच्छा है; किन्तु इस मामलेमें उसने भूल की है। किन्तु मैंने आपसे ही आँकड़े इकट्ठे किये हैं, और उनसे सिद्ध होता है कि फसल चार आने आई है। यह अन्दाज ठीक था इसलिए आपको श्री प्रैटके सम्मुख उसके पक्षमे अपनी गवाही देनी चाहिए। किसीको भी उनसे डरना नही चाहिए। हमारा उद्धार सत्यपर आरूढ़ रहनेमे है। हम स्वतन्त्रता प्राप्त करनेके लिए लड़ रहे हैं।[1] मैं बहनोसे कहता हूँ कि "आप भी अपने पतियोंसे कहें कि उनपर चाहे जितना कष्ट आये, परन्तु वे सरकारको लगान न दें।" यदि हम अपनी प्रतिज्ञापर कायम रहेंगे और अपनी टेकका पालन करेंगे तो स्वतन्त्रता हमारे पीछे-पीछे अवश्य चली आयेगी। इसलिए आप अपनी प्रतिज्ञाका पालन करनेके लिए जितने उपाय कर सकें, अवश्य करें। जिन लोगोने लगान दे दिया है उनको मेरी सलाह है कि वे लगान न देनेवाले लोगोको अपनी बातपर टिके रहनेमे मदद दें।

[गुजरातीसे]

खेड़ा सत्याग्रह

२२३. भाषण : सींहुजमें

अप्रैल १०, १९१८

आज मुझे आपसे जो बाते कहनी हैं उनको आरम्भ करनेसे पहले मैं पूछता हूँ कि आपमें से कितने भाइयोने सरकारी लगान नही दिया है।[2] यहाँ आकर मैंने सुना कि इस लड़ाईमें सरकारकी सख्तीसे बहनें डर गई है और इस कारण पिछले तीन-चार दिनमें बहुतसे लोगोने अपना लगान दे दिया है। आपमें से जिन लोगोने भयके कारण लगान अदा कर दिया है उनके लिए मुझे खेद है और जिन्होंने प्रतिज्ञा लेनेपर भी लगान अदा किया है उनके लिए तो और भी अधिक खेद है। प्रतिज्ञा न करना बुद्धिमानी है, किन्तु एकबार प्रतिज्ञा ले ली जाये तो उसका पालन अवश्य किया जाना चाहिए। कुछ लोग कहेंगे कि यह लड़ाई एक वर्षके लिए लगान मुलतवी करानेके उद्देश्यसे लड़ी जा रही है। हाँ, यह बात सच है; किन्तु वस्तुत इसके पीछे एक अत्यन्त महत्त्वपूर्ण मुद्दा है, और हम उसीके लिए लड़ रहे हैं। हमें बिलकुल निर्भय होना चाहिए। भय, हम पुरुष हों या स्त्री, हमें शोभा नही देता। भय तो पशु करते हैं। परसो मैंने यह उदाहरण दिया था कि जब सड़कपर कोई मोटर निकलती है तो [गाड़ीमें जुता] बैल उसे देखकर डर जाता है। उसकी भयभीत आँखोको देखकर मुझे दया आती है। मोटर पास आते देखकर वह थर-थर काँप उठता है और कई बार तो गाडी उलट जानेका भय होता है। बैलका भय अकारण है। हमारी दशा भी बैल ही जैसी है। मनुष्यके लिए यह उपमा

१. बॉम्बे क्रॉनिकलमें प्रकाशित रिपोर्टके अनुसार गांधीजीने यहाँ यह भी कहा: "स्वतन्त्रता, निर्भयता और सत्य ऐसे गुण हैं जो हमें अभी प्राप्त करने हैं। वे हमारी आत्मामें प्रसुप्त हैं। यदि हम उन्हें अपने भीतर जाग्रत नहीं कर सकते तो हम मनुष्य नहीं, पशु हैं। हमें मनुष्य बनना है।"

२. सभामें मौजूद बहुतसे लोगोंने हाथ उठाये।

बहुत कठोर है, किन्तु है बिल्कुल वास्तविक। हम अकारण भय क्यो करे? तलाटी या अन्य अधिकारी किसीको मारते नही है, मार भी नही सकते। चौकीदार भी पूछकर चले जाते है। उन्हे तो यह सोचकर डर लगता है कि अब जनताका जमाना आ गया है। एक ओर तो ये लोग डरते है और दूसरी ओर हम लोग डरते है। इसका कारण क्या है? यदि सरकार हमारे पशुओको ले जाये, तो ले जाये। यदि वह हमारे जेवर ले तो उसे दे दें, किन्तु हमें एक चीज नही देनी है और वह है आत्म-सम्मान। जो व्यक्ति आत्म-सम्मानकी रक्षा नही कर सकता, कहना चाहिए कि उसकी आस्था धर्ममें नही है। जिसे ईश्वरका भय है उसे किसी अन्यका भय नही होता। जिस ईश्वरकी कल्पना हमने सर्वशक्तिमान् और सर्वज्ञके रूपमें की है वह समस्त ससारका रक्षण और कल्याण करता है। सत्य और धर्मकी इस लडाईमें जो इतने सारे लोग प्रतिज्ञा ले चुके है उन्हे धोखा देकर आप कैसे गिर जायेंगे? यह कैसे सम्भव है? जो भाई डर गये है उनमें साहस और देशप्रेम हो तो वे खडे होकर कहें कि जो भाई अपनी प्रतिज्ञापर जमे है उन्हे हम आश्वासन देते है। उनके खेत या उनके पशु चले जायेंगे तो हम उन्हें हिस्सा देंगे। कुछ बहनोने कहा है कि यदि मै दो दिन पहले आया होता तो वे लोग लगानका पैसा न देते। मै इन बहनोसे यह कहूँगा, आप अपने पतियोंसे सत्यकी टेक रखनेके निमित्त यह कहे कि वे अपनी सम्पत्तिका उपयोग अपने समाजके हितार्थ करे। मैंने परसो वासद और बोरसदमें कहा था कि जो व्यक्ति स्वय गिर गया है उसका मन कहता है कि दूसरोको भी गिरायें और वह अपनी दुर्बलता स्वीकार करनेके बजाय इसको ढकनेमें लग जाता है। यदि किसीके मनमें ऐसी बात हो तो वह उसे निकाल दे और प्रतिज्ञा लेनेवाले सत्याग्रहियोको हिम्मत बँधाये। यह हमारा धर्म है। यदि आप मात्र इतना कर्त्तव्य निभायेंगे तो प्रतिज्ञा लेनेवाले लोग अपनी प्रतिज्ञापर दृढतापूर्वक कायम रहेंगे। हमें देशको इस प्रकार गढकर तैयार करना है। हमें सत्य और न्यायको भूली हुई सरकारको सच्चा मार्ग दिखाना है। यही इस लडाईका उद्देश्य है। दस रुपये लगानकी वसूलीके लिए दस हजार रुपयेकी जमीन जब्त कर लेना सरासर अन्याय ही है। यदि सरकार ऐसा घोर अन्याय करके ऐसा अनिष्टकारी कदम उठायेगी तो मै स्वय इस सरकारके विरुद्ध विद्रोह करूँगा और आपको भी विद्रोह करनेकी सलाह दूँगा। यदि सरकार दस-पाँच रुपयेके लिए ऐसा करे तो यह मेरी समझमें नही आता। आजकल सरकार धमकियोंसे शासन चलाती है, भयसे राज्य चलता है। यह खयाल गलत है। हमें इस भयसे पस्त नही होना चाहिए। हमें प्रकृतिकी न्यायवृत्तिपर विश्वास है, इसलिए आप निश्चिन्त रहे। यदि सरकार भैंसे कुर्क कर ले तो भी आप उसका विरोध न करे। इसी प्रकार आप अपने हाथसे उसे कुछ दें भी नही। हम आजतक उसे लगान देते आये है, उससे डरते आये है और अपने मन-ही-मन कुढते आये है। फलस्वरूप हम पतित हो गये है। खेडामें सोनेकी फसल होती है और उसमें वीर लोग बसते है। सवत् १९५६के अकालके[1] बावजूद उन्होंने अपनी जमीनको दिन-रात मेहनत करके हरा-भरा बना दिया

१. सन् १९०० के लगभग देशव्यापी अकाल पड़ा था, जिसे लोग छप्पनके अकालके नामसे अभी तक याद करते है।

है। ऐसे लोगोकी जमीनोंमे से और चेहरोसे चमक कैसे चली गई ? इसका कारण यही है कि लोग सरकारसे डरने लगे है। यह लडाई लोगोको इस भयसे मुक्त करनेके लिए ही है। खेड़ा जिलेमे यह सत्याग्रहकी लडाई सफल होगी तो उसका प्रभाव भारतमें अन्यत्र पडेगा। हमारा उद्धार हमारे अपने हाथमे ही है। हम अपने कष्टोका निवारण अपने पुरुषार्थसे ही कर सकेंगे।

इस लडाईमे हम एक अन्य महान् मन्त्र सीखेंगे और वह यह है कि हमे हथियार-से नही लड़ना है, बन्दूक या भाला नहीं उठाना है, बल्कि सत्यसे लडना है। जिसके पास सत्य-रूपी हथियार है उसे किसी दूसरे हथियारकी जरूरत नही है। यदि हम भय त्यागकर सत्यसे लडेंगे तो हमे महान् सिद्धि मिलेगी।

मै सुनता हूँ कि सरकारके विरुद्ध लडी जानेवाली सत्याग्रहकी इस लडाईमे कुछ असत्य चलता है। किसानोसे हाकिम पूछता है कि आप लगानका पैसा क्यो नही देते तो वे फसल चार आनेसे कम है, यह कहनेके बजाय भयके कारण दूसरे ही बहाने बनाते है। तहसीलदार या कलक्टर आते है तो उनके सामने हमे अशिष्टता न दिखानी चाहिए। वे अधिकारपूर्वक कोई चीज बेगारमे माँगे तो हम उन्हे न दे। वे हमें कोई चीज देनेका हुक्म दे ही नही सकते। किन्तु हमें उनका आदर-सत्कार करना तो न भूलना चाहिए। हम उन्हे कोई जरूरी चीज मुफ्त न दें किन्तु पूरा दाम लेकर दे दें। हमे विनयका त्याग न करना चाहिए। कल मुझे एक शिकायत यह मिली थी कि लोग दाम देनेपर भी चीजे नही देते ? सत्याग्रहकी लडाईमे ऐसा कैसे किया जा सकता है ? इससे मुझे दु ख हुआ। जो जुल्मसे अपना बचाव करना चाहता है वह दूसरेपर जुल्म कैसे कर सकता है ? तीसरी बात। कमिश्नर परसो तीन बजे नडियादमें तहसीलदारकी कचहरीमे आपसे कुछ कहना चाहते है। मेरी सलाह है कि आप सब वहाँ जाये। वे आपसे यह भी कहेगे कि मैं आपको गलत रास्तेपर ले जा रहा हूँ। मै आपको गलत रास्तेपर ले जा रहा हूँ या सही रास्तेपर, इसका निर्णय मै नही कर सकता, मै तो आपको मुझे जो सच लगता है वही कहता हूँ। यदि आपको यह सत्य लगता हो तो आप एक स्वरसे कहे कि गाधीकी सलाह माननेसे हमारी प्रतिष्ठा बढ़ती है। और हम अपने अधिकारोकी रक्षा कर सके है। ऐसा कहनेसे श्री प्रैट नाराज न होगे। वे समझते है कि लोगोको कष्ट हो तो उन्हे शिकायत करनेका अधिकार है। कष्ट सहकर कष्टोसे मुक्त होनेका नाम सत्याग्रह है। आप सब निर्भय होकर कमिश्नरसे यह कहे "हमे अपनी जमीने, अपने ढोर-डगर, या अपने गहने अपनी प्रतिज्ञा, प्रतिष्ठा या अपने धर्मसे अधिक प्यारे नही हैं। हमने आपसे प्रार्थना की और बार-बार कहा कि फसल चार आनेसे कम हुई है। सरकारी कानून कहता है कि फसल चार आनेसे कम हो तो लगान मुलतवी कर दिया जाना चाहिए। आपने तलाटीकी बात मानी, और हमारी नही मानी। अब इस बातको मनवानेका हमारे पास एक ही मार्ग है और वह यह है कि हम अपने हाथसे लगान न दे।" आप सभी सभामे जायें, कमिश्नर जो कुछ कहे उसे ध्यानसे सुने और यदि वे बोलनेकी अनुमति दें तो बोले। उसके बाद आप हिन्दू अनाथाश्रममें आ जाये। वहाँ हम विचार करेंगे। कोई भी मनुष्य डरे, यह सरकारकी इच्छा नही है। अब हमने स्वराज्यका झडा फहरा दिया है। हमें स्वराज्य अपने हाथोसे लेना है।

यदि हम केवल निर्भय बनेंगे तो हमें स्वराज्य अवश्य मिलेगा। कुछ भी हो जाये, आप सरकारी लगान न दें। बहनें अपने पतियोंको हिम्मत बँधायें।[1] किसीको कुछ पूछना हो तो वह भले ही पूछे और अपनी शकाका समाधान करा ले। यह मामला ऐसा है कि सभीको समझकर और सचेत होकर चलना चाहिए।

[गुजरातीसे]

खेड़ा सत्याग्रह

२२४. भाषण: वड़ोदके सत्याग्रहियोंके सम्मुख[2]

अप्रैल ११, १९१८

ज्यो-ज्यो दिन जाते है, हमारी कसौटी कडी होती जाती है। मै आज कमिश्नरसे मिलकर अहमदाबादसे चला ही आ रहा हूँ। उनसे एक घटे तक बातें होती रही। उन्होंने नडियादमें की जानेवाली सार्वजनिक सभाका जिक्र किया। मैंने उन्हे आश्वासन दिया कि किसान सभामें अवश्य आयेंगे। मुझे आशा है कि जिन किसानोंने लगान नही दिया है वे सभी सभामें जायेंगे और कमिश्नरकी सलाहको सुनेंगे। कमिश्नर शायद कहेंगे कि फसल मारी जाये तो भी सरकारको लगान देना लोगोका कर्त्तव्य है। सम्भव है, उनका कहना ठीक हो। मैं तो आपसे इतना ही कहूँगा कि आपने प्रतिज्ञा ली है और आपको उसका पालन अन्ततक करना चाहिए। आप उन्हे अथसे इतितक सब इतिहास कह सुनायें। यदि आपको अपनी प्रतिज्ञाका अभिमान होगा तो आप उनके सम्मुख दृढता-पूर्वक अपना पक्ष रखेंगे। आपने प्रतिज्ञा क्यो ली है, समझकर ली है या बिना समझे और उससे आप क्या लाभ उठाना चाहते हैं, आप उन्हे ये सब बातें स्पष्ट रूपसे बता दीजिएगा।

यह लडाई इस साल हमें लगान न देना पडे, इसी उद्देश्यसे नही लडी जा रही है। मैं यह बात हर जगह कहता आया हूँ। इस सघर्षसे हमें सरकारको यह बता देना है कि सरकारको जनताका सम्मान करना ही चाहिए। जनताका विरोध करके कोई राजा राज्य नही कर सकता। इस सत्यको सिद्ध कर दिखाना मैंने अपने जीवनका मुख्य कार्य माना है। हमारे लोग निस्तेज हो गये हैं। उनका धन निचोड लिया गया है। वे निष्प्रभ हो गये हैं।[3] मुझे एक उपमा बार-बार याद आती है। जैसे बैलके सम्मुख मोटर

१. १८-४-१९१८ के बाम्बे क्रॉनिकलमें गाधीजीका यह वाक्य उद्धृत किया गया है· "आप अपने पोतियों, पुत्रों और भाइयोंको हिम्मत बँधायें, जैसा कि पुराने जमानेकी स्त्रियाँ किया करती थीं, और उन्हें अपनी प्रतिज्ञापर दृढ रखें।"

२. यह सभा आनन्द ताल्लुकेके वडोद गाँवकी धर्मशालामें हुई थी और इसमें आसपासके गाँवोंके लोग बहुत-बडी संख्यामें आये थे।

३. बॉम्बे क्रॉनिकल, १६-४-१९१८ और न्यू इन्डिया, १७-४-१९१८ में छपी रिपोर्टोंके अनुसार गाधीजीने यहाँ कहा "देशके लोग निर्वीर्य हो गये हैं और उनके सम्मुख एकमात्र मार्ग यह रह गया है कि वे उस घोर सकटमें जबतक हैं तबतक अपने आधारको दृढतापूर्वक पकडे रहें।"

है, वैसे लोगोके सम्मुख सरकार है, फिर चाहे वह ब्रिटिश सरकार हो या देशी राजा। मोटर पाससे निकलती है तो बैलकी आँखोमे डर छा जाता है और वह एकदम घबरा जाता है। इसी प्रकार लोग भी सरकारकी सत्ताके सामने काँपते है यह मुझसे देखा नही जाता। आप सरकारसे कह सकते है कि वह आपको अपने कानूनके मुताबिक राहत दे। यदि आप उससे इतना काम करा लेगे तो इस अध पतनकी अवस्थामे से निकल जायेंगे और आपमे कुछ चैतन्य आ जायेगा।

हम नित्य प्रात काल अनेक महान् पुरुषो और सती-साध्वी नारियोंका नाम लेते हैं। हम सीता, राम, नल, दमयन्ती, प्रह्लाद और अन्य सत्पुरुषोके नाम जपते है। किस लिए? उद्देश्य यह है कि हमें उनके जीवनसे स्फूर्ति मिले। हमारे धर्म-ग्रन्थोमें कहा गया है कि जो मनुष्य होनेपर भी पशुवत् जीवन बिताता है वह दूसरे जन्ममे पशु-योनिमें जाता है। आप कलक्टरके पास गये और कमिश्नरके पास गये। आप बम्बई सरकारके पास भी गये और जब आपको कही भी सफलता न मिली तो आप थककर बैठ गये। यदि ऐसा ही हो तो मुझे कहना चाहिए कि इस प्रकार बैठ जाना तो पशुकी स्थिति है। हम किसीको मारकर या स्वयं अपने प्राण देकर सुखी हो सकते है। इनमें से पहला उपाय पशुओका है और दूसरा मनुष्योंका। पशुओकी आत्मा सदा सुप्त रहती है; मनुष्यकी सदा जाग्रत। जबतक हमारी आत्माका विकास नही होता, जबतक वह जाग्रत नही होती, तबतक हमारा उद्धार न होगा।[1] मै आपको एक पौराणिक गाथा सुनाऊँ। एक ऋषि थे। उनकी भृकुटीसे अग्नि झरती थी जिससे समस्त दु ख नष्ट हो जाते थे। इस शास्त्र वचनका अर्थ यही है कि यदि आत्मा जाग्रत हो जाये तो उससे सरकारके सारे अन्याय दूर हो जाये। इस तथ्यको मै आपको स्पष्ट बताना चाहता हूँ। यदि हमें दु खमें से सुख प्राप्त करना है तो हमे दु ख सहन करने चाहिए और सत्यके लिए मर-मिटना चाहिए। जो सत्यकी महिमा जानता है और जिसे उसका अन्तर्ज्ञान हो गया है वह सदा सुखी है। चाहे मेरा सर्वस्व चला जाये; किन्तु मुझसे मेरे आत्मिक आनन्दको कोई नही छीन सकता। मेरी इच्छा है कि यह आनन्द आप सभीको प्राप्त हो। हम लोगोमें धार्मिक जाग्रतिकी आवश्यकता है। हमें सत्य बोलना और सत्यपर आचरण करना सीखना चाहिए। चौकीदार नित्य आये और जब्तीका हुक्म लाये तो भी कोई परवाह नही। मै आपको आपकी प्रतिज्ञाकी मान-रक्षाके विचारसे कहता हूँ कि आप चाहे अपना सर्वस्व लुटा दें और चाहे फकीर हो जायें किन्तु आप अपनी प्रतिज्ञासे न डिगें। मनुष्यका धर्म यही है। मै बहनोंको विश्वास दिलाता हूँ कि हम भूखे नही मरेगे। जो कुछ आज चला जायेगा, वह कल फिर आ जायेगा; किन्तु यदि हमारी बात चली जायेगी तो फिर वापस न आयेगी। हमें अपनी प्रतिष्ठा, प्रतिज्ञा, सम्मान और मनुष्यत्वकी रक्षा करनी है। हमें लोगोके लिए यही विरासत छोडनी है। मेरी कामना है कि ईश्वर आपको शक्ति दे और आप भारतमें अपने नामको उज्ज्वल करें। जिन भाइयोने प्रतिज्ञा ली है,

१. बॉम्बे क्रॉनिकल और न्यू इंडियाकी खबरोंमें यह भी कहा गया है: "हम पशुबलको दबाकर और उसके स्थानमें आत्मबलको रखकर ही नित्य आत्मिक चेतना प्राप्त कर सकते है और उसीके फलस्वरूप हमारा परित्राण संभव है।"

वे मुझे आश्वस्त करें। आप मुझे यह कहें कि ब्रह्माण्ड खण्ड-खण्ड हो जाये और सूर्य उदित न हो, फिर भी आपने जो प्रतिज्ञा ली है, उसे आप न छोड़ेंगे।[1]

आप लोग [कमिश्नरसे] कहें "आप चाहे हमारा सिर काट डालें, परन्तु हम लगान न देंगे। हम सरकारके अन्यायके आगे कदापि न झुकेंगे। किन्तु यदि आप दया करके लगान माफ कर देंगे और गरीबोंको दुःखी न होने देंगे तो हममें से जो भी लगानका रुपया दे सकेंगे, दे देंगे।"

[गुजरातीसे]

खेड़ा सत्याग्रह

२२५. पत्र : पैट्रिक गेडिसको[2]

नडियाद
अप्रैल १२, १९१८

प्रिय प्रोफेसर गेडिस,[3]

आपके अत्यन्त स्नेह-भरे पत्रके लिए सचमुच आभारी हूँ।

हम लोग पश्चिमकी जो ओछी नकल कर रहे हैं, उसपर आपको जितना दुःख होता है, मुझे भी उससे कुछ कम नहीं होता। मैं आपकी दुनियासे बहुत-कुछ लेना चाहता

१. इसके बादके अनुच्छेदमें गांधीजीने किसानोंके इस प्रश्नका उत्तर दिया है कि वे कमिश्नरको सभामें क्या कहें?

२. यह श्री गेडिसके पत्रके उत्तरमें लिखा गया था। उनके पत्रके मुख्य मुद्दे महादेवभाईकी डायरीमें अंकित हैं। तदनुसार उन्होंने कुछ ऐसी बातें लिखी थीं: (१) सम्मेलन सचमुच पूर्णतः अंग्रेजी ढंगका हुआ। उसमें योग्य व्यक्तियोंने, उचित स्वरमें उचित प्रतीतिके साथ प्रसंगानुकूल भाषण किये। (२) यहाँ अबतक किसी भी बड़े सम्मेलनमें इस बातपर विचार नहीं किया गया है कि अंग्रेजोंसे क्या चीजें सीखी जा सकती हैं। वहाँ तो एवन नदीके किनारे स्ट्रैटफर्डमें शेक्सपीयरके नाटकोंका अभिनय किया जाता है। आपकी नाट्यशालाएँ इस सम्बन्धमें निष्क्रिय हैं। उनमें तुलसीदासका नामतक नहीं लिया जाता। (३) आप पश्चिमके उदाहरणसे कुछ क्यों नहीं सीखते, उनके तौर-तरीके क्यों नहीं अपनाते? वेल्समें हर साल एक भारी जलसा होता है। गत जलसेसे पहलेवाले जलसेमें मैं उपस्थित था। वहाँ मैंने लॉयड जॉर्जको प्रचण्ड ओजके साथ, आग उगलते हुए सुना। इसका कारण यह था कि वे अपनी मातृभाषामें बोल रहे थे। उन्होंने कहा, यहाँ हम गानेके लिए आये हैं। (४) उनका पण्डाल समूह-गानके लिए विभिन्न स्वरोंवाले लोगोंकी मण्डलियोंमें विभक्त था। (५) आप आयरिश लोगोंसे भी कुछ सीख सकते हैं, जो अवकाश-कालीन सम्मेलनोंका आयोजन करके अपनी भाषाको पुनः प्रतिष्ठित करनेका प्रयत्न कर रहे हैं। (६) प्रोवेंसका ही उदाहरण लीजिए, जहाँके लोग अपने लोक-कवि मिस्ट्रालकी पूजा करते हैं। स्वीडनवालोंने वृद्ध मिस्ट्रालको नोबेल पुरस्कार दिया। उस रकमसे प्रोवेंसवालोंने बड़े कामका एक संग्रहालय खोल दिया। (७) डेनमार्कके एक बिशप और एक गृहस्थने लोगोंको व्यावहारिक शिक्षा देना अपना जीवनोद्देश्य बना लिया था। (८) आपको भी अपनी सभाओंके लिए मध्ययुगीन मण्डपोंको छोड़कर प्रेक्षागारोंकी व्यवस्था करनी चाहिए। (९) हिन्दी और उर्दूको एक करनेके आन्दोलनका समर्थन कीजिए। यह बहुत-कुछ सैक्सन और फ्रांसीसी शब्द-भण्डारोंको एक करनेके प्रयत्न-जैसा है।

३. उन दिनों वे बॉम्बे स्कूल ऑफ़ इकनॉमिक्सके निदेशक थे।

हूँ, किन्तु आँख मूंदकर नही। इन्दौरके जैसे जलसेमें मैं इसलिए भाग लेता हूँ कि लोगोके हृदयतक पहुँचकर उसपर असर डाल सकूँ और जहाँतक बन पडे, उन्हे भौतिकतावादसे विमुख कर सकूँ। देशी भाषाओके प्रश्नमे एक पक्ष भौतिक है और दूसरा धार्मिक। मैं लोगोके सामने धार्मिक पक्ष रखनेका प्रयत्न कर रहा हूँ। सम्मेलनकी[1] सफलताकी माप यही होगी कि मैं अपने श्रोताओमे धार्मिक पक्षके लिए कितनी अभिरुचि जगा पाता हूँ।

पिछले साल मैंने कांग्रेसके लिए पण्डालकी झझट समाप्त कर देनेका प्रयत्न किया था और सुझाया था कि सभा बिलकुल सबेरे ही खुले मैदानमें हो। यही हिन्दुस्तानी तरीका है, और सबसे अच्छा भी। मेरी तो समझमे प्रेक्षागारकी व्यवस्था करना सुधार नही होगा मेरा आदर्श यह है कि पेडके नीचे खडे होकर लोगोके सामने बोला जाये। यदि हजारो-लाखो लोगो तक आवाज न पहुँच सके, तो कोई परवाह नही। वे सुनने नही, देखने आते हैं, और हम जितनी कल्पना कर सकते है, उससे वे बहुत अधिक देख जाते हैं। प्रेक्षागार-व्यवस्थाका मतलब है स्थानको सीमित कर देना। खूबी तो इसमे है कि वहाँ असंख्य लोग आये और फिर भी सारा काम बिलकुल व्यवस्थित ढगसे होता रहे। पुराने जमानेके वार्षिक मेले ऐसे ही होते थे। यदि आजकल नये सामाजिक और राजनैतिक जीवनमे आप धर्मकी प्रतिष्ठा कर दीजिए, तो आप देखेंगे कि आपके सामने एक ऐसा सर्वांगपूर्ण और कार्यक्षम सगठन प्रस्तुत है, जिसपर आप बखूबी निर्भर कर सकते है।

लेकिन, आपको यह सब लिखनेका क्या फायदा? हम दोनो ही अपने-अपने ढगसे सर्वथा व्यस्त है। हम पाश्चात्य सभ्यताके ज्वरसे ग्रस्त है। जो शाश्वत है, उसके लिए तो हमारे पास समय ही नही है। हमारे सम्बन्धमें अधिकसे-अधिक इतना ही कहा जा सकता है कि हम शाश्वतकी अभीप्सा करते हैं, भले ही हमारे कार्य, हम जो-कुछ कहते है, उसे झूठा सिद्ध कर दें।

मैं आपके पत्रको जुगाकर रखूँगा। क्या मै इसका सार्वजनिक उपयोग कर सकता हूँ? और कृपया यह बताना न भूले कि सस्ते होते हुए भी टिकाऊ मकान कैसे बनाये जा सकते है। ठेठ बुनियादसे छत तक की सारी तफसील चाहिए।

हृदयसे आपका,
मो० क० गांधी

[अंग्रेजीसे]

महादेव देसाईकी हस्तलिखित डायरीसे।
सौजन्य नारायण देसाई

१. तात्पर्य इन्दौरमें आयोजित २९-३१ मार्चके हिन्दी साहित्य सम्मेलनसे है, जिसकी अध्यक्षता गांधीजीने की थी।

२२६. पत्र : देवदास गांधीको

[नडियाद]
अप्रैल १२, १९१८

चि० देवदास,

तुम्हारा पत्र मिला। मैं तुम्हें एक पत्र लिख चुका हूँ, वह मिल गया होगा। तुमने अपनी तन्दुरुस्तीका हाल नहीं लिखा। तुम बहनकी सेवा कर रहे हो, यह तो मुझे बहुत ही अच्छा लगता है। हम शास्त्रोंमें पढ़ते हैं कि शिष्य गुरुकी सेवा करने निकल पड़ते थे। यह विचार वहां जितनी मधुर भाषामें व्यक्त किया गया है, तुम्हारा वाक्य भी उतना ही मनोहर और स्वाभाविक है। यह सेवा तुम्हे कितने ऊँचे स्थानपर ले जायेगी, इसका अन्दाज मैं तो नहीं लगा सकता।

मैंने ३५ फीसदी वृद्धि एक दिनसे ज्यादाके लिए भी नहीं ली, इसका रहस्य समझना आसान है। मुझसे यह मामला अधिक नहीं खींचा जा सकता था। मालिकोंने मजदूरोंकी दृढ़तासे नहीं, बल्कि मेरे उपवासके कारण यह वृद्धि दी है, ऐसा वे अभी मानते हैं। अगर मैं उससे ज्यादा मांगता, तो वह मेरा अत्याचार माना जाता। जब मैं अधिक मांगनेकी स्थितिमें था, तब मैंने कमसे-कम लिया, यह मेरी सरलता, नम्रता और विवेक-बुद्धिका सूचक है। मैंने उपवास न किया होता, तो मजदूर हार ही जाते। वे उपवाससे ही अपनी प्रतिज्ञापर टिके रहे। ऐसी टेकके लिए कमसे-कम मांग ही उचित हो सकती है। ऐसी टेकके शब्दोंका ही पालन हो सकता है, सो हुआ। और मेरे उपवासमें जो दोष थे, वे मेरी कमसे-कम मांगसे हलके, बहुत हलके, हो गये। उपवासका रहस्य एस्थर बहनने खूब समझा। उसने तारसे बाइबिलका एक वाक्य भेजा था। उसका अर्थ यह है "मनुष्य अपने मित्रोंके लिए अपने प्राण देनेसे अधिक प्रेम नहीं दिखा सकता।"[1] इस उपवासको मैं अपना अबतक का सबसे बड़ा कार्य मानता हूँ। इस उपवासके समय मुझे जो शान्ति मिली, वह अलौकिक थी।

मुझे अहमदाबादके कार्यमें जो आनन्द मिलता था, वह यहां नहीं मिल सकता। मन उद्विग्न रहा करता है और विचार उठते रहते हैं। ज्यादातर तो यही लगता है है कि लोगोंने इसका मर्म ठीक समझा है। कभी-कभी ऐसा भी लगता है कि उन्होंने मर्म ठीक नहीं समझा और इससे मन दुःखी हो जाता है। काम तो अच्छा ही हो रहा है, किन्तु अब मन थक गया है। मैं मुहम्मद अलीकी लड़ाईके बोझसे दबा जा रहा हूँ। यह मुझे हाथमें लेनी ही पड़ेगी। ईश्वर इसके लिए मुझे शक्ति देगा, यह समझकर बैठा हूँ और इसलिए भीतर-ही-भीतर शान्ति भी अनुभव करता हूँ। बा मेरे साथ ही है।

१. सेंट जॉन, १५।

छोटालालसे[1] कहना कि उसकी कलम फिर थक गई मालूम होती है। मुझे बुनाईकी अधिक तफसील भेजना।

बापूके आशीर्वाद

[गुजरातीसे]
महादेवभाईनी डायरी, खण्ड ४

२२७. पत्र : शिवदास और पोपटलालको

नडियाद
चैत्र सुदी १ [अप्रैल १२, १९१८]

भाईश्री शिवदास[2],

तुम्हारा पत्र और पोस्टकार्ड, दोनो मिल गये हैं। तुम्हे दस रुपये भेज देनेके लिए उन्हे लिख दिया है। यदि इतनेसे काम न चले तो मुझे लिखना। अपनी दैनदिनी लिखा करो। क्या प्लेग वहाँ अबतक फैला है?

भाई पोपटलाल[3],

तुम्हारी पंक्तियाँ पढी; तुम परसे मेरा विश्वास उठा नही है। वहाँ क्या कर रहे हो? आँखका क्या हाल है सो लिखना। फिर वहाँ जो काम तुम्हारे करने योग्य होगा सो सौपूंगा।

मोहनदास गांधीके वन्देमातरम्

[पुनश्च]

भाई मोतीलालका कुटुम्ब जितनी जल्दी आ जाये उतना अच्छा।

गांधीजीके स्वाक्षरोंमें मूल गुजराती पत्र (सी० डब्ल्यू० २८५७) से।

१. साबरमती आश्रमके एक सदस्य जो चम्पारनमें बरहरवाकी शालासे सम्बद्ध थे। वे बुनाई सिखाते एवं हिन्दी पढ़ाते थे।

२. शिवदास चतुर्भुज परीख, जो बादमें स्वामी शिवानन्द के नामसे जाने जाते थे; काठियावाड़ के सार्वजनिक कार्यकर्ता।

३. सौराष्ट्रके रचनात्मक कार्यकर्ता।

२२८. पत्र : बलवन्तराय ठाकोरको

[नडियाद]
अप्रैल १२, १९१८

भाईश्री बलवन्तरायजी,[1]

आपका पत्र मिला। उसने मेरे प्रति आपकी प्रीति प्रकट होती है। इसके लिए मैं कृतज्ञ हूँ। भाई नटराजनने[2] जल्दीमें राय बनाई है, यह मैंने उन्हें बता दिया है। आपकी दलीलोंका खण्डन करनेके बजाय मैं आपको यह समझा दूं कि मैं 'सत्याग्रह' किसे कहता हूँ। यद्यपि मैं 'निष्क्रिय प्रतिरोध' [पैसिव रेजिस्टेंस] शब्दोंको काममें लेता हूँ, किन्तु वे मेरे आशयके सूचक नहीं हैं। आप अंग्रेजी ढंगके निष्क्रिय प्रतिरोधको भूल जाइए। जिस नियमके अनुसार हम कुटुम्बमें बरतते हैं, उसी नियमको मैं राजनैतिक मामलोंमें लागू करता हूँ। मैं भारतमें देखता हूँ कि लोग भयसे अभिभूत होकर बरतते हैं, भयसे सच नहीं बोलते, सरकारको धोखा देते हैं और स्वयंको धोखा देते हैं। पुलिसका छोटे-से-छोटा कर्मचारी एक बड़े धनीकी लाज लूट सकता है। मेरे खयालसे इस स्थितिसे मुक्त होना सभी नेताओंका धर्म है। अधिकारी जनताकी बात नहीं मानते। वे जो कुछ करते हैं उसीको ईश्वरीय आदेश समझते हैं और यह मानते हैं कि उसका विरोध हरगिज नहीं किया जा सकता। इस मान्यतासे उन्हें मुक्त करनेमें उनकी सेवा है और इसलिए राज्यकी सेवा है। इसीलिए मैं जहां-जहां लोगोंको भयसे अन्यायके अधीन होता देखता हूँ, वहां-वहां उन्हें सलाह देता हूँ कि बलात् लादे हुए दुःखोंसे मुक्तिका उपाय ज्ञानपूर्वक दुःख सहना है। यही सत्याग्रह है। दुःखोंसे मुक्तिके लिए दुःख देना दुराग्रह और पशुबल है। बैलको जब दुःख होता है, तब वह लात मारता है। मनुष्यको जब दुःख हो, तब उसे आत्मबलसे दुःखका निवारण करते हुए दुःख सहना चाहिए।

खेड़ा जिलेके लोगोंपर ऐसा महान् संकट इसी बार नहीं आया है। उन्होंने पहले भी बहुत कष्ट सहे हैं। सामान्य स्त्रियाँ भी मेरी पत्नीसे इस तरहकी बातें करती हैं। इस बार लोगोंने लगानका कष्ट बताया। अगर वे लगान अदा करेंगे तो अपनी इच्छासे नहीं, बल्कि डरसे करेंगे। इसके लिए बहुतोंको अपने मवेशी बेचने और कीमती पेड़ काटने पड़ेंगे। यह दुःख हम कैसे देख सकते हैं? मैंने यह अपनी आँखोंसे देखा है। इसके निवारणका उपाय क्या है? अर्जियाँ दूं? अर्जियाँ तो दे चुका। नटराजन कहते हैं वाइसरायके पास जाओ, इंग्लैंड जाओ। इससे लोगोंको क्या राहत मिलेगी? तबतक तो पेड़ कट चुकेंगे और रुपया दिया जा चुकेगा। उसके बाद पुकार करनेसे क्या लाभ? समझनेकी बात है कि यह लड़ाई कानून बदलवानेके निमित्त नहीं है, बल्कि कानूनके

१. प्रो० बलवन्तराय कल्याणराय ठाकोर, गांधीजीके सहपाठी, गुजराती भाषा तथा साहित्यके विद्वान् और लेखक।

२. यहाँ कामाक्षी नटराजनका उल्लेख है, देखिए "पत्र : के० नटराजनको", ५-४-१९१८ से पूर्व।

अमलके विरुद्ध है। अपराधीको फाँसीपर चढा दिया जाये, उसके बाद अपील करनेका क्या प्रयोजन? इस तरह तो कितने ही निर्दोष मनुष्य फाँसीपर चढ गये है, और ऐसा हमारी उदासीनतासे हुआ है। हमारे पास दो ही उपाय थे। जो लोग लगान वसूल करने आये, उन्हे डडा मारकर दूर हटा दे या उनसे विनयपूर्वक कहे कि 'हमें लगान नही देना है।' फिर भी वे लगान तो ले ही जायेंगे, तब मैंने क्या बचाव किया — ऐसा सवाल तो आपके मनमें नही उठता? उठे, तो शुरूमे ही मैंने उसका उत्तर दे दिया है।

इस लडाईमें अनायास लोगोको धर्म, नीति, एकता, सत्य और अहिंसाकी तालीम मिलती है और सरकारको लोकमतके आदरकी। इसमे द्वेषभावकी गुजाइश ही नही। सरकारको दबाकर न्याय नही करवाना है, उसकी न्याय-वृत्ति जाग्रत करके न्याय करवाना है। इसका परिणाम अच्छा होगा। इससे अन्तमे आत्माका विकास ही होगा। यदि लोग कमजोर होनेके कारण हार जायेंगे तो भी क्या होगा? किया हुआ तप नष्ट होता ही नही। लोग गिरेंगे तो भी चढनेके लिए ही।

'नेहाभिक्रमनाशोऽस्ति प्रत्यवायो न विद्यते।
स्वल्पमप्यस्य धर्मस्य त्रायते महतो भयात्॥'

यदि अब भी कोई गुत्थी रह जाये, तो फिर पूछें।

मोहनदासके वन्देमातरम्

[गुजरातीसे]
महादेवभाईनी डायरी, खण्ड ४

२२९. भाषण : नडियादमें

अप्रैल १२, १९१८

जो भाई यहाँ आये है उन्होने अत्यन्त महत्त्वपूर्ण कार्य किया है। जो-कुछ कहना था, कमिश्नरसे वे वह सब कुछ साहसके साथ कह आये। मेरे विचारसे यह हमारी जीत है। इस लडाईका उद्देश्य लोगोमे अधिकारियोको बराबरीका मानकर मित्रभावसे अपनी बात उनसे कह सकनेकी हिम्मत पैदा करना है। सरकारसे अपनी माँग मनवाना इस लडाईका हेतु है। कमिश्नरने मित्रभाव और मिठाससे बातें की, इसीको आप अपनी जीत समझें। दु ख सहकर भी न्याय और सत्यपर कायम रहना, जीतकी महत्ता इसीमें है। सरकार जमीनें जब्त कर लेगी, यह बात कमिश्नरने मुझसे कही थी, यद्यपि कही बहुत शिष्टतासे थी। मैंने भी उन्हे उतनी ही शिष्टतासे और मिठाससे उत्तर दिया कि वे जमीनें भले ही ले ले; किन्तु वे पचाई नही जा सकेंगी।

जब सरकार और लोगोमे मतभेद हो जाये तब पंचका सिद्धान्त स्वीकार किया जाना चाहिए। हमारी लड़ाई इस सिद्धान्तको स्वीकार करवानेके लिए ही लडी जा रही है। धर्मकी दृष्टिसे देखे तो पचके बिना काम नही चल सकता। सरकार और लोगोका

सम्बन्ध बाप और बेटे जैसा है, गुलाम और मालिक जैसा नहीं। बापके अन्यायका विरोध करना बेटेका धर्म है। जिन लोगोंने प्रतिज्ञा ली है, उनको मेरी सलाह है कि वे उसका पालन अन्त तक करें। आपकी जब्त की हुई जमीनें आपको जबतक वापस न मिल जायेंगी मैं तबतक लड़ता रहूँगा। जबतक मेरे शरीरमें प्राण हैं मैं तबतक लड़ना बन्द नहीं करूँगा। हाँ, इस लड़ाईमें आपको शामिल रहना चाहिए। यदि आप जमीनोंकी जब्ती बरदाश्त कर लेंगे तो मैं आपके साथ ही हूँ। हरिश्चन्द्रने बहुत कष्ट सहे, वे नीचके घर बिके और उनका सर्वस्व चला गया, किन्तु वे सत्यपर कायम रहे। मुझे आशा है कि आप सभी हरिश्चन्द्र निकलेंगे। और यह मेरा अटल विश्वास है कि धर्मकी साधनाका उपाय धर्माचरण करना है, भजन गाना और कीर्तन करना-भर नहीं। हमें आत्मज्ञान अर्थात् आत्मशक्तिका ज्ञान प्राप्त करना है।

श्री प्रैटने मुझे सन्यासी बताया है। उनकी बात सच भी है और झूठ भी। मैं सन्यासी होनेका दावा नहीं करता। जैसे आप भूलोंसे भरे मनुष्य हैं वैसा ही मैं भी हूँ। अन्तर केवल इतना है कि मेरी सन्यासी होनेकी आकांक्षा है और मैं उस दिशामें प्रयत्नवान हूँ। सत्याग्रहसे राजनैतिक प्रश्नोंका निर्णय कराया जा सकता है, ऐसी मेरी दृढ़ मान्यता है। आपकी लड़ाईने श्री प्रैटका रुख बदला है, यह आत्मशक्तिका ही प्रभाव है।

लड़ाईमें अपनी जमीनोंको गँवा देना कोई बहुत-बड़ी बात तो है नहीं। जमीनें गँवानेके लिए सन्यासी होनेकी नहीं, गृहस्थ होनेकी आवश्यकता है। जो लोग यूरोपमें रक्तकी नदियाँ बहा रहे हैं वे सन्यासी नहीं हैं, गृहस्थ हैं। श्री लॉयड जॉर्जने अपना तन, मन और धन [देशके लिए] अर्पित कर दिया है, क्या वे सन्यासी हैं? इंग्लैंड जो लड़ाई लड़ रहा है वह क्या जमीनके लिए लड़ रहा है? नहीं, कदापि नहीं। उसको ऐसा लगा कि जर्मनीकी क्यों चले। जर्मनी भी अपनी प्रतिष्ठाके लिए लड़ रहा है। वह अपनी बात रखना चाहता है। हमें कुछ दूसरे लोगोंने यह आश्वासन दिया है कि हमें भूखों मरने नहीं दिया जायेगा। यूरोपके लोगोंको तो अपने बाहुबलका ही आश्वासन है। वे अपने बेटोंको पट-पट मरता देखकर भी आँसू नहीं बहाते। आप इस लड़ाईमें अपनी जमीनें सम्मान-सहित वापस ले सकेंगे। यदि आप जमीनें गँवाकर त्याग करेंगे तो आपका नाम खेड़ा जिलेमें ही नहीं, समस्त भारतमें होगा।

अन्तमें आपसे इतना ही कहना है कि आपने ईश्वरको साक्षी रखकर ज्ञानपूर्वक और सोच-समझकर जो प्रतिज्ञा ली है, उसे आप चाहे जो हो, अवश्य पालें और मुझ-पर नहीं, ईश्वरपर भरोसा करें।

जमीनें चली भी जायेंगी तो भी क्या हुआ? इससे हम अपनी कीर्ति और प्रतिष्ठा तो बढ़ा सकेंगे। सरकार भी हम जैसे वीर लोगोंपर राज्य करनेमें गौरव अनुभव करेगी।

मैंने एकबार श्री प्रैटसे कहा था कि वे भय और दमनके बलपर राज्य चला रहे हैं। इसके बजाय लोगोंके प्रति प्रेम और आदरसे राज्य चलायें तो जबतक सूर्य और चन्द्र हैं तबतक वह कायम रहेगा। मैंने आपसे बार-बार कहा है और अब भी

जोर देकर कहता हूँ कि चाहे जितना दु:ख उठाकर भी प्रतिज्ञाका पालन करेंगे तो आपकी विजय होगी — अवश्य होगी।

[गुजरातीसे]

खेड़ा सत्याग्रह

२३०. पत्र : जे० एल० मैफीको

नडियाद

अप्रैल १४, १९१८

आप स्वयं देखेंगे कि उपर्युक्त पत्रका[1] मसविदा ११ तारीखको तैयार किया गया था। इतने दिनों तक मैं उसे रोके रहा। परन्तु मैं महसूस करता हूँ कि अपने विचार स्पष्ट रूपमें आदरके साथ पेश करके ही मैं राज्यकी अधिकसे-अधिक सेवा कर सकता हूँ। पिछले चार दिनोंके दौरान संघर्षने गम्भीरतर रूप धारण कर लिया है। इस तथ्यने पत्र भेजनेके मेरे संकल्पको और भी दृढ़ बना दिया है। मैं पूरी विनम्रताके साथ लॉर्ड चैम्सफोर्डसे अनुरोध करता हूँ कि [अली] भाइयोंको छोड़ ही न दिया जाये बल्कि उनको और श्री तिलकको भी, परिषद्में शामिल कर लिया जाये। वे राज्यके शत्रु कतई नहीं हैं। उनकी सहायता लिये बिना आप भारतको सन्तुष्ट नहीं रख सकते।

[हृदयसे आपका,]

[अंग्रेजीसे]

नेशनल आर्काइव्ज़ ऑफ इंडिया : होम : पॉलिटिकल — ए : जून १९१८, संख्या ३६०

२३१. पत्र : 'बॉम्बे क्रॉनिकल' को[2]

नडियाद

अप्रैल १५, १९१८

सम्पादक,
'बॉम्बे क्रॉनिकल'

महोदय,

खेडाके किसानोंके समक्ष दिये गये कमिश्नरके गुजराती भाषणका सारांश प्रकाशित हो चुका है, इसलिए खेडाके किसानों और कार्यकर्त्ताओं दोनोंके प्रति न्याय करनेके लिए आवश्यक हो गया है कि भाषणका उत्तर दिया जाये।

१. उल्लेख १० अप्रैलके पत्रका है, जिसे इस टिप्पणीके साथ भेजा गया था।

२. लगता है कि यह पत्र प्रकाशनके लिए सभी समाचारपत्रोंको भेजा गया था। यह यंग इंडिया, १७-४-१९१८ में भी प्रकाशित हुआ था।

३. गांधीजीकी सहायतासे १२ अप्रैलको अहमदाबादमें बुलाई गई एक सभामें जिलेके लगभग २,००० प्रमुख किसान एकत्रित हुए थे। कलक्टर और अन्य माल अधिकारी भी उसमें उपस्थित थे। गांधीजीने पहले

At Sabarmati

18th April

My dear West.

I am writing this at a little village where I have arrived with Mrs Gandhi & others to preach passive resistance. Here is the cutting. The fight is great but it taxes me to the utmost.

I will not discuss your latest letter. I simply want to say do what you like. Phoenix & all it means are just as much

enclosing Manilal's letter. I knew you would keep calm and take a perfectly philosophic view of the whole thing. I shall keenly watch the progress of your new & bold experiment. Please give my love to Granny & his lot. I wonder how Sam has taken all this. Please ask him to write to me.

With love yours

MKGandhi

मेरे पास भाषणकी शब्दश. रिपोर्ट मौजूद है। साराशकी अपेक्षा इस भाषणसे सरकारी नीति ज्यादा स्पष्ट रूपसे मालूम होती है। कमिश्नर साहबका यह कहना है कि लगान मुलतवी करनेके सम्बन्धमें माल अधिकारियोका निर्णय ही अन्तिम है। अधिकारी लोग रैयतकी शिकायतें सुन सकते हैं; परन्तु उनके निर्णयके अन्तिम होनेके सम्बन्धमें कोई प्रश्न नही उठ सकता। सारा सघर्ष इसीको लेकर है। रैयतकी ओरसे कहा जाता है कि जब सरकारके स्थानीय अधिकारियो और रैयतके बीच प्रशासनिक आदेशोके पालनके बारेमें बहुत बडा मतभेद हो तो मतभेदके मुद्दोका फैसला किसी निष्पक्ष जाँच-समितिको सौंप देना चाहिए। ब्रिटिश सविधानकी सारी शक्ति इसीमें निहित है। कमिश्नरने सिद्धान्तके आधारपर इस बातको माननेसे इनकार कर दिया और इस प्रकार यह सकट उत्पन्न हो गया है। उन्होंने इस बातको बहुत तूल दिया और पहलेसे ही लॉर्ड विलिग्डनसे इस आशयका एक पत्र मँगवाकर अपनी स्थिति दृढ बना ली कि स्वय वे (लॉर्ड विलिग्डन) भी कमिश्नरके निर्णयमें हस्तक्षेप न करेंगे। अपने पक्षके समर्थनके लिए वे वर्तमान युद्धकी आड लेते हैं और रैयतसे तथा मुझसे कहते हैं कि साम्राज्यके इस सकटके समय तुम लोग यह सकल्प त्याग दो। लेकिन मैं कह सकता हूँ कि कमिश्नर साहबके व्यवहारसे तो जर्मन-सकटसे भी अधिक गम्भीर सकट उपस्थित हो जाता है, मैं साम्राज्यको उसके इस भीतरी सकटसे बचानेका प्रयत्न करके साम्राज्यकी सेवा ही कर रहा हूँ। यह बात कुछ झूठ नही है कि भारतवर्ष अपनी एक बहुत लम्बी निद्रासे जाग रहा है। अपने अधिकारो और कर्त्तव्योको समझनेके लिए रैयतका पढा-लिखा होना आवश्यक नही। रैयत जिस समय अपनी अजेय शक्ति समझ लेती है उस समय कोई भी सरकार, चाहे वह कितनी ही बलवती क्यो न हो, उसकी इच्छाके विरुद्ध नही ठहर सकती। खेड़ाकी रैयत भारतवर्षमें साम्राज्यकी एक बहुत ही महत्त्वपूर्ण समस्या हल कर रही है। खेड़ाके लोग दिखा देंगे कि लोगोकी इच्छाके बिना उनपर शासन करना असम्भव है। 'सिविल-सर्विस' जब एकबार इस बातको समझ लेगी तब वह ऐसे सच्चे सिविल-सर्वेंट भेजेगी जो प्रजाके अधिकारोके पूरे रक्षक हो। इस समय सिविल-सर्विसका शासन भयका शासन है। खेडाकी रैयत प्रेमके शासनके लिए लड रही है। यह सकट कमिश्नरने ही पैदा किया है। जिस समय उन्होंने देखा था कि लोगोका उनसे मत-भेद है उसी समय उनका कर्त्तव्य था कि वे लोगोको सन्तुष्ट कर देते, और इस समय भी उनका यही कर्त्तव्य है। यदि कमिश्नर साहब जनताकी बात मान लेंगे और उनको रिआयतें देंगे तो भारतके राजस्वको कोई भारी खतरा पैदा नही हो जायेगा। उसी तरह जिस प्रकार कानपुर-मसजिदवाले मामलेमें जनताकी माँग स्वीकार करके उसका एक कोना फिरसे बनवा देनेपर साम्राज्यके लिए कोई खतरा पैदा नही हुआ था, या जनताकी इच्छाके अनुसार सरकार द्वारा श्रीमती मेब्रिकको माफी दे देनेपर न्याय और प्रशासनको कोई खतरा पैदा नही हुआ था। यदि मैंने चटपट लोगोको यह सम्मति न दी होती कि यदि कमिश्नर तुम

वल्लभभाई पटेलसे उसमें जानेके लिए कहा था, लेकिन बादमें कमिश्नरके भाषणके कारण उत्पन्न गलतफहमी दूर करनेके लिए उन्होंने सभामें स्वय भाषण करना आवश्यक समझा। उनके भाषणके लिये देखिए परिशिष्ट १३।

लोगोकी प्रार्थना सुननेसे इनकार करते है तो तुम लोग भी लगान न देनेके अपने निश्चय पर दृढ़ रहो, तो प्रजाका असन्तोष इस प्रकार खुले और स्वस्थ रूपमे प्रकट न होता; वह भीतर ही भीतर सुलगता रहता। अन्तमें कटुता पैदा होती। जो पुत्र अपने पिताके विरुद्ध मन-ही-मन कुढता नही रहता, बल्कि स्पष्ट रूपसे और पूरी नम्रतापूर्वक पिताको बतला देता है कि आपकी आज्ञाका पालन मैं क्यो सचाईके साथ नही कर सकता, वही सुपुत्र है। मैं सरकार और जनताके सम्बन्धोंपर भी यही नियम लागू करता हूँ। कभी ऐसा कोई समय नही होता जब कि मनुष्यको अपना अन्त.करण ताकपर रख देना पड़े। बल्कि किस तरह बुद्धिमान् पिता सहजमे और विशेषत. ऐसे अवसरपर जब कि परिवारपर बाहरके किसी प्रकारके सकटकी सम्भावना हो, जल्दीसे अपने पुत्रकी बात मान लेता है और उसे रुष्ट या असन्तुष्ट नही करता उसी प्रकार समझदार सरकार भी अपनी प्रजाको नाराज नही करेगी, बल्कि चटपट उसकी बात मान लेगी। युद्धके कारण अफसरोको इस बातकी खुली छूट नही मिल सकती कि वे रैयतको अपनी ऐसी आज्ञाओके पालनके लिए भी विवश करे जो उसकी समझमे अनुचित और अन्यायपूर्ण हो।

लगानकी बाकी रकम केवल चार लाख रुपये है। लेकिन इतनी ही रकमके लिए कमिश्नरने यह धमकी दी है कि रैयतकी तीन करोड़ रुपयेसे अधिक मूल्यकी अथवा डेढ़ लाख एकड़ जमीन जब्त कर ली जायेगी और जिनकी जमीन जब्त होगी उन्हे अथवा उनके बीबी-बच्चोको फिर कभी खेड़ामे कोई जमीन लेने ही न दी जायेगी। कमिश्नरकी इस धमकीने रैयतका निश्चय और भी दृढ़ बना दिया है। कमिश्नर खेतिहरोको एक ही साँसमे गुमराह भी कहते है और दुराग्रही भी। उनके ये शब्द कितने गम्भीर है:

> यह मत समझो कि हमारे मामलतदार और हमारे तलाटी लोग तुम्हारी चल-सम्पत्तिको जब्त और कुर्क करके निर्धारित लगान वसूल करेंगे। हम इतनी झंझटमें नहीं पड़ेंगे। हमारे अफसरानका वक्त कीमती है। तुम्हारे नकद रुपया भरनेसे ही हमारा खजाना भर सकता है। इसे धमकी मत मानो। इतनी बात समझ लो कि माता-पिता कभी भी बच्चोंको धमकी नहीं देते। वे केवल सलाह देते हैं। लेकिन अगर तुम बकाया अदा नहीं करोगे तो तुम्हारी जमीन जब्त कर ली जायेगी। बहुत-से लोग कहते है कि ऐसा नहीं होगा। पर मैं कहता हूँ कि ऐसा होगा। मुझे प्रतिज्ञा करनेकी जरूरत नहीं। मैं जो कह रहा हूँ उसे करके दिखा दूँगा। जो लोग लगान नहीं भरेंगे, उनकी जमीन जब्त कर ली जायेगी। अवज्ञा करनेवालोंको भविष्यमें भी कोई जमीन नहीं मिलेगी। सरकार उनके नाम रैयतके रेकार्डमें नहीं देखना चाहती। उनमें से जिनके नाम निकल जायेंगे वे हमेशाके लिए निकाल दिये जायेंगे।

कमिश्नर साहबकी इस प्रतिहिंसा एवं आतकपूर्ण भावनाके विरुद्ध जीवन-पर्यन्त सघर्ष करना प्रत्येक राजनिष्ठ नागरिकका पवित्र कर्तव्य है। कमिश्नर साहबने यह कहकर कि हड़तालियोने जानबूझकर अपनी प्रतिज्ञा तोड़ी थी, अहमदाबादके हडतालियो और मेरे साथ भारी ज्यादती की है। जिस सभामे समझौता हुआ था उसमे वे स्वय उपस्थित थे। उनका अपना यह खयाल तो हो सकता था कि हड़तालियोने अपनी प्रतिज्ञा तोड़ी थी।

(हालाँकि सभाम उनके भाषणसे इससे उलटी ही ध्वनि निकलती थी) परन्तु इसका तो कोई प्रमाण नही कि हडतालियोने जान-बूझकर प्रतिज्ञा तोडी थी। इसके ठीक विपरीत, उन्होंने अपनी माँगके अनुसार पहले दिन वेतन मिलनेपर काम शुरू करके अपनी प्रतिज्ञा पूरी की थी, और वेतनका प्रश्न अन्तिम निर्णयके लिए पच-फैसलेको सौप दिया गया था। हडतालियोने ही पंच-फैसलेका सुझाव रखा था जिसे मिल-मालिकोने ठुकरा दिया था।

सघर्षका मुद्दा ही असलमें वेतनमें ३५ प्रतिशत वृद्धि या पच-फैसले द्वारा निर्धारित वृद्धि कराना था। उनकी यह माँग मंजूर हो चुकी थी। इसलिए मुझे खेदके साथ कहना पड़ता है कि ऐसी दशामें हडतालियोको और मुझे इस तरहका ताना देना नैतिक नही है।

आपका,
मो० क० गांधी

[अग्रेजीसे]
बॉम्बे क्रॉनिकल, १७-४-१९१८

२३२. पत्र : नायकाके निवासियोंको

अप्रैल १६, १९१८

[भाइयो,]

आपमें से २५ लोगोकी जमीनें जब्त हो जानेका समाचार मैंने अभी-अभी सुना है। अगर ऐसा हुआ हो, तो मैं आपकी बारी पहले आनेपर आपको बधाई देता हूँ। मैं मानता हूँ कि जो जमीनें जब्त हुई हैं, वे कागजोमें ही जब्त रहेंगी। फिर भी, आपने तो इन सभी दु खोको सहनेकी प्रतिज्ञा ली है, इसलिए मुझे आपको दिलासा देनेकी जरूरत नही रह जाती। आपको तो मैं बधाई ही देता हूँ।[1]

[आपका,]

[गुजरातीसे]
महादेवभाईनी डायरी, खण्ड ४

1. इसका अनुवाद २३-४-१९१८ के न्यू इंडियामें भी छपा था।

२३३. भाषण : ओडमें

अप्रैल १६, १९१८

हमने किसी व्यक्तिकी याद की और यदि वह अचानक आ गया तो हम कहा करते है, भाई तुम सौ बरस जियोगे। यहाँ भी ऐसा ही हुआ है। हमने श्री वल्लभभाईको जिस क्षण याद किया उसी क्षण वे यहाँ आ पहुँचे। मै आपसे गत सप्ताह मिलनेकी आशा करता था। किन्तु मै बम्बई चला गया था और अहमदाबादमें श्री प्रैटसे मिलनेके लिए रुक गया, इसलिए आ नही सका। बम्बईमें जो बडे हाकिम मिले उनसे मेरी बातचीत हुई। मै आपको इस बातचीतका हाल बताऊँ इससे पहले आपके बारेमे नडियादमें जो कुछ सुना उसे बता दूँ। लोगोने मुझसे यह कहा कि ओडके लोग बडे उत्साही है; किन्तु उन्होने अभीतक अपने उत्साह और बलका उपयोग अपने हितार्थ नही किया है, बल्कि पारस्परिक कलहमे किया है। फलस्वरूप खेड़ाकी भूमि जो उपजाऊ और सुन्दर है और जिसे आपके बाप-दादोने स्वर्ण-भूमि बना दिया था, आपसकी दुराग्रहपूर्ण लड़ाईसे बरबाद हो गई।[1] जबतक यह स्थिति कायम है तबतक हम किसी तरहकी लडाई नही जीत सकते। आपने तो प्रतिज्ञा ली है कि आप अन्ततक जूझेंगे और न्याय प्राप्त करेंगे। मैं निश्चित रूपसे कहता हूँ कि हम पिछला वैर-भाव भुलाकर सगठित होकर रहेंगे तो हमारी जीत होगी।

श्री प्रैट, श्री कारमाइकेल और [सर जेम्स] डुबालेने अपने सिर हिला-हिलाकर हमारी लडाईका भारी विरोध किया है। बातचीतमें भी उन्होने कहा, 'आप खेडाके लोगोको नही जानते। हम नही मानते कि इस लडाईसे वहाँके लोग आगे बढेंगे, उन्नति करेंगे और नीतिवान् बनेंगे। इससे तो वे लोग उद्धत ही होंगे।' माल-विभागके बडे अधिकारियोकी आपके सम्बन्धमे क्या राय है, यह मै आपको बता रहा हूँ। आपने जो लडाई आरम्भ की है उसमें आपको आंशिक ही नही, पूर्ण सत्यका पालन करना चाहिए। प्रह्लादसे जब यह पूछा गया कि तुम्हारे भगवान् कहाँ हैं; तब उन्होने उत्तर दिया "मेरे भगवान् जलमे है, थलमें है, आकाशमे और पातालमे भी हैं। मुझे भगवान् दसो दिशाओमे दिखाई देते हैं।" उसी प्रकार यदि हम दसो दिशाओमे सत्यके दर्शन करे तभी हम इस लडाईको सत्याग्रहकी लडाई कह सकते हैं। हम सार्वजनिक कार्यमे एक तरहका और निजी व्यवहारमें दूसरी तरहका आचरण नही कर सकते। जैसे भगवान् सर्वव्यापक है वैसे ही सत्य भी सर्वव्यापक है। हम यह नही कह सकते कि भगवान् अमुक स्थानमे नही है। इसी प्रकार हम यह भी नही कह सकते कि सत्य अमुक स्थानमें है और अमुक स्थानमें नही है।

१. तारीख २० अप्रैल, १९१८ के **बॉम्बे क्रॉनिकल** में छपी खबरके अनुसार गांधीजीने कहा: "बरसोंसे आप लोग अपनी शक्ति और निडरताका उपयोग पारस्परिक कलहमें करते रहे है। एक बार उठें और सगठित हों एव सशक्त तत्त्वोंका उपयोग सरकारके भयसे लड़नेमें करें, जो आप सबका सयुक्त शत्रु है।"

आप एक गाँवके, एक जातिके और एक धन्धेके लोग हैं, इसीलिए आपको [अपनी-अपनी भूलपर] एक दूसरेसे क्षमा माँगना और सगठित रहना सीखना चाहिए। जो यह कहता है कि सत्याग्रह केवल सरकारके विरुद्ध ही किया जा सकता है, वह सत्याग्रहका अर्थ नही समझता। हम सरकारसे धमकी और उद्दडताके सहारे नही लडना चाहते; बल्कि प्रसन्नतापूर्वक कष्ट सहकर लड़ना चाहते हैं। जो लोग कष्टोके निवारणार्थ ज्ञानपूर्वक और सोच-समझकर कष्ट सहते हैं उन्हे कष्टोसे सदा मुक्ति मिलती है। आपके लिए भी इस लडाईको जीतनेका यही मार्ग है। नायकामें पच्चीस किसानोको जमीनोकी जब्तीके नोटिस दिये गये और उनकी जमीनें जब्त कर ली गईं। मैंने उन बहादुर भाइयोको बधाईकी चिट्ठी[1] लिखी। मैंने लिखा कि यह जब्ती तो केवल सरकारी कागजोमें ही रहेगी। फिर भी आपका प्रण है कि आप जमीनें जब्त हो जानेपर भी विचलित नही होगे और अपनी प्रतिज्ञा निबाहेंगे। सत्याग्रही भाइयोको सान्त्वना देनेकी कोई आवश्यकता नही होती। उन्हे तो बधाई ही देनी होती है। यह उनके लिए आनन्द और धन्यवादका अवसर होता है। इसीलिए मैंने आपको सान्त्वना नही दी है, धन्यवाद ही दिया है। मैं आपको भी कहता हूँ कि आप जब्तीके हुक्मका प्रसन्नतापूर्वक स्वागत करें। मुझे तो स्वप्नमें भी यह नही लगता कि सरकार हमारी जमीनोको जब्त कर सकती है। अंग्रेजी राज्यमें यह असम्भव है। यदि यह सम्भव हो जाये तो मेरे लिए अंग्रेजी हुकूमतके विरुद्ध विद्रोह करनेके अतिरिक्त कोई मार्ग ही नही रहता। अर्थात् जमीनें जब्त नही की जा सकती। आपने प्रतिज्ञा लेकर अपराध नही किया है, बल्कि उससे सरकारके प्रति वफादारी दिखाई है। फसल चार आनेसे कम हुई है, इसलिए हमने सरकारसे कानूनके अनुसार सरकारी लगानकी वसूलयाबी बन्द करनेकी प्रार्थना की, उसे आवेदन दिये, सभाएँ करके न्याय की माँग की और धारासभाके हमारे प्रतिनिधियोने समस्त वैध उपायोको आजमाया। फिर भी सरकारने लोगोकी बातपर ध्यान नही दिया। तब जिन लोगोमें बहादुरी है, मर्दानगी है और वफादारी है उन्हे ऐसे अवसरपर क्या करना चाहिए? राजा और प्रजाका सम्बन्ध ऐसा होना चाहिए कि जब राजा और प्रजाके बीच मतभेद खडे हो तब राजा प्रजाके मुकाबले झुक जाये।

हमारी माँग यह नही है कि हमारी बात ठीक मानकर सरकार प्रजाके मुकाबले झुक जाये। हमने तो यही कहा है कि यदि हमने जो-कुछ कहा है वह सत्य सिद्ध हो तो हमें न्याय मिलना चाहिए। हमने पचकी नियुक्ति की माँग की, उसे भी सरकारने स्वीकार नहीं किया। श्री प्रैटकी मान्यता यह है कि इस सम्बन्धमें लोग न कुछ कह सकते हैं और न कुछ माँग सकते हैं। हम पिछले पचास वर्षसे इस नीतिसे पीडित हैं। हम भयसे भिखारी बन गये हैं। हमारे पास इतना भी रुपया नही रहा है कि हम अपने घरोकी सार-सँभाल कर सकें। पैदावार घटती जा रही है। जबतक हममें इतना डरपोकपन है तबतक भगवान् हमपर कृपा-दृष्टि भी कैसे कर सकते हैं? जहाँ राजा और प्रजाके सम्बन्ध सत्यकी नीवपर आधारित होते हैं वहाँ वर्षा भी समयपर होती है। राजा और प्रजा दोनोमें अपनी-अपनी बातको लेकर वैर बँध गया है। सरकार कहती है कि

१ देखिए पिछला शीर्षक।

उसका कहना सत्य है और प्रजा कहती है कि उसका कहना सत्य है। हम सत्य कहते हैं; सत्य कहनेपर भी हमे राहत नही मिलती। राजा और प्रजामे मतभेद हो तो राजा क्या करे; यह बात इस लडाईसे तय हो जायेगी। सारे देशके लोगोकी आँखें आपपर लगी हैं। आप हिम्मत करके डटे रहे, नामर्दी न दिखायें। कार्य आरम्भ न करना बुद्धिमानी है; किन्तु आरम्भ कर दे तो उसे मृत्यु-पर्यन्त न छोड़ना वीरताकी निशानी है।

मुझसे कहा जाता है कि मै पाटीदारो और गुजरातके लोगोसे सावधान रहूँ; किन्तु मै तो सभीको अपने जैसा ही देखता हूँ। सबमे एक ही आत्मा होती है और सबमे शक्ति भी एक ही होती है। हम ज्यो-ज्यो इसके विकासका प्रयत्न करते है, यह त्यो-त्यो विकसित होती है। यह मेरा अनुभव है इससे आपका लाभ होगा और आपको राहत मिलेगी। इसीलिए मुझे आशा है कि आप अपनी प्रतिज्ञापर अवश्य कायम रहेंगे। पाटीदार साहसी है और क्षत्रिय है। वे समझते है कि अपनी जमीनोके मालिक वे खुद है। इसलिए उन्हे इसका अभिमान होना स्वाभाविक है। वे अपनी टेक न छोडेंगे। वे धर्म न त्यागेंगे; बल्कि अन्ततक लड़ते हुए लोगोकी बातको सरकारसे मनवायेंगे। ऐसा होगा तो स्वराज्य अपने हाथमे ही है। स्वराज्य अपने अधिकार और कर्त्तव्य समझ लेनेसे मिलेगा। श्री मॉण्टेग्यु प्रत्यक्षत: चाहे इंग्लैंडसे आकर हमे बड़े-बडे अधिकार दे दे, किन्तु यदि हमे अपने अधिकारो और कर्त्तव्योका ज्ञान न होगा तो उनसे हमे कोई भी लाभ न होगा। इस बातको समझनेके लिए हमे शिक्षण और प्रशिक्षणकी आवश्यकता है। मेरा खयाल है कि इस सम्बन्धमे आपमें प्राथमिक ज्ञान और समझ है, मेरा विश्वास है कि उसी प्रकार आपने इस लडाईके सम्बन्धमे जो प्रतिज्ञा ली है वह विचारपूर्वक ली है। आप इस प्रतिज्ञाका पालन सोच-समझकर करें। इस लडाईमें द्वेष-भावके लिए स्थान नही है। इसमे तलवार या किसी और हथियारका कार्य भी नही है। सत्यके मार्गपर चलना ही अपना हथियार है और साहस एवं श्रद्धा हमारे शस्त्र है। सत्याग्रहकी लड़ाईमे हारकी गुंजाइश तो है ही नही। यदि हम अपनी जमीनको आत्म-सम्मानसे अधिक प्यारी मानेंगे तो निश्चय ही हारेंगे। मुझे विश्वास है और मै आशा करता हूँ कि मैने खेड़ाके लोगो-पर भरोसा किया है, वह झूठा सिद्ध नही होगा। मेरी प्रार्थना है कि सरकारके विरुद्ध जूझकर आप खेड़ाका नाम उज्ज्वल करे।

[गुजरातीसे]
खेड़ा सत्याग्रह

२३४. "अन्त्यज स्तोत्र" की प्रस्तावना

नडियाद
चैत्र सुदी ७, १९७४ [अप्रैल १७, १९१८]

हम लोगों द्वारा अन्त्यजोंके प्रति किया जानेवाला व्यवहार हिन्दू धर्मके अत्याचारोंका ज्वलन्त उदाहरण है। हमारा यह व्यवहार कितना पतित और लज्जास्पद है उसका भाई अमृतलाल पढियारने अपने 'अन्त्यज स्तोत्र' में बहुत सजीव वर्णन किया है। उसमें कविकी अतिशयोक्ति अवश्य है, परन्तु बहुत कम। भाई पढियारने ऐसा मर्मस्पर्शी चित्र खींचा है कि उसे पढ़कर पाठकको रोमांच हुए बिना नहीं रह सकता। इस स्तोत्रमें उनका रोष और उनकी वेदना साफ नजर आती है। यह स्तोत्र लाखों नर-नारियोंको पढ़कर सुनाया जाना चाहिए, ठीक उसी प्रकार जैसे मुहल्ले-मुहल्लेमें स्त्री-पुरुष भागवत आदि ग्रंथोंको सुनते हैं।

जबतक हम अस्पृश्यताके इस दोषसे मुक्त नहीं हो जाते, तबतक हम स्वराज्य भोगने योग्य हैं या नहीं यह एक बड़ा सवाल बना रहेगा। गुलामोंके मालिकोंको अगर स्वराज्य भोगने योग्य कहा जा सकता है तो हम भी हो सकते हैं। यह बात याद रखनी चाहिए कि हम खुद इस समय पराधीन अवस्थामें हैं, उससे मुक्त होनेकी इच्छा रखनेवालेको तो यह चाहिए कि वह अपने दोषोंपर गहराईसे विचार करे। गिरे हुए लोगोंके रजकणके समान छोटे-छोटे दोष हिमालयकी भाँति बड़े मालूम होते हैं। अन्त्यजोंके प्रति हम लोगोंके व्यवहारका भी यही हाल है। और फिर बात ऐसी है कि यह दोष है ही हिमालय-जैसा। इसी कारण वह हमारी उन्नतिमें बाधक बन रहा है। गोधरामें जो अन्त्यज परिषद् हुई थी उसके बाद अस्पृश्यताके बारेमें जो वादविवाद चल पड़ा है उसे मैंने ध्यानसे और विनयपूर्वक समझनेकी कोशिश की है। उसमें मैंने अस्पृश्यताको बनाये रखनेके पक्षमें एक भी जोरदार दलील नहीं पाई। जहाँ शास्त्रके ऊपर आक्रमण किया जा रहा हो वहाँ शास्त्रकी बातें सामने रखकर बचाव करना, यह तो अन्धेके द्वारा न देखी जा सकनेवाली चीजके अस्तित्वसे इनकार करनेके समान है। यदि हम अपने व्यवहारका बचाव न्यायके आधारपर नहीं कर सकते तो शास्त्रोंका सहारा लेना व्यर्थ है। शास्त्र बुद्धिसे और नीतिसे परे नहीं हो सकते। यदि बुद्धि और नीतिका त्याग कर दिया जाये तो किसी भी पाखण्डका धर्मके नामपर बचाव किया जा सकता है।

इस घोर पापसे मुक्त होनेके लिए हमें ऐसा कठोर और सतत् प्रयत्न करना पड़ेगा जैसा कि श्री पढियार कहते हैं, इस प्रकारके प्रयत्नमें ही हमारी उन्नति निहित है। अगर हम यह प्रयत्न पुराने तरीकेसे करेंगे तो धर्म-संग्रहके साथ-साथ अपने उद्देश्यमें सफलता भी प्राप्त कर सकेंगे। और यदि हम पाश्चात्य ढंगसे करेंगे तो हमारे तथा अन्त्यजोंके बीच एक दरार पड़ जायेगी।

जब हमारे बड़े-बूढ़े इस संसारसे विदा हो लेंगे तभी अन्त्यजोंका उद्धार होगा, यह कहना कायरता है। हमारा पुरुषार्थ तो इसमें है कि हम अपने बड़े-बूढ़ोंके हृदयोंमें दया

और शुद्ध धर्मकी भावना जाग्रत करे। और यही हमारा कर्त्तव्य भी है। यदि हम जैसा कहे वैसा हिम्मतसे कर दिखायें तो कार्य शीघ्र सिद्ध होगा। शत्रुको मारकर राज्य भोगनेकी इच्छा तुच्छ इच्छा है। हमारा धर्म यह है कि हम उन्हे अपने मतका बनाकर मित्र बना लें। भाई पढियारको कायरतासे छुटकारा पाना चाहिए।

मोहनदास करमचन्द गांधी

[गुजरातीसे]

अन्त्यज स्तोत्र

२३५. सन्देश: सत्याग्रही किसानोंको[1]

नडियाद

अप्रैल १७, १९१८

आप लोगोने श्री प्रैटका भाषण शान्तिपूर्वक, ध्यानसे सुना, यह बहुत अच्छा किया। सत्याग्रहियोको यही शोभा देता है। सयोगवश हमे सरकारकी लगान सम्बन्धी आज्ञाका अनादर करना पड़ा है, परन्तु सरकारी अफसरोका उचित सम्मान करना हम न भूलें। हम भय और गुलामीसे मुक्त होना चाहते हैं, परन्तु विनयको नही छोडना चाहते। उद्धत तो हम हो ही नही सकते। सत्याग्रहमें विनय तो सदा रहती ही है।

कमिश्नर साहबने किसानोके अधिकार और कर्त्तव्य बताये। उनकी दोनो सलाहें ठीक हैं। परन्तु वे यह बताना भूल गये कि मनुष्यमात्रका भी एक सच्चा अधिकार और कर्त्तव्य होता है। वह कर्त्तव्य यह है कि कोई भी व्यक्ति कोई काम डरके मारे न करे; इसलिए यदि कोई उसे डर दिखाकर कोई काम कराना चाहे, तो उसका अधिकार है कि वह उस बातका विरोध करे। इस अधिकारके आधारपर खेड़ाके लोग इस समय सरकारकी आज्ञाका सविनय उल्लघन कर रहे हैं। हम मानते हैं कि इस साल फसल रुपयेमें चार आनेसे कम हुई है, इसलिए लगानकी वसूली मुलतवी की जानी चाहिए। इसलिए जो लगान मुलतवी किया जाना चाहिए, उसे अगर हम जमा करायेंगे, तो सिर्फ इसी डरसे करायेंगे कि सरकार हमारी जगम सम्पत्ति बेच डालेगी या हमारी जमीनें जब्त कर लेगी। अगर हम इस डरसे दबकर रह गये तो पौरुषहीन हो जायेंगे। लगभग अस्सी फीसदी किसानोंने इस डरसे लगान अदा कर दिया है। इसलिए बीस फीसदीके हाथमें सौ फीसदीकी लाज रह गई है। जिसने अपना पौरुष खो दिया है, वह सच्ची वफादारी भी नही दिखा सकता। पशुओ और मनुष्योके बीचका भेद पौरुषमे ही निहित है। हमारी यह लडाई पौरुष दिखानेकी लडाई है।

१. गांधीजीने अपने १५ अप्रैलके अखबारोंको भेजे गये पत्रमें कमिश्नर प्रैटके भाषणपर विचार किया है। इस लेखमें उन्होंने प्रश्नका पर्याप्त विवेचन किया है। महादेव देसाईके कथनानुसार उन्होंने इसे अपने १२ अप्रैलके नडियादके भाषणमें कही गई मुख्य बातोंका स्पष्टीकरण करनेके लिए पुस्तिकाके रूपमें निकाला था।

माल-विभागकी या दूसरी सरकारी आज्ञा लोगोके आवेदन देनेपर भी न बदली जाये तो उन्हे उस आज्ञाको चुपचाप शिरोधार्य कर ही लेना चाहिए, ऐसी ब्रिटिश सविधानकी भावना नही है। यह राजनीति नही है। जिस आज्ञाको लोग ज्ञानपूर्वक अन्यायपूर्ण या अत्याचारपूर्ण मानें, उसका विरोध करना उनका जन्मसिद्ध अधिकार और कर्त्तव्य है। जो कानून कुटुम्बपर लागू होता है, वही राजा-प्रजाके बीच भी लागू होता है और जहाँ इस कानूनका भग होता है, वहाँ राजा और प्रजामें सघर्ष होता है। प्रजा गुप्त रूपसे बेवफाई करती है। राजा अविश्वासी और शकाशील हो जाता है। सरकारकी आज्ञाका विरोध करते समय एक बात अवश्य याद रखी जानी चाहिए। हम यह पूरी तरह नही कह सकते कि सरकारकी आज्ञा अनुचित है। हम उसे अनुचित मानें, तो भी सम्भव है, असलमें वह उचित हो। इसलिए निजी व्यवहारकी तरह राजा-प्रजाके बीचके मतभेदोका निपटारा भी पच द्वारा ही कराया जाना चाहिए। पुराने जमानेके राजा ऐसा ही करते थे और अग्रेज सरकार भी सदा ऐसा ही करती है। ऐसे पचको वह 'कमीशन' या 'कमेटी' का नाम देती है। राज्यका सम्मान कायम रखनेके लिए इस पचका निर्णय अदालतोंके जरिए अमलमें नही लाया जाता, बल्कि राज्यकी न्याय-परायणतापर निर्भर माना जाता है। फिर भी अन्तिम परिणाम तो जैसा साधारण पचके निर्णयका होता है, वैसा ही इनके निर्णयका भी होता है। लोकमतका आदर किये बिना हुकूमत चलाना असम्भव है। परन्तु अगर राजा कमेटी या कमीशन भी मुकर्रर न करे, तो प्रजा क्या करे? जिस राष्ट्रमें पशु-बलकी प्रधानता होती है, उसमें मारकाट होती है और प्रजा शस्त्रोका उपयोग करके न्याय-प्राप्तिके लिए लडती है। मेरा अपना तो यह अनुभव है कि यह पद्धति बेकार है। मैं यह भी मानता हूँ कि सभी धर्म-शास्त्रोमें मारकाट द्वारा न्याय प्राप्त करनेकी पद्धतिकी निन्दा की गई है और इस पद्धतिको हम पारिवारिक व्यवहारमें कभी लागू नही करते। सीधा रास्ता यह है कि सरकारी आज्ञाका अनादर करनेमें हमें जो दुःख उठाना पडे, उसे हम धीरजसे और रोष किये बिना उठायें। इससे बहुतसे मतलब पूरे हो जाते हैं। 'अगर हम झूठे साबित हो, तो जो दुःख हमने उठाया, वह उचित माना जायेगा और अगर सच्चे हो, तो विरोधी पक्ष यानी सरकारी दलमें ममता उत्पन्न हुए बिना रह नही सकती।' नतीजा यह होगा कि सरकारके सम्मुख अन्तमें न्याय करनेके सिवा, कोई चारा ही न रह जायेगा। यह तथ्य शास्त्रसे प्रमाणित है। शास्त्रोमें सत्यकी सदा जय ही मानी गई है और इसकी सत्यता हम समय-समयपर अनुभव करते हैं। इस प्रकार खेडाके लोग सत्यके लिए, अर्थात् धर्मके लिए दुःख उठानेके लिए निकल पडे हैं।

कही हम कमजोर न हो जायें, इसलिए हमने अपनेको प्रतिज्ञासे बाँध लिया है। इस प्रकारकी प्रतिज्ञा लिये बिना कोई राष्ट्र उन्नति नही करता। 'प्रतिज्ञाका अर्थ है, अटल निश्चय। जो मनुष्य निश्चय नही कर सकता, वह बिना पतवारकी नावकी तरह इधर-उधर टकराकर नष्ट हो जाता है।' कमिश्नर साहब कहते है कि यह प्रतिज्ञा अनुचित है और बिना सोचे-विचारे ली गई है। प्रतिज्ञा अनुचित नही है, यह हम पहले देख चुके है, क्योंकि हम जिस आज्ञाको अनुचित मानते हैं, हमें उसका विरोध करनेका अधिकार है। यह प्रतिज्ञा बिना विचारे नही ली गई, इस बातको हरएक प्रतिज्ञा

लेनेवाला व्यक्ति जानता है। सूर्यकी गति बदली जा सकती है, परन्तु यह विचारपूवक ली गई उचित प्रतिज्ञा हरगिज नही बदली जा सकती।

मुझे दुख है कि श्री प्रैटने अहमदाबादकी मिल-मजदूरोंकी हडतालके बारेमें अपने भाषणमे सचाईके विरुद्ध बात कही है। इसमे उन्होने विनय, न्याय-मर्यादा और मित्रताका भंग किया है। मैं आशा करता हूँ कि उन्होने यह दोष अनजानमें किया है। यदि इस दुनियामे किसीने अपनी प्रतिज्ञाका पालन किया है, तो अहमदाबादके मिल-मजदूरोने ही किया है। उन्होने सदा यही कहा था कि पच जो वेतन तय कर देंगे, उतना वेतन लेना वे मंजूर कर लेंगे। हडतालके दिनोमे मालिकोने इस तत्त्वको अस्वीकार किया। इसीलिए मजदूरोने पैंतीस फीसदी वृद्धिकी माँग की। उसके बाद भी उन्होने पंच-निर्णय मान लेनेकी बातको अस्वीकार नही किया था। उन्होने पहले दिनकी पैंतीस फीसदी वेतन-वृद्धि ले ली और प्रतिज्ञा पूरी की। बादमे उसके लिए पच मुकर्रर किये गये और मजदूरोने मजूर किया कि पच जो वेतन तय कर देंगे, उसे वे ले लेंगे। यह तय हुआ कि इस बीच मालिकोकी प्रस्तावित बीस प्रतिशत और मजदूरोकी माँगी हुई पैंतीस प्रतिशतकी औसत वेतन-वृद्धि ले ली जाये और पच-निर्णयके बाद उस निर्णयके अनुसार लेना-देना ठीक कर दिया जाये। इस प्रकार प्रतिज्ञाकी भावना कायम रखी गई। और कुछ भी हुआ हो परन्तु श्री प्रैट जैसा कहते हैं, मजदूरोने जानबूझकर प्रतिज्ञा कदापि नही तोडी। प्रैट साहबको यदि यह मानना ही हो कि मजदूरोंने प्रतिज्ञा तोडी, तो वे इसे मान सकते है। इसके लिए वे स्वतन्त्र है। परन्तु मान्यता तो मजदूरोकी ही ठीक है। इस तथ्यको श्री प्रैट उलटे रूपमें पेश करते है। जब समझौतेकी शर्तें मजदूरोको समझाई गईं, तब श्री प्रैट मौजूद थे। प्रतिज्ञाका पालन किस तरह किया गया, यह समझाया गया और मजदूरोने समझौतेका स्वागत भी किया। इन सब बातोके प्रैट महोदय साक्षी थे। उन्होंने इस समझौतेके बारेमे यह भाषण दिया था.

> आप लोगोके बीच समझौता हो रहा है, इससे मुझे बहुत प्रसन्नता है। मुझे पूरा विश्वास है कि जबतक आप श्री गाधीकी सलाह लेंगे और उनका कहना मानेंगे, तबतक आपका सुधार होगा और आपको न्याय मिलेगा। आपको याद रखना चाहिए कि आपके लिए श्री गाधी और उनके सहायक स्त्री-पुरुषोने बहुत परिश्रम किया है, कष्ट सहे है और आपके प्रति प्रेम दिखाया है।

इतनेपर भी वे प्रतिज्ञा-भगकी बात करते है। उनकी यह बात मेरी तुच्छ बुद्धि समझ नही पाती।

कमिश्नर साहबने तो बहुत धमकियाँ दी है। उन्होने यह भी कहा है कि वे इन धमकियोको सच साबित करेंगे। इसके लिए वे प्रतिज्ञा करनेवालोकी सारी जमीन जब्त करेंगे और उनके वारिसोको भी खेड़ा जिलेमे जमीनके मालिक बननेके अधिकारसे वचित कर देंगे।

उनका यह कथन भयकर, क्रूरतापूर्ण और कठोर है। मेरी समझमे तीव्रतम रोषके वशीभूत होकर वे ऐसा कह रहे हैं। जब कमिश्नर साहबका रोष शान्त होगा, तब ऐसे घोर कथनके लिए उन्हे पश्चात्ताप होगा। सरकार और जनताके बीचके सम्बन्धोको

उन्होंने 'माता-पिता और बच्चों' के बीचके सम्बन्धों-जैसा माना है। किसी माता-पिताने अपने लड़केको सविनय विरोध करनेपर पद-भ्रष्ट किया हो, ऐसा उदाहरण सारी दुनिया-के इतिहासमें नहीं पाया जाता। खेड़ाके लोगोंकी प्रतिज्ञाका भूलभरा होना असम्भव नहीं है। परन्तु इस प्रतिज्ञामें अविनय, उद्धतता या उदण्डताका लेशमात्र भी नहीं है। ऐसी धार्मिक भावनासे उन्नतिके लिए ली गई प्रतिज्ञाका उपर्युक्त घोर दण्ड दिया जाये, यह मुझे असम्भव लगता है। भारत ऐसे दण्डको सहन नहीं कर सकता और ब्रिटिश अधिकारी कभी उसका समर्थन नहीं कर सकते। ब्रिटिश जनताको ऐसी सजासे अवश्य ही दुःख होगा। अगर ऐसा घोर अन्याय ब्रिटिश राज्यमें हो तो ऐसे राज्यमें मैं विद्रोहीकी हैसियतसे ही रह सकता हूँ। परन्तु ब्रिटिश शासन-नीतिमें कमिश्नर साहबकी अपेक्षा मेरा विश्वास अधिक है। अब भी मैंने जो बात आपसे पहले कही थी उसे फिर दुहराता हूँ कि शुद्ध भावसे किये गये कामके लिए तुम्हें अपनी जमीन खोनी पड़े, मैं इसे असम्भव मानता हूँ। फिर भी हमारी तैयारी जमीन खोनेकी भी होनी चाहिए। हम एक ओर अपनी प्रतिज्ञा और दूसरी ओर अपना सर्वस्व रखें। उस समस्त स्थावर और जंगम सम्पत्तिकी कीमत प्रतिज्ञाके मुकाबलेमें कुछ भी नहीं है। आपकी प्रतिज्ञाके पालनकी विरासत लाखों रुपयेकी जायदादसे कहीं ज्यादा कीमती है। उसमें समस्त भारतको ऊँचा उठानेका रास्ता छिपा है। मुझे विश्वास है कि आप इस रास्तेको कभी नहीं छोड़ेंगे। ईश्वर इस प्रतिज्ञाके पालन करनेका आपको बल दे, यही मेरी कामना है।

[गुजरातीसे]

महादेवभाईनी डायरी, खण्ड ४

२३६. स्वयंसेवकोंको निर्देश

सत्याग्रह शिविर
नडियाद
अप्रैल १७, १९१८

१. स्वयंसेवकोंको याद रखना चाहिए कि चूँकि यह लड़ाई सत्याग्रहकी लड़ाई है, इसलिए उसमें सदा सत्यका प्रयोग ही करना चाहिए।

२. सत्याग्रहमें द्वेषके लिए स्थान नहीं है, इसलिए चौकीदारसे लेकर गवर्नर तक किसी भी कर्मचारी या अधिकारीके लिए कठोर शब्दोंका व्यवहार न किया जाये और यदि कोई करे तो उसे रोकना स्वयंसेवकोंका धर्म है।

३. सत्याग्रहमें उद्धतता नहीं होती। इसलिए जो हमें शत्रु मानते हों उनके साथ भी पूर्ण नम्रताका बरताव करना सीखना चाहिए। उद्धततासे इस लड़ाईको हानि पहुँचती है और वह लम्बी होती है। प्रत्येक स्वयंसेवकको इस सम्बन्धमें भलीभाँति विचार कर लेना चाहिए और लोगोंको अधिकसे-अधिक उदाहरण दे-देकर बताना चाहिए कि हमें विनयसे कैसे लाभ होता है और उद्धततासे कैसे हानि होती है।

४ स्वयसेवकोको यह ध्यानमें रखना चाहिए कि यह धर्मयुद्ध है। युद्ध न करनेसे धर्मको हानि पहुँचती थी, इसीलिए हमने यह आरम्भ किया है। अत धर्म-पालनके निमित्त जिन-जिन नियमोंका पालन करना आवश्यक है उन समस्त नियमोका पालन किया जाना चाहिए।

५ हम उस शासनका विरोध कर रहे हैं; जो सत्ताके मदसे अन्धा हो गया है; किन्तु हम दूसरी किसी सत्ताका विरोध नही कर रहे है। यह बात याद रखना जरूरी है। इसलिए अन्य कार्योमें अधिकारियोकी सहायता करना हमारा कर्त्तव्य है।

६. पारिवारिक कलहमें हम जिस न्याय-सिद्धान्तको लागू करते हैं, यहाँ हमें उसीकी आजमाइश करनी है। सरकार और लोगोके मिलनेसे एक महान् कुटुम्ब बनता है, यह मानकर हमे अपने व्यवहारको उचित रूप देना चाहिए।

७. जिनके विचार हमारे विचारोसे नही मिलते उनका न तो बहिष्कार किया जाना चाहिए और न तिरस्कार। किन्तु हमें उनको आदर-भावसे जीतनेका सकल्प करना चाहिए।

८. हमें चालाकीसे एक भी काम नही करना है। हमे सदा स्पष्टता और सरलता-का ही व्यवहार करना चाहिए।

९. स्वयंसेवकोंको गाँवोमें रहते हुए लोगोसे अपना काम कमसे-कम लेना चाहिए। जहाँ पैदल जा सके वहाँ सवारीका उपयोग न किया जाये। भोजन अत्यन्त सादा रखनेका आग्रह किया जाये। पूडी-पकवानोका उपयोग करनेसे इनकार करनेमें सेवाकी शोभा होती है।

१०. स्वयंसेवक गाँवोमें घूमते हुए लोगोंकी आर्थिक दशा, शिक्षा-सम्बन्धी कमी और अन्य बातोंका अवलोकन करे और अपने खाली वक्तमे उन कमियोकी पूर्तिका प्रयत्न करे।

११ गाँवोमें बच्चोको पढानेका अवसर प्राप्त किया जा सके तो उसको प्राप्त किया जाये।

१२. गाँवोमें स्वास्थ्यके नियमोका भंग होता हो तो उसकी ओर लोगोका ध्यान खीचा जाये।

१३. यदि लोग एक-दूसरेसे झगड़ा-फसाद करते हों तो उससे उनको मुक्त करनेका प्रयत्न किया जाये।

१४. लोगोको फुरसतके वक्त सत्याग्रह-सम्बन्धी पुस्तकें पढकर सुनाई जायें। प्रह्लाद, हरिश्चन्द्र और अन्य पुरुषोके आख्यान पढकर सुनायें जाये। पाश्चात्य देशोके और इस्लामके ग्रन्थोंमें शुद्ध सत्याग्रहके उदाहरण मिलते हैं, उन सबसे लोगोको परिचित कराया जाये।

१५ सत्याग्रहमें किसी भी अवसरपर और किन्ही भी स्थितियोमे शस्त्र-प्रयोग-का अवकाश नही होता। इस लडाईमे ऊँचीसे-ऊँची अहिसाका पालन किया जाना है यह बात कभी भुलानी न चाहिए। ज्ञानपूर्वक दु:ख उठाकर दु:खोका निवारण कराना ही सत्याग्रह है। इसमें किसीको दु:ख देनेकी बात आती ही नही। सत्याग्रहमे सदा जीत

ही होती है, हार कभी नही होती यह वात स्वय समझकर लोगोको समझानी चाहिए।

मोहनदास करमचन्द गाधी

[गुजरातीसे]
खेड़ा सत्याग्रह

२३७. पत्र : ए० एच० वेस्टको

नडियाद
अप्रैल १७, [१९१८]

प्रिय वेस्ट,

मै यह पत्र एक छोटे-से गाँवसे लिख रहा हूँ। यहाँ मै श्रीमती गाधी तथा अन्य लोगोके साथ सत्याग्रहका प्रचार करने आया हूँ। साथमें यह कतरन[1] है। सघर्ष महान् है, किया जाने लायक है, किन्तु इससे मेरा भार अत्यधिक वढ गया है।

मै तुम्हारे पिछले पत्रकी ज्यादा विस्तारसे चर्चा नही करूँगा, केवल इतना ही कहूँगा कि "तुम जो चाहो, करो। फीनिक्स और उसके सारे अर्थ-उद्देश्य जितने मेरे हैं, उतने ही तुम्हारे भी हैं। तुम मौकेपर मौजूद हो। अत तुम्हे जो सवसे अच्छा लगे, अवश्य करो। मै तो केवल सलाह ही दे सकता हूँ।" तुम ठीक कहते हो, अवश्य ही देशी भाषा-विषयक मेरे विचारोका असर मेरे 'इडियन ओपिनियन' सम्वन्धी दृष्टिकोणपर पडा होगा। नि सन्देह मै चाहता हूँ कि यह अग्रेजीमें निकले, किन्तु मुझे लगता है कि यदि यह अग्रेजीमें न निकल सके तो इसे गुजरातीमें तो अवश्य ही निकालना चाहिए। शायद तुम यह चाहते होगे कि मै इसका उलटा कहूँ तो अच्छा हो। मेरे लिए इतना जान लेना काफी है कि तुम मौके-पर मौजूद हो। तुम्हारे प्रति मेरा स्नेह और विश्वास अक्षुण्ण वना हुआ है। जॉवर्ट पार्कमें तथा अन्यत्र भी हमारे वीच जो हार्दिकतापूर्ण वातें हुई थी, उनमें से और भी वहुत सारी वातें याद आ रही हैं। उस समय भी यह सवाल उठा था कि 'इडियन ओपिनियन' को कमसे-कम अग्रेजीमें तो अवश्य ही प्रकाशित किया जाये। जव मणिलालके पत्रके साथ नत्थी हुआ तुम्हारा पत्र मिला तव मै जरा भी उत्तेजित नही हुआ। मै जानता था कि तुम शान्त रहोगे और सारी स्थितिको निर्लिप्त भावसे ग्रहण करोगे। मै तुम्हारे नये तथा साहसिक प्रयोगोकी पूर्तिको रुचिके साथ देखता रहूँगा। दादीमाँ और श्रीमती वेस्टको मेरा स्नेह कहना। पता नही, सैमपर इन सव चीजोका क्या असर पडा है। उसे पत्र लिखनेको कहना।

सस्नेह,

आपका,
मो० क० गांधी

गाधीजीके स्वाक्षरोमें मूल अग्रेजी पत्र (सी० डब्ल्यू० ४४२९) की फोटो-नकलसे।
सौजन्य : ए० एच० वेस्ट।

१. उपलब्ध नहीं है।

२३८. भाषण : दंतेलीमें

अप्रैल १७, १९१८

हम सरकारसे न्याय प्राप्त करनेके लिए यह लड़ाई लड़ रहे हैं। यहाँ आते समय मैंने लोगोको हलोमें या गाड़ियोमें जुते हुए बैलोको हाँकनेके लिए पिरानीका[1] प्रयोग करते देखा। पशुओके प्रति यह क्रूरता अक्षम्य है। हम गायोके रक्षक होनेका दावा करते हैं। गोरक्षाके निमित्त हम मुसलमानोसे बड़े-बड़े दंगे कर डालते हैं। फिर भी हम बैलोको आर लगी पिरानीसे मारनेमें नही हिचकिचाते। ऐसे पापोके कारण ही हमें दुःख सहने पड़ते हैं। मुझे आशा है कि आर लगी पिरानीका प्रयोग बन्द कर दिया जायेगा। मैं जब पेटलाद स्टेशनसे बैलगाडीमें बैठकर आ रहा था और बैलोको आरसे कष्ट पाते हुए देखकर मेरे मनमें यह विचार आया कि यदि मैं जूते पहननेमें कोई पाप मानता हूँ तो उससे अधिक पाप जूते पहनकर बैलगाड़ीमें बैठनेमें है। मैं आज यहाँ दयाकी बात करनेके लिए नही आया हूँ, बल्कि न्यायकी बात करनेके लिए आया हूँ। मेरी मान्यता ऐसी है कि जब हम अपने लिए न्याय माँगते है तो हमें दूसरोंको भी न्याय देना चाहिए; इसीलिए मैंने यहाँ इतनी बातें कही हैं। सरकारी लगान देना कोई बहुत मुश्किल बात नही है। हम किसीसे उधार लेकर, या भैंसें या जमीन बेचकर लगान दे सकते हैं। तब हम लगान न देकर चीजें जब्त होने देनेमें या जमीनें जब्त होने देनेकी उपाधि क्यो मोल लें? ऐसा कुछ बुद्धिमान लोग हमें कहते हैं। मैं इसका उत्तर कई जगह दे चुका हूँ। यह प्रश्न लगान देनेका नही बल्कि सिद्धान्तका है। हम सरकारके भयसे लगान देते हैं, हम इस भयको ही निकालना चाहते हैं। कमिश्नरने सभामें जो-कुछ कहा उसका तात्पर्य इतना ही था कि लोग सरकारका विरोध नही कर सकते। इसके विपरीत मैं आपके मनमें यह तत्त्व बिठाना चाहता हूँ कि सरकारकी अन्यायपूर्ण आज्ञाका विरोध करना अराजभक्ति नही है, बल्कि शुद्ध राजभक्ति है। सरकारकी आज्ञाको अविरोध चुपचाप मान लेना कमजोरीकी निशानी है, निरी भीरुता है। हमारे पारिवारिक व्यवहारमें, माँ-बाप अन्याय करें तो बेटे और बेटीको उसका विरोध करनेका अधिकार है। जो नियम परिवारपर लागू होता है, उसीको हम सरकार और लोगोके बीचके सम्बन्धोपर लागू करना चाहते हैं। हम सरकारका विरोध करके उसे मारना नही चाहते, उससे अनुचित रूपसे कोई चीज नही लेना चाहते। हमें तो कष्ट सहकर न्याय प्राप्त करना है। हम अबतक भय और कायरतापूर्वक कष्ट सहते थे, अब हमें वही कष्ट ज्ञानपूर्वक सहना है। सरकारको हमारी परीक्षा करनेका अधिकार है। आप सब भाई और बहन सरकारके साथ खेल खेल रहे हैं; किन्तु सरकार जब जमीनें जब्त करेगी तब आपमें से कितने टिकेंगे, यह देखना है। सरकार सभी बड़े कदम उठायेगी, यदि फिर भी आप नही गिरेंगे तो वह यह देखकर सहज ही झुक जायेगी ...।[2] जब लोग सरकारसे एक स्वरमें कहेंगे कि वे उसकी अन्यायपूर्ण आज्ञा कभी न मानेंगे

१. बाँसका डंडा जिसमें नुकीली लोहेकी अनी या आर लगी होती है।

२. यहाँ मूलमें कुछ छूटा हुआ है।

तो वह अवश्य ही झुकेगी, ऐसा सदासे होता आया है। हमे अपनी सरकारके प्रति वफादार रहना चाहिए। यह हमारा कर्त्तव्य है। ऐसे वफादार लोगोको अंग्रेज सरकारसे न्याय प्राप्त करनेमें क्या कठिनाई हो सकती है? इसलिए मैं आप सबसे कहता हूँ कि आप सब अन्त तक पक्के रहे और हिम्मत न हारे।

यह वाछनीय है कि आप लोग सत्याग्रहका मर्म भलीभाँति समझ लें। आजसे चार दिन पूर्व मैं बम्बईमें श्री कारमाइकैलसे मिला था। ये बम्बई सरकारके माल-विभागके प्रधान अधिकारी है। उन्होंने बातचीतमें मुझसे पूछा कि इस लड़ाईसे अन्तमें लोगोकी नैतिकतामें वृद्धि होगी या कमी होगी, वे सत्ताके प्रति विनयशील होगे या उद्धत। मैंने उनसे कहा कि उनकी नैतिकता और राजभक्तिमे कमी होनेकी कोई आशका नही है। सत्याग्रहकी लडाईमें नैतिकता और शिष्टता अवश्य ही बढती है। यदि सत्याग्रहसे हमारी अधोगति हो तो उसे सत्याग्रह नही कहना चाहिए, बल्कि दुराग्रह कहना चाहिए। हमारी फसल ज्यादातर स्थानोमें चार आनेसे भी कम हुई है और कुछ गाँवोमे छ आनेसे कम हुई है। इसलिए लगानके कानूनके मुताबिक आधा लगान मुल्तवी किया जाना चाहिए। हमारी यही माँग है और वह उचित है, इसीलिए हमने सरकारसे यह प्रार्थना की है। सरकारने फसलके बारेमे हमारा यह अन्दाज ठीक नही माना। हमने उससे जाँच करनेके लिए जाँच समितिकी नियुक्तिकी माँग की। हमने सरकारको आश्वासन दिया कि यदि अधिकारियोका अन्दाज ठीक सिद्ध हो तो वे उसे स्वीकार कर लेंगे। किन्तु सरकारने फिर भी जाँच-समिति नियुक्त नही की। इन स्थितियोमें हम सरकारी लगान नहीं देंगे। यदि हम इस लडाईके द्वारा सरकारसे अपनी माँगें न मनवा सकें तो हम फिर कभी उसके सामने अपना सिर ऊँचा न उठा सकेंगे। मै देखता हूँ कि आपके दुमजिले मकान टूट-फूट रहे हैं। इसका कारण यह है कि आपके पास इनकी मरम्मतके लायक पैसा नही है। मै इससे यह कल्पना कर सकता हूँ कि लोग कगाल हो गये हैं। दुष्काल तो हमारे भाग्यमें ही लिखे हैं। अन्न और कपडेकी महँगाई बेहद है। रोग इतने बढ गये हैं कि लोग लड़ाई न होनेपर भी अकालही कालके ग्रास हो रहे हैं। इस स्थितिमें मैंने खेड़ा जिलेके लोगोको, जो आत्म-सम्मानका मूल्य जानते हैं, अन्याय और अत्याचारके कष्ट सहन करके न्याय प्राप्त करनेकी सलाह दी है। हम उद्धत होकर नही, वीर बनकर यह न्याय प्राप्त कर सकते हैं। हमारी लडाई ऐसी सीधी है कि उससे हमारा नीतिबल बढेगा ही। इसलिए मैं आपसे आग्रहपूर्वक कहता हूँ कि आप सत्यका त्याग कदापि न करे। जिसे सत्यकी झलक मिल गई है, वह अपने प्रत्येक कदममें सत्य और नीतिपर ही चलेगा। आप अपने-अपने जीवनमें शिष्टता और सत्यका समावेश करे। आप इस महान् सकटके समय एक होकर सरकारसे जूझें। आप लोगोके लिए उन्नति करनेका यह उत्तम अवसर है।

मैं समस्त भाइयोसे आग्रहपूर्वक कहता हूँ कि आप सब दृढ रहें। मै बहनोसे कहता हूँ कि आप अपने पतियों, भाइयो और पुत्रोको हिम्मत बँधायें।

[गुजरातीसे]

खेड़ा सत्याग्रह

२३९. भाषण: चिखोदरामें

अप्रैल १७, १९१८

पिछले सप्ताह में आप लोगोसे मिलनेकी आशा करता था; किन्तु मैं कमिश्नरसे मिलने अहमदाबाद चला गया और फिर उनके बड़े अधिकारी श्री कारमाइकेलसे मिलनेके लिए बम्बई जाना पड़ा। इसलिए मै अपनी आशाके अनुसार जल्दी नही आ सका। चिखोदरा और आसपासके दूसरे गाँवोमे, जिनमें दयानन्द सरस्वतीका शासन चलता है, मैं और वल्लभभाई आप लोगोको प्रोत्साहन देने नही, बल्कि आप लोगोसे प्रोत्साहन पानेके लिए यहाँ आये है; दूसरे शब्दोमे कहूँ तो आप लोगोमें अग्नि प्रज्वलित करनेके लिए नही, बल्कि दिव्य प्रकाश पानेके लिए आये है। मुझे विश्वास है कि आप इस लडाईमे अन्त तक टिके रहकर मेरी इस मान्यताको सत्य सिद्ध करेगे।

भारतमे भूतकालमे जितने महान् आध्यात्मिक गुरु उत्पन्न हुए है, उनमे दयानन्द सरस्वतीका भी स्थान है। मुझे आशा है कि ऐसे महान् सद्गुरुका अनुयायी होनेसे इस गाँवमें और आसपासके अन्य गाँवोमे वेदोका शुद्ध पाठ गूंज रहा होगा और लोगोका आचरण वेदानुकूल होगा।

इसके अतिरिक्त मुझे आशा है कि इस गाँवमे और आसपासके गाँवोमे यमो और नियमोका पालन किया जाता होगा और उसके साथ शुद्ध स्वदेशी व्रत भी पाला जाता होगा। मुझे यह जानकर बहुत दु:ख हुआ है कि चिखोदरा गाँवके लोग अपने गाँवका बुना हुआ कपडा नही पहनते, मिलोका कपडा पहनते है। मै आपमें से बहुतोके कपडे देखकर चकित होता हूँ। मै देखता हूँ कि उनकी पोशाक मिलोके कपड़ेसे बनी है, फिर चाहे वे मिले देशी हो या विदेशी। मिलोके बने कपड़ेमे पचहत्तर फीसदी विदेशी है, ऐसा मै मानता हूँ। जिन मशीनोसे यह कपडा बुना जाता है वे विदेशी है, और इसका पूरा लाभ दूसरे देशोके मजदूरोको मिलता है। जो लोग मिलोका कपडा पहनते हैं उन्हे इतना सन्तोष हो सकता है कि इसको बनानेकी मजदूरी तो हमारे मिलके मजदूरोके पास जाती है। किन्तु ये मजदूर अपनी खेती-बारी छोडकर मिलोमे काम करने आये है, इस बातको कम लोग ही सोचते है। इसलिए मेरी सलाह है कि इस गाँवमे और इसके आसपासके अन्य गाँवोमे, जहाँ दयानन्द सरस्वतीका शासन चलता है, रहनेवाले लोग अपने गाँवमे बना कपड़ा पहनकर अपरिग्रह और अहिंसाके व्रतोका पालन करे, स्वदेशी व्रतके पालनमें इन दोनो व्रतोका पालन आ जाता है। स्वदेशी व्रतके पालनमें सत्याग्रहका मूलमन्त्र निहित है। उसका सक्षिप्त दिग्दर्शन करानेके बाद मै प्रस्तुत विषयपर आता हूँ।

सरकारके अन्यायके विरुद्ध सत्याग्रहका आश्रय लेनेमें सत्य और अहिंसाका पालन करना बहुत जरूरी है। सरकार कानून है कि जहाँ फसल छ आनेसे कम हुई हो

वहाँ सरकारको आधा लगान मुलतवी करना ही चाहिए। सरकार इस कानूनपर अमल करनेसे इनकार करती है और ऐसी कडी बातें कहती है "इससे आपको कोई लाभ न होगा, बल्कि आपकी हानि ही होगी। लोग मालगुजारी कानूनके सम्बन्धमें कुछ नही कह सकते।" सरकारका दावा है कि हम इस मामलेको न्यायालय या उच्च न्यायालयमें नही ले जा सकते। लोग कायदेके मुताबिक कलक्टरको प्रार्थनापत्र दें, यदि वह न माने तो कमिश्नरसे अपील करे और यदि कमिश्नर भी न माने तो वे गवर्नरके पास तक जा सकते हैं। किन्तु इस मामलेमें तो कमिश्नरने लोगोको धमकियाँ देनेमे कोई कसर बाकी नही रखी है। इतना ही नही, बल्कि उन्होने गवर्नरका यह पत्र भी मँगा लिया है कि वे स्वय जो-कुछ करेंगे उसको गवर्नर ज्योका-त्यो कायम रखेंगे। वे इस हद तक आगे जा चुके हैं। मैंने किसी हाकिमके हाथमें इतना निरकुश अधिकार नही देखा है और न सुना है। हमारे राजा कई बार अन्याय करके लोगोका सर्वस्व अपहृत कर लेते थे, किन्तु अग्रेजोके राज्यमें ऐसा किया जा सकता है, मुझे इसपर विश्वास नही होता। हमने कानूनकी मर्यादामे रहते हुए लगान न देनेका निश्चय किया है, इसमें सरकारके प्रति कोई अराजभक्ति नही है। हम तो कानूनको सादर मान्य करते हैं और चाहते हैं कि सरकारी हाकिम भी उस कानूनको मानें। मै आपको सलाह देता हूँ कि तीस लाख तो क्या तीस करोडकी भी जमीन हो तो भी हमें उसे जब्त हो जाने देना चाहिए। हमारी यह लडाई सत्याग्रहकी लडाई है, इसलिए हमें इसे शुद्ध आत्मबलसे लडना चाहिए। इसका सार यही है कि हमारे ऊपर जो दु ख आयें उनको हम सहन कर ले। इसमें पूरा अहिंसा-धर्म आ जाता है, और इसी कारण हमारा यह युद्ध धर्मयुद्ध है। हम शासकोको आतकित करके नही, बल्कि उनकी न्याय-भावनाको जाग्रत करके जीतना चाहते हैं। ऐसा करनेसे हम राजद्रोही या अधर्मी नही ठहरते। हमारी लडाईकी नीव सत्यपर रखी गई है और हम दया, धर्म और नीतिके आधारपर सरकारसे न्यायकी आकाक्षा करते हैं। इस प्रकार हमारा कार्य पूर्णत शुद्ध है। मुझे चिखोदराके भाइयो और बहनोंपर विश्वास है कि वे सभी सत्याग्रहका सच्चा अर्थ समझकर उसे ग्रहण करेगे। दु खोंके निवारणकी रामबाण औषध सत्याग्रहके अतिरिक्त अन्य कोई नही है। यदि आप इसका उपयोग करेंगे तो आपको ज्ञात होगा कि हमारे वर्तमान दु खो और अन्य सभी दु खोके निवारणका सच्चा उपाय एक ही है। आपने जो लडाई आरम्भ की है उसमें आप अन्ततक टिके रहे। यदि आप ऐसा न करेंगे तो यही कहा जायेगा कि आपने धर्मका त्याग किया है। साथ ही भारतपर उसका प्रभाव बहुत बुरा होगा। इस लडाईसे हम खेडा जिलेकी सरकारको यह सूत्र समझायेंगे कि वह लोकमतकी अवहेलना करके शासन नही चला सकती। इस लडाईका सच्चा मर्म यही है। और इसे सार्थक करना आपके हाथमें है। आपने सत्यकी खातिर प्रतिज्ञा ली है। आप यदि रामायण पढेंगे तो समझेंगे कि प्रतिज्ञाका मूल्य बहुत-बडा है। अपनी प्रतिज्ञापर अटल रहनेवालेको मोक्ष मिल सकता है। चाहे जितने सकट आयें, आकाश-पाताल एक हो जाये, किन्तु आप अपनी प्रतिज्ञापर आरूढ रहे। मै बहनोसे इतना ही कहता हूँ कि चाहे आपके घरका सब साज-सामान चला जाये, आपके पशु चले जायें और जमीन चली

जाये तो भी आप निराश न हो और प्रतिज्ञाके पालनमें पुरुषोका साथ दे। ईश्वर आपको इस प्रतिज्ञाके पालनकी सुबुद्धि दे।

[गुजरातीसे]

खेड़ा सत्याग्रह

२४०. भाषण: रासमें[1]

अप्रैल १८, १९१८

मै और वल्लभभाई पिछले सप्ताह यहाँ आनेवाले थे; किन्तु मुझे बम्बई और अहमदाबाद जाना पडा अत आ नही सके। इसके लिए आपसे क्षमा-प्रार्थी हूँ।

आजकी सख्त धूपको देखते हुए मैंने सहज ही पूछ लिया कि सभाकी जगह कितनी दूर है। मुझे बताया गया कि पास ही है, अत मैंने पैदल चलकर ही आनेका निश्चय किया। किन्तु उन युवकोने ऐसी व्यवस्था की कि मुझे धूप न लगे। निश्चय ही, यह मेरे प्रति आप भाइयोके प्रेमका सूचक है। उनके इस सद्व्यवहारसे यह भी सार निकलता है कि मैंने आपको जो सलाह दी है वह आप सबको अच्छी लगी है। परन्तु आप जानते है कि मेरी इस सलाहसे न तो आप सुखकी नीद सो सकेंगे और न मै ही। उसी प्रकार मेरे साथी कार्यकर्त्ता भी आरामसे नही बैठ सकते। इसके कारण उन्हे दुख उठाना है, रातोमें जागरण करना है और गाँव-गाँव भटकना है। यदि आपकी भैंसें कुर्क की जायें तो उन्हें आप कुर्क हो जाने दें, यदि आपके गहने जाते हो तो जाने दें और जमीनें जब्त की जाती हो तो उन्हे जब्त हो जाने दे। मेरी सलाह अच्छी है, इसीलिए आप उसे मानते है और इसी कारण आप मेरे ऊपर इतनी स्नेह-वर्षा करते है। मुझे इससे अपने मनमे बड़ी प्रसन्नता होती है। किन्तु इनके साथ-साथ मेरे ऊपर कितना दायित्व आता है और वह लडाई जमनेके साथ-साथ कितना बढता जाता है, मुझे इसकी पूरी कल्पना है। यह प्रश्न अत्यन्त जटिल और गम्भीर है। किन्तु फिर भी मुझे अपने अन्तरकी गहराईमे भी ऐसा नही लगता कि मुझे यह आन्दोलन वापस ले लेना चाहिए। ज्यो-ज्यो दिन बीतते जाते है और इस लडाईका सच्चा रूप निखरता आता है, त्यो-त्यो मुझे लगता है कि यदि मैंने खेडा जिलेके लोगोको यह सलाह न दी होती तो मै जनताके प्रति नमकहराम माना जाता और मै गुजरातमे शान्तिपूर्वक बैठकर समाज और देशकी शुद्ध भावसे जो सेवा कर रहा हूँ, उसमे कोई त्रुटि है, ऐसा मुझे निरन्तर लगता रहता। इस अवसर पर मैंने आप सब बहनो और भाइयोको जो सलाह दी है उससे आपका नैतिक स्तर ऊँचा होगा और उनकी उन्नति भी होगी एव देश-भरमें खेडाके लोगोका डंका बज जायेगा।

1. गाधीजी और उनके साथी बोरसद ताल्लुकेके रास गाँवमें गये थे। वहाँ जो सभा हुई उसमें आसपासके गावोंके किसान बड़ी सख्यामें आये थे।

यदि दूसरी दृष्टिसे देखें तो सरकारकी वर्तमान नीति ऐसी है कि वह न लोगोकी बात पूछती है और न उनके मतका आदर ही करती है। धारासभाओ, नगरपालिकाओ और अन्य सार्वजनिक सस्थाओमें उसके व्यवहारका हमारा अनुभव यही है। क्योकि उनके पीछे लोकमतका वल तो होता नही।[1] हम जब सिपाही जैसे छोटे कर्मचारीको देखकर डर जाते है और चौकीदार आता दिखाई दे तो तुरन्त भाग जाते है तब वडे हाकिमोसे तो आँखें मिला ही कैसे सकते है। हम उनके सम्मुख एक शब्द भी नही वोल सकते। यह स्थिति पशुओंसे भी हीन है। पशु भी मारनेपर अड जाता है और हमारी इच्छाके वश नही होता। उनकी तुलनामें हमारी स्थिति कैसी है, इसपर विचार तो करे। इसलिए यदि हम अपनी मनुष्यता सिद्ध करना चाहते है तो हमें भय त्याग देना चाहिए। यदि हम ऐसा करेंगे तो इस लडाईमें विजयी होगे। किसानोने नडियादकी सभामें श्री प्रैटको साहसपूर्वक उत्तर दिया। इसी प्रकार गवर्नरको भी हम अपनी स्थिति वता सके, इतना साहस हममें आना चाहिए। हमें उद्धततासे नही लडना है, हमें तो अपना आत्मवल खर्च करके लडना है, दु ख सहन करके जीतना है। यह एक सनातन दिव्य नियम है। हमारे धर्मशास्त्रोमें वताया गया है कि सुख भोगनेके लिए दु ख भोगने ही पडते है, तपस्या करनी ही पड़ती है। राजा दशरथको राम, लक्ष्मण, भरत और शत्रुघ्न जैसे पुत्र प्राप्त करनेके लिए तपस्या करनी पडी थी। राजा नलने भी सत्य और आत्मसम्मानकी खातिर तपस्या की और असंख्य कष्ट सहे। इमी कारण हम प्रात स्मरणीय पुण्यात्मा पुरुषोका नाम जपते है। ये देवकथाएँ हमें अपने पूर्वजोसे मिली है . ।[2] हम दु ख सहन करके सत्य और अहिंसाके मार्गसे अपने दु खोकी निवृत्तिका प्रयत्न कर रहे है .[3] अव खेडा जिलेके लोगोने ससारके सम्मुख इस सिद्धान्तके प्रतिपादनका वीडा उठाया है . . .।[4] हमारी फसले चार आनेसे कम हुई है। इसलिए मालगुजारी कानूनके अनुसार सरकारको इस साल लगान मुलतवी कर देना चाहिए। श्री प्रैटका कहना है कि हमारे आँकडे गलत है और वे लगान वसूल करना चाहते है। हम कहते है कि हमारी वात सौ फीसदी ठीक है और सरकारके आँकडे गलत है। इसलिए सरकारको लगान मुलतवी करना चाहिए। इस प्रकार इस लडाईमें एक साधारण-सा स्वार्थ [अवश्य] निहित है। किन्तु इसमें इससे भी अधिक महत्त्वपूर्ण एक यह मुद्दा समाविष्ट है कि सरकारको लोकमतका आदर करना सीखना चाहिए। इस लडाईसे लगान माफ होगा और प्रजावलका मान भी होगा, यह कोई साधारण वात नही है। अत हमें दु ख सहन करके अपनी टेक रखनी चाहिए। हमने विना विचारे प्रतिज्ञा नही ली है। पूर्णत विचार करनेके वाद ही हमें यह वीडा उठाना चाहिए। जो प्रतिज्ञा शुद्ध हेतुसे लोकसग्रहके निमित्त ली जाती है, वह चाहे सूर्य पूर्वके वजाय पश्चिममें उदित हो तव भी टूट नही सकती है। मेरी प्रार्थना है

१. तारीख २२-४-१९१८ के बॉम्बे क्रॉनिकल और २४-४-१९१८ के न्यू इंडियामें छपे विवरणोंमें ऐसी ही वात कही गई है। उनमें यह वाक्य भी है: "और इनके साथ मतभेदकी गुजाइश नहीं है।"

२, ३ व ४. मूलमें ये स्थान रिक्त है।

कि आप इस प्रतिज्ञापर कायम रहे। यह मेरी विनम्र सलाह है। इस प्रतिज्ञासे आत्म-शुद्धि होगी और समस्त दु खोंका निवारण हो जायेगा।

[गुजरातीसे]

खेड़ा सत्याग्रह

२४१. पत्र : तमिल भाइयोंको[1]

[नडियाद]
अप्रैल १९, १९१८

[प्रिय मित्रो,]

इतनी अधिक सख्यामें आप लोगोके हस्ताक्षरोके साथ पत्र पाकर बडी प्रसन्नता हुई। जहाँतक हो सकेगा, जल्दी ही मैं आपके लिए शिक्षक भेजूँगा। मैं किसी ऐसे व्यक्तिकी तलाशमे हूँ, जो अपने हिन्दी-प्रेमसे प्रेरित होकर आपको हिन्दी सिखानेके लिए स्वेच्छासे आगे आये। इस महान् राष्ट्रीय प्रयत्नकी सफलता इसीपर निर्भर है कि खुद मद्रास प्रान्तमें लोग कितना काम करते हैं। मुझे दृढ़ विश्वास है कि तमिल भाई-बहन अवसरके अनुरूप ही शौर्य दिखायेंगे। हम हिन्दी भाषाको हिन्दुस्तानके एकसे दूसरे सिरेतक पर-स्पर व्यवहारकी आम भाषा बना दें, तो फिर राष्ट्र-सेवा करनेकी हमारी शक्ति कोई भी सीमा स्वीकार नही करेगी।

[आपका,]

[अंग्रेजीसे]

महादेव देसाईकी हस्तलिखित डायरीसे।
सौजन्य : नारायण देसाई

२४२. भाषण : कासरमें[2]

अप्रैल २०, १९१८

मैं यहाँ अधिक कहना नही चाहता। गाँवकी स्थिति कैसी है इस सम्बन्धमे मैंने जानकारी ले ली है। जहाँ गाँवके लोगोमे समता और दृढता होती है, वहाँ परिणाम तो अच्छा होता ही है। आपको चौथाईका नोटिस दिया गया है। आपकी भैंसे कुर्क कर ली गई हैं। आपके गहने भी जब्त कर लिये गये हैं। आपने यहाँतक तो सहन कर लिया। अब जमीनोकी जब्तीका प्रश्न आया है। आप यह बात निश्चित रूपसे

१. हिन्दी सीखनेके इच्छुक २३ वकीलों और स्नातकोंने गांधीजीसे एक अध्यापक भेजनेका अनुरोध किया था। यह पत्र उसीके उत्तरमें लिखा गया था

२. गांधीजी २० अप्रैलको कस्तूरबा, मनु सूबेदार, वल्लभभाई पटेल और अन्य लोगोंके साथ आनन्द ताल्लुकेमें कासर, अजरपुरा और समरखा गये थे और किसानोंकी सभाओंमे बोले थे

ध्यानमें रखें कि हमारी प्रतिष्ठा हमारी टेकपर निर्भर है और हमारी टेकपर हमारी जमीन निर्भर है। हमारी टेक जमीनपर निर्भर नही है। यदि आप सब सरकारसे जूझनेके लिए तैयार हों तो हम निश्चय ही सरकारको आपकी यह जमीन पचने न देंगे। नायकामें एक सौ अठत्तर बीघे जमीन जब्त की गई है, परन्तु केवल कागजपर लिख लेने-मात्रसे जमीन जब्त हो गई, यह मैं नही मानता। सरकार जमीनोके आसपास दीवार तो बना नहीं लेगी जिसमें हम घुस नही सकेंगे। और इस सत्याग्रहकी लडाईमें सरकार ऐसा कुछ नहीं कर सकती। इसलिए आप मजबूतीसे जमे रहें। इससे आपकी और भारतकी गौरव-वृद्धि होगी। यदि आप हार मान बैठेंगे तो उससे देशके किसानोको निराशा होगी। आप एक बात और याद रखें। जिन भाइयोंने सत्याग्रह अपनाया है वे दूसरोंपर जुल्म नहीं कर सकते। यह सनातन सत्य है और सूर्यकी किरणोकी तरह व्यापक है। जैसे हम सरकारसे यह कहते हैं कि वह हममें सत्ताकी आर नही चुभा सकती; उसी प्रकार आप गाँवकी सभी जातियोंसे शुद्ध न्यायका व्यवहार करें।

[गुजरातीसे]

खेड़ा सत्याग्रह

२४३. भाषण: अजरपुरामें

अप्रैल २०, १९१८

मैं इस गाँवमें एक बार पहले आ चुका हूँ। किन्तु आपके आग्रहके कारण हम सब यहाँ फिर आये हैं। यहाँके अध्यापकोंने लोगोंकी तहसीलदारसे हुई सुन्दर बातचीतका विवरण भेजा था और कुछ स्पष्टीकरण माँगा था। हम यहाँ इस कारणसे ही आये हैं।

सबसे पहले मैं आपसे तहसीलदार द्वारा दिये गये तर्कके सम्बन्धमें दो शब्द कहूँगा। उन्होंने कहा कि जब आपके बाप-दादोंने सरकारसे जमीन ली थी तब उन्होंने जो करार किया था आपको उसका पालन करना चाहिए। अब हमारे बाप-दादोंने सरकारसे क्या करार किया होगा, उसपर विचार करें।

तहसीलदारने जिस करारकी बात कही है वह हमारे बाप-दादोंने नही किया। सरकार अपने अनुकूल कानून बनाती है और हम अनुकूल न होनेपर भी उनको मंजूर करते हैं। उदाहरणार्थ लगानके कानूनको हम अनुकूल न होनेपर भी मानते हैं। पुराना नियम क्या था? पुराना नियम तो यह था कि सरकारको चौथाई दी जाती थी अर्थात् अपने खेतोंमें उपज हो तो सरकार चौथा भाग ले जाये और उपज न हुई हो तो कुछ भी न ले। यह है हमारी पुरानी पद्धति। वर्तमान सरकार मानती है कि उसने जो-जो नियम बनाये हैं वे लोगोंके लिए हितकर हैं। इस सरकारने अनाजका भाग लेनेके बजाय जमीनका लगान नकद रुपयेके रूपमें लेना आरम्भ किया। मैं नही मानता कि सरकारके इस नियमसे लोगोंका हित हुआ है। जमीनके लगानके कानूनका एक कायदा यह है कि

फसल चार आनेसे कम हुई हो तो लगान मुलतवी कर दिया जाये; किन्तु अधिकारी कहते हैं कि लगान मुलतवी करना सरकारकी मेहरबानी पर निर्भर है और सरकार चाहे तो ही यह मेहरबानी कर सकती है। यह स्पष्ट अन्याय है। राजसत्ता एक ही तरहसे चल सकती है और वह है लोकमतका सम्मान करके।

हमारी लडाई केवल लगान मुलतवी करानेके लिए नही है। ऐसी राहतके लिए की गई लड़ाई तो तुच्छ होती। परन्तु इस लडाईके पीछे जो महत्त्वपूर्ण मुद्दा है, हम उसके लिए लड रहे है। और यह मुद्दा है प्रजासत्ताक राज्यका। इससे प्रजासत्ताक राज्यका पुनरुद्धार होगा। लोग अब जाग्रत हो गये है और अपने अधिकारोको समझने लग गये है। इन अधिकारोको भलीभाँति समझना ही स्वराज्य है। इस लड़ाईके मूलमें जो तत्त्व है उन्हे सीचकर उगाना चाहिए ताकि इस बडकी शीतल छायाकी भाँति भावी सन्तानोको उनके मधुर फल मिले। यह लडाई इसी उद्देश्यकी सिद्धिके लिए है। सरकार चाहे तो हमपर हँस सकती है, किन्तु आपको समझ लेना चाहिए कि यह लडाई थोडेसे पैसोकी लड़ाई नही है, बल्कि इससे भावी प्रजासत्ताक राज्यतन्त्रकी इमारतकी नीव पडेगी।

यदि लोग कायर होकर अपने अधिकारोको छोड देंगे तो वे पतित हो जायेंगे। भारतीय लोगोके प्रति सहानुभूति रखनेवाले उनके प्रेमी मित्र सर विलियम वेडरबर्न जबतक जीवित रहे, यह कहते रहे कि भारतमें ज्यो-ज्यो ग्राम-पचायते नष्ट होती गईं, त्यों-त्यो लोगोके हाथसे स्वराज्यकी कुंजी निकलती गई। ग्राम-पंचायतोंका उद्धार पुस्तके लिखनेसे न होगा। यदि गाँवोके लोग यह समझ जायें कि वे अपने-अपने गाँवोकी व्यवस्था कैसे कर सकते है तभी यह कहा जा सकेगा कि स्वराज्यकी सच्ची कुजी मिल गई।

सत्याग्रहकी लडाई व्यापक है। हमारा जीवन सत्यपर टिका हुआ है। यदि जब्ती आये और कोई चीज न हो तो आप कह दे कि आपके पास कुछ नही है। यदि आपके यहाँ माल रखा हो और आपको देना न हो तो साफ कह दे कि आपके पास माल है, किन्तु आप उसे देना नही चाहते।

यदि आप सरकारी अधिकारियोको खाने-पीनेका सामान न देना चाहते हों तो आप उन्हें तुरन्त ना कह दें। परन्तु आप उन्हें यह तो कह नही सकते कि हमारे पास अन्न न होनेके कारण हम खाने-पीनेकी सामग्री नही दे सकते। सत्याग्रहीको समस्त अवसरो पर सत्य ही बोलना चाहिए। सत्याग्रहके सिद्धान्तोको पूरी तरह समझकर सत्यानुकूल और नीतिमय आचरण करना चाहिए। सत्य ही भगवान् है। आपके गहने या आपकी जमीन भले ही चली जाये, परन्तु आपका धर्म नही जाना चाहिए। मेरी प्रार्थना है कि ईश्वर आपको अपनी प्रतिज्ञाके पालनकी शक्ति दे। इस प्रकार धर्मकी पुनः स्थापनामें स्वराज्यकी कुजी निहित है।

[गुजरातीसे]

खेडा सत्याग्रह

२४४. भाषण : पालेजमें[१]

अप्रैल २२, १९१८

हमारी दैनिक जीवनचर्यामें दो कमजोरियाँ दिखाई देती हैं। एक, हमारे काम ऊपरी होते हैं और दूसरे, हम जो भी काम करते हैं समझकर नहीं करते। जैसे कोई अभिनेता नाटकमें अपने कण्ठस्थ किये गये अभिनयको दुहराता है वैसे ही हम भी कार्य करते हैं। फलत: उनका अपेक्षित परिणाम नहीं होता। जैसे हरिश्चन्द्र पात्रके अभिनेतामें सत्यकी सम्पूर्ण व्याप्ति नहीं होती, हमारे समाजका व्यवहार भी इसी प्रकार चल रहा है। यहाँ इन कन्याओंने वन्देमातरम् गीत गाकर यही सिद्ध किया है। हमें अपना कार्य अधूरे मनसे करनेकी आदत हो गई है, किन्तु हम जबतक अपना कार्य पूरे मनसे न करेंगे तबतक हमें सफलता न मिलेगी।

हमारे पूर्वजोंको इसका खयाल था, इसलिए वे मन्त्रोंके शुद्ध उच्चारणपर विशेष ध्यान देते थे। यदि उनमें कोई अशुद्धि हो जाती तो वे उसे पाप मानते थे। आपने वन्देमातरम् जैसा गौरवशाली गीत कन्याओंसे गवाया। हम उस गीतका गौरव, उसकी ध्वनि और लय नहीं जानते। इसी प्रकार इस लड़ाईमें हम अपना काम अधूरा ही करते हैं, ऐसा मुझे लगता है। किन्तु यदि हमारा काम अधूरा होगा और हमने उसे उचित प्रकारसे समझा न होगा तो इन कन्याओंके गीतकी तरह हमारी लड़ाई निष्फल रहेगी। मैं ऐसी कटु आलोचना इसलिए करता हूँ कि अपनी इस लड़ाईमें आप सभी लोग सावधान रहें।

दूसरी कहनेकी बात यह है कि हमें इस लड़ाईको भलीभाँति समझकर चलाना चाहिए। श्री प्रैटने एक बार मुझसे यह बात पूछी थी कि जो काम मैं कर रहा हूँ क्या उसे लोग भलीभाँति समझते हैं। यदि लोग मेरे कार्यको न समझेंगे तो उसका परिणाम बुरा हुए बिना न रहेगा। हमें इस पवित्र लड़ाईमें अपना काम कच्चा न रखना चाहिए। हम तो छोटे-छोटे कर्मचारियोंसे भी डरते हैं। ऐसा न होना चाहिए। मैं बार-बार कहता हूँ कि बड़े अधिकारियोंसे मिलना हो तब भी उसमें हमारे लिए चिन्ता करनेकी क्या बात है। केवल इतना ही ध्यानमें रखना चाहिए कि बातचीतमें, हमारी भाषामें मिठास हो। यदि मतभेद भी हो तो उसे भी अच्छे शब्दोंमें प्रकट किया जाये। यदि हम इन दोषोंको अपनी लड़ाईमें से निकाल सकेंगे तो हमारी हार अवश्य ही नहीं होगी। हमें सदा यह ध्यान रखना चाहिए कि हमारी इस लड़ाईमें बिना विचारे कोई भी कार्य न किया जाये। 'साँचको आँच नहीं होती', यह आपको पग-पगपर स्मरण रखना चाहिए।

श्री वल्लभभाईने मुझे यह खबर दी है कि तहसीलदारने इस गाँवमें चार दिन पड़ाव डाला था, किन्तु उसे सफलता नहीं मिली। किसान पूरी तरह मजबूत रहे।

१. यह भाषण बोरसद ताल्लुकेके पालेज गाँवमें गांधीजी और उनके साथियोंके जानेके अवसरपर दिया गया था। सभामें एक हजारसे अधिक किसानोंने भाग लिया था।

आपने इतना साहस दिखाया है, इसलिए मुझे आपसे कुछ कहना नही रहता। मैंने अभी-अभी आपसे कहा था कि मै दिल्ली जानेवाला हूँ। मै तो इस जिलेमे से निकलूँ ही नही, किन्तु इस लडाईके सम्बन्धमे ही मुझे दिल्ली जाना है। वाइसरायकी कार्यकारिणी परिषदकी बैठक होनेवाली है। इसमे इस बातपर विचार किया जायेगा कि यूरोपमे जो महायुद्ध चल रहा है, उसमें हम किस प्रकार सहायता दे सकते है। परिषद्‌मे कदाचित् इस बातपर चर्चा की जायेगी कि सैनिक भर्ती अनिवार्य रहे या न रहे। यह सलाह भी दी जायेगी कि सरकारके साथ झगड़ा बन्द कर दिया जाये। किन्तु यह झगडा हमने अपनी ओरसे तो खड़ा नही किया है; यह तो हमारे गले पड गया है। मै जिस बातको यहाँ कह रहा हूँ उसी बातको वहाँ भी कहूँगा। यह लडाई हमने अपनी ओरसे नही छेड़ी है; हमें लाचार होकर छेडनी पडी है। मै वाइसरायको यह बात कब कह सकता हूँ? जब आप मजबूत रहे और सच्चे सत्याग्रही बनें तभी।

हम हारेंगे तो नही। जमीने जब्त होना असम्भव है, क्योकि हमने अपराध तनिक भी नही किया है। जो मनुष्य सचाईके रास्तेपर चल रहा है उसे कौन रोक सकता है? यदि आपकी जमीनें जब्त भी कर ली जाये तो भी आप डरे नही, डिगे नही। हमने संकल्प कर लिया है कि हम इन जमीनोको वापस लेंगे। आपको तो भारतकी लाज रखनी है। अब यह लडाई हमारे सम्मान और हमारी टेककी लडाई बन गई है। यह खेडा जिलेके वीर लोगोकी जमीनो और प्रतिष्ठाको वापस लेनेके लिए लडी जा रही है। इस कारण हमें अपनी जीवनचर्या शुद्ध कर लेनी चाहिए। हमें अपने आपसी झगडोको खत्म कर देना चाहिए और विदेशी सरकारके अत्याचारका सामना करनेके लिए तैयार हो जाना चाहिए। हमें अपनी भीतरी और बाहरी व्यथाओकी चिकित्सा सत्याग्रहकी रामबाण औषधसे करनी चाहिए।

बहनो, मै आपसे यह कहता हूँ कि आप मर्दोको हिम्मत दे और प्राण जायें तो जाये किन्तु प्रतिज्ञा न जाये, सदा इस मन्त्रको याद रखे।

[गुजरातीसे]

खेड़ा सत्याग्रह

२४५. भाषण : सुणावमें

अप्रैल २२, १९१८

मैंने पालेज और सुणाव गाँवोमे एक भेद देखा है, मेरे मनमे उसके सम्बन्धमें कुछ कहनेकी इच्छा हो रही है। मैंने जब पालेजमें प्रवेश किया तब वहाँ बैंड नही था, परन्तु उसके स्थानमे झाँझ और पखावज थी। झाँझ और पखावजकी झंकार सुनकर मुझे अपने बचपनके दिनोकी याद आ गई। मुझे उनमे जो भक्तिकी भावना, मधुरता और कला दिखाई दी, वह बैंडमे नही दिखाई देती। बैंड विदेशी वस्तु है, झाँझ और पखावज देशी हैं। बैंड नकल है, नव्य है, झाँझ और पखावज पुरातन। बैंडकी ध्वनि अंग्रेज लोगोको चाहे अच्छी लगे, किन्तु मुझे तो वह अच्छी नही लगती। हमारे पूर्वजोने ऐसे वाद्य खोजे है जो हमारे देशके लिए उपयुक्त हैं और हमारे लिए भी वे ही उपयुक्त हैं।

हमारे यहाँ धार्मिक कृत्योंमें वादन और गायनको स्थान दिया गया है। हमारे देशी वाद्यके स्वरमें पतितोंको भी उठानेकी शक्ति है, बैंडमें वह शक्ति नहीं है। तब हमें झाँझ और पखावज जैसे सादे, सुन्दर और मीठे वाद्योंका त्याग क्यों करना चाहिए ?

बैंड और झाँझ-पखावजमें जितना भेद है उतना ही भेद हमारी वर्तमान और प्राचीन जीवन-पद्धतियोंमें है। यदि हमारी लड़ाई बैंड जैसी होगी तो वह टूट जायेगी। जैसे झाँझ-पखावजमें जुदा-जुदा तत्त्व हैं वैसे ही हमारी यह लड़ाई भी सुन्दर रहस्योंसे परिपूर्ण है।

यदि आप इन रहस्योंको ठीक-ठीक समझ लेंगे तो इनमें से अद्भुत परिणाम निकाल सकेंगे।

आपका इतना उत्साह देखनेके बावजूद मुझे यह भय है कि इस लड़ाईमें नाटक जैसा अभिनय हो रहा है। हम कहते हैं कि जमीन जब्त हो जाये तो कोई चिन्ता नहीं, किन्तु मुझे लगता है कि हमारे मनकी गहराईमें भय है। यदि यह बात ठीक है तो हम हारेंगे और उसका हानिकर प्रभाव समस्त देशपर होगा। इसलिए चाहता हूँ कि हम इस लड़ाईको सत्य और धर्मके आधारपर अपनी प्राचीन संस्कृतिके अनुरूप अडिग होकर लड़ें।

यह कहा जाता है कि गुजरात सो रहा है। कुछ लोग मुझसे पूछते हैं कि गुजरात इस तरह ऊँघ क्यों रहा है? किन्तु गुजरात कुम्भकर्णी निद्रा ले रहा है, यह आरोप मुझे अनुचित लगता है। ठीक मध्याह्न कालमें आप इतने भाई और बहन यहाँ इकट्ठे हुए हैं इसे देखकर यह कैसे कहा जा सकता है कि गुजरात सो रहा है? फिर भी, हमारी निद्रा निश्चय ही उड़ गई है या हम अभीतक यह जागरणका अभिनय ही कर रहे हैं, मैं आपसे यह प्रश्न पूछना चाहता हूँ। इसका उत्तर आपके अन्तरमें से एक ही निकलना चाहिए कि अब यह अभिनय नहीं है, बल्कि आप सच्चे मनसे इस लड़ाईमें सम्मिलित हो गये हैं। हमारी यह लड़ाई सत्यकी लड़ाई है, इसमें असत्य नहीं रह सकता। जब आप सरकारपर यह छाप डाल सकेंगे तब सरकार हमारी हो जायेगी। किन्तु यदि आप चालाकी अथवा दम्भ कर रहे होंगे तो सरकार नहीं झुकेगी। उदाहरणार्थ भावनगरके कुछ भाइयोंने उतावलीमें हड़ताल कर दी थी। उनको हड़तालका संचालन करना नहीं आया। उनमें कष्ट-सहनकी शक्ति नहीं थी। उन्होंने महाराजासे माफी माँग ली। मजदूरी कम मिलती है, यह तो सर्वविदित है किन्तु हड़ताल करनेपर भी उनकी मजदूरी नहीं बढ़ी। उन्होंने माफी माँगी। इस बातसे मेरे हृदयको आघात लगता है। यह समझमें नहीं आता कि उन्होंने माफी क्यों माँगी। कहा जा सकता है कि महाजनने भी बीचमें पड़कर इन लोगोंकी लाज बिगाड़ी। मैं चाहता हूँ कि हमारे यहाँ ऐसा अवसर न आये। हमने तो शुद्ध सचाईसे [राहतकी] प्रार्थना की है। क्योंकि फसल चार आनेसे कम हुई है। हमने सोच-विचारकर ही यह कहा है कि हमें सरकारी लगान नहीं देना है। यह हमने जाग्रत अवस्थामें ही कहा है। हम माफी कदापि न माँगेंगे। सरकार हमारी जमीनें ले ले, हमें जेलमें डाल दे, — ये समस्त कष्ट एक पलड़ेमें रखे जायें और सत्य, टेक और आत्म-सम्मान दूसरे पलड़ेमें रखे जायें तो कौन-सा पलड़ा झुकेगा? हमारा संकल्प है कि हम आत्म-सम्मानको नहीं त्यागेंगे, प्रतिज्ञा-भंग नहीं करेंगे। हमारी प्रतिज्ञाका

हेतु क्या है अपना अधिकार सिद्ध करना। दो सेनाएँ लड़ती है तो अन्तमें कभी उनमें से एक दूसरीको हर्जाना देती है। जो हर्जाना देती है वह पराजित मानी जाती है। हमारी सरकारसे प्रार्थना है कि वह इस तथ्यको स्वीकार कर ले। पचकी वाणी परमेश्वरकी वाणी है। लोकमत सर्वोपरि होता है। यह वाणी परमेश्वरकी है, यह बात हम जब सरकारसे स्वीकार करा ले तब हमारी विजय मानी जायेगी। किन्तु विजय कौन प्राप्त कर सकता है? अधिकारियोसे डरनेका कोई कारण नही है। उनसे किसी तरहका दुराव किये बिना बात करनी चाहिए। जैसे स्त्रियो और पुरुषोके बीचका झूठा दुराव दूर करनेकी आवश्यकता है वैसे ही सरकार और लोगोके बीचका दुराव दूर किया जाना चाहिए।

यह स्थिति पशुबलसे नही आ सकती; बल्कि आत्मबल या प्रेमबलसे आ सकती है। जो आत्मबलको पूजता है उसकी जीत होती है। हमारी लड़ाईमें पशुबलके लिए स्थान नही है। हमें तो आत्मबलसे जीतना है। सच्चा वीर वही है जो अपना सिर सदा अपनी हथेलीपर लिये रहता है। यह सच्चा क्षत्रियत्व है। और इसीको प्रकट करना हमारी लड़ाईका उद्देश्य है। यदि भारत इस बातको समझ ले कि तलवारकी कतई जरूरत नही है, तो अंग्रेज ही नही, समस्त संसार हमारे सामने झुकेगा। हमारे सामनेका अर्थ है सत्यके सामने। इसमे कोई गर्वोक्ति नही है। जहाँ सत्य होता है वहाँ हार नही हो सकती। यह बात विशेषत ध्यानमें रखी जानी चाहिए कि हम अपनी ओरसे इस सघर्षमें कोई कसर न रखे। इसके लिए हमें अपने आपसी झगड़े खत्म कर देने चाहिए। यह लड़ाई न्यायोचित है, किन्तु यह मुख्यत. श्री प्रैटके कारण छिडी है। सरकारसे लोकमतका आदर करवाना इसका मुख्य उद्देश्य है। दिल्लीमें वाइसराय दरबार कर रहे हैं। इसमें वे हमारे देशके नेताओसे कहेगे कि वे अपने आपसी झगडे खत्म कर दे। मै उनसे उत्तरमें यह कहूँगा कि इस लडाईको खेडाके लोग नही लड रहे है, बल्कि कमिश्नर लड रहे है। हम तो अपनी रक्षा करनेके लिए लड रहे है। हमने तो अपना बचाव-भर किया है। हमने हमला नही किया है। किन्तु यदि इस बीच आप हार मान बैठें तो मेरी क्या स्थिति होगी? इस कारण आपको मजबूत रहना चाहिए और नुकसान हो तो बरदाश्त कर लेना चाहिए। तभी यह सिद्ध हो सकता है कि दोष लोगोका नही है बल्कि कमिश्नरका है।

मै आपको विश्वासपूर्वक कहता हूँ कि आपकी जमीनोको सरकार जब्त नही कर सकती। सरकारी दफ्तर [कागजात] में भले ही उनकी जब्ती की कार्रवाई कर ली जाये, किन्तु जबतक कागजपर हमारे हस्ताक्षर न हों तबतक वे जब्त नही होगी। अबतक तो जिम्मेदारी मेरी और वल्लभभाईकी है; किन्तु जब मैं दिल्ली चला जाऊँगा तो वह अकेले वल्लभभाईपर आ पडेगी। आप भी इसमे हिस्सा बँटायें। यदि आप, जब मैं यहाँ रहूँ, तभी निर्भय रहे तो यह सत्याग्रह आपका नही, मेरा है। सत्याग्रह तो वस्तुतः खेड़ा जिलेका है। न वह मेरा या वल्लभभाईका है; न अनसूयाबहनका है। मैं तो आपको केवल मार्ग ही दिखा सकता हूँ। उस मार्गपर चलना आपका काम है। जीत खेड़ा जिलेके लोगोपर निर्भर है। यदि आप मजबूत बने रहेगे और सत्यपर कायम रहेगे तो आप अवश्य ही जीतेंगे। केवल प्रतिज्ञा लेनेसे ही, आपका यश समस्त देशमें

फँस गया है। आप उस प्रतिज्ञाकी पूर्तिके लिए उसपर हिम्मतसे डटे रहें और सत्य एवं शिष्टतापर कायम रहें। उसके साथ-साथ आप अपने आत्म-सम्मानकी रक्षा भी करें। यह आपका धर्म है। जमीनकी अपेक्षा धर्म अधिक महत्त्वपूर्ण है। जिसने धर्मकी रक्षा की है वह कभी हारेगा नहीं। वह कभी भूखा भी न मरेगा। मैं आपको यह सलाह देता हूँ और यह मेरी पहली और अन्तिम सलाह है कि आप अपनी प्रतिज्ञाको कदापि न तोड़ें। आपसे मेरी यही प्रार्थना है।

[गुजरातीसे]

खेड़ा सत्याग्रह

२४६. पत्र : कमिश्नरको[1]

नडियाद

[अप्रैल २३, १९१८ से पूर्व]

[महोदय,]

सत्याग्रहमें मेरा अटल विश्वास है। मैं अपने सब अस्त्र — यहाँतक कि अपना सब-कुछ — त्याग देनेको सहर्ष तैयार हूँ, परन्तु अपने सिद्धान्त नहीं त्याग सकता।

[आपका,

मो० क० गांधी]

[अंग्रेजीसे]

सरदार वल्लभभाई पटेल, खण्ड १

२४७. पत्र : कस्तूरबा गांधीको

[बम्बई जाते समय गाडीमें]

अप्रैल २३, १९१८

प्रिय कस्तूर,

तुम्हें मगनलालको मांका सुख देना है। उसने अपने माँ-बाप छोड दिये हैं और मेरे कामको अपना लिया है। मेरे कामका उत्तराधिकार लेनेके लिए अभी तो वही तैयार है। उसे शान्ति कौन दे? उसके दुःखमें तुम रोओ, उसे प्रेमसे खिलाओ-पिलाओ और बहुविध चिन्ताओंसे मुक्त रखो, यह तुम्हारा काम है। भूपतरायके घरमें जो क्लेश है, उसे तुम मिटाओ। मैं चाहता हूँ कि तुम ऐसे काम करती रहो। इसमें सच्ची विद्वता

१. गांधीजीने श्री प्रैटसे भेंटके लिए समय माँगते हुए उन्हें एक पत्र लिखा था, जिसके उत्तरमें उन्हें प्रैटका यह पत्र मिला: "यदि आप अपने सभी शस्त्र त्याग दें और मुझसे बातचीत करनेको आयें तो मेरा दरवाजा आपके लिए खुला हुआ है, लेकिन मेरे हाथ कानूनी तथा प्रशासनिक नियमोंसे बँधे हुए हैं।"

है, बड़प्पन है। बिना किनारीकी सफेद साड़ी पहननेमें तनिक भी न हिचकना। मैं जल्दी आनेकी कोशिश करूँगा।

[गुजरातीसे]

महादेवभाईनी डायरी, खण्ड ४

२४८. पत्र: मगनलाल गांधीको

[बम्बई जाते समय गाड़ीमें]
अप्रैल २३, १९१८

चि० मगनलाल,

बाने कहा है कि तुम्हारे और सन्तोकके बीच कुछ कहा-सुनी चल रही है और तुम्हारा मुख उदास था। मैं चाहता हूँ कि तुम्हारे साथ ऐसा कुछ हरगिज न हो। सन्तोकको धीरजसे आगे बढ़ाओ। अधीरता प्रेमके अभावकी सूचक है। इतना काफी है कि हम किसीको उसके बुरे कामोंमें मदद न दें। तुम्हारी चिन्ता तुमको जला रही है, आगे नहीं बढ़ने देती। इस स्थितिसे अब तो तुम्हें मुक्त हो ही जाना चाहिए।

मात्रास्पर्शास्तु कौन्तेय शीतोष्णसुखदुःखदाः।
आगमापायिनोऽनित्यास्तांस्तितिक्षस्व भारत ॥ २/१४

[गीताके] इस श्लोकपर विचार करो और उसका तत्त्व अपनी अन्तरात्मामें उतारो। यह श्लोक बहुत ही शक्तिशाली है। मुझे तो इससे बहुत-सी चिन्ताओंमें शान्ति मिली है। भूपतरायके गृह-कलहके शमनमें सन्तोकका उपयोग करो। यह कलह दूर किया जा सकता है और अवश्य किया जाना चाहिए।

[बापूके आशीर्वाद]

[गुजरातीसे]

महादेवभाईनी डायरी, खण्ड ४

गांधीजीके स्वाक्षरोंमें मूल गुजराती पत्र (सी० डब्ल्यू० ५९८३) से।
सौजन्य: राधाबेन चौधरी

२४९. अपील : बम्बईकी जनतासे[1]

अप्रैल २३, १९१८

आजकी सभाके प्रमुख महोदयने आपको बताया कि खेड़ाके लोगोंने सरकारसे न्याय प्राप्त करनेके लिए क्या-क्या कदम उठाये हैं। मैं इसमें कुछ और जोड़ना चाहता हूँ। इस लड़ाईको किसी दूसरेने खड़ा नहीं किया है। इसके लिए खेड़ाके लोगोंको किसीने नहीं उभाड़ा। इसका मूल हेतु राजनैतिक नहीं है, जैसा कुछ लोगोंका आरोप है; इसके पीछे होमरूल या वकील और बैरिस्टर भी नहीं हैं। मैं इस बातकी साक्षी देनेके लिए यहाँ खड़ा हूँ कि इसको हल-जोता किसानोंने ही आरम्भ किया है। गोधराके राजनीतिक सम्मेलनके बाद खेड़ा जिलेमें कुछ किसानोंने अनावृष्टिके कारण सरकारसे राहत देनेकी प्रार्थना करनेका विचार किया। उन्होंने मुझे पत्र लिखा कि उन्हें कानूनके मुताबिक सरकारसे राहत लेने-का हक है; क्या मैं इसमें उनकी सहायता करूँगा। इससे आप देख सकते हैं कि इस संघर्ष का मूल कारण कोई बाहरी आन्दोलन नहीं है। किन्तु यह सच है कि बाहरकी सहायतासे यह संघर्ष चमका है। हमारे अध्यक्ष और माननीय गोकुलदास भाईका[2] पूरा समर्थन प्राप्त कर लेनेपर लोगोंको अपनी जीतका विश्वास हो गया। गुजरात-सभाके कुछ प्रतिष्ठित सभासदोंने भी इस सम्बन्धमें जाँच की और अपनी दिलजमई की कि फसल दरअसल मारी गई है, और इस कारण राहत दी जानी चाहिए। लोगोंको राहत देनेका औचित्य सिद्ध करनेके लिए उनकी गवाही काफी थी फिर भी, अधिकारियोंको विश्वास करानेके प्रयत्नमें कोई कमी नहीं की गई। मैं इसकी सचाईके सम्बन्धमें साक्षी देता हूँ।

जिसे वास्तविक कष्ट नहीं है वह सत्याग्रहकी लड़ाई नहीं लड़ सकता। इस लड़ाईमें सैनिकोंकी लड़ाईकी अपेक्षा अधिक वीरताकी आवश्यकता होती है। सैनिकके हाथमें तो हथियार होता है; उसका आग्रह शत्रुपर प्रहार करनेमें होता है। इसके विपरीत सत्याग्रही स्वयं कष्ट सहकर लड़ता है। कोई कमजोर और आशाहीन आदमी ऐसा नहीं कर सकता। उसमें कष्ट-सहनकी क्षमता नहीं होती। सत्याग्रही ज्यों-ज्यों दुःख आते हैं त्यों-त्यों शुद्ध होता जाता है। जैसे सोना अग्निमें तपकर अधिक शुद्ध होता है वैसे ही सत्याग्रही भी कष्ट सहकर शुद्ध होता है। उसकी भी यही कसौटी है। सत्यका आग्रह ही सत्याग्रहका शस्त्र है। सच्चा सत्याग्रही वही होता है जो मनमें से भय निकालकर सत्यपर आरूढ़ होकर लड़ता है।

१. यह भाषण गांधीजीने बम्बईके नागरिकोंकी एक सार्वजनिक सभामें दिया था जो उनको शान्ताराम चाल कांदेवाडीमें खेड़ा जिलेकी स्थितिसे परिचित कराने और वहाँके सत्याग्रह संघर्षसे सहानुभूति प्रकट करनेके लिए की गई थी। सभाकी अध्यक्षता विट्ठलभाई ज० पटेलने की। कार्रवाई प्रायः गुजराती और मराठीमें हुई थी जिसका विवरण २४-४-१९१८ के **बॉम्बे क्रॉनिकल**में छपा था।

२. माननीय गोकुलदास पारेख।

इस लडाईमे अकेले पुरुष ही नही, स्त्रियाँ भी सम्मिलित होती हैं। गाँवोकी सभाओमें एक अनोखा दृश्य दिखाई देता है। स्त्रियाँ कहती है . सरकार चाहे हमारी भैंसें ले जाये, चाहे हमारे गहने ले जाये और चाहे हमारी जमीनोको जब्त कर ले, किन्तु हमारे मर्दोंने जो प्रतिज्ञा ली है उसका पालन किया ही जाना चाहिए। यह लडाई महान् है, व्यापक है। इसका यश-सौरभ सर्वत्र फैल रहा है। खेड़ाके लोगो [की वीरता] का वर्णन करना मेरी शक्तिसे परे है। सरकार उनकी सहायतासे अपने वर्तमान सकटका निवारण कर सकती है। पाटीदार क्षत्रिय होनेका दावा करते है।

सरकारकी विज्ञप्तिमे खेडा जिलेको समृद्ध बताया गया है और एक प्रकारसे यह सत्य है। यहाँ 'बड़े बर्तनकी खुरचन भी बहुत होती है' कहावत लागू होती है। मै जब उनके पुराने मकानात देखता हूँ तो मुझे उनके पुराने गौरवकी याद आती है। उन्होने अपने धैर्य, निष्ठा और अध्यवसायसे खेडा जिलेकी भूमिको सुन्दर बाग बना दिया हैं। किन्तु उनके घरोको देखकर मेरी आँखोमें आँसू आ जाते है। वे कहते है कि उनके पास पैसा नही है; अन्यथा उनके खेत इससे भी अधिक सुहावने होते।

सरकार ऐसे वीर लोगोको ऐसे दैवी सकटके समयमें भी, जो राहत देनी चाहिए सो देना नही चाहती। ऐसे कष्ट खेडा जिलेके लोगोपर अनेक बार आये है। उनकी वर्तमान निस्तेजताका यही कारण है। इस सभामें आये हुए भाई और बहन खेडा जिलेमे जाकर किसानोकी कोठी-कुठलोको देखें और उनके खेतोकी उपजकी जाँच करे। उन्हे उनके पास कुछ भी न मिलेगा। इस अवस्थामे वे क्या करे? आप इससे कल्पना कर सकते है कि उनकी अवस्था कितनी दु खद है। उन्होने कहा . "हमारी हालत ऐसी है।" इस सालका लगान अगले साल देनेसे वे एक सालके ब्याजसे बच जायेंगे। किन्तु इस लड़ाईमें प्रश्न ब्याजसे बचने-का नही है। उनका ब्याज तो बम्बईका एक व्यापारी ही दे सकता था। किन्तु उससे उनके दु खोका अन्त नही हो सकता था। इसीसे तो सरकार मान बैठती है कि वे हर साल ब्याजपर रुपया लेकर लगान दे सकते है।

मैं इस लड़ाईसे यह सिद्धान्त स्थिर करना चाहता हूँ कि सरकार लोगोसे पूछे बिना लगान लेनेका निर्णय नही कर सकती। लगानका कानून बुरा है, ऐसा कहकर तो हम दु.ख दूर नही कर सकते। दु खसे मुक्त होनेका एकमात्र उपाय तो यह है कि ज्ञानपूर्वक दु ख सहन करके सदाके लिए दु खसे पिंड छुडा लिया जाये। कमिश्नर श्री प्रैट इस सम्बन्धमें खुल्लम-खुल्ला कहते है कि "यदि मै इस बार लगान मुलतवी कर दूँ तो समस्त देश समझ जायेगा कि ऐसे मामलेमे भी लोग हस्तक्षेप कर सकते है।"

कष्ट सहन करना सीखनेके लिए यह अवसर अच्छा है। ऐसा अवसर बार-बार नही आ सकता। इस समय लोगोने उचित मर्यादाकी रक्षा की है। खेडाके लोगोने धर्मका स्वरूप बता दिया है। उनका कहना है कि वे स्वय कष्ट सहकर अपने कष्टोका अन्त करेंगे। . .

मैंने खेडा और चम्पारनके अनुभवसे यही सीखा है कि यदि नेता लोगोमें जायें, उनके साथ रहें और खाये-पिये तो इससे दो वर्षमे ही बहुत महत्त्वपूर्ण परिवर्तन किया जा सकता है। आप इस लड़ाईका सूक्ष्म अध्ययन करें, आप खेडा जिलेके लोगोको पहिचानें। उनके प्रति

सद्भाव दिखाएँ और अपनी शुभ वाणीसे उनकी जितनी सहायता कर सकें, करें। हम अविनयपूर्वक नहीं, बल्कि सरकारके हृदयमें सत्यको जाग्रत करके न्याय माँगते हैं। जबतक न्याय न मिलेगा तबतक ये लोग जूझते रहेंगे।[1]

[गुजरातीसे]

खेडा सत्याग्रह

२५०. पत्र : सर क्लॉड हिलको

सेंट स्टीफेन्स कॉलेज
दिल्ली
अप्रैल २६, १९१८

प्रिय सर क्लॉड हिल,

इस घटनापूर्ण सम्मेलन[2] द्वारा नियुक्त की जानेवाली समितियोंमें से किसीमें भी शामिल होने या मुख्य प्रस्ताव[3] पर बोलनेका सम्मान स्वीकार करनेमें मुझे इनकार करना पड़ा, उसका मुझे कम दुःख नहीं हुआ।

मेरा खयाल है कि सर्वाधिक शक्तिसम्पन्न नेताओंको इस सम्मेलनसे अलग रखा गया है, इसलिए वह ज्यादातर असफल ही रहेगा। श्री तिलक, श्रीमती बेसेंट और अली भाइयोंकी अनुपस्थितिसे सम्मेलनमें दरअसल कोई वजन नहीं रह गया है।[4] मुझे स्वीकार करना चाहिए कि आजकी बैठकमें हम लोग जो उपस्थित थे, उनमें से किसीका भी असर आम जनतापर इन नेताओंके बराबर नहीं है। उनको सम्मेलनमें बुलानेसे इनकार करनेका अर्थ यही निकलता है कि जिन लोगोंके हाथमें सरकारकी बागडोर है, उन लोगोंकी इच्छा अबतक अख्तियार किये गये रुखमें सचमुच कोई परिवर्तन करनेकी

१. जब गांधीजी अपना भाषण समाप्त कर चुके तो लोकमान्य तिलकने खेड़ा जिलेके किसानोंके प्रति सहानुभूतिका प्रस्ताव पेश किया और यह माँग रखी कि सरकार या तो एक वर्षके लिए लगान मुल्तवी कर दे या उनके कष्टोंकी जाँचके लिए एक निष्पक्ष जाँच-समिति नियुक्त करे। इसके बाद श्री वी० जी० हॉर्निमैनने एक प्रस्ताव रखा जिसमें कमिश्नर श्री प्रैटके १२ अप्रैलके भाषणमें अपनाये गये रुखकी निन्दा की गई।

२. यह सम्मेलन लॉर्ड चैम्सफोर्डने बुलाया था।

३. प्रस्ताव इस प्रकार था: "यह सम्मेलन महामहिम वाइसरायको यह अधिकार देता है और उनसे अनुरोध करता है कि वे परमविभव सम्राट् तक उनके शालीनतापूर्ण सन्देशके प्रत्युत्तरमें भारतका कर्तव्य और निष्ठापूर्ण भाव पहुँचायें और साम्राज्यकी इस महान् संकटकी घड़ीमें अपने कर्तव्य-पथपर चलते रहनेके भारतके संकल्पसे उनको आश्वस्त करें।"

४. तिलकको आमन्त्रित नहीं किया गया था, लेकिन गांधीजीने २६ अप्रैल और फिर २७ अप्रैलको वाइसरायसे मुलाकात करनेके बाद तिलकको सम्मेलनमें आनेके लिए तार दिया था। तिलकने इस आधार-पर कि सरकारने उनके विरुद्ध निष्कासनका आदेश रद नहीं किया है, आनेसे इनकार कर दिया था। एनी बेसेंटको भी आमन्त्रित नहीं किया था और अली भाई तो जेलमें थे ही।

नही है; और नीतिमे कोई सच्चा परिवर्तन किये बिना आप जो भी रिआयते देंगे, उनमे न तो कोई शोभा रहेगी और न बल। आम जनतामें उनके प्रति सच्ची वफादारी पैदा नही हो सकेगी। सम्मेलनका उद्देश्य, अगर मैंने सही तौरपर समझा है तो, यही है कि आप आम जनताको प्रभावित करना चाहते हैं। भारतीय नेताओके सामने सवाल यह है कि हिन्दुस्तानके लोगोमें अग्रेज़ो जैसी वफादारी किस तरह पैदा की जाये। मै नम्रतापूर्वक कहता हूँ कि जबतक आप आम जनताके विश्वस्त नेताओपर विश्वास रखनेको तैयार नही और विश्वासका जो अर्थ होता है, वह सब करनेको तैयार नही, तबतक वफादारी पैदा करना असम्भव है। अली भाइयोके बारेमें मै बता दूं कि लोगोके सामने उनके अपराधका कोई सबूत नही है। दुश्मनके साथ पत्र-व्यवहार करनेके इलजामसे उन्होने जोरदार शब्दोमे इनकार किया है। वर्तमान परिस्थितिके विषयमे जो मत अली भाइयोका है, वही अधिकाश मुसलमानोका है।

मै महसूस करता हूँ कि दूसरे कारणोसे भी मै सम्मेलनमे कोई कारामद नही रहूँगा। विलायतकी डाकमे आये हुए अखबार मैंने अभी-अभी पढे हैं। उनमे गुप्त सधियोके बारेमें चर्चा है। प्रकाशित बाते पढकर बहुत दुख होता है। अखबारोमे बताई गई सधियाँ यदि सचमुच हुई हो, तो मै नही जानता कि अब मै कैसे कह सकता हूँ कि मित्र-राज्योका पक्ष बिलकुल न्यायपूर्ण है। मै नही कह सकता कि इन समाचारोका भारतके मुसलमानो पर क्या असर होगा। भारत-सरकारके लिए साम्राज्यकी सर्वोत्तम सेवा करनेका मार्ग यही है कि वह साम्राज्यीय सरकारको यह सलाह देनेकी हिम्मत करे कि इन सन्धियोसे उसने अपने-आपको जिस बुरी और अनीतिपूर्ण स्थितिमें डाला है, उसमे से वह बाहर निकल आये। अगर यह साबित हो जाये कि अखबारोमे प्रकाशित समाचार बिलकुल गलत हैं, तो मेरे बराबर आनन्द अन्य किसीको नही होगा।[1]

जबतक स्थानीय अधिकारी अपना काम-काज उसी तरह करते रहेंगे जिस तरह वे खेड़ामे कर रहे हैं, तबतक हिन्दुस्तानमें भीतरी शान्ति नही रहेगी। मुझे विश्वास है कि वाइसराय यह तो हरगिज नही चाहते कि लोग अन्याय और जुल्मका कोई विरोध ही न

१. गाधीजीकी इन उक्तियोंका कारण क्या था, इस बातपर **चार्ल्स फ्रीअर एन्ड्रयूज़** नामक पुस्तकमें कुछ प्रकाश डाला गया है। गाधीजीने एन्ड्रयूजको लिखा था कि मेरे युद्ध-सम्मेलनमें भाग लेनेके लिए जाते समय रास्तेमे मेरे साथ हो जाओ। "वहाँ जाते हुए गाड़ीमें एन्ड्रयूजने अंग्रेजी **न्यू स्टेट्समैन**में कुछ कपटपूर्ण गुप्त सधियोंका हाल पढा। इन सधियोका रहस्योद्घाटन रूसके परराष्ट्र विभागने किया था। इनमें जो देश शामिल थे, उनमें एक ग्रेट ब्रिटेन भी था, हालाँकि उसने सार्वजनिक रूपसे यह घोषणा की थी कि इस स्वातन्त्र्य-सग्राममें उसकी कोई दिलचस्पी नहीं है। एन्ड्रयूजने अखबारको गांधीजीके आगे पटकते हुए कहा, 'जब ये देश ऐसी दुरगी चाल चल रहे हैं तब आप युद्ध-सम्मेलनमें कैसे हिस्सा ले सकते हैं?" यह भी एक कारण था जिसके चलते गाधीजीने प्रारम्भमें सम्मेलनमें भाग लेनेसे इनकार कर दिया था। किन्तु लॉर्ड चैम्सफोर्डने एक मुलाकातके दौरान इस समाचारका खण्डन करते हुए कहा कि यह तो कुछ स्वार्थी हल्कोकी बात जान पडती है। उन्होंने कहा कि मैं यह विश्वास नहीं कर सकता कि ग्रेट ब्रिटेन कोई ऐसी सधि करेगा जिसके अनुसार उसे कुस्तुनतुनियाको रूसके हाथों सौंप देना पडे। इसी स्पष्टीकरणके आधारपर गाधीजीने आखिरकार सम्मेलनमें भाग लेना स्वीकार किया।

करे। मैं आशा रखता हूँ कि खेडामें लूट मचाकर लगान वसूल करनेका जो इरादा बाँधा गया है, वह एकदम रोक दिया जायेगा और खेडाके लोगोकी न्यायपूर्ण माँगें मंजूर कर ली जायेंगी।

अनिवार्य फौजी भरती शुरू करनेके विरुद्ध भी सरकारको मैं अच्छी तरह चेता देना चाहता हूँ। मुझे आशा है कि हिन्दुस्तानकी भूमिपर यह चीज कभी सफल नही होगी। किन्तु जबतक स्वेच्छापूर्वक भरती करनेके सारे प्रयत्न ईमानदारीके साथ न कर लिये जायें और वे असफल न हो जायें, तबतक तो अनिवार्य सैनिक भरती हरगिज शुरू न की जानी चाहिए। अबतक जबरदस्ती फौजी भरती करनेकी जो बातें सुनी गई है, उन्हे दबा रखनेमें नेताओंने बहुत ही सयमसे काम लिया है, यह तो आप भी स्वीकार करेंगे। लेकिन मेरा खयाल है कि अब पानी खतरेके निशान तक पहुँच चुका है।

अन्तमें मैं बता दूँ कि 'होमरूल' के विचार आम जनतामें इतनी गहराई और व्यापकतासे घर कर चुके है कि निकट भविष्यमें 'होमरूल' मिल जानेके बहुत ही ठोस प्रमाण यदि नही जुटाये जायेंगे, तो लोगोंका सच्चा सहयोग नही मिल सकेगा।

अब आप समझ जायेंगे और शायद इसकी कद्र भी कर सकेंगे कि मैं समितियोंमें रहनेसे क्यों इनकार करता हूँ और बोलनेमें क्यों आनाकानी करता हूँ। मैं सम्मेलनमें भाग न लेकर ही सरकारके प्रति अपना सद्भाव सबसे अच्छे ढगसे प्रकट कर सकता हूँ।

मेरी प्रार्थना है कि यह पत्र आप जल्दीसे-जल्दी वाइसरायके सामने पेश कर दें।

[हृदयसे आपका,
मो० क० गाधी]

[अंग्रेजीसे]

महादेव देसाईकी हस्तलिखित डायरीसे।
सौजन्य : नारायण देसाई

२५१. पत्र : जे० एल० मैफीको

सेंट स्टीफेंस कॉलेज
दिल्ली
अप्रैल २७, १९१८

प्रिय श्री मैफी,

आपका तार और इसी १९ तारीखका छोटा-सा पत्र, दोनो यथासमय मिल गये। तदर्थ धन्यवाद।

इधर स्थितिमें जो परिवर्तन हुए है, उनके कारण [अली] बन्धुओंकी रिहाई और भी जरूरी हो गई है। काफी सकोच-विकोच और गहरे सोच-विचारके बाद मैं इसी निष्कर्षपर पहुँचा हूँ कि सम्मेलनमें भाग लेकर मैं उस उद्देश्यकी सेवा नही कर सकता, जिसके लिए सम्मेलन बुलाया जा रहा है। इसके कारण मैंने सर क्लॉड हिलको

लिखे पत्रमें[1] बता दिये हैं। उस पत्रकी प्रति साथमें भेज रहा हूँ। पता नहीं, परमश्रेष्ठ अब भी मुझसे [अली] बन्धुओंके सम्बन्धमें मिलना पसन्द करेंगे या नहीं। २९ तारीख तक मैं दिल्लीमें हूँ, लेकिन कहनेकी आवश्यकता नहीं कि यदि जरूरी हुआ तो मैं ज्यादा दिन भी ठहर सकता हूँ।

हृदयसे आपका,
मो० क० गांधी

[अंग्रेजीसे]

नेशनल आर्काइव्ज ऑफ इंडिया. होम, वार (डिपॉज़िट): अक्तूबर १९१८, संख्या २६

२५२. पत्र: जे० एल० मैफीको

सेंट स्टीफेन्स कॉलेज
दिल्ली
अप्रैल २७, १९१८

प्रिय श्री मैफी,

मैंने भय और कम्पनके साथ एक फर्जकी खातिर सम्मेलनमें भाग लेनेका निश्चय किया है। वाइसरायके साथ मुलाकात[2] करनेके बाद और फिर आपसे मिलनेके बाद मुझे लगता है कि मैं कुछ और नहीं कर सकता।[3]

हृदयसे आपका,
मो० क० गांधी

[अंग्रेजीसे]

नेशनल आर्काइव्ज ऑफ इंडिया: होम, वार (डिपॉज़िट): अक्तूबर १९१८, संख्या २६

१. पिछला शीर्षक।

२. यह मुलाकात २७ अप्रैलको हुई थी।

३. दूसरे दिन गांधीजीको मैफीका निम्नलिखित सन्देश मिला था: "न तो वाइसरायको और न मुझे ही आपके 'भय और कम्पन' पर विश्वास हुआ। वाइसरायको यह सुनकर वास्तवमें बड़ी प्रसन्नता हुई है कि आप सम्मेलनमें भाग लेंगे। मैंने सर क्लॉड हिलको सूचित कर दिया है कि आप जनशक्ति (मैन पावर कमेटी)की ११ बजे दोपहरकी बैठकमें भाग लेंगे।"

२५३. पत्र: जे० एल० मैफीको

दिल्ली
अप्रैल २८, १९१८

प्रिय श्री मैफी,

बड़ी कृपा हो, अगर आज कान्फ्रेन्समें मुझे वाइसरायसे उर्दूमें बोलनेकी अनुमति दिला दें। मैं इसका एक अनुवाद भेजना चाहता हूँ, लेकिन सोचता था कि यदि मैं उतने ही शब्द कहूँ जितने इस प्रस्तावके[1] समर्थनके लिए आवश्यक हों तो मेरा बोलना अधिक प्रभावपूर्ण हो सकेगा। मेरे निवेदनका उत्तर आप शायद श्री एण्ड्रयूजकी मारफत भेजेंगे।

यह भी बतायेंगे कि आप दिल्लीमें कब तक हैं।[2]

हृदयसे आपका,
मो० क० गांधी

[अंग्रेजीसे]

नेशनल आर्काइव्ज ऑफ इंडिया होम, वार (डिपॉजिट). अक्तूबर १९१८, संख्या २६

१. देखिए अगला शीर्षक।

२. दूसरे दिन गांधीजीको मैफीका निम्नलिखित उत्तर मिला: "अब देखता हूँ, सबेरे ज्यादा काम होनेसे जल्दीमें मैं आपके पत्रका आखिरी हिस्सा नहीं पढ़ पाया और फलतः केवल पहले प्रश्न यानी आपके भाषणवाली बातका ही जवाब भेज दिया। और उसके सम्बन्धमें अगर कुछ कहनेकी इजाजत दें तो कहूँगा कि आपकी उपस्थितिसे तथा आपने जो सीधे-सादे शब्द कहे और जिस प्रकारसे कहे उससे वाइसराय काफी प्रभावित हुए। आपको आगे निश्चित कार्यकी गुंजाइश दिखाई देती है, यह जानकर मुझे बड़ी प्रसन्नता हुई। यह सब बहुत आवश्यक है और आपको बादमें इसके लिए पश्चात्ताप नहीं होगा। अधिकार-प्राप्तिके लिए संघर्षका उद्धत हो जाना अधिकारोंको पानेका सदा सर्वोत्तम तरीका नहीं हुआ करता। यदि आपको हममें विश्वास है तो हमारे लिए लड़िये और धीरज न खोइए। हम आज रातको प्रस्थान कर रहे हैं, लेकिन कभी कोई योग्य सेवा हो तो अवश्य सूचित करें।"

२५४. भाषण : युद्ध-सम्मेलनमें[1]

दिल्ली
अप्रैल २८, १९१८

इस प्रस्तावके समर्थकोमे अपना नाम पाकर मैं अपनेको गौरवान्वित अनुभव करता हूँ। इसका अर्थ मैं पूरी तरह समझता हूँ और हृदय खोलकर इसका समर्थन करता हूँ।[2]

गाधीजीके स्वाक्षरोमे मूल अग्रेजी प्रति (जी० एन० २२२५) की फोटो-नकलसे।

२५५. पत्र : जे० एल० मैफीको

दिल्ली
अप्रैल २९, १९१८

प्रिय श्री मैफी,

कामका भारी बोझ होनेपर भी आपने मेरा पत्र फिरसे पढा और मुझे जवाब देनेका वक्त निकाला[3], यह आपकी कृपा है।

वाइसरायने जो कृपा-भाव प्रकट किया है, उसके लिए मेरा धन्यवाद उनतक पहुँचाइए।

आपके लिए मैं दो पत्र[4] पूरे कर रहा हूँ। वे आपको शिमलामें मिलेंगे। आपके यहाँ-से रवाना होनेसे पहले मै शायद ही उन्हे तैयार कर सकूँगा। उनमें से एक पत्रमे कुछ

१. ये पक्तियाँ "पत्र: जी० ए० नटेसनको", १२-५-१९१८ से उद्धृत की गई हैं।

२. गाधीजीने जन-शक्ति समिति (मैन-पावर कमेटी) में दिये गये अपने भाषणका आत्मकथामें इस प्रकार उल्लेख किया है· "तो मैं सम्मेलनमें शामिल हुआ। वाइसराय भरतीसे सम्बन्धित प्रस्तावपर मेरा समर्थन प्राप्त करनेके लिए अत्यन्त उत्सुक थे। मैंने हिन्दी-हिन्दुस्तानीमें बोलनेकी अनुमति माँगी। वाइसरायने मेरी प्रार्थना स्वीकार कर ली, किन्तु सलाह दी कि मैं अंग्रेजीमें भी बोलूँ। मुझे कोई भाषण नहीं देना था। मैं इस आशयका केवल एक वाक्य बोला "अपने उत्तरदायित्वको पूरी तरह समझते हुए मैं प्रस्तावका समर्थन करता हूँ।"

महादेवभाईनी डायरी, खण्ड ४ के अनुसार इससे पूर्व गाधीजीको वाइसरायसे यह सन्देश मिला था· "कृपया अपने सारे मित्रोंको आश्वस्त कर दें कि मैं जो-कुछ कर सकता था, वह कर चुका हूँ . . .। जो योजना पेश की गई है वह ठीक कांग्रेस-लीग योजना-जैसी तो नहीं होगी, किन्तु काफी हदतक उसके समान ही होगी। अत· मुझे आशा है, कल किसी प्रकारकी सौदेबाजी या मोलतोल नही होगा। सारा ससार बड़ी उत्सुकतासे इस बातकी प्रतीक्षा कर रहा है कि कल क्या होता है। . . ."

३. देखिए "पत्र: जे० एल० मैफीको", अप्रैल २८, १९१८की पादटिप्पणी २।

४ देखिए अगले दो शीर्षक।

निश्चित सुझाव दिये गये हैं कि आप मेरी सेवाओंका किस रूपमें उपयोग कर सकते हैं और दूसरे पत्रमें मैंने मौजूदा परिस्थितिके सम्बन्धमें अपने विचार पूरी तरह प्रकट किये हैं।

आप परसे मेरा विश्वास जल्दी नहीं हिल सकता। अधिकारोंके बारेमें आपने जो-कुछ लिखा है, उससे मैं पूरी तरह सहमत हूँ। लम्बा पत्र लिखकर आपका समय लेना मुझे ठीक नहीं लगता।

जब कभी आपको लिखता हूँ, हमेशा यही लगता है जैसे मैं कोई पाप कर रहा हूँ।

हृदयसे आपका,
मो० क० गांधी

[अंग्रेजीसे]

नेशनल आर्काइव्ज ऑफ इंडिया होम, वार, पॉलिटिकल: अक्तूबर १९१८, संख्या २७

२५६. पत्र : वाइसरायको

दिल्ली
अप्रैल २९, १९१८[1]

महोदय,

जैसा कि आप जानते हैं, सावधानीसे विचार करनेके बाद २६ अप्रैलके पत्रमें[2] निर्दिष्ट कारणोंसे मैंने अपना कर्तव्य समझकर आपको यह सूचित किया था कि मैं युद्ध-सम्मेलनमें उपस्थित न हो सकूंगा। पर आपने मुलाकातका अवसर देनेकी कृपा की, और उसके बाद मैंने उसमें भाग लेनेके लिए अपना मन तैयार कर लिया। यदि अन्य किसी कारणसे नहीं, तो आपके प्रति मेरे आदरभावके खयालसे ही सही।

शामिल न होनेके कारणोंमें सबसे प्रबल कारण यह था कि लोकमान्य तिलक, श्रीमती बेसेंट और अली भाइयोंको उस सम्मेलनमें आमन्त्रित नहीं किया गया था। इन्हें मैं सबसे बड़े और समर्थ लोकनेता मानता हूँ। मेरा तो अब भी यही खयाल है कि उन्हें आमन्त्रित न करके सरकारने गम्भीर भूल की है। मेरा सादर सुझाव है कि अब जो प्रान्तीय सम्मेलन होनेवाले हैं, उनमें इन नेताओंको आमन्त्रित करके और उनसे यह कहकर कि वे अपने परामर्शका लाभ देकर सरकारकी सहायता करें, वह अपनी भूल सुधार सकती है। मेरी विनम्र राय है कि कोई भी सरकार विशाल जनताका प्रतिनिधित्व करनेवाले इतने बड़े-बड़े नेताओंकी उपेक्षा नहीं कर सकती, भले ही उनके साथ सरकारका कितना ही

१. इसका मसविदा हालाँकि सम्मेलन समाप्त होनेके तुरन्त बाद ही, इसी तिथिको तैयार कर लिया गया था, लेकिन लगता है कि यह शिमलामें वाइसरायके पास दूसरे दिन निजी सचिवके नाम एक सह-पत्रके साथ भेजा गया था, देखिए "पत्र: जे० एल० मैफीको", अप्रैल ३०, १९१८।

२. देखिए "पत्र: सर क्लॉड हिल्को", २६-४-१९१८।

गहरा मतभेद क्यो न हो। साथ ही मैं कह सकता हूँ और इसका मुझे हर्ष है कि सम्मेलनकी समितियोमे सभी दलोको अपने विचार स्वतन्त्रतापूर्वक व्यक्त करने दिये गये थे। जहाँतक मेरा सम्बन्ध है, मैंने सोच-समझकर अपने विचार न तो उस समितिमे प्रकट किये जिसमे मुझे रखा गया था और न सम्मेलनमे। मुझे लगा कि उद्देश्योकी अधिकसे-अधिक अच्छी सेवा उसमे पेश हुए प्रस्तावोका समर्थन मात्र करना ही होगा। वह समर्थन मैंने मनमे जरा भी गाँठ न रखकर किया है। इसी पत्रसे सलग्न अलग पत्रमे[1] कुछ सुझाव दे रहा हूँ। इनको सरकारके स्वीकार करते ही, मैं अपने शब्दोको अमली जामा पहनाने लगूँगा। मैं मानता हूँ कि हम निकट भविष्यमे जिस साम्राज्यके वैसे ही हिस्सेदार बननेकी आकाक्षा रखते है जैसे कि समुद्र-पारके अन्य 'डोमीनियन' हैं, उस साम्राज्यकी संकटकी घडीमे हमें बिना किसी मीन-मेखके पूरी तौरपर उसका समर्थन करना चाहिए और हमने यही निर्णय भी किया है। किन्तु इतना तो स्पष्ट ही है कि इस समर्थनके पीछे हमारी यही आशा है कि इसके फलस्वरूप हम अपनी मजिल तक और उसी तरह जल्द पहुँच जायेंगे, जिस तरह कर्त्तव्य-पालनके साथ ही हमे तत्सम्बन्धी अधिकार प्राप्त हो जाता है। इस प्रकार लोगोको यह माननेका हक है कि जिन सुधारोके जल्द ही होनेकी आशा आपके भाषण में दिलाई गई है, उनमें काग्रेस और मुस्लिम लीगकी योजनाके मुख्य सिद्धान्तका समावेश होगा। मैं निश्चित रूपसे मानता हूँ कि इस विश्वासके कारण ही सम्मेलनके अधिकांश सदस्य सरकारको पूरे दिलसे सहयोग देनेमे समर्थ हुए हैं।

मैं अपने देशबन्धुओको समझा सकूँ, तो जबतक युद्ध जारी है, तबतक काग्रेसके सारे प्रस्ताव उससे एक ओर रखवा दूँ और 'होमरूल' या 'उत्तरदायी शासन' शब्दोका उच्चारण तक न करने दूँ और साम्राज्यके इस संकटके समय मैं सभी समर्थ भारतीयोको उसकी रक्षार्थ चुपचाप कुरबान हो जानेको प्रेरित करूँ। मैं जानता हूँ कि इतना करने पर हम साम्राज्यके सबसे बडे और आदरणीय साथी बन जाते है और जातीय भेदभाव तो नष्ट हो ही जायेगा। किन्तु हिन्दुस्तानके लगभग पूरे शिक्षित-वर्गने इससे कम कारगर उपाय काममें लेना तय किया है और अब यह कहना भी सम्भव नही रह गया है कि शिक्षित-वर्गका आम जनतापर कोई असर नही है। मैं जबसे दक्षिण आफ्रिकासे भारत आया हूँ, तभीसे जनताके गहरे सम्पर्कमे आता रहा हूँ और मैं आपको विश्वास दिलाता हूँ कि 'होमरूल' की आकाक्षा जनताके दिलोमे घर कर गई है। काग्रेसके पिछले अधिवेशनमें मैं उपस्थित था और उस प्रस्तावको तैयार करनेमें मैंने भी भाग लिया था, जिसमे कहा गया है कि पार्लियामेंट कानून द्वारा जो समय निश्चित करे, उतने समयके भीतर हिन्दुस्तानको पूरी तरह जिम्मेदार हुकूमत दे देनी चाहिए। मैं स्वीकार करता हूँ कि यह बडा साहस-साध्य कदम है। पर उसके साथ मुझे यह भी साफ महसूस होता है कि भारतीय जनता तबतक सतुष्ट नही हो सकती जबतक उसे इस बातका स्पष्ट झलक न मिल जाये कि 'होमरूल' आ रहा है और बहुत जल्द आ रहा है। हिन्दुस्तानमे ऐसे बहुत हैं, जो यह मानते हैं कि 'होमरूल' लेनेके लिए जितना भी त्याग किया जाये, थोडा है। इसीके साथ वे इतने जाग्रत भी हैं कि जिस साम्राज्यमे वे अपना अन्तिम उद्दिष्ट स्थान प्राप्त करनेकी आशा रखते

१. देखिए अगला शीर्षक।

है, उसके लिए बड़ीसे-बड़ी कुरबानी करनेको उन्हें तैयार रहना चाहिए। इससे यही निष्कर्ष निकलता है कि साम्राज्यपर घिरे हुए खतरेसे उसे मुक्त करनेके लिए हम बिना कुछ कहे-सुने पूरी तरह जुट जायें, तभी हम अपने ध्येय तक जल्दीसे-जल्दी पहुँच सकेंगे। यह सीधा-सादा सत्य स्वीकार न करना राष्ट्रके लिए आत्महत्या करने जैसा होगा। हमें समझना चाहिए कि यदि साम्राज्यको बचानेमें हम अच्छी तरह भाग लेंगे, तो इसीसे हमको 'होमरूल' मिल जायेगा।

इसलिए यह तो मैं स्पष्ट देख सकता हूँ कि साम्राज्यकी रक्षाके लिए जितने भी सैनिक दिये जा सकें, हमें देने चाहिए। पर आर्थिक सहायताके बारेमें मैं ऐसा नहीं कह सकता। मैं लोगोंकी हालत जानता हूँ और इसलिए कह सकता हूँ कि हिन्दुस्तान शाही खजानेको अपनी शक्तिसे कहीं अधिक धन दे चुका है। मुझे निश्चय है कि यह कहते हुए मैं अपने देशबन्धुओंके बड़े बहुमतकी राय ही व्यक्त कर रहा हूँ।

मेरे लिए और मेरा खयाल है कि अन्य बहुतसे लोगोंके लिए सम्मेलनका यही अर्थ है कि हमने एक सर्व-सामान्य उद्देश्यके लिए अपना जीवन अर्पित करनेकी दिशामें एक निश्चित कदम उठाया है। किन्तु हमारी स्थिति विषम है। आज हम साम्राज्यके बराबरके हिस्सेदार नहीं हैं। हमारे बलिदानोंका आधार बेहतर भविष्यकी आशा है। वह आशा कैसी है, यह अगर मैं साफ-साफ असन्दिग्ध भाषामें न बताऊँ तो आपके और अपने देशके प्रति बेवफाई करूँगा। मैं आज सौदा नहीं करना चाहता। लेकिन वह आपको जानना तो चाहिए ही। यदि यह आशा पूरी न हुई, तो साम्राज्य-सम्बन्धी हमारा आज तक का विश्वास एक भ्रम ही सिद्ध होगा।

एक और बात भी मुझे कह देनी चाहिए। आपने हमसे घरेलू झगड़े भूल जानेको कहा है। इसका अर्थ अगर यह हो कि अधिकारियोंके जुल्म और दुष्कृत्य हमें चुपचाप सहन कर लेने चाहिए, तो यह हमारे लिए असम्भव है। मैं हर संगठित अत्याचारका सारी शक्ति लगाकर प्रतिकार करूँगा। इसलिए आपकी अपील तो अधिकारियोंसे होनी चाहिए कि वे किसी भी मनुष्यको न सतायें, लोगोंसे सलाह-मशविरा करके काम करें और लोकमतका उतना आदर करें, जितना आजतक नहीं किया गया है। चम्पारनमें सदियोंसे होनेवाले जुल्मका विरोध करके मैंने ब्रिटिश न्यायकी सर्वोच्चता साबित कर दी है। खेड़ाकी जो प्रजा सरकारको गालियाँ देती थी, वह आज समझ गई है कि जब जनतामें अपने सत्यके लिए कष्ट सहनेकी शक्ति आ जाती है, तब सच्ची सत्ता सरकारकी नहीं, बल्कि जनताकी चलती है। इसीलिए आज उसमें कटुता कम हो गई है। वह कहने लगी है कि जो सरकार अन्यायके विरुद्ध व्यवस्थित एवं सम्मानपूर्ण अवज्ञाको सहन करती है, वह लोकमतकी सर्वथा उपेक्षा करनेवाली नहीं हो सकती। इसलिए मेरा यह विश्वास है कि चम्पारन और खेड़ामें मैंने जो काम किया है, वह इस युद्धमें मेरी सीधी, स्पष्ट और खास सहायता है। इस तरहका अपना काम बन्द करनेके लिए अगर आप कहें तो गोया आप मुझसे मेरी साँस बन्द करनेके लिए कहेंगे। अगर मैं शुद्ध शरीरबलके बजाय आत्मबल यानी प्रेमबलको लोकप्रिय बनानेमें सफल हो जाऊँ, तो मैं जानता हूँ कि हिन्दुस्तानको ऐसा बना सकूँगा, जो सारी दुनियाकी नजर कड़ी हो जानेपर भी उससे लोहा ले सकता है। इसलिए कष्ट सहन करनेके इस सनातन

नियमको मैं अपने जीवनमें गूँथनेके लिए हमेशा अपनी आत्माको कसा करूँगा और इस नियमको स्वीकार करनेके लिए दूसरोको निमन्त्रित करता रहूँगा। दूसरी किसी हलचलमें मैं यदि भाग लेता हूँ तो उसका उद्देश्य भी इसी सनातन नियमकी अद्वितीय श्रेष्ठता साबित करना ही है।

अन्तमें मैं आपसे ब्रिटिश मंत्रिमडलको मुस्लिम राज्योके बारेमें निश्चित आश्वासन देनेकी बात सुझानेकी प्रार्थना करता हूँ। आप जानते ही है कि हर मुसलमान इस विषयमें चिन्तातुर है। मैं एक हिन्दूके नाते उनकी आकाक्षाके प्रति उदासीन नही रह सकता। उनके दुख हमारे होने ही चाहिए। इन मुस्लिम राज्योके हकोकी रक्षा करने, अपने धर्मस्थानो सम्बन्धी उनकी भावनाओका आदर करने और हिन्दुस्तानकी 'होमरूल' सम्बन्धी माँगको समय रहते स्वीकार करनेमे ही साम्राज्यकी सुरक्षा है।

यह मैं इसलिए लिख रहा हूँ कि मैं अंग्रेज जातिसे प्रेम करता हूँ और [साम्राज्यके प्रति] जो वफादारी अंग्रेजोमें हो सकती है, वही वफादारी हरएक हिन्दुस्तानीमें जगाना चाहता हूँ।

आपका आज्ञाकारी सेवक,
मो० क० गांधी

[अंग्रेजीसे]

नेशनल आर्काइव्ज ऑफ इंडिया: होम, वार (डिपॉजिट) अक्तूबर १९१८, संख्या २६

२५७. पत्र: जे० एल० मैफीको

नडियाद
अप्रैल ३०, १९१८

प्रिय श्री मैफी,

मैंने कलके[1] सम्मेलनमें जो घोषणा की है उसके अनुसार मैं सादर निवेदन करना चाहता हूँ कि मैं अपनी सेवाएँ अधिकारियोको अर्पित करता हूँ, और वे जिस तरह भी उनका उपयोग करना चाहे, कर सकते है। हाँ, इतना अवश्य है कि मैं व्यक्तिश किसीको भी — चाहे वह शत्रु हो या मित्र — न तो चोट पहुँचाऊँगा और न किसीकी हत्या करूँगा।

किन्तु यदि मैं बता दूँ कि मेरे विचारसे मेरी सेवाओका सर्वोत्तम उपयोग किस प्रकार किया जा सकता है, तो अच्छा होगा।

सर्वप्रथम तो मेरे कार्यको प्रभावकारी बनानेके लिए यह आवश्यक है कि मुझे छिंदवाडा जाकर अली भाइयोसे मिलनेकी अनुमति दी जाये। मैं उनसे परामर्श करके सम्मेलनके उद्देश्योके सम्बन्धमे उनके विचार जानना चाहूँगा। मुझे इसमे कोई सन्देह

१. २८ अप्रैल, जान पड़ता है पत्र २९ अप्रैलको लिखा गया था।

नहीं है कि वे सहयोगका अनुमोदन करेंगे। यदि सरकार, मैंने प्रारम्भमें जो प्रार्थनाकी थी, उसे स्वीकार करे, तब तो वह अली भाइयोंको — युद्धकी दृष्टिसे उठाये गये कदमके रूपमें ही नहीं — रिहा करके तुरन्त हिन्दू-मुसलमान, दोनोंको तुष्ट कर दे सकती है। यह कार्रवाई सम्मेलनके उद्देश्योंके लिए बहुत सहायक सिद्ध होगी। लेकिन फिलहाल तो मैं उनसे मिलनेकी अनुमति पाकर ही सन्तुष्ट हो जाऊँगा। मेरा कहना केवल यह है कि उनको रिहा करना युद्धकी दृष्टिसे अपेक्षाकृत अधिक प्रभावकारी कार्य होगा। अलबत्ता, व्यक्तिगत तो मैं उनकी रिहाईका आग्रह करनेका अधिकार सुरक्षित रखूँगा ही।

दूसरी बात यह है कि मैं खेड़ाके झगड़ेके बारेमें राहत चाहता हूँ। यदि राहत दे दी गई तो अभी मैं जिस कार्यमें व्यस्त हूँ, उससे मुझे फुरसत मिल जायेगी। अन्यथा इस कार्यसे बिलकुल अलग होना मेरे लिए मुश्किल होगा। लेकिन अगर मुझे उससे फुरसत मिल गई तो मैं युद्धके उद्देश्योंके लिए अपने खेड़ा जिलेके साथी कार्यकर्त्ताओंकी भी मदद ले सकूँगा, और उस जिलेमें मेरे लिए रंगरूट भरती करना भी सम्भव हो सकता है। वहाँकी समस्या तो बिलकुल आसान है। मैंने यह सुझाव दिया है कि इस सालके लिए लगान — जिसकी बकाया रकम अब शायद चार लाखसे कम रह गई है — मुलतवी कर दिया जाये, लेकिन इस उपबन्धके साथ कि जो लोग लगान अदा कर सकते हैं, वे अपने ईमानके अनुरोधपर उसे स्वेच्छापूर्वक अदा कर दें। यह तो मैंने पहले ही कह दिया है कि मैं पूरा प्रयत्न करूँगा कि समर्थ किसान अपना लगान चुका दें। यदि यह प्रस्ताव अस्वीकार्य हो तो मैंने अधिकारियों तथा किसानोंके बीचके मतभेदोंकी जाँच करनेके लिए एक निष्पक्ष जाँच-समिति नियुक्त करनेका भी सुझाव दिया है। मेरा निवेदन है कि इस मामलेमें भी युद्ध-स्तरीय उपायके रूपमें ही कार्रवाई की जाये। समिति नियुक्त कर देनेसे राहतके नजीर समझे जानेका भय जाता रहेगा।

कृपया यह समझ लें कि मेरा प्रस्ताव दोनोंमें से किसी भी मामलेमें राहतकी शर्त पर आधारित नहीं है। मैं केवल एक समान उद्देश्यके हितकी दृष्टिसे उक्त दो मामलोंमें राहतकी माँग करता हूँ।

जहाँतक मेरे कार्यकी बात है, मैं फिलहाल तो यह चाहूँगा कि देशका दौरा करके लोगोंको अपनी सेवाएँ प्रदान करनेकी वांछनीयता बताऊँ तथा यह जानकारी प्राप्त करूँ कि सफलताकी क्या सम्भावनाएँ हैं। और यदि मुझे यह काम करना है तो जिन क्षेत्रोंमें विशेषज्ञोंके विचारमें काम किया जाना चाहिए उनके बारेमें मैं विस्तृत जानकारी चाहूँगा तथा कामके स्वरूपके सम्बन्धमें भी कुछ निर्देशोंकी अपेक्षा रखूँगा। इसके अलावा, उनकी समझमें मेरे लिए यदि कोई और जानकारी रखनी आवश्यक हो तो उसे भी प्राप्त करना चाहूँगा।

यदि यह वांछनीय हो कि मैं इस सिलसिलेमें व्यक्तिगत रूपसे किसी अधिकारीसे मुलाकात करूँ या आपसे ही मिलूँ तो मैं शिमला आनेको तैयार हूँ। आप ४ मईके बाद मुझे जब भी बुलाना चाहेंगे, मैं तुरन्त आ जाऊँगा। मेरा पता नडियाद होगा।

मैं समझता हूँ, मुझे अपने पिछले कार्योंके बारेमें आपको कुछ बता ही देना चाहिए। मैं बोअर युद्धमें १,१०० व्यक्तियोंके भारतीय डोली-वाहक दलका मुखिया था और कॉलेंजो,

स्पिऑनकॉप, वॉलक्राँजके[1] युद्धोमें व्यक्तिश. उपस्थित था। जनरल बुलरके खरीतोमें[2] मेरा विशेष उल्लेख किया गया था। १९०६ के जूलू विद्रोहमे भी मैं इसी तरहके ९० भारतीयोके एक दलका मुखिया था,[3] और उस समयकी नेटाल सरकारने मुझे विशेष रूपसे धन्यवाद दिया था। और अन्तमे मैंने वर्तमान युद्धके प्रारम्भ होते ही लन्दनमें करीब १०० छात्रोका एक डोली-वाहक दल खडा किया था, और मुझे १९१५ में केवल इसलिए भारत लौट जाना पडा कि मैं प्लूरिसीके भयानक आक्रमणसे पीड़ित था। यह बीमारी मुझे आवश्यक प्रशिक्षण प्राप्त करते समय हो गई थी।[4] पुन स्वस्थ होनेपर मैंने लॉर्ड हार्डिगको अपनी सेवाएँ प्रस्तुत की। किन्तु उस समय यह अनुभव किया गया कि मुझे मेसोपोटामिया या फ्रास नही भेजा जाना चाहिए, बल्कि भारतमे ही रहना चाहिए। यहाँ मै इस बातकी चर्चा नहीं करता कि अपना यह प्रस्ताव मैं प्रान्तीय अधिकारियोंके सामने भी बार-बार रख चुका हूँ।

हृदयसे आपका,
मो० क० गांधी

[अग्रेजीसे]

नेशनल आर्काइव्ज ऑफ इडिया : होम, वार (डिपॉजिट): अक्तूबर १९१८, संख्या २६

२५८. पत्र : जे० एल० मैफीको

नडियाद
अप्रैल ३०, १९१८

प्रिय श्री मैफी,

मैं चाहता हूँ कि कृपया वाइसरायको मेरा पत्र आप पढकर सुना दे और मुझे नडियादके पतेपर तार दे कि उस पत्रको प्रकाशित करनेमें क्या उनको कोई आपत्ति है ?[5] उसका उद्देश्य बुराईकी शक्तियोका प्रतिकार करना है। मेरी स्थितिका स्पष्टीकरण चाहनेवालोने मुझपर प्रश्नोकी झड़ी लगा दी है। लोग कुछ साफ नही समझ पा रहे हैं। अफवाह जितनी शरारत कर सकती है, कर रही है। मैं उसका असर दूर करना चाहता हूँ। मुझमे जो उतावली दिखती है, उसके लिए आप मुझे क्षमा करे।

दूसरे सह-पत्रमें[6] मेरी सेवाएँ देनेकी बात है। आप उसका जो उपयोग चाहे कर

१. देखिए खण्ड ३, पृष्ठ १४७, १५९-६०।
२. देखिए खण्ड ३, पृष्ठ २३३।
३. भारतीय डोली-वाहक दल, देखिए खण्ड ५, पृष्ठ ३७८-७९।
४. देखिए खण्ड १२, पृष्ठ ५२७-३३ और ५४९-५०।
५. मैफीने २ मईको गांधीजीको तार दिया था: "पत्रके प्रकाशनके सम्बन्धमें आप अपने विवेकके अनुसार निर्णय कर सकते हैं। प्रकाशनके लिए अनुमतिकी प्राप्तिका उल्लेख न किया जाये।"
६. देखिए पिछला शीर्षक।

लीजिए। मेरी बड़ी इच्छा है कि ऐसा कुछ करूँ जिसे लॉर्ड चैम्सफोर्ड युद्ध-सम्बन्धी वास्तविक कार्य मानें। मैं सोचता हूँ कि आप मुझे अपना मुख्य भरती-अफसर बना दें, तो मैं आपपर भरती होनेवालोंकी वर्षा कर दूं। मेरी इस धृष्टताके लिए क्षमा कीजिए।

कल वाइसराय बहुत थके हुए थे। तब भी वे भाषणोंको बड़े ध्यानसे सुन रहे थ, और यह देखकर मैं उनके प्रति गहरी सहानुभूतिका अनुभव कर रहा था। उनपर और उनके वफादार निष्ठावान् सचिव, आपपर ईश्वरकी कृपा रहे, वह आप दोनोंकी रक्षा करे। मेरा खयाल है कि आप उनके लिए सचिवसे कुछ अधिक ही हैं।

हृदयसे आपका,
मो० क० गांधी

पुनश्च — सेंट स्टीफेन्स कॉलेजके रेवरेंड श्री आयरलेंडने इस पत्रको आप तक पहुँचाना स्वीकार करनेकी कृपा की है।

मो० क० गांधी

[अंग्रेजीसे]

नेशनल आर्काइव्ज ऑफ इंडिया होम, वार (डिपॉजिट) अक्तूबर १९१८, संख्या २६

२५९. पत्र : सर विलियम विन्सेंटको

[नडियाद]
अप्रैल ३०, १९१८

प्रिय सर विलियम विन्सेंट,

रविवारको मैंने आपको परेशान किया। किन्तु मैं आपके उसी उद्देश्यको आगे बढ़ानेके लिए आपके पास आया था, जिसमें आप अपने-आपको खपा रहे हैं। मुझे आपसे इतना ही कहना था कि अली भाइयोंके छुटकारेसे फौजी भरतीके काममें बड़ी तेजी आ जायेगी। अगर मैं ऐसा न मानता होता, तो यह आशा रखना कि आप अपने समयमें से मुझे एक भी मिनट दें, मेरे लिए पापपूर्ण होता।

आपने मुझसे पूछा था कि क्या मैंने सरकारको एक भी रंगरूट भरती करके दिया? मैं कहना चाहता हूँ कि यह सवाल उचित नहीं था। ऐसा भी हो सकता है कि कोई व्यक्ति एक भी रंगरूट न लाये पर साम्राज्यकी सच्ची सेवा करता रहे।

मैं आशा रखता हूँ कि आप इस पत्रसे नाराज नहीं होंगे, किन्तु जिस मुलाकातको आपने जल्दीमें गलत समझ लिया, उसकी ईमानदाराना सफाईके तौरपर आप इसे स्वीकार करेंगे।

[हृदयसे आपका,]

[अंग्रेजीसे]

महादेव देसाईकी हस्तलिखित डायरीसे।
सौजन्य नारायण देसाई

२६०. पत्र: रवीन्द्रनाथ ठाकुरको[1]

दिल्ली
अप्रैल ३०, [१९१८]

प्रिय गुरुदेव,

मैं चाहता था कि श्री एन्ड्रयूजको और थोडे समय अपने साथ रखता, फिर भी मुझे सदेह नही कि उन्हे आज रातको कलकत्तेके लिए रवाना हो जाना चाहिए। मै जानता हूँ कि आजकल आपका स्वास्थ्य अच्छा नही रहता। और आप चाहते है कि ऐसे समय आपके पास एन्ड्रयूज मौजूद रहें; इससे आपको शान्ति मिलेगी। आपको जबतक जरूरत हो, उन्हे अपने पास ही रखिये। हम इस समय देशमें एक महान् परिवर्तनके द्वारपर खडे है। मैं चाहता हूँ कि देशके नवजन्मकी इस घटनाके मौकेपर सारी शुद्ध शक्तियाँ सशरीर देशमे ही मौजूद रहें। इसलिए आपको देशमें ही किसी जगह आराम मिल सकता हो, तो मैं आपसे और श्री एन्ड्रयूजसे प्रार्थना करूँगा कि अभी आप देशमें ही रहिये और समय-समय पर एन्ड्रयूजको मेरे पास भेजते रहियेगा। कभी-कभी उनका मार्गदर्शन मेरे लिए वडा कामका सावित होता है।

श्री अम्बालालने मुझसे आपको यह कहनेके लिए कहा है कि उन्हे आपको और आपके अन्य साथियोको अपने माथेरानवाले बँगलेमे अपने आदरणीय अतिथियोके रूपमें ठहरानेमें बहुत खुशी होगी। वहाँ प्रवासका मौसम जूनके मध्य तक रहता है। श्री अम्बालाल, यदि आपकी वैसी इच्छा हो तो, ऊटीमें भी आपके निवासका प्रवन्ध करनेके लिए तैयार हैं। मेरा खयाल है कि ज्यादा अच्छा यह होगा कि फिलहाल आप माथेरान आकर रहे और गरमीका वाकी मौसम ऊटीमें बितानेके सवालपर उसके वाद निर्णय करे।

मुझे आशा और विश्वास है कि आप अपनी मौजूदा मानसिक श्रान्तिसे शीघ्र ही मुक्त होकर पुन. पूर्ण स्वास्थ्य लाभ करेगे।

हृदयसे आपका,
मो० क० गांधी

गाधीजीके स्वाक्षरोमें मूल अग्रेजी पत्र (जी० एन० २२९१)

१. गाधीजीने यह सुनकर कि दोनों विदेश-यात्रापर जानेवाले है, यह पत्र एन्ड्रयूजके हाथों रवीन्द्रनाथ ठाकुरके पास भेजा था।

२६१. पत्र : मगनलाल गांधीको

नडियाद
[अप्रैल-मई, १९१८]

चि० मगनलाल,

लीमडीका पत्र अच्छा है। मेरी सलाह है कि तुम स्वयं लीमडी जाओ और वहाँ काम निपटानेके बाद किसी दूसरेको रखनेकी जरूरत जान पड़े तो रखो। मुझे निश्चय हो गया है कि तुम्हें अब बाहर निकलना ही चाहिए। अगर लीमडीसे तुम दो-एक दिनके लिए आश्रम हो आना चाहो तो वैसा भी कर सकते हो। यदि अन्तमें मामाको लीमडी भेजना आवश्यक लगा तो उन्हें वहाँ भेज दिया जायेगा। एक महीनेमें सब-कुछ नहीं सिखाया जा सकता यह बात तुम वहाँ जाकर ही बता सकोगे या समझा सकोगे। मैं [तुम्हें] शिवलालको अधिक वेतन देकर भी बुलानेकी सलाह देता हूँ। तुम जब लीमडी जाओ तब बढवानमें उसके पितासे बातचीत करके उनका मन शान्त कर सकते हो। उन्हें समझाना कि आश्रम सबको बाबाजी बनानेके लिए नहीं है। आश्रममें रहकर जो लोग धनोपार्जन कर रहे हैं उनके नाम आदि देना। शिवलालके आनेसे तुम वहाँसे पूर्णतया मुक्त हो सकोगे। मेरी इच्छा तो यह है कि चाहे जितनी कठिनाई क्यों न उठानी पड़े तुम्हें लीमडी जाना ही चाहिए। लीमडी यदि तुम बा को साथ ले जाओ, तो अच्छा हो। वह तुम्हें खाना खिलायेगी और वहाँ की स्त्रियोंमें थोड़ा-बहुत काम भी करेगी। सन्तोकसे तो अभी नहीं ही आया जा सकता। वह तो फिलहाल हिसाब रखेगी और लड़कियोंकी देखभाल करेगी। अनसूयाबहनको अगर चर्खा अभीतक न भेजा हो तो भेज देना। हम आश्रममें चर्खा चलाना शुरू कर दें तो अच्छा हो। यह तुम्हारे बीजापुरसे लौट आनेके [और वहाँकी सब व्यवस्था देख आनेके] पश्चात् ही सम्भव हो सकता है। क्या आदरणीय खुशालभाईका स्वास्थ्य ऐसा है कि वे हमारे किसी काममें हाथ बँटा सकें? उनकी मनोवृत्ति इस ओर है? देव भाभीको भी [हमारे काममें योग देनेके लिए] प्रेरित करना।

बापूके आशीर्वाद

गांधीजीके स्वाक्षरोंमें मूल गुजराती पत्र (सी० डब्ल्यू० ५७२९) से।
सौजन्य : राधाबेन चौधरी

२६२. पत्र : हरिलाल गांधीको

[गाडीमें]
मई १, १९१८

[चि० हरिलाल,]

तुम्हारा पत्र मुझे दिल्लीमें मिला था। तुम्हे क्या लिखूं? सब लोग अपने-अपने स्वभावके अनुसार कार्य करते हैं। स्वभावको जीतनेमें ही पुरुषार्थ है, यही धर्म है। यदि तुम यह पुरुषार्थ करो, तो तुम्हारे दोष भुला दिये जायेंगे। तुम कहते हो कि तुमने चोरी की ही नही; इसलिए मै तो मान लूंगा। परन्तु दुनिया नही मानेगी। दुनियाके ताने सह लेना और आइन्दा सावधान रहना। दुनियाकी राय बदलना। तुम्हारी दुनिया तुम्हारा मालिक है। अदालतमें तुम्हारा न्याय हो, तो उससे डरना मत। मेरी मानो तो वकील न करना। उन्हीके वकीलको सब बातें समझा देना।

तुम्हारे हाथमें हीरा था, लेकिन अपनी स्वभावगत विचारहीनता और अधीरतासे तुम उसे खो बैठे। तुम बच्चे नही हो। तुमने ससारका रस कम नही चखा है। अगर जी भर गया हो, तो पीछे लौट आना। हिम्मत न हारना। तुम सच्चे हो, तो सत्य पर से विश्वास न छोड़ना। सत्य ही परमेश्वर है। गुण जड नही, चेतन हैं। तुम्हारा जीवन विचारहीन और असंयत रहा है। मै चाहता हूँ कि अब तुम उसे विचारमय और संयममय बनाओ।

दिल्लीमें मेरे हाथों सहज ही एक बडा भारी काम[1] हो गया। उसका कुछ वर्णन तुम अखबारोमें पढोगे। मेरे पास लिखनेका समय नही है। फुरसत निकालकर भाई महादेव तुम्हे लिखेंगे। वह सब उन्होने देखा है। उन्होंने तुम्हारी कमी तो पूरी कर दी, किन्तु यह ममता अभीतक दिलसे नही जा रही है कि उनके स्थानपर तुम होते, तो कितना अच्छा होता। अगर मेरे दूसरे लड़के न होते, तो सूखकर मर जाता। लेकिन जो हो गये है, उन्हे हटाये बिना तुम्हे जिस समय ज्ञानपूर्वक पुत्र बनना हो, तुम्हारा स्थान बना ही हुआ है।

बापूके आशीर्वाद

[गुजरातीसे]
महादेवभाईनी डायरी, खण्ड ४

१. स्पष्टतः यह उल्लेख उनके युद्ध-सम्मेलनमें भाग लेनेका है।

२६३. वी० एस० श्रीनिवास शास्त्रीको लिखे पत्रका अंश

[बम्बई
मई ३, १९१८]

आपकी 'ना' का मेरे मनमें सच्चा मूल्य था। सबकी 'हां' की कोई कीमत न थी।[1]

[अंग्रेजीसे]

महादेव देसाईकी हस्तलिखित डायरीसे।

सौजन्य : नारायण देसाई

२६४. भाषण : अछूत परिषद्में[2]

बीजापुर
मई ५, १९१८

गांधीजीसे एक प्रस्ताव पेश करनेको कहा गया जिसमें कांग्रेस-लीग योजनाका समर्थन किया गया था और यह सिफारिश की गयी थी कि सरकार अछूतोंका भी स्थान स्वीकार करे। प्रस्ताव पेश करनेसे पहले सभाकी ओर दृष्टिपात करते हुए उन्होंने दो बार पूछा :

इस सभामें अछूत कितने हैं?

एक भी नहीं है, यह जानकर उन्होंने हिन्दीमें कहा :

तो बारह-बारह बजे तक हम यहां क्या करते हैं? जैसे तोता 'नारायण', 'नारायण' रटता है, वैसी ही स्थिति हमारी है। मैं भाई शिन्देसे[3] कहता हूँ कि वे ऐसी परिषदें करना छोड़ दें और किसी ठोस काममें ही लगे रहें। अस्पृश्यताके पापसे मुक्ति हृदय-शुद्धिसे ही मिल सकती है। हमारा काम हार्दिक भावनासे ही हो सकता है, कृत्रिमतासे नहीं। हम अस्पृश्यता-निवारणके लिए बहुत प्रस्ताव पास करते हैं, किन्तु उनका कोई परिणाम नहीं होता। प्रस्ताव सर्वसम्मतिसे पास न हो सके, इसलिए एक सज्जनने कहा कि यह परिषद् अव्यावहारिक है। मैं भी कहता हूँ कि यह परिषद् अव्यावहारिक है।

१. श्री शास्त्रीने बम्बईकी एक सभामें खेड़ा सत्याग्रहसे सम्बन्धित प्रस्ताव पेश करनेके विरुद्ध एक आपत्ति उठाई थी, वह यह कि प्रस्ताव पेश करनेके लिए अपेक्षित सात दिनकी सूचना नहीं दी गई थी। गांधीजी प्रस्ताव वापस लेनेके लिए सहमत हो गये। श्री शास्त्रीके अतिरिक्त, अन्य सभी प्रस्ताव वापस लेनेके विरुद्ध थे, लेकिन शास्त्रीने खेद प्रकट किया कि वे उससे सहमत नहीं हो सकते। प्रस्ताव वापस ले लिया गया था।

२. यह द्वितीय दलित वर्ग मिशन सम्मेलन था। इसकी अध्यक्षता बी० एस० कामतने की थी।

३. वी० आर० शिन्दे।

जब मैंने कांग्रेस-लीग योजनाकी मंजूरीका प्रस्ताव पढ़कर सुनाया, तब मेरी यह धारणा थी कि उसका समर्थन कोई अछूत करेगा। किन्तु यहाँ अछूत तो कोई है ही नहीं। तब इस प्रस्तावको पास करनेसे क्या फायदा? इस प्रस्तावका मॉण्टेग्यु पर क्या असर होगा? मैं इस प्रस्तावको पेश नहीं कर सकता। हमें यहाँ इस प्रस्तावको पास करनेका तनिक भी अधिकार नहीं है, इसलिए हम यहाँ यह प्रस्ताव नहीं रख सकते। हम अपनी कृत्रिमता छोड़कर सरल बन जायें, यही काफी है। हम वर्णाश्रम धर्मका पालन नहीं करते। ब्राह्मणोंने ब्राह्मणका धर्म छोड़ दिया है, क्षत्रियने क्षत्रियका धर्म त्याग दिया है, वैश्योंने वैश्य-धर्मको तिलांजलि दे दी है, और जो चीज हमारे धर्ममें नहीं है, उसे हम पकड़े हुए हैं। हम स्वराज्यके योग्य नहीं हैं।

जो स्वराज्य माँगते हैं, वे अछूतोंके लिए क्या करेंगे, यह सवाल हमसे लॉर्ड सिडनहम जैसे भाई जरूर पूछेंगे और उसका उत्तर देते समय हमें शर्मिन्दा होना पड़ेगा। जो स्वराज्य माँग रहा हो, उसे दूसरोंको स्वराज्य देना चाहिए। जो न्याय माँगता है, उसे न्याय देना चाहिए, यह कानूनका सूत्र है। मैं आप सबसे कहता हूँ कि आप इस खेलको छोड़कर इस मध्यरात्रिमें सच्चे हृदयसे प्रार्थना कर लीजिए, जिससे हमारे पाप और हमारी कठोरता नष्ट हो जाये।

[गुजरातीसे]

महादेवभाईनी डायरी, खण्ड ४

२६५. खेड़ा-संकटपर सरकारी प्रेस-विज्ञप्तिका उत्तर[1]

[अहमदाबाद]
मई ६, १९१८

खेडा-संकटपर जारी की गई सरकारी प्रेस-विज्ञप्ति,[2] उसमें जो-कुछ नहीं कहा गया है उस दृष्टिसे भी और जो-कुछ कहा गया उस दृष्टिसे भी, अत्यन्त दोषपूर्ण है। सर्वश्री पारेख और पटेल द्वारा की गयी जाँचसे सम्बन्धित अनुच्छेदके विषयमें मैं इतना ही कहना चाहता हूँ कि परमश्रेष्ठ गवर्नर महोदयसे मुलाकातके समय कमिश्नरने उनके वक्तव्योंकी सचाईमें सन्देह प्रकट किया। इसपर मैंने तुरन्त एक जाँच-समितिकी नियुक्तिका सुझाव पेश कर दिया। सचमुच, सरकारके लिए इससे उचित और कोई चीज हो ही नहीं सकती थी। यदि उसने ऐसा कर दिया होता तो काश्तकारोंको उनके दुधारू पशुओं और गहना-गाँठोंसे वंचित करने तथा उनपर कुर्की-जब्तीके आदेश जारी करने-जैसी अशोभन कानूनी कार्रवाइयोंकी नौबत न आती। किन्तु, जैसा कि प्रेस-विज्ञप्तिमें कहा गया है, इसके बदले उसने एक "बहुत ही अनुभवी" कलक्टर नियुक्त कर दिया। बेचारा कलक्टर कर ही क्या सकता था? आज तो अच्छेसे-अच्छे अधिकारियोंको भी एक दूषित

१. इस वक्तव्यका सारांश **न्यू इंडिया**के ६ मईके अंकमें प्रकाशित हो चुका था।
२. यह विज्ञप्ति २५ अप्रैलको जारी की गई थी।

व्यवस्थाके अधीन काम करना पड़ता है। उन्हें एक ऐसे राजकीय सेवा-विभागकी परम्पराओंका निर्वाह करना पड़ता है, जिसने अपनी प्रतिष्ठाको अपना दीन और ईमान बना लिया है, जो अपने-आपको भूल करनेकी सम्भावनासे लगभग परे मानता है, और जो शायद ही कभी अपनी भूल स्वीकार करता हो।

जहाँतक श्री देवधर और उनके साथी कार्यकर्त्ताओं द्वारा की गई जाँचकी बात है, प्रेस-विज्ञप्ति पढ़नेसे पाठकोंके मनपर यही छाप पड़ती है कि कमिश्नरने उनके सुझावोंपर ध्यान दिया है। किन्तु, सचाई यह है कि मुलाकातके दौरान, मेरे सामने ही, उन्होंने उनके द्वारा पेश की गई रिपोर्टकी सचाईमें सन्देह प्रकट किया था, और स्पष्ट शब्दोंमें कहा था कि वे जो राहत दे रहे हैं, वह रिपोर्टके कारण नहीं, क्योंकि रिपोर्टके विषयमें सार-रूपमें उनका कहना यह था कि जहाँतक उसमें नई बातें कही गई हैं, वे सत्य नहीं है और जहाँतक उसमें सच्ची बातें कही गई हैं, वे नई नहीं है।

मातर ताल्लुकेकी विपत्तिका पूरा हाल बताकर मैं लोगोंको उबाना नहीं चाहता। इस ताल्लुकेके कुछ गाँवोंमें, जहाँ सिंचाई-नहरोंका भी प्रकोप हुआ है, लोगोंको दुहरी शिकायत है (१) अतिवृष्टिके कारण फसलोंका आम तौरपर खराब होना, और (२) नहरोंमें बाढ़ आ जानेसे फसलोंकी पूरी बरबादी। दूसरे मामलेमें तो वे पूरी छूटके हकदार हैं। किन्तु, जहाँतक मुझे मालूम है, ऐसे बहुत-से मामलोंमें यह छूट नहीं दी गई है।

यह कहना सही नहीं है कि भारत सेवक समाज [सर्वेंट्स ऑफ इंडिया सोसाइटी]ने ठसरा ताल्लुकेमें जाँचका काम इसलिए बन्द कर दिया कि वहाँ जाँचके लिए कोई मामला ही नहीं था। सचाई यह है कि उसने यह काम अनावश्यक समझा, क्योंकि मैंने लगभग प्रत्येक गाँवमें फसलोंकी जाँच करना तय कर लिया था। यही बात उसकी रिपोर्टमें भी कही गई है।

प्रेस-विज्ञप्तिमें मेरे जाँचके तरीकेको 'अव्यवहार्य' कहकर न्याय नहीं किया गया है। मैं अपने इस मतपर अब भी दृढ़ हूँ कि यदि काश्तकारोंकी बातोंपर भरोसा किया जा सकता है तो मेरे तरीकेसे जाँच करने पर जो भी निष्कर्ष निकलेंगे, सर्वथा विश्वसनीय ही होंगे। अपनी फसलोंकी उपजके बारेमें स्वयं काश्तकारसे अधिक जानकारी और किसे हो सकती है? मैं यह माननेको तैयार नहीं हूँ कि लाखों व्यक्ति मिल-जुलकर झूठ बोलनेके लिए साजिश करेंगे, जब कि उन्हें उससे किसी बड़े लाभकी आशा भी न हो और कष्ट उठाना निश्चित हो। और यह तो असम्भव ही है कि हजारों लोग दस फसलों की भी — वास्तविक और अनुमानित — उपजके बारेमें आँकड़ोंको इस प्रकार रट रखें जिससे प्रत्येक मामलेमें कुल उपजके योगको देखनेपर यह परिणाम निकले कि फसल चार आनेसे कम हुई। मैं विश्वासपूर्वक कह सकता हूँ कि मेरा तरीका ही ऐसा है, जिसमें धोखा-धड़ीकी कोई गुंजाइश नहीं रह जाती। इसके अतिरिक्त मैंने खरीफ और रबी दोनों फसलोंकी सरकारी 'आनावारी'को चुनौती दी थी। और जब मैंने ऐसा किया था, तब रबीकी फसल खेतोंमें ही खड़ी थी। अतः मैंने यह सुझाव दिया था कि अधिकारीगण इन फसलोंको अपने सामने कटवाकर उनकी उपजकी जाँच करके सही आनावारी मालूम कर सकते हैं। यह सुझाव मैंने विशेष रूपसे वडथलके बारेमें दिया था। मेरा कहना यह

था कि यदि इन रबी फसलोके बारेमे काश्तकारोंकी आनावारी सही और सरकारी आनावारी गलत पाई जाती है तो यह निष्कर्ष अनुचित न होगा कि खरीफकी फसलोके बारेमे भी काश्तकारोका अनुमान सही है। मगर मेरा सुझाव स्वीकार नही किया गया। इतना और बता दूं कि मैंने यह अनुरोध भी किया था कि जब कलक्टर साहब वडथल जायें उस समय मुझे भी वहाँ उपस्थित रहनेकी अनुमति दी जाये। बात यह थी कि वड्थलको कसौटीके गाँवके रूपमे चुना गया था। किन्तु मेरा यह अनुरोध भी अस्वीकार कर दिया गया।

यह विज्ञप्ति इस मानेमे भ्रामक है कि इसमे कहा गया है, मैंने जो आनावारी निकाली, उसमे रबीकी फसलो या रुईकी फसलका विचार नही किया। वास्तवमे मैंने हिसाब करते हुए इन फसलोका विचार भी किया है। मैंने सिर्फ सरकारी पद्धतिके युक्तियुक्त होनेमे शका की है। कारण स्पष्ट है। यदि एक हजारकी आबादीमें से केवल दो सौ लोग ही रबीकी फसले उपजाते हैं तो उनके आधारपर रबीकी फसले न उपजानेके कारण जिन शेष आठ सौ लोगोकी फसले चार आने या चार आनेसे कम पैदावार दिखाती है उनकी आनावारी बढ़ा देना उनके प्रति घोर अन्याय होगा।

लिम्बासीकी फसलोपर लिखे गये अनुच्छेदमे तो इतनी ज्यादा गलतबयानियाँ है कि उन्हे देखकर मै हैरतमें पड़ गया हूँ। अव्वल तो जब सरकारी जाँच की जा रही थी उस समय मैं वहाँ मौजूद नही था, और दूसरे जिस गेहूँकी कीमत १३,४४५ रुपये आँकी गयी है, उसमे पडौसके दो गाँवोका गेहूँ भी शामिल था। लिहाजा जिन फसलोकी कीमत १३,४४५ रुपये आँकी गई उनपर तीन जमाबन्दियोकी अदायगी करनी थी। और फिर अठारह सौकी आबादीमें १३,४४५ रुपयेकी बिसात ही क्या है? मै यह माननेके लिए तैयार हूँ कि लिम्बासीके लोगोको चावलकी फसलसे भी उतनी ही रकम प्राप्त हुई। किन्तु यदि एक व्यक्तिके भोजनपर प्रतिवर्ष ४० रुपयेका खर्च माना जाये तो लिम्बासीके लोगोको केवल भोजनके लिए ही हर साल ७२,००० रुपये चाहिए। और जनसाधारणके लिए यह जानना शायद एक दिलचस्प बात होगी कि सरकारी आनावारीके अनुसार केवल लिम्बासीमे पैदा हुए गेहूँकी कीमत ८३,०२१ रुपये होनी चाहिए। यह आँकड़े मुझे कलक्टर साहबके सौजन्यसे प्राप्त हुए है। प्रेस-विज्ञप्ति तैयार करनेमें बरती गई लापरवाहीका अन्दाजा देनेके लिए मै यह भी बता दूं कि, यदि लिम्बासीके लोगोका विश्वास किया जाये तो, जाँचके समय गेहूँकी सारी फसल खलिहानमें ही पडी हुई थी। उनके कथनानुसार उसमे से एक तिहाई दूसरे गाँवोकी थी। तब लिम्बासीका गेहूँ ९,००० रुपयेसे भी कमका ही होगा। सरकारी आनावारी दस आने है। इस प्रकार वास्तविक उपजके हिसाबसे लिम्बासीके गेहूँकी आनावारी सरकारी दस आनेके मुकाबले सिर्फ एक आना थी। इसके अतिरिक्त बीजके लिए भी प्रति बीघा एक मन गेहूँकी जरूरत होती है, और लिम्बासीके काश्तकारोको ११६५ बीघे गेहूँके खेतोपर सिर्फ ३,००० मन (तीन रुपये प्रति मनके हिसाबसे ९,००० रुपयेका) गेहूँ हुआ, अर्थात् गेहूँकी पैदावार बीजसे थोडी ही ज्यादा हुई। और अन्तमें, जब लगानकी वसूलीके लिए फसलको खलिहानोसे हटानेपर रोक लगी हुई थी तभी मैंने कलक्टरके सामने यह सुझाव रखा था कि मै स्वय लिम्बासी जाकर अपनी उपस्थितिमें गेहूँको तुलवा लूँ ताकि किसानोकी

बातोंके सही या गलत होनेका कोई झगडा ही रह जाये। किन्तु, कलक्टरने मेरा सुझाव अस्वीकार कर दिया। इसलिए मेरा विचार है कि काश्तकारोंके आँकड़ोको सही माना जाये।

अब सिर्फ यह दिखानेके लिए कि प्रेस-विज्ञप्ति कितनी ज्यादा भ्रामक है, मैं बता दूं कि गुजरात-सभाने सत्याग्रह करनेकी सलाह देते हुए कोई प्रस्ताव पास नही किया। सभाने किसी जिम्मेदारीसे बचनेके लिए ऐसा किया हो, सो बात नही। किन्तु, मैंने स्वय अनुभव किया कि सत्याग्रहके सम्बन्धमें किसी ऐसी सभामें प्रस्ताव नही पास करना चाहिए कि जिसका सारा कारोबार बहुमतके शासनके सिद्धान्तपर ही चलता हो। इसलिए गुजरात-सभाके प्रस्तावमें प्रत्येक व्यक्तिको अपने मनका मार्ग अपनानेके लिए स्वतन्त्र छोड दिया गया। हाँ, यह सच है कि सभाके अधिकाश सक्रिय सदस्य खेडाकी लडाईमें जुटे हुए है।

मै इस आक्षेपको बिलकुल अस्वीकार करता हूँ कि मैंने लगान देनेके इच्छुक लोगोंको वैसा करनेसे मना किया। प्रेस-विज्ञप्तिमें विभिन्न ताल्लुकोसे की गई वसूलीकी रकमोको दिखाते हुए जो आँकडे दिये गये है, उनसे यदि कोई बात सिद्ध होती है तो यह कि कानूनकी मार उनपर बहुत गहरी पडी है और चौकीदारो तथा पटवारियोका भय उनके लिए बहुत ज्यादा साबित हुआ है। कानूनकी कार्रवाईके अधीन कुर्की और नीलामीके बाद जब सरकार हिसाब बेबाक दिखाती है और किसी तरफ कोई बकाया नही बनाती, तब क्या वह यही कहेगी कि राहत देने अथवा जाँच करनेके लिए कोई मामला ही नही था?

मै मानता हूँ कि लगान मुलतवी करनेकी कोई कानूनी बाध्यता नही है। यदि वह मुलतवी किया जाता है तो एक कृपाके कार्यके रूपमें, और अधिकारपूर्वक कोई उसका दावा नहीं कर सकता। लेकिन तब यह राहत अधिकारियोंकी सनकपर भी आधारित नहीं है। उसका नियमन करनेके लिए समुचित रूपसे निर्धारित नियम हैं, और फिर सरकार यह दावा भी नही करती कि यदि फसले चार आनेसे कम होती तो भी वह माफी नहीं देती। सारे मामलेमें एकमात्र मुद्दा रहा है आनावारी-सम्बन्धी मतभेद। यदि यह सच है कि राहत देनेमें सरकार अन्य परिस्थितियोंका — उदाहरणार्थ, प्रेस-विज्ञप्तिके ही शब्दोंमें, "सामान्य आर्थिक स्थिति" का — भी ध्यान रखती है तो महामारी तथा महँगाईके कारण इस वर्ष लगान मुलतवी कर देना और भी आवश्यक है। कलक्टरने मुझसे स्पष्ट शब्दोंमें कहा कि वे इस अन्तिम बातका कोई खयाल नही कर सकते। वे केवल नियमोंके अधीन वसूली मुलतवी कर सकते हैं, और नियमोंमें तो केवल फसलके आधारपर वसूली मुलतवी करनेकी बात कही गई है।

मेरा खयाल है, अब मैंने एक जाँच-समितिकी आवश्यकता सिद्ध करनेके लिए काफी कुछ बता दिया है, और मेरी नम्र सम्मतिमें यदि एक भी ऐसा काश्तकार पाया जाता है, जिसके नाम बकाया निकले — और वह इसलिए कि उसके पास कुर्कीके लिए कुछ रह नही गया है और उसकी जमीन बेचनेमें स्वय सरकारको भी सकोच हो सकता है — तो एक सिद्धान्तके रूपमें, ऐसी जाँचका प्रबन्ध करवा देना योग्य कार्य होगा। लोगोंने पटवारियो द्वारा दिये गये आँकडोके सही होनेमें सन्देह प्रकट किया है। कई मामलोंमें

तो स्वयं कुछ पटवारी ही आगे आकर यह दिखानेको तैयार हैं कि अधिकारियोंने उनसे उनके द्वारा निकाली गई आनावारी बढ़ानेको कहा। लेकिन, यदि अब जाँचको अनावश्यक समझा जाता है तो सरकार वसूली मुलतवी क्यों नहीं कर देती — विशेषकर अब जब स्पष्टतया बहुत थोड़े लोगोंसे वसूली करना शेष है? और उससे भी बड़ा कारण तो यह है कि यदि वसूली मुलतवी कर दी जाये तो सम्पन्न काश्तकार लगान चुका देनेको तैयार हैं।

स्पष्ट है, कमिश्नरने सिद्धान्तके जिस सवालकी हिमायत की है, सरकार अब उससे पीछे हट गई है।

वाइसरायने आपसी मतभेद भूल जानेका अनुरोध किया है। क्या यह अनुरोध सिर्फ काश्तकारों तक ही सीमित है, या कि अधिकारीगण भी लोगोंकी इच्छाका आदर करके तोषका वातावरण उत्पन्न करेंगे, खासकर जब लोगोंकी यह माँग तनिक भी अनैतिक अथवा अनुचित नहीं है?

यदि कष्टका मतलब भुखमरी है, तो मैं स्वीकार करता हूँ कि खेड़ाके लोग भूखों नहीं मर रहे हैं। लेकिन यदि लगान अदा करनेके लिए या खाद्यान्न खरीदनेके लिए अपना माल-असबाब बेचना कष्टकी निशानी है तो इस जिलेके लोगोंको काफी कष्ट है। मैं यह दिखानेको तैयार हूँ कि सैकड़ों लोगोंने या तो कर्ज लेकर या अपने मवेशी, वृक्ष अथवा अन्य बहुमूल्य सामान बेचकर अपना लगान चुकाया है। फिर भी, प्रेस-विज्ञप्तिमें जो सबसे गम्भीर चूक है वह यह कि जिस तरह प्रतिशोधकी भावनासे प्रेरित होकर लगानकी वसूली की जा रही है, उसका उसमें कोई उल्लेख नहीं है। काश्तकारोंको उनके तथाकथित दुराग्रहके कारण[२] एक सबक सिखाया जा रहा है। चार लाख रुपयेकी वसूलीके लिए उनपर तीन करोड़ रुपयेकी जमीनसे हाथ धो बैठनेका खतरा आन पड़ा है। बहुत-से मामलोंमें लगानके चौथाई हिस्से जितनी रकम जुर्मानेके रूपमें वसूल की गई है। क्या ऊपरकी इस कहानीमें इस शंकाके लिए कोई आधार नहीं है कि अधिकारीगण गलत भी हो सकते हैं?

[अंग्रेजीसे]

न्यू इंडिया, ९–५–१९१८

१. सरकारी विज्ञप्तिमें कहा गया था: "श्री गांधी तथा अन्य लोग निष्पक्ष जांचके लिए आग्रहपूर्वक जो प्रार्थना कर रहे हैं, सरकारको खेदके साथ कहना पड़ता है कि वह उसे स्वीकार नहीं कर सकती। काश्तकार वस्तुतः लगान वसूली स्थगित करने या लगान माफ करनेकी माँग अधिकारपूर्वक नहीं कर सकते; वे सिर्फ रियायतके रूपमें राहत माँग सकते हैं, किन्तु यदि हम यह मान भी लें कि सरकार इस प्रकारकी समिति नियुक्त करनेको तैयार है तो भी यह स्पष्ट है कि इस प्रकारकी जाँच-पड़तालसे कोई लाभ नहीं हो सकता, क्योंकि अन्तिम अधिकार राजस्व विभागके हाथमें ही है।

२. कमिश्नरने चेतावनीके रूपमें जारी की गई अपनी विज्ञप्तिमें कहा था कि "जो लोग दुराग्रह कर रहे हैं, उन्हें भविष्यमें जमीन नहीं दी जायेगी। सरकार अधिकारके दस्तावेजोंमें उनका नाम नहीं रखना चाहती, और जिनके नाम उसमें से निकाल दिये जायेंगे, उनके नाम फिर कभी दर्ज नहीं किये जायेंगे।"

२६६. भाषण: बम्बई प्रान्तीय सम्मेलनमें

[बीजापुर
मई ६, १९१८][1]

बम्बई प्रान्तीय सम्मेलनके दूसरे दिनकी बैठकमें महात्मा गांधीने गिरमिट प्रथापर अपने प्रस्तावके समर्थनमें बड़ा जोरदार भाषण दिया।

श्री गांधीने प्रस्ताव पेश किया कि:

इस सम्मेलनका दृढ़ मत है कि यदि गिरमिट प्रथाकी बुराइयोंको दूर करना है तो मजदूरोंको किसी भी रूपमें भरती करनेकी इस प्रथाको सम्पूर्णतः समाप्त कर देना होगा। यह प्रथा एक प्रकारकी गुलामी है जो मजदूरोंको सामाजिक तथा राजनीतिक दृष्टिसे नीचे गिराती है और इस देशके आर्थिक तथा नैतिक हितोंके मार्गमें बाधक है।

श्री गांधी हिन्दीमें बोले, और उन्होंने गिरमिट प्रथाके इतिहासपर संक्षेपमें प्रकाश डालते हुए उपनिवेशवासी भारतीयोंपर इसके पतनकारी प्रभावकी चर्चा की। उन्होंने यह भी बताया कि इसके चलते भारत और भारतीय यूरोपीयोंकी नजरोंमें किस प्रकार गिर गये हैं। इस सवालपर आन्तर्-विभागीय समितिकी सिफारिशोंकी आलोचना करते हुए उन्होंने जोरदार ढंगसे कहा कि इस प्रथाको सदाके लिए समाप्त कर देना चाहिए, और ऐसा करते हुए किसी प्रकारकी कसर-मुरौवत न की जाये।

[अंग्रेजीसे]
यंग इंडिया, ८-५-१९१८

२६७. भाषण: अन्त्यज सम्मेलनमें

बीजापुर
मई ६, १९१८

मैंने एक गम्भीर भूल की है। एक मित्रने आकर मुझसे कहा कि बीजापुरमें दो दल हैं और मैं व्यर्थ ही यहाँ गड़बड़ पैदा कर रहा हूँ। मुझे सही हालतका पता नहीं था। यहाँ मैं फूटके बीज बोने और दोनों पक्षोंकी भावनाओंको भड़काने नहीं आया।

लोकमान्य तिलकको मुझे और आपको रास्ता दिखानेके लिए यहाँ आना चाहिए था। राजनीतिके क्षेत्रमें तो मैं तीन वर्षके बच्चेके समान हूँ। मुझे तो अभी सब-कुछ देखना, सोचना और सीखना है। इसलिए मैंने कोई विक्षोभ पैदा किया हो, तो उसके लिए मैं आपसे माफी माँगता हूँ। सार्वजनिक सभाओंमें मनुष्य अपने विचार खुले दिलसे

१. बॉम्बे सीक्रेट एब्स्ट्रैक्ट्सके अनुसार सम्मेलनका अधिवेशन बीजापुरमें ५ मईसे ८ मई तक चला। अध्यक्षता विट्ठलभाई पटेलने की।

प्रकट करे, तो उसपर अशान्ति पैदा करनेकी मंशाका आरोप नही लगाया जा सकता। मैंने जो कार्यक्रम बना रखा है, मेरा इरादा उसे अमली रूप देनेका है। इसलिए भारतके विभिन्न भागोमें व्याप्त भावनाओको जाननेकी मुझे कोई जरूरत नही है। किन्तु आप सब यहाँ पूर्व-निर्धारित विचार लेकर आये है, इसलिए मै यहाँ अपनी स्थितिकी चर्चा नही कर सकता। मैं आपके साथ विचारोका आदान-प्रदान करना, आपकी भावनाओको और आपके निर्णयके पीछे जो कारण हैं उन्हे समझना तथा आपके मनकी तहमे उतरना चाहूँगा। लेकिन इसके लिए जब वातावरण और शान्त होगा, तभी आऊँगा। और जब हम प्रस्तावोसे बँध नही गये होगे, तब आपके हृदय चुरानेकी कोशिश करूँगा। मेरे खयालसे श्री केलकरने बिलकुल सही बात कही है। इस मजिलपर तो हमें कांग्रेस-समितिका प्रस्ताव अवश्य स्वीकार कर लेना चाहिए।

[अंग्रेजीसे]

महादेव देसाईकी हस्तलिखित डायरीसे।
सौजन्य : नारायण देसाई

२६८. पत्र : महादेव देसाईको[1]

[नडियाद]
मई ९, १९१८

भाईश्री महादेव,

जो बात मैंने तुमपर अपना अत्यन्त विश्वास होनेके कारण कही थी, मुझे सपनेमें भी खयाल न था कि तुम उसका उलटा ही अर्थ करोगे। तुम मुझसे इतने अधिक गुँथ गये हो कि उसके कारण चम्पारन जानेमें तुम्हारे हृदयको आघात लगेगा, ऐसा मुझे लगा था। किन्तु यह तुम्हारी कल्पनामें भी कैसे आ सका कि तुम अपूर्ण सिद्ध हुए हो, इसलिए मैंने तुम्हे पृथक करनेके लिए यह टेढी युक्ति ढूँढ निकाली है? तुम्हारे बारेमें मेरा खयाल यह था कि मेरी आशा तुम्ही पूरी कर सकते हो और [इसीलिए] चम्पारन जानेका सुझाव दिया। मैं यह मानता हूँ कि बघरवाका काम दुर्गाकी शक्तिसे बाहर नही। सम्भव है, मेरा यह अनुमान गलत हो। अभी तो तुम्हारे चित्तकी शान्तिके लिए इतना ही कहता हूँ कि तुम्हारी की हुई समस्त कल्पना गलत है। मेरे सुझावका कारण यही है कि तुम दोनोकी शक्तिके सम्बन्धमें मेरे मनमें आदर है। तुम्हारी सहायताके बिना मुझे असुविधा होगी, मैं यह बात रावजीभाई और देवदास दोनोसे कह चुका हूँ। तुमने ऐसी स्थिति उत्पन्न कर दी है कि तुम्हारी जगह भरना लगभग असम्भव है। मैंने पोलकको जो कुछ लिखा है वह सत्य ही है। तुमने मुझे निराश नही किया है। मैंने तुम्हें अपने राजनैतिक कार्यकी सिद्धिके लिए, तुम्हारी कुशलता और चरित्रशीलताके

१. यह महादेवभाईके ८ मईके पत्रके उत्तरमें लिखा गया था। गांधीजीने महादेवभाईको चम्पारन भेजनेकी इच्छा प्रकट की थी और महादेवभाईने अपने पत्रमें उनकी इस इच्छाका विरोध किया था।

कारण चुना है, एव तुमसे मुझे कोई निराशा नही हुई है। इसके सिवा खास बात यह है कि तुम मुझे बडे प्रेमसे खिचडी बनाकर खिला सकते हो। अधिक मिलनेपर।

[गुजरातीसे]

महादेवभाईनी डायरी, खण्ड ४

२६९. पत्र: एस्थर फैरिंगको

[साबरमती
मई ११, १९१८][1]

प्रिय एस्थर,

तुम्हारा पत्र मिला। मैं — हम बडे दिनके अवसरपर तुम्हारे आश्रममें आनेकी राह देखेंगे। उस समय तक मुख्य भवन बन जायेगा और मौसम बहुत सुहावना होगा।

मैं आशा करता हूँ कि वाइसरायको लिखा गया मेरा पत्र[2] और प्रैटके भाषणके जवाबमें लिखा गया मेरा पत्र,[3] दोनों, तुमने पढे होंगे। इन पत्रोंमें शासन-सम्बन्धी और जीवन-दर्शनके बारेमें मेरे विचार थोडेमें आ जाते है। वाइसरायके नाम मेरे पत्रमें प्रेम और कष्ट-सहनके नियमके बारेमें मेरे विचार बहुत स्पष्ट रूपमें बताये गये है। "पैसिव रेजिस्टेंस" शब्द वास्तविक विचारकी बडी बेढगी अभिव्यक्ति है। सच बात तो यह है कि मैं इस शब्दको कमजोरोका हथियार मानता हूँ और नापसन्द करता हूँ। प्रेमके कानूनको यह बिलकुल गलत रूपमें व्यक्त करता है। प्रेम तो शक्तिका निचोड है। जब भयका सर्वथा अभाव हो, तभी प्रेमका मुक्त प्रवाह हो सकता है। प्रेमीजनो द्वारा दी गई सजा तो आत्मापर ठडे मरहमके बराबर है।

अपने जिगरके लिए तुम सम्पूर्ण उपवासका प्रयोग नही करोगी? उबला हुआ पानी खूब पियो और उससे काम न चले, तो सन्तरेके रसमें पानी मिलाकर पियो। उससे कमजोरी मालूम हो और चक्कर आयें, तो बिस्तरमें पडी रहो। या अधिक अच्छा यह है कि पैर और शरीरका ऊपरी हिस्सा पानीसे बाहर रखकर ठडे पानी बैठकरमें कटिस्नान करो। यह बहुत ताजगी लानेवाली चीज है। जिगरके रोगोमें उपवाससे अच्छी कोई चीज नही है।

हृदयसे तुम्हारा,
बापू

[अंग्रेजीसे]

महादेव देसाईकी हस्तलिखित डायरीसे।
सौजन्य नारायण देसाई

१. नेशनल आर्काइव्जमें रखी इस पत्रकी फोटो-नकलमें तथा माई डियर चाइल्ड नामक पुस्तकमें गलतीसे वर्ष १९१८ के बजाय १९१७ दिया गया है।

२. देखिए "पत्र. वाइसरायको", २९-४-१९१८।

३. देखिए "पत्र. 'बॉम्बे क्रॉनिकल'को", १५-४-१९१८।

२७०. पत्र: जी० ए० नटेसनको

साबरमती
मई १२, [१९१८][1]

प्रिय श्री नटेसन,

यह रहा मेरा भाषण:[2]

"इस प्रस्तावके समर्थकोंमें अपना नाम पाकर मैं अपनेको गौरवान्वित अनुभव करता हूँ। इसका अर्थ मैं पूरी तरह समझता हूँ और हृदय खोलकर इसका समर्थन करता हूँ।"

मुझे १०० रुपये-सहित आपका नोट मिला था। अब तो आपको उसका उत्तर नहीं चाहिए?

हृदयसे आपका,
मो० क० गांधी

गांधीजीके स्वाक्षरोंमें मूल अंग्रेजी प्रति (जी० एन० २२२५) की फोटो-नकल से।

२७१. भाषण: ढुंडाकुवामें[3]

मई १३, १९१८

आप तो जानते ही होंगे कि मैं पन्द्रह दिन बाहर घूमकर आया हूँ। मैं दिल्लीसे बम्बई होता हुआ बीजापुर गया था। इन पन्द्रह दिनोंमें खेडामें क्या हुआ उसकी मुझे जानकारी है। मुझे पत्र अथवा तारसे सूचना मिलती रहती थी। आपने देखा होगा कि इस संघर्षमें हमारी पूरी नहीं तो लगभग पूरी जीत अवश्य हुई है। यह इस आधारपर कहा जा सकता है कि श्री प्रैटने जो धमकी दी थी वे उसे अमलमें नहीं ला सके हैं और उन्होंने जो प्रतिज्ञा की थी उसे भी वे पूरा नहीं कर सके। प्रतिज्ञाके दो प्रकार हैं—दैवी और आसुरी। दैवी प्रतिज्ञाका पालन मृत्युपर्यंत किया जाना चाहिए और उसमें कोई विघ्न नहीं डाल सकता; जब कि आसुरी प्रतिज्ञा ऐसी है कि उसके विरुद्ध लड़ना ही चाहिए। सत्याग्रही आसुरी प्रतिज्ञाके विरुद्ध रात-दिन लड़ता है। श्री प्रैटकी प्रतिज्ञा आसुरी थी। मैंने श्री प्रैटका सदा आदर किया है। वे बुरे अफसर नहीं हैं, किन्तु जो बुरे अफसर नहीं हैं वे भी कभी-कभी गम्भीर भूलें करते हैं। श्री प्रैटने भी ऐसी ही

१ और २. यह वह भाषण था जो गांधीजीने २९ अप्रैलको युद्ध-सम्मेलनकी जन-शक्ति समिति (मैन पावर कमेटी) में दिया था।

३. बोरसद ताल्लुकेका एक गाँव। गांधीजीके भाषणका विषय था, "आत्मबल बनाम दमन"।

भूल की थी। उन्होंने कहा था कि "आपकी जमीनें जब्त कर ली जायेंगी और आपके उत्तराधिकारियोंका नाम सरकारी कागजातमें दर्ज नहीं किया जायेगा।" इस बातको कोरी धमकीके रूपमें नहीं बल्कि अमलमें लानेके लिए उन्होंने जान-बूझकर कहा था कि "मेरी हुक्म-उदूली करनेवाले व्यक्तिको कड़ा दण्ड दिया जायेगा।" लेकिन वैसा नहीं किया जा सका क्योंकि उनका कथन आसुरी था।[1] हमारी प्रतिज्ञा आसुरी होती तो हमें भी विजय न मिलती। हमारी प्रतिज्ञा तो कष्ट सहनेकी है और वह आसुरी नहीं है। लोगोंने कष्ट सहन करनेकी प्रतिज्ञा लेकर कोई भूल की है, मैं इस बातको स्वप्नमें भी नहीं सोच सकता। इस संघर्षसे खेड़ा जिलेके सब लोगोंमें तेज आ गया है। खेड़ाके किसानोंको अपने अधिकारोंका भान हो गया है। अत्याचारी शासनके विरुद्ध खड़ा होना राजभक्ति है, जब कि मदान्ध शासनके वशमें होना राजद्रोह है। उसका कारण यह है कि इस मदान्ध शासनके वशमें होकर हम अत्याचारी सत्ताको मान्यता प्रदान करते हैं। हमें तो उन अधिकारियोंका विरोध करके उनका उद्धार करना है। जैसे प्रह्लादने हिरण्यकशिपुका उद्धार किया वैसे ही अन्यायकारी अधिकारियोंके विरुद्ध संघर्ष करके हमें अत्याचारी शासनका उद्धार करना है। श्री प्रैटको अपनी पराजयसे अभी दुःख हुआ होगा, लेकिन कुछ समय बीतनेपर वे देख सकेंगे कि वे स्वयं जमीनें जब्त नहीं कर सके, यह बहुत अच्छा हुआ। यदि वे वैसा कर सके होते तो उन्हें अवश्य लोगोंकी हाय लगती और समस्त भारतमें खेड़ाके आतंककी बात फैल जाती। वे उस स्थितिसे बच गये हैं।

हमें जब्तीके समय क्या करना चाहिए अब मैं यह समझाऊँगा। मेरे आशीसे लौटते वक्त उमारीके लोगोंने मुझसे कहा था कि मैं वहाँ आ जाऊँ तो अच्छा हो। क्योंकि उस गाँवका मुखिया लोगोंके रुपये एक निश्चित स्थानपर रखवा देता है, तब [कुर्की-अधिकारी वहाँ] कुर्की करने जाता है। मैंने सभारमें ऐसा कहीं नहीं देखा। कोठीमें रुपया रखकर कुर्की कराना यह तो कुर्की-अधिकारीका स्वागत करनेके समान हुआ। हमसे जहाँतक बन सके हमें अत्याचारियोंके हाथमें रुपया न जाने देना चाहिए। मैं तो यही कहूँगा कि जो भाई घरोंमें ऐसी जगहपर रुपया अथवा जेवर रखते हैं जहाँ वह कुर्की-अधिकारीके हाथमें तुरन्त आ जाये, उन्हें प्रतिज्ञाका भान नहीं है। हम अधिकारियोंका सम्मान करें, लेकिन हमें उनकी मदद तो अवश्य ही नहीं करनी चाहिए। हम अपने घरमें आनेपर उनका स्वागत करें, लेकिन हमारे घरोंसे उन्हें रुपया या जेवर तो अवश्य ही नहीं मिलने चाहिए। रुपया अथवा जेवर रखकर अधिकारियोंको ले जाने देनेसे हम बच गये, ऐसा जो लोग कहते हैं वे लड़ाईके स्वरूपको नहीं पहचान पाये हैं। सरकार जिन वस्तुओंको कुर्क कर ले जाये उन्हें वापस खरीद लेना दर्शनीय हुंडी सिकारना कहा जा सकता है, लेकिन जहाँ ऐसा नहीं होता, बल्कि चालाकी बरती जाती है, वहाँ मुझे दुःख होता है। मैं उमारीकी घटनासे चकित रह गया हूँ। आप भाइयों और बहनोंको मेरी सलाह है कि आप इस तरह अपनी वस्तुएँ न रखें कि सरकारी

१. इस महीनेमें सरकारने भूमि-करकी बकाया रकम उगाहनेके लिए और भी ज्यादा जमीनें जब्त कीं। लेकिन बादमें जमीनोंकी जब्ती रोक दी गई और बकाया रकम चल-सम्पत्तिको नीलाम करके वसूल की जाने लगी।

कर्मचारी उन्हें सहज ही उठा ले जाये। सरकारका काम इस तरह आसान नही बना देना चाहिए। जितना हो सके उतना विलम्ब करना आपका काम है। मुझे उम्मीद है कि आप ऐसा ही व्यवहार करेंगे। हमें उनकी आवभगत करनी चाहिए अर्थात् जो सीधा-सामान हम दे सके वह उन्हे दे दें। कोई मित्र हो अथवा शत्रु, हमारे यहाँसे भूखा-प्यासा जाये यह हमे शोभा नही देता। अधिकारी भूखे-प्यासे गये, यह बात एक भी गाँवके सम्बन्धमे नही कही जानी चाहिए। कई लोग यह कहनेमे बडाई समझते है कि हमारे यहाँसे अधिकारीको पीनेका पानी भी नही मिला। लेकिन सत्याग्रही ऐसा नही कर सकता। सत्याग्रही स्वय दु ख पा लेगा और कथित शत्रुको अपना भोजन देकर स्वय भूखा रह लेगा। आप सत्याग्रहका यह सच्चा मर्म समझें। हमारे घरके और गाँवके व्यवहारसे प्रतिपक्षीके मनपर यह छाप पडनी चाहिए कि यहाँ झूठ नही बोला जाता, अशिष्ट व्यवहार नही किया जाता और शत्रुको भी दु ख नही दिया जाता। यहाँ तो सब व्यवहार सत्य, नीति और विनयसे चलता है। हमारा काम है कि हम समस्त जन समाजको इस स्थितिपर पहुँचा दे। मुझे आशा है कि आप इस स्थितिको प्राप्त करेंगे।

सत्याग्रह कभी हारता नही, लेकिन जिन्हे सत्याग्रह करना नही आता, वे हारते है। यह सघर्ष कामधेनु और कल्पवृक्षके समान [फलदायी] है। आप इस रत्न चिन्तामणि-जैसे अमूल्य अवसरको न खोये। जो लोग इस सघर्षको समझेंगे वे सच्चे सुख अर्थात् स्वराज्यका उपभोग करेंगे।

[गुजरातीसे]

खेड़ा सत्याग्रह

२७२. पत्र : हनुमन्तरावको

[कठलाल]
मई १५, १९१८

[प्रिय हनुमन्तराव,]

श्री शास्त्रियरके भाषणपर[1] 'हिन्दू'की आलोचना निन्दनीय है, और मेरे खयालसे उसपर ध्यान न देना ही उसका सबसे अच्छा जवाब है। कस्तूरी आयगार[2] ऐसे आदमी हैं, जिन्हे दलील या न्याय-बुद्धिकी अपीलसे कायल नही किया जा सकता। उनकी अपनी धारणायें है। और उनसे वे इतनी दृढतासे चिपके रहते है, जो शायद ही किसी और मनुष्यमें पाई जाती होगी। जो लोग शास्त्रियरको जानते है, उनपर 'हिन्दू'की आलोचनाओका कोई असर नही होगा। और जो कस्तूरी आयंगारके शब्दको वेदवाक्य मानते है, वे और किसीकी बात नही सुनेंगे। हमें यह विश्वास रखना चाहिए कि शास्त्रियर अपने उच्च चरित्र और विद्वत्ताके कारण कट्टरसे-कट्टर दुश्मनके सामने खडे

१. जो उन्होंने युद्ध-सम्मेलनके अवसरपर किया था।

२. कस्तूरी रंगा आयगार, *हिन्दू* के संपादक।

रह सकते हैं। मेरा ख्याल है कि जब कोई मनुष्य कसौटीपर खरा न उतर सके, तब भी शास्त्रियर अपने-आपके बारेमें ठीक-ठीक हिसाब दे सकते हैं। मैं समझता हूँ, वे इस बातको जानते हैं और इसलिए बिलकुल निश्चिन्त रहते हैं। इसलिए कस्तूरी आयगार या और किसीको भी मनमाने हमलोंके लिए मुझे या तुम्हें चिन्तित होनेकी जरूरत नही। करनेकी बात तो यह है कि हम सब मिलकर उन्हें अपने शरीरकी सभाल रखनेको मजबूर करें। मैं मानता हूँ कि उनका स्वास्थ्य ऐसा नही है, जो सुधर न सके।

हृदयसे तुम्हारा,
मो० क० गांधी

[अंग्रेजीसे]

महादेव देसाईकी हस्तलिखित डायरीसे।
सौजन्य नारायण देसाई

२७३. पत्र : दाभोलकरको

[कठलाल]
मई १५, १९१८

तुम्हारा पत्र मिला। मुझे तुमने इतने खुले दिलसे पत्र लिखा है, इसके लिए कृतज्ञ हूँ। मेरे पत्रमें[1] 'नीति-कौशल'की गंध तक नही है। मैंने अक्षरश: वही लिखा है, जो मैं मानता हूँ। तुमने मेरे विचारोंका ठीक-ठीक सार दिया है। मैं अवश्य ही यह मानता हूँ कि यदि हम चुपचाप लाखो लोगोंकी आहुति दे दें, तो हमें स्वराज्य आज ही मिल जायेगा। यह कैसे सम्भव है, यह बात यदि तुम मेरा पत्र पढकर न समझ सके हो, तो मैं उस पत्रमें तो उसे समझा ही नही सकता। इसलिए मेरी प्रार्थना है कि जबतक समझमें न आये, तबतक तुम उस पत्रको पढो और उसके एक-एक शब्दपर विचार करो। यह प्रयत्न व्यर्थ न जायेगा। वह पत्र मैंने जल्दीमें नही, बहुत प्रयत्नसे, शुद्ध भावसे और देश-प्रेमसे प्रेरित होकर ही लिखा है। यदि उससे भी मेरा आशय पूरी तरह न समझा जा सके या उसके दो अर्थ निकलें, तो मैं समझता हूँ कि यह इस हदतक मेरी तपस्याकी कमी है। अगर देश मेरी योजनाको समझ ले और उसपर अमल करे, तो मेरा विश्वास है कि उसमें स्वराज्यका और दूसरी सैकडो बातोका समावेश हो जाता है। पहले स्वराज्य दे दो, फिर हम लडाईमें [तुम्हारे साथ] लडेंगे, यह कहना मुझे तो स्वराज्यका तत्त्व न समझनेके समान लगता है। मैं लोक-प्रतिनिधिके रूपमें अपना कर्त्तव्य यह नही मानता कि वाइसरायको जितने पत्र लिखूँ, उन सबको जनताके सामने रखूँ ही। मैंने अबतक अपने जीवनमें प्रतिनिधिरूपमें जो-जो कार्य किये हैं, उनमें से

१. उपलब्ध नहीं है।

ज्यादातर और मेरे खयालसे महत्त्वपूर्ण कार्य तो गुप्त रहे हैं और रहेंगे। वाइसरायको लिखा गया मेरा पहला पत्र[1] केवल उन्हींके लिए था। मैंने उसके द्वारा अपने कुछ विचार उन्हें सज्जन समझकर मित्रभावसे उनके सम्मुख रखे थे। उन्हें मैं जनताके सम्मुख कदापि न रखूँगा। उस पत्रमें प्रयुक्त विनम्र, किन्तु कटु भाषाको जनताके सम्मुख रखनेसे अनर्थ होगा। उनके साथ हुई बातचीतका जितना अंश बताया जा सकता है, उतना मैं बता चुका हूँ। मेरा दूसरा पत्र[2] मेरे भावी कार्यक्रमके बारेमें है और वह पहलेकी तुलनामें कुछ भी नहीं है।

[गुजरातीसे]
महादेवभाईनी डायरी, खण्ड ४

२७४. पत्र : प्राणजीवन मेहताको

[कठलाल]
मई १५, १९१८

[भाईश्री प्राणजीवन,]

खेड़ाकी लड़ाईके बारेमें क्या लिखूँ? यह लड़ाई बड़ी जबरदस्त है। दो-तीन हजार रुपये सफर वगैरामें खर्च करके यह लड़ाई लड़ी जा सकती है, यह बात किसीकी कल्पनामें आ ही नहीं सकती। कोई पच्चीस हजार रुपया इकट्ठा हुआ होगा, यह वापस भिजवा दिया गया; और भी अनेक स्थानोंसे धनके प्रस्ताव आते हैं; इनके उत्तरमें मुझे इनकार लिखना पड़ता है। यदि मैं रुपया लेता हूँ, तो लड़ाईमें भ्रष्टता आती है, अनीति पैठती है और लोगोंका नैतिक पतन होता है। धन लेना अस्वीकार करनेसे मैं इन सब बातोंसे बच गया हूँ और लड़ाईको शुद्ध रख सका हूँ। इस लड़ाई-को भारतके सभी लोगोंने देखा है और उसकी कीमत उनकी समझमें आ गई है। शास्त्रियरकी समझमें अभी नहीं आई, इसका मुझे खेद है। कालान्तरमें आ जायेगी। वे स्वयं पवित्र-आत्मा हैं, इसलिए मैं निश्चिन्त हूँ। लड़ाईके औचित्यके बारेमें मुझे कोई शंका ही नहीं है।

[मोहनदासके वन्देमातरम्]

[गुजरातीसे]
महादेवभाईनी डायरी, खण्ड ४

१. देखिए "पत्र : वाइसरायको", २९-४-१९१८।
२. देखिए "पत्र : जे० एल० मैफीको", ३०-४-१९१८।

२७५. भाषण: सन्देसरमें

मई १६, १९१८

इस गांवके बहादुर लोगोंने बड़े साहसका परिचय दिया है। इन सभाओंकी एक विशेषता यह है कि उनमें स्त्रियां भी काफी संख्यामें आती हैं और जो-कुछ कहा जाता है ध्यानपूर्वक सुनती हैं। खेड़ाकी इस लड़ाईके बारेमें यह नहीं कहा जा सकता कि इसमें भाग लेनेवाले लोग, स्त्रियां या पुरुष, यह नहीं जानते कि वे क्या कर रहे हैं।

सत्याग्रहीका पहला कार्य इस बातकी जाँच करना है कि वह जो कुछ करने जा रहा है उसमें वह सत्यके रास्तेपर है या नहीं। और जब उसे इसका निश्चय हो जाये तो उसे अपने ध्येयसे आग्रहपूर्वक चिपटे रहना चाहिए। और उसके लिए मरण-पर्यंत लड़ना चाहिए। यदि हमें यह निश्चय हो गया है कि हमारी लड़ाई सत्य-की लड़ाई है तो हमें उसमें जुटे रहना चाहिए। जो मनुष्य सत्यके लिए मृत्यु तक स्वीकार करनेको तैयार हो वह हमेशा सत्यका ही आचरण करता है।

सत्याग्रहके नामसे चलनेवाली लड़ाइयोंमें हारका कारण यह है कि हम हमेशा सत्यपर आरूढ़ नहीं रहते। सत्यमें हमें अपना लाभ दिखता है तो वह हमें अच्छा लगता है। किन्तु सत्याग्रहीको तो यह देखना चाहिए कि वह हरएक बातमें सत्यका आचरण करता है या नहीं। यदि हम सत्यका आचरण नहीं करते तो हम सत्याग्रही नहीं कहला सकते। कुछ लोग सत्यकी कीमत जानते हैं किन्तु कई बार सत्यके विरुद्ध व्यवहार करते हैं — किसी बातमें सत्यका आचरण करते हैं और दूसरी बातमें असत्यका। यदि हम न्याय मांगते हों तो हमें दूसरेको भी पूरा न्याय देना चाहिए। हमारा आचार और हमारा विचार दोनों सत्य होने चाहिए। सब शास्त्र यही कहते हैं कि न्यायके मन्दिरमें मनुष्य पवित्र बनकर प्रवेश करे। जिस प्रकार हमें मन्दिरमें स्नानादि करके और मनको स्वच्छ करके जाना चाहिए उसी प्रकार न्याय-मन्दिरमें भी पवित्र होकर प्रवेश करना चाहिए। जिनका मन मलिन है वे वहाँ नहीं जा सकते, यह दैवी नियम है। यदि हम न्याय चाहते हैं तो अपने प्रतिपक्षीको भी न्याय देना चाहिए। सत्याग्रहीका यही प्रथम कर्तव्य है।

अगास स्टेशनपर वल्लभभाईने मेरे हाथमें एक चिट्ठी दी। इस चिट्ठीमें जो-कुछ लिखा गया है वह यदि सही हो तो मुझे लगता है कि हमारा व्यवहार न्यायपूर्ण नहीं है। इस चिट्ठीमें सन्देसर गांवके ढेढ लोगोंने यह कहा है कि पिछले चार वर्षोंसे गांवके लोग उन्हें कुछ भी हिस्सा नहीं दे रहे हैं। मैं नहीं जानता कि यह बात सच है या झूठ। यदि सच हो तो उसका निर्णय तुरन्त कर देना चाहिए। मेरी प्रार्थना है कि जब हम न्याय लेनेके लिए निकले हुए हैं तब हमें दूसरोको भी न्याय देना चाहिए। आज सुबह मैं एक सज्जनसे कह रहा था कि खेडाकी प्रजाको यह लड़ाई बहुत अच्छी लग रही है क्योंकि इससे उन्हें आत्मोन्नतिका अवसर प्राप्त हुआ है। आजतक हम सरकारकी शासन-नीतिके खिलाफ लड रहे हैं। हम मानते

हैं कि ईश्वर हमारे साथ है। हम आजकल सरकारी अधिकारियोको बेगार नही देते। कुम्हार, ढेढ, भगी आदिसे हम कहते हैं कि बेगार करनेकी जरूरत नही है। सरकार पैसा दे तो भी जिसे सुविधा हो और इच्छा हो वह जाये और जिसे न जाना हो वह न जाये। ढेढ, कुम्हार, नाई आदिको अपने कामका पूरा पैसा मिलता हो तो भी यह उनका अधिकार है कि उन्हे सेवा करनी हो तो करे और न करनी हो तो न करे। हम भी उनका यह अधिकार स्वीकार करे तो कहा जायेगा कि हम शुद्ध स्वराज्यके योग्य हैं। हो सकता है कि हम इस सरकारको उलट दें। किन्तु यदि हम ऐसा समझें कि हमें कौन उलटनेवाला है तो यही माना जायेगा कि अत्याचारीके आसनपर अब हम आसीन हो गये हैं। कुछ अंग्रेज आलोचक कहते हैं कि तुम लोग प्रजाको जो पाठ पढ़ा रहे हो उसके लिए तुम्हें पछताना पडेगा। किन्तु मेरा विश्वास है कि जो-कुछ मैं कर रहा हूँ उसे ठीक-ठीक जानता हूँ, उसमें मुझे कोई भूल दिखाई नही देती। मेरा विश्वास है कि अभीतक प्रजाको मैंने जो सलाह दी है वह ठीक है। सरकारके प्रति अपने कर्त्तव्यके विषयमे मैं प्रजाको जो सलाह देता हूँ वही सलाह मैं प्रजाके किसी एक वर्गको किसी दूसरे वर्गके प्रति अपने कर्त्तव्यका पालन करनेके विषयमे भी देते हुए हिचकूँगा नही। इसमें यदि मेरा सिर चला जाये तो भी मैं सत्य नही छोडूँगा। जिस प्रकार मेरा सिर सरकारको अर्पित है उसी प्रकार प्रजाको भी अर्पित है। यदि प्रजा सत्ताका दुरुपयोग करेगी और गरीबोको हैरान करेगी तो मैं गरीब-वर्गसे भी यही कहूँगा कि सत्याग्रह करो और न्यायका मार्ग कभी मत छोड़ो। सुखपूर्वक रहनेका यही एक मार्ग है।

यह सत्याग्रहका शस्त्र जो हमारे हाथ आ लगा है अमूल्य है। हमारी आत्मा सत्यसे शुद्ध होनी चाहिए। इसमें जो विशेषताएँ हैं उनका अनुभव जिसे हुआ होगा वह दृढ़तापूर्वक कहेगा कि सत्यके सिवाय अन्य कोई उत्तम धर्म नही है। मैंने कहा है कि इस लड़ाईमें हम जीत चुके हैं। यह लड़ाई सिर्फ लगान मुल्तवी करानेके लिए ही नही है। यदि हमारा लक्ष्य सिर्फ इतना ही होता तो हम उसे बहुत पहले पा चुके होते। इस लड़ाईमें अमूल्य सिद्धान्त निहित है। सरकार अपनी बातको सच मानती है, प्रजा अपनी बातको। प्रैट साहब भी कहते हैं कि लड़ाई केवल लगान मुल्तवी करानेके लिए नही है उसका सम्बन्ध ३३ करोड लोगोके हिताहितसे है। उसमें एक ओर प्रजाके अधिकारका सवाल है और दूसरी ओर सरकारके शासनका। हमे समझ लेना चाहिए कि प्रजाके बलकी तुलनामें सरकारकी सत्ता कुछ नही। ऐसी कोई सरकार आज तक पैदा नही हुई जो प्रजाके विरोधके सामने टिक सके। कोई प्रजा जब अपना अधिकार मांगनेका सकल्प करती है तो वह उसे लेकर ही छोड़ती है। इस लड़ाईमे हमें विनय या सभ्यता नही छोड़नी है; लेकिन साथ ही हम गुलामीका जीवन भी नही चाहते। सत्याग्रही कभी विनय नही छोड़ेगा; साथ ही वह अपना आग्रह भी नही छोडेगा। वह सरकारी अधिकारीको भूखा नही जाने देगा; उसे खिलायेगा, पिलायेगा और ठहरायेगा और इस प्रकार अपनी सज्जनताका परिचय देगा। सरकारी अधिकारी हमारा अभ्यागत है इस-लिए वह शत्रु हो या मित्र हमें उसके साथ विनयका व्यवहार करना चाहिए। वह हमारे पाससे हमारी सम्मतिके बिना कुछ नही ले सकता। वह हमारे घर कुर्क करने

आयें तो हमारा यह काम नही है कि हम अपने जेवर या अपने वर्तन उसके सामने रख दें। उसके हाथमें कोई चीज पड़ जाये तो हम शान्त रहें और डरें नही। तराजूके एक पलडेमें सत्य और न्याय है, दूसरेमें है पैसा। यह सब आप लोगोको समझ लेना चाहिए।

यह लडाई स्वराज्यकी है। हम आशा करते हैं कि स्वराज्य हमें मिल जायेगा किन्तु निर्वल प्रजाके हाथमें स्वराज्य किस कामका। किसी मुर्देके हाथमें तलवार दे दें या उसके पास अन्नका ढेर लगा दें या पैसा रखें तो वह किस कामका। वह इनमे से किसी भी चीजका उपयोग तो कर नही सकता। इसी प्रकार निकम्मा आदमी जो अपनी प्रतिज्ञा निवाहना नही जानता कुछ नही कर सकता। 'गीता' मे कहा गया है कि जो यज्ञ किये विना खाता है वह चोर है। यज्ञका अर्थ है कि हमारा यह शरीर प्रजाकी अर्थात् प्रभुकी सेवाके लिए है। लोक-कल्याणके लिए उसकी आहुति देना — यही सच्चा यज्ञ है। जिस प्रजाने इस मन्त्रको समझ लिया है उसके ऊपर कोई सत्ता अत्याचार कर ही नही सकती। यदि इसका रहस्य हमारे लहूमें मिल जाये तो समझो कि दुनियामें हमने सब-कुछ जीत लिया। सत्याग्रह दिव्यास्त्र है। वह उसी मनुष्यके हाथमें शोभा पाता है जिसमें साहस और पौरुष है। यदि हम इस वातको समझ लें और उसके अनुसार आचरण करे तो कहा जायेगा कि यह भारत कायरोकी नही वल्कि ३३ करोड़ देवताओंकी भूमि है।[1]

[गुजरातीसे]

खेडा सत्याग्रह

२७६. पत्र : रामभाऊ गोगटेको

सत्याग्रह आश्रम

सावरमती

वैशाख सुदी ६ [मई १७, १९१८]

भाईश्री रामभाऊ गोगटे,

भाई कोतवालकी वहन अभी आना चाहें तो आ सकती हैं। लेकिन इस समय यहाँ इतनी भारी गरमी पड रही है कि इन्दौर-जैसे स्थानमें रहनेवाले व्यक्तिको वह भयकर मालूम होगी। इसलिए मेरी राय है कि वे १५ जूनके वाद आयें। उसके वाद वरसात शुरू हो जायेगी और हवा भी कुछ ठडी हो जायेगी और कुछ नही तो उसमें कमसे-कम कुछ नमी तो आ ही जायेगी। अभी तो निरी लू चलती है और गरम हवा सांय-सांय करती है। जव वे यहाँ आयेंगी, वा यही होगी और उन्हें वाका साथ

१. भाषणकी इस रिपोर्टको **बॉम्बे क्रॉनिकल** में प्रकाशित अंग्रेजी रिपोर्टसे मिला लिया गया है।

मिलेगा ही। मैं वासे सलाह करनेके बाद यह पत्र लिख रहा हूँ। उन्होंने यहाँके भोजन और कार्यक्रम आदिके विषयमें सब बातें जान ही ली होगी।

मोहनदासके वन्देमातरम्

गांधीजीके स्वाक्षरोंमें मूल गुजराती पत्र (जी० एन० ३६१४) की फोटो-नकलसे।

२७७. पत्र : जे० एल० मैफीको

गाड़ीमें
मई १८, १९१८

[प्रिय श्री मैफी,]

इस पक्के विश्वासके साथ कि २९ तारीखके पत्रमें[1] की गई मेरी प्रार्थना मंजूर कर ली जायेगी, मैं रंगरूटोंकी भरतीके लिए तैयारियाँ करनेमें लग गया हूँ। किन्तु आपका जवाब आये बिना काम शुरू नहीं करूँगा।[2]

[हृदयसे आपका,]
मो० क० गांधी

[अंग्रेजीसे]

महादेव देसाईकी हस्तलिखित डायरीसे।
सौजन्य : नारायण देसाई

२७८. पत्र : मगनलाल गांधीको

आगराके समीप
[मई १८, १९१८]

चि० मगनलाल,

मैंने तुमको बहुत व्याकुल कर दिया। लेकिन मेरा इरादा तुम्हें शान्ति देनेका था। कठोरताको मृदुतासे जीता जाता है, घृणाको प्रेमसे, आलस्यको उत्साहसे और अन्धकारको प्रकाशसे। तुम्हारा प्रेम बूँद-बूँद करके टपकता है, लेकिन जिस प्रकार बूँद-बूँद करके होनेवाली वर्षा व्यर्थ जाती है उसी प्रकार प्रेमके सम्बन्धमें भी मैंने अनेक बार यही बात देखी है। जिस प्रकार मूसलाधार वर्षासे ही खेत पूरी तरह सिंचित होते हैं उसी प्रकार प्रचुर मात्रामें प्रवाहित प्रेम ही वैर-भावपर विजय पा सकता है।

१. देखिए "पत्र : वाइसरायको", २९-४-१९१८।

२. मैफीने गांधीजीके साथ हुए अपने पत्र-व्यवहारके कुछ अंश बम्बईके गवर्नर लॉर्ड विलिंग्डनको भेज दिये, और गांधीजीको इसकी सूचना दे दी। बम्बईके गवर्नरके साथ गांधीजीके पत्र-व्यवहारके लिए देखिए "पत्र : जे० क्रिररको", ३०-५-१९१८।

तुम न्यायकी आशा रखते हो, यही तो तुम्हारी भूल है। तुम स्वयं न्याय करते जाओ। जो प्रेम प्रतिदानकी आकांक्षा रखता है, वह प्रेम नहीं है। यदि तुम स्वयं प्रेममय हो तो तुममें दूसरेका प्रेम कहाँ समा सकता है? इसीमें अभेद भावका रहस्य छिपा हुआ है। मीराको जब प्रेमकी कटारी लगी तभी मीरा और प्रभु एक हुए। यही अद्वैतवाद है। इसमें से जितना ले सको, लेना, लेकिन प्रसन्न रहना।

बापूके आशीर्वाद

गांधीजीके स्वाक्षरोंमें मूल गुजराती पत्र (सी० डब्ल्यू० ५७२८) से।
सौजन्य : राधाबेन चौधरी

२७९. पत्र : सी० एफ० एन्ड्र्यूजको

[मोतीहारी]
मई २३, १९१८

[प्रिय चार्ली,]

विलीकी[1] गिरफ्तारीका समाचार पढ़कर मुझे कोई आघात नहीं पहुँचा। वाइसरायकी भावनाओंके प्रति भी मेरी सहानुभूति है। जब ऐसा भयंकर युद्ध चल रहा है, उस समय इस प्रकारके कामकी जाँच करनेके लिए उनसे क्यों कहा जाये? विली और हमको नम्रतापूर्वक कष्ट सहन कर लेना चाहिए। विलीके मामलेमें किसी सिद्धान्तका सवाल नहीं है। उसमें जातीय द्वेषका प्रश्न भी नहीं है। इसी तरह जनताकी भावनाओंका भी नहीं है। अपने विचारों या कार्योंके लिए जेल हो जाये, तो कुछ लोग तो ऐसे होने चाहिए जो उसीमें सुख और संतोष मानें। आवश्यक तो यह है कि विलीके साथ पत्र-व्यवहार प्रारम्भ हो जाये। उसे जरूरत होगी, तो वह अपने छुटकारेके लिए लड़ लेगा। उसकी चिन्ता करते रहना उसके साथ अन्याय करना है। मुझे विश्वास है कि वह जहाँ भी है, सुखी है। मेरे खयालसे सार्वजनिक आन्दोलन अनावश्यक है। यदि आप मुझसे सहमत हों, तो एक निर्भीकतापूर्ण पत्र लिखकर वाइसरायको कष्ट देनेके लिए क्षमा माँग लें। मुझे कभी-कभी लगता है कि लड़ाईका भयंकर तनाव सहन करके भी पस्तहिम्मत न होनेवाले ये बहुत सारे अंग्रेज अवश्य ही योगी हैं। यदि उनकी यह योग-भावना शुभ उद्देश्योंके लिए हो तो वे मोक्षके अधिकारी बन जायें।

[हृदयसे तुम्हारा,
मोहन]

[अंग्रेजीसे]

महादेव देसाईकी हस्तलिखित डायरीसे।
सौजन्य : नारायण देसाई

१. डब्ल्यू० डब्ल्यू० पियर्सन।

२८०. पत्र : हनुमन्तरावको

मई २५, १९१८

[प्रिय हनुमन्तराव,]

मैं यह नही चाहता कि तुम [सर्वेंट्स ऑफ इडिया] सोसाइटीसे सम्बन्ध तोड दो। वल्कि यह चाहता हूँ कि सोसाइटीमें रहकर ही हिन्दीका काम करो। मैं चाहता हूँ कि शास्त्रियर तुम्हे इलाहावाद जानेकी इजाजत दे दे। वहाँ तुम एक साल रहो और अच्छी तरह हिन्दी सीख लो। वादमे मद्रास जाकर अपने दूसरे कामोके साथ-साथ तेलगु लोगोमे हिन्दी-प्रचारका काम करो। तुम हिन्दीका अध्ययन कर लोगे, तो अपने कामका क्षेत्र व्यापक कर सकोगे और मौका पडनेपर मद्रास प्रान्तके वाहर भी आम जनताका काम करनेकी शक्ति हासिल कर लोगे। मै नही जानता कि तुम्हारा ध्यान इस ओर गया है या नही। मेरा तो गया ही है। द्रविड़ो और अन्य भारतीयोके वीच लगभग न पटनेवाली खाई पड़ गई है। निश्चय ही हिन्दी भाषा इसे पाटनेवाला छोटेसे-छोटा और कारगर सेतु है। अग्रेजी कभी उसका स्थान नही ले सकती। जब सुसस्कृत लोगोकी साधारण भाषा हिन्दी हो जायेगी, तव शीघ्र ही हिन्दीका शब्द-भण्डार आम जनतामे भी फैल जायेगा। हिन्दीमे कोई ऐसी अवर्णनीय वस्तु है, जिससे वह सीखनेमें सबसे आसान होती है। और कारण चाहे जो हो, हिन्दी व्याकरणके साथ जितनी छूट ली जा सकती है, उतनी मैंने और किसी भाषाके व्याकरणके साथ ली जाती नही देखी। परिणामस्वरूप हिन्दी सीखनेमे मात्र स्मरण-शक्तिका ही काम है। इसीलिए मैं कहता हूँ कि राष्ट्रीय काम करनेके लिए हिन्दीका ज्ञान नितान्त आवश्यक है। सोसाइटीका एक सदस्य हिन्दी सीख ले, इससे सुन्दर वात और क्या होगी ? एक वार श्री गोखलेने मुझसे कहा था कि वे सारे सदस्योके लिए हिन्दी अनिवार्य करना चाहते है और यह चाहते है कि सोसाइटीकी बैठकोमें हिन्दी ही वोली जाये। परन्तु उनकी सबसे वडी मुश्किल तमिल लोगोकी, खास तौरपर शास्त्रियरकी थी। वे हिन्दी सीखनेके लिए अपने आपको बहुत बूढा समझते हैं।

तुम सत्याग्रह आश्रमको सोसाइटीसे अलग मानते हो। मैं ऐसा नही मानता। अपने अन्तिम दिनोमें श्री गोखलेकी ऐसी इच्छा थी कि गुजरातमे मैं उसकी शाखा खोलूं और राजनीतिक दृष्टिसे मृतप्राय हो गये इस प्रान्तमे जीवन भरूँ। उस कार्यको पूरा करनेमें मेरा जो तुच्छ योगदान रहा है, उसपर मुझे गर्व है। कुछ ठोस कारणो-वश सत्याग्रह आश्रमको [सोसाइटीकी] शाखा यदि नही माना जा सकता तो यह कोई महत्त्वकी वात नही है। उसका काम तो यहाँ हो ही रहा है। उसमे जो-कुछ अच्छा है, मेरी रायमें उसका श्रेय सोसाइटीको ही है, उसकी जितनी त्रुटियाँ हैं, वे मेरी अपनी सीमाओके कारण है। उनका दायित्व सोसाइटीपर नही है। समय पाकर जब मैं अपनी सीमाओको लाँघ लूँगा, तब आश्रम सोसाइटीमे मिल जायेगा। उससे पहले तो यदि तुम आश्रममे भरती भी होना चाहो, तो भी तुम्हे केवल सोसाइटीसे मिले कर्जके तौरपर

ही स्वीकार करूँगा। इन सब बातोसे तुम देखोगे कि हिन्दी सीखनेके उम्मीदवारके रूपमें तुम्हारा विचार करते समय यह सम्भावना तक मेरी कल्पनामें नही आई कि सोसाइटीमे तुम्हे सम्बन्ध विच्छेद करना है।

[हृदयसे तुम्हारा,
मो० क० गाधी]

[अंग्रेजीसे]

महादेव देसाईकी हस्तलिखित डायरीसे।
सौजन्य नारायण देसाई

२८१. भाषण: पटनामें

मई २५, १९१८

गाधीजी गत मासकी २५ तारीखको पटना नगरमें होनेवाली एक सभामें शामिल होनेके लिए मोतीहारी से लौटे। जब वे चम्पारनमें थे, उन्होने बेतियाके जिला मजिस्ट्रेट और अवर प्रमण्डल [सब डिविजन]के अधिकारीसे भेंट की, और इसके बाद आगे जाकर शिकारपुर, मधुवन तथा ढाकामें अपने स्कूल देखे। मोतीहारीमें वे बाबू गोरखप्रसादके पास ठहरे। रैयत बड़ी सख्यामें उनके शिविरमें गई, किन्तु उनमें अधिकतर लोगोसे कहा गया कि वे अपनी शिकायतें स्थानीय प्रतिनिधियोके पास ले जायें। उनके आगमनसे, हमेशाकी तरह एक हलकी-सी हलचल फैल गई थी।

पटनामें सभाकी अध्यक्षता माननीय श्री पूर्णेन्दु नारायणसिंहने की। उसमें लोगो की असाधारण भीड़ थी — करीब ८,००० व्यक्ति शामिल हुए जिनमें ३०० से अधिक साधु भी थे। लगता था कि वस्तुतः जो भाषण दिया गया लोग उससे अधिक जोशीले भाषणकी आशा कर रहे थे, क्योंकि गाधीजीके आनेपर जो उत्साह दिखाई दे रहा था वह जैसे ही भाषण आगे बढ़ा काफी हदतक क्षीण हो गया।

भाषणके शुरूमें उन्होने भारतकी सार्वजनिक भाषाके विषयका उल्लेख किया और आशा की कि कुछ ही वर्षोंके अन्दर हिन्दू फारसी सीखेंगे और मुसलमान सस्कृत, ताकि दोनो भाषाएँ अन्तमें एक हो जायें। इसके बाद उन्होने कहा कि चम्पारनकी समस्याओ या शाहाबादकी लज्जाजनक घटनाओके सम्बन्धमें बोलनेके लिए मेरे पास समय नहीं है, किन्तु मेरा कहना है कि विशेष न्यायाधिकरणोका सहारा लेकर हिन्दुओ और मुसलमानोके बीच सद्भावना उत्पन्न नहीं होगी; यह प्रश्न तो पारस्परिक विचार-विमर्श तथा समझौते पर निर्भर करता है। उनके भाषणका मुख्य विषय था — "हमारी वर्तमान स्थिति।" भारतीयोके लिए अपना रास्ता चुननेका समय आ गया है। इस प्रकारके सुअवसर किसी भी राष्ट्रके जीवनमें बार-बार नहीं आते। वे विशेषकर शिक्षित-वर्गके प्रति अपने विचार

प्रकट कर रहे थे। उन्होंने कहा, भारतसे कहा गया है कि वह एक और सेना तैयार करे। ७ या ८ लाख व्यक्ति तो पहले ही से भारतके बाहर सेवा कर रहे हैं और इस वर्ष सेनामें ५ लाखकी और भरती की जानी है। इन लोगोंको सरकार वेतन देती है और ये लोग सैनिक सेवासे अपनी रोजी कमा रहे हैं; [किन्तु] भारत उनपर गर्व नहीं कर सकता। उनके अस्तित्वसे उसे कोई लाभ नहीं है। जिस स्वशासनके लिए लोग शोरगुल मचा रहे हैं उस स्वशासनकी उनके मस्तिष्कमें अलग कल्पना है। निश्चित रूपसे हमारे पास स्वराज्यकी अपनी सेना होनी चाहिए और इसके लिए यह आवश्यक है कि हम, सरकार जो ५ लाख व्यक्ति चाहती है उसे दें और इस बातकी प्रतीक्षा न करें कि सरकार स्वयं उन्हें भरती करेगी। उन्होंने लोगोंको गणतन्त्रीय सेना खड़ी करनेकी सलाह दी। उन्होंने लोगोसे अपने साथ आने तथा सरकार जहाँ भेजना चाहे वहाँ जानेके लिए कहा। (इस अवसरपर बहुत बड़ी संख्यामें लोग सभासे चुपचाप खिसक गये।) उन्होने कहा कि, यदि हम स्वयं आदमी मुहय्या नहीं करेंगे तो सरकार जैसे-तैसे उन्हें प्राप्त कर लेगी और यदि आवश्यकता हुई तो भरतीको कानूनन लाजिमी बना देगी।

दूसरा विचार जो वे लोगोंके सामने रखना चाहते थे यह था कि स्वशासनका अर्थ अंग्रेजोंको भारतसे बाहर निकालना नहीं है। यह नहीं हो सकता। वे तो ब्रिटिश साम्राज्यके एक महान् भागीदार बनना चाहते हैं। भारतके एक महान् नेताने कहा है कि "हम लड़नेके लिए तैयार हैं, किन्तु इस शर्तपर कि आप भारतको स्वशासन देनेका दावा करें।" उन्होंने कहा, मेरे विचारमें स्वशासन प्राप्त करनेका यह प्रामाणिक मार्ग नहीं है। उन्होंने इस बातकी वकालत की कि भारतको बिना किसी शर्तके आदमी मुहय्या करने चाहिए। साम्राज्यपर आई हुई विपदा भारतकी विपदा है। अंग्रेज जातिके चरित्रकी दो विशेषताएँ हैं; एक तो यह कि जो लोग मरना और मारना जानते हैं, वे उनके मित्र हो जाते हैं और उन्हींकी सहायता करते हैं जो अपने पाँवोपर खड़े होना जानते हैं; और दूसरे, वे उन लोगोंके साथ एकदिल हो जाते हैं जो अपने अधिकारोंका दावा करते है और उन्हें प्राप्त करनेके लिए प्रारम्भमें ही अपनी शक्ति तथा दृढ़ निश्चयका प्रदर्शन करते हैं। स्वराज्यमें दो बातें अपरिहार्य होती हैं — सेना तथा वित्तपर अधिकार और इसीलिए मैं बार-बार यह कहता हूँ कि भारतने सैनिक शिक्षा प्राप्त करने, साम्राज्यकी सहायताके जरिए स्वशासन प्राप्त करनेका अवसर खो दिया तो उसकी तत्सम्बन्धित महत्त्वाकांक्षाके सपने नष्ट हो जायेंगे। यह अवसर फिर कभी नहीं आयेगा। जो कमजोर होते हैं केवल वे ही शर्तें पेश करते हैं — जो शक्तिशाली होते हैं वे कोई शर्त पेश नहीं करते।

[अंग्रेजीसे]

बॉम्बे सीक्रेट एब्स्ट्रैक्ट्स, १९१८

२८२. भाषण: खंडालीमें[1]

[मई २७, १९१८]

खडालीके स्त्री-पुरुषोने वडा शौर्य और साहस दिखाया। किन्तु . जिस प्रकार नदीमें वाढ आ जानेपर हम वाढके फाजिल पानीका उपयोग नही कर सकते और वह व्यर्थ ही समुद्रमें वह जाता है, ठीक ऐसे ही आप लोगोका बहुत-सा शौर्य और साहस भी व्यर्थ ही नष्ट हो जाता है। एक सरकारी कर्मचारी एक स्त्रीकी सम्पत्ति जब्त करने गया तो उसने अपनी भैंस खोलकर भगा दी। उसका ऐसा करना एक वडी गलती थी। इसी प्रकार उस सरकारी कर्मचारीने भी वडी भारी गलती की; उसने उस स्त्रीको अपनी छतरीसे मारा। [सरकार भले ही गलती करे] किन्तु आप लोगोको ऐसी गलतियाँ नही करनी चाहिए। सच्चा सत्याग्रही ऐसा नही कर सकता। सत्याग्रहके किसी भी सघर्षमें सर्वप्रथम कर्त्तव्य सत्यपर दृढ रहना है। यदि हम सत्यकी बहुत ही सूक्ष्म परिभापा करे तो उसका क्षेत्र बहुत विस्तृत हो जाता है। किन्तु प्राय हमारी सत्यकी परिभापा कुछ सकुचित होती है इसलिए हमें मजबूरन उसमें कुछ वातें जोडनी पडती है। [हमें स्पष्ट करना पडता है कि] इस सघर्पमें हमें न किसीका विरोध करना है, न किसीको वुरा-भला कहना है। यदि विरोधी हमें गालियाँ देता है, तो हमें वे सहनी होंगी। यदि वह हमपर लाठी चलाता है, तो वदलेमें लाठी चलाये विना हमें उसे भी सहना होगा।

दूसरी वात यह है कि सत्याग्रहीको निर्भय होना है। उसे केवल अपने कर्त्तव्यका पालन करना है। आप जानते हैं कि जवतक हम सत्यपर दृढ हैं तवतक हम भयसे सर्वथा मुक्त हैं। यदि हमारा व्यवहार सरल होगा तो हम सदा सुरक्षित हैं। जब हम गलतीपर होते हैं तभी हमें अपने विपयमें चिन्ता हो जाती है। जिन लोगोंने अपराध किया है वे गाँवसे भाग गये हैं। किन्तु सत्याग्रहका सघर्ष करते हुए आप लोगोको भागना नही पडा। हमेशा सत्यपर दृढ रहो, शरारत कभी मत करो। सत्याग्रही जो अपराध करता है, उसके लिए तो वह हमेशा कारावास या हुक्मनामे [वारंट] का स्वागत करता है। यदि उसने कोई अपराध न भी किया हो तो भी उसे इसका स्वागत करना चाहिए। यदि अपराध न करनेपर भी उसे न्यायालयमें अपराधी सिद्ध किया जाता है, तो क्या हुआ? सरकारका इस शरीरपर अधिकार है, आत्मापर नही। आत्मापर प्रेमसे ही विजय प्राप्त की जा सकती है। सत्याग्रही इस वातको समझता है और इसलिए चाहे उसने अपराध किया हो या नही, वह निर्भय रहता है। जो सज्जन गैरकानूनी तौरपर अपने मवेशी हटाकर ले गये हैं, मुझे आशा है, वे अपनी गलती स्वीकार कर लेंगे और दिलेरीके साथ कहेंगे कि

१. मोतीहारीसे लौटनेके बाद गांधीजी मातर ताल्लुकेमें खंडाली गाँव गये और उन्होंने वहाँ एक सार्वजनिक सभामें सत्याग्रहके महत्त्वपर भाषण दिया।

उन्हे जो भी दण्ड दिया जायेगा वे उसे स्वीकार करेंगे। हम केवल इसी तरह उन्नति कर सकेंगे।

यदि हम अपने सामान को सरकारी अधिकारियोके हाथमे नही पडने देते तो यह चोरी नही है। जबतक यह उनके हाथोमे नही आ गया है तबतक आप उसे दूसरे गाँव ले जा सकते है, आप उसे गाड सकते है। आप अपने मवेशियोको हटाकर कही भी ले जा सकते है। किन्तु जैसे ही सरकारी कर्मचारियो या उनमे से किसी एक द्वारा वे जब्त कर लिये जाते है, तो फिर हमें उन्हे छूना भी नही चाहिए। हम जब्तियोमे सरकारका साथ देने नही जा रहे है, हम अपने मवेशी उनके लिए नही पालते। किन्तु ज्यो ही कोई सरकारी अधिकारी हमारी भैसको जब्त करता है, हमारा उसे उससे वापस छीननेका कोई अधिकार नही रहता। भाइयो तथा बहनो, मैं आपसे अपील करता हूँ कि आप ऊपर कहे अनुसार कार्य करे। अधिकारियोसे बदतमीजीसे बात करना या [उनके आनेपर] अपने मवेशी खोलकर भगा देना हमारा काम नही।

कलक्टरने मुझे बताया कि रैयत सघर्षमें अत्यन्त सुन्दर ढगसे कार्य कर रही है, किन्तु खंडालीके कुछ लोग जैसी चाले चल रहे हैं उनसे सघर्षका सौन्दर्य नष्ट हो जाता है। मैं आपसे प्रार्थना करता हूँ कि आप फिरसे ऐसा न करे। सच्ची वीरता प्रहार करनेमें नही, बल्कि प्रहार सहनेमें है। कल जब मैं 'गीता' पढ रहा था, तब मैंने क्षत्रियकी एक विशेषता पढी 'अपलायनम्'। इसका अर्थ है कि जब खतरा सामने आता है तब क्षत्रिय भागता नही, प्रत्युत अपने स्थानपर डटा रहता है। यदि हमारी सरकार जर्मनोके साथ जैसे वह लड रही है वैसे न लडे, यदि हमारे सैनिक जाकर उनके सामने नि शस्त्र होकर खडे हो जायें व विस्फोटकोका उपयोग न करे और कहे, "तुम हमपर प्रहार करो, हम मरनेको तैयार है!", तो मेरा विश्वास है कि हमारी सरकार तुरन्त युद्धमें विजयी हो जायेगी। किन्तु ऐसे कार्यके लिए 'सस्कार' की आवश्यकता पडती है और यह भारतके पास पर्याप्त मात्रामे है। जो वनस्पति यहाँ उगती है, वह इग्लैंडमे ठीक तरहसे नही उगेगी। इस सस्कारके बीज भारतमे खूब फूलेंगे-फलेंगे। शुद्ध वीरता सहनशक्तिमे होती है। यह वास्तविक सत्याग्रह है। खतरेको सामने देखकर भाग जाना कायरता है।

तब उन्होंने जिसने अपराध किया था उससे अपील की कि वह अपराध स्वीकार कर ले और कानून उसे जो दण्ड दे उसे भोग ले। इसके बाद उन्होंने रैयतसे सावधानी और साहसके साथ कार्य करनेके लिए कहा और प्रार्थना की कि वे सरकारी अधिकारियोंका आदर करें। अन्तमें उन्होने कहा कि संघर्षमें सफलता तो कबकी मिल चुकी है; उन्होंने उनके महान् शौर्य और साहसके लिए बधाई दी।

[अग्रेजीसे]

बॉम्बे क्रॉनिकल, ३-६-१९१८

२८३. पत्र : जे० क्रिररको

साबरमती
मई ३०, १९१८

प्रिय श्री क्रिरर,[1]

अभी-अभी मुझे श्री मैफीका पत्र मिला है। उसमें उन्होंने दिल्ली सम्मेलनके तुरन्त बाद अपनी सेवाएँ देनेका मैंने जो प्रस्ताव किया था,[2] उसके सम्बन्धमें परमश्रेष्ठ गवर्नरसे सम्पर्क स्थापित करनेको कहा है। श्री मैफीके पत्रसे यह भी मालूम होता है कि मेरे और उनके बीच जो पत्र-व्यवहार हुआ, उसके कुछ अंश उन्होंने परमश्रेष्ठ को भी भेज दिये हैं। बड़ी कृपा हो, यदि यह सूचित करें कि मेरे प्रस्तावके सम्बन्धमें तथा श्री मैफीको लिखे अपने पत्रमें खेडाकी हदतक मैंने जो सुझाव दिये हैं उनके बारेमें परमश्रेष्ठका क्या विचार है।[3]

हृदयसे आपका,
मो० क० गांधी

[अंग्रेजीसे]

इंडिया ऑफिस ज्यूडिशियल ऐंड पब्लिक रेकर्ड्स् ३४१२/१८

२८४. पत्र : महात्मा मुन्शीरामको

साबरमती
वैशाख कृष्ण ५ [मई ३०, १९१८]

महात्माजी,

आपका प्रेम पूरित हृदयद्रावक खत मुझे मीला है। व खतका अभावके लीये उत्तर देनेमें विलंब हुआ। मैं चि० इंद्र को दिल्लिमें कह रहा था "क्या महात्माजी

१. जेम्स क्रिरर, बम्बईके गवर्नर लॉर्ड विलिंग्डनके सचिव।

२. देखिए "पत्र : जे० एल० मैफीको", ३०-४-१९१८।

३. इस पत्रकी प्राप्तिकी सूचना देते हुए श्री क्रिररने १ जूनको गांधीजीको लिखा : "परमश्रेष्ठ आपके सहयोगका हार्दिक स्वागत करेंगे . . .। सरकार फिलहाल तो दिल्ली सम्मेलनके संकल्पको कार्यरूप देनेके उपाय सोच रही है जिनपर १० जूनको बम्बईमें आयोजित सम्मेलनमें विचार किया जायेगा। परमश्रेष्ठको आशा है कि आप उस सम्मेलनमें शामिल होंगे और तब उन्हें आपसे व्यक्तिशः मिलनेका अवसर प्राप्त होगा। . . . सम्मेलनके परिणामस्वरूप जिन संगठनोंके निर्माणकी आशा है, उनके कार्य आरम्भ करने पर वे अधिक विस्तृत रूपसे बता सकेंगे कि किन दिशाओंमें आपकी सेवाओंका लाभदायक उपयोग किया जा सकता है। जहाँतक खेडाकी लगान-वसूलीका सवाल है, परमश्रेष्ठका विचार है कि आन्तरिक प्रशासनके अन्य प्रश्नोंकी तरह ही इसका निपटारा भी इस मामलेके गुणदोषके आधारपर ही होना चाहिए . . .। उन्हें पूरा भरोसा है कि आप उनके विचारसे सहमत होंगे . . .।"

मुझको भूल गये है?" इसके पश्चात् दो तीन रोजमें आपका खत मीला। मैं खूब राजी हुआ। खेडा जिल्लाकी रैयत की जमीन खालसा की गई थी उसको वापस दे दी है। अब तो लोगोको बहुत आर्थिक हानी नहि होगी। इस लडतसे लोकोको बड़ा जोर प्राप्त हो गया है।

आपका पत्र मुझको बल देता है। मेरे कार्यमें आर्थिक टूटी [त्रुटि?] आयगी तब आपका स्मरण अवश्य करूँगा।

आपका दर्द अब कमी होगा। ईश्वर आपकी रक्षा करे।

आश्रमवासी सब आपके आनेकी राह देखते है। अवध वीतनेसे हम सब अधीरे बन जावेंगे।

आश्रमवासी सब आपको नमस्कार कहते है।

आपका
मोहनदास गांधी

मूल हस्तलिखित पत्र (जी० एन० २२०७) की फोटो-नकलसे।

२८५. पत्र: मगनलाल गांधीको

अहमदाबाद,
मई, १९१८[1]

चि० मगनलाल,

सरकार लड़ रही है। वह मुश्किलमें है, और हम लोग उसके सहयोगसे स्वराज्य प्राप्त करना चाहते है। हम अर्थात् प्रजा। किन्तु हम जबतक इसके योग्य नही बनते तबतक स्वराज्य नही प्राप्त कर सकते। इस योग्यताका एक निश्चित भाग तो यह है कि हम सरकारके दुःखमें भाग ले। हम आश्रम चलाते हैं उसमें हमारा उद्देश्य चरित्रका विकास करना है। तब क्या आश्रमवासियोका यह कर्त्तव्य नही है कि वे सरकारको मदद देनेका अपना अभिमत बतायें? लडाईके अन्तमें हम [स्वराजके] अधिक योग्य होंगे। मुझे लगता है कि हम युवाओको तो जाना ही चाहिए। एक व्यक्ति बच्चोको लेकर यहाँ रहेगा। अपना विचार तुरन्त बताना।

बापूके आशीर्वाद

[पुनश्च]

यदि हम जायेंगे तो दूसरोको भी साथ ले जायेंगे।

गांधीजीके स्वाक्षरोंमें मूल गुजराती पत्र (सी० डब्ल्यू० ५७३१) से।
सौजन्य: राधाबेन चौधरी

१. यह निश्चित नहीं किया जा सका कि यह पत्र किस दिन लिखा गया था।

२८६. पत्र : 'बॉम्बे क्रॉनिकल' को[1]

साबरमती
जून २, १९१८

सम्पादक
'बॉम्बे क्रॉनिकल'

महोदय,

इसके साथ 'इंडियन ओपिनियन' में प्रकाशित सामग्रीसे लिये गये कुछ उद्धरण भेज रहा हूँ। आशा है आप उन्हें अपने पत्रमें स्थान देंगे। प्रकाशनकी इस प्रार्थनामें मैं संकोच करनेका कोई कारण नहीं देखता क्योंकि इनका सम्बन्ध भारतसे गये हुए लगभग दो लाख प्रवासी भारतवासियोंके हिताहितसे है। जोहानिसबर्ग-स्थित ब्रिटिश भारतीय संघके अध्यक्ष श्री अहमद मुहम्मद काछलियाने संलग्न सामग्रीमें उल्लिखित मामलोंमें एकके सम्बन्धमें निम्नलिखित सूचना तार द्वारा भेजी है

> पाँच तारीखको आम सभाने रेलवे विनियमोंके १९वें खण्डके प्रति जोरदार विरोध प्रकट किया। निश्चय हुआ कि भारतवर्षमें शुभैषियोंको तार दिया जाये। विनियमों द्वारा टिकट देने, डिब्बोंमें बैठाने और हटाने, प्लेटफार्मोंपर बैठने-ठहरनेके स्थानोंके बारेमें कानूनन रंगभेद लागू किया गया है, और छोटे अधिकारियोंको अधिकार दिया गया है कि बिना कारण बताये जिसे जहाँ चाहें हटा दें। कृपया उपयुक्त अधिकारियोंसे समुचित दरख्वास्त करें। जबतक माँगी हुई राहत नहीं मिलती, समाज एक मतसे अधिकारोंकी माँग करेगा।

दक्षिण आफ्रिकामें आठ वर्षों तक सत्याग्रहका जो आन्दोलन चला था उसमें श्री काछलियाने बड़ी दृढ़तापूर्वक कार्य किया था। उस लड़ाईके दौरान वे कंगाल हो गये, और भारतके सम्मानके लिए उन्होंने जेलको स्वीकार किया। अतएव "जबतक माँगी हुई राहत नहीं मिल जाती, समाज एकमतसे अधिकारोंकी माँग करेगा" इन शब्दोंका अर्थ कोई भी आसानीसे समझ सकता है। यह कोई धमकी नहीं है, बल्कि एक ऐसे समाजकी मनोवेदनाका मर्मभेदी चीत्कार है जिसके आत्म-सम्मानको चोट पहुँचाई गई है।

यह तो स्पष्ट है कि दक्षिण आफ्रिकाकी गोरी जनतापर इस युद्धका, जो कि रैयत, या दुर्बल जातियोंकी रक्षा करनेके नामपर लड़ा जा रहा है कुछ भी प्रभाव नहीं पड़ा है। उनका रंग-द्वेष इस तथ्यके बावजूद कम नहीं हुआ है कि दक्षिण आफ्रिकामें रहनेवाले भारतीयोंने एक डोली वाहक स्वयंसेवक दल संगठित किया है जो पूर्वी आफ्रिकामें जनरल स्मट्सके नेतृत्वमें जानेवाली सेनाके साथ बहादुरीके साथ काम कर रहा है।

१. इसे दक्षिण आफ्रिकामें भारतीय-विरोधी कानून (ऐण्टी-इंडियन लेजिस्लेशन इन साउथ आफ्रिका) शीर्षकसे छापा गया था। लगता है कि यह पत्र सामान्यतया सभी पत्रोंको भेजा गया था।

प्रश्न कठिन ही नही बल्कि बडा जटिल है। पूर्वग्रहोको कानून बनाकर दूर नही किया जा सकता। धीरजपूर्वक कार्य करके और समझानेसे ही उन्हे दूर किया जा सकेगा। परन्तु दक्षिण आफ्रिकाकी सघीय सरकारका क्या उपाय किया जाये? वह सरकार तो कानून बना-बनाकर [रगभेदके] पूर्वग्रह पुष्ट कर रही है। दोनो ओरसे किसी प्रकारकी हिंसात्मक कार्रवाई न होने पाये, इतनी सावधानी बरतते हुए यदि गोरे आदमियोके पूर्वग्रहोको स्वतन्त्र छोड़ दिया जाता हो, तो भारतवासी सन्तोष कर लेते। यदि गोरे लोग दक्षिण आफ्रिकामे भारतीयोका सर्वथा बहिष्कार भी कर देते तो भारतीय शिकायत नही कर सकते थे। वास्तवमे तो बहिष्कार पहलेसे ही जारी है। सामाजिक जीवनमें भारतीयोको बिलकुल शामिल नही किया जाता। यद्यपि यह बहिष्कार भारतवासियोको खटकता है परन्तु वे फिर भी उसको चुपचाप सहन करते है। परन्तु जब सरकार बीचमे दखल देती है और रगभेदके आन्दोलनको कानूनी मान्यता प्रदान करती है तब बात दूसरी हो जाती है। भारतीय प्रवासी इस बातको बरदाश्त नही कर सकते कि उनके कही आने-जाने पर अपमानजनक नियन्त्रण लगाये जायें। रेलवेका टिकट बाबू भारतीयोकी वेश-भूषा ठीक-ठाक है या नही, इसका निर्णय करे, यह बात भारतीय सहन नही कर सकते। प्लेटफार्म इन्सपेक्टर उनको प्लेटफार्मके किसी नियत स्थानपर ही उठने-बैठने दे, यह बात भी उन्हे स्वीकार नही हो सकती। रेलका टिकट खरीदनेके लिए उन्हे कैदियोकी भाँति पहले अपना प्रमाणपत्र दिखाना पडे, तो वे वैसा नही करेंगे।

नये-नये अत्याचार और अपमानोको, युद्ध चल रहा है, ऐसा कहकर छिपाया नही जा सकता। भारतकी सम्मान-रक्षा करनेवाले भारतके साहसी पुत्र दक्षिण आफ्रिकामे अपना कर्त्तव्य निभा रहे है। हम लोग जो यहाँ है उनका कर्त्तव्य है कि हम उनकी सहायता करे। भारतके प्रत्येक स्थानमे सभाएँ करके दक्षिण आफ्रिकाके गोरोको भली-भाँति बता देना चाहिए कि भारत अपनी सन्तानोके प्रति उनके दुर्व्यवहारका विरोध करता है। हमे इन सभाओमे भारत-सरकार और साम्राज्य सरकारसे आग्रह करना चाहिए कि दक्षिण आफ्रिका-स्थित हमारे देशभाइयोकी सुरक्षाके लिए वे कोई कारगर उपाय करे। मैं आशा करता हूँ कि दक्षिण आफ्रिकामे होनेवाले अन्यायको समाप्त करानेके लिए जो आन्दोलन होगा, उसका समर्थन करनेमे भारतमे रहनेवाले अग्रेज लोग पीछे नही रहेंगे।

'इडियन ओपिनियन' पत्रसे ली गई सलग्न सामग्रीके दूसरे भागमे जिस शिकायतका उल्लेख है उसके विषयमे श्री काछलियाके तारमे कोई सकेत नही किया गया है। यह शिकायत भी कुछ कम गम्भीर नही है। प्रभावकी दृष्टिसे यह वस्तुत कही अधिक हानिकारक है। किन्तु प्रवासी भारतीय समाजको यह आशा है कि दक्षिण आफ्रिकाके सर्वोच्च न्यायालयमे अपील करनेसे उस अन्यायकी निवृत्ति हो जायेगी। वास्तवमे वह प्रश्न सर्वोच्च न्यायालयसे ऊपरका है। यह कैसे हो सो मैं एक ही वाक्यमे समझा दूं। एक प्रतिक्रियावादी अटर्नी जनरलने नेटालके सर्वोच्च न्यायालयसे एक नजीर करा ली है कि "देशी रियासतो" की प्रजा विदेशी प्रजा है, ब्रिटिश प्रजा नही। अतएव देशी रियासतोकी प्रजा नेटालके सर्वोच्च न्यायालयका जहाँतक प्रवासी नियत्रण विधेयकके एक खण्ड विशेषके अन्तर्गत अपीलका सम्बन्ध है, सरक्षण पानेकी अधिकारी नही है। यदि नेटाल प्रान्तके सर्वोच्च न्यायालयका यह निर्णय सही है तो इसका परिणाम यह होगा

कि दक्षिण आफ्रिकामें बसे हुए हजारों भारतीय निवासी उस सुरक्षासे वंचित हो जायेंगे जिसके लिए उन्होंने आठ वर्षों तक संघर्ष किया था और, अब मान रहे थे कि वह उन्हें प्राप्त हो गई थी। दक्षिण आफ्रिकाके भारतीय प्रवासियोंमें कमसे-कम एक चौथाई लोग बड़ौदा और काठियावाड़ राज्यकी प्रजा हैं। यदि कोई कानून इन लोगोंको विदेशी समझता है तो उस कानूनमें परिवर्तन करना होगा। देशी राज्यों और उनकी प्रजाके लिए यह घोर अपमानकी बात है कि इन लोगोंको विदेशी समझा जाये।

आपका,

मो० क० गांधी

[अंग्रेजीसे]

बॉम्बे क्रॉनिकल, ७-६-१९१८ तथा स्पीचेज ऐंड राइटिंग्ज ऑफ महात्मा गांधी

२८७. पत्र : सर जॉर्ज बार्न्सको

साबरमती

जून २, १९१८

प्रिय सर जॉर्ज बार्न्स,

मेरा खयाल है कि उपनिवेशोंके प्रवासियोंके हकोंसे सम्बन्धित मामले आपके विभागके अन्तर्गत आते हैं। यदि यह ठीक हो तो मैं आपका ध्यान नत्थी किये गये कागजोंकी[1] ओर आकर्षित करना चाहता हूँ।

संघ-सरकार गोरोंके रंगविद्वेषी पूर्वग्रहोंकी फिरसे शिकार बनती जा रही है और जिसे सिद्धान्तों और कमजोर राष्ट्रोंकी प्रतिरक्षाका युद्ध माना जाता है वह दक्षिण आफ्रिकाके गोरोंपर कोई प्रभाव नहीं डाल पाया है। यह बात इन कागजातोंसे आप जान सकेंगे।

मैं जानता हूँ कि यह समस्या जटिल है। विधान बनाकर पूर्वग्रहोंको दूर नहीं किया जा सकता। वे धैर्यपूर्वक किये गये प्रयत्न और शिक्षासे ही दूर किये जा सकते हैं। किन्तु आशंका तो इस बातकी है कि संघ-सरकार विरोधी हितोंके प्रति समदृष्टि रखनेके बजाय स्वयं उस जातीय पूर्वग्रहको प्रोत्साहन दे रही है। यदि मेरा विचार सही है तो प्रश्न यह उठना है कि वह अपनी साम्राज्य विरोधी गतिविधियोंमें ब्रिटिश झण्डे [यूनियन जैक]का सहारा कहाँ तक ले सकती है। क्या भारत-सरकार मद और जातीय विद्वेषके इस अशोभनीय प्रदर्शनके खिलाफ प्रबल विरोध करनेके लिए साम्राज्य सरकारको प्रभावकारी ढंगसे प्रेरित नहीं कर सकती?

मेरा खयाल है कि आप जानते हैं कि दक्षिण आफ्रिकाके इस छोटेसे भारतीय उपनिवेशने युद्ध-कालमें, जैसा कि सर्वविदित है, बहुत उपयोगी सेवा की है और अब भी

१. ये उपलब्ध नहीं हैं।

कर रहा है। पूर्व आफ्रिकामें जनरल स्मट्सके पहुँचनेके बादसे ही एक भारतीय-आहत-सहायक-दल कार्य करता आ रहा है।

ये कागजात दो भागोंमें विभक्त हैं: एक भाग नये बनाये गये रेलवे विनियमोंसे सम्बन्धित है। ये विनियम अपने आपमें बिलकुल स्पष्ट हैं। इसकी कल्पना नहीं की जा सकती कि भारतीय यात्री स्टेशनके प्लेटफार्मो, डिब्बों तथा टिकट-कार्यालय आदि स्थानोंके उन्हीं भागोंमें जा या बैठ सकते हैं जो उनके लिए नियत किये गये हैं। तिसपर भी प्रथम या द्वितीय श्रेणीके टिकटोंके लिए तो उन्हें टिकट देनेवाले क्लर्ककी सनकपर निर्भर करना पड़ता है, क्योंकि टिकट देनेवाले बाबूको अधिकार है कि यदि कोई भारतीय उसकी दृष्टिमें अच्छी वेशभूषामें नहीं है तो वह उसे टिकट देनेसे इनकार कर दे।

दूसरे भागमें जो कागज हैं उनसे यह स्पष्ट होता है कि संघ-सरकारके विवेकहीन कृत्यके परिणामस्वरूप देशी रियासतोंमें पैदा हुए वे भारतीय जो दक्षिण आफ्रिकामें जाकर बस गये हैं किस प्रकार महत्त्वपूर्ण कानूनी अधिकारसे वंचित कर दिये गये हैं। यदि सर्वोच्च न्यायालयका निर्णय कानूनकी रूसे सही है तो स्पष्ट है कि कानून बुरा है, वह बदला जाना चाहिए। और यदि ऐसा नहीं है तो संघ-सरकारको स्थानीय अन्त परिषद् [प्रिवी कौंसिल]में की गई अपीलका समर्थन करना चाहिए और कानून रद करवा देना चाहिए। बड़ौदा रियासतके हजारों भारतीय वर्षोंसे दक्षिण आफ्रिकामें बसे हुए हैं। पीड़ित पक्षकी प्रार्थनाका विरोध करते समय सरकारको समझ लेना चाहिए था कि वह उन भारतीयोंके उचित अधिकारोंके हितमें, जो प्रत्येक अर्थमें ब्रिटिश प्रजा हैं, खतरा पैदा करनेकी जोखिम उठा रही है।

मुझे पूर्ण आशा है कि इस पत्रके साथ आपको भेजे गये कागजोंमें जिस गलतीका उल्लेख है, उसे ठीक करनेके लिए आप तार भेजकर आवश्यक कदम उठायेंगे।

हृदयसे आपका,
मो० क० गांधी

[अंग्रेजीसे]

नेशनल आर्काइव्ज ऑफ इंडिया: उद्योग और वाणिज्य: जून १९१८: संख्या ५

२८८. भाषण : उत्तरसंडामें[1]

उत्तरसडा
जून ३, १९१८

मामलतदारका आदेश आपने सुन लिया। यह आदेश हमारी बातचीतके परिणाम-स्वरूप जारी किया गया है। कुछ दिन पूर्व जब मैं कलक्टरसे मुलाकात करने गया था तब मैंने उक्त आदेशका सुझाव दिया था। मैंने उन्हें बताया था कि यदि वे मेरे सुझावोंपर अमल करेंगे तो संघर्ष शीघ्र समाप्त हो जायेगा। अब मामलतदारने इस प्रकारका आदेश जारी कर दिया है। हमारे संघर्षकी पहली शर्त यह थी कि जिस दिन गरीबोंसे लगान वसूली स्थगित कर दी जायेगी उस दिन जो लोग लगान देनेमें समर्थ हैं, वे तुरन्त लगानकी सारी रकम अदा कर देंगे। प्रारम्भमें सरकारने दुराग्रह किया और कहा कि ऐसा नहीं हो सकता। सरकारका कहना था कि उसने जो लगान निश्चित किया है उसे ठीक समयपर अदा करना ही पड़ेगा। मामलतदारके आदेशका आशय यह है कि आपमें से जो लोग लगान अदा कर सकते हैं, वे उसे अदा कर दें और जो लोग वस्तुत: अदा करनेमें असमर्थ हैं, उनका लगान स्थगित कर दिया जायेगा। इस तरह सरकारको लगान मिल जायेगा लोगोंका आत्म-सम्मान कायम रहेगा और वे अपने प्रणके प्रति भी सच्चे रहेंगे। हमें इस कृपापूर्ण आदेशके लिए मामलतदारको धन्यवाद देना चाहिए, किन्तु यह किस प्रकार? आदेशका वास्तविक अर्थ समझकर, अर्थात् आगा-पीछा किये बिना अपनी लगानकी रकम अदा करके हम ऐसा कर सकते हैं। आपमें से जो लगान अदा करनेमें समर्थ हैं उन्हें आज या कल उसे जरूर अदा कर देना चाहिए और उन लोगोंकी एक सूची तैयार कर लेनी चाहिए जो लगान अदा करनेमें असमर्थ हैं। आपको अपने तलाटीको विश्वास दिलाना होगा कि उस सूचीमें शामिल व्यक्ति वास्तवमें गरीब हैं। इसके बाद मामलतदार उनका लगान स्थगित करनेके लिए आदेश जारी कर देगा। मुझे आप लोगोंसे [2] करनी है, वह यह कि जो लोग लगान अदा कर सकते हैं उन्हें गरीबोंकी सूचीमें शामिल न करें। उन्हीं लोगोंको सूचीमें लें जो लगान अदा करनेके लिए साहूकारसे ब्याजकी ऊँची दरपर कर्ज लेने अथवा अपने मवेशी या गहने बेचनेके लिए मजबूर होंगे। इस तरहके लोगोंकी सूची जितनी छोटी होगी हमारे लिए वह उतनी ही श्रेयस्कर होगी। जो लोग समर्थ हैं और जिन्हें अपने वादेके अनुसार लगान अदा करना ही चाहिए, वे यदि ऐसा नहीं करते तो दुनिया उनपर हँसेगी। इसलिए हमें

१. बिहारसे लौटनेके बाद गांधीजी श्री वी० जे० पटेलके साथ नडियादसे तीन मील दूर स्थित उत्तरसडा गाँव गये। तलाटीने मामलतदार (तहसीलदार) का इस आशयका आदेश पढ़कर सुनाया कि गाँवके धनिक किसान तो लगान अदा कर दें, किन्तु गरीब खातेदारोंके लिए अगले वर्षतक लगान स्थगित कर दिया जायेगा। इसके बाद गांधीजीने सभामें भाषण दिया।

२. यहाँ कुछ शब्द छूटे हुए हैं।

देखना होगा कि हमारी हँसी न उड़े। हमे मामलतदार साहबके आदेशका दुरुपयोग करनेकी इच्छा नही करनी चाहिए। यदि आप मेरी सलाहके अनुसार कार्य करेंगे तो मुझे विश्वास है कि आपकी प्रतिज्ञा आपके लिए अत्यन्त लाभप्रद सिद्ध होगी और दूसरे लोग आपका आदर करेंगे। हमे निर्मल अन्त करणसे काम करना चाहिए। जब यह कहा गया था कि सरकार सही है और हम गलतीपर हैं, तब हमे कितना बुरा लगा था? अब सरकार कहती है कि हम लगान अदा करे या न करे यह हमपर निर्भर करता है। इसलिए हमारा दुहरा कर्त्तव्य हो गया है। जो लोग लगान दे सकते हैं उन्हे तुरन्त दे देना चाहिए। यदि वे नही देते तो हमे उनपर अपना प्रभाव डालना होगा। और दूसरा यह कि आप गरीब खातेदारोकी सूची तैयार करे और इसके तैयार करनेके बाद अपना लगान अदा कर दे। १० जूनको बम्बईमे युद्ध सम्मेलन है। मुझे आशा है कि इस प्रकारके आदेश, जैसे कि इस गाँवमे दिये गये हैं, अन्य गाँवोमे भी जारी कर दिये जायेंगे और मैं गवर्नरसे यह कह सकूँगा कि हमारा सघर्ष समाप्त हो गया है।[1]

[अंग्रेजीसे]

बॉम्बे क्रॉनिकल, ५–६–१९१८

२८९. भाषण: नवागाँवमें

जून ३, १९१८

मेरी तबीयत ठीक नही है, इसलिए मैं अधिक नही बोलूंगा। लेकिन नवागाँव और नायकाके लोगोने बहुत ही साहसका परिचय दिया है और बहुत अच्छा काम किया है। नावली और खडालीके कुछ लोगोने सीमाका उल्लघन किया है। वे कुर्क की हुई भैसोको छुड़ा लाये और अधिकारियोके कपडोमें कौचकी फलियाँ रख आये। यह सत्याग्रह नही, वरन् दुराग्रह है। हमारी प्रतिज्ञा तो सिर्फ यही थी कि हम रुपया नही देंगे। अधिकारी समझते है कि वे आकाशसे उतरे हैं। सरकारी नौकरीमें कोई विशेषता नही है। हमारे संघर्षका महत्त्व यही है कि हम इस बातको समझ ले। आपको चौथाई देनी पडी है, हमें उसे वापस लेनेका प्रयत्न करना पड़ेगा, लेकिन यदि वह वापस न भी मिले तो कोई परवाह नही। खेडाके किसानोने इस सघर्षमें बहुत कमाया है और बहुत सीखा है। इस सबको प्राप्त करनेमे आपकी चौथाई गई तो कुछ अधिक नही गया। हमारी लड़ाईका उद्देश्य तो प्रतिज्ञाका पालन करना था। चौथाई वापस लेनेकी हर सम्भव कोशिश की जायेगी। यदि हम विनय और सत्यका पालन करेंगे तो सरकारसे चौथाई वापस देनेकी अपील कर सकेंगे। चौथाई देनेके बावजूद लोग लगान नही देते,

१. प्रतीत होता है, गाधीजीने कलक्टरको लिखा कि यदि मामलतदार द्वारा जारी किये गये आदेशके जैसा ही आदेश प्रकाशित कर सारे जिलेमें लागू कर दिया जाये तथा चौथाई एव दूसरे जुरमाने वापस ले लिये जायें तो संघर्ष बन्द हो जायेगा। कलक्टर द्वारा गाधीजीके सुझावके अनुसार कार्य करनेपर सत्याग्रह समाप्त कर दिया गया।

इससे लोगोंकी प्रतिष्ठा बढ़ती है और सत्यकी प्रतिष्ठा भी। सरकारने जमीनें जब्त करनेका विचार बदल दिया जान पड़ता है। यदि जमीनें जब्त की जाती तो सरकारकी बहुत बदनामी होती और बात बिगड़ती। जहाँ किसान इतनी शक्ति दिखा रहे हों वहाँ सरकार जमीनें जब्त करती है तो उसका बल घटता है। स्पष्ट अन्यायसे बल घटता है।

[गुजरातीसे]

प्रजाबन्धु, ९-६-१९१८

२९०. सन्देश : खेड़ाके लोगोंको[1]

सत्याग्रह शिविर
नडियाद
जून ६ [१९१८]

खेड़ा जिलेके भाइयो और बहनो,

खेड़ा जिलेकी जनताने तारीख २२ मार्चको जो लड़ाई शुरू की थी, वह खत्म हो गई है। उस तारीखको लोगोंने निम्नलिखित प्रतिज्ञा ली[2] थी :

इस प्रतिज्ञाका तात्पर्य यह है कि अगर सरकार गरीबोंका लगान मुलतवी रखे, तो समर्थ आसामी लगान जमा करा देंगे। उत्तरसंडा, नडियादके मामलतदारने तारीख ३ जूनको ऐसा हुक्म जारी किया। इसपर उत्तरसंडाके लोगोंमें जो समर्थ हैं उन्हें लगान जमा कर देनेकी सलाह दे दी गई है, और वहाँ लगान जमा कराना शुरू हो गया है।

उत्तरसंडामें इस प्रकारका हुक्म जारी होनेके बाद, कलक्टर साहबको पत्र[3] लिखकर प्रार्थना की गई कि अगर उत्तरसंडा जैसा ही हुक्म सब जगह जारी हो जाये, तो लड़ाईका अन्त हो जाये और परमश्रेष्ठ गवर्नर महोदयको १० तारीखको — यानी जिस दिन युद्ध-परिषद्की बैठक होगी — सूचित किया जा सके कि खेड़ा जिलेका घरेलू झगड़ा निपट गया है। कलक्टर महोदयने इस आशयका उत्तर दिया है कि उत्तरसंडामें जारी किया गया हुक्म सारे जिलेपर लागू होता है। इस प्रकार लोगोंकी प्रार्थना अन्ततः स्वीकार हो गई है। 'चौथाई' सम्बन्धी सरकारी आज्ञाके बारेमें कलक्टरने बताया है कि जो लोग स्वेच्छासे अदायगी कर देंगे, उनके खिलाफ यह आज्ञा लागू नहीं की जायेगी। इस रियायतके लिए हम कलक्टर महोदयके प्रति आभार प्रकट करते हैं।

हमें अफसोसके साथ कहना पड़ता है कि लड़ाईका अन्त तो हो गया, परन्तु बहुत शोभनीय ढंगसे नहीं। उसमें जो खूबी होनी चाहिए, वह नहीं है। ऊपरका हुक्म उदार

१. यह ज्ञापन गुजराती भाषामें गांधीजी और सरदार वल्लभभाई पटेलके-हस्ताक्षरोंसे जारी किया गया था, और अंग्रेजीमें इसे 'यंग इंडिया' में "ग्रेन एण्ड विदाउट ग्रेस" [स्वर्षकी शोभाविहीन समाप्ति] शीर्षकसे प्रकाशित किया गया था। वह विभिन्न अंग्रेजी अखबारोंमें भी छपा था।

२. इसके पाठके लिए देखिए "प्रतिज्ञा", २२-३-१९१८।

३. उपलब्ध नहीं है।

हृदयसे खुश होकर नही दिया गया। ऐसा लगता है कि उक्त हुक्म बहुत बेमनसे जारी किया गया है। कलक्टर महोदय सूचित करते है

> **२५ अप्रैलको सब मामलतदारोके नाम यह आदेश जारी कर दिया गया था कि जो लोग अदायगी करनेकी स्थितिमें न हों, उनपर कोई दबाव न डाला जाये। २२ मईको बाकायदा एक परिपत्र भेजकर उनका ध्यान पुनः इन आदेशोकी ओर दिलाया गया था। इन आदेशोपर कारगर ढंगसे अमल हो सके इसलिए मामलतदारोसे यह भी कहा गया था कि वे लगान अदा न करनेवालोको दो वर्गोंमें छाँट लें। एकमें वे लोग रखे जायें जो अदा करनेकी स्थितिमें थे, और दूसरेमें वे लोग जो गरीबीके कारण लगान देनेमें असमर्थ थे।**

यदि ऐसी बात थी, तो ये आज्ञाये जनताको क्यो नही बताई गई? यदि २५ अप्रैलको उनकी जानकारी लोगोको हो गई होती, तो लोग कितने कष्टोसे बच जाते। विशेष अधिकारियोको रखकर कुर्कियाँ करनेके लिए जिलेके बहुतसे सरकारी कर्मचारियोके ऊपर सरकारको जो अनावश्यक खर्च करना पडता वह बच जाता। जहाँ-जहाँ लगान बाकी था, वहाँके लोगोकी जान साँसतमे पडी रही। कुर्की न हो सके, इसके लिए वे घर छोडकर बाहर रहे। यहाँतक कि उन्हे ठीकसे भोजन भी नही मिला। स्त्रियोने ऐसे कष्ट सहन किये है जिन्हे सहनेका उनके लिए कोई कारण न था, कभी-कभी उद्धत सर्किल इस्पेक्टरोके अपमान भी सहन किये है। वे असहाय देखती रही और दुधारू भैंसे उनकी नजरके सामने खोल ली गई है। चौथाईका जुरमाना चुकाया है। उपर्युक्त आज्ञाएँ लोगोको मालूम हो जाती, तो लोग इन सब दुःखोसे बच जाते। अधिकारी लोग जानते थे कि गरीबोको राहत देनेकी माँग ही लडाईका मुख्य आधार थी। कमिश्नरने तो लोगोकी इस कठिनाईकी तरफ देखनेसे ही इनकार कर दिया था। बहुत-से पत्र लिखनेपर भी वे टससे मस नही हुए। उनका जवाब था, "असामीवार छूट नही दी जा सकती। एसा कानून नही है।" अब कलक्टर महोदय कहते है कि .

> **अप्रैल २५ के आदेश, जहाँतक उनका ताल्लुक गरीबीके कारण लगान वास्तवमें अदा न कर सकनेवालोंपर दबाव डालनेसे है, सरकारके उस विषयसे सम्बन्धित सर्वज्ञात स्थायी आदेशोंकी पुनरावृत्ति मात्र थे।**

अगर यह बात सच है तब तो लोगोको आजतक उनके हठके कारण ही दुःख उठाना पडा है। दिल्ली जाते समय श्री गाधीने कमिश्नरको पत्र लिखकर राहत देने या उपर्युक्त आशयका हुक्म जारी करनेकी प्रार्थना की थी ताकि वाइसराय महोदयको समझौतेकी खुशखबरी दी जा सके। कमिश्नरने इसपर कोई ध्यान नही दिया।

"लोगोको दुःखी देखकर हम विचलित हो गये है, हम अपनी भूल अनुभव करते है; और लोगोको सन्तुष्ट करनेके लिए अब हम असामीवार छूट देनेको तैयार है।" अधिकारी लोग उदात्त मनसे ये सारी बातें कहकर जनताका मन जीत सकते थे, किन्तु उन्होने (जनताका मन जीतनेका) यह तरीका अपनानेसे इनकार कर दिया। और अब भी जो राहत दी गई है, वह मजबूरन और अनमने भावसे बिना अपनी भूल स्वीकार

किये हुए दी गई है। यही नहीं, यह दावा भी किया जाता है कि जो राहत दी गई है, वह पहले भी दी जाती रही है। इसीलिए हम कहते हैं कि इस समझौतेमें कोई शोभा नहीं है।[1]

अपनी हठधर्मिता, अपनी इस भ्रमपूर्ण धारणा कि उन्हें अपनी गलती स्वीकार नहीं करनी चाहिए, और इस बातका आग्रह कि उनके बारेमें यह न कहा जा सके कि वे किसी जन-आन्दोलनके सामने झुक गये, इन कारणोंसे ही सरकारी अधिकारी लोकप्रिय नहीं हो सके हैं। यह आलोचना करते हुए हमें दुःख होता है। परन्तु हमें लगा कि उनके मित्रके रूपमें उनकी इतनी आलोचना तो हमें करनी ही चाहिए।

अधिकारी-वर्गका ऐसा असन्तोषजनक व्यवहार होते हुए भी हमारी प्रार्थना स्वीकार हो गई है और जो राहत दी गई है उसे साभार स्वीकार करना हमारा फर्ज है। अब केवल आठ फी सदी लगानका भुगतान होना बाकी है। अबतक लगान अदा न करनेमें ही हमारा स्वाभिमान था। अब स्थितिके बदल जानेपर सत्याग्रहियोंके लिए लगान चुकानेमें स्वाभिमान है। जो समर्थ हैं, उन्हें सरकारको जरा भी तकलीफ दिये बिना लगान तुरन्त जमा करके बता देना है कि जहाँ अन्तरात्माके आदेश और मानवीय कानूनके बीच विरोध नहीं है, वहाँ सत्याग्रही कानूनका आदर करनेमें किसीसे पीछे नहीं है। सत्याग्रही कभी-कभी कानून और सत्ताकी क्षणिक अवज्ञा करता प्रतीत होता है किन्तु इसमें उसका उद्देश्य अन्तमें यही सिद्ध करनेका होता है कि दोनोंके प्रति उसके मनमें सच्चा मान है।

लगान अदा करनेमें जो समर्थ हैं उनकी सूची तैयार करते समय खूब पक्की जाँच कर लेनी चाहिए ताकि उसपर कोई आपत्ति न उठा सके। जिनकी असमर्थताके बारेमें जरा भी शंका हो, उनका फर्ज है कि वे लगान अदा कर दें। असमर्थ कौन है, इसका अन्तिम निर्णय तो अधिकारी-वर्ग ही करेगा। फिर भी हम यह मानते हैं कि वह जनताके निर्णयका पूरा आदर करेगा।

खेडाके लोगोंने अपनी बहादुरीसे सारे हिन्दुस्तानका ध्यान अपनी ओर खींचा है। सत्य, निर्भयता, एकता, दृढ़ता और आत्मत्यागका पालन करनेका फल उन्होंने पिछले छः महीनोंमें चखा है। हमें आशा है कि लोग इन महान् गुणोंका अपनेमें और अधिक विकास करेंगे, प्रगतिके पथपर आगे बढ़ेंगे और मातृ-भूमिका नाम अधिक उज्ज्वल करेंगे। हमारा दृढ़ विश्वास है कि यह लड़ाई छेड़कर खेडा जिलेकी जनताने अपनी, स्वराज्यकी और साम्राज्यकी सच्ची सेवा की है।

ईश्वर आप सबका कल्याण करे।

हम हैं
जनताके चिरसेवक,
मोहनदास करमचन्द गांधी
वल्लभभाई झवेरभाई पटेल

[अंग्रेजीसे]
यंग इंडिया, १२-६-१९१८

१. यह अनुच्छेद केवल अंग्रेजी पाठमें मिलता है। गुजराती पाठमें यह नहीं है।

२९१. भाषण: नडियादमें[1]

जून ८, १९१८

जिला मजिस्ट्रेटके रूपमें काम करनेवाले नडियादके कलक्टरके न्यायालयमें श्री मोहनलाल पंड्या तथा नवागाँवके पाँच अन्य व्यक्तियोंपर ८ जून, १९१८को खेतसे[2] प्याज चुरानेका अभियोग लगाया गया। अभियुक्तोंने दृढ़तापूर्वक कहा, वे हृदयसे यही मानते हैं कि उन्होंने कोई गैरकानूनी कार्य नहीं किया है।

गांधीजीने भी अपनी गवाहीमें कहा कि उक्त कार्यके लिए एकमात्र उत्तरदायी मैं हूँ, और मैंने ही अभियुक्तोंको प्याज निकालनेकी सलाह दी थी। यदि प्याज निकालना अपराध है तो न्यायालयका कर्त्तव्य है कि दण्ड मुझे दिया जाये। मामलेके समाप्त होने-पर[3] गांधीजीने न्यायालयकी चहारदीवारीके बाहर एक विशाल सार्वजनिक सभामें भाषण दिया। [उन्होंने कहा:]

इस समय मेरे हृदयमे दो भावनाएँ उठ रही हैं. उनमे से एक तो मुझे खुशीसे भरती है और दूसरी दु:खसे। मैं खुश इसलिए हूँ कि खेडाके लोग सच्चे सत्याग्रही हैं और उन्हें जेल जानेका सुअवसर मिला है। मेरा यह सन्देह, कि खेडाके किसान जेल जानेके लिए तैयार होगे कि नही, दूर हो गया है। मुझे दु:ख इसलिए है कि यद्यपि ब्रिटिश अधिकारी आम तौरपर भले होते हैं, फिर भी उनमे से कुछ ऐसे हैं, जिनमें उदारता और दूरदर्शिताकी कमी है। कलक्टर जेलकी सजा देकर अगर ऐसा सोचते हैं कि वे हमें किसी ऐसी जगह भेज रहे हैं जहाँ जाना अपमानजनक है और जहाँ भयानक कष्ट उठाने पडते हैं, तो वे भले वैसा सोचे किन्तु हमारे लिए जेल वैसी कोई जगह नही है। सच कहे तो लोगोने वहाँ जो सीखा वह सचमुच प्रशसनीय है। जबतक हम जेलके कष्टोको सहना नही सीखते तथा जेल-यात्राके वास्तविक अर्थ और पाठकी ओर ध्यान नही देते तबतक सत्याग्रहका असली अर्थ हमारी समझमे नही आता। सबके लिए यह समझनेका एक बहुत ही उपयुक्त अवसर प्राप्त हुआ है। हमें इसका दु:ख होना चाहिए कि हम उन बन्धुओके समान सौभाग्यशाली नही हैं जो जेल गये हैं। मैंने जेल जानेकी पूरी कोशिश की। मैंने कहा कि प्रारम्भसे लेकर अन्ततक एकमात्र उत्तरदायित्व मेरा है।

१. भाषणकी 'खेडा सत्याग्रह' में दी गई गुजराती रिपोर्टके आधारपर इसे सशोधित कर लिया गया है।

२. सरकारी आदेशके द्वारा खेतको जब्त कर लिया गया था, किन्तु गाधीजीने कलक्टरको बताया कि जब्त करनेके नोटिसमें खेतकी सर्वेक्षण सख्या नहीं दी गई है, इसलिए उसे जब्त किया गया नहीं समझा जायेगा। बरसात तुरन्त आनेवाली थी इसलिए उन्होंने उन्हें खेतसे प्याज एकत्र करनेकी सलाह दी। इस घटनाका आत्मकथाके अध्याय २४ में विस्तारसे वर्णन है।

३. दो अभियुक्तोंको १० दिनकी तथा शेषको बीस-बीस दिनकी कैदकी सजा दी गई।

भूलाभाईने[1] जो किया पूरी तरह सोच-विचार कर किया है। यदि इसमें कोई गलती है तो वह मेरी है, और फिर भी मैं अनुभव नहीं करता कि मैं किसी तरह गलतीपर हूँ। मैंने बड़ी कोशिश करके मामला कलक्टरके पास बदलवाया था। यह परीक्षात्मक मामला था। मैंने कलक्टरको पहले ही कह दिया था कि मैं उनके निर्णयके खिलाफ अपील करने नहीं जाऊँगा, और मेरा अब भी वही विचार है। न्यायालयका निर्णय अन्यायपूर्ण है और सजा कड़ी है। कोई भी यह आशा नहीं कर सकता कि न्यायाधीशके आसनपर बैठा व्यक्ति सत्याग्रही हो, क्योंकि कानून सत्याग्रहको स्वीकार नहीं करता। यह एक ऐसा मामला है जिसमें यदि हम अपील करें तो निश्चित रूपसे सफल होंगे। हम इस मुकदमेको इसलिए नहीं हारे कि मैंने या वल्लभभाईने किसी भी गवाहसे जिरह नहीं की। कोई भी निष्पक्ष न्यायाधीश जिसे कानूनका ज्ञान होता, कह सकता था कि जो तथ्य सामने हैं उनके आधारपर इसे अपराध नहीं माना जा सकता। इसके बावजूद हम अपील करने नहीं जा रहे हैं। सत्याग्रही ऐसा नहीं कर सकता। उनके लिए जेल जाना सबसे अच्छा मार्ग है। यदि सजा और भी कड़ी होती तो मुझे और भी खुशी होती। कलक्टरने आदेश दिया है कि प्याजको जब्त कर लिया जाये। यदि सरकार प्याजको हजम करनेका साहस कर सकती है तो उसे वैसा करने दें। किन्तु नवागांवके बहुत-से मित्रोंसे जो यहाँ उपस्थित हैं मैं यह कहना चाहता हूँ कि भूलाभाईपर लगानके जो ९४ रुपये बाकी हैं, उन्हें कलक मामलतदारको निश्चित रूपसे चुकता कर देना चाहिए। हमें समझौतेका सम्मान करना है। मैं नडियादमें होनेवाले जिला सम्मेलनमें भी यही कहने जा रहा हूँ। इस घटनासे कटुता उत्पन्न होनेकी सम्भावना है, किन्तु यदि हम पर्याप्त उदारता दिखाकर उसे भुला दें तो सरकारको अपना वादा तोड़नेके लिए सदैव खेद बना रहेगा। कलक्टरने क्रोधके वशीभूत होकर ऐसा किया है। सजा इसलिए दी गई कि लोगोंने उनके आदेशके बावजूद प्याज खोद निकाला। यदि उन्होंने इस मामलेपर शान्तिपूर्वक विचार किया होता तथा कुछ अधिक सावधानीके साथ कानूनका अध्ययन किया होता तो उन्हें मालूम हो गया होता कि इस कार्यमें कोई अपराध नहीं है। यदि हमें अधिकारियोंको शिक्षित करना हो, तो हमें इसी प्रकारका काम बार-बार करना चाहिए, और तब वे समझ जायेंगे कि इस प्रकारके बहादुर लोगोंको कोई भी सजा नहीं दी जा सकती, उनके साथ तो प्यारसे हाथ मिलाना ही उचित है। यदि हम अधिकारियोंपर विजय प्राप्त करना चाहते हैं तो हमें उनके साथ व्यवहार करते समय ईमानदार तथा नम्र होना चाहिए। हम विचारहीन अधिकारियोंके सामने कभी भी न झुकें, बल्कि यदि आवश्यकता पड़े तो प्याज खोदकर निकालें और हजार बार जेल चले जायें।

नवागांवके मेरे भाइयो, इस अवसरको आप शुभ समझें। आपके कसबेके ५ मित्र शुद्ध तथा निर्भीक हृदयसे जेल गये हैं, उनके लिए हम सब उन्हें बधाई देंगे। मोहनलाल पंड्या उनके साथ हैं, इसलिए शेष लोगोंके बारेमें मुझे कोई चिन्ता नहीं है। उन्होंने ही तो इस संघर्षका नेतृत्व किया, अतएव यह उनके लिए एक स्वर्ण अवसर है। यह पहला अवसर नहीं है जब कि मैंने अपील करनेके खिलाफ सलाह दी है। जब दक्षिण

१. प्याजके खेतके मालिक।

आफ्रिकामे हजारों लोग जेल गये, तब मैंने कभी अपील नही की। जब हम तपश्चर्याके रूपमे जेल जाना चाहते है, तब कोई अपील नही हो सकती। शायद खेड़ाके लोग इतने ऊँचे नही उठे। किन्तु यदि वे उठ गये होते तो मै उन्हे सलाह देता कि वे कोई बचाव न करे और न्यायालयको, जो वह चाहता है, करने दे। जिलेमे दो या तीन मामले और है जो विचाराधीन है। मै आपको सलाह देता हूँ कि आप अपना बचाव न करे, बल्कि कैदका कष्ट उठायें। उससे हमें बहुत सीखनेको मिलेगा; और मेरा दृढ विश्वास है कि इसी प्रकार कार्य करके हम देशको आगे बढ़ा सकते है।

[अंग्रेजीसे]

बॉम्बे क्रॉनिकल, १२-६-१९१८

२९२. पत्र : एल० रॉबर्ट्सनको

बम्बई

जून ९, १९१८

श्री एल० रॉबर्ट्सन
मुख्य सचिव
राजनीतिक विभाग
बम्बई सरकार

प्रिय श्री रॉबर्ट्सन,

खेड़ासे लौटनेपर अभी कल शामको ही नडियादमे आपका तार स० ४६३०[1] मिला। आपके तारमें दिये गये प्रस्तावका समर्थन करनेका वचन देनेसे पहले मेरी इच्छा है कि मै उसके बारेमें पूर्ण रूपसे जानकारी प्राप्त कर लूं। मै योजनाको भी देखना चाहूँगा। मेरा पता है: मारफत, रेवाशंकर जगजीवन, लेबर्नम रोड, चौपाटी।

हृदयसे आपका,
मो० क० गांधी

[अंग्रेजीसे]

इंडिया ऑफिस ज्यूडिशियल ऐंड पब्लिक रेकर्ड्स: ३४१२/१८; तथा बॉम्बे गवर्नमेंट होम डिपार्टमेंट स्पेशल फाइल सं० १७८८, सन् १९१८

१. जून ७, १९१८ के इस तारमें लिखा था: "यदि आप इस मासकी १० तारीखके सम्मेलनमें निम्नलिखित प्रस्तावका समर्थन करनेकी स्वीकृति दें तो परमश्रेष्ठको प्रसन्नता होगी। प्रस्ताव: इस सम्मेलनका विचार है कि इस प्रान्तकी जनशक्ति एवं साधन स्रोतोंका युद्धके निमित्त यथासम्भव पूरा उपयोग और विकास किया जाये। इस उद्देश्यको सामने रखते हुए यह सम्मेलन सिफारिश करता है कि एक युद्धार्थ-निकाय (वॉर पर्पजेज बोर्ड) स्थापित किया जाये, जिसमें सरकारी और गैरसरकारी दोनों प्रकारके सदस्य हों, और जो योजना कार्यसूचीके साथ नत्थी किये स्मृतिपत्रमें दी गई है, उसे स्वीकार और अंगीकार किया जाये। प्रस्ताव समाप्त। उल्लिखित स्मृतिपत्र कल तैयार हो जायेगा और उसे आपके बम्बईवाले पतेपर भेज दिया जायेगा। पतेकी जानकारी कृपया तार द्वारा दीजिए।"

२९३. पत्र : एल० रॉबर्ट्सनको

बम्बई
जून ९, १९१८

प्रिय श्री रॉबर्ट्सन,

मुझे खेद है कि जब आपका पत्र[1] पहुँचा उस समय मैं बाहर था। मुझे लगता है कि प्रस्तावपर मैं न बोलूँ। आशा है, परमश्रेष्ठ इसके लिए मुझे क्षमा करेंगे। देखता हूँ, जनशक्ति समिति (मैन पावर कमेटी) में मेरा नाम भी शामिल है, लेकिन तिलक जैसे व्यक्तियोंके नाम शामिल नहीं हैं। यदि मैं उनके तथा उन-जैसे अन्य समर्थ स्वराज्य-वादियों [होमरूलर्स] के सहयोगका लाभ प्राप्त नहीं कर सका तो मुझे लगता है मेरी उपयोगिता बहुत कम हो जायेगी। जबतक सरकार यह विश्वास करनेके लिए तैयार नहीं है कि वे अपने कर्त्तव्यका निर्वाह करेंगे तबतक सच्चा राष्ट्रव्यापी सहयोग प्राप्त करने तथा एक राष्ट्रीय सेना बनानेकी आशा करना व्यर्थ है। यदि इन नेताओंको जनशक्ति समितिमें शामिल होनेके लिए आमन्त्रित किया गया तो मुझे उसमें काम करनेमें प्रसन्नता होगी। यदि समितिके विस्तारके बारेमें प्रस्ताव किया जा सकता हो तो मैं यह प्रस्ताव पेश करनेको तैयार हूँ कि इनमें से कुछ सज्जनोंको इन समितियोंमें से एक या अधिकमें शामिल किया जाये।

हृदयसे आपका,

[अंग्रेजीसे]

इंडिया ऑफिस ज्युडिशियल ऐंड पब्लिक रेकर्ड्स ३४१२/१८, तथा बॉम्बे गवर्नमेंट होम डिपार्टमेंट स्पेशल फाइल, सं० १७८८, सन् १९१८

1. यह पत्र ९ जूनको लिखा गया था। उसका पाठ इस प्रकार है "आज ही आपका पत्र मिला। मैं स्मृतिपत्र (भरतीसे सम्बन्धित उस टिप्पणीको छोड़कर जो प्रेसमें है) के साथ कार्यसूची नत्थी कर रहा हूँ। स्मृतिपत्रमें योजनाके बारेमें विस्तारसे बताया गया है। आप देखेंगे, परमश्रेष्ठने यह मान लिया है कि आप बोलना स्वीकार करेंगे ही। अगर आप वैसा न करना चाहें तो कृपया आप किसी सन्देशवाहक द्वारा इस आशयकी सूचना भेज दें ताकि कार्यसूचीमें आपका नाम न रखा जाय।"

२९४. पत्र : लॉर्ड विलिंग्डनको

बम्बई
जून ११, १९१८

प्रिय लॉर्ड विलिंग्डन,

मुझे विश्वास है, आप इस पत्रका गलत अर्थ नही लगायेंगे।

मेरे विचारमे आपने कल सर्वश्री तिलक और केलकरको[1] बोलनेसे रोककर एक गम्भीर भूल की है।[2] आपकी ओरसे ही उन्हे सूचना दी गई थी कि वे आलोचना तो कर सकते हैं, किन्तु कोई सशोधन पेश नही कर सकते। आपके रोकनेका अर्थ यह लगाया जायेगा कि आपने देशके एक महान् तथा वर्द्धमान दलका अपमान किया और इस प्रकार लोग नाराज होगे। आपकी इस कार्रवाईसे कार्यकर्त्ताओकी स्थिति बडी नाजुक और कठिन हो गई है और यदि श्री तिलक सरकार या साम्राज्यके शत्रु हैं तो निस्सन्देह आपने उन्हे इस मार्गपर चलनेके लिए और भी शक्ति प्रदान की है। किन्तु यदि आपने उन्हे और श्री केलकरको अपनी बात कहने दी होती तो वे सम्मेलनसे सन्तुष्ट होकर जाते और यह कहा जा सकता था कि आपने सबको उचित अवसर दिया। क्या ऐसा नही हो सकता कि आप अपनी इस भारी भूलके लिए सार्वजनिक रूपसे खेद प्रकट करें या खेद प्रकट करते हुए दोनोको बुला भेजें और उन्हे सहयोग देनेके लिए आमन्त्रित करे और उनके दृष्टिकोणपर उनसे बातचीत करे? इसमें आपको घाटा कुछ नही होगा, बल्कि लाभ ही होगा। इससे आप जनताकी नजरोमें ऊँचे उठेगे, आपकी प्रतिष्ठा बढेगी, जनतासे सहायता प्राप्त करनेकी आपकी क्षमतामें वृद्धि होगी, तथा सम्भवत. स्वराज्य-वादी दल [होमरूल पार्टी]को भी आप अपने पक्षमें कर सकेंगे, और देशमें अब जो आन्दोलन निश्चित रूपसे फूट पडनेको[3] है, उसका अकुर दब जायेगा।

मैं एक बार फिर आपसे अनुरोध करता हूँ कि आप इस पत्रका गलत अर्थ नही लगायेंगे। इसे लिखनेके पीछे मात्र सद्भावनाकी ही प्रेरणा है।[4]

आपका विश्वस्त मित्र,

मो० क० गांधी

[अग्रेजीसे]

इडिया ऑफिस ज्यूडिशियल ऐंड पब्लिक रेकर्ड्स ३४१२/१८

१. नरसिंह चिन्तामण केलकर, राष्ट्रवादी, राजनीतिक नेता, तिलकके साथी और जीवनचरित्र-लेखक तथा पूनाके **मराठा** के सम्पादक।

२. यह घटना १० जूनको बम्बई प्रान्तीय युद्ध सम्मेलनमें घटी थी। सम्मेलनकी अध्यक्षता लॉर्ड विलिंग्डन कर रहे थे।

३. अन्तमे ऐसा ही हुआ। देखिए "भाषण · बंबईकी सभामें", जून १६, १९१८।

४. गांधीजीको उसी दिन म्फिररसे निम्नलिखित उत्तर मिला: "परमश्रेष्ठकी इच्छानुसार सूचित करता हूँ कि आपका आजका पत्र मिला। इस पत्रके मजमूनपर उन्हें कुछ आश्चर्य और निराशा हुई। जहाँ वे सार्वजनिक मामलोंपर उचित मतभेदके लिए गुजाइश रखनेको सदैव तैयार रहते है वहाँ वे महामहिम

२९६. पत्र : जी० ए० नटेसनको

बम्बई
जून १३, [१९१८]

प्रिय श्री नटेसन,

इस पत्रके पहुँचनेसे पहले मेरा पुत्र देवदास आपके पास पहुँच जायेगा। मैं चाहता हूँ, जबतक वह वहाँ रहे, आपके साथ आपके परिवारके सदस्यके रूपमें रहे। यदि यह आपके लिए असुविधाजनक हो तो आप वैसा कहनेमें संकोच न करेंगे। मैं नहीं चाहता कि वह किसी गुजराती परिवारके साथ रहे। उसे किसी तमिल परिवारके साथ ही रहना चाहिए। उसे तमिल सीखनी है और हिन्दी पढ़ानी है। मैंने उसे भारतीय सेवा संघ [इंडियन सर्विस लीग] की माँगपर भेजा है। मैंने देवदासको कुम्बकोणम् भेजना स्वीकार कर लिया है और उसका अन्तिम लक्ष्य वहीं जाकर रहना है। किन्तु, चूँकि कुम्बकोणम्के मित्र उसे जुलाईसे पहले बुलानेको तैयार नहीं हैं, इसलिए मैंने सोचा, उसे भारतीय सेवा संघमें कुछ कार्य आरम्भ कर देना चाहिए। मैंने देवदासको ३० रुपये दिये हैं। वहाँ पहुँचनेपर उसके पास १५ रु० बच रहेंगे। यदि उसे कुछ नकदकी आवश्यकता हो तो कृपया वह उसे दे दें और मेरे नाम चढ़ा दें। मैं जानता हूँ, आप ऐसा नहीं करते। लेकिन क्या ही अच्छा हो कि आप देवदाससे ही यह शुभ कार्य शुरू कर दें। आपके इनकार करनेपर मुझे यहाँसे रुपये भेजने पड़ेंगे। ऐसा अवसर आनेपर हरबार मैं आपको ही सारा भार उठाने नहीं दूँगा।

हृदयसे आपका,
मो० क० गांधी

गांधीजीके स्वाक्षरोंमें मूल अंग्रेजी पत्र (जी० एन० २२२७) की फोटो-नकलसे।

२९७. भाषण : बम्बईकी सभामें[1]

जून १६, १९१८

इस महत्त्वपूर्ण और विराट् सभाकी अध्यक्षता करनेका निमन्त्रण स्वीकार करते समय मेरे मनमें बहुत-कुछ हिचकिचाहट थी। हम लोग यहाँ, १० जूनको टाउन हॉलमें युद्ध-सम्मेलनकी अध्यक्षता करते हुए परमश्रेष्ठ लॉर्ड विलिंग्डनने जो व्यवहार किया था, उसका

१. यह सभा सन्ध्याके समय बम्बईके केन्द्र गिरगाँवकी शान्ताराम चालमें की गई थी। गांधीजी अध्यक्ष थे। इसमें लगभग १२ हजार व्यक्तियोंने भाग लिया। प्रान्तीय युद्ध-सम्मेलनकी बैठकके अवसरपर होमरूल लीगके नेताओंके सम्बन्धमें गवर्नरने अपने भाषणमें जो रोषोत्पादक बातें कही थीं, यह सभा उसके विरोधमें आयोजित की गई थी। इस सभामें दो प्रस्ताव पास किये गये थे। देखिए अगला शीर्षक। जिस दिन यह सभा बुलाई गई थी, वह दिन 'होमरूल दिवस' के रूपमें मनाया जा रहा था।

२९६. पत्र : जी० ए० नटेसनको

बम्बई
जून १३, [१९१८]

प्रिय श्री नटेसन,

इस पत्रके पहुँचनेसे पहले मेरा पुत्र देवदास आपके पास पहुँच जायेगा। मैं चाहता हूँ, जबतक वह वहाँ रहे, आपके साथ आपके परिवारके सदस्यके रूपमे रहे। यदि यह आपके लिए असुविधाजनक हो तो आप वैसा कहनेमें सकोच न करेंगे। मैं नही चाहता कि वह किसी गुजराती परिवारके साथ रहे। उसे किसी तमिल परिवारके साथ ही रहना चाहिए। उसे तमिल सीखनी है और हिन्दी पढानी है। मैंने उसे भारतीय सेवा सघ [इंडियन सर्विस लीग] की माँगपर भेजा है। मैंने देवदासको कुम्बकोणम् भेजना स्वीकार कर लिया है और उसका अन्तिम लक्ष्य वही जाकर रहना है। किन्तु, चूंकि कुम्बकोणम्-के मित्र उसे जुलाईसे पहले बुलानेको तैयार नही है, इसलिए मैंने सोचा, उसे भारतीय सेवा संघमे कुछ कार्य आरम्भ कर देना चाहिए। मैंने देवदासको ३० रुपये दिये हैं। वहाँ पहुँचनेपर उसके पास १५ रु० बच रहेगे। यदि उसे कुछ नकदकी आवश्यकता हो तो कृपया वह उसे दे दें और मेरे नाम चढा दें। मै जानता हूँ, आप ऐसा नही करते। लेकिन क्या ही अच्छा हो कि आप देवदाससे ही यह शुभ कार्य शुरू कर दें। आपके इनकार करनेपर मुझे यहाँसे रुपये भेजने पड़ेंगे। ऐसा अवसर आनेपर हरबार मैं आपको ही सारा भार उठाने नही दूंगा।

हृदयसे आपका,
मो० क० गांधी

गाधीजीके स्वाक्षरोमे मूल अग्रेजी पत्र (जी० एन० २२२७) की फोटो-नकलसे।

२९७. भाषण : बम्बईकी सभामें[1]

जून १६, १९१८

इस महत्त्वपूर्ण और विराट् सभाकी अध्यक्षता करनेका निमन्त्रण स्वीकार करते समय मेरे मनमे बहुत-कुछ हिचकिचाहट थी। हम लोग यहाँ, १० जूनको टाउन हॉलमें युद्ध-सम्मेलनकी अध्यक्षता करते हुए परमश्रेष्ठ लॉर्ड विलिग्डनने जो व्यवहार किया था, उसका

१. यह सभा सन्ध्याके समय बम्बईके केन्द्र गिरगाँवकी शान्ताराम चालमें की गई थी। गांधीजी अध्यक्ष थे। इसमें लगभग १२ हजार व्यक्तियोंने भाग लिया। प्रान्तीय युद्ध-सम्मेलनकी बैठकके अवसरपर होमरूल लीगके नेताओंके सम्बन्धमें गवर्नरने अपने भाषणमें जो रोषोत्पादक बातें कही थीं, यह सभा उसके विरोधमें आयोजित की गई थी। इस सभामें दो प्रस्ताव पास किये गये थे। देखिए अगला शीर्षक। जिस दिन यह सभा बुलाई गई थी, वह दिन 'होमरूल दिवस' के रूपमें मनाया जा रहा था।

सादर विरोध करनेके लिए इकट्ठे हुए हैं। मेरे हृदयमें लॉर्ड विलिंग्डनके प्रति बहुत आदर है। भारतके गवर्नरोंमें शायद वे ही सर्वाधिक लोकप्रिय हैं। सब जानते हैं कि हमारी आकांक्षाओंके सम्बन्धमें उनके विचार उदार हैं। इसलिए जब मैं इस सभाकी कार्रवाई-का खयाल करता हूँ तब मुझे दुःख होता है। परन्तु मैं अनुभव करता हूँ कि मेरा जो स्पष्ट कर्त्तव्य है वह कितना ही दुःखद क्यों न हो — उसके पालनमें मैं अपने व्यक्तिगत आदर-भावको बाधक नहीं होने दे सकता। मेरा यह कर्त्तव्य साफ है। लॉर्ड विलिंग्डनने सम्मेलन बुलाया था और उसमें होमरूल लीगोंके प्रमुख सदस्योंको सोच-समझकर निमन्त्रित किया था। निमन्त्रित सदस्य एक ओर तो अपमानित होना नहीं चाहते थे और दूसरी ओर गवर्नरको काफी पहले यह बता देना चाहते थे कि वे सम्मेलनमें अपने विचार रखना चाहते हैं। इसीलिए उन्होंने सम्मेलनका कार्यक्रम पूछा था। लॉर्ड विलिंग्डनको दिल्ली युद्ध सम्मेलनका[1] अनुभव भी था। वे जानते थे कि उस समय जो समितियाँ बनाई गई थी उनमें सर्वप्रथम होमरूल लीगके सदस्योंको अपने विचार प्रकट करनेका अवसर दिया गया था। उन्हें यह भी मालूम था कि कई वक्ताओंने पहली ही बैठकमें राजनैतिक भाषण दिये थे। गवर्नर इन सब बातोंको जानते थे। फिर भी सम्मेलनमें जो-कुछ हुआ उसपर ध्यान दीजिए। सम्मेलनके प्रारम्भिक भाषणमें ही उन्होंने जानबूझकर होमरूल लीगोंपर आक्षेप किया। उन्होंने उनपर निरन्तर अड़ंगा लगानेका दोष लगाया। उन्हें विश्वास नहीं था कि वे सच्चे हृदयसे सहायता देना चाहती हैं। सम्मेलनके मंचसे इस प्रकार आक्षेप करना उचित न था। यदि गवर्नर उन लोगोंका सहयोग नहीं चाहते थे तो उन्हें उनको आमन्त्रित ही न करना चाहिए था। यदि वे उनके सहयोगके इच्छुक थे तो उसका तरीका यह न था कि वे शुरू में ही कह दें कि वे उन लोगोंपर विश्वास नहीं करते। उन्हें यह स्मरण रखना चाहिए था कि होमरूल लीग एक प्रकारसे बहुत बड़ी सहायता देती रही है। उनके द्वारा संचालित 'क्रॉनिकल' पत्रने लोगोंसे लगातार यही कहा है कि वे जितनी ज्यादा मदद दे सकें उतनी दें। मैं परमश्रेष्ठसे निवेदन करना चाहता हूँ कि लीगोंपर उनका आरोप लगाना एक व्यावहारिक भूल तो थी ही। परन्तु बात यहीं समाप्त नहीं हुई, श्री केलकरके पूछनेपर उन्होंने यह लिखा था :

> सम्मेलनके सामने आनेवाले प्रस्तावोंको पेश करने, उनका अनुमोदन करने और समर्थन करनेके लिए कुछ वक्ता पहलेसे निमन्त्रित किये जायेंगे। उन वक्ताओंके भाषणोंके पश्चात् खुली बहस प्रारम्भ होगी।
>
> जो प्रस्ताव सम्मेलनके सामने रखे जायेंगे उनका मजमून दिल्ली सम्मेलनके प्रस्तावोंको कार्यान्वित करनेकी दृष्टिसे बनाया जायेगा। ये प्रस्ताव केवल दो ही होंगे जिनमें से एकमें सामान्य बातें होंगी और दूसरेमें कुछ निश्चित सुझाव होंगे। कोई औपचारिक संशोधन स्वीकार नहीं किया जायेगा। परन्तु यदि वक्ता वादविवादके दौरान कोई सुझाव देंगे या आलोचना करेंगे तो सरकार उनपर पूरा विचार करेगी।

यहाँ राजनैतिक चर्चाके बारेमें किसी प्रकारका निषेध नहीं है। श्री तिलक, श्री केलकर तथा अन्य सज्जनोंने वक्ताओंमें अपना-अपना नाम लिखाया और उचित समयपर

१. वाइसरायका युद्ध-सम्मेलन। यह दिल्लीमें २७ से २९ अप्रैल, १९१८ तक हुआ था।

श्री तिलक बोलने खड़े हुए। वे मुश्किलसे तीन वाक्य, जिनमें से दोमें तो राजभक्तिका ही इजहार था, बोल पाये होंगे कि उन्हे यह कहकर रोक दिया गया कि वे राजभक्ति-सम्बन्धी प्रस्तावपर अपने राजनैतिक विचार व्यक्त कर रहे है। श्री तिलकने इसका विरोध करते हुए कहा कि राजभक्तिके प्रस्तावमें कुछ जोड़ा गया है और उसके सम्बन्धमें आलोचना करनेका उन्हे अधिकार है; किन्तु उसका कोई फल न निकला। इसके बाद श्री केलकर खड़े हुए। उन्हे भी बोलनेसे रोक दिया गया। इस सबका परिणाम यह हुआ कि तुरन्त कुछ लोग श्री तिलकके नेतृत्वमें टाउन हॉलसे बाहर निकल आये।[1] मेरी नम्र सम्मतिमें परमश्रेष्ठने यह आदेश देनेमें सख्त भूल की। इतना ही नही, वे जिस उद्देश्यको मजबूत बनाने आये थे उन्होने उसीका अहित किया। उन्होने अकारण ही श्री तिलक और श्री केलकरका और उनके रूपमे देशकी एक शक्तिशाली सस्थाका अपमान किया। श्री तिलक और उनके अनुयायियोकी अवहेलना या अवमानना करना सम्भव ही नही है। श्री तिलक जनताके आराध्य है। हजारो लोगोपर उनका इतना बड़ा प्रभाव है जितना किसी अन्य नेताका नही। उनके लेखे श्री तिलकका आदेश कानून है। मेरा उनसे बहुत मतभेद है, परन्तु यदि मै इस तथ्यसे इनकार करूँ कि उनके उत्कट देश-प्रेम, उनके महान् त्याग और जनताकी माँगके प्रबल समर्थनकी बदौलत इस देशकी राजनीतिमें उनकी स्थिति अनन्यतम है तो मै आत्मप्रवचनाका दोषी होऊँगा। उनका और उनके माध्यमसे लोगोका जो अपमान किया गया है वह समस्त राष्ट्रका अपमान है। इसलिए, हममें राजनीतिक मतभेद हो चाहे न हो, हम सबका, जिनको ऐसा प्रतीत हुआ है कि श्री तिलक और श्री केलकरसे लॉर्ड विलिंग्डनने अनुचित व्यवहार किया है, यह कर्त्तव्य है कि हम उसका विरोध करे। मै यह बात स्वीकार कर लेनेको तैयार हूँ कि यदि श्री तिलक उक्त प्रस्तावके समर्थनमें बोलनेके लिए खड़े होते तो बेहतर होता। वैसे, मेरी व्यक्तिगत और विशिष्ट सम्मति— जिसमें शायद अन्य कोई मेरे साथ नही है — यह है कि यदि वे अपने गौरवके अनुकूल मौन रहते तो अधिक अच्छा होता। परन्तु मेरे खयालसे, उन्हे राजभक्ति-सम्बन्धी प्रस्तावपर बोलने और उसकी आलोचना करनेका अधिकार था। मै इस रायसे बिलकुल सहमत नही हूँ कि राजभक्ति-सम्बन्धी प्रस्तावमे व्यक्तिगत भावोको व्यक्त करनेकी गुंजाइश नही रहती। जिस राजभक्तिको आलोचनासे बचानेके लिए दीवार बनानेकी आवश्यकता हो वह राजभक्ति उथली होती है। मेरी रायमें सम्राट्से मेरा यह कहना मेरी राजभक्तिके बिलकुल अनुकूल है कि उनके नामसे ऐसे काम किये जा रहे है जो नही किये जाने चाहिये। इस चेतावनीके कारण मेरी राजभक्तिकी घोषणा और भी वास्तविक लगेगी। मेरा खयाल है कि होमरूल लीगोने अनेक सेवाएँ की है और उनमें से विशेष उल्लेखनीय यह है कि उन्होने लोगोमे अपने मनके भाव व्यक्त करनेका साहस पैदा कर दिया है। और मेरे मनमें इस बातके बारेमें जरा भी सन्देह नही है कि यदि ये लीगें अपने कर्त्तव्यका पालन पूर्णरूपेण करती चली जायें तो भारतकी राजभक्ति बिलकुल असन्दिग्ध हो जायेगी। क्योकि होमरूल लीगके

१. तिलकके साथ सर्वश्री गांधी, जिन्ना, बी० जी० हॉर्निमैन ('बॉम्बे क्रॉनिकल'के तत्कालीन सम्पादक), एन० सी० केलकर और आर० पी० करंदीकर भी बाहर आ गये थे।

सच्चे मददगारके लिए साम्राज्यकी रक्षा हर हालतमें करना ही धार्मिक निष्ठाकी वस्तु होनी चाहिए। इसका कारण यह है कि साम्राज्यकी सुरक्षिततासे ही उसकी आशाएँ पूरी हो सकती हैं। साम्राज्यकी सहायतासे हाथ खींचनेका अर्थ है, राष्ट्रीय आत्मघात करना। हम खुदका नुकसान किये बिना अपने भावी साझेदारको हानि पहुँचानेकी इच्छा कैसे कर सकते हैं?

इसलिए जहाँ मैं होमरूल लीगके सदस्योंकी उस रायसे सहमत हूँ कि हमें परमश्रेष्ठके अशिष्ट व्यवहारके लिए उनसे माफी मँगवाकर राष्ट्रीय सम्मानकी रक्षा अवश्य करनी चाहिए, वहाँ हम लोगोंका कर्त्तव्य है कि हम युद्धके संचालनमें अधिकारियोंको सहायता देनेका और अधिक उद्योग करें। हमें लार्ड विलिंग्डनकी गलतीसे क्रोधमें आकर स्वयं गलत कदम न उठाना चाहिए। यह हमारे अनेक हितोंका प्रश्न है। हम स्वराज्य चाहते हैं, सो भी जल्दीसे-जल्दी। मेरी इच्छा है, मैं अपने देशवासियोंको अपने इन विचारोंको माननेके लिए राजी कर सकूँ कि पढ़े-लिखे लोग सरकारके साथ बिलकुल बिना किसी प्रकारकी शर्तके और सच्चे दिलसे सहयोग करेंगे, तो हम स्वराज्यके बहुत समीप पहुँच जायेंगे। यह कार्य उसके अतिरिक्त अन्य किसी उपायसे सम्भव नहीं है। मेरे देशवासियोंको यह आशंका है कि हमारी अन्य आशाओंकी तरह स्वराज्यकी आशा भी व्यर्थ सिद्ध होगी। मैं उनकी इन आशंकाओंमें उनसे सहमत नहीं हूँ। यहाँकी सरकारने, और सम्राट्की सरकारने भी, हमारे विश्वासको डिगानेके लिए कुछ न किया हो सो बात नहीं है। लेकिन बात यह है कि मेरा विश्वास उन सरकारोंकी नीतिमें किये गये परिवर्तनपर निर्भर नहीं है, वरन् वह हमारे अपने संघर्षकी ठोस बुनियादपर निर्भर है। निस्सन्देह यह बात सहज ही समझमें आ जाती है कि यदि हम जनशक्ति और साधनोंके विकासको नियन्त्रित कर पायें तो हमारी स्थिति और शक्ति अजेय हो जायेगी, क्योंकि स्वराज्य-प्राप्तिकी अपनी इस विनम्र योजनामें मैं कमसे-कम इन दो विभागोंपर पूर्ण नियन्त्रण पानेकी आकांक्षा रखता हूँ। इसमें सरकार हमारा सहयोग चाहती है। हमें उनकी बातपर विश्वास करना चाहिए। सरकार स्वेच्छासे और ईमानदारीसे दी गयी सहायताको अस्वीकार नहीं कर सकती। हमारे द्वारा रंगरूट दिये जानेका अर्थ है, कानूनन नहीं तो भावनासे, पैसेके लिए लड़नेवाली सेनाकी जगह राष्ट्रीय सेनाका निर्माण। सरकारी भरती विभागने जो कई हजार रंगरूट भरती किये हैं उनके बारेमें मैंने कभी नहीं माना कि उनकी भरतीका श्रेय हमको है। ये रंगरूट देशभक्तोंकी हैसियतसे भरती नहीं हुए हैं और न वे देशकी या साम्राज्यकी खातिर भरती हुए हैं, बल्कि उनको रुपयेका अथवा अन्य चीजोंका जो लालच दिया गया है उसके कारण भरती हुए हैं। हम जिन रंगरूटोंकी भरती करेंगे वे स्वराज्यके सैनिक होंगे। वे साम्राज्यके लिए लड़ने जायेंगे, परन्तु वे साम्राज्यके लिए इसीलिए लड़ेंगे कि वे साझेदार बननेके इच्छुक हैं। वे सर नारायणकी[1] भाँति यह न सोचेंगे कि अपने घर-बारकी हिफाजतके लिए लड़ना अपमानजनक है, बल्कि वे साम्राज्यकी खातिर लड़कर अपनी स्वतन्त्रता प्राप्त करनेकी आकांक्षाको पूर्णरूपसे सम्मानजनक मानेंगे।

१. सर नारायण गणेश चन्दावरकर।

आशा है कि परमश्रेष्ठ इस बृहद् सभाकी माँगको स्वीकार करेंगे, परन्तु यदि वे अभी ऐसा न कर पाये, और वाइसराय भी इसमें असफल हों तो कमसे-कम मैं तो आशा करूँगा कि वे खुद अपनी मरजीसे निकट भविष्यमें होमरूल लीगसे क्षमा-याचना कर लेंगे, क्योंकि मैं अच्छी तरह जानता हूँ कि इन लीगोका मंशा युद्ध-संचालनमे सहयोग देनेका है। और जब वे यह समझ लेंगे तब वे अपनी गलतीको मान लेंगे और चूँकि वे सज्जन हैं, इसलिए सज्जनकी तरह ही क्षमायाचना कर लेंगे। इसमे कठिनाइयाँ जरूर हैं परन्तु उनमे से बहुतसी खुद सरकारकी ही पैदा की हुई हैं। इस प्रकार लोकमतकी उपेक्षा करने और रगरूट उपलब्ध करनेके सम्बन्धमें, जो हम दोनोका संयुक्त उद्देश्य है, दी गई हमारी विनम्र सलाहको ठुकरानेके कारण हमारा काम पूरा होना लगभग असम्भव हो गया है; परन्तु हमारा कर्त्तव्य तो स्पष्ट है। इन तथा अन्य अनेक कठिनाइयोसे परास्त न होते हुए, हमे आगे बढ़ते जाना चाहिए और व्यवहारत. यह सिद्ध करते हुए कि लोगोकी इच्छाको सतत ठुकराते रहकर सरकार साम्राज्यको कितनी बड़ी हानि पहुँचा रही है, हमें अपनी सम्मतिके प्रति उसकी उपेक्षा दूर कर देनी चाहिए। इसलिए मैं दूसरे प्रस्तावको जो आपके समक्ष आनेवाला है इस रूपमें नही देखता कि उसमे हमारे सहयोगकी शर्तें बताई गयी है बल्कि हमारे मार्गकी कठिनाइयोके विवरणके रूपमें देखता हूँ। हम अपने लक्ष्यको केवल दो ही तरीकोसे प्राप्त कर सकते हैं — सहयोग प्रदान करके या अड़ंगा-नीतिका अनुसरण करके। ब्रिटिश संविधानमें अपने अधिकारोको प्राप्त करनेके लिए अडंगा-नीतिका अनुसरण करना पूर्णत: न्याय-संगत माना गया है और वह सुपरिचित मार्ग भी है। परन्तु साम्राज्यके वर्तमान संकट-कालमें उसका परिणाम यही होगा कि सरकार, जिसपर युद्ध संचालनका उत्तरदायित्व है, क्रुद्ध हो जायेगी। और सहयोगसे हम सरकारके विरोधका ही अन्त न कर देंगे; बल्कि उससे हमारे हृदयोमें उस बल और विश्वासका प्रादुर्भाव होगा जिससे हम अवश्य ही अपने लक्ष्य तक पहुँच जायेंगे। हमारे सम्मेलनका यह अवसर अपूर्व अवसर है। हम एक लोकप्रिय गवर्नरसे यह कह रहे है कि वह अपनी भूलोको स्वीकार कर ले और हमारे और अपने बीचके सम्बन्ध सुधार ले। हम यह भी कह रहे है कि यदि हमारी शिकायत दूर न की जायेगी तो हम शपथ लेते हैं कि हम भविष्यमे, लॉर्ड विलिंग्डन जिस सार्वजनिक सभाकी अध्यक्षता करेंगे, उसमे शरीक न होगे। यह एक गम्भीर कदम है, परन्तु मेरे विचारसे, पिछली घटनाओको देखते हुए उचित कदम है। हमारा कदम न्याययुक्त है यह हमारे भावी व्यवहारसे अर्थात् सहयोगके दृढ प्रयास द्वारा गवर्नरके आरोपोको गलत बतानेसे प्रमाणित होगा।

मैं देखता हूँ कि आज 'होमरूल दिवस' मनाया जा रहा है। होमरूल लीगके सदस्योके लिए यह दिवस एक गंभीर चिन्तनका दिवस है या होना चाहिए। लॉर्ड विलिंग्डनने होमरूल लीगके सदस्यो और होमरूलरो [होमरूलके आकांक्षियो] के बीच अन्तर बतलाया है। मेरी कल्पनामे ऐसा कोई भी भारतीय नही हो सकता जो होमरूलर न हो; परन्तु लाखो ऐसे होगे — जैसा कि मै हूँ — जो होमरूल लीगके सदस्य नहीं है। यद्यपि मै किसी होमरूल लीगका सदस्य नही हूँ, फिर भी आज इस शुभ दिवसपर मैं होमरूल लीगके असंख्य सदस्योंकी प्रशंसा किये बिना नही रह सकता जिनका

सहयोग मैंने अपने कामके लिए सदा ही माँगा है और जो मुझे उन्मुक्त हृदयसे दिया गया है। मैंने लीगके अनेक ऐसे सदस्य देखे हैं जो मातृभूमिकी खातिर हर प्रकारका त्याग कर सकते हैं। मेरे देखनेमें आया है कि उनमें से कुछ तो बहुत ही योग्य नवयुवक हैं। क्योंकि यह सराहना करते समय मेरे दिमागमें आन्दोलनके अग्रगण्य नेताओंका खयाल नहीं आ रहा है, मैं तो साधारण कोटिके कार्यकर्त्ताओंकी ही, जिनके साथ काम करनेका मुझे शुभ अवसर प्राप्त हुआ है, बात कर रहा हूँ। मैं इस बातकी तसदीक करना चाहता हूँ कि वे ब्रिटेनके विधानके प्रति वफादार हैं और ब्रिटेनके साथ सम्बन्ध बनाये रखना चाहते हैं। हाँ, मैं इस बातको भी प्रमाणित करता हूँ कि वे अंग्रेजोंके पंजेसे अपने देशको स्वतन्त्र करनेके लिए अधीर हो रहे हैं। नौजवानोंमें जो गुण और दोष हुआ करते हैं वे सब उनमें प्रचुर रूपमें मौजूद हैं। वे जिन शब्दोंको काममें लाते हैं वे कभी-कभी तीखे और उग्र भी होते हैं और विधान सभाओंमें बरते जानेवाले शब्दोंकी तरह सतुलित और सौम्य नहीं होते। उनसे उनका तीव्र उत्साह ही प्रकट होता है। हम सयाने और अनुभवी लोग उनके कुछ कामोंपर कभी-कभी आश्चर्य भी करने लग जाते हैं। परन्तु उनके हृदय सबल और शुद्ध हैं। वे कुछ हदतक वातावरणमें से ढोंग और कृत्रिमताको मिटानेमें सफल हुए हैं। उनके सत्य-कथनने कभी-कभी हमारे हृदयोंको चोट भी पहुँचती है, परन्तु मैं यह कहे बिना नहीं रह सकता कि यद्यपि जिस समय ये लीगें स्थापित की गई थीं उस समय मेरे मनमें उनके प्रति सन्देहके भाव उत्पन्न हुए थे और मैं उनकी उपयोगिताके बारेमें भी शंकायुक्त था, तथापि उन्होंने जो काम कर दिखाया है उसे ध्यानसे देखनेपर मुझे विश्वास हो गया है कि इन लीगोंने एक ऐसी कमी पूरी की है जो बहुत दिनोंसे अनुभव की जा रही थी। उन्होंने लोगोंमें प्रकाश फैलाया है, उनमें आशा और साहस भरा है और अगर अधिकारी उनके इरादोंको गलत न समझ लेते तो मुझे यकीन है कि वे जनशक्तिके इस अतुल भण्डारसे लाभ उठा सके होते। उनसे यह कहनेकी जरूरत नहीं कि लीगोंके सदस्योंको अपने उत्तरदायित्वका भान है और वे उसे निभाते हैं। इन शुद्ध मनोवृत्तिके नौजवानोंसे, जिन्होंने नौकरशाही शासन-तन्त्रमें बड़ी-बड़ी परेशानियोंका सामना किया है इसकी आशा करना व्यर्थ था।

अधिकारी अधिक अनुभवी हैं, इसलिए उनका यह कर्त्तव्य था कि वे अधिक बुद्धिमत्तासे काम लेते और होमरूल लीगके सदस्योंको अपना बना लेते। होमरूल लीगियोंने अब गलती समझ ली है, वह चाहे जिस प्रकारकी हो, इसलिए उन्हें चाहिए कि वे उसे ठीक कर लें। उन्हें चाहिए कि वे नौकरशाही परसे भी अपना विश्वास न हटायें। विश्वासका अभाव दुर्बलताका सूचक है। नौकरशाही खराब है उसका अन्त निश्चित है। परन्तु उसमें काम करनेवाले सब अधिकारी खराब नहीं हैं। उनके सुधारनेमें हमारी विजय है। जिस प्रकार उनके सामने जाकर गिड़गिड़ाना, 'जो हुक्म' कहना और उनके चरणोंमें गिरना गलत है उसी प्रकार उन्हें लज्जित या अपमानित करना भी गलत है। हमें नौकरशाहीके हथकंडोंका मुकाबला अत्यन्त ईमानदारी और निडरतासे करना चाहिए। हम बदीके बदले नेकी करें — यह बात देवताओंके लिए नहीं, बल्कि मनुष्योंके लिए कही गयी थी। सबसे अधिक मर्दानगीका रास्ता तो यह है कि हम ईमानदारीकी सीधी और तंग पगडंडीसे तिलभर भी इधर-उधर न हों। यदि होमरूल लीगके सदस्योंमें मर्दा-

नगी नही है तो वे बेकार है। आगामी वर्ष उनकी परीक्षाका वर्ष है। इसमे वे रचनात्मक कार्यमे वैसी ही योग्यता और क्षमता दिखाये जैसी वे ध्वसात्मक-कार्यमे दिखाते रहे है। और तब इस दिनको भारतके कोने-कोनेमे सभी मनायेंगे।

[अंग्रेजीसे]

बॉम्बे क्रॉनिकल, १७-६-१९१८

२९८. पत्र : शंकरलाल बैंकरको

जून १६, १९१८

[भाईश्री शंकरलाल,]

आपका पत्र मिला। मै यह हरगिज नही कहता कि आप लीगको[1] छोड दे और मेरे साथ काम करे। बल्कि यह चाहता हूँ कि आप लीगमे रहे और लीगकी नीतिका ठीक दिशामे सचालन भी करे। आपको तो जो स्थिति है, वही ठीक मालूम होती है। मुझे अब वह भयानक प्रतीत होती है। यदि लीग रगरूट भरती करनेके काममे भाग न लेगी तो उसका यह आचरण बम्बईके प्रस्तावका विरोध करनेके समान होगा। यदि लीगके सब सदस्य यह मानते हो कि लीगमें रहकर भरतीके काममे भाग नही लिया जा सकता, तो बम्बईके प्रस्तावको[2] स्वीकार करना और मुझे अध्यक्ष पदपर बिठाना उचित नही था। मुझे सहन करके लीगने यह तो बता ही दिया कि जिसे भरतीका काम करना हो, वह कर सकता है।

मेरा विश्वास मात्र अंग्रेज जातिमे ही हो, यह बात नही है, बल्कि मानव-जातिके स्वभावमें है। प्रत्येक मनुष्यमे कुछ-न-कुछ सचाईका अश रहता ही है। उसको पोषण देना हमारा काम है। ऐसा करते हुए वह हमे धोखा दे, तो इसका बुरा परिणाम वही भोगेगा, हम नही।

यह तो निश्चित समझे कि लोगोकी स्थिति वैसी नही है, जैसी आप समझते है।

जब मिलेंगे, तब अधिक स्पष्टीकरण करूँगा। मै मानता हूँ कि भारतमें लीगके सदस्योका कर्त्तव्य यह है कि वे इस कार्यमे जुट जायें। इसके साथ-साथ आप सरकारके अनुचित कार्योंके बारेमें जो आन्दोलन करना चाहें, करे। ऐसा करेंगे, तो दोनो कार्य सिद्ध होगे। यदि होमरूल लीग भरतीके सम्बन्धमें कुछ भी न करेगी तो उसे भारी धक्का लगेगा . . .।[3]

मोहनदासके वन्देमातरम्

[गुजरातीसे]

महादेवभाईनी डायरी, खण्ड ४

१. होमरूल लीग।
२. देखिए अगला शीर्षक।
३. मूलमें यहाँ कुछ शब्द छूटे हुए है।

२९९. तार: ब्रिटेनके प्रधान मन्त्रीको[1]

बम्बई

[जून १६, १९१८ के बाद]

गत १६ जूनको बम्बईकी होमरूल लीगके तत्त्वावधानमें आयोजित सार्वजनिक सभामें स्वीकृत निम्न प्रस्ताव आपकी सेवामें भेज रहा हूँ।

पहला प्रस्ताव

बम्बईके गवर्नरने होमरूल लीगके सदस्योंकी साम्राज्यकी सहायता करनेकी इच्छा और नेकनीयतीपर शक करके और इस प्रकार सम्राट्के प्रति उनकी वफादारीपर भी शक करके उसके प्रायः सभी सदस्योंका जो सार्वजनिक अपमान किया है, बम्बईके नागरिकोंकी सभा उसका विरोध करती है। बम्बईके गवर्नर महोदयने होमरूल लीगके नेताओंको युद्ध-सम्मेलनमें बुलाकर उनके साथ दुर्व्यवहार किया है। उन्होंने सम्मेलनको प्रारम्भ करते समय दिये गये अपने भाषणमें होमरूल लीगके नेताओंपर आक्षेप किये और उन्हें अपनी स्थिति स्पष्ट करनेका अवसर भी नहीं दिया। यह सभा उनके इस व्यवहारका विरोध विशेष रूपसे करती है। यह सभा परमश्रेष्ठ गवर्नरसे यह माँग करती है कि उन्होंने होमरूल लीगों तथा उनके सदस्योंपर जो आक्षेप किये हैं वे उन्हें वापस लें और अपने व्यवहारके लिए क्षमा-याचना करें। यदि वे ऐसा न करें तो यह सभा परमश्रेष्ठ वाइसरायसे अपील करती है कि वे बम्बईके गर्वनरके वक्तव्यका खण्डन करें। यह सभा यह भी निवेदन करती है कि इस प्रकारकी उत्तेजनात्मक भाषाका प्रयोग करनेसे सरकारको दिये जानेवाले हार्दिक सहयोगमें बाधा पड़नेकी सम्भावना है; अतः जबतक वे शब्द वापस नहीं लिए जायेंगे तबतक होमरूल लीगके सदस्य युद्ध-सम्मेलनकी ऐसी किसी भी सभामें भाग न ले सकेंगे जिसकी अध्यक्षता परमश्रेष्ठ करेंगे, परन्तु वे अपने देश और साम्राज्यकी सहायता इस संकटमय कालमें करते हुए अपने कर्त्तव्यका पालन अवश्य करेंगे।

दूसरा प्रस्ताव

इस सभाका खयाल है कि सरकारने इस युद्धके लिए भारतमें सामान और सिपाही जुटानेके उद्देश्यसे जिन तरीकोंको अपनाया है और जो कदम उठाये हैं वे ऐसे नहीं हैं कि उनसे अधिकसे-अधिक लाभ उठाया जा सके। इसका एक कारण यह है कि सरकार इस महान्

१. जून १६ की सार्वजनिक सभामें पास किये गये प्रस्तावोंकी सूचना भारत-मन्त्री और वाइसरायको भी दी गई थी।

राष्ट्रीय कार्यको सम्पादित करनेमें कदम-कदमपर जनताके प्रति अविश्वास दिखा रही है। दूसरा कारण यह है कि सम्बन्धित विभागोके अधिकारियोको युद्धके सचालनमें लोगोका सहयोग समानताकी भावनासे प्राप्त नही हो सका है। और तीसरे, शस्त्र कानूनमें ऐसा आवश्यक सशोधन करनेमें अत्यधिक विलम्ब हो रहा है — जिससे अगर आम लोग, चाहें तो, हथियार ले सकें और रख सकें। चौथा कारण यह है कि अभी तक भारतीय फौजमें कमीशन प्राप्त अफसरोकी जगहोपर भारतीयोको लेनेकी अनुमति नही हैं और प्रजाति-भेद तथा पक्षपात पूर्ववत् बने हुए हैं। पाँचवाँ कारण यह है कि दिल्लीमें साम्राज्यीय युद्ध-सम्मेलनके प्रस्तावोंमें भारतीयोको मौजूदा फौजी कॉलेजोमें दाखिल करनेकी तथा उनके लिए नये कॉलेज अविलम्ब खोलनेकी जो सिफारिश की थी उसको कार्यान्वित नही किया गया है। इस सभाकी रायमें स्थिति यह है कि यद्यपि प्रधान मन्त्री महोदयने फौजमे भरती होनेके सम्बन्धमें जो आमन्त्रण प्रकाशित किया है उसके उत्तरमें प्रत्येक राजभक्त भारतीय सच्चे हृदयसे भरती होनेको तैयार बैठा है, तथापि भारतीय नेताओकी समझमें भरतीके सम्बन्धमें आम लोगोका पूरा और दिली सहयोग पाना तबतक कठिन है, जबतक भारत सरकार उपर्युक्त दोषोको दूर नही करती और इस प्रकार अपनी वर्तमान नीतिको नही बदलती, उनकी यह धारणा बदल नही सकती।

मो० क० गांधी
सभाध्यक्ष

[अंग्रेजीसे]
यंग इंडिया, २-१०-१९१८

३००. भाषण: नडियादमें[1]

जून १७, १९१८

गांधीजीने अपने भाषणमें यह कहा कि किसानोका सबसे पहला और महत्त्वपूर्ण कर्त्तव्य सरकारकी मदद करना है। जर्मनोको पराजित करनेके लिए पूरी सहायता दी जानी चाहिए। अंग्रेज जर्मनोंसे अच्छे हैं। हम अंग्रेजोंके निकट सम्पर्कमें आये हैं और दोनों एक-दूसरेको अच्छी तरह जानते हैं। इसलिए अंग्रेजोंकी सहायता करना हमारा सर्वप्रथम कर्त्तव्य है। कुछ लोगोंका कहना है कि हमें उनकी सहायता उसी सूरतमें करनी चाहिए जब वे

१. खेड़ा जिलेके जिलाधीशने यह विवरण सरकारके पास भेजते हुए लिखा था — "फौजी भरतीके बारेमें १७ जूनको नडियादमें श्री गाधीने अपने समीपवर्ती अनुयायियोंकी एक छोटी-सी सभा की थी। . . . इसमें लगभग ५० आदमी मौजूद थे।"

हमें स्वराज्य दे दें। मेरा विश्वास तो यह है कि जबतक हम सैनिक परम्पराओंको नहीं अपनाते तबतक हम देशको नहीं बचा सकते। हमें कुछ समय बीतनेपर स्वराज्य मिल ही जायेगा। वह हमारी सहायताका निश्चित परिणाम होगा। लड़ाईके मोर्चोंपर काम करनेके लिए भारतमें एक वर्षमें पांच लाख आदमी चाहिए और अगर हम इतने आदमी फौजमें न दे पाये तो सरकार उन्हें स्वयं भरती करेगी और तब यह सेना सरकारी सेना कही जायेगी। परन्तु अगर हमने ही इतने आदमी दे दिये तो वह राष्ट्रीय सेना कही जायेगी। सेनामें आज जो नियम और उपनियम चालू हैं वे ही हमारे द्वारा भरती की गई सेनापर भी लागू होंगे। सैनिक शक्तिके अभावमें स्वराज्य व्यर्थ होगा और उसे प्राप्त करनेका यही सर्वोत्तम अवसर है। इसलिए हमें उसे हाथसे नहीं जाने देना चाहिए। मैंने इस सम्बन्धमें श्री तिलक, श्रीमती एनी बेसेंट, प० मदनमोहन मालवीय तथा प० मोतीलाल नेहरूसे बातचीत की है। उन सबकी यह एक राय है। वे इस विचारको अच्छा अवश्य मानते हैं, परन्तु उन्हें अन्देशा है कि किसान इस विचारको स्वीकार न करेंगे। मैं किसानोंमें विश्वास रखता हूँ। प्लेग और हैजेसे हजारों आदमी मर गये। फिर लड़ाईमें मरना कोई कठिन कार्य नहीं है। अगर लोग आगे आयें तो मैं लड़ाईमें जानेके लिए तैयार हूँ। मैं होमरूल लीगका सदस्य नहीं हूँ। सैनिक शिक्षा पाना स्वराज्यकी दिशामें एक सहायक कदम है, इसलिए होमरूल लीगके प्रत्येक सदस्यको फौजमें भरती होना चाहिए। यह अफवाह फैली हुई है कि मोर्चोंपर भारतीय सैनिक अगली पंक्तिमें रखे जाते हैं और वे मारे जाते हैं। मैं इस अफवाहमें विश्वास नहीं करता। अंग्रेजोंकी कौम लड़नेवाली कौम है, इसलिए मैं यह नहीं मान सकता कि वे दूसरोंको आगे रखकर स्वयं पीछेकी पंक्तियोंमें रहेंगे। किन्तु अगर कभी ऐसा होगा तो मैं स्वयं आपत्ति करूँगा। और जबतक मैं मार न डाला जाऊँ तबतक अपने सब लोगोंको इस तरह न मरने दूंगा। मैं राष्ट्रीय सेनामें भरती होनेकी बात समस्त देशके सामने रखनेसे पहले खेड़ा जिलेके लोगोंसे, जो सत्याग्रही बने हैं, अपील करना चाहता हूँ। नडियाद खेड़ा जिलेका महत्त्वपूर्ण कसबा है; इसीलिए मैंने आप लोगोंको खानगी तौरपर यहां बुलाया है। यदि आप लोग सहमत होंगे तो काम हाथमें ले लिया जायेगा। इसलिए आप खूब सोच-विचार लें और उसके बाद फौजमें भरती हों। अगर मुझे विश्वास हो गया तो दो या तीन दिनोंमें एक सार्वजनिक सभा बुलाई जायेगी।

[अंग्रेजीसे]

बॉम्बे गवर्नमेंट रेकर्ड्स, १९१८

३०१. पत्र : जमनालाल बजाजको

साबरमती
जेठ सुदी १०, [जून १९, १९१८]

भाईश्री जमनालालजी,

आपके आदमीको टिकटके पैसे मैंने आग्रहपूर्वक चुकाये हैं। अगर मैं ऐसा न करूँ तो आपको बिना सकोचके दूसरे काम न सौंप सकूँ।

यहाँ आकर इमारती कामका हिसाब जाँचा। मेरे पास २८,००० रुपये आये हैं। ४०,००० रुपये खर्च हो गये। अतिरिक्त खर्च आश्रमके दूसरे कामोंके लिए जो रकम मिली उसमें से हुआ है। मेरी असली जरूरत अभी तो मकान आदि बनानेके लिए [रुपयों की] है। एक लाखका खर्च है। इसके लिए कुछ भेजनेकी आपकी इच्छा हो तो भेजिएगा।

मोहनदासके वन्देमातरम्

[पुनश्च :]

मेरी यात्राका खर्चा उठानेके बजाय खास जरूरत यह है।

मोहनदास

गांधीजीके स्वाक्षरोंमें मूल गुजराती प्रति (जी० एन० २१९९) की फोटो-नकलसे।

३०२. भाषण : नडियादमें[1]

जून २१, १९१८

भाइयो और बहनो,

मुझे आज यह देखकर खेद होता है कि यहाँ बहनें अधिक नहीं आई हैं। मुझे जो कहना है वह भाइयो और बहनो दोनोंसे कहना है। मैं उपदेश देने नहीं आया; लेकिन मुझे जो बात अच्छी लगती है उसकी सलाह देने आया हूँ। इस सम्बन्धमें नडियादकी यह सभा गुजरातमें पहली सभा है। सत्याग्रहके सम्बन्धमें भी पहली सभा नडियादमें ही हुई थी। सत्याग्रहके इस संघर्षमें हमने बहुत अधिक शक्ति और सहनशीलता दिखाई है। मैं इस संघर्षसे लोगोंके निकट सम्पर्कमें आया हूँ। इससे मुझे ऐसा लगा कि मैं जो बात समस्त भारतसे कहना चाहता हूँ, उसे मुझे यहींसे आरम्भ करना चाहिए।

हम सरकारसे भिड़े, हमने उससे कड़वी और तीखी बातें कहीं, यह सब उचित था। लेकिन हम वैसा करनेके अधिकारी थे या नहीं, यह बतानेका अवसर हमें अब

१. सेनामें भरती करानेके सिलसिलेमें यह सार्वजनिक सभा मुगल कोटीवाडी, गुजरातमें हुई थी। इसमें लगभग एक हजार लोगोंने भाग लिया था।

मिला है। सत्याग्रहमें वैर-भावके लिए स्थान ही नही है। हमारे सघर्षमें यह भाव न था, इस वातका मुझे विश्वास है। आइए, अब हम इस वातपर विचार करे कि सरकारसे हर परिस्थितिमें सम्बन्ध वनाये रखना हमारे लिए वाछनीय है अथवा नही। मैंने अपने इस सघर्षके दौरान तथा अन्य अवसरोपर सरकारके दोषोका अच्छी तरहसे निरीक्षण किया है, और सरकारको उनसे अवगत भी कराया है, लेकिन भारतमें मुझे सरकारके गुण बतानेका अवसर अवश्य नही मिला। इसके साथ निकट सम्पर्कमें आनेपर मैंने इतना तो सीखा है कि हमारा साम्राज्यमें परतन्त्रताकी स्थितिमें वने रहना वाछनीय नही है। अग्रेजोकी यह विशेषता है कि वे परतन्त्र जातियोके साथ भारवाही पशुओका-सा व्यवहार करते हैं। लाभ तभी है जव हम उनके साथ उनके मित्र अथवा साझेदारके रूपमें रह सकें। ये लोग साझेदारोका मान वनाये रखनेमें और उनके प्रति वफादार रहनेमें पक्के रहते हैं। अग्रेज लोगोमें कुछ सद्गुण हैं। वे न्यायप्रिय है और उन्होने पीडितोकी रक्षा भी की है। उन्हे वैयक्तिक स्वतन्त्रता बहुत प्रिय है। तव फिर हमें ऐसे लोगोसे विलकुल ही सम्वन्ध क्यो तोड देना चाहिए। यदि ऐसा करना भी चाहें तो भी ससारमें अपनी सव इच्छाएँ तो कोई पूरी नही कर पाता। मित्रोकी जरूरत सभीको होती है। जापान, अमेरिका और इंग्लैण्डको भी किसी-न-किसीसे मित्रता रखनी ही पडती है। सभी देशोके लोग अपने-अपने स्वभावके अनुकूल लोगोसे सम्बन्ध रखते हैं। भारतीयोकी भी यही स्थिति है। हम स्वतन्त्रताकी कामना करते है, वह भी इसी रूपमें। इस सम्वन्धमें आस्ट्रेलिया और कैनेडा-का उदाहरण हमारे सामने है। हम भी इन्हीके समान दर्जा चाहते हैं। वे सुरक्षाका उप-भोग भी करते हैं और स्वय रक्षा-व्यवस्थामें योग भी देते हैं। हम भी ऐसा ही चाहते हैं। अगर यह स्थिति निश्चित रूपसे प्राप्तव्य हो तो हमें उस दिशामें कदम उठाना चाहिए। यदि आप ऐसा मानते हो कि हमारे लिए अग्रेजोसे सम्बन्ध रखना दु खदायी है, तो मेरी सलाह वेकार होगी। इतना ही नही, वह अपमानजनक ही होगी। लेकिन यदि हम अग्रेजोके साथ वरावरीके साझेदारके रूपमें रहना चाहते हो तो मैं अपनी सलाहको अमूल्य मानता हूँ। भारत अपग है। यदि अग्रेज हमें छोड जायें तो हम एक-दूसरेसे अपना वचाव नही कर सकते हैं। उपद्रवी जातियोसे हम अपनी रक्षा नही कर सकते। कोई विदेशी आक्रमणकारी आये तो हम उससे अपनी रक्षा करने लायक नही हैं। यदि कोई कहे कि ऐसी भयावह स्थितिके लिए अग्रेज सरकार उत्तरदायी है तो यह वात सच है। इस जातिमें ऐसी वहुत-सी त्रुटियाँ हैं, लेकिन उसके गुणोका लाभ उठाकर अपनी उन्नति करना हमारा कर्त्तव्य है।

भारत इतना दुर्दशाग्रस्त है कि वह दूसरोकी सहायताके विना आगे नही वढ सकता। उसकी इस पगुताको दूर करना चाहिए। हमें देशकी रक्षा करने की सत्ता दी जानी चाहिए ताकि हम अपने स्त्री-पुरुषोकी हिफाजत कर सकें। हम जवतक अपनी रक्षा करनेमें समर्थ न हो तवतक स्वराज्यके योग्य नही हो सकते। भारतकी रक्षा सदा अग्रेज करें, यही उसकी पंगुता है। हमें इस पगुताको दूर करनेका पवित्र कार्य सबसे पहले करना चाहिए।

बराबरीके लोग ही साझेदार हो सकते है। बिल्ली और चूहेमें साझेदारी नही होती। अंग्रेज हाथी हैं और हम चीटी, जबतक हमारी यह भावना दूर नही होती तबतक हमारे लिए स्वराज्यका कोई अर्थ नही हो सकता। हमे कोई भी बलवान मनुष्य डरा सकता है। यदि कोई पठान यहाँ आकर लाठी चलाने लगे तो हम सब भाग जायेंगे। यदि रेलके एक डिब्बेमें बहुतसे लोग बैठे होते है और उनमें एक झगड़ालू काबुली आ जाता है तो वह अन्य सबको उठा देता है और जहाँ जगह नही होती वहाँ भी बैठनेकी जगह कर लेता है। इतना ही नही वह अकेला ही चार व्यक्तियोकी जगह घेरकर बैठता है और उसके आगे किसीकी बोलने तककी हिम्मत नही होती।

ऐसी भयकी स्थितिमे हम अंग्रेजोके साथ किस तरह बराबरी कर सकते हैं? यदि मुझे कोई ढेढ मिलता है, मैं उसे अपने पास बिठाता हूँ और कुछ खानेके लिए भी कहता हूँ तो वह काँपता है। जब उसमें इतना मनोबल आयेगा कि वह मुझसे डरना बन्द कर देगा तब ही वह मेरे समान होगा। जबतक ऐसा न हो तबतक, हम दोनो समान हैं — यह कहना ऐसा ही है जैसे जलेपर नमक छिड़कना। साम्राज्यमें हमारी दशा भगीकी है। अब इससे छुटकारा पानेके दो रास्ते हो सकते हैं — मैत्री-भावसे अथवा वैर-भावसे। यदि हम वैर-भावसे, इस स्थितिसे छुटकारा पाना चाहते हैं तो हमें उनको एक भी मनुष्य अथवा एक भी पाईकी सहायता नही देनी चाहिए। इतना ही नही, यदि अन्य लोग दे रहे हो तो हमे उन्हे भी रोकना चाहिए। हमे मित्र राष्ट्रोकी पराजयकी कामना करनी चाहिये और अंग्रेजोको लड़कर बाहर निकाल देना चाहिए। ऐसा करना अभीष्ट हो तो भी यह असम्भव है। यदि हम साम्राज्यवादी सरकारकी मदद नही कर रहे हैं तो भी देशके अन्य सब वर्ग उसकी मदद कर रहे है। हममें सरकारके अथवा अन्य किसीके विरुद्ध लडनेकी शक्ति नही है। सरकार भारतसे दस लाख लोग और करोडो रुपयेकी सहायता लेनेमें समर्थ हो गई है। यह बात स्पष्ट दिखाई पडती है कि यदि हम अंग्रेजोको वैर-भावसे, भारतसे खदेडकर अपनी भगीकी स्थितिसे मुक्त होना चाहते हो तो भी फिलहाल, और जहाँतक हमारी नजर पहुँच सकती है वहाँतक, एक लम्बे अर्से तक, शरीर-बलका प्रयोग करके और अंग्रेजोसे युद्ध द्वारा ऐसा करना असम्भव है। हम इस प्रकार अंग्रेजोसे सम्बन्ध नही तोड सकते।

इसलिए हम इस अधम स्थितिसे मैत्री-भावके द्वारा ही छुटकारा पा सकते हैं। और वह इस समय सरकारको पूरी शक्तिसे सहायता देनेपर ही सम्भव है। हम साम्राज्यके साझेदार होना चाहते हैं, किन्तु यदि साम्राज्य न हो तो साझेदार किसके साथ होगे? हमारी आशाएँ साम्राज्यके अस्तित्वमें छिपी हुई है। हमें साम्राज्यके दोषोके विरुद्ध अवश्य लडना चाहिए। भाई भाईके दोषोके विरुद्ध लडता है। यदि एक भाई दूसरे भाईका हक छीननेका प्रयत्न करे तो दूसरा उसका विरोध करेगा। लेकिन जब पहले भाईपर आपत्ति आती है तो दूसरा भाई उसकी भरसक मदद करके भ्रातृ-भावका परिचय देता है और पुराने वैर-भावको भी भुला देता है। हम अंग्रेजोके प्रति ऐसा व्यवहार कर ही नही सकते, यह माननेका कोई कारण नही है। हम साम्राज्यके अत्याचारोका निस्सन्देह विरोध कर सकते है। यदि आज ही कोई नया अत्याचार हो तो हम उसका विरोध

आज ही कर सकते हैं। किन्तु साथ ही उसके ऊपर जो सकट आया है उसके निवारणार्थ सहायता करनेमें हमें तनिक भी कसर नही रखनी चाहिए।

और फिर साम्राज्यकी मदद करते हुए हम सैनिक अनुशासन सीखेंगे। उससे हमें सैनिक-अनुभव मिलेगा और हममें अपना बचाव करनेकी शक्ति आयेगी। यदि साम्राज्य हमसे विश्वासघात करे तो हम इस प्राप्त शक्तिकी सहायतासे उसका विरोध कर सकते हैं। साम्राज्यके अधिकारी इस बातको जानते हैं। इसलिए, हमें सेनामें भरती करनेसे उनकी नेकनीयत्ती साबित होती है। हमारा इस समय सेना तैयार करना भविष्यमें खतरोके विरुद्ध बीमा करानेके समान है।

अग्रेजोमें राज्य करनेकी शक्ति है, यह केवल उनके पशुबलके ही कारण नही है। उनमें कला है, कौशल है, दूरदर्शिता है, चतुराई है और बुद्धिमत्ता है। उन्हे लोगोसे यथायोग्य व्यवहार करना आता है। वे जानते हैं कि हम स्वराज्य मिलनेकी आशासे मदद करते हैं। उनके दृष्टिकोणमें और हममें से कुछ लोगोके दृष्टिकोणमें यह भेद है। हम कहते हैं, हमें स्वराज्य दे दो तब हम लडेंगे। उनका कहना है, हम किसीके दबावमें नही आते। तुम मदद करो और तुम्हे स्वराज्य मिल जायेगा। हमारा इतिहास देखो। बोअरोंको स्वराज्य मिला क्योकि वे हमसे लडनेके योग्य थे। तुम भी लडनेके योग्य बनो। तब तुमको भी स्वराज्य मिल जायेगा।

हमारी सच्ची शक्ति सैनिक-शक्तिपर ही निर्भर है। इस समय जो भारतीय लड़ रहे हैं, वे हमारी शक्ति नही बढाते, सरकारकी शक्ति बढाते हैं। यदि स्वराज्यके अभिलाषी हम लोग उनके समान सैनिक बन जायेंगे और मृत्युका भय त्याग देंगे तो हम राष्ट्रीय सेनाके सैनिक होगे। ऐसा होनेपर सरकार और हमारे बीच ऊँच-नीचका भेद नही रहेगा।

श्री मॉण्टेग्युकी योजना थोडे ही दिनोमें प्रकाशित कर दी जायेगी।[1] वह योजना या तो हमारी पसन्दकी होगी; और यदि पसन्दकी न होगी तो हम उसमें सशोधन-परिवर्धन कराना चाहेगे। योजना कैसी होगी या हम उसमें कैसे सशोधन-परिवर्धन करा सकेंगे, यह सब हमारे ऊपर निर्भर करता है। ऐसे समयमें यदि यह खबर इग्लैंड पहुँचेगी कि सारा भारत सेनामें भरती होनेके लिए तैयार है तो ब्रिटिश लोकसभा इसका स्वागत करेगी और हमारी जो माँगें उचित होगी उन्हे पूरा करेगी, और यदि वह पूरा न भी करे तो भी क्या होता है? उसपर ब्रिटिश लोकसभाको पछताना पडेगा। युद्धके लिए सन्नद्ध भारतीय अपनी स्वतन्त्रता एक क्षणमें प्राप्त कर सकते हैं। लेकिन सरकार इतनी मूर्ख नही है। अग्रेज वीर जातिके लोग है। वे वीरताको पहचानेंगे। हम अपनी सोई हुई वीरताको जाग्रत करे तो सब-कुछ आज ही प्राप्त कर सकते हैं। इसलिए मेरा आप सबसे अनुरोध है कि समस्त सशयोको छोडकर आप सेनामें भरती हो। मुझे इस बातका

१ सवैधानिक सुधारोंपर मॉण्टेग्यु-चैम्सफोर्ड रिपोर्ट जुलाई ९, १९१८को प्रकाशित हुई थी।

पक्का विश्वास है, इस समय 'होमरूल लीग' आन्दोलनका प्रथम और अन्तिम चरण यही होना चाहिए।[1]

[गुजरातीसे]

गुजराती, ७–७–१९१८

२०३. सैनिक-भरतीकी अपील

पत्रिका — १[2]

नडियाद
जून २२, १९१८

भाइयो और बहनो,

आपने अभी-अभी सत्याग्रहकी भारी लडाई समाप्त की है। उसमें आपकी विजय हुई। इस लडाईमे आपने ऐसे शौर्य, चातुरी और अन्य गुणोका परिचय दिया कि मै आपको देशके लिए इससे भी ज्यादा महत्त्वके काममें लगनेकी सलाह देने और आग्रह करनेकी हिम्मत करता हूँ।

आपने यह दिखा दिया है कि सरकारका विनयपूर्वक विरोध कैसे किया जा सकता है और विरोध करते हुए भी उसकी सम्मान-रक्षा कैसे की जा सकती है एव कैसे स्वय प्रतिष्ठा प्राप्त की जा सकती है। अब मै आपके सम्मुख यह दिखानेका अवसर प्रस्तुत करता हूँ कि ऐसी भारी लडाई लडनेपर भी आपके मनमे सरकारके प्रति तनिक भी कटुता नही है।

आप सब स्वराज्यवादी है और आपमे से कुछ 'होमरूल लीग'के सदस्य है। होमरूलका एक अर्थ यह है कि हम साम्राज्यमे रहकर 'साम्राज्यके हिस्सेदार बनें'। आज हम लोग पराधीन है। आज हमे अग्रेजोके बराबर हक हासिल नही है। कैनेडा, दक्षिण आफ्रिका और आस्ट्रेलिया जैसे इग्लैडके हिस्सेदार माने जाते है, वैसे हिस्सेदार हम नही है। हमारा देश तो पराधीन माना जाता है। हम अग्रेजो जैसे ही हक चाहते है, दक्षिण आफ्रिका वगैरा उपनिवेशोके बराबरके बनना चाहते है और कामना करते है कि ऐसा समय आये जब हम वाइसराय तकका पद ले सके। ऐसी स्थिति लानेके लिए हममे अपनी रक्षा करने अर्थात् शस्त्र उठाकर लडनेकी शक्ति आनी चाहिए। जबतक हमारी रक्षा केवल अग्रेजोपर निर्भर है और जबतक हम सिपाही-वर्गसे डरते है, तबतक हम अग्रेजोकी बराबरीके कहला ही नही सकते। इसलिए हमे हथियार चलाना सीखकर

१. १९१८ के बॉम्बे सीक्रेट एब्स्ट्रैक्ट्सके एक खरीतेके अनुसार गांधीजीने भाषणके अन्तमें कहा: "सभाकी कोई रिपोर्ट समाचारपत्रोंको तबतक भेजनेकी आवश्यकता नहीं है", जबतक वे रंगरूट प्राप्त करनेमें सफल नहीं हो जाते।

२. सम्भव है गांधीजीने उसके पाठका उपयोग अपने किसी भाषणमें भी किया हो। इसकी छपी हुई प्रतियाँ विस्तृत रूपसे बाँटी गईं और समाचारपत्रोंमें इसका अंग्रेजी रूपान्तर भी प्रकाशित हुआ था।

अपनी रक्षा करनेकी शक्ति प्राप्त करनी चाहिए। 'हथियार चलाना बहुत जल्दी सीखना हो तो सेनामें भरती होना हमारा कर्त्तव्य है'।

मर्द और नामर्दमें मित्रता नही हो सकती। हम नामर्द माने जाते है। अगर हम नामर्दोमें नही जाना चाहते, तो हमें हथियार चलाना सीखना जरूरी है।

यह निश्चय है कि हमें साम्राज्यमें हिस्सेदार बनना है। तब हमें चाहे कितना ही दुःख उठाना पडे, प्राण भी देने पडें, फिर भी हमें साम्राज्यका बचाव करना चाहिए। अगर साम्राज्यका नाश हो जाता है तो उसके साथ हमारी महती आशाएँ भी नष्ट हो जाती हैं।

'इसलिए स्वराज्य लेनेका सबसे सरल और सबसे सीधा उपाय साम्राज्यके बचावमें भाग लेना है'। हम बहुत रुपया दे सके, इतनी ताकत हममें नही है। फिर जीत रुपयेसे ही मिल जाये यह सम्भव नही है। जीत सैन्यबलसे ही मिलनी सम्भव है। भारत अपार सेना जुटा सकता है। अगर मुख्यत हमारी सेनासे साम्राज्यकी जीत हो, तो स्पष्ट है कि हम जो भी हक मांगेंगे, ले सकेगे।

कुछ लोग कहेगे कि यदि हम अभी इन हकोको न लेगे तो बादमें धोखा होगा। किन्तु जिस शक्तिसे हम साम्राज्यका बचाव करेगे, उसी शक्तिसे हम अपने हक भी ले सकते है। साम्राज्यकी निर्बलताके अवसरसे लाभ उठाकर लिए गये हक साम्राज्यके बलवान होनेपर हाथसे निकल जा सकते हैं। हम साम्राज्यको सताकर उसमें हिस्सेदारीका हक नही पा सकते। साम्राज्यकी सेवा करनेसे हमें जो हक मिलेगे, वे उसे तग करनेमे हरगिज नही मिलेगे। साम्राज्यके सचालकोका अविश्वास करना अपनी शक्तिका अविश्वास करना है और यह हमारी दुर्बलताका चिह्न है। हमारे हक सचालकोंकी भलाई या कमजोरीपर निर्भर न होकर, बल्कि हमारी योग्यता, हमारी शक्तिपर निर्भर होने चाहिए।

देशी राज्य साम्राज्यकी मदद कर रहे है, इसलिए उन्हें इसका बदला मिल रहा है। धनाढ्य लोग सरकारको रुपयेकी मदद दे रहे है। उन्हे भी इसका बदला मिल रहा है। दोनोमें से कोई भी शर्तोंके साथ मदद नही देता। फौजी सिपाही अपने नमक, अपनी आजीविकाके बदले मदद कर रहे हैं। उन्हें आजीविका और उसके सिवा इनाम-इकराम मिल जाते है। ये सब हमारे ही अग है, परन्तु ये स्वराज्यवादी नही माने जा सकते। इनका ध्येय स्वराज्य नही है। ये स्वदेश-प्रेमके कारण मदद नही देते। अगर हम वैरभावसे स्वराज्य लेना चाहे तो ऐसा भी हो सकता है कि साम्राज्यके सचालक इन तीनो शक्तियोका उपयोग हमारे विरुद्ध करे और हमें हरा दें।

अगर हम स्वराज्य लेना चाहते है, तो हमारा कर्त्तव्य है कि हम भी साम्राज्यकी मदद करे और हमें उसका बदला अवश्य मिलेगा। हमारी नीयत साफ होगी, तो सरकार भी हमसे साफ नीयतसे बर्ताव करेगी। अगर क्षण-भरके लिए यह मान ले कि सरकारकी नीयत साफ नही रहेगी, तो भी हमें अपनी नीयतकी सफाईपर विश्वास रखना चाहिए। यदि हम भलेके साथ ही भलाई करे तो यह वीरता नही है, किन्तु यदि हम बुरेके साथ भी भलाई करे तो इसमें वीरता है।

सरकार हमें सेनामे कमीशन अर्थात् ऊँचे पद नही देती; हथियारोपर पाबन्दीके कानूनको रद नही करती और हमे फौजी तालीम देनेके लिए स्कूल नही खोलती, तब हम उसे कैसे मदद दे सकते है? ये आपत्तियाँ उचित है।

सरकार इस विषयमे सुधार न करके बडी भूल कर रही है। अंग्रेज जातिने बहुत-से पुण्य-कार्य किये है। उनके लिए भगवान् उसका भला करे। परन्तु अंग्रेज जातिके नाम पर अंग्रेज अधिकारियोने भारतको नि शस्त्र बनाकर घोर पाप किया है। अधिकारी-वर्ग यदि अब भी नही चेतेगा तो अंग्रेज जातिके सारे पुण्य कार्योंको नष्ट कर देगा। ईश्वर न करे, यदि भारतकी कुछ भी हानि हुई, और वह किसी अन्य देशके अधीन हो गया, तो भारतीयोकी आत्मा अंग्रेजोको बहुत कोसेगी, अंग्रेजोको दुनियाके सामने लज्जित होना पडेगा और तेतीस करोड लोगोको नामर्द बनानेके कारण बुरा-भला सुनना पडेगा। मै मानता हूँ कि इग्लैडके महान् पुरुष इस बातको समझ गये है, वे चेत गये है। परन्तु वे अपनी उत्पन्न की हुई स्थितिको एकाएक बदल नही सकते। सभी अंग्रेजोको भारतमें आते ही यह सिखाया जाता है कि वे हमारा तिरस्कार करे, अपनेको बडा समझें और हमसे अलग रहे। उनके वातावरणमें ही यह भावना व्याप्त रहती है। उच्च अंग्रेज अधिकारी इस वातावरणसे स्वय मुक्त होनेका और अपने अधीनस्थोको मुक्त करनेका प्रयत्न करते है परन्तु तत्काल सफल नही हो सकते। अगर वक्त नाजुक न होता, तो हम उनसे लडते, परन्तु ऐसे वक्तमे कमीशनो आदिकी प्रतीक्षामे बैठे रहना 'मुँहसे बदला लेनेके लिए नाक काट लेने' के समान है। यह भी हो सकता है कि हम कमीशनोकी प्रतीक्षामे बैठे रहे और हमें साम्राज्यकी सहायताका अवसर ही न मिले।

मेरा यह दृढ विश्वास है कि यदि सरकार कमीशन आदि न देकर या देनेमें देर करके हमे सेनामे भरती होनेसे या किसी दूसरी तरहकी मदद देनेसे रोकना चाहती हो, तो भी हमें आग्रहपूर्वक सेनामे भरती होना चाहिए।

सरकारको इस समय सेनाके लिए पाँच लाख आदमी चाहिए। इन्हे सरकार किसी भी तरह जुटा लेगी। यदि हम उसे इतने आदमी दे देंगे, तो यश हमें मिलेगा, हम सेवा करेगे और कभी-कभी यह जो शिकायत सुनी जाती है कि रगरूट भरती करनेवाले एजेंट लोगोको अनुचित ढंगसे ले जाते है, वह भी दूर हो जायेगी। भरतीका सारा कार्य हमारे हाथमें आना कोई साधारण अधिकार नही है। अगर सरकारका हमपर अविश्वास होगा, अगर उसकी नीयत साफ नही होगी, तो वह हमसे सैनिकोकी भरतीका काम नही करायेगी।

ऊपर दिये गये तर्कों और तथ्योसे देखा जा सकेगा कि फौजमें भरती होनेसे और साम्राज्यको मदद देनेसे हममें स्वराज्यकी योग्यता आती है। उससे हम भारतका बचाव करना सीखते है और एक हदतक अपनी खोई हुई मर्दानगी फिर प्राप्त करते हैं।

मै कहना चाहता हूँ कि अंग्रेजोके गुणोमें मेरा विश्वास है, इसीलिए मै उपर्युक्त सम्मति दे सकता हूँ। इस जातिने भारतका बहुत अहित किया है। फिर भी मै मानता हूँ कि उससे सम्बन्ध रखना हमारे लिए हितकर है। उसके गुणो और दोषोका विचार करनेपर मुझे उसमें गुण अधिक मालूम होते है। अलबत्ता इस जातिके शासनमें रहना दुखदायी है। अंग्रेजोमें एक बहुत बडा दोष यह है कि वे अपनी अधीनस्थ जातियोके

स्वाभिमानकी भावनाको समाप्त कर देते हैं। परन्तु उनमें बराबरीकी जातियोंका पूरा आदर करने और उनके प्रति वफादारी दिखानेका गुण भी है। हमने देखा है कि उन्होंने दूसरोंके अन्यायसे पीड़ित लोगोंको अक्सर मदद दी है। उनके साझेमें रहकर हम उनसे बहुत-कुछ ले सकते हैं और उन्हें बहुत-कुछ दे भी सकते हैं। और सम्भव है, हमारा ऐसा सम्बन्ध संसारके लिए हितकर हो। अगर मेरा यह विश्वास न हो और इस जातिसे बिलकुल स्वतन्त्र होना मुझे इष्ट प्रतीत हो, तो मैं मदद देनेकी सलाह न दूँ। इतना ही नहीं, उनके विरुद्ध विद्रोह करनेकी सलाह देकर, विद्रोहकी सजाका पात्र बनकर भी जनताको सचेत करूँ। अभी तो हमारी स्थिति भी ऐसी नहीं है कि हम किसी अन्य जातिकी सहायताके बिना अपने ही पैरोंपर खड़े रह सकें। मैं यह मानता हूँ कि हमारी उन्नति साम्राज्यमें बराबरीके हिस्सेदार बनकर रहनेसे होगी। मैंने सारे भारतमें घूमकर यह देखा है कि सब स्वराज्यवादी भी ऐसा ही मानते हैं। मैं यह आशा करता हूँ कि मैं खेड़ा जिले और गुजरातसे पाँच सौ या सात सौ नहीं, बल्कि हजारों रंगरूट भरती कर सकूँगा। यदि गुजरात 'नामर्दी' के कलंकसे बचना चाहता है तो उसे हजारों सिपाही देने चाहिए। उस सेनाकी कल्पनामें शिक्षितवर्ग, पाटीदार, बारैया और बाघरी वगैरा सब आ जाते हैं और मुझे आशा है कि वे सब एक कतारमें खड़े होकर लड़ेंगे। जबतक शिक्षित अथवा पढ़ा-लिखा श्रेष्ठ वर्ग आगे नहीं आयेगा, तबतक दूसरे वर्गोंसे आशा रखना व्यर्थ है। मुझे आशा है कि पढ़े-लिखे लोगोंमें से जो अधिक उम्रके होनेपर भी तन्दुरुस्त हैं, वे सभी भरती हो सकेंगे। उनका उपयोग लड़ने-भिड़नेमें नहीं, तो लड़ाईसे सम्बन्धित अनेक कामोंमें किया जा सकता है, वे सिपाहियोंकी सेवा-शुश्रूषा कर सकते हैं। मुझे आशा है कि जिनके युवा पुत्र हैं, वे अपने उन पुत्रोंको लामपर भेजनेमें तनिक भी न हिचकिचायेंगे। युद्धमें पुत्रोंकी वीरगति वीर पुरुषोंके लिए दुःखद नहीं, बल्कि सुखद होनी चाहिए। इस अवसरपर किया यह पुत्र-त्याग स्वराज्यके निमित्त किया गया बलिदान माना जायेगा।

बहनोंसे मेरी प्रार्थना है कि आप मेरी इस अपीलसे घबरायें नहीं, बल्कि उसका स्वागत करें। इसमें आपकी रक्षाकी, लाज बचानेकी कुंजी छिपी हुई है।

खेड़ा जिलेमें ६०० गाँव हैं। हर गाँवकी औसत आबादी एक हजारसे अधिक है। अगर हर गाँव कमसे-कम बीस आदमी दे तो खेड़ा जिलेमें १२,००० लोगोंकी सेना बन सकती है। खेड़ा जिलेमें सात लाखकी आबादी है। इसमें इस भरतीका अनुपात सौके पीछे १-७ आना है। इससे तो हमारी प्रतिशत मृत्यु-संख्या अधिक है। अगर हम साम्राज्यके लिए — स्वराज्यके लिए इतनी भी कुर्बानी देनेके लिए तैयार न हों और नालायक ठहराये जायें तो इसमें आश्चर्यकी कोई बात नहीं है। अगर हर गाँव बीस-बीस आदमी दे, तो वे लड़ाईसे लौटकर गाँवकी जीवित किलेबन्दी बन जायेंगे। अगर वे लड़ाईमें खेत रहे, तो वे स्वयं अमर बन जायेंगे और अपने गाँव और देशको अमर बना देंगे और उनके पीछे वैसे ही दूसरे बीस सैनिक तैयार होकर देशकी रक्षा करेंगे।

यदि हमें यह काम करना ही है, तो उसे करनेमें हम सुस्ती नहीं कर सकते। मैं यह चाहता हूँ कि हरएक गाँवसे अधिकसे-अधिक बलवान् लोग चुने जायें और उनके नाम भेज दिये जायें। मैं अपने भाइयों और बहनोंसे यही माँग करता हूँ। आप

लोगोको समझानेके लिए और आपके विविध प्रश्नोका उत्तर देनेके लिए मुख्य गाँवोमे सभाएँ की जायेंगी और स्वयसेवक भी भेजे जायेंगे।

भाई वल्लभभाई झवेरभाई पटेल (वैरिस्टर), भाई कृष्णलाल नरसिहलाल देसाई (एम० ए०, एल एल० बी०), भाई इन्दुलाल कन्हैयालाल याज्ञिक, भाई हरिप्रसाद पीताम्वरदास मेहता (हितेच्छु प्रेसके मालिक), भाई प्रागजी खडुभाई देसाई, भाई मोहनलाल कामेश्वर पड्या, भाई गणेश वासुदेव मावलकर (वी० ए०, एल एल० वी), भाई कालीदास जसकरण झवेरी (वी० ए०, एल एल० वी०), भाई फूलचन्द वापूजी शाह, भाई गोकलदास द्वारकादास तलाटी (वी० ए०, एल एल० वी०), भाई शिवाभाई भाईलालभाई पटेल (वी० ए०, एल एल० वी०) और भाई रावजीभाई मणिभाई पटेल आदि सज्जन इस काममें शरीक हुए हैं।

मोहनदास करमचन्द गांधी

[गुजरातीसे]
महादेवभाईनी डायरी, खण्ड ४

३०४. पत्र : सी० एफ० एन्ड्रयूजको

[नडियाद
जून २३, १९१८ से पूर्व][1]

[प्रिय चार्ली,]

जहाँतक मेरे प्रस्तावका सम्वन्ध है, तुम जानते हो, मै मैफीके[2] नाम लिखे गये अपने पत्रमे कह चुका हूँ कि [इस मामलेमे] मै मित्र या शत्रु किसीकी जान न लेना अपना धर्म मानता हूँ। उन लोगोके प्रति जो लडना तो चाहते है, परन्तु कायरताके कारण या अग्रेजोके प्रति द्वेष रखनेके कारण लडेंगे नही, मेरा क्या कर्त्तव्य है? क्या उनसे मुझे यह न कहना चाहिए कि "अगर तुम मेरे रास्तेपर चल सकते हो तो बहुत ठीक है, परन्तु यदि तुम ऐसा नही कर सकते तो तुम्हे अपनी कायरता अथवा द्वेष-भावना त्याग कर लड़ना चाहिए। जो व्यक्ति किसीकी जान लेनेकी क्षमता नही रखता उसे तुम अहिंसा नही सिखा सकते। तुम किसी गूँगेको मौनका गुण[3] और विशेषता नही समझा सकते। यद्यपि मै जानता हूँ कि शान्ति वहुत अच्छी चीज है; फिर भी मै उन साधनोका उपयोग करनेमे सकोच न करूँगा जिनसे गूँगा फिर बोल सके। मै किसी शासन-व्यवस्थामे

१. सी० एफ० एन्ड्रयूजने गाधीजीके पत्रका उत्तर २३ जूनको दिया था।

२. देखिए "पत्र जे० एल० मैफीको", ३०-४-१९१८।

३. इस बारेमें एन्ड्रयूजने यह लिखा था: "आपने अपने पत्रमें गूँगेसे जो तुलना की है वह मिसाल मुझे ठीक नहीं लगती। यह तो प्राय: ऐसी युक्ति देनेके समान है कि भारतीयोंको, जो खून-खराबीको बिलकुल भूल गये हैं, इस बातके लिए प्रोत्साहित किया जा सकता है कि वे पहले खून-खराबी करना सीखें और फिर स्वय ही उसे त्याग दें।"

विश्वास नहीं रखता, परन्तु कदाचित् संसदीय शासन-व्यवस्था निरंकुश शासनसे अच्छी होती है। मेरा खयाल है कि अब तुम्हें यह बात स्पष्ट दिख जायेगी कि मैं अहिंसाके सिद्धान्तका या सत्याग्रहका प्रचार उसी हालतमें सबसे अच्छा कर सकता हूँ, जब मैं हिंसक लोगोंसे यह कहूँ कि वे अपनी हिंसाका उपयोग कमसे-कम कष्टप्रद ढंगसे करें। सम्भव है, उसीसे मैं उनको यह भी अनुभव करा सकूँ कि अहिंसा हिंसासे अधिक उपयोगी है।[1] यदि तुम्हारी समझमें मेरी बातें अब भी ठीक तरह न आई हों तो यथा सम्भव यहाँ आनेका प्रयत्न करो।

सस्नेह,
मोहन

[अंग्रेजीसे]

महादेव देसाईकी हस्तलिखित डायरीसे।
सौजन्य : नारायण देसाई

३०५. पत्र : एफ० जे० हॉजको

[नडियाद]
जून २३, १९१८

आपके प्रेमपूर्ण पत्रके लिए मेरा हार्दिक धन्यवाद। हम अपनेको आपके परिवारकी अन्तरंग मण्डलीका सदस्य ही मानते हैं। जब कभी आपके साथ कुछ घंटे बितानेका अवसर मिलता था, बड़ा आनन्द आता था। आपने अपने पत्रमें मेरे साथियोंका उल्लेख किया है और पाठशालाओंको मर न जाने देनेके बारेमें चेतावनी दी गई है, इसलिए मैं उसे बाबू ब्रजकिशोरके पास भेजनेकी स्वतन्त्रता ले रहा हूँ। आप जानते हैं कि डॉ० देव चम्पारन छोड़नेसे पहले भीतीहरवामें एक पक्का भवन बनवा गये हैं। एक महिला शिक्षक जुटानेमें मुझे बहुत मुश्किल हो रही है। किन्तु मैं एक शिक्षिका ढूंढ सकूँगा, इसमें मुझे सन्देह नहीं है। मेरी हार्दिक इच्छा है कि कभी-कभी आप इन पाठशालाओंका निरीक्षण करते रहें। सवारीका प्रबन्ध करनेके लिए आप बाबू गोरखप्रसादसे कह दीजिए।

देवदास इस समय मद्रासमें है। वह वहाँ तमिल भाई-बहनोंके लिए हिन्दी कक्षाएँ चला रहा है।

१. एन्ड्रयूजने इसके उत्तरमें लिखा था : ". . . मैं आपसे इस बातमें पूर्णतया सहमत हूँ कि स्वतन्त्र भारत ही अपना मार्ग स्वयं चुनकर संसारके सामने अहिंसाका सर्वोच्च उदाहरण रख सकता है न कि आजका परतन्त्र भारत। परन्तु फिर भी क्या आप यह बात नहीं सोच सकते कि भारत अपनी उस स्वतन्त्रताको केवल नैतिक बलसे ही प्राप्त करे — देशको गुलाम रखनेवाली सेनाका मुकाबला करनेके लिए स्थायी सेना बनाकर नहीं।"

खेड़ाका झगड़ा कुछ समय पहले ही निपट गया है। समझौतेकी घोषणा करनेवाला मेरा पत्र[1] आपने अखबारोमे देखा या नही? इन दिनो मैंने सैनिक-भरतीका काम शुरू किया है।

हम दोनो श्रीमती हॉजको याद करते है। मै आशा रखता हूँ कि वे फिर पहले जैसी स्वस्थ हो गई होगी।

मुझे आशा है कि बच्चोसे जब मै अबकी बार मिलूँगा, तबतक उनका मुझसे शर्माना खत्म हो चुकेगा। मेरा इरादा कमसे-कम तीन महीनेमें एक बार चम्पारन आते रहनेका है।

हृदयसे आपका,
मो० क० गांधी

[अंग्रेजीसे]

महादेव देसाईकी हस्तलिखित डायरीसे।

सौजन्य : नारायण देसाई

३०६. पत्र : बी० जी० हॉर्निमैनको

[नडियाद]
जून २३, १९१८

मै नही जानता कि इस पत्रके साथ जो अपील[2] भेज रहा हूँ, उसके पक्षमें आप प्रतिज्ञा लेगे या नही, परन्तु यदि आपने उसके पक्षमे प्रतिज्ञा ले ली तो मै उसे बहुत-बडा लाभ समझूँगा। मुझे इसकी जरूरत है। मेरा निश्चित मत है कि यदि हम सरकारको सिपाही जुटा दें और साथ-साथ सरकारके अन्यायोके विरुद्ध लडाई भी लडते रहे तो इस तरह हम अपने सामान्य हितको लाभ पहुँचायेंगे। ये दोनो चीजें साथ-साथ की जा सकती है। सरकारी अधिकारियोकी मूर्खता सैनिक-भरतीके कामको मुश्किल बना रही है। परन्तु इससे हमें निराश नही होना चाहिए। जो-कुछ बन पडे, सो सब हमें करना चाहिए। विरोध-सभाओमें जो प्रस्ताव पास हुए, उनका मै यही अर्थ करता हूँ।

हृदयसे आपका,
मो० क० गांधी

[अंग्रेजीसे]

महादेव देसाईकी हस्तलिखित डायरीसे।

सौजन्य : नारायण देसाई

१. देखिए "सन्देश : खेडाके लोगोंको", ६-६-१९१८।
२. देखिये "सैनिक-भरतीकी अपील", २२-६-१९१८।

३०७. पत्र : श्रीमती एडा वेस्टको

[नडियाद]
जून २३, १९१८

प्रिय श्रीमती वेस्ट,

आपका पत्र पाकर बहुत खुशी हुई। मैं चाहता हूँ कि आप अपने आर्थिक मामलोंकी चिन्ता न करें। अल्बर्ट[1] मेरे भाईके समान हैं। किसी भी कारणसे उन परसे मेरा विश्वास नहीं डिग सकता। अल्बर्टके बारेमें निराश हो जाऊँ, तब तो फिर मुझे दुनियासे निराश हो जाना चाहिए। मैंने उन्हें पत्र[2] लिख दिया है। मैं जानता हूँ कि प्रस्तुत परिस्थितिमें जो-कुछ करना उत्तम था, वही उन्होंने किया। यह जानकर मुझे खुशी हुई है कि आप और मैम, दोनोंने अब बच्चोंकी उचित शिक्षाकी व्यवस्था कर ली है। हिल्डा मेरी याद करती है या नहीं? मालूम नहीं मणिलालको क्या हो गया है। आप सबके लिए उसके मनमें बहुत आदर-भाव था। और आप सबने भी उसे बहुत स्नेह प्रदान किया परन्तु उसका स्वभाव वहमी बनता जा रहा है। मेरा अब भी खयाल है कि वह उसे सुधार लेगा। मैं जानता हूँ कि आपका प्रेम उसके वहमको निकाल देगा। मैं आशा करता हूँ कि आप उससे खुद मिलेंगी, उसे समझायेंगी, बातें करेंगी और उसका मन जीत लेंगी। मैं यह विचार ही सहन नहीं कर सकता कि आपके प्रति मणिलालके मनमें गलतफहमी रहे।

आजकल आश्रमके लिए नये मकान बनवानेका काम चल रहा है। कितना अच्छा होता कि आप इन इमारतोंको बनवाते समय यहाँ होतीं। जमीन बहुत अच्छी जगहपर है। सब कुछ मगनलाल ही सँभाल रहा है। वहाँ फीनिक्समें जब मकान बन रहे थे, तब जो काम अल्बर्ट करते थे, वही मगनलाल कर रहा है। उसे आश्रमसे बाहर कोई आनन्द ही नहीं आता।

सबको प्यार सहित,

आपका,
मो० क० गांधी

[अंग्रेजीसे]

महादेव देसाईकी हस्तलिखित डायरीसे।
सौजन्य : नारायण देसाई

१. अल्बर्ट एच० वेस्ट।
२. यह पत्र उपलब्ध नहीं है।

३०८. पत्र : सोंजा श्लेसिनको

[नडियाद]
जून २३, १९१८

प्रिय कुमारी श्लेसिन,[१]

जिस पत्रकी मैं लम्बे अरसेसे प्रतीक्षा कर रहा था, वह आखिरकार आ गया। हम सभीको तुम्हारे पत्रका इन्तजार था।

फीनिक्स आश्रमको बेचना नही है। उसके बीचमे जो जगह है उसमें से पाँच एकड़ जमीन तुम ले सकती हो। तुम्हारा सपना मुझे पसन्द है, खास तौरपर इसलिए कि उसमें हिन्दुस्तान आनेकी बात भी शामिल है।

यह जानकर मै बहुत खुश हुआ कि तुम टाइपराइटरसे ऊबने लगी हो . .[२]

रामदाससे मैंने दरजी बननेके लिए हरगिज नही कहा। इसलिए नही कि दरजीके काममे कोई सौन्दर्य नही है। वह एक उत्तम दरजी बन भी सकता है। किन्तु इसलिए कि वह एक आदर्शवादी लड़का है, उसकी इच्छा तरह-तरहके अनुभव प्राप्त करनेकी है। अगर वह कवि बन जाये, तो कोरे अलकार और छन्द रचनेवाला कवि ही नही बनेगा, बल्कि कर्मठ और कर्मण्य काव्य लिखनेवाला कवि बनेगा। रामदास स्वप्नदर्शी है और मुझे स्वप्नदर्शी लोग पसन्द है। मै आशा रखता हूँ कि तुम उसकी मित्र और पथ-प्रदर्शक बनकर उसे सन्मार्गपर लगाओगी। मै चाहता हूँ कि थोड़े समय तुम जाकर मणिलालके साथ रहो। वहाँ तुम अपनी पढाई जारी रख सकोगी।

वॉगल[३], फिलिप्स[४] और डोक[५] परिवारके लोग कैसे है? कभी उनसे मिलती हो? मैकिंटायर[६] कहाँ है? भारतीयोका काम कैसा हो रहा है? थम्बीसे[७] मुलाकात होती है? उसे क्या हो गया है? मै आशा रखता हूँ कि तुम इन सब प्रश्नोकी अपने पत्रोमे चर्चा करोगी। किन्तु कुछ भी न होनेसे थोड़ा होना भी अच्छा है।

१. सोंजा श्लेसिन दक्षिण आफ्रिकामें शुरूमें गाधीजीकी टाइपिस्ट थीं। बादमें तो वे बापूकी बहुत ही विश्वस्त साथी बन गई। सत्याग्रहकी लड़ाईमें उन्होंने काफी मदद दी। देखिए खण्ड ८, पृष्ठ २४।

२. साधन-सूत्रमें यहाँ कुछ शब्द मिटे हुए है।

३. श्रीमती वॉगल भारतीय महिलाओंको पढ़ाती थी, और जोहानिसबर्गमें उन्होंने भारतीय बाजारका आयोजन किया था। उनके पति दरजीका काम करते थे। पति-पत्नी दोनोंने दक्षिण आफ्रिकामें भारतीयोंके लिए काफी काम किया।

४. चार्ल्स फिलिप्स, ट्रान्सवालमें कॉग्रेगेशनल चर्चके पादरी।

५. गाधीजीका अभिप्राय रेवरैंड जोजेफ़ जे० डोक (१८६१–१९१३) की पत्नी और पुत्री ओलिव डोकसे है।

६. गाधीजी जब दक्षिण आफ्रिकामें थे, उस समय श्री मैकिंटायर उनके मुन्शी थे।

७. थम्बी नायडू, एक सत्याग्रही।

यहाँ मेरा जीवन बहुत जटिल बन गया है। तुमने अखबारोंमें छपे मेरे कुछ महत्त्वपूर्ण पत्र तो पढ़े होंगे। आजकल मैं सैनिकोंकी भरतीके जबरदस्त काममें जुटा हुआ हूँ। अपने कामके सिलसिलेमें मुझे लगातार रेल-यात्रा करनी पड़ती है। एकान्त और आरामके लिए मैं तरसता रहता हूँ। लेकिन ये शायद मुझे कभी नहीं मिलेंगे। श्रीमती गांधीमें अद्भुत परिवर्तन हुआ है। जिन चीजोंपर उन्हें आपत्ति हुआ करती थी, अब उन्होंने उन चीजोंको बड़े सुन्दर ढंगसे स्वीकार कर लिया है। किन्तु इन सब बातोंका वर्णन मैं नहीं करूँगा। तुम्हें यहाँ आकर प्रत्यक्ष देखना चाहिए।

सस्नेह,

तुम्हारा,
मो० क० गांधी

[अंग्रेजीसे]

महादेव देसाईकी हस्तलिखित डायरीसे।
सौजन्य : नारायण देसाई

३०९. पत्र : देवदास गांधीको

[नडियाद]
जून २३, १९१८

देखता हूँ, तुमने शिक्षण-कार्यका आरम्भ ठीक तरहसे किया है। मैंने कल कुछ सुझाव भेजे हैं। व्याकरण जल्दी सिखाना। उसमें उन्हें रस आयेगा, इसमें सबसे पहले शब्दोंके रूप सिखाना ठीक रहेगा। उनकी तुलना तमिल शब्दोंके रूपोंसे करनी चाहिए। विद्यार्थियोंकी आयु और विद्याभ्यासमें प्रगतिकी कुछ कल्पना मुझे देना।

यहाँ सैनिक-भरतीकी अपीलकी पहली पत्रिका प्रकाशित[1] कर दी गई है। इसकी तीन प्रतियाँ भेजता हूँ। इसका अंग्रेजी अनुवाद भी कर लिया गया है। इसे पढ़कर जो विचार मनमें आयें, सूचित करना। मैं आजकल अहिंसा-धर्मको कुछ भिन्न, किन्तु भव्य रूपमें देख रहा हूँ। साथ ही अपनी समझकी कमियोंका दर्शन भी करता जा रहा हूँ। इस कार्यके लिए मेरी तपस्या बहुत ही अपर्याप्त है। पहले तपस्यासे जो अनुभव-ज्ञान मिलता था, आज प्रयोगसे उसका करोड़वाँ भाग भी नहीं मिल सकता। चाहे कितने ही जल-बिन्दुओंका विश्लेषण करें, उनमें दो भाग हाइड्रोजन और एक भाग आक्सीजन ही निकलेगी। तिसपर भी निश्चयपूर्वक यह नहीं कहा जा सकता कि पानी उन्हींका सम्मेलन है। यह अनुमान-ज्ञान है। परन्तु यदि मैं दो भाग हाइड्रोजन और एक भाग आक्सीजनका मिश्रण करके पानी बनाऊँ, तो यह निश्चित ज्ञान हुआ। यह अनुभव-ज्ञान है। पानी भले ही दूसरी तरह बन सकता हो, परन्तु एक ही प्रयोगसे मैंने निश्चयपूर्वक बता दिया कि उपर्युक्त गैसोंके मिश्रणसे तो पानी बनता

१. देखिए "सैनिक-भरतीकी अपील", २२-६-१९१८।

ही है। बहुतसे कार्य हम अनुमानसे करते हैं और कोई हानि नहीं होती। किन्तु महान् कार्योंमें अनुमानसे हानि और अनुभवसे लाभ देखा जा सकता है। इसीलिए यमादिके पालनकी जरूरत है। अनुभव-ज्ञान प्राप्त करनेके लिए यह एकमात्र सीढ़ी है।

बापूके आशीर्वाद

[गुजरातीसे]
महादेवभाईनी डायरी, खण्ड ४

३१०. पत्र : मोहनदास नागजीको

[नडियाद]
जून २३, १९१८

पुनर्विवाहके बारेमें मेरी राय यह है कि पतिका पत्नीके गुजर जानेपर और पत्नीका पतिके गुजर जानेपर दुबारा विवाह न करना जरूरी है। संयम हिन्दू-धर्मका आधार है। यों तो संयमका विधान सभी धर्मोंमें है। परन्तु हिन्दू-धर्ममें उसे बहुत अधिक महत्त्वपूर्ण स्थान दिया गया है। ऐसे धर्ममें पुनर्विवाह तो अपवादस्वरूप ही होने चाहिए। मेरे विचार ऐसे होनेपर भी जबतक बाल-विवाह होते हैं और पुरुष इच्छानुसार चाहे जितनी बार विवाह करते हैं, तबतक यदि कोई बाल-विधवा पुनर्विवाह करना चाहे तो उसे रोकनेका प्रयत्न नहीं किया जाना चाहिए और उसकी इच्छाका आदर किया जाना चाहिए। मैं बिलकुल बाल-विधवाके मनमें भी पुनर्विवाह करनेकी इच्छाका बीज नहीं डालूँगा, किन्तु अगर वह पुनर्विवाह करेगी तो मैं उसके कार्यको पाप नहीं गिनूँगा।

मोहनदास गांधीके आशीर्वाद

[गुजरातीसे]
महादेवभाईनी डायरी, खण्ड ४

३११. पत्र : विट्ठलभाई पटेलको

[नडियाद]
जून २३, १९१८

भाईश्री विट्ठलभाई,

आपका पत्र मिला। मेरे खयालसे आप जैसोंका होमरूल लीगसे बाहर रहकर यथाशक्ति सेवा करना ठीक है। इस समय होमरूल लीगकी स्थिति विषम है। उसकी स्थिति बाहरी झगड़ोंके कारण विषम नहीं है; बल्कि उसकी भीतरी झंझटें बहुत हैं। वह तय नहीं कर सकी है कि कौन-सा रास्ता अपनाया जाये — तंग करनेका या मदद देनेका! उसने तंग तो बहुत किया, अब उससे निवृत्त होकर उसे कुछ रचनात्मक काम

करनेकी जरूरत है। जबतक ऐसा न किया जायेगा, तबतक लीगकी सेवा-शक्तिका विकास न होगा। अगर आप लीगमें इसलिए शामिल हो कि उसे सेवाकी ओर मोडा जाये तो अवश्य ही जाएँ। परन्तु लीगके सदस्य यह न चाहेंगे कि आप उसमें छोटे-वडे सबसे टक्कर लेनेके लिए शामिल हो। किसी सस्थामें उसे तोडनेकी नीयतसे शामिल होना तो स्पष्ट द्रोह ही होगा। स्वास्थ्य-रक्षाकी कला सीख लेंगे, तो भी देशकी वडी सेवा होगी।

वल्लभभाईका नया वंधा कैसा लगता है? "रिक्रूटिंग सार्जेन्ट" वन गये है।

मोहनदासके वन्देमातरम्

[गुजरातीसे]

महादेवभाईनी डायरी, खण्ड ४

३१२. भाषण : अहमदाबादम

जून २४, १९१८

इस सभाको क्या काम करना है यह आप सव जानते है। आप यह भी जानते है कि परमश्रेष्ठ गवर्नरने युद्ध-सम्मेलनमें 'होमरूल' लीगके सदस्योका अपमान किया था और वम्बईके लोगोने उसका विरोव किया था। वम्बईकी सभामें भी मैं ही अध्यक्ष था। मै इस सम्बन्वमें अपने विचार वहाँ व्यक्त कर चुका हूँ। इसलिए मैं आपका अधिक समय नही लूँगा। इस सभाको दो काम करने है। एक काम है, वम्बईमें किये गये विरोधका समर्थन करना और दूसरा जो लोग समाचारपत्र नही पढते उनके सामने वस्तुस्थिति रखना तथा जो समाचारपत्र पढते भी है उनको भी सच्ची वात वताना क्योकि समाचारपत्रोमें दिये गये विवरण अनेक वार अधूरे और झूठे होते है। गवर्नर महोदयके सम्मुख युद्ध-सम्मेलनमें श्रीयुत तिलक और अन्य स्वराज्यवादियोको निमन्त्रित करनेका प्रश्न था। दिल्ली सम्मेलनमें श्री तिलक और श्रीमती वेसेंट निमन्त्रित नही किये गये थे, इसलिए लॉर्ड विलिंग्डनके सम्मुख यह असाधारण प्रश्न उपस्थित था। अत. उन्होने वहुत विचार करनेके वाद श्री तिलकको निमन्त्रण भेजा और श्री तिलकने उसे स्वीकार कर लिया। उन्होने पूछा कि सम्मेलनमें वोलनेकी छूट दी जायेगी अथवा नही और वे सशोधन पेश कर सकेंगे या नही। उन्हे इसका उत्तर यह दिया गया कि उन्हे उन प्रस्तावोपर सशोधन पेश नही करने दिये जायेंगे, लेकिन प्रस्ताव पेश करनेवाले व्यक्तियोके वोल चुकनेके वाद वे वोल सकेंगे और उनकी आलोचना कर सकेंगे। गवर्नरने यह उत्तर शुद्ध भावसे दिया था और उनके शब्द दो अर्थी नही थे। इसलिए श्री तिलक और अन्य सज्जन सम्मेलनमें सम्मिलित हुए, लेकिन वहाँ उन्होने क्या देखा? श्री तिलकका दूसरा वाक्य पूरा भी न हो पाया था कि उन्हे गवर्नरने आगे वोलनेसे रोक दिया और उन्हें आलोचना नही करने दी। श्री तिलक क्या कहना चाहते थे, वह गवर्नर नहीं जानते थे। वे उनके भापणके गुण-दोपोसे अनभिज्ञ थे। लेकिन जिस वाक्यको

श्री तिलकने "परन्तु" से आरम्भ किया, उसे आपत्तिजनक मानकर गवर्नरने उन्हें इस वाक्यको पूरा नही करने दिया और आगे बोलनेसे रोक दिया। किसी अन्य अवसर-पर गवर्नरने ऐसा किया होता तो यह नही कहा जा सकता कि उन्हे ऐसा करनेका हक नही है। लेकिन जिसे उन्होंने वहाँ बोलनेके लिए स्वय बुलाया था, उस अतिथिको इस तरहसे रोकना उन्हे शोभा नही देता था और ऐसा करके उन्होने श्री तिलकका तथा अन्य सम्मानित अतिथियोका और समस्त भारतीय लोगोका भारी अपमान किया है। श्री तिलक असाधारण व्यक्ति है। समस्त भारत उनकी पूजा करता है। उन्हे इस प्रकार बैठा देना सचमुच असह्य है। आज हम सब यहाँ यह दिखानेके लिए इकट्ठे हुए है कि यह बात अहमदाबादके लोगोके लिए भी असह्य है। और बम्बईके लोगोने जो कदम उठाया है वे उसका समर्थन करते हैं। ऐसा करके हम अपना फर्ज पूरा करते हैं और यह सिद्ध करते हैं कि हम सच्चे स्वराज्यवादी हैं। स्वराज्यका एक अंग ऐसा होना चाहिए कि यदि भारतका अपमान हो तो उसे भारतीय स्वराज्यका अपमान समझ-कर चला जाये। आज हम भारतीय स्वराज्यके इस अपमानके कारण गवर्नरसे जवाब तलब करनेके लिए एकत्रित हुए हैं। हमे उनसे कह देना चाहिए कि आपने हमारा भारी अपमान किया है इसके लिए आपको खेद प्रकट करना चाहिए। थोड़ेसे अपवादोको छोड़कर भारतमे एक भी समाचारपत्र ऐसा नही है जिसने गवर्नरके इस कार्यको पसन्द किया हो। सबने उनके इस कार्यकी निन्दा की है। 'पायनियर' ने भी इसकी निन्दा की है और लिखा है कि ऐसे समयमे, जब लोगोको साथ लेकर काम करनेकी आव-श्यकता है, ऐसी घटना नही होनी चाहिए थी। इतना ही नही, उसने गवर्नरको [क्षमायाचनाका] कड़वा घूँट पीकर काम करनेकी सलाह दी है। अहमदाबादकी सभाके उद्देश्य और स्वीकृत प्रस्ताव उचित हैं। एक प्रस्तावमें कहा गया है कि गवर्नर अपने इस कार्यपर खेद प्रकट करे और यदि वे ऐसा न करे तो वाइसराय बीचमें पड़कर गवर्नरके कार्यसे अपनी असहमति प्रकट करे। यदि ऐसा नही किया जायेगा तो होमरूल-लीगके सदस्य लॉर्ड विलिंग्डनकी अध्यक्षतामें की गई किसी भी सभामें भाग नही लेंगे। हम न तो लॉर्ड विलिंग्डनके प्रति अपनी अप्रसन्नताको साम्राज्यपर थोपना चाहते है और न अपने वर्तमान कर्त्तव्यसे पीछे हटना चाहते है। दूसरे प्रस्तावमें हमें सरकारको सहायता देनेमे जिन कठिनाइयोका सामना करना पडता है, उनका उल्लेख किया गया है। इसके द्वारा हम उससे यह कहना चाहते है कि, हम सरकारको जितनी सहायता देना चाहते है, उतनी नही दे पाते, क्योकि उसके लिए जो-कुछ करनेकी जरूरत होती है उसकी सत्ता आपके हाथमें है। आप शिक्षित-वर्गका अपमान नही कर सकेंगे और भारतीय सैनिक अंग्रेज सैनिकोकी अपेक्षा कम अधिकारोसे सन्तुष्ट नही होगे, यह कहकर हम अपनी कठि-नाइयाँ पेश करते है और कहते है कि हम आपकी मदद नही कर सके इसका कारण भी आप ही है। आप इन कारणोको दूर कर दें, तो आपपर हमने जो आरोप लगाये है हम उन्हे वापस ले लेंगे। लेकिन इतना ही पर्याप्त नही है। कुछ कार्य हमे करने ही चाहिए। यदि हम ऐसा न करेगे तो माना जायेगा कि स्वराज्यवादीके रूपमें हम अपने कर्त्तव्यसे चूक गये है। हम भगवान्से प्रार्थना करते है कि "हे प्रभु! आज ही स्वराज्य दो", लेकिन प्रभु कहते है कि "वह तुम्हे तुम्हारी योग्यताके अनुरूप मिलेगा।" यदि ईश्वर हमें माँगनेसे

स्वराज्य दे दे तो ससारमें उथल-पुथल हो जाये। हमे स्वराज्यके लिए अपनी योग्यता सिद्ध करनी पडेगी। हमारे पास शत्रुको उत्तर देनेके अनेक साधन है, लेकिन अपनी त्रुटियोको सही रूपमें देखना हमारा कर्त्तव्य है। यदि हम सरकारसे चिढकर उसके दोषोपर विचार करते हुए हाथपर-हाथ धरे बैठे रहेंगे तो हम स्वराज्य नही प्राप्त कर सकेंगे। भारतमें यात्रा करके मैंने यह जाना है कि भारतीय प्रजा सरकारसे कैनेडा और आस्ट्रेलियाके लोगोकी तरह समान अधिकार-भोगी नागरिकोका-सा सम्बन्ध रखना चाहती है। हम चाहते है कि सरकार हमसे युद्धके सम्बन्धमें सलाह करे और तभी धन और जनकी माँग करे। यदि हम स्वराज्यका त्याग नही करना चाहते तो अग्रेजोके साथ साझीदारके रूपमें काम करनेमें हमारा फायदा है। हमारा प्रथम और अन्तिम कर्त्तव्य यह है कि हम साम्राज्यके त्यागमें भाग लें और बेधडक अपनी आहुति दें। उससे ही हम शीघ्र स्वराज्य प्राप्त कर सकेंगे। हम अत्याचारके विरुद्ध खडे हो और उन्हे दूर करानेके लिए आवश्यक कदम उठायें, इसके अलावा हम मौजूदा समयमें सरकारका साथ दें — हमारे ये दो कर्त्तव्य है और यदि हमने अपने इन कर्त्तव्योको पूरा किया तो हम उनके प्रति अपनी सचाई सिद्ध कर सकेंगे। यदि हम अपने ऊपर लगाये गये आरोपोको दूर करना चाहते हो तो हमें साम्राज्यके प्रति अपनी निष्ठा प्रकट करनेके लिए सन्देहका कारण ही नही रहने देना चाहिए। इसकी असली सजा यही है। अब हम इस प्रस्तावके दूसरे पहलूपर भी विचार करे। मुझे श्री तिलकका एक पत्र मिला है। उसमें उन्होने लिखा है, यदि भारत सरकार भारतीय सैनिकोका दरजा अग्रेज सैनिकोके समान कर दे तो हम छ महीनेमें ५,००० मनुष्योको देनेके लिए तैयार है और यदि हम इतने मनुष्य न दे सके तो एक-एक मनुष्यके लिए सौ-सौ रुपया जुर्माना देनेके लिए तैयार है और इसके लिए उन्होने ५०,००० रुपयेकी रकम जमा करवा कर जमाकी रसीद भी भेजी है। इस विषयमें मेरी बातचीत श्री जिन्ना और श्रीमती बेसेंटसे भी हुई है। उन्होने स्वीकार किया है कि हमें साम्राज्यको आवश्यकतानुसार आदमी देने चाहिए। श्री तिलकको विश्वास[1] है, यदि हम पक्की शर्तें करके सरकारको सहायता देंगे तो उसमें विश्वासघातके लिए कोई अवकाश नही रहेगा। इसी उद्देश्यको दृष्टिमें रखकर हमे वैसा करना चाहिए। लेकिन मेरी मान्यता यह है कि विश्वास रखकरके हम कुछ भी नही खोते। इसलिए मैं बिना किसी हिचकके लोगोको सलाह देता हूँ कि वे सेनामें भरती हो। इस तरीकेसे हम अपनी इच्छित वस्तु पा सकेंगे। मै श्रद्धावान् हूँ, इसलिए हमें श्रद्धा रखकर काम करना चाहिए, यही मेरी सलाह है। मै यह कहने आया हूँ कि स्वराज्य-मन्त्रकी सिद्धिके लिए आपको अपना कर्त्तव्य पूरा करना चाहिए। गुजरातके माथेपर जो कलक है उसे दूर करनेके लिए आपको सैनिक बनना चाहिए। अहमदाबादपर धावा हो तो उसका बचाव करनेके

१ श्री तिलक सरकारके साथ यह समझौता करना चाहते थे कि वे भारतीय सैनिकोंको सेनामें कमीशन प्राप्त अधिकारी नियुक्त करेगी, यदि सरकारने ऐसा आश्वासन दिया तो वे इस सेनामें ५,००० लोगोंके नाम लिखायेंगे और उन्होंने ५०,००० रुपयेका चेक दिया कि यदि वे इस कार्यमें असफल रहें तो उनका वह चेक जब्त कर लिया जाये। गाधीजी ऐसा सौदा करनेको तैयार नहीं थे, इसलिए उन्होंने श्री तिलकको वह चेक लौटा दिया।

लिए सेनामें भरती होना उत्तम है। हम इस समय इस सभाको भरतीकी सभामें बदलना नही चाहते; लेकिन जब ऐसी सभा की जाये तब हमें अपने कर्त्तव्यका पालन करनेमें पीछे नही हटना चाहिए।

[गुजरातीसे]

प्रजाबन्धु, ३०–६–१९१८

३१३. भाषण: रासमें[1]

जून २६, १९१८

गांधीजीने कहा: मैं यहाँपर इसलिए नहीं आया हूँ कि किसीको भरती होनेके लिए विवश करूँ। अहिंसा-धर्मके पालनमें प्रयत्नशील व्यक्ति होनेके नाते मैं आप लोगोको बल-प्रयोग द्वारा विवश नहीं कर सकता; मैं तो आप लोगोंको प्रेमकी शक्तिसे, और देशानुरागके भावोंको जगाकर तथा सच्चे स्वार्थकी वृत्ति पैदा करके सेनामें भरती होनेके लिए विवश करूँगा। मैं आप लोगोंको सेनामें भरती होनेकी सलाह देने आया हूँ। यह सलाह मैंने स्वयंपर भी लागू की है। मैंने अपने लड़केको भी, जो कि विवाहित है और पाँच बच्चोंका पिता है, यही सलाह दी है। उन्होंने आगे कहा:

स्वेच्छापूर्वक सेनामे भरती होना ही स्वराज्यकी कुंजी है और हमें मनुष्यत्व और सम्मान दिलानेवाली है। सेनाकी भरतीके साथ ही साथ स्त्रियोकी प्रतिष्ठाका प्रश्न भी सम्मिलित है। आजके दिन हम अपनी गृह-लक्ष्मियो और सन्तानोंकी जगली पशुओंसे भी रक्षा करनेमे समर्थ नही हैं। आत्म-रक्षाकी शक्ति प्राप्त करनेका सबसे सुगम उपाय यही है कि लोग सेनामें भरती हो। कुछ लोग पूछेंगे कि "फ्रासमे जाकर प्राण देनेकी क्या आवश्यकता है?" परन्तु फ्रांसमें जाकर प्राण देनेसे भी एक अर्थ सिद्ध होता है। जब हम अपने प्रियजनोको युद्ध-भूमिमें भेजेंगे तब जो साहस और शौर्य लेकर वे लौटेंगे वह गाँवोकी कायापलट कर देगा। जो सैनिक-शिक्षा हम आज प्राप्त कर सकते हैं वह शायद हमें फिर कभी नही मिल सकती।

श्री गांधीने धरल, वाघरी और पाटीदारोंका उल्लेख करते हुए कहा कि इन सबोंमें क्षत्रियोचित गुण समान रूपसे वर्तमान हैं। उन्होंने इन तीनो जातियोके लोगोसे कहा कि वे अपनी जो शक्ति और शौर्य पारस्परिक झगड़ोंमें लगाते रहे हैं उसे अपनी मातृभूमिकी रक्षामें लगायें।

यह मानकर कि एक गाँवकी आवादी एक हजार है, हमें प्रत्येक गाँवसे बीस-बीस रगरूट लेने चाहिए, अर्थात् प्रति १०० आदमियोमे से २ आदमी। सौ आदमियोमें से दो आदमी क्या चीज हैं? हैजे तथा अन्यान्य रोगोसे प्रतिवर्ष कितने आदमी मरते हैं? ये मरनेवाले

१. यह भाषण गुजरातमें बोरसद जिलेके रास नामक गाँवमें गांधीजीने सेनामें भरती होनेकी आवश्यकता बताते हुए दिया था।

यों ही मरते हैं। इनकी मृत्युका शोक सिवा इनके सम्बन्धियोंके और कोई नहीं करता। इसके विपरीत यदि शास्त्रोंकी बात सत्य है, तो रणभूमिमें वीरगति पानेवाले सैनिक अमर हो जाते हैं और उनकी मृत्यु, जो पीछे छूट गये हैं उनके लिए आनन्द और गौरवका विषय हो जायेगी। क्षत्रियोंकी मृत्युसे उन राष्ट्र-रक्षकोंका प्रादुर्भाव होगा जिसे कोई सरकार निरस्त्र नहीं कर सकती।

हममें से एक सज्जन आज सेनामें भरती होनेके लिए अपनी रजामन्दी जाहिर करते थे; परन्तु उन्होंने कहा कि मैं दो महीने तक भरती नहीं हो सकता; क्योंकि मुझे अपने कर्जका बोझ उतारना है। ऐसे बहुतसे दृष्टान्त मिलेंगे। गाँवके नेताओंसे मेरा यह अनुरोध है कि वे ऐसे मनुष्योंके मामलोंकी जाँच करके पता लगायें कि उनकी आर्थिक दशा कैसी है, और उनके सारे काम-काजका प्रबन्ध और उनके परिवारवालोंके भरण-पोषणकी व्यवस्था करें। श्री गांधीने कहा:

केवल उसी दशामें आप नवयुवकोंको सेनामें भरती होनेके लिए प्रोत्साहित कर सकते हैं। "इस प्रकार किरायेपर लड़नेवाली एक फौजके स्थानमें एक राष्ट्रीय सेना खड़ी हो सकेगी।" इंग्लैंडमें अमीर या गरीब कोई घराना ऐसा नहीं बचा होगा, जो कि अपने किसी-न-किसी सम्बन्धीकी मृत्युपर शोक न प्रकट कर रहा हो। अब यह निश्चय किया गया है कि ५१ वर्ष तककी उम्रके लोगोंको सेनामें भरती किया जाये। यदि हम अपने देशका शासन करना और उसकी रक्षा करना चाहते हैं तो प्रत्येक नवयुवकको सेनामें भरती होना चाहिए।

श्री गांधीने आशा व्यक्त की कि गाँववाले इस विषयमें परामर्श करके प्रति सैकड़ा दो आदमी सेनामें भरती होनेके लिए देंगे। उन्होंने कहा:

मुद्दतोंसे हमारी युद्ध करनेकी शक्ति नष्ट हो चुकी है, अस्त्र-शस्त्र चलानेकी वह विद्या हम आखिर किस तरह सीख सकते हैं जिसके लिए हमारे पूर्वजोंने तपश्चर्या और कठोर व्रतोंका पालन किया है?

बाज आदमी यह कुतर्क करते हैं कि युद्धके अनन्तर हमसे हथियार फिर छीन लिये जायेंगे। इस विषयमें मुझे यह निवेदन करना है कि पृथ्वीतलपर कोई ऐसी शक्ति नहीं है जो हमारी इच्छाके विरुद्ध हमसे उस समय हथियार छीन ले, जबकि एकबार हम उनका प्रयोग सीख चुके हैं। सरकार ऐसी मूर्ख नहीं है, अन्यथा वह इस देशका शासन ही नहीं कर सकती थी। हमारा सबसे शक्तिशाली हथियार सत्याग्रह है। वह हमेशा ही हमारे पास रहता है। परन्तु जिसको मृत्युका भय है वह सत्याग्रही कभी नहीं हो सकता। सत्याग्रहकी वास्तविक कदर करनेके लिए शारीरिक शक्तिका प्रयोग कर सकनेकी क्षमता आवश्यक है। अहिंसाका पालन वही कर सकता है जो हत्या करना जानता है, अर्थात् यह जान चुका है कि हिंसा क्या है?

अन्तमें गांधीजीने कहा:

बहनो, आप लोगोंको चाहिए कि अपने भाइयोंको, स्वामियोंको और अपने बेटोंको उत्साहित करें। यदि आप चाहती हों कि वे सच्चे मनुष्य बनें तो उन्हें अपना आशीर्वाद देकर सेनामें भेजिए। इस बातकी चिन्ता आप न करें कि रणभूमिमें उनपर क्या

बीतेगी ? आपके पुण्य-प्रतापसे, आपके शुभ्र सतीत्वके प्रभावसे युद्धस्थलमे वे सभी प्रकारसे सुरक्षित रहेंगे। यदि वे युद्धमें वीरगतिको भी प्राप्त हो जाये तो यह विचारकर धैर्य धारण करे कि उन्होने अपना कर्त्तव्य पूरा करनेमे अपनी देहको अर्पण किया है। याद रहे कि अगले जन्ममें वे प्रिय स्वजन फिर आपको प्राप्त होगे।

[अग्रेजीसे]

बॉम्बे क्रॉनिकल, २-७-१९१८

३१४. भाषण : खेड़ामें[1]

जून २७, १९१८

हम साधारणत जेल जानेको बदनामीकी बात मानते हैं। कैदी जेलमे घबराता रहता है और दिन गिनता रहता है, कि सजा कब पूरी हो और कब बाहर निकलूं ? देश और समाजके नियमोको भग करनेवाले अपराधीकी ऐसी मन स्थिति होती है। यह मन.-स्थिति सत्याग्रहीकी मन स्थितिसे भिन्न होती है। हम आत्मसम्मान और अधिकारोके इस सघर्षमें जेल जानेकी हिमायत करते है। जो भाई आज जेलसे छूटकर आये है उनकी मुखाकृतिपर विषाद अथवा ग्लानिकी छाया भी नही है। खेडाके सभी लोग उन्हे गर्वपूर्ण दृष्टिसे देखते हैं और उनके सम्मानमें उत्सव कर रहे हैं। जेल जाना एकके लिए बदनामीकी बात है, दूसरेके लिए गौरवकी। पहले प्रकारके लोग जेलसे कठोर होकर निकलते हैं। वे वहाँ ठगी और उत्पात करते हैं , जब कि हमारे इन भाइयोने जेलको अपने पदार्पणसे पवित्र किया है। उन्होंने जेलके नियमोका पालन किया है, इतना ही नही, बल्कि उन्हे जेलमें शान्तिपूर्वक विचार करनेका जो समय मिला उसका सदुपयोग करके उन्होने चाय और बीडी छोडनेका व्रत लिया तथा आजीवन देश-सेवा करनेका प्रण किया। वे जेलमें रहते हुए, निरन्तर इसी बातका ध्यान करते रहे कि वे देशके लिए क्या करे। इस प्रकार, उन्होने अपने इन बीस दिनोके जेल-वासका अपूर्व उपयोग किया है। यही कारण है कि जेल जाना हमारे लिए बदनामीकी बात नही, बल्कि गौरवकी बात है। भाइयो और बहनो! आप सब यही प्रार्थना करे कि ऐसी जेल तो हम सबको मिले, जिससे हम सब देशकी शुद्ध सेवा कर सकें।

जेलमे रहते हुए इन भाइयोमें इतना परिवर्तन हुआ इसका कारण मोहनलाल पड्या है। यदि लोगोमे एक व्यक्ति भी सच्चा हो तो वह कितना काम कर सकता है और दूसरोपर कितना प्रभाव डाल सकता है, वह उनके जीवनसे जाना जा सकता है।

१. यह सभा जेलसे सजा भुगतकर आये हुए उन सत्याग्रहियोंके स्वागतार्थ की गई थी जो भूमि-कर न देनेपर सरकार द्वारा जब्त खेतोंमें से प्याज उठा लानेके अभियोगमें दण्डित किये गये थे। देखिए "भाषण : नडियादमें", ८-६-१९१८। एक समाचारपत्रकी रिपोर्टके अनुसार गाधीजी इन सत्याग्रहियोंको लानेके लिए महमदाबादसे खेडा पैदल गये थे।

में अन्य भाइयोंका श्रेय कुछ कम नहीं करना चाहता, लेकिन इतनी बात तो निश्चित है कि यदि जेलमें पंड्या न होते तो इन जेल-यात्राका इतना शुभ परिणाम न निकलता।

जेल जानेमें ही सत्याग्रहकी पूर्णता नहीं हो जाती; किन्तु कुछ अंशोंमें वह सत्याग्रहकी नींव अवश्य है। सत्याग्रह करके जेल जाने और अपराध करके जेल जानेमें सूक्ष्म अंतर है।

उदाहरणके तौरपर यदि कोई व्यक्ति लगान न दे और फिर किसीपर हमला करे तथा जेलमें जाये तो उसका यह कार्य सत्याग्रह नहीं है। यहाँ आक्रमण करना और जेल जाना दोनों ही बदनामीके काम हैं। फिर भी यदि किसीको आक्रमण करनेपर सच्चा पश्चात्ताप हो और वह जेल जाये तो उसका वह कार्य प्रायश्चित्त कहलायेगा; लेकिन उसे सत्याग्रह तो अवश्य ही नहीं कहा जा सकता।

इन भाइयोंके जेलसे छूटकर आनेके अवसरपर आज हम सत्याग्रहके स्वरूपपर विचार करते हैं। जो व्यक्ति सोच-समझकर और मरजीसे अपने ऊपर दुःख ले लेता है वह सत्याग्रही कहलाता है। जो न्याय-सिद्धान्त दो भाइयोंपर लागू होता है वही सरकार और जनतापर भी लागू होता है। सत्याग्रही समाजको सदा प्रसन्न नहीं रख सकता; उसे अनेक बार समाजको अप्रसन्न भी करना पड़ता है और समाजके विरुद्ध भी सत्याग्रह करना पड़ता है। हम चाहते हैं कि सत्याग्रहका सिद्धान्त भारतमें जल्दीसे-जल्दी फैले। भारतका छोटा भाग, छोटेसे-छोटा भाग भी यदि सत्याग्रहको अंगीकार करे तो अनेक महान् कार्य सिद्ध हो सकते हैं। यहाँ उपस्थित लोगोंमें से बहुत-से लोग स्वराज्यके हिमायती हैं। उन्हें एक क्षणके लिए भी सत्य न छोड़ना चाहिए। यदि वे सत्यसे चूकेंगे तो उन्हें घोर अन्धकारसे गुजरना पड़ेगा। उन्हें सूर्यनारायणके दर्शन नहीं होंगे। सत्याग्रहीका कर्त्तव्य यह है कि वह देशके सामने निर्भयतापूर्वक सत्य-सिद्धान्तको रखे। ऐसा करते हुए वह जगत्की सेवा करेगा।

भाइयो और बहनो, मैं कहता हूँ कि यदि हम सत्याग्रहकी पूजा सच्चे दिलसे करना जानते हैं तो हमारा एकमात्र धर्म यही है कि हम मृत्युपर्यन्त सत्यका पालन करते रहें। यदि हमें लगता हो कि सत्यका पालन करते रहनेसे देशका अहित नहीं होगा तो हमें परमात्माको साक्षी मानकर निश्चय करना चाहिए कि चाहे पृथ्वी रसातलको चली जाये तो भी हम सत्यको नहीं छोड़ेंगे। तभी आप सच्चे स्वराज्यवादी होंगे और तभी आप स्वराज्यके सच्चे पदक लगा सकेंगे।

[गुजरातीसे]

खेडा सत्याग्रह

३१५. भाषण: नवागाँवमें[1]

जून २७, १९१८

आज जेलसे निकलकर, आप भाइयो और बहनोके सामने जिस व्यक्तिको खडा होना था वह व्यक्ति तो मै था, क्योकि खेतमे से प्याज खोदनेकी सलाह मैने दी थी। मैंने ही उनसे कहा था कि तुम सब निधडक होकर प्याज खोदो, इसलिए वे प्याज खोदनेमे जुट गये। सरकारने उनको रोका; इससे भी उसे सन्तोष नही हुआ और उसने उनमें से छ: भाइयोको जेल भेज दिया। जिसे जेल भेजा जाना चाहिए था, सरकारने उसे जेल नही भेजा; इसलिए यशके भागी ये भाई हुए। इस अवसरपर हम सब उत्सव मनाने और इन्हे बधाई देनेके लिए गाँव-गाँवसे यहाँ इकट्ठे हुए है।

आज नवागाँवकी कीर्ति सारे गुजरातमे फैल गई है। नवागाँवके भाइयोने जेल जाकर सत्याग्रहके सिद्धान्तपर पूरा-पूरा अमल किया है। बहनें भी समझ गई है कि हमने अपराध नही किया है, इसलिए जेल जानेमें कोई नामूसी नही है। मेरी कामना है कि यह उत्साह समस्त खेडा जिलेमें फैल जाये।

हमने लगानकी लडाई लडी, लेकिन जेल जाना बाकी रह गया था। उसका अवसर भी ईश्वरकी कृपासे मिल गया। इनकी मुखाकृतियोसे ऐसा नही जान पडता कि इन्हे जेलमे कोई दु ख भोगना पड़ा होगा। दु ख और सुख मनपर निर्भर हैं। मन जिसे सुख माने वह सुख है और जिसे दु ख माने वह दु ख। हमारे भाइयोने जेल जानेमे सुख माना था, क्योकि उन्हे यह विश्वास हो गया था कि अपनी टेककी खातिर और अपने देशकी खातिर जेल जाना चाहिए, और इसी कारण उन्होने जेल जानेका स्वागत किया। उन्होंने जेलको महल माना और वहाँ सयम-साधना की। इसी तरह आप लोग भी जेल जानेका स्वागत करे, वहाँ जाकर सयम साधे और व्रत ले।

सत्याग्रह-धर्म अति दु साध्य है, लेकिन जिस हदतक हम उसका पालन करेंगे उस हदतक हममे मनुष्यत्व आयेगा।

यदि कोई व्यक्ति इस अवसरसे शिक्षा लेकर देशके लिए जीने, काम करने और मरनेका व्रत लेगा तो यह दिन शुभ माना जायेगा। हमारी आनेवाली पीढियाँ भी इसे शुभ मानकर इस दिन उत्सव मनाया करेंगी।

यदि मोहनलाल पडचा न होते तो आप जितना कर पाये है उतना न कर पाते। हम कामना करते हैं कि नवागाँवके भाइयो और बहनोमें मोहनलाल पडयाकी तरह हिम्मत आये, जिससे बाहरी सहायताकी आवश्यकता न रहे। पडयाके अनुभवका लाभ नवागाँवको

१. खेड़ामें जिन जेल-मुक्त सत्याग्रहियोंका स्वागत किया गया था वे ही जुलूस बनाकर उनके गाँव नवागाँवमें ले जाये गये थे।

मिला और जिस यशको प्राप्त करके अन्य कोई गाँव भाग्यशाली बनता वह यश भी नवागाँवको मिला। मेरी कामना है कि आप इस यशका सदा सदुपयोग करें।

[गुजरातीसे]

खेड़ा सत्याग्रह

३१६. भाषण : कठलालमें[1]

जून २८, १९१८

मैं देखता हूँ, कुछ लोगोंको यह विश्वास हो गया है कि भारतमें ज्यों-ज्यों दिन बीतते जाते हैं त्यों-त्यों मानो मैं गुरु होनेका दावा करता जाता हूँ। जो चेतावनी मैंने दक्षिण आफ्रिकामें दी थी, वही मैं यहाँ भी देता हूँ। मैं जानता हूँ कि ऐसी चेतावनीसे भी सम्मान प्राप्त होता है। इस जोखिमके बावजूद, मैं कहूँगा कि मैं किसीका गुरु बन ही नहीं सकता। मैं किसीका गुरु बननेके योग्य नहीं हूँ। आजके समान पवित्र अवसर दक्षिण आफ्रिकामें भी आया था। तब भी मैंने इस पदको लेनेसे इनकार कर दिया था और आज भी इनकार करता हूँ। मैं स्वयं किसी धर्म-गुरुकी तलाशमें हूँ। जो व्यक्ति स्वयं किसी धर्म-गुरुकी तलाशमें हो वह दूसरोंका गुरु किस तरह बन सकता है? मेरे राजनैतिक गुरु श्री गोखले थे, लेकिन मैं किसीका राजनैतिक गुरु नहीं बन सकता, क्योंकि मैं राजनैतिक मामलोंमें अभी बच्चा हूँ। दूसरी बात यह है कि यदि मैं गुरु-पद स्वीकार करके किसी व्यक्तिको दीक्षा दूँ और वह मेरे विचारोंके अनुरूप कार्य न करे अथवा भाग जाये तो उससे मुझे दुःख होगा।

मुझे लगता है कि जो व्यक्ति यह कहे, मैं अमुकका शिष्य बन गया हूँ उसे ऐसा कहते समय एकबार नहीं, बल्कि अनेक बार विचार करना चाहिए। जो गुरुका कोई भी आदेश होते ही उसे तत्क्षण वेतन-भोगी सेवकके समान पूरा कर दे, वही शिष्य कहला सकता है। वह वेतन-भोगी सेवकके समान है या नहीं, इसकी कसौटी तभी होती है जब वह उस आदर्शका पूरा पालन करे। अबतक मैंने जो कार्य किये उनसे मैं लोगोंकी निगाहमें आया। वे लोगोंको पसन्द आने योग्य कार्य थे। यदि मैंने इस संघर्षमें कोई दक्षता दिखाई है तो वह इतनी ही है कि मैंने जनताकी अभिरुचि किस ओर है, यह देखकर उसे सही रास्तेपर चलानेकी कोशिश की है, इसीलिए उसका परिणाम शुभ निकला।

मैं सत्याग्रही बननेका प्रयत्न कर रहा हूँ। यह बात नहीं है कि सत्याग्रही सदा लोक-मतके अनुसार ही व्यवहार करता है। उसके सामने लोकमतके विरुद्ध लड़नेका समय भी आता है। सत्याग्रहमें असत्य हो ही नहीं सकता। उसमें चाहे जो व्यक्ति भाग ले सकता है। हम सबका जीवन प्रयोगोंसे बना है। यदि हम प्रयोग करते रहेंगे तो उनमें से हमें कुछ-न-कुछ मिलता ही रहेगा। घासके साथ कूड़ा-करकट आता है और गेहूँके साथ भूसी होती

१. यह भाषण मोहनलाल पंड्याको मानपत्र देनेके लिए आयोजित एक सभामें दिया गया था।

है। इसी तरह प्रत्येक प्रवृत्तिमें से हमे दो वस्तुएँ मिलती है। जैसे हम गेहूँका उपयोग करते हुए भूसीका त्याग करते है वैसे ही जीवनमे भी हमें सत्यको ग्रहण कर असत्यका त्याग करना चाहिए। मुझे बहुत काम करने है, उनको मैं आप लोगोको भाई और बहन मानकर ही पूरा करना चाहता हूँ। आपकी इच्छा हो तो आप मुझे अपना बडा भाई मान सकते हैं। मुझे इसीसे प्रसन्नता मिल जायेगी। मै अपने आपको इसी श्रेणीमें रखता हूँ।

मोहनलाल पड्या और जेलसे लौटे हुए अन्य भाइयोके सम्बन्धमें जो-कुछ कहा गया है वह सही है। जेलके भयसे हमारी आँखोमे आँसू भर आते है। इसके बजाय ये भाई प्रसन्न-मुखसे जेल गये, प्रसन्नतासे जेलमे रहे और प्रसन्न ही जेलसे आये। इस कारण, इस अवसरपर हम उन्हे जितनी बधाई दे, उतनी कम है। मोहनलाल पड्याने इसी सघर्षमें सत्याग्रहका अभ्यास आरम्भ किया और सघर्षके अन्तमे सत्याग्रहकी ऊँची परीक्षा पास कर गये। इनको सम्मान देकर आपने अपना ही सम्मान किया है।

इस सत्याग्रहके फलस्वरूप यदि कठलालकी दशामे परिवर्तन हुआ, और भविष्यमें कठलालमें अनेक सुन्दर कार्य हुए तभी यह समझा जायेगा कि आप सत्याग्रहका अर्थ समझ गये। आज जो वस्तु हमारे हाथ लगी है, वह रत्न-चिन्तामणि है। यदि हम उसे सँभालकर रखेंगे तो वह हमेशा हमें कल्पलताके समान वाछित फल देती रहेगी।

[गुजरातीसे]

खेड़ा सत्याग्रह

३१७. पत्रका अंश[1]

[नडियाद]

जून २९, १९१८

मुझे भी यह लडका[2] निर्दोष नही जान पड़ता। आप मुझे खुश रखना चाहें तो ऐसा प्रयत्न करे कि इसे अदालतसे न्याय प्राप्त हो।

[गुजरातीसे]

महादेवभाईनी डायरी, खण्ड ४

१. पत्र किसको भेजा गया है इसका पता साधन-सूत्रमें नही दिया गया है।

२. हरिलाल, गांधीजीके सबसे बड़े पुत्र; लगता है इनकी सट्टेबाजीसे किसी व्यक्तिको व्यापारमें हानि पहुँची थी।

३१८. भाषण: नडियादमें[1]

जून २९, १९१८

हमारी कुछ-एक वहनोने सत्याग्रहका जो पाठ पढाया है, पहले तो मैं यहाँ उसीकी ओर आपका ध्यान खीचता हूँ। हमें कितनी ही वहनोके दर्शन नही होते, क्योकि वे परदे-मे रहती है। मैं इन वहनो और इन भाइयोसे भी जो उन्हे परदमें रखनेके लिए उत्तर-दायी है, कहता हूँ कि हम अपने आवे शरीरके कुचले जानेकी स्थितिमे भारतका कार्य नही कर सकते। जिन वहनोने यहाँ परदेमें वैठनेकी व्यवस्थाका अनादर करके स्वतन्त्रतापूर्वक वाहर खुली हवामें वैठना पसन्द किया है इसके लिए हमें उन्हे बधाई देनी चाहिए।

आपने मुझे जो मानपत्र भेंट किया है उसके लिए मैं आपका आभारी हूँ। लेकिन जिस व्यक्तिने सेवाधर्मका वरण किया है, वह किसी भी सम्मानको स्वीकार नही कर सकता। वह तो अपना सर्वस्व कृष्णार्पण कर चुका होता है। इसलिए जो सम्मान मुझे मिलता है, उसे कृष्णार्पण ही किया जा सकता है। सेवाधर्मी सम्मानका भूखा नही हो सकता। जिस क्षण वह सम्मानका भूखा हो जाता है उसी क्षण वह सेवाधर्मसे भ्रष्ट हो जाता है। मैंने अनेक वार देखा है कि कितने ही लोग पैसेके लिए काम करते है, कितने ही सम्मानके लिए और कितने ही कीर्तिके लिए। पैसेकी भूख बुरी मानी जाती है; लेकिन सम्मानकी भूख पैसेकी भूखसे कही अधिक बुरी है। मनुष्य पैसेके लिए जितनी दुष्टता करता है उससे अधिक दुष्टता कितनी ही बार मान-सम्मानके लिए करता है। आत्म-सम्मानकी रक्षा करना एक वात है और सरकार अथवा जनतासे सम्मान प्राप्त करनेकी इच्छा करना दूसरी वात। सम्मानका भूखा आदमी अपना ही नही, वल्कि जनता का भी भारी नुकसान करता है। सम्मान ऐसी चीज है कि वह वडे-वडे लोगोको भी भुलावेमें डाल देता है। यदि आप अपना आत्म-सम्मान वनाये रखना चाहते है तो मैं आपसे विनयपूर्वक प्रार्थना करता हूँ कि आप मुझे मानपत्र भेंट न करे। मुझे सम्मान देनेका सबसे अच्छा तरीका यही है कि आप मेरी सलाह मानें, इतना ही नही वल्कि उसे अच्छी तरह समझकर क्रियान्वित करे। तभी यह कहा जा सकेगा कि आपने मुझे सच्चा मान दिया है। . .[2]

सेनापतिकी चतुराई अपने कार्यकारी-मण्डलका चुनाव करनेमें ही है। किन्ही आदर्शोंके स्थिर कर लिये जानेपर और कोई खास नियम बना लिये जानेपर सेना उनके आधारपर चलती जाये, तभी काम हो सकता है। यदि सेना उनपर न चले तो अकेला सेनापति कोई वडा काम नही कर सकता . . ।[3] मैंने कोई महान् कार्य सम्पन्न नही किया है. . ।[4] वहुतसे लोग मेरी सलाह माननेके लिए तैयार थे . ।[5] मैंने विचार किया कि उपसेनापति कौन होगा? तब मेरी नजर वल्लभभाईपर पडी। मुझे

१. यह भाषण सत्याग्रह-संघर्ष सफल होनेपर गांधीजीने मानपत्रके उत्तरमें दिया था।

२, ३, ४ व ५. यहाँ मूलमें कुछ शब्द नहीं हैं।

स्वीकार करना चाहिए, जब मैंने वल्लभभाईको पहली बार देखा तब मेरे मनमें खयाल आया था कि यह कोई अक्खड़ आदमी है, यह कौन हो सकता है? लेकिन जब मैं उनके निकट सम्पर्कमे आया तब ऐसा लगा कि मुझे वल्लभभाईकी अनिवार्य आवश्यकता है। वल्लभभाईने देखा अभी वकालत चलती है, नगरपालिकामें भी महत्त्वपूर्ण कार्य करता हूँ; लेकिन उससे भी महत्त्वपूर्ण कार्य यह है। मेरा धन्धा आज है, हो सकता है वह कल न रहे; मेरा पैसा कल उड जायेगा, मेरे उत्तराधिकारी उसे उडा दें, इससे तो अच्छा यही है कि मै उन्हे कोई अच्छी सम्पदा दे जाऊँ। इन विचारोसे प्रेरित होकर वे सघर्षमें कूद पडे। वल्लभभाई मुझे न मिले होते तो जितना काम हुआ है, उतना न होता, उनका मुझे इतना सुन्दर अनुभव हुआ है।

मुझे लगता है कि वल्लभभाईको सम्मान देनेसे अन्य भाइयोको भी सम्मान मिल जाता है, इसलिए मैं उनका नाम नही लेता। अध्यक्ष महोदयने तो वस्तुत जिस प्रकार बादशाह सम्मान और पुरस्कार दिये जानेवाले व्यक्तियोकी सूची प्रकाशित करते है वैसी सूची प्रकाशित की थी। मै तो इसमे निमित्त मात्र हूँ। कुछ-एक नाम इस 'शाही सूची' में नही आये है, और सबके नाम इसमे आ भी नही सकते थे। मै उनके नाम यहाँ दूँगा। जो लोग सेवाधर्मको अगीकार कर लेते है, उन्हे इतनी शान्ति और इतनी प्रसन्नता मिलती है कि उसका वर्णन नही किया जा सकता। मैंने ससारके सुखका पूरा-पूरा अनुभव किया और मुझे लगा है कि सच्चा आत्मानन्द तो सेवा-धर्ममें ही निहित है। यहाँ सेवाधर्मके सच्चे उदाहरणके तौरपर मै अनाथाश्रमके भगी भाइयोका उल्लेख करता हूँ। इन्होने मेरे प्रति जो प्रेमभाव दरसाया है वह अवर्णनीय है। इसी तरह अनाथाश्रमके बालक भी मेरी सेवा करनेमें एक-दूसरेसे होड़ करते थे। उन लोगोके साथ थोडा-सा हँसनेके अलावा मैंने कभी बातचीत नही की। मै इन्हे क्या दूँ? मेरे पास तो एक पैसा भी नही है। मै उन्हे अपने बच्चोके समान मानता हूँ। मुझे जैसी नि स्वार्थ सेवा इन बालकोसे मिलती है, वैसी वकीलो और बैरिस्टरोसे भी नही मिल सकती।

हमने बहुत अनुभव प्राप्त किये है। सत्याग्रहीके सिरपर अनेक बार जो कष्ट आते है वे खेडाके हिस्सेमे नही आये। मेरे मनमे यह बात थी कि कदाचित् लडाई अधूरी रह जायगी, लेकिन इसकी कमी इन जेल जानेवाले भाइयोने पूरी कर दी। किन्तु वह कमी इस थोडे दिनकी जेलसे बिलकुल पूरी नही हुई। सत्याग्रहकी लडाईमें ऐसे रस-पान करनेके अवसर मिलते है कि जिन्होने इस रसका आस्वादन किया है वे अन्य कोई वस्तु नही चाहते। इस रसका आस्वादन खेडाके लोगोने किया है उसका कारण उनकी शक्ति, उनका बल और उनकी कार्यदक्षता है। इन गुणोके कारण ही खेडाके लोगोको महत्त्वपूर्ण फलकी उपलब्धि हुई है। हमने लगानके प्रश्नको लेकर जो विजय प्राप्त की है वह तो बहुत मामूली है, लेकिन जैसा कि मैंने बार-बार कहा है, वैसी निर्भयता और बराबरीका ऐसा भाव कि बडे-बडे राज्याधिकारियोसे हम तनिक भी कम नही है — ये दोनो ही इसके महान् फल है। इस सघर्षके फलस्वरूप आपको यह ध्यान हमेशा बना रहेगा कि हम हर परिस्थितिमें सत्याग्रहका प्रयोग कर सकते है। यह अग्नि एकबार प्रज्वलित होनेपर बुझती नही, निरन्तर जलती ही रहती है। हम चाहते है कि सत्याग्रहका यह फल स्थायी रहे। यह परिणाम हमारे

मनमें स्थिर रहेगा तो खेडाके समस्त गाँवोंमें अथवा किसी अन्य स्थानमें सत्याग्रहकी झाँकी मिलती ही रहेगी। खेडा जिलेके जैसे शुभ परिणाम मिलते रहें, यही मेरी कामना है।

आपने मानपत्रमें मुझे गुरु-दक्षिणा देनेकी बात कही है। गुरुपद मैं नहीं लेता। यदि आप मुझे अपनी सेवाएँ अर्पित करनेके लिए तैयार हों, तो निश्चय ही मुझे उनकी आवश्यकता है। उनका मूल्य बहुत भारी है।

खेडाके लोगोंने मुझपर प्रेमकी जो वर्षा की है और स्वयंसेवकोंने मेरी जो सेवा की है, उसके लिए भगवान्से प्रार्थना है कि वह मुझे सद्बुद्धि और सेवा-धर्मका पालन करनेकी विशेष शक्ति दे। इसी ढंगसे मैं अपना असीम प्रेम प्रदर्शित कर सकूँगा। मैंने आपको कटु-वचन कहे हों तो उनके लिए आप मुझे क्षमा करें। मैंने आपसे कोई बात द्वेषभावसे नहीं बल्कि देशहितके ध्यानसे कही है।

[गुजरातीसे]

खेड़ा सत्याग्रह

३१९. पत्र : एस्थर फैरिंगको[1]

नडियाद

जून ३०, १९१८

प्रिय एस्थर,

तुम्हें पत्र लिखनेका समय इससे पहले नहीं मिल सका। पता नहीं आजकल मैं जो-कुछ लिखता और बोलता हूँ, उस सबको तुमने पढ़ा है या नहीं। जो आदमी जीव-हत्या करना चाहता है परन्तु अपंग होनेके कारण वैसा कर नहीं सकता, उसे मैं क्या सलाह दे सकता हूँ? जीव-हत्या न करनेका माहात्म्य वह समझ सके, इससे पहले वह जो अपना हाथ गँवा बैठा है, मुझे उसे पहले वही वापस दे देना चाहिए। जवान हिन्दुस्तानियोंको सेनामें भरती होनेकी सलाह मैं सदा देता रहा हूँ। परन्तु अबतक उसका सक्रिय प्रचार करनेसे मैंने अपने-आपको रोक रखा था। इसका कारण इतना ही था कि देशके राजनीतिक जीवनमें और खुद युद्धमें मुझे बहुत दिलचस्पी नहीं हुई थी। परन्तु दिल्लीमें मेरे सामने एक कठिन समस्या आ खड़ी हुई। मुझे एकदम सूझ पड़ा कि सेनामें भरती होनेके प्रश्नपर गम्भीरतासे विचार न करूँ, तो इसका अर्थ होगा कि मैं जीवनके सबसे बड़े सवालके साथ खिलवाड़ कर रहा हूँ। हमें या तो इस राज्यसे

१. यह पत्र एस्थर फैरिंगके निम्न पत्रके उत्तरमें लिखा गया था : "मैंने वाइसरायके नाम आपका पत्र पढ़ा है। मैं समझ नहीं सकी कि सत्याग्रहीके नाते आपकी भावनाओंके साथ यह कहाँतक मेल खाता है, या अगर दूसरे ढंगसे कहूँ, तो जो व्यक्ति दृढ़तापूर्वक सत्याग्रहमें विश्वास करता है और जिसने सदैव और सब जगह सत्याग्रहके पालनमें अपना जीवन लगा दिया है, वह दूसरोंसे युद्धमें शामिल होकर लड़नेके लिए किस प्रकार कह सकता है?"

मिलनेवाले सभी लाभ छोड देने चाहिए या युद्ध-सचालनके काममे अपनी पूरी शक्तिसे उसे मदद देनी चाहिए। लाभोका त्याग करनेके लिए हम तैयार नही है। हिन्दुस्तानियोको तो दोहरे कर्त्तव्यका पालन करना है। यदि वे शान्तिका सन्देश फैलाना चाहते हो, तो उन्हे पहले युद्धमे अपनी शक्ति साबित करनी होगी। यह भयकर सत्य मैने समझा जो राष्ट्र युद्ध करनेके अयोग्य है, वह स्वानुभूत ढगसे युद्ध न करनेके लाभ सिद्ध नही कर सकता। इस बातसे मेरा अभिप्राय यह नही है कि हिन्दुस्तानको लड़ना ही चाहिए। किन्तु यह जरूर कहता हूँ कि हिन्दुस्तानको लडनेकी कला आनी चाहिए। अहिंसाका अर्थ है, मारने या चोट पहुँचानेकी इच्छाको मिटा देना। अहिंसा ऐसे ही लोगोके प्रति बरती जा सकती है, जो हमसे हर तरह घटिया हो। इसका अर्थ यह हुआ कि पूर्ण अहिंसा-धर्मीको सर्वांग पूर्णता प्राप्त होनी चाहिए। तब क्या इसका अर्थ यह हुआ कि हम सबको पूरे प्रेमधर्मी बननेसे पहले सैंडो बननेकी कोशिश करनी चाहिए? मुझे यह अनावश्यक मालूम होता है। हमारे लिए इतना ही काफी है कि हम दुनियाका अडिग भावसे सामना कर सकें। जो नितान्त आवश्यक है, वह है वैयक्तिक साहस, और कुछ लोगोमे ऐसा साहस लडाईकी शिक्षा पानेके बाद ही आ सकता है। मै जानता हूँ कि मैने अपनी दलील बडे बेढगे तौरपर पेश की है। मै नये अनुभवोसे गुजर रहा हूँ। अपने आन्तरिक विचार स्पष्ट ढगसे व्यक्त करनेकी कोशिश कर रहा हूँ। कुछ बाते मुझे अभी साफ दिखाई नही दे रही है, और जो चीजे मेरे मनमे साफ हो गई है, उन्हे व्यक्त करनेके लिए मै शब्द ढूँढ रहा हूँ। प्रकाश और मार्ग-दर्शनके लिए मै प्रार्थना कर रहा हूँ और खूब विचारपूर्वक काम कर रहा हूँ। मुझे जरूर लिखना और मेरी जो दलीलें तुम्हे टिकने लायक न लगें, उनके हर शब्द और हर वाक्यपर लड़ना। इससे मै अपना मार्ग खोजनेमे समर्थ होऊँगा।

सस्नेह,

तुम्हारा,
बापू

[पुनश्च.]

देवदास इस समय मद्रासमे है, और यदि तुम भी मद्रासमे हो तो उससे मिलना। उसका पता . . . । वह हिन्दीकी कक्षाएँ चला रहा है।

[अंग्रेजीसे]

माई डियर चाइल्ड

३२०. पत्र : जमनालाल बजाजको

नडीयाद

जेष्ठ कृ० ६ [जून ३०, १९१८]

भाईश्री जमनालालजी,

आपका पत्र मीला। रेलवे-खर्चके लीये जो रकम जमा कीई है वह रकम बाध कामके खर्चमें दे सकते हो तो मेरी तकलीफ दूर होती है। दूसरे मित्रोको भी मैंने लीखा है। भाई शकरलाल बेंकरने रु० ४००० भेज दीया है। भाई अबालालजी रु० ५००० भेज रहे हैं। इनसे जो खर्च हो गया है उसमें मदद मीलती है। दूसरे दो मित्रसे भी आशा रखता हुं। यदि आप यह २५,००० रु० इस बाध काममें दे दे तो मैं बहौत कर निश्चिंत हो सकता हुं। रेल-खर्चकी आवश्यकता नहि है। यह खर्च साधारण आमदनीमें से चलता है।

मेरे लीखनेसे देना ही चाहिये ऐसा नही समझना। यदि आप बे सकोच बाध काममें दे सकते हो तभी देना।

मोहनदास गांधीका वन्देमातरम्

गांधीजीके स्वाक्षरोंमें मूल हिन्दी पत्र (जी० एन० २८३९) की फोटो-नकलसे।

३२१. पत्र : जी० के० देवधरको

[नडियाद]

जुलाई २, १९१८

प्रिय देवधर,

सेवा-सदनके कामकी रिपोर्ट मुझे भेजी, इसके लिए आभारी हूँ। यह तुम्हारे उद्योगका, तुम्हारी रचनात्मक देश-भक्तिका और तुम्हारे सेवा-प्रेमका कीर्तिस्तम्भ है। उसकी प्रगति सचमुच असाधारण है। शायद सारे हिन्दुस्तानमें उसके जैसी दूसरी सस्था नही होगी। तुम अपने यहाँसे अध्यापिकाएँ भेजनेकी स्थितिमें हो, तो मुझे एक बल्कि दो की आवश्यकता है जो चम्पारनमें अवन्तिकाबाई और आनन्दीबाईका स्थान ले सकें।

अब रही बात मेरे सुझावोंकी। अंग्रेजीका थोडा-सा ज्ञान होना तो न होनेसे भी खराब है। हमारी स्त्रियोंपर यह अनावश्यक भार है। जहाँ अंग्रेजीसे काम लेनेकी जरूरत न हो, वहाँ उसे काममें लेना बन्द कर दें, तो निश्चित मानो कि अंग्रेज हमारे

१. उन दिनों साबरमती आश्रमकी इमारत बनवाई जा रही थी।

साथ हमारी भाषामें बात करने लगेंगे। उन्हे ऐसा करना ही चाहिए। [दिल्लीके युद्ध] सम्मेलनमें मैं उर्दूमे बोला, इससे लॉर्ड चैम्सफोर्ड बडे खुश हुए थे। थोडी-सी चुनी हुई बहनोको आप जितनी भी अंग्रेजी पढा सको, जरूर पढ़ाओ, ताकि वे दूसरी बहनोके लिए अंग्रेजीके सर्वोत्तम विचारोका अनुवाद करे। इसीको मैं भाषाई किफायत कहता हूँ। इसीलिए मैं तो अंग्रेजीके स्थानपर हिन्दीको ही रखूँगा। इससे महाराष्ट्रीय बहनोके विचार अधिक उदार बनेंगे और राष्ट्रीय कार्यकर्त्ताकी हैसियतसे उनकी उपयोगिता भी बढ़ेगी। अभी तो वे अपनी और बहनोकी तरह विचार-संकीर्णतासे ग्रस्त है।

हारमोनियम और कसर्टीना [तंबूरपेटी या स्वरपेटी] में तो बहुत थोड़ा ही फर्क है। मैं तो बहनोको वीणा और सितार देना पसन्द करूँगा। ये बाजे सस्ते है, राष्ट्रीय है और हारमोनियमसे बहुत ऊँचे दरजेके है। अन्तमें, फैसी कामकी अपेक्षा हरएक बहनको हाथ-कताई और हाथ-बुनाई सिखाना मुझे ज्यादा पसन्द होगा। आजकल दो कार्यकर्त्ताओ द्वारा मैं सौ रेटिये (चरखे) चलवा रहा हूँ। उनसे लगभग तीन सौ बहनोको रोजी मिल जाती है। जब हिन्दुस्तान अपनी सहज स्वस्थ और शान्त गरिमा पुन प्राप्त कर लेगा तब ये मिले भूतकालकी वस्तु बन जायेगी। उस समय प्राचीन कालकी भाँति हमारे देशकी रानियाँ फिरसे खूब बारीक और बढ़िया सूत काता करेगी। मैं चाहता हूँ कि वह दिन जल्दी लानेमें तुम मदद दो। विश्वास करो कि थोड़े ही समयमें हमारे यहाँ इन चीजोकी इफरात हो जायेगी।

साधारण प्रवृत्ति समयके साथ चलनेकी होती है। परन्तु हमें तो हमेशा अपने सामने-की वस्तुओकी जॉच-पडताल और उनमे चुनाव करते रहना है। हमें सदा समयके बहावमें नही बह जाना है। हमें तो भविष्यकी आगाही करनी चाहिए। मनुष्य विचारशील हो तो दौडते-दौड़ते भी देख सकता है कि आगेका जमाना हस्त-शिल्प कौशलका जमाना है। फिर तुम बहनोको कातने-बुननेका प्रोत्साहन दोगे तो इससे कुछ खोओगे नही। नगोको ढकनेमे वे सहायक बनेंगी।

तुमने जितना चाहा था, मैंने उससे बहुत ज्यादा दे दिया है। अमृतलाल और केसरीप्रसादको देनेके लिए मैं तुम्हारा बहुत आभारी हूँ। श्रीमती देवधरसे कहना कि मुझे आशा है, वे थोडे दिन आश्रममें आकर रहेंगी।

हृदयसे तुम्हारा,
मो० क० गांधी

[अंग्रेजीसे]

महादेव देसाईकी हस्तलिखित डायरीसे।

सौजन्य : नारायण देसाई

३२२. पत्र : देवदास गांधीको

[नडियाद]
जुलाई २, १९१८

[चि० देवदास,]

तुम्हारे पत्र बहुत नियमित आते है, इससे मुझे बहुत प्रसन्नता होती है। मैं नियम पालना चाहता हूँ, परन्तु तुम मेरे पत्रोंकी राह हमेशा न देखना। तुम्हारा पत्र आज नही आया। श्री नटेसनके सम्बन्धमें जो बात लिखी वह दिलचस्प है। तुम्हे जैसा अनुकूल लगे, वैसा करो। जिस काममें तुम इस समय लगे हो, वह कितना महत्त्वपूर्ण है, शायद अभी तुम्हे इसकी कल्पना भी नही हो सकती। साधारणत ऐसे कामोमें बहुत चतुर और वृद्ध पुरुषको ही नियुक्त किया जाता है। ऐसा करनेपर भी यह सवाल रहता है कि मद्रास-जैसी जगहमें काफी लोग पढने आयेंगे या नही। यदि तुम मद्रास प्रदेशको हिन्दी-दान कर सको और लोग उसे स्वीकार कर लें, तो एक महत्त्वपूर्ण प्रश्न हल हो जाता है। तब यह कहा जा सकता है कि तुमने मद्रासका भारतके दूसरे भागोसे सगम करा दिया। गगापर पुल बनानेमें जितने कौशल और धैर्यकी जरूरत है, जिस पुलको तुम बना रहे हो, उसमें उससे ज्यादाकी जरूरत है। तुम हिन्दीको सरल और दिलचस्प बनाओ। इसमें तुम्हारी चतुराईका उपयोग हो जायेगा। इसके लिए तुम्हे फुरसतके समय हिन्दी, गुजराती, अग्रेजी और तमिल आदि भाषाओके व्याकरण पढ लेने चाहिए। इससे तुम्हें कोई ऐसा सरल मार्ग मिल जायेगा, जिससे तुम लोगोको थोडे प्रयत्नसे अधिक सिखा सकोगे। धातुओसे बने शब्द खूब सिखा देने चाहिए। इससे स्मरण-शक्ति-पर बोझ कम पडता है। वहाँ हिन्दीभाषियोंको तमिल पढनेके लिए भेजना है। मैंने तुम्हे इसकी व्यवस्थाके सम्बन्धमें विचार करनेके लिए लिखा था। इस बारेमें श्री नटेसन, हनुमन्तराव और अन्य लोगोंसे बातें करना। रेवाशकर सोढा और छोटम आश्रममें लौट आये है। यद्यपि मेरी जिम्मेदारी बढी है, फिर भी मुझे इससे प्रसन्नता हुई है। हरिलाल राजकोटसे आते हुए आज रातकी गाडीमें यहाँसे निकलेगा। [1] की मांके गुजर जानेका समाचार मिला है। तुम उसे पत्र लिखना। इस घटनापर मैंने कल आश्रममें बहुत पवित्र चर्चा की। चर्चाको मैं पवित्र इसलिए कहता हूँ कि सबने बडे विवेक और धर्म-वृत्तिसे सत्य उत्तर दिये। प्रश्न यह था . अब [2] माँ की मृत्युपर शोक मनाने जाना चाहेगा। इसमें ८०) रुपये खर्च होंगे। क्या आश्रम इस खर्चको उठा सकता है? क्या आश्रमको यह खर्च उठाना चाहिए? जिसने देशके लिए फकीरी ले ली है, जिसने सेवा-धर्म अगीकार किया है, उसकी माँ मरती ही नही, क्योंकि जितनी स्त्रियाँ उसकी माँ बनने लायक है, वे सब उसकी माँ है। उसका बाप भी नही मरता, क्योकि सभी बडे-बूढे उसके बापके समान है। सेवा उसकी स्त्री है। वह तो मर ही कैसे सकती है? और बाकी सब लोग उसके भाई-बहन है। मांके लिए शोक मनाने जाना केवल रूढि है। क्या उसका पालन करनेके

१ व २. मूलमें नामोंको छोड़ दिया गया है।

लिए, दुनियाके सामने झुकनेके लिए नाहक रुपया खर्च किया जाये ? इस प्रश्नकी चर्चा की गई। सबने शान्त भावसे उत्तर दिया कि इसपर खर्च हरगिज नही किया जा सकता। सन्तोक और बा भी मौजूद थी। फिर भी सबने तय किया कि इस बार यह नियम लागू न किया जाये। . . .[1] और . . .[2] बहनकी मरजीपर छोड दिया जाये। बहुत करके वे जायेंगे।

क्या तुम वहाँ कोई अखबार पढते हो ? कोई अखबार यहाँसे भेजूँ ?

बापूके आशीर्वाद

[गुजरातीसे]
महादेवभाईनी डायरी, खण्ड ४

३२३. पत्र : डॉ० प्राणजीवन मेहताको

[नडियाद]
जुलाई २, १९१८

भाईश्री प्राणजीवन,

कुछ दिनोसे आपको पत्र नही लिख पाया हूँ। मुझे जो रुपया यहाँ मिल जाता है उसीसे काम चलाता हूँ। माँगने नही जाता। इस समय मुझे रुपयेकी बडी जरूरत है। मकान बनानेका काम हो रहा है; मै इसमे चालीस हजार रुपये खर्च कर चुका हूँ। अभी अवश्य ही साठ हजार रुपये और खर्च होगे। कमसे-कम डेढ सौ आदमियोकी गुजाइश करनी है और बीस करघे लगाने है। कपडा बुनाईका काम बहुत बढता जा रहा है। अहमदाबादकी हडतालके बाद मै बहुत-से जुलाहोके सम्पर्कमें आया हूँ। लगभग तीन सौ स्त्रियाँ चरखा चलाने लग गई_है। मेरा खयाल है कि थोडे अर्सेमे हाथका कता दो मन सूत रोज मिलेगा। ये स्त्रियाँ बेकार थी। इन्हे अब धन्धा मिल गया है। बाहरके तीस-एक जुलाहे भी काम करने लगे है। इनमें कुछ ढेढ है। ये मजदूरी करते थे, अब स्वतन्त्र धन्धा कर रहे है। मै इस कामको बहुत महत्त्वपूर्ण समझता हूँ। इसके लिए भी मुझे अधिक रुपया चाहिए। मेरा अनुमान है कि इसमें मुझे दस हजार रुपये लगाने होगे। राष्ट्रीय पाठशालाका काम भी उतना ही जरूरी लगता है। मुझे महसूस होता है कि इस समय भी पाठशालाके लडके उन्ही श्रेणियोके दूसरी जगहके लडकोसे अच्छे है। उनमे निर्भयता आदि जो गुण आ गये है, उन्हे तो सभी साफ-साफ देख सकते है। मेरा खयाल है कि इस पाठशालापर हर महीने एक हजार रुपये खर्च होगे। अभी तो खर्च कम है। दोनो कामोमे मै खुद लगूँ, तो बेशक उन्हे बहुत बढा दूँ। किन्तु ऐसा कर नही पाता। फिर भी मै देखता हूँ कि दोनो काम अच्छे चल रहे है। आपसे मै अभी बड़ी रकम माँग रहा हूँ और स्थायी व्यवस्था यह चाहता हूँ कि अन्यत्रसे रुपया

१ और २. प्रकाशित पत्रमें इन रिक्त स्थानोंपर मूलमें नामोंको छोड दिया गया है।

लेनेके बाद जो कमी रह जाये उसे आप पूरी करें। इतना दे सकें, तो दें। तब मैं निश्चिन्त हो जाऊँगा। आपको मेरा काम पसन्द न हो, तब तो मैं आपसे रुपया माँग ही नहीं सकता। लेकिन यदि आप इसे ठीक समझें, तो मदद देनेमें संकोच न करें।

आप मेरा भरतीका काम देख रहे होंगे। मैं अपने अन्य सब कामोंसे इसे कठिन और महत्त्वपूर्ण मानता हूँ। इसमें सफलता मिल जाये, तो सच्चा स्वराज्य सहज ही मिल सकता है।

मोहनदासके वन्देमातरम्

[गुजरातीसे]
महादेवभाईनी डायरी, खण्ड ४

३२४. मगनलाल गांधीको लिखे पत्रका अंश

[नडियाद]
जुलाई ३, १९१८

पुस्तकें आनी ही चाहिए। मुझे दूसरी चीजोंके मँगानेकी भी जरूरत जान पड़ती है। लगता है कि हमने [1] की सज्जनताका दुरुपयोग किया है। वे जोर देकर नहीं कहते, इसलिए हम अड़ रहे हैं। २४ घंटेकी धमकी देनेपर हम जो करेंगे उसे मैं चाहता हूँ कि हम अभी करें। हम स्वयं अपने आपको धमकी दें, इसके समान कोई अन्य बात नहीं है।

[गुजरातीसे]
महादेवभाईनी डायरी, खण्ड ४

३२५. सैनिक-भरतीके विषयमें चर्चा[2]

[नडियाद]
जुलाई ४, १९१८

स्वराज्यका अर्थ है इंग्लैंडसे सम्बद्ध रहते हुए पूर्ण स्वतन्त्रता। यदि हम इस लड़ाईमें इंग्लैंडकी सहायता कर सकें, तो इंग्लैंड हमपर जो राज्य कर रहा है, उसके बजाय हमारा प्रभाव इंग्लैंडपर रहेगा। हमें फौजी तालीम लेनेकी जरूरत है। मैंने भारतमें अपने समान अहिंसा धर्मका पालन करनेवाला दूसरा कोई देखा ही नहीं। मैं तो प्रेमसे पूर्ण हूँ। जैसे अंग्रेजोंके पापोंको मेरे बराबर कोई नहीं जानता, वैसे ही उनके

१. पुस्तकमें नाम छोड़ दिया गया है।
२. आगन्तुकोंके साथ।

पुण्योको भी मेरे बराबर कोई नही जानता। जिसे शस्त्र-विद्या सीखनी है, जिसे मारना सीखना है, उसे मैं हिंसा करना भी सिखाऊँगा। यदि मैं इस समय कुछ न कर सकूं, तो आप इसे मेरी तपस्याकी कमी जानें। जिसे मारे बिना मरना न आता हो, उसे मारकर मरना सीखना चाहिए।

[गुजरातीसे]

महादेवभाईनी डायरी, खण्ड ४

३२६. पत्र : एनी बेसेंटको

[नडियाद]
जुलाई ४, १९१८

[प्रिय श्रीमती बेसेंट,]

बिना शर्त फौजी भरतीके पक्षमें आपका जोरदार समर्थन पढ़नेके लिए मैं 'न्यू इंडिया'के पन्ने पलटता हूँ और निराश होकर रह जाता हूँ। इतना तो आपको साफ तौरपर अवश्य ही महसूस हुआ होगा कि अगर हरएक 'होमरूल लीगी' सक्रिय भरती करनेवाला बन जाये, तो जिन परिवर्तनोपर हम सहमत हो, केवल उन्ही परिवर्तनोके साथ हम कांग्रेस-लीग योजना जरूर पास करा सकते हैं। मेरे खयालसे यह ऐसा समय है, जब हमे लोगोका मार्गदर्शन करना चाहिए। उनकी रायकी प्रतीक्षामें बैठे न रहना चाहिए। मैं आपका वही पुराना जोश देखना चाहता हूँ जो विरोधके सामने और भी जोरदार बन जाता है। अगर हम रंगरूट जुटा देंगे, तो अपनी शर्तें मनवा सकेंगे। किन्तु अगर हम सरकारकी शर्तोका इन्तजार करते रहे, तो मुमकिन है तबतक लड़ाई खत्म हो जाये, हिन्दुस्तान सच्ची सैनिक शिक्षासे वंचित रह जाये और हमपर सैनिक तानाशाही लद जाये। परिस्थितिपर इस प्रकार विचार करना अत्यन्त स्वार्थपूर्ण है, किन्तु हमारा स्वार्थ बताता है कि देशके सामने मैंने जो रास्ता प्रस्तुत करनेका साहस किया है, वही एकमात्र अक्सीर उपाय है।

मैं जानता हूँ कि आप मेरे पत्रको धृष्टतापूर्ण नही समझेंगी।

हृदयसे आपका,
मो० क० गांधी

[अंग्रेजीसे]

महादेव देसाईकी हस्तलिखित डायरीसे।

सौजन्य : नारायण देसाई

३२७. पत्र : मु० अ० जिन्नाको

[नडियाद]
जुलाई ४, १९१८

प्रिय श्री जिन्ना,

मेरी हार्दिक इच्छा है कि फौजी भरतीके मामलेमे आप एक जोरदार वक्तव्य दें। क्या आप भी ऐसा नही मानते कि अगर प्रत्येक 'होमरूल-लीगी' सैनिक-भरती करनेवाला शक्तिशाली एजेंट बन जाये और उसके साथ ही वैधानिक हकोंके लिए लडता रहे, तो हम काग्रेस-लीग योजना को (यदि कोई परिवर्तन हुए तो) सिर्फ उन परिवर्तनोके साथ, जिनपर हम सहमत हो, निश्चित रूपसे पास करा सकते हैं। हमारी आवाजका प्रभाव तब कही ज्यादा होगा। "पहले आप सैनिक-भरतीका दफ्तर खोजिए, बादमें आपको सब-कुछ मिल जायेगा।" हमें जनताको नेतृत्व देना चाहिए इसका खयाल नही करना चाहिए कि लोग हमारी सलाहको किस रूपमें लेगे। मैं आपसे जोरदार वक्तव्यकी आशा रखता हूँ, अगर-मगर वाले वक्तव्यकी नही।

मैं जानता हूँ कि आप मेरे पत्रका बुरा नही मानेंगे।

हृदयसे आपका,
मो० क० गांधी

[अंग्रेजीसे]

महादेव देसाईकी हस्तलिखित डायरीसे।
सौजन्य नारायण देसाई

३२८. पत्र : सी० एस० रंगा अय्यरको

[नडियाद]
जुलाई ४, १९१८

प्रिय श्री रगा अय्यर,[1]

आपकी बधाईके लिए आभारी हूँ।[2] आप देहातमें बहुत-सी सभाएँ न कर सके, मैं इस बातको अन्यथा नही समझूंगा।[3] मैं जानता हूँ कि यह चीज कितनी मुश्किल है। फिर भी देहातमें प्रवेश किये बिना हमारी 'होमरूल' की योजनाएँ किसी कामकी नही हैं। आम जनताका समर्थन प्राप्त कर सके, तो हम अपने ध्येयकी तरफ बेरोक-टोक

१. विधान परिषद्के सदस्य, फादर इंडिया तथा अन्य पुस्तकोंके रचयिता।
२. खेडाकी लडाईमें सफलता मिलनेपर।
३. रंगा अय्यरने खेडा-सत्याग्रहके सम्बन्धमें ४० सभाएँ आयोजित करनेका वचन दिया था।

कूच कर सकेंगे। यह हमारी आँखोंके सामने होनेवाले दुखान्त नाटककी सबसे करुण घटना है कि हम इतनी सीधी-सादी बात भी नहीं समझते। इस चक्रसे आपको बच निकलना हो, तो अपने पत्रके बन्द हो जानेका खतरा उठाकर भी आपको हिन्दी सीख लेनी चाहिए और फिर ग्रामवासियोंके बीच रहकर काम करना चाहिए। मैं जानता हूँ कि आपने अपने पत्रके लिए बड़ी मेहनत की है। किन्तु मैं उस परिश्रमको लगभग व्यर्थ किया गया परिश्रम समझता हूँ। हमने पश्चिमकी जो शिक्षा प्राप्त की है, उसके सुफल हमें करोड़ों देशवासियोंको देने चाहिए। परन्तु हम लोग तो अपने ही बीच विचारोंका आदान-प्रदान किया करते हैं, ठीक वैसे ही जैसे आँखोंपर पट्टी बँधे कोल्हूके बैल उसी चक्करमें घूमते हुए भी यह मानते हैं कि वे प्रगति कर रहे हैं।

हृदयसे आपका,
मो० क० गांधी

[अंग्रेजीसे]

महादेव देसाईकी हस्तलिखित डायरीसे।
सौजन्य . नारायण देसाई

३२९. पत्र : प्रभुदास गांधीको

[नडियाद
जुलाई ४, १९१८]

चि० प्रभुदास,

तुम्हारा पत्र मैंने बहुत ध्यान और दिलचस्पीसे पढ़ा है। उसे लिखनेमें तुमने बड़ी समझदारीसे काम लिया है। उसमें अविनय तनिक भी नहीं है। उसकी भाषा विनययुक्त और स्वतन्त्रताकी भावनासे भूषित है। इसलिए मुझे बड़ी मीठी लगती है। तुम्हारे पत्रसे तुम्हारी निर्भयता प्रकट होती है। . . .[१]

मुझे कुछ बातोंकी जानकारी नहीं थी। उनके सिवा तुमने जो-कुछ लिखा है उसका भी आभास-मात्र था। तुमने उसे अधिक स्पष्ट कर दिया है। मेरा ज्ञान इतना नहीं था कि मैं कोई उपाय कर सकूँ। तुम्हारी दी हुई जानकारीसे मैं इस बारेमें कोई उपाय कर सकूँगा। . . .[२]

मेरे धोखा खानेसे जैसे तुम्हारे चरित्र या शिक्षणको कोई धक्का नहीं लगा है वैसे ही हमें कोई नुकसान नहीं पहुँचता। यदि हम एक ऊँचे आदर्शपर कायम रहें, तो कोई हानि नहीं होती। जो आदमी अपना घर साफ रखता है, उसके घरमें प्लेग वगैरा रोग घुस ही नहीं सकते। फिर यदि वे घुस भी आयें, तो वहाँ स्थायी रूपसे निवास नहीं कर सकते। इसी तरह यदि हम खुद साफ रहें, तो दुष्टता रूपी प्लेग

१ व २. यहाँ मूलमें कुछ शब्द छूटे हुए हैं।

हमारे घरमें घुस आनेपर भी लम्बे समय तक नही रह सकती। तुमने देखा होगा कि मेरे सम्पर्कमें आनेवाले सभी लोगोके दोष आगे-पीछे सामने आ ही गये है।

मैं तुमसे तुम्हारे पत्रको सम्बद्ध व्यक्तियोको पढवा देनेकी अनुमति चाहता हूँ। वे तुमपर रोष न करेंगे, रोष किया ही नही जा सकता। हम आश्रममें ऐसा चाहते हैं कि तुम्हारे और दूसरे लोगोके मनमें जो विचार हो, उन्हे तुम लोग जाहिर करो। हो सका तो मैं आश्रममें दो रात रुक जाऊँगा और दूसरे दिन सुबहकी गाडीसे वापस आ जाऊँगा, ताकि हमें रातका समय मिल सके।

बापूके आशीर्वाद

[गुजरातीसे]

महादेवभाईनी डायरी, खण्ड ४

३३०. पत्र : जी० ए० नटेसनको

नडियाद
जुलाई ५, १९१८

प्रिय श्री नटेसन,

देवदासको आपके हाथो नर्सका प्रेम और शुश्रूषा मिल रही है। मुझे खेद है कि आपके अनेक बोझोमें एक और बढ गया। मैंने आशा रखी थी कि देवदास बीमार पडनेकी असभ्यता नही करेगा। देवदासकी देखभाल करनेके लिए कृपया डॉ० कृष्णास्वामी-को मेरी ओरसे धन्यवाद दे दें। आपकी खातिर मैं आशा करता हूँ कि वह जल्दी अच्छा हो जायेगा। आपकी माताजीको जो आपत्ति है, उसे मैं समझ सकता हूँ। परन्तु आप दृढ रहेंगे, तो वे देवदासके मामलेमें अपनी आपत्ति हटा लेगी और यह चीज भविष्यके लिए उदाहरण बन जायेगी। आप जानते ही हैं कि नायकरके मामलेमें उन्होने कितनी शालीनतासे काम लिया था। उन्हे अपने साथ ले चल सकनेकी क्षमतामें आपको स्वय सन्देह था। अपने घरसे ही सुधार शुरू करनेका विचार न करनेकी हम सुधारकोको आदत पड़ गई है। अब अपनेको सुधारनेमें हमें कठिनाई पड़ती है। परन्तु आभार व्यक्त करनेके लिए लिखा गया यह पत्र तो उपदेशात्मक हो गया। इस अपराधके लिए क्षमा करे।

मैं जानता हूँ कि यदि देवदासकी हालत चिन्ताजनक हुई तो आप तार दे देंगे।

हृदयसे आपका,
मो० क० गाधी

गाधीजीके स्वाक्षरोमें मूल अग्रेजी प्रति (जी० एन० २२३०) की फोटो-नकल से।

३३१. पत्र : वी० एस० श्रीनिवास शास्त्रीको

[नडियाद]
जुलाई ५, १९१८

आपने 'क्रॉनिकल'में कौन-सी रिपोर्ट पढ़ी, यह मैं नही जानता। रगरूट भरती करनेवाला एक सरकारी अफसर है; उसकी धृष्टता देखिए कि वह मेरा हमनाम है। आपने जो उत्साहपूर्ण रिपोर्ट पढी, वह उसी की होगी। मुझे तो अभी तक एक भी रगरूट नही मिला, सिवा मेरे कुछ साथियोके जो सैनिकके रूपमें काम करनको या अपनी एवजमे दूसरे रगरूट देनेके लिए वचनवद्ध हैं। काम बहुत ही कठिन है। अपनी जिन्दगीमें इतना मुश्किल काम हाथमे लेनेका मौका मुझे पहले कभी नही आया। फिर भी किसी परिणामके बारेमे अभीसे कुछ कहना बहुत जल्दी होगा।

हृदयसे आपका,
मो० क० गांधी

[अंग्रेजीसे]

महादेव देसाईकी हस्तलिखित डायरीसे।
सौजन्य : नाराण देसाई

३३२. पत्र : देवदास गांधीको

[नडियाद]
जुलाई ५, १९१८

मैं चिन्तामें पड़ गया हूँ। तुम यह तो जानते ही हो कि हमारा नियम क्या है। हमें बीमार हरगिज न पड़ना चाहिए। हम बीमार न हो, इसके लिए हमें सयमकी ही जरूरत है। काफी कसरत और जितनी आवश्यक है, केवल उतनी ही खूराक — इन दो बातोका ध्यान रखा जाये, तो तन्दुरुस्ती हरगिज नही बिगड़ेगी।

[गुजरातीसे]
महादेवभाईनी डायरी, खण्ड ४

३३३. पत्र : मणिभाई पटेलको

[नडियाद]
जुलाई ५, १९१८

भाईश्री मणिभाई,[1]

आपका पत्र मिला। मैं आपकी भावना समझ सकता हूँ, परन्तु सहायता नही कर सकता। समय अपना काम कर रहा है। वह आपको शान्ति देगा।

[आपका,]

[गुजरातीसे]
महादेवभाईनी डायरी, खण्ड ४

३३४. पत्र : सी० एफ़० एण्ड्रयूजको

[नडियाद]
जुलाई ६, १९१८

प्रिय चार्ली,

तुम्हारे सभी पत्र मिल गये।[2] इन्हे मैं बहुत कीमती मानता हूँ, यद्यपि उनसे मुझे बहुत थोडा आश्वासन मिलता है। तुमने जो कठिनाइयाँ बताई है, मेरी कठिनाइयाँ उससे अधिक बडी है। जो कठिनाइयाँ तुमने उपस्थित की है, उनका जवाब तो मैं दे सकता हूँ। इस पत्रमें मैं अपनी कठिनाइयोको शब्दबद्ध करनेका प्रयत्न करूँगा। फिलहाल इस समय इन कठिनाइयोंने मेरा सारा ध्यान अपनी ओर खीच रखा है। दूसरे जो भी काम मैं करता दिखाई देता हूँ, वे केवल यान्त्रिक रूपमें करता हूँ। बहुत ज्यादा सोचनेका असर मेरे शरीरपर भी पड़ा है। किसीके साथ बात करना मुझे अच्छा नही लगता। मुझे कुछ लिखना भी अच्छा नही लगता, यहाँतक कि अपने मनके ये विचार भी नही। इसीलिए मैं यह पत्र बोलकर लिखा रहा हूँ ताकि देखूँ कि अपने विचार स्पष्टतासे प्रकट कर सकता हूँ या नही।[3] सच तो यह है कि मैं अपनी कठिनाइयोकी तहतक नही पहुँच सका हूँ। तब फिर उन्हे हल करनेका तो प्रश्न ही नही उठता। उनके हल होनेमे मेरे तात्कालिक कार्यपर कोई असर नही होगा। भविष्यकी कुछ नही कह सकता। अगर मैं और जीता रहा, तो किसी भी तरह इस भेदका पता अवश्य चलाऊँगा।

१. रावजीभाई पटेलके पिता।

२. इनमें जून २३ का पत्र भी शामिल रहा होगा। देखिए "पत्र: सी० एफ़० एन्ड्रयूजको", २३-६-१९१८ से पूर्वकी पाद-टिप्पणी।

३. इसके लिए गांधीजीने महादेवभाईकी सहायता ली।

तुम कहते हो कि "भारतवासियोने एक जातिके रूपमे अतीतमे पूर्णतया ज्ञानपूर्वक हिंसाका त्याग किया था और ज्ञानपूर्वक मानवताके पक्षमे खड़े होनेका निश्चय किया था।" क्या यह बात ऐतिहासिक दृष्टिसे सच है? मुझे तो 'महाभारत' या 'रामायण' में, यहाँतक कि अपने प्रिय तुलसीदासमे, जो आध्यात्मिक दृष्टिसे वाल्मीकिसे भी बहुत बढ़-कर हैं, इस बातका कोई सकेत नही मिलता। इस समय मैं इन ग्रन्थोके आध्यात्मिक अर्थोका विचार नही करता। इनमे अवतारी पुरुषोको अवश्य खूनके प्यासे, वैरसे भरे और दुश्मनके प्रति दयाहीन बताया गया है। शत्रुका पराभव करनेके लिए उन्होने छल-छद्मका आश्रय लिया, ऐसा भी बताया गया है। इन ग्रन्थोमे युद्धोका वर्णन आजकल की अपेक्षा कम उत्साहपूर्ण नही है। योद्धाओको विनाशके उन सभी शस्त्रास्त्रोसे सुस-ज्जित किया है, जिनकी मानव कल्पना कर सकता है। रामकी कीर्ति गानेके लिए तुलसी-दासजीने जो सर्वोत्तम भजन रचा है, उसमें शत्रुके नाश करनेकी उनकी क्षमताको पहला स्थान दिया गया है। उसके बाद मुस्लिम कालको ले लो। उस कालमें हिन्दू-मुसलमानोंसे कम लड़ाकू नही थे। इतना ही है कि वे सगठित नही थे। शरीर-बलमें दुर्बल और आपसी झगड़ोसे छिन्नभिन्न हो गये थे। इस जातिके बारेमे तुम जिस त्यागका आरोपण करते हो, वह त्याग करनेकी बात मनुस्मृतिमे कही नही कही गई है। प्राणिमात्रके प्रति दयाके सिद्धान्तके रूपमें बौद्ध-धर्म पूरी तरह असफल सिद्ध हुआ है। अगर दन्तकथाएँ सच हों, तो महान् शंकराचार्यने हिन्दुस्तानसे बौद्ध-धर्मको निकाल बाहर करनेके लिए अवर्णनीय निर्दयतासे काम लेनेमे संकोच नही किया था। और इसमे वे सफल भी हुए। उसके बाद ब्रिटिश-काल ले लो। जनताका जबरन नि शस्त्रीकरण हो गया है, परन्तु दिलसे मारनेकी इच्छा जरा भी नही गई। जैनोमे भी यह सिद्धान्त बिलकुल असफल साबित हुआ है। इन लोगोमे खून खराबीसे डरनेका जबरदस्त वहम है। परन्तु दुश्मन हो तो उसके प्राणोके नाशकी उन्हे उतनी ही परवाह है जितनी किसी यूरोपीयको। मेरे कहनेका अर्थ यह है कि अपने दुश्मनके विनाशसे जैनियोको भी उतना ही आनन्द होगा जितना इस पृथ्वीपर और किन्ही लोगोंको। हिन्दुस्तानके लिए अधिकसे-अधिक इतना ही कहा जा सकता है कि यहाँ कुछ व्यक्तियोने अहिंसाके सिद्धान्तको लोकप्रिय बनानेके गम्भीर प्रयत्न किये, और इसमे उन्हे यहाँ संसारके किसी भी देशकी अपेक्षा ज्यादा सफलता मिली। मगर ऐसा माननेका कोई कारण नही है कि इस [अहिंसाके सिद्धान्त] ने लोगोमे गहरी जड़ जमा ली है।

तुम आगे कहते हो . "मेरा मुद्दा यह है कि अहिंसा एक ऐसी अवचेतन किन्तु सहज वृत्ति बन गई है, जिसे किसी भी समय जाग्रत किया जा सकता है, और जैसा कि आपने करके दिखा दिया है।" काश, यह सच होता। परन्तु मैं देखता हूँ कि मैंने ऐसा कुछ भी नही कर दिखाया। आफ्रिकामे जब मित्रोने कहा कि अनाक्रामक प्रतिरोधका सहारा भारतीयोने कमजोरोके हथियारके रूपमे लिया है, तब मैं इसे उस समय अपना अपमान समझता था और उसपर हँसता था। परन्तु ऐसा कहनेवाले सच्चे थे और मैं झूठा। मेरे अकेलेके बारेमें और दूसरे कुछ साथियोके बारेमे यह कहा जा सकता है कि वह हमारी शक्तिका प्रतीक था और उसे 'सत्याग्रह' कहा जा सकता था। किन्तु अधिकांश लोगोके लिए तो वह केवल शुद्ध अनाक्रामक प्रतिरोध ही था। उसका आश्रय उन्होंने इसीलिए

लिया था कि उनमें हिंसाका मार्ग अपनानेकी ताकत नही थी। इस सत्यका अनुभव मुझे खेड़ामें बार-बार हुआ। यहांके लोगोंने अपेक्षाकृत अधिक स्वतन्त्र होनेके कारण मेरे साथ नि संकोच बातचीत की और मुझसे साफ कहा कि उन्होने मेरा बताया उपाय इसीलिए स्वीकार किया है कि दूसरा मार्ग अख्तियार करनेकी उनमें शक्ति नही है। वह नि सन्देह उनकी दृष्टिमें मेरे मार्गकी अपेक्षा कही ज्यादा पुरुषोचित था। मुझे भय है कि चम्पारन या खेडाके लोगोंमें वह साहस नही है कि निर्भय होकर फासीके तख्तेपर चढ जायें या गोलियोंकी बौछार झेल ले और फिर भी कह दें कि 'हम तुम्हारा लगान नही देंगे' या 'तुम्हारे लिए काम नही करेंगे।' यह साहस उनमें है ही नही। और मेरा दृढ मत है कि जबतक उन्हे अपनी रक्षा करनेकी तालीम नही मिलती, तबतक उनमें ऐसी निर्भयता पैदा नही हो सकती। अहिंसाका उपदेश तो उस आदमीके लिए है, जिसके तन-मनमें जीवन-शक्तिका पूरा जोश हो और जो अपने शत्रुओंके सामने सीना तानकर खडा हो सके। मेरे खयालसे अहिंसाको पूरी तरह समझने और अच्छी तरह पचानेके लिए शारीरिक शक्तिका पूरा विकास अनिवार्य है।

मैं इस बातमें तुम्हारे साथ अवश्य सहमत हूँ कि हिन्दुस्तान अपने नैतिक बलसे पश्चिमसे या पूर्वसे, उत्तरसे या दक्षिणसे कितनी ही सेना चढ आये, तो भी उसे अपने तटोंसे पीछे हटा सकता है। सवाल यह है कि 'ऐसा नैतिक बल वह किस तरह पैदा कर सकता है?' क्या इस नैतिक बलके प्राथमिक सिद्धान्त भी वह तभी समझ सकता है, जब पहले वह अपने शरीरको बलवान् बना लेगा? आज करोडो मनुष्य हर रोज प्रात काल जगन्नियन्ताके नामकी इस प्रकार हँसी उडाते है

"वह निष्कल ब्रह्म मैं हूँ, पंच महाभूतोंसे बना हुआ यह देह मैं नही हूँ। मैं हर रोज सवेरे अपने हृदयमें स्फुरित होनेवाले आत्मतत्त्वका स्मरण करता हूँ। जिसके अनुग्रहसे समस्त प्रकारकी वाणी प्रकट होती हो, वेद भी जिसका वर्णन 'नेति-नेति' कहकर करते हैं।"[1]

मैं कहता हूँ कि ये श्लोक बोलकर हम जगन्नियन्ताकी हँसी ही उडाते हैं, क्योंकि हम उसके भव्य अर्थका कुछ भी विचार किये बिना उसे तोतेकी तरह रट जाते हैं। इस श्लोकमें जो-कुछ है, उसके पूरे अर्थका एक भी भारतीयको साक्षात्कार हो जाये, तो हिन्दुस्तानपर चढाई करनेवाली बलवान्-से-बलवान् सेनाको हटा देनेके लिए वह अकेला काफी होगा। किन्तु यह ताकत हममें आज नही है। और जबतक देशमें स्वतन्त्रता और निर्भयताका वातावरण न फैल जाये, तबतक वह आ भी नही सकेगी। सवाल यह है कि यह वातावरण कैसे पैदा किया जाये? यह तभी पैदा होगा जब अधिकाश निवासियोंमें यह विश्वास उत्पन्न हो सके कि उनमें किसी मनुष्य या पशुकी हिंसाके विरुद्ध अपनी रक्षा करनेकी ताकत है। यह तो स्पष्ट है कि किसी बालकको मैं मोक्षका अर्थ

1. 'तद् ब्रह्म निष्कलमहं न च भूतसघ'
'प्रात स्मरामि हृदि सस्फुरदात्मतत्त्वम्'
'वाचो विभान्ति निखिला यदनुग्रहेण
यन्नेतिनेतिवचनैर्निगमा अवोचु'

तभी समझा सकता हूँ जब वह बड़ा हो जाये और वयस्कता प्राप्त कर ले। एक हद-तक उसमें इस शरीरकी और आसपासकी दुनियाकी आसक्ति पैदा होने देनी चाहिए। तभी इस शरीरके और दुनियाके क्षणभंगुर स्वरूपकी कल्पना उसे आसानीसे दे सकता हूँ और समझा सकता हूँ कि यह शरीर हमें भोगोको भोगनेके लिए नही, बल्कि उनसे मुक्ति पानेके लिए मिला है। इसी तरह किसी भी मनुष्यके मनमें अहिंसा यानी पूर्ण प्रेमका सिद्धान्त जमानेके लिए वह मन प्राणवान् शरीर द्वारा अच्छी तरह विकसित होकर परिपक्व हो जाये, मुझे इसकी प्रतीक्षा करनी चाहिए। अब मेरी मुश्किल यहाँ पैदा होती है कि इस विचारको व्यवहारमें किस तरह परिणत किया जाये? 'प्राणवान् शरीर' होनेका क्या मतलब है? हिन्दुस्तानियोंको शस्त्र-धारण करनेकी शिक्षा लेनेके लिए किस सीमातक जाना पड़ेगा? हर एक व्यक्तिको यह तालीम लेनी पडेगी या इतना ही पर्याप्त होगा कि यदि स्वतन्त्रताका वातावरण उत्पन्न हो जाये तो लोगोमें हथियार उठाये बिना भी अपने आस-पासके वातावरणके प्रभावसे ही आवश्यक वैयक्तिक साहस आ जायेगा? मैं मानता हूँ कि दूसरा विचार सही है, और इसीलिए मौजूदा परिस्थितिमें जब मैं हर एक हिन्दुस्तानीसे सेनामें भरती होनेके लिए कहता हूँ, और साथ-साथ सदा उसे यह बताता रहता हूँ कि जो सेनामें भरती होते हैं, वे खूनकी प्यास बुझानेको नही, बल्कि मौतके प्रति निर्भयता सीखनेके लिए भरती होते हैं तो मुझे लगता है कि मैं बिलकुल ठीक कर रहा हूँ। सर हेनरी वेनका यह कथन देखो। उसे मॉर्लेके संस्मरण (खण्ड २)से उद्धृत करता हूँ:

> दुनियाकी महान् जातियोंके जीवनमें मृत्युका बहुत ऊँचा स्थान है। . . . बहादुर और उदारचित्त मनुष्यका यह गुण ही है कि वह कुछ चीजोंको प्राणोंसे ज्यादा महत्त्व देता हो, और वे चीजें ऐसी हों जिनके बारेमें मनुष्यके मनमें कोई शंका न हो और जिनके लिए उसे मरनेसे भय न हो। . . . सच्ची स्वाभाविक बुद्धि मृत्युको जीवनका चरम लक्ष्य मानकर अच्छे ढंगसे मरनेकी कला सीखनेमें लगी रहती है। सचमुच जिसने अच्छी तरह मरना सीख लिया, उसने अपना जीवन व्यर्थ नहीं गँवाया। यह जीवनका सबसे महत्त्वपूर्ण तत्त्व और सबसे बड़ा कर्त्तव्य है। जिसे मरनेकी कलाका ज्ञान हो गया है, उसीको स्वतन्त्रताका ज्ञान हुआ है, वही सच्ची मुक्त-दशामें रह सकता है। वह किसीसे डरता नहीं। वह अच्छी तरह सन्तोष और शान्तिसे जीवन बिता सकता है। . . . जब जीवन भारस्वरूप बन जाये, तब यह समझ लेना चाहिए कि मरनेका सही अवसर आ गया है। उस समय मृत्यु आशीर्वादके समान है और जीवनमें कोई सार नहीं रह जाता।

फिर मॉर्ले कहता है: "जब उसका समय आ गया, तब टॉवर हिलपर चढते समय वेनकी चाल उसके शब्दो जैसी ही शानदार और दृढ थी।"

सैनिक-भरतीके सिलसिलेमे किये गये अपने हर एक भाषणमें एक सैनिकके कर्त्तव्यके इस भागपर मैंने सबसे अधिक जोर दिया है। मेरा एक भी भाषण ऐसा नही हुआ, जिसमें मैंने कहा हो कि "चलो, हम जर्मनोको मारनेके लिए चले।" मेरे सभी भाषणोंकी ध्वनि यही है कि "हम भारत और साम्राज्यकी खातिर लड़ाईमें जायें और मरे।"

मेरी माँगके जवावमें खूब अधिक भरती हो जाये और हम सब फ्रासमे जाकर लडाईका पलड़ा जर्मनीके विरुद्ध वदल सके, तो मेरा खयाल है कि भारतको यह अधिकार प्राप्त हो जायेगा कि उसकी वात सुनी जाये, और तव भारत स्थायी शान्ति स्थापित करा सकेगा। अव आगे कल्पना करो कि निर्भय मनुष्योकी सेना खडी करनेमें मैं सफल हो जाऊँ और ये लोग खाइयोमें पहुँच जायें और प्रेमपूर्ण हृदयोसे अपनी वन्दूके पटककर जर्मनोको चुनौती दें कि आओ हमपर — अपने मानव-बन्धुओपर — गोली चलाओ, तो मैं कहता हूँ कि जर्मन-हृदय भी पिघल जायेगा। मैं जर्मनोपर यह आरोप लगानेसे इनकार करता हूँ कि वे केवल राक्षसी वृत्तिवाले ही हैं। इस प्रकार इन सब बातोका अर्थ यह हुआ कि अपवादस्वरूप परिस्थितिमें एक आवश्यक बुराईके तौरपर युद्धका आश्रय लेना पड सकता है। हमारा यह शरीर भी तो आखिर एक अनावश्यक बुराई ही है। अगर हेतु शुद्ध हो, तो युद्धको भी मानव-जातिकी भलाईमें वदला जा सकता है। कोई अहिंसावादी युद्धके प्रति तटस्थता नही वरत सकता। उसे अपना चुनाव करना ही होगा। चाहे वह युद्धमें सक्रिय सहयोग दे या सक्रिय रूपसे उसका विरोध करे।

तुम अपना यह डर बिलकुल छोड दो कि मैं राजनीतिक झगडो और प्रपचोमें फँस जाऊँगा। ये मेरे वशकी चीजें नही हैं, इस समय इनमें पडनेकी मेरी बिलकुल इच्छा नही है, और दक्षिण आफ्रिकामें भी इनमें कोई रुचि नही थी। वहाँ मैं राजनीतिक हलचलमें पड़ा जरूर। उसका कारण यह था कि उसमें मुझे अपनी मुक्ति जान पडी। मॉण्टेग्युने मुझसे कहा था, "देशकी राजनीतिक हलचलमें आपको भाग लेते देखकर मुझे आश्चर्य होता है।" मैंने तत्काल जवाव दिया था "आप मुझे इसमें देख रहे हैं, क्योकि मैं अपना धार्मिक और सामाजिक कार्य इसके बिना नही कर सकता। मेरा खयाल है कि अपने जीवनके अन्ततक मेरा यही जवाव रहेगा।"

अव तुम यह शिकायत नही कर सकोगे कि मैंने तुम्हे पत्रके नामपर पर्ची लिखी है। पत्रके वजाय मैंने तो तुम्हारे सिर एक लम्बा-चौडा निवन्ध ही ठेल दिया है, परन्तु तुम्हे यह वताना जरूरी था कि इस वक्त मेरे मनमें क्या चल रहा है। यह सब पढकर इसपर अपनी राय देना और मेरे जो विचार तुम्हे गलत मालूम हो, उनकी निर्दयताके साथ चीरफाड करना।

मैं आशा रखता हूँ कि तुम्हारा स्वास्थ्य सुधर रहा होगा और तुममें शक्ति आ रही होगी। यह कहनेकी जरूरत शायद ही हो कि जब तुम्हारी तबीयत सफर करने लायक हो जाये, तव हम सब तुम्हारे यहाँ आनेसे प्रसन्न होगे।

सस्नेह,
मोहन

[अंग्रेजीसे]

महादेव देसाईकी हस्तलिखित डायरीसे।
सौजन्य . नारायण देसाई

३३५. पत्र : एस्थर फैरिंगको

नडियाद
जुलाई ९, १९१८

प्रिय एस्थर,

तुमने मुझसे जो प्रश्न किया, सो बिलकुल ठीक किया। [लेकिन] मैंने जो बात तुम्हे समझाई है, तुम उसका क्या उत्तर देती हो मैं उसकी राह देख रहा हूँ।

तुम्हे ग्रामीण जीवन और गाँवके बच्चोके बीच रहना ज्यादा पसन्द है, तुम्हारी यह बात मुझे अच्छी लगती है। गाँवोके बच्चे अधिक भोले होते हैं, इसलिए वे अधिक प्यारे होते हैं।

हाँ, अपने करारके अन्ततक काम करना तुम्हारा कर्त्तव्य है। मैं जानता हूँ कि लड़कियोको[1] तुम्हारे सपर्कमात्रसे लाभ होगा। यदि उन्हे दोषपूर्ण शिक्षा दी भी जा रही हो तो भी मुझे उसकी परवाह नही।

देवदास अभी-अभी बीमारीसे उठा है। मुझे मालूम है कि उसे तुमसे मिलकर प्रसन्नता होगी। अगर वह अभीतक तुम्हारे पास न आया हो तो तुम उससे स्वय मिलना। मेरी इच्छा है कि तुम्हारे पास समय हो तो तुम उससे जितना मिल-जुल सको उतना मिलो-जुलो।

सस्नेह,

तुम्हारा,
बापू

[अंग्रेजीसे]
माई डियर चाइल्ड

३३६. मु० अ० जिन्नाको लिखे पत्रका अंश

[नडियाद]
जुलाई ९, १९१८

. . . हम रंगरूटोको भरती करते रहें और उसके साथ-ही-साथ इस सुधार योजनामें परिवर्तन करानेका आग्रह करे, तो कितनी शानदार बात रहेगी।

[अंग्रेजीसे]

महादेव देसाईकी हस्तलिखित डायरीसे।

सौजन्य : नारायण देसाई।

१. डॅनिश मिशन बोर्डिंग स्कूल, तिरुक्कोइलूरकी छात्राएँ।

३३७. पत्र : दत्तात्रेय दाभोलकरको

[नडियाद
जुलाई ९, १९१८]

चि० दत्तात्रेय,

तुम्हे पाँचवी श्रेणीकी परीक्षामें प्रथम आनेपर बधाई देता हूँ। मै चाहता हूँ कि तुम जैसे पढाईमें प्रथम आये हो, वैसे ही चरित्रमें प्रथम रहो।

तुमने पहले मासकी छात्रवृत्ति आश्रमको दे दी, इससे मुझे खुशी हुई। तुम्हारे दानका तत्त्व जब मैं आश्रममें आऊँगा, तब समझाऊँगा। तुम्हारे पिता तुममें अभीसे इस प्रकारकी परोपकारकी भावना उत्पन्न करते रहते हैं, यह तुम्हारे लिए ऊँचे दर्जेकी विरासत है। तुम इसका विकास करना।

मोहनदास गांधीके आशीर्वाद

[गुजरातीसे]
महादेवभाईनी डायरी, खण्ड ४

३३८. पत्र : देवदास गांधीको

[नडियाद]
जुलाई ९, १९१८

चि० देवदास,

तुम्हारा पत्र न मिलनेमे जो चिन्ता रहती थी, वह आज नटेसनके तारसे दूर हो गई। बीमारीका उचित कारण ढूंढकर कुछ ऐसा करो, जिससे फिर बीमार न पडो। बीमारीमें हिन्दी सीखनेवाले छात्रोंने क्या किया? उनमें से कोई तुम्हारे पास आता था? किसीने पढाई जारी रखी थी या नही?

मुझे अभीतक एक भी रगरूट नही मिला। देशकी स्थिति ऐसी भयकर है।

तुमने जो तार वहाँ देखा था, वह ठीक नही था। कोई मेरा हमनाम सरकारी अफसर है, इसीमे यह भूल हुई है। अभी तककी मेरी असफलता यह बताती है कि लोग मेरी सलाह माननेके लिए तैयार नही हैं। लेकिन जहाँ मैं उनकी रुचिके काममें हाथ डालूँ वहाँ वे मेरी सेवा स्वीकार करनेके लिए तैयार हैं। यही ठीक है। इस सेवासे सलाह देनेका अधिकार मिलता है। तीन बरसकी सेवा और वह भी अलग-अलग प्रदेशोंमें — यह तो कुछ भी नही है। फिर भी भरतीके बारेमें मैं और कुछ कर ही नही सकता था। मुझे यह मानसिक शान्ति है कि ऐसे समय मैंने पहल की। मुझे इसकी

जरूरत थी। काम अब भी चल ही रहा है। यह तो मैंने अभी तक का परिणाम बताया है।

बापूके आशीर्वाद

[गुजरातीसे]
महादेवभाईनी डायरी, खण्ड ४

३३९. पत्र : हरिलाल गांधीको

[नडियाद]
जुलाई ९, १९१८

[चि० हरिलाल,]

तुम्हारा पत्र मिला। मुझे जो सत्य प्रतीत हुआ, उसे कहना निर्दयता हो, तो मेरा पत्र जरूर निर्दयतापूर्ण है। मैं अब भी कहता हूँ कि दुनिया तुम्हें निर्दोष कभी न मानगी। तुमने साक्षीमें कुछ भी कहा हो, फिर भी तुम्हारे सट्टेकी कल्पना नरोत्तम सेठको नही हो सकती। तुमने तो भूल-पर-भूल की। तुमने दस हजार खोकर भी हाथ नही खीचा। लेकिन तुम्हारे साथ बहस नही करनी चाहिए। ईश्वर तुम्हे सद्बुद्धि दे। मैंने भूल की होगी तो मै उसे सुधार लूँगा। तुम मेरी और भी भूल बता सको तो बताना।

मै तुम्हारे लडाईमें शरीक होनेकी बात समझ गया। जब मुझे तुम्हारी सचाईमें शंका नही थी, तब मैंने वह सुझाव दिया था। अब मुझे नही लगता कि उस सुझावमें कोई रस है। जबसे मुझे शंका हुई है, तबसे मेरी क्या हालत हुई है, मैं इसकी कल्पना तुम्हे नही करा सकता।

मेरी तो बस यही इच्छा है कि प्रभु तुम्हारा कल्याण करे; तुम्हे सन्मार्ग दिखायें।

बापूके आशीर्वाद

[गुजरातीसे]
महादेवभाईनी डायरी, खण्ड ४

३४०. पत्र : मगनलाल गांधीको

[नडियाद
जुलाई ९, १९१८]

पूज्य खुशालभाई और देवभाभीको शान्ति मिल सके, इसके लिए जो-कुछ करना उचित हो, सो करना। प्रभुदास और अन्य लोग वहाँ भोजन करते हैं, मुझे इसका कुछ विपरीत परिणाम होता दिखाई देता है। केशू और राधाको भारी आघात पहुँचता होगा। विवेकपूर्वक सोचकर जो उचित लगे, सो कर लेना।

[गुजरातीसे]
महादेवभाईनी डायरी, खण्ड ४

३४१. पत्र : एक साथीको

[नडियाद]
जुलाई १०, १९१८

तुम्हारे वारेमें मुझे डर लग रहा है। जिस तरह तुम्हारे साथ जूझ रहा हूँ उसी तरह हरिलालके साथ भी जूझ रहा हूँ। हरिलाल कहता है कि मैंने जो उपाय सुझाया है वह क्रूरतापूर्ण है। मै देखता हूँ कि वह सही नही है, तव मै यह कैसे कह सकता हूँ कि वह सच कह रहा है। तुम्हारे मामलेमें भी मेरी यही दशा हो गई है। तुम्हारे सम्बन्धमे भी मैं [लोगोमें] नाराजी देखता हूँ। तुम्हारे ऊपर ढोग करनेका आरोप लगाया गया है। उस बार तुम मेरे आदर्शोंकी चर्चा ले बैठे। अव मुझे लिखते हो कि तुम . . .[1] गये उसमें तुम्हारा समय व्यर्थ ही गया। तुमने मुझे धोखा दिया है और . [2] को भी तुमने गुमराह किया। तुमने उसे यह सुझाया कि मुझे उसे चिंचवड भेजना चाहिये। उसने मुझसे यह कहा। मैंने उसकी वातको महत्त्व नही दिया। अब इन वातोको याद करता हूँ तो काँप जाता हूँ। तुम्हे क्या लिखूं? मैं तुम्हारा न्याय नही कर सकता। तुम्हे झूठा कहते हुए मुझे दु ख होता है। यदि तुम्हारे जैसा व्यक्ति इतना ढोग कर सकता है, इतना कामचोर हो सकता है तो फिर किसका विश्वास किया जाय? यदि तुमने ढोग नही किया तो मेरे मनपर अकस्मात् ऐसी छाप क्यो पडी? [3] का दोष नही है। . [4] निमित्तमात्र है। मेरा सन्देह जब शुरू हुआ तव तुम [5] में नही टिके। ज्योही सन्देह हुआ त्योही मैंने उसे दबा दिया; . . .[6] ऐसा नही कर सकता, ऐसा सोचकर मै इस बातको भूल गया। परन्तु मेरा समाधान नही हुआ। यह सन्देह और तुम्हारे साथ हुई बातचीत मुझे याद आती है और मै बहुत असमजसमें पड़ जाता हूँ। मुझे तुम इस दु खसे उबारो। या तो अपनी निर्दोपिता पूरी-पूरी सिद्ध करो या शुद्ध पश्चात्ताप करो और सरल बनो। तुम्हारे विषयमें सन्देहकी यह स्थिति असह्य है। तुमपर मैंने बडी-बडी आशाएँ बाँधी थी। भारतकी भावी सत्याग्रही सेनामें मैंने तुम्हे अग्रस्थान दिया था। यह सब अब नष्ट-भ्रष्ट हो गया है।

[गुजरातीसे]

महादेव देसाईकी हस्तलिखित डायरीसे।

सौजन्य नारायण देसाई

१, २, ३, ४, ५ और ६ मूलमें यहाँ कुछ शब्द छोड दिये गये हैं।

३४२. पत्र : मगनलाल गांधीको

बम्बई
आषाढ सुदी ६ [जुलाई १४, १९१८]

चि० मगनलाल,

श्री प्रैटसे मिलनेके बाद मैं वापस नही आ सका। क्योकि जगजीवनदासकी बीमारीकी खबर मिली और मुझे नडियाद रवाना होना पडा। श्री प्रैटके यहाँ कई अंग्रेज मुझे घेरकर बैठ गये और बड़ी मिठाससे बातचीत करने लगे। उन्होने आश्रम देखनेके लिए आनेकी इच्छा प्रकट की। मैंने उनसे कहा कि वे शनिवारको आयें। सम्भवत: उस दिन मैं वहाँ होऊँगा। यदि जल्दी रवाना हो सका तो मैं शनिवारको दोपहरकी गाडीसे आऊँगा। मैं आऊँ तो ठीक और न भी आऊँ तो उनके आनेकी पूरी उम्मीद रखना। वे शामको पाँच बजेके बाद किसी समय आयेंगे। मैंने उनसे कहा है कि यदि वे प्रार्थनाके समयतक रुकेंगे तो आश्रमको ठीक तरहसे देख सकेंगे। सब लडकोको अथवा खास-खास लडकोको अंग्रेजी भजन सिखा देना चाहिए। 'लीड काइडली लाइट' भजन गाना। यदि वे पाँच बजे आये तो उन्हे रसोई और अन्य स्थान दिखा देना और भोजन भी दिखाना।

मैं यह पत्र बम्बईसे लिख रहा हूँ। मैं करमसदसे सीधा यहाँ आया हूँ। बम्बई में तिलक महाराज है। यह तय हुआ है कि मैं उनसे मिलनेके बाद ही अपने योजना सम्बन्धी विचार प्रकट करूँ, इसलिए मैं लोगोसे मिल रहा हूँ। नडियाद बुधवारकी शामको लौटूंगा। यहाँसे मगलवारकी रातको रवाना होऊंगा, किन्तु रास्तेमे गोधरा जाना है। गोधरासे उसी दिन नडियाद लौटूंगा।

बापूके आशीर्वाद

[पुनश्च:]

तुम हिसाब तो ठीक-ठीक रख रहे होगे। किसी दूसरेकी सहायता लेकर भी उसको ठीक कर लेना।

मूल गुजराती पत्र (सी० डब्ल्यू० ५७३२) से।
सौजन्य : राधाबेन चौधरी

३४३. भाषण: करमसदमें[1]

जुलाई १४, १९१८

उन्होने [गांधीजीने] अपना भाषण प्रारम्भ करते हुए कहा, मैं यहाँ आपको कड़वा घूंट पिलानेके लिए आया हूँ। आशा करता हूँ कि आप लोग यह याद रखते हुए एकाएक उससे मुँह न फेर लेगे कि स्वशासित और स्वतन्त्रता-प्रिय लोगोके स्वभावका एक मुख्य लक्षण यह है कि वे सबकी सुनते हैं; परन्तु करते वही हैं जो उन्हें सबसे ज्यादा ठीक लगता है। मैं आपसे पूछता हूँ कि स्वराज्यका अर्थ क्या है?

हमारे गाँव गन्दगीके ढेरोसे ज्यादा और कुछ नही है। हम स्वय डाकुओ और जगली जानवरोंसे अपनी तथा अपने बाल-बच्चोकी रक्षा करनेमें असमर्थ है। हमारे ऊपर मुखी और रावनिये अत्याचार करते है और हमें धमकाते है। हमारे पास हथियार नही है और हम उन्हे चलाना भी नही जानते। क्या यही स्वराज्य है? तिसपर भी सारे भारतमें सामान्यत स्थिति यही है। आप अंग्रेजोके किसी गाँवकी स्वच्छता, शान्ति और स्वास्थ्यकर स्वतन्त्रताकी कल्पना करे — फिर देखें कि भारतीय गाँव उसकी तुलनामें कितने हीन है। भारतके गाँवोकी स्थितिसे इग्लैंडके गाँवोकी स्थिति इतनी ज्यादा अच्छी होनेका कारण यह है कि प्रत्येक अंग्रेज अपने पैरोपर खडा हो सकता है, हमलावरसे अपने घर-द्वार और गाँवकी रक्षा कर सकता है।

इस प्रकार स्वराज्यका सबसे पहला आवश्यक तत्त्व है आत्मरक्षाकी शक्ति। मैं तभी स्वराज्यके योग्य हूँ जब मैं अपनी रक्षा स्वय कर सकूँ और अपने देशके लिए अपना रक्त बहा सकूँ। भारतको तभी जिन्दा देश कहा जा सकता है जब उसके लिए ५ लाख आदमी रणक्षेत्रमें प्राण त्याग करे। बीजको असख्य बीज उत्पन्न करनेसे पूर्व स्वय मिट्टीमें मिलना पडता है। इसी प्रकार भारतके लिए जब हजारो लोग प्राण देंगे तब उनकी राखमें जीवित भारतका जन्म होगा। हम भारतीय रोज प्रात साय मन्दिरोमें जाते है और वहाँ ईश्वरकी आराधना करते है — उस ईश्वरकी जिसके विषयमें हम कहते है कि "जब-जब धर्मकी ग्लानि होती है और अधर्मकी वृद्धि होती है तब-तब वह पीडित और त्रस्त लोगोके परित्राणके लिए पृथ्वीपर अवतरित होता है।" यदि हममें आत्म-रक्षा करनेकी क्षमता और भावना नही है तो हमें इन मन्दिरोमें जाना शोभा नही देता। वास्तवमें हमारे श्रीराम और श्रीकृष्णने क्या किया था? उन्होने साधारण कोटिके मनुष्योमें वीरता भर दी थी और उन्हे आत्मरक्षाके लिए सुसज्जित कर दिया था। इस समय हमारे हाथमें आत्मरक्षाकी शक्ति प्राप्त करनेका स्वर्ण अवसर आया है। हमें चाहिए कि हम उसे खो न दें, बल्कि उसका पूरा लाभ उठायें। वह साम्राज्य, जो अबतक भारतकी रक्षा करता आया है और जिसमें बराबरीके दर्जेका साझेदार बनना

१. श्री गाधी द्वारा फौजी भरतीके बारेमें यह तीसरा भाषण था जिसे उन्होंने आनन्द तालुकेके करमसद गाँवमें दिया था।

उसकी आकांक्षा है, आज भारी खतरेमें है और उसके इस सकट-कालमे भारतका उसकी सहायताके प्रति उदासीन रहना शोभाजनक नही है। यह दलील व्यर्थ है कि जिस सरकारने हमारे प्रति कोई सहानुभूति नही दिखाई वह सरकार हमारी सहायताकी अधिकारिणी नही है; क्योकि सरकारकी सहायता करना अपनी ही सहायता करना है। इस समय भारत भी घोर सकटमे है। अग्रजोके बिना भारत कहीका न रहेगा। यदि इस युद्धमें अग्रेजोकी जीत नही होती तो हम बराबरीका हक किससे माँगेगे? क्या हम उसे विजेता जर्मनोसे माँगेंगे या तुर्कोसे या अफगानोसे माँगेंगे? हमें ऐसा करनेका कोई अधिकार न होगा। विजयी राष्ट्रका ध्यान हारे हुए लोगोपर कर लगाने, उन्हे दबाने, तंग करने और उनपर जुल्म ढानेकी ओर जायेगा। ऐसा राष्ट्र अपनी स्थितिको सुदृढ कर लेनेपर ही हमारी माँगोकी ओर ध्यान देगा, इसके प्रतिकूल स्वतन्त्रताप्रिय अग्रेज जब यह देख लेंगे कि हमने उनके लिए अपनी जाने दी है, तब वे निश्चय ही झुकेंगे। हमें इस खयालसे रुके न रहना चाहिए कि हम सबके युद्धमे चले जानेपर हमारे घर-बार, खेत-खलिहान, गाय-बैल — सब बर्बाद हो जायेंगे। हमारे बडे-बूढे उनकी देखभाल करेंगे। उन्हे उनकी देखभाल स्वभावत. करनी ही चाहिए, और इससे हम बहुत कुछ सीखेंगे। हममे से प्रत्येकको केवल एक ही बात सोचनी चाहिए। किसीकी यह जुर्रत न हो कि वह हमारे मुल्कपर हमला करे। अगर करे तो यहाँसे कुछ ले न जा सके। यदि ले भी जाये तो देशकी रक्षाके निमित्त लडाईमे काम आये हुए मेरी मृत देहको ही।

भाषणको समाप्त करते हुए उन्होंने इस बातको फिर दुहराया कि फौजमें भरती होना स्वशासनका सबसे सीधा और अचूक मार्ग है। उन्होने करमसदके बहादुर लोगोंसे जिन्होंने खेड़ा आन्दोलनके दिनोंमें बहुत अच्छा काम किया था, कहा कि वे कमसे-कम सौ आदमी लड़ाईमें जरूर भेजें।

[अंग्रेजीसे]

बॉम्बे क्रॉनिकल, २७-७-१९१८

३४४. पत्र : हनुमन्तरावको

जुलाई १७, १९१८

[प्रिय हनुमन्तराव,]

बहुत समयसे तुम्हे पत्र लिखनेका विचार कर रहा हूँ, किन्तु फौजी भरतीके सिलसिलेमें दौड़-धूपके कारण मेरे पत्र-व्यवहारमे बहुत बाधा पडी है। आज छुट्टीका दिन है और मैंने चिट्ठियाँ लिखनेका निश्चय किया है। तुमने देवदासके लिए जो-कुछ किया है और जो-कुछ कर रहे हो, उसके लिए मैं अन्त करणसे तुम्हारा आभार मानता हूँ। देवदास अपने हर पत्रमें अपने प्रति तुम्हारे प्रेमके बारेमे लिखता है। वह कहता है कि उसकी बीमारीमें तुमने सच्चे मित्रका काम दिया है। अब मैं तमिल सीखनेके लिए हिन्दी उम्मीदवारोको चुनूँगा।

मैं जानता हूँ कि सैनिक-भरतीके मेरे कामसे मित्रोको अलग-अलग कारणोसे — राजनीतिक और धार्मिक कारणोसे भी — दु ख होता है। फिर भी जानता हूँ कि मेरे इस कामकी निन्दा करके दोनो प्रकारके मित्र भूल कर रहे हैं। वडे लम्बे अर्सेसे मेरे विचार देशके सामने हैं। परन्तु महत्त्व तो सदैव मनुष्यके कामोका है, उसकी वाणीका नही। किन्तु इसी कारण मुझे उनकी आपत्तियोको विना विचारे रद नही कर देना चाहिए। वे जो-कुछ कहते हैं ईमानदारीसे कहते हैं और प्रेमके कारण ही मेरी आलोचना करते हैं। मैं स्वय अहिंसाके सिद्धान्तोका पालन करते हुए भी लोगोको अहिंसाका ककहरा भी नहीं समझा पाया, अपनी यह असफलता मैंने देखी है और इससे मैं इस निष्कर्षपर पहुँचा हूँ कि हर जीव-हत्या हिंसा नही है। कभी-कभी तो अहिंसाके पालनके लिए मारनेकी भी जरूरत पड सकती है। एक राष्ट्रकी हैसियतसे हम मारनेकी सच्ची शक्ति खो बैठे हैं। यह तो स्पष्ट है कि जो मारनेकी शक्ति गँवा बैठा हो, वह अहिंसाका आचरण नही कर सकता। अहिंसामें अत्यन्त ऊँचे प्रकारका त्याग समाया हुआ है। जो जनता कमजोर और कायर हो गई हो वह त्यागका यह भव्य आचरण नहीं कर सकती; ठीक वैसे ही जैसे चूहेके लिए यह नही कहा जा सकता कि उसने विल्लीको मारनेकी शक्तिका त्याग किया है। यह वात भयंकर भले लगे, परन्तु विलकुल सच है कि हमें अनवरत और सायास, विचारपूर्वक इस शक्तिको पुन: प्राप्त करना होगा। और उसे प्राप्त करनेके बाद ही हम स्वय इस शक्तिका सतत् त्याग करके, हिंसाकी यातनाओंसे दुनियाको मुक्त कर सकेंगे। आश्रमके सदस्योको भी अहिंसाके वारेमें अच्छी तरह समझानेमें अपनेको असफल पाकर मुझे जो दु ख होता था, उसे मैं शब्दोमें व्यक्त नहीं कर सकता। ऐसी वात नही थी कि वे मेरी वात ध्यानपूर्वक न सुनते हो, लेकिन उस वक्त मुझे ऐसा आभास होता था और अब तो मैं साफ देख सकता हूँ कि सत्यको ग्रहण करनेकी उनमें शक्ति नही थी। मेरी वातें उनके लिए वैसी ही थी, जैसे सगीतका ज्ञान न रखनेवालोंके आगे उत्तम सगीतका गाया जाना। परन्तु आज आश्रममें लगभग हरएक यह वात समझ गया है, और उनके मनमें इस ज्ञानकी प्रभा फूट पडी है कि अहिंसाका अर्थ अपने वलका ज्ञान रखते हुए त्याग करना है, निर्बलताके कारण त्याग करना नहीं। व्यवस्थित युद्ध और व्यक्तिगत लडाई दोनोमें कोई भेद नही किया जा सकता। डाकुओंके मामलेमें भी सगठित विरोध और सगठित मार-काटका होना आवश्यक है। सर्वोत्तम योद्धा वही कहा जायेगा, जो घोर विपरीत परिस्थितियोके सामने भी निर्भय खडा रहे। उस समय उसे अपनी मारनेकी शक्तिका विचार नही आता। बल्कि उसे यह विचार करके अपनी विजयका भान होता है कि यदि वह चाहे तो भागकर आसानीसे जान बचा सकता है, लेकिन वैसा न करके वह खुशीसे मरनेको तैयार खडा है। मैं निश्चित रूपमें मानता हूँ कि हमें अपने बच्चोको आत्म-रक्षाकी कला सिखानी ही पडेगी। मुझे यह अधिकाधिक स्पष्ट प्रतीत होता है कि अगर हम आत्म-रक्षाकी शक्ति पुन प्राप्त न कर सके, तो युगोंतक स्वराज्यके लिए अयोग्य रहेंगे। इसपर से आत्मविश्वास और भारतके विकासके बारेमें अपनी कितनी ही धारणाओंपर मुझे पुनर्विचार और परिवर्तन करना पड़ा है। आज जितना मैंने कहा है, उससे ज्यादा चर्चा यहाँ नही करूँगा। तुम ज्ञानके सच्चे खोजी हो। मेरी हार्दिक इच्छा है कि तुम अहिंसाका यह

नया विचार भली-भाँति समझ जाओ। इसमे पतन नही, बल्कि उन्नति है। अपनी इस खोजके कारण मेरे मनमे प्रेमकी जो भावना पैदा हुई है, वह पहलेसे अनन्त गुनी है।

हृदयसे तुम्हारा,
मो० क० गांधी

[अंग्रेजीसे]

महादेव देसाईकी हस्तलिखित डायरीसे।

सौजन्य : नारायण देसाई

३४५. पत्र : वी० एस० श्रीनिवास शास्त्रीको[1]

[नडियाद]
जुलाई १७, १९१८

प्रिय श्री शास्त्रियर,

आपके बम्बई जा सकनेसे मै बहुत प्रसन्न हुआ। मेरे खयालसे यदि आप कांग्रेस [अधिवेशन] में[2] शामिल हो सकें तो बहुत बडा काम करेंगे। मुझे स्वीकार करना चाहिए कि पण्डितजीका रवैया जैसा अखबारोमे बताया गया है, वैसा हो, तो मेरी उनके साथ सहानुभूति है। उनके लिए कांग्रेसके मंचसे अनुपस्थित रहना उनके जीवनका एक अत्यन्त साहसपूर्ण कार्य होगा। मुझे जो लगता है वह यह है कि मै उस सभामें कैसे उपस्थित रहूँ, जिसमें, मै जानता हूँ, गलत नेतृत्व दिया जानेवाला है, और प्रस्तावोको पेश करनेवाले प्रमुख लोग जिनमें उनका विश्वास नही है वह बात कहते है और जिन प्रस्तावोके पक्षमें वे मत देंगे बादमे उन्ही प्रस्तावोकी खुद ही समाचारपत्रोमें निन्दा करेंगे? मै जानता हूँ कि इस प्रश्नका दूसरा पहलू भी है, किन्तु इस क्षण तो मै अलग रहनेकी तरफ ही झुकता हूँ। आशा है आपकी तबीयत अच्छी होगी।

हृदयसे आपका,
मो० क० गांधी

[अंग्रेजीसे]

महादेव देसाईकी हस्तलिखित डायरीसे।

सौजन्य : नारायण देसाई

१. गांधीजीने यह पत्र श्री शास्त्रीके निम्न-पत्रके उत्तरमें भेजा था : "समाचारपत्रोंमें बिल्कुल विपरीत बात लिखनेके बाद अब श्रीमती बेसेंट और तिलकको वह रुख अपनाते देखकर आश्चर्य होता है जो आपके और मेरे रुखसे मिलता-जुलता है। कांग्रेसमें दिलचस्पी न लेनेकी जो बातें की जा रही हैं, उन्हें मैं पसन्द नहीं करता। मैं इस बातको समझ ही नही पाता।"

२. अगस्त २९ से सितम्बर १ तक बम्बईमें होनेवाले कांग्रेसके विशेष अधिवेशनमें मॉण्टेग्यु-चैम्सफोर्ड सुधार-योजनाको लेकर फूट पड जानेकी आशका की जा रही थी, लेकिन ऐसा कुछ नही हुआ। कांग्रेसने जो प्रस्ताव पास किया उसका सर्वत्र स्वागत किया गया।

३४६. पत्र : वी० एस० श्रीनिवास शास्त्रीको

[नडियाद]
जुलाई १८, १९१८

आपने लिखा है कि मैं आपको अभी हालमें प्रकाशित सुधार-योजनाके[1] सम्बन्धमें अपने विचार बताऊँ। आप जानते ही हैं कि मुझे कांग्रेस और मुस्लिम लीगकी योजना तैयार करनेमें सक्रिय भाग लेनेकी जरूरत नही लगी थी। मैंने राजनीतिक विवादमें पूरी दिलचस्पी नही ली है। मैं इन सुधार-प्रस्तावोका अध्ययन जिस ढगसे एक राजनीतिज्ञ करता उस ढगसे उनका अध्ययन करनेका दावा अभी तक नही कर पाऊँगा। इसलिए मैं उनके सम्बन्धमें अपनी सम्मति देते हुए बहुत अधिक झिझकता रहा हूँ। फिर भी मैं उनके बारेमें मेरी जो राय बनी है उसे व्यक्त करनेके पक्षमें आपके तर्कको महत्त्वपूर्ण समझता हूँ।

मेरी राय तो यह है कि जो योजना अभी हालमें प्रकाशित हुई है वह बहुत अच्छी बन पाई है और इस दृष्टिसे कांग्रेस-लीग योजनासे अच्छी है। मेरा यह भी खयाल है कि श्री मॉण्टेग्यु तथा लॉर्ड चैम्सफोर्ड दोनो ही सच्चे दिलसे भारतका कल्याण चाहते हैं। और २० अगस्तकी घोषणापर उचित अमल करना चाहते हैं। उन्होंने अपने अत्यन्त कठिन और नाजुक कामको पूरा करनेके लिए बहुत परिश्रम किया है और मेरे मनमें उसके सिवा और कोई खयाल आ ही नही सकता कि जल्दबाजीमें उनकी इस योजनाको अस्वीकृत कर देना देशके लिए अहितकर होगा। मेरी विनम्र सम्मतिमें इस योजनाको एकदम नामजूर कर देनेकी अपेक्षा उसके सम्बन्धमें सहानुभूतिसे विचार किया जाना चाहिए। परन्तु उसमें पहले बहुत-कुछ सशोधन करनेकी जरूरत है; सुधार-वादियोंको वह तभी मजूर होगी। आखिर, कांग्रेस-लीग योजनाको ही हम अपना मापदड मान सकते हैं फिर वह भले ही अनगढ क्यो न हो। मेरा खयाल तो यह है कि हम जिन तत्त्वोंको आवश्यक समझते हैं उन्हें उस योजनामें शामिल करानेके लिए हमें अपनी पूरी शक्ति और बुद्धि लगानी चाहिए।

उदाहरणार्थ मैं किन्ही खास वर्गोंके लिए स्थान सुरक्षित करनेके सिद्धान्तको नही मानता। मुझे बहुत अंदेशा है कि यह प्रयोग प्रान्तोंके दुहरे शासनसे असफल हो जायेगा। चूंकि इस प्रयोगकी सफलताके पश्चात् ही हम आगेकी मजिलपर — आशा है कि वही अतिम मजिल होगी — पहुँच सकते हैं, इसलिए हम इस बातको लेकर अड नही सकते कि सरक्षणोंके विचारको योजनामें से निकाल दिया जाये। यह बात सभीके ध्यानमें आयेगी कि दुर्भाग्यसे विशुद्ध भारतीय हितोंसे पृथक विशुद्ध ब्रिटिश हितोंके सम्बन्धमें हमारी

१. वैधानिक सुधारोंपर ई० एस० मॉण्टेग्यु और लॉर्ड चैम्सफोर्ड द्वारा तैयार की गई रिपोर्ट जो ८ जुलाई, १९१८ को प्रकाशित की गई थी। श्री शास्त्रियरने अपने समाचारपत्र सर्वेंट ऑफ इंडियामें प्रकाशित करनेके लिए इस योजनापर गांधीजीके विचार माँगे थे।

नीयतपर संदेह किया जाता है। इसीलिए इन हितोंके पक्षमें योजनामें सुविचारित संरक्षण दिखाई देते हैं। मेरे खयालमें सबसे ज्यादा जरूरत इस बातकी है कि इन स्वार्थोंके सम्बन्धमें एक सच्चा, खरा और सीधा समझौता कर लिया जाये। व्यक्तिगत रूपसे तो मैं इस विचारका हूँ कि अकेले अंग्रेजोंकी या अंग्रेजों और भारतीयों दोनोंकी मिली-जुली चतुराईसे कोई चमत्कारिक कानून बनानेकी अपेक्षा मेरा उपर्युक्त सुझाव अधिक महत्त्वपूर्ण है। निश्चय ही मैं अत्यन्त विनम्र भावसे, परन्तु उतनी ही दृढ़तासे, यह कहना चाहता हूँ कि इन स्वार्थोंका खयाल भारतके हितोंके बाद ही किया जायेगा। इसलिए मेरा निवेदन है कि जहाँतक ये स्वार्थ भारतकी सामान्य प्रगतिमें असंगत हैं वहाँतक निश्चय ही ये जोखिममें हैं। इस प्रकार यदि मेरी चलती तो मैं फौजी खर्चमें कमी कर देता। मैं अपने उद्योगोंसे स्पर्धा करनेवाले विदेशी मालपर भारी कर लगाता और इस प्रकार देशी उद्योगोंकी रक्षा करता। मैं देशके प्रशासनमें अंग्रेज अधिकारियोंकी संख्या कमसे-कम कर देता — मैं केवल उन्हींको रहने देता जितनी आवश्यकता भारतीयोंको प्रशिक्षण या पथप्रदर्शन देनेके हेतु रहती। मेरे खयालसे उन्हें हमारा ध्यान खींचनेका केवल इतना ही अधिकार है कि उन्होंने हमारे देशको जीता है, इसके अतिरिक्त कुछ नहीं। हममें राष्ट्रीय अपनत्वकी भावना आते ही और अपनी खोई हुई चीजको फिर ले लेनेके अधिकारके प्रयोगकी शक्ति पैदा होते ही उनका यह अधिकार अवश्य ही समाप्त हो जायेगा। वे स्वयं विजेताके नाते अपना कोई दावा पेश नहीं करते। उनकी यह बात सराहनीय है। इंडियन सिविल सर्विस की कर्तव्यपरायणता और महान् संगठन-शक्तिकी जो प्रशंसा की गई है, उससे सभी बिना किसी कठिनाईके सहमत हो सकते हैं। जहाँतक आर्थिक पुरस्कारका सवाल है, इन पदोंपर अंग्रेजोंको बड़ी लम्बी-लम्बी तनख्वाहें मिलती रही हैं और इसके अतिरिक्त हम उनके प्रति अपनी कृतज्ञता स्वयं उनके सद्गुणोंका अनुकरण करके सर्वोत्तम रूपमें प्रकट कर सकते हैं।

संभवतः सुधारकी ऐसी किसी योजनासे भारतको लाभ नहीं पहुँच सकता जिसमें इस बातका ध्यान न रखा गया हो कि वर्तमान शासनका उच्चस्तरीय खर्च अनापशनाप बढ़ा हुआ है और वह शासन इतना महँगा है कि उससे देश बर्बाद हो रहा है। मेरी दृष्टिमें अगर भारतको कानून, व्यवस्था और सुशासनकी इतनी कीमत चुकानी पड़े कि देशवासी बेहद गरीब हो जायें तो मैं कहूँगा कि ऐसा शासन हमें अत्यधिक महँगा पड़ रहा है। सुधारोंके अन्तर्गत बनाई जानेवाली परिषदोंका मार्गदर्शक सूत्र यह न होना चाहिए कि इस विकासशील देशकी बढ़ती हुई आवश्यकताको देखते हुए कर बढ़ाये जायें, बल्कि यह होना चाहिए कि उसका आर्थिक बोझ हलका किया जाये; क्योंकि आर्थिक बोझसे देशके महत्त्वपूर्ण विकासकी बुनियाद कमजोर हो रही है। यदि इस बुनियादी तथ्यको स्वीकार कर लिया जाये तो हमारे हेतुके बारेमें तनिक भी सन्देहकी जरूरत नहीं रहती और मैं कोई भी जोखिम उठाये बिना कह सकता हूँ कि अन्य सभी मामलोंमें अंग्रेजोंके निहित स्वार्थ भारतीयोंके हाथोंमें पूर्ण रूपसे वैसे ही सुरक्षित रहेंगे जैसे वे स्वयं उनके हाथोंमें हैं। ऊपर कही हुई मेरी बातसे स्पष्ट है कि कांग्रेस-लीग योजनाके द्वारा जो यह माँग पेश की गई है कि सिविल सर्विसकी ऊँची नौकरियोंमें से आधी भारतीयोंको तुरन्त दी जानी चाहिए, हमें उसको मनवानेके लिए जोर देना चाहिए। मेरा यह कथन

सरकारी योजनाके सम्बन्धमें मेरा दृष्टिकोण बताता है। जहाँतक इस सवालका ताल्लुक है वहाँतक यह मेरी सुविचारित सम्मति है, परन्तु मैं सम्राट्की सरकारके पास जिन सुधारोंका सुझाव भेजना चाहता हूँ वे सभी इसमें नहीं आ जाते। मेरा खयाल है कि हम सब यथासमय इस योजनाका विवेचन संस्थाकी ओरसे करेंगे, इसलिए इस सम्बन्धमें मैं विस्तृत विचार कर भी सकूँ तो उसकी जरूरत नहीं जान पड़ती।

अन्तमें मैं अपनी यह बात बताए बिना खत्म नहीं कर सकता कि मेरी समझमें हम लोगोंके सामने अपनी सम्मति मनवानेका — फिर वह सम्मति अन्ततोगत्वा कैसी भी हो — सबसे अच्छा मार्ग कौन-सा है। इस ऐतिहासिक अभिलेखके अन्तिम भागमें कहा गया है कि हजारों सुधारवादी भारतीय इस योजनाको बड़ी उत्सुकतासे पढ़ रहे हैं — इस कथनसे मैं पूर्णतया सहमत हूँ। "एक अत्यन्त महत्त्वपूर्ण मामलेमें जिस उत्तरदायित्वकी भावनासे ये सिफारिशें की जाती हैं, उत्तरदायित्वकी वह भावना यह जानकर और भी बढ़ जाती है कि जब यह रिपोर्ट लिखी जा रही है तब भी फ्रांसकी रणभूमिमें उससे भी बहुत अधिक महत्त्वके प्रश्नोंका निर्णय करना अभीतक शेष है। भारतके भविष्यका निर्णय, दिल्ली या ह्वाइट हॉलमें नहीं, वहीं किया जायेगा।" ईश्वर इस स्वराज्यवादियोंको यह सीधा-सादा सत्य समझ सकनेकी बुद्धि दे! हमारी स्वतन्त्रताका प्रवेश-द्वार फ्रांसकी युद्धभूमिमें है। रक्त बहाये बिना आजतक किसीको कभी कोई उल्लेखनीय विजय नहीं मिली। यदि हम इतना करें कि स्वराज्यवादियोंकी एक अपराजेय सेनासे, जो मित्रराष्ट्रोंके उद्देश्यकी जीतके लिए लड़े, फ्रांसकी रणभूमिको पाट दें तो यह लड़ाई हमारे उद्देश्यकी भी लड़ाई होगी। तब हम सुदूर भविष्यमें या निकट भविष्यमें ही नहीं, बल्कि तत्काल भारतके स्वराज्य-प्राप्तिके अधिकारको सिद्ध करेंगे। इसलिए देशवासियोंको मेरी यही सलाह है, बिना किसी शर्तके, अंग्रेजोंके साथ मिलकर विजयके लिए मृत्युपर्यन्त लड़ो और साथ ही अगर आवश्यक हो तो राजनैतिक सुधारोंके लिए मृत्युपर्यन्त आन्दोलन करो। नौकरशाहीकी प्रबलतम विरोधी शक्तियोंपर विजय पानेका यही अच्छा, सीधा मार्ग है और निश्चित विजयके अन्तमें इसमें कोई दुर्भाव न रहेगा।

केवल अड़ंगा-नीतिको अपनाकर और विध्वंसक आंदोलनसे उद्देश्यको प्राप्त करना असम्भव नहीं है, यह माना जा सकता है, परन्तु यह बात शीघ्र ही समझमें आ जायेगी कि यदि उन तरीकोंको काममें लाया जाये, तो अंग्रेजों और भारतीयोंके बीच दुर्भाव पैदा हो जायेगा और वह बात भावी साझेदारोंको मिलानेमें किसी खास योजक तत्त्वका काम नहीं करेगी।

[अंग्रेजीसे]

लीडर, २४-७-१९१८

३४७. पत्र : जमनालाल बजाजको

नडियाद

आषाढ़ शुक्ल १० [जुलाई १८, १९१८]

सुज्ञ भाईश्री जमनालालजी,

मै मुबईसे कल रातको आया। भ्रमणमे रहनेसे पत्र आजतक नहिं लीख सका। आपका पत्र आनेसे मै निश्चित हो गया हू। भाई अबालालजीने रु० ५००० भेज दीये हे और भाई शकरलाल बेंकरने रु० ४००० दीये हे। जिन भाई मेरी भिक्षाका अनादर नही करते हे उनको मेरी जरुरयत सुनानेमें मुझको सकोच लगता है [पर] न सुनाना अशकय होता है। इसलीये मेरी तिव्र इच्छा है कि जब मेरी भिक्षा स्वीकारनेमें हरज हो उस वखत अस्वीकार करनेसे मेरी पर अनुग्रह होगा।

आपका दर्द तो अब तद्दन नष्ट हुआ होगा।

आपका

मोहनदास गांधी

गाधीजीके स्वाक्षरोमें मूल पत्र (जी० एन० २८४०) की फोटो-नकलसे।

३४८. पत्र : आनन्दशंकर ध्रुवको

[नडियाद]

जुलाई १८, १९१८

आदरणीय भाई,

आपका पत्र मिला। क्या आपको अपने विस्तृत अध्ययनमे कोई ऐसी दवा मिली ही नही, जिससे चाहे हमारे सगे-सम्बन्धी मरे, बीमार हो, हमारे हाथपर रेलगाडीकी खिडकी गिरे, और हमारे पैरमे ठोकर लगे लेकिन हम समस्त दु खोसे मुक्त रहे और केवल सुख ही अनुभव करे? क्या सचमुच अध्ययनसे प्राप्त कष्टमें कुछ कमी हो सकती है, या वैद्य ही उसमे कमी कर सकता है? इसका जवाब जब आप अच्छे होकर मिलेंगे, तभी दीजिएगा। और मजदूर तो धैर्यवान् है, इसलिए प्रतीक्षा करेंगे। और अगर प्रार्थना फलती हो, तो जरूर ऐसी प्रार्थना कीजिए कि आपका हाथ तुरन्त फिर काम करने लगे। इस बीच उनमें से अधिकतर तो पैंतीस नही, बल्कि पचास फीसदी वृद्धि लेने लगे हैं। अम्बालालभाई कह रहे थे कि वे आपके कानमे कुछ बात कहेंगे। उन्होंने मेरे कानमें तो कह दी है। परन्तु आप तो उनके मुँहसे ही सुनेंगे तो अच्छा होगा।

मोहनदासके वन्देमातरम्

[गुजरातीसे]

महादेवभाईनी डायरी, खण्ड ४

३४९. पत्र : जगजीवनदास मेहताको

[नडियाद]
जुलाई १८, १९१८

तुम्हारा पत्र मिला। तुम्हारे कोट और रुपयोकी चोरी सुनकर अफसोस हुआ। 'दुबले और दो असाढ़' वाली बात हो गई। अनाथाश्रममें कोई चोर है। दो-तीन बार ऐसा हो चुका है। किसीको चाहिए था कि तुम्हे चेता देता, परन्तु किसीको नही सूझा।

तुम्हारा बुखार बिलकुल चला गया होगा। भाई जीवराजको आज[1] ही पत्र लिख पाया हूँ। वह भी उसके साथ है। ठीक लगे, तो भेज देना।

तुम्हारे व्यापारकी स्थितिकी कुछ कल्पना मुझे इस बार हुई। तुम जिस रुपयेसे व्यापारमें लगे हुए हो, वह मुझे दुःखकर प्रतीत होता है। मेरी सलाह किसी भी कामकी हो, तो तुम आज ही अपना व्यापार समेट लो, रुपये जिससे लिये है, उसे लौटा दो और कोई नौकरी तलाश कर लो। तुम्हे नौकरी मिलनेमें तो अडचन पड ही नही सकती। तुम्हे केवल सादा जीवन बिताना हो, तो आश्रम खुला ही है। मेरा आग्रह नही है। संसार जिसे पुरुषार्थ मानता है, वह तुम्हें करना हो तो भले ही करो, परन्तु करो अपने ही बलपर। इस काममें तुम जितनी ढिलाई करोगे, तुम्हे उतना ज्यादा पश्चात्ताप होगा।

सब जगह सभी अपने ही हाथो दुःख भोगते हैं। किन्तु मैं जैसे-जैसे तुम्हारे कुटुम्ब-जालको समझता जा रहा हूँ, वैसे-ही-वैसे तुम सबके बारेमें इस बातको अधिक अनुभव करता हूँ। उससे तुम छूटो। साहस करनेपर सबके हिस्सेमें जो दुःख आता है, उतने से ही सन्तोष मानो। अधिक न उठाओ। सारे सम्बन्ध साफ रखो। बापा तो खुद ही दुःखके ढेर इकट्ठे करते है। वे जब धार्मिक जीवन बिताते है, तब उनमें इतनी लोलुपता क्यो है? ऐसी लोलुपताको तुम किस लिए प्रोत्साहन दो? [2] 'यदि हम जितनी परवाह अफवाहोंकी करते हैं, उतनी अपने अन्तरके विचारोकी करे, तो हम देवताओंसे भी अधिक सुखी रहें। इस घरमें विद्यमान सुखको न पहचानकर चारो तरफ ढूंढते है। तुम ऐसी ढूंढ-खोजमें क्यो पडते हो?

[गुजरातीसे]

महादेवभाईनी डायरी, खण्ड ४

१. गांधीजीके मित्र और चिकित्सक।

२. मूलमें यहाँ कुछ शब्द छूटे हुए हैं।

३५०. पत्र : श्रीमती जगजीवनदास मेहताको

नडियाद
जुलाई १८, १९१८

प्यारी बहन,

तुम्हारा दु:ख मुझसे नही देखा गया; फिर भी मैंने यह समझ लिया कि जो निर्दोष आनन्द मैंने तुममें देखा, वह न तो बापामें[1] देखा और न भाई जगजीवनदासमें। इससे मेरा हृदय छिद गया है और मैंने भाई जगजीवनदासके नाम पत्र[2] लिखा है। उसे तुम दोनों हृदयस्थ करो, खूब सोचो और बादमें साथ-साथ पुरुषार्थ करो। यह पत्र तुम दोनोके लिए है।

[तुम्हारा,]

[गुजरातीसे]
महादेवभाईनी डायरी, खण्ड ४

३५१. पत्र : कोतवालकी बहनको[3]

नडियाद
आषाढ सुदी १० [जुलाई १८, १९१८]

प्यारी बहन,

आपका कार्ड मिला। भाई गोगटेका पत्र नही मिला। जान पडता है वह मेरे भिन्न-भिन्न पतोपर भेजा जाकर कही खो गया है। मैंने जब आपको पत्र लिखा था तब मैं अपनी लडाई सम्बन्धी प्रवृत्तिमें नही पडा था। मैं नही जानता कि अब मैं आश्रममें कब आकर रहूँगा। मैं समझता हूँ कि यदि आप मेरी अनुपस्थितिमें आश्रममें आयें तो आपको कष्ट हो सकता है और मेरा विश्वास है कि आपकी उपस्थितिसे आश्रमवासियोको भी सकोच होगा। आश्रममें फिलहाल जगह भी नही है। जितनी मुझे उम्मीद थी उतनी तेजीसे मकान नही बन सके हैं। इसलिए मैं आपको आनेके लिए कहनेमें हिचकिचाता हूँ। लेकिन यदि आप आश्रमकी कठिनाइयोको सहन कर सकें, मानव-स्वभावको उसके विभिन्न रूपोमें स्वीकार करनेको तैयार हों और आश्रममें मेरी उपस्थितिको भी जरूरी न समझती हों तो आप आ सकती है। भाई कोतवाल वहाँ हो तो उनसे सलाह करके मुझे

१. जगजीवनदासके पिता।

२. देखिए पिछला शीर्षक।

३. साधन-सूत्रमें पानेवालाका नाम नहीं है परन्तु गोगटे और कोतवालके उल्लेखसे ऐसा लगता है कि यह कोतवालकी बहनको लिखा गया था। देखिए "पत्र : रामभाऊ गोगटेको", १७-५-१९१८।

लिखें। वे आपको मेरे इस प्रकार लिखनेका अभिप्राय समझा देंगे। मैं चाहता हूँ कि आप आश्रममें रहें। लेकिन मैं यह भी चाहता हूँ कि आप ऐसा वातावरण होनेपर ही आयें कि फिर आश्रमसे कभी न जायें।

मोहनदास गांधीके वन्देमातरम्

गुजराती पत्र (जी० एन० ३६१७)की फोटो-नकलसे।

३५२. भाषण: नडियादमें[1]

जुलाई १८, १९१८

गांधीजीने बताया कि किस प्रकार पिछले दो सौ वर्षोंमें बीमारियोंसे गुजरातके लोगोंमें सैनिक-भावना क्षीण पड़ गई है और इस बातपर जोर दिया कि भरतीका काम शुरू करनेसे पहले यह जरूरी है कि वे इस तथ्यको समझ लें। उन्होंने कहा कि मैं अपने मार्गकी कठिनाइयोंको पूरी तरह समझता हूँ; परन्तु मैंने उनको पार करनेका निश्चय कर लिया है, क्योंकि जिस दिनसे दिल्ली सम्मेलन हुआ है, उसी दिनसे मैंने यह मान लिया है कि इस समय प्रत्येक भारतीय देशभक्तका सबसे पहला कर्त्तव्य फौजी भरतीमें मदद करनेका है। मेरे पास भारतके अनेक भागोंसे इस आशयके पत्र आये हैं कि मैं वहाँ जाकर उन लोगोंकी फौजी भरती अभियानमें सहायता दूँ। परन्तु जबतक मेरे गुजराती भाई ही आनाकानी करते हों तबतक मैं निःसंकोच भावसे वहाँ नहीं जा सकता।

[अंग्रेजीसे]

बॉम्बे क्रॉनिकल, २२-७-१९१८

३५३. सैनिक-भरतीकी अपील

नडियाद

जुलाई २२, १९१८

पत्रिका — २

पहली पत्रिका लिखे हुए आज एक महीना हो गया। इस बीच मुझे और मेरे साथ काम करनेवाले भाइयोंको बहुत-सा अनुभव हुआ है। नडियाद, करमसद, रास, कठलाल और जम्बूसर वगैरा जगहोंपर सभाएँ की गईं। सैकड़ों स्त्री-पुरुषोंसे बातचीत हुई। जो अनुभव हुआ, उसे मैं आपके सामने रखनेकी इजाजत चाहता हूँ। मुश्किलसे सौ आदमी भरती हुए होंगे। एक मासके समय और जो प्रवास किया है, उसका जब खयाल

1. जिस सभामें गांधीजीने अपने विचार व्यक्त किये थे उस सभाकी अध्यक्षता उत्तरी क्षेत्रके कमिश्नर एफ० जी० प्रैटने की थी। उसमें जिले-भरके अधिकारी और प्रमुख गैर-सरकारी लोग भी शामिल हुए थे।

करता हूँ, तब यह संख्या मुझे बहुत कम लगती है। लोगोकी स्थितिका खयाल करता हूँ तो मुझे महसूस होता है कि इतने आदमी तैयार हो गये, यह भी आश्चर्यकी बात है। जिस वर्गने कभी लडाईमे भाग नही लिया और जिसने किसीपर लाठी तक नही उठाई, उस वर्गके लोग फौजमें भरती हुए है। तब जो वर्ग लडनेके योग्य है, उसे तैयार किया जा सके, तो अपार सेना खडी की जा सकती है। समझदार वर्गकी कमियाँ इस अवसर-पर साफ दिखाई देती हैं। मै 'शिक्षित' के बजाय 'समझदार' शब्दका प्रयोग कर रहा हूँ। ऐसे पुरुष और स्त्रियाँ अपने कर्त्तव्यका पालन करे, तो जो वर्ग कुदरती तौरपर लड़ाईमें जानेके लायक हो, उसपर असर डाल सकते है। मेरे अनुभवसे समझदार वर्गकी बहुत बडी कमजोरी साबित होती है। वे राष्ट्रीय काममे पूरी दिलचस्पी नही लेते, इसलिए भरतीका काम कठिन हो जाता है। अतएव जिन समझदार लोगोके हाथमें यह पत्रिका आये, वे अगर इस काममें विश्वास रखते हो, तो तैयार होकर इस महान् कार्यके लिए अपढ और नासमझ लोगोको प्रेरित करे।

किन्तु समझदार लोगोमें मैंने ऐसे भी देखे हैं, जिन्हे इस कार्यमे विश्वास नही है। यह पत्रिका उन्हीके लिए लिखी गई है। उनसे मेरी प्रार्थना है कि वे पत्रिकाको ध्यानपूर्वक पढें। समझदार आदमीका काम है कि वह प्रस्तुत परिस्थितिका खयाल करके अपने कर्त्तव्यकी रूपरेखा तैयार करे। अगर हम अंग्रेजोसे अपना सम्बन्ध तोडना चाहते हो, तब तो हमें अवश्य ही मदद नही देनी चाहिए। यह कहनेवाले लोग थोड़े ही पाये गये हैं कि इस सम्बन्धको हम तोडना चाहते हैं। यह तो सभी समझ सकते है कि आजकी स्थितिमें सम्बन्ध तोडनेके हिमायती भी सम्बन्ध नही तोड़ सकते। कुछ भी हो, इस समय हमारा उद्धार अंग्रेजोकी सहायता करनेमें ही है। उनकी मदद करना हमारी अपनी मदद करनेके बराबर है। जहाँ हमारा और उनका स्वार्थ एक ही दिशामे जाता है, वहाँ एक-दूसरेके दोषोका चिन्तन करके परस्पर मदद न देना बड़ी नादानीका काम होगा। हम जिस गाँवमें रहते हो, उसपर बाहरी शत्रुका धावा हो और उससे सारे गाँवको नुकसान होनेकी सम्भावना हो, तो हम आपसी शत्रुताको भूल जायेंगे और आये हुए सकटको दूर करनेके लिए गाँवमें रहनेवाले शत्रुकी मदद करेगे और डाकुओको निकाल बाहर करेंगे। इस समय इस युद्धमें यही हो रहा है। इस समय समान विपत्तिका सामना करना हमारे लिए जरूरी ही नही बल्कि हमारा फर्ज भी है। दूसरी शका यह उठाई गई है कि हम सर्वोत्तम लोगोको युद्धमे भेजकर मरवा डालें, यह कहाँका धर्म है? इस तरह तो सारे स्वराज्यवादी मारे जायेंगे, फिर हम स्वराज्य कैसे लेंगे? यह शका अगर बुद्धिमान समझे जानेवाले लोगोनें न की होती, तो मैं इसे हास्यास्पद कहता। यह तो स्पष्ट है कि यदि भारतमें पाँच ही लाख स्वराज्यवादी हो, तो हम स्वराज्यके लायक नही हैं। परन्तु शंका करनेवाले लोगोका कहना यह है कि स्वराज्यवादी कितने ही हो, स्वराज्यका आन्दोलन करनेवाले समझदार लोग तो पाँच लाखसे भी कम है। यह सच है। सिर्फ एक बात भुला दी जाती है। पाँच लाख भरनेवाले लोगोको तैयार करनेमें पचास लाख लोगोके कानोमें युद्ध और स्वराज्य वगैराकी बातें पहुँचेगी। हम पाँच लाख स्वतन्त्र लोगोंको तैयार करना चाहते हैं। वे समझकर अपनी इच्छासे जायेंगे। उन्होने अपने मित्रों और सगे-सम्बन्धियो वगैरासे सलाह ली होगी, यानी जानेवाले पाँच लाख

आदमी अपने पीछे अपने जैसे लाखोंको छोड जायेंगे। सच बात तो यह है कि हम लडाई करनेकी शक्ति ही खो बैठे हैं और हमारी वीरताका नाश हो गया है। हममें अपनी स्त्रियोंकी रक्षा करने तक की शक्ति नहीं है। धर्मके नामपर हम कर्म (कर्त्तव्य) को भूल गये हैं। दिन-दहाडे देहातमें डाका पडे, तो उसके विरुद्ध भी हम खडे नहीं हो सकते। एक हजारकी आबादीमें आठ आदमी आकर लूटपाट करके चले जायें, ऐसी स्थिति सारी दुनियामें भारतमें ही सम्भव है। शरीरसे गांववाले इतने दुर्बल कदापि नहीं है कि वे आठ आदमियोंको भी न खदेड सकें। परन्तु उन्हें मौतका बडा डर है। ऐसी लडाईमें पडकर अपनी जान जोखिममें कौन डाले? डाकू लूटते हैं तो लूट लें। यह तो सरकारका काम है, वही निबटेगी, यह सोचकर वे घरमें घुसे रहते हैं। पडोसीका घर जले, उसकी इज्जत लुटे और माल जाये, तो भी इन तत्त्वज्ञानियोंको परवाह नहीं। जबतक इस तत्त्वज्ञान (अन्धकार) का नाश नहीं हो जाता, तबतक भारतमें सच्ची शान्ति नहीं होगी। स्वाभिमानी व्यक्तिके लिए यह स्थिति असह्य होनी चाहिए कि सरकारी या दूसरे सिपाही आयें, तभी गांव बचे। ऐसी स्थितिसे बचनेका तात्कालिक उपाय हमारे हाथमें मौजूद है। सेनामें भरती होनेसे हमें हथियार चलाना आयेगा, हममें राष्ट्रीय भावना पैदा होगी और हम गांवोंकी रक्षा करनेके योग्य बनेंगे।

हम चले जायेंगे, तो हमारे बाल-बच्चोंका क्या होगा? यह सवाल तो सभी पूछ सकते हैं। लडाईमें जानेवाले लोगोंको हर महीने भोजन-वस्त्रके सिवा वेतन मिलता है, उन्हें कमसे-कम १८ रुपये मिलते हैं। योग्यतानुसार उनका दर्जा भी बढता है और वेतन भी बढता है। अगर किसीकी मृत्यु हो जाये, तो उसके बाल-बच्चोंका भरण-पोषण सरकार करती है। लडाईसे लौटनेवाले लोगोंको इनाम-इकराम दिया जाता है। मुझे विश्वास है कि अन्तमें जो आर्थिक लाभ सिपाहीगीरीमें है, वह दूसरे धन्धोंमें हरगिज नहीं मिलता।

परन्तु "ये लाभ तो अंग्रेजोंको ही मिल सकते हैं, हमें कहां मिलते हैं?"—मैंने लोगोंको ऐसा भी कहते सुना है। उनसे मुझे कहना है कि हमारे उद्योगसे पांच लाख समझदार आदमियोंकी सेना बन जाये और उन्हें अंग्रेजोंके बराबर ही हक न मिलें, यह हो नहीं सकता। ऐसा हो, तो इससे उन पांच लाख लोगों और नेताओंकी ही कमी साबित होगी। पांच लाख स्वयंसेवकोंकी सेना खडी हो जाये, तो उसे अंग्रेज सेनाकी बराबरी मिलेगी और उतने ही हक भी मिलेंगे। पांच लाखकी इस तरहकी सेना बन जानेमें ही हमारे अधिकार समाविष्ट हैं।

कुछ कहते हैं कि आप बिना शर्तके लडाईमें जानेको कहते हैं। दूसरे सलाहकार कहते हैं कि बराबरके अधिकारोंका वचन लेकर जाओ। तीसरे कहते हैं, हम जानेके लिए बँधे हुए ही नहीं हैं। हमें खुद अपने सिर मुसीबत न लेनी चाहिए। हम इन तीन सलाहोंसे चक्करमें पड जाते हैं। हमारे खयालसे तो समझदारी इसीमें मालूम होती है कि हम जिस हालतमें हैं, उसीमें रहें। मेरा नम्र उत्तर यह है कि ऐसी बातें तो कायरोंकी होती हैं। ज्यों-ज्यों समय बीतेगा त्यों-त्यों दल बनेंगे, अलग-अलग मत बनेंगे, उन सबपर आपको विचार करना पडेगा। जिस स्वराज्यको लेनेकी

प्रतिज्ञा आप और हम सबने ली है, उसी प्रतिज्ञाके लिए लड़ाईमें भाग न लेनेकी बात करना मैं तो स्वराज्यका द्रोह मानता हूँ।

सेनामें भरती होनेकी शर्त तय करानेके फेरमें हमारा भरती होने और स्वराज्यकी योजनाके भी स्थगित हो जानेका खतरा है। सेनामें भरती होनेमे ही स्वराज्यकी और हमारे देशकी सुरक्षा है। यह तो सभी दल मंजूर करते है कि सेनामे भरती होनेसे स्वराज्यको धक्का हरगिज नही पहुँचेगा। इसलिए मैं यह मानता हूँ कि तुलनात्मक दृष्टिसे भी तीनों बातोमें से फौजमें शरीक होना ही अच्छा माना जायेगा। मुझे उम्मीद है कि खेड़ा जिलेके भाई अपना फर्ज अदा करेंगे और अपना नाम स्वयंसेवकोंमें लिखा देंगे या सीधे आश्रममें भेज देंगे।

मुझे उम्मीद है कि बहनें भी इस काममें सहायता देंगी। मैं जानता हूँ कि कुछ बहनें अपने पतियों और पुत्रोको जानेसे रोकती हैं। वे गहराईमें जाकर विचार करेंगी, तो समझ जायेंगी कि उनके पतियों या पुत्रोके वीर पुरुष बननेमें उनका हित है, देशका हित तो है ही।

आपका चिरसेवक,
मोहनदास करमचन्द गांधी

[गुजरातीसे]
महादेवभाईनी डायरी, खण्ड ४

३५४. पत्र : एस्थर फैरिंगको

बम्बई
जुलाई २२, १९१८

प्यारी बिटिया,

मैं इस संकल्प-विकल्पमें पड़ा हूँ कि तुम्हें पत्र लिखूँ या न लिखूँ। तुम्हारे पत्रको पढ़कर मुझे दु:ख हुआ है। आज मैं आश्रममें हूँ; मैंने तुम्हारी भेजी हुई दूसरी बंडी अभी पहनी है। इसका पता तो मुझे आज ही चला है। यह मेरे नापकी नही है। आस्तीनें बहुत छोटी है, परन्तु इससे कोई हानि नही। मैं इसे पहन रहा हूँ और जबतक चलेगी, पहनता रहूँगा।

मेरे मनमे इस बारेमें जरा भी शक नही है कि तुम अपना करार चुपचाप पूरा करोगी चाहे तुम्हारे आश्रममें आने या मुझे पत्र लिखनेपर रोक भी लगा दी गई हो। इस प्रकारके बलात् नियन्त्रण और प्रतिबन्धसे तुममें अधिक मनोबल और निश्चय-बल आयेगा।

अगर तुम्हें मुझे पत्र लिखने और मेरे पत्र लेनेकी अनुमति मिल जाये तो यह भी बड़ी बात होगी। जो भी अन्तिम निर्णय हो मुझे अवश्य लिखना।

मैंने सत्याग्रह फिलहाल स्थगित कर दिया है। समाचारपत्रोंमें प्रकाशित मेरा पत्र पढ़ लेना ?

सस्नेह,

तुम्हारा,
बापू

[अंग्रेजीसे]
माई डियर चाइल्ड

३५५. श्रीमती पोलकको लिखे पत्रका अंश

[बम्बई]
जुलाई २२, १९१८

प्रिय श्रीमती पोलक,

. . . जीवन-सम्बन्धी मेरे अपने दृष्टिकोणमें क्रान्तिकारी परिवर्तन हो रहे हैं। मुझे महसूस होता है कि कुछ पुराने जाले कट रहे हैं। किन्तु इस विषयमें जब मुझे कुछ अधिक समय मिलेगा तब लिखूंगा।

[अंग्रेजीसे]

महादेव देसाईकी हस्तलिखित डायरीसे।
सौजन्य : नारायण देसाई

३५६. पत्र : गोविन्द मालवीयको

[बम्बई]
जुलाई २२, १९१८

तुम्हारा पत्र आनेसे मैं बहुत खुश हुआ। हम जिनको मुरब्बी[1] समझते हैं, उनके पास हम अपना सब आवेग खोल सकते हैं, खोलना आवश्यक है। मुझको पत्र लिखकर तुमने उचित कार्य किया है। भरतीमें क्या अत्याचार होता है, वह मैं नहीं जानता। यदि ज्यादा होता होगा, तो भरतीमें मेरे शामिल होनेकी ज्यादा आवश्यकता है।

मॉण्टेग्यु चैम्सफोर्ड योजना मेरी रायसे बड़ी-अच्छी है। उसकी त्रुटियाँ हम आन्दोलन करके दूर करवा सकते हैं, परन्तु योजना कैसी भी हो, मेरा निश्चित मन्तव्य है कि हमें युद्धमें दाखिल होना चाहिए। हम अंग्रेज प्रजाका उपकार करनेके लिए दाखिल नहीं होते हैं। लेकिन देशकी सेवा करनेके लिए देशका स्वार्थ देखकर हम भरती होना चाहते हैं। मैं भारतवर्षकी दुर्दशाका क्या बयान करूँ ? मैं स्पष्ट देख सकता हूँ कि भारतवर्षको

१. बुजुर्ग

सच्चे स्वराज्यकी प्राप्ति ही नही हो सकती। मै मानता हूँ कि अब हमारे भरती होनेसे हम दो कार्य कर सकते है, हममें वीरता पैदा होगी, हम थोड़ी-बहुत शस्त्र-क्रिया सीख लेगे और जिनके साथ हम हिस्सेदार होना चाहते है, उनको मदद देकर हमारी योग्यता ज्यादा सिद्ध करेगे। उनके अत्याचारोका विरोध करना और उनके कष्टमे हिस्सा लेना, ये दोनो कार्य करना हमारे लिए योग्य है। मै चाहता हूँ कि तुम इस प्रश्नपर खूब शान्तिसे विचार कर लो। मेरी सलाह है, यह पत्र देवदासको भेज देना और उसके साथ भी इस विषयमे वार्तालाप करना।

मोहनदास गाधी

महादेवभाईनी डायरी, खण्ड ४

३५७. पत्र : पुंजाभाई शाहको

[बम्बई]
जुलाई २२, १९१८

सुज्ञ पुंजाभाई,

जिसे हमने धर्म समझा है, वह धर्म नही है। अहिंसाके नामपर हम भारी हिंसा करते है। खून बहानेसे डरते है; किन्तु दिन-रात खून चूसते है। बनिये अहिंसा-धर्मका पालन कर ही नही सकते। कुछ श्रावकोके शुष्क त्यागमें या चीटियोको खिलानेमें धर्म नही है। शरीरका मोह त्यागे बिना मोक्ष नही मिल सकता और आत्माकी पहचान नही हो सकती। आपको इस बातकी प्रतीति हो जाये और आप सच्चे मोक्ष-मार्गका दर्शन करना चाहे, तो मेरी सलाह यह है कि आश्रमको अपनाइए। जो मकान बनाने है, उन्हे आप पूरे कराइए और मगनलालको फिलहाल मुक्त कर दीजिए। आपको नौकर चाहिए। परसरामको रख लीजिए। मगनलालको मुक्त करनेकी जरूरत मालूम होती है। आप गहरा विचार कीजिए। आपको यह ज्ञान जब दीयेकी तरह ही सूझे, तभी आप इसमें पडिए। सूझेगा तो आश्रममे बहुत शान्ति अनुभव करेगे। नही सूझेगा तो थोडे ही समयमें ऊब जायेगे। आप, फूलचन्द और मगनलाल मिलकर विचार करे। पहले तो आप अकेले ही विचार कीजिए।

मोहनदासके भगवत्-स्मरण

[गुजरातीसे]
महादेवभाईनी डायरी, खण्ड ४

सच्चे स्वराज्यकी प्राप्ति ही नहीं हो सकती। मैं मानता हूँ कि अब हमारे भरती होनेसे हम दो कार्य कर सकते हैं; हममें वीरता पैदा होगी, हम थोड़ी-बहुत शस्त्र-क्रिया सीख लेंगे और जिनके साथ हम हिस्सेदार होना चाहते हैं, उनको मदद देकर हमारी योग्यता ज्यादा सिद्ध करेंगे। उनके अत्याचारोंका विरोध करना और उनके कष्टमें हिस्सा लेना, ये दोनों कार्य करना हमारे लिए योग्य है। मैं चाहता हूँ कि तुम इस प्रश्नपर खूब शान्तिसे विचार कर लो। मेरी सलाह है, यह पत्र देवदासको भेज देना और उसके साथ भी इस विषयमें वार्तालाप करना।

मोहनदास गांधी

महादेवभाईनी डायरी, खण्ड ४

३५७. पत्र : पुंजाभाई शाहको

[बम्बई]
जुलाई २२, १९१८

सुज्ञ पुंजाभाई,

जिसे हमने धर्म समझा है, वह धर्म नहीं है। अहिंसाके नामपर हम भारी हिंसा करते हैं। खून बहानेसे डरते हैं; किन्तु दिन-रात खून चूसते हैं। बनिये अहिंसा-धर्मका पालन कर ही नहीं सकते। कुछ श्रावकोंके शुष्क त्यागमें या चींटियोंको खिलानेमें धर्म नहीं है। शरीरका मोह त्यागे बिना मोक्ष नहीं मिल सकता और आत्माकी पहचान नहीं हो सकती। आपको इस बातकी प्रतीति हो जाये और आप सच्चे मोक्ष-मार्गका दर्शन करना चाहें, तो मेरी सलाह यह है कि आश्रमको अपनाइए। जो मकान बनाने हैं, उन्हें आप पूरे कराइए और मगनलालको फिलहाल मुक्त कर दीजिए। आपको नौकर चाहिए। परसरामको रख लीजिए। मगनलालको मुक्त करनेकी जरूरत मालूम होती है। आप गहरा विचार कीजिए। आपको यह ज्ञान जब दीयेकी तरह ही सूझे, तभी आप इसमें पड़िए। सूझेगा तो आश्रममें बहुत शान्ति अनुभव करेंगे। नहीं सूझेगा तो थोड़े ही समयमें ऊब जायेंगे। आप, फूलचन्द और मगनलाल मिलकर विचार करें। पहले तो आप अकेले ही विचार कीजिए।

मोहनदासके भगवत्-स्मरण

[गुजरातीसे]
महादेवभाईनी डायरी, खण्ड ४

आप एक सच्चे भारतीय सज्जनका शुद्ध उदाहरण उपस्थित करे। ऐसा करनेकी आपमें शक्ति है।

[अंग्रेजीसे]

महादेव देसाईकी हस्तलिखित डायरीसे।

सौजन्य : नारायण देसाई

३६०. पत्र : विनोबा भावेको

[नवागाँव]
जुलाई २४, १९१८

तुम्हारा विचारणीय पत्र मिला।

आदर्श तो तुमने लिखा है, वही है। यह भी सही है कि उस आदर्शको सिद्ध करनेके लिए शिक्षक गुजराती ही चाहिए। परन्तु उसके अभावमें महाराष्ट्रके शिक्षकका उपयोग अनुचित नही माना जा सकता। चरित्रहीन गुजराती शिक्षककी बनिस्बत चरित्रवान् मराठी शिक्षक भी हो, तो उसे मैं अच्छा समझता हूँ। अभी तो मेरे तरीकेके अनुसार पढानेवाला गुजराती मिलना मुश्किल है। तुम न हो, तो संस्कृत शिक्षण बन्द हो जाये या फिरसे काकाको[1] पढाना पडे, ऐसी दयनीय स्थिति है। इसलिए अभी तो आदर्शको ध्यानमें रखकर तुम्हे ही संस्कृत पढानी है।

महाराष्ट्रमे प्रवेश करनेकी मेरी तीव्र इच्छा है। परन्तु अभी समय नही है। मेरी योग्यता नही। इतने मनुष्य हमारे पास नही हैं। तुम, काका और मामा मेरे सम्पर्कमें आये हैं। इसमें परमात्माकी कोई इच्छा न हो! भाई देशपांडेके[2] साथ मेरा सम्बन्ध, भारत सेवक समाज (सर्वेंट्स ऑफ इंडिया सोसाइटी) पर मेरी श्रद्धा, महाराष्ट्रके प्रति मेरा मोह, चम्पारनमें महाराष्ट्रियोसे प्राप्त भारी सहायता, महाराष्ट्रके संगीत-शास्त्रीका आगमन, भाई कोतवालकी बहनका कुछ समयमे होनेवाला प्रवेश, भाई नारायणरावसे जान-पहचान, यह सब सूचित करता है कि महाराष्ट्रमे मुझे कुछ-न-कुछ विशेष करना है। परन्तु —

'नीपजे नरथी तो कोई नव रहे दुःखी,
शत्रु मारीनें सहु मित्र राखे।'[3]

इसलिए इस महत्त्वाकांक्षाके बाद भी क्या होगा यह कौन जानता है?

१. काका कालेलकर।

२. केशवराव देशपांडे (१९८८-१९३९); बडौदाके सुप्रसिद्ध सार्वजनिक कार्यकर्ता व बैरिस्टर; गंगानाथ भारती विद्यालयके संस्थापक।

३. मनुष्यका बस चले तो कोई दुःखी न रहे। शत्रुको मारकर सब मित्रको ही रखें।

तुम्हारी इच्छा मैं ध्यानमें रखूँगा। मैं भी तुम्हें अपने सहवासमें रखना चाहता हूँ, परन्तु अभी यह सम्भव नहीं दिखता। तुम आश्रमवासी ही हो; इसमें तो सन्देहकी कोई बात ही हो नहीं सकती।

बापू

[गुजरातीसे]
महादेवभाईनी डायरी, खण्ड ४

३६१. पत्र : देवदास गांधीको

[नवागांव]
जुलाई २४, १९१८

चि० देवदास,

आजका मेरा पत्र बहुत दुःखद समाचार देनेवाला साबित होगा। भाई सोराबजी जोहानिसबर्गमें थोड़ी किन्तु सख्त बीमारी भोगकर चल बसे। मृत्युके भयसे तो हम थोड़े-बहुत अशमें छूट गये हैं। फिर भी ऐसी मौत खटके बिना नहीं रह सकती। सबको ऐसी आशा थी कि भाई सोराबजी दक्षिण आफ्रिकामें ढाल बनकर रहेंगे और जबरदस्त काम करेंगे। वह आशा आज नष्ट हो गई है। दक्षिण आफ्रिकामें उनकी मृत्युसे शोक छा गया है। यह वहाँके तारोंसे समझमें आता है। ईश्वरकी लीला न्यारी है। कर्मका नाश नहीं होता, सारी प्रवृत्ति अच्छे-बुरे फल देती ही है और जिसे हम आकस्मिक घटना मानते हैं, वह भी दरअसल आकस्मिक नहीं होती। वह हमको ही आकस्मिक मालूम होती है। कोई अपनी मौतसे पहले नहीं मरता। और मौत किसी वस्तुका केवल अन्तिम रूपान्तर है; वह सर्वथा विनाश नहीं है। आत्मा तो अमर है। रूपान्तर भी शरीरका होता है। स्थिति बदलती है, आत्मा नहीं बदलती। यह सब ज्ञान शान्ति देनेके लिए काफी है। यह ज्ञान हम पचा सके हैं या नहीं, इसकी परीक्षा ऐसे मौकोंपर होती है। सोराबजी तो अमर हो गये। उन्होंने सभी काम ऐसे किये हैं, जिनसे उनके देशकी कीर्ति उज्ज्वल हो। अगर हम अपना फर्ज अदा करते रहें, तो उनके चले जानेसे कोई हानि नहीं होगी। आत्मीय जनोंकी मृत्युसे हमें अपने कर्त्तव्यका अधिक भान हो, तो प्रियजनोंका वियोग न खटके।

बापू

[गुजरातीसे]
महादेवभाईनी डायरी, खण्ड ४

३६२. पत्र : बलवन्तराय ठाकोरको

[नवागाँव]
जुलाई २४, १९१८

आपका पत्र मिला। मुझे लगता है, जब हमारी पार्लियामेंट बनेगी, तब हमें फौजदारी कानूनमें एक धारा जुड़वानेका आन्दोलन करना पड़ेगा। यदि दो व्यक्ति भारतकी एक भाषा जानते हों और इसपर भी उनमें से कोई एक दूसरेको अंग्रेजीमें पत्र लिखे या एक दूसरेसे अंग्रेजीमें बोले, तो उसे कमसे-कम छ. महीनेकी सख्त सजा दी जायेगी। ऐसी दफाके बारेमें अपनी राय बताइए और स्वराज्य न मिले, तबतक जो अपराध करे, उसके लिए क्या उपाय करना चाहिए, यह भी बताइए।

सैनिक खर्च किस तरह घट सकता है, इसके बारेमें आपकी राय समझ ली है। किन्तु अभी तो दिल्ली दूर है। जब हम स्वराज्य ले लेंगे, तब जो परिस्थिति होगी, उसपर यह बहुत-कुछ निर्भर रहेगा।

क्या स्वराज्यकी तैयारी धीमे-धीमे नहीं हो सकती? मेरे खयालसे तो यह स्थिति धीरे-धीरे ही प्राप्त की जा सकती है। फिर, विवाहसे पहले सगाई तो होती ही है। अंग्रेजीमें तो प्रणय-काल बहुत लम्बा होता है। विवाहकी उपमा तो दोनों विचारोंपर लागू नहीं होती है। क्रान्ति तात्कालिक परिवर्तन है। ऐसे परिवर्तन शान्त ढंगसे होते ही नहीं। इसलिए 'शान्तिमय क्रान्ति' तो परस्पर विरोधी शब्द-प्रयोग है। भारत शान्ति और तात्कालिक परिवर्तन दोनों चाहता है। यह कैसे सम्भव हो?

यह ठीक है, आपके पत्रोंका सार्वजनिक उपयोग नहीं किया जायेगा। हम यह चाहते हैं कि थोड़े अर्से बाद 'निजी' शब्द लिखनेकी जरूरत न पड़े।

मैं आज गाँवमें कुछ जाँच करने आया हूँ। थोड़ा समय था, इसलिए विनोद कर लिया। अभी थोड़ा बाकी है। खेड़ाकी लड़ाईके औचित्यके बारेमें अभीतक आपको शक है, तो उनकी तरफसे मैं आपको यहाँ आकर प्रत्यक्ष देखकर अपनी शंका दूर कर लेनेका निमन्त्रण देता हूँ। अभीतक जिनकी शंका दूर न हुई हो, ऐसे तो मेरी जानकारीमें केवल आप ही हैं।

मोहनदासके वन्देमातरम्

[गुजरातीसे]
महादेवभाईनी डायरी, खण्ड ४

३६३. पत्र : मगनलाल गांधीको

नवागाँव

गुरुवार, [जुलाई २५, १९१८]

चि० मगनलाल,

तुम्हे रावजीभाईने डरा दिया। रावजीभाईको मैंने डराया। उन्होने मेरे शब्दोका आवश्यकतासे अधिक अर्थ किया है। मेरे आदर्श नही बदले। भारतमें मुझे बहुत कडवे अनुभव हुए हैं फिर भी मेरे विश्वास ज्योके-त्यो हैं। हमें पश्चिमसे कम ही सीखना है। मैंने यहाँ जो बुराइयाँ देखी हैं, उनसे मेरे मूल विचारोमें कोई फर्क नही पडा। इस लडाईसे भी फर्क नही पडा। जो था, वह साफ हुआ है। मुझे ऐसा नही जान पडा कि हमें पाश्चात्य सभ्यता अपनानी है। ऐसा भी नही लगा कि हमें शराब, मासादि ग्रहण करने पड़ेंगे। यह जरूर लगा है कि स्वामिनारायण[1] और वल्लभाचार्यने हमारे पौरुषका अपहरण किया है। उन्होंने मनुष्योकी रक्षण-शक्ति छीन ली है। लोगोंने शराब, बीडी वगैराका त्याग किया, यह तो ठीक ही हुआ। किन्तु यह कोई साध्य वस्तु नही है, यह तो साधन है। बीडी पीनेवाला चरित्रवान् हो, तो वह इस लायक है कि उसका सत्सग किया जाये, और जन्मसे बीडीका त्यागी व्यभिचारी हो, तो किसी कामका नही है। स्वामिनारायण और वल्लभाचार्यका सिखाया हुआ प्रेम भावुकता है। उससे शुद्ध प्रेम पैदा नही हो सकता। अहिंसाका शुद्ध लक्षण तो उन्होने सोचा ही नही। अहिंसा चित्तवृत्तियोका निरोध है। उसका मुख्य प्रयोग मनुष्योके आपसी सम्बन्धोमें है। इसकी तो गन्धतक उनके साहित्यमें नही पाई जाती। उनका जन्म हमारे इस विषम कालमें हुआ और उस वातावरणसे वे मुक्त नही हो सके। उनका असर गुजरातपर बहुत अधिक हुआ। तुकाराम और रामदासका वैसा असर नही हुआ। तुकारामके अभगो और रामदासके श्लोकोमें बहुत पुरुषार्थ है। वे भी वैष्णव थे। वैष्णव-सम्प्रदाय और वल्लभाचार्य तथा स्वामिनारायणकी शिक्षाको मिला न देना। वैष्णव-सम्प्रदाय बहुत पुराना है। मैं यह बात नही देख सका था कि हिंसामें अहिंसा है। वह अब देखने लगा हूँ। यह बडा परिवर्तन हुआ है। शराबमें मस्त हुए मनुष्यको अत्याचार करनेसे रोकनेका फर्ज नही समझा था, महाव्ययासे पीडित कुत्तेके प्राण लेनेकी जरूरत नही समझी थी, पागल कुत्तेको मारनेकी आवश्यकता नही समझी थी। इन सभी हिंसाओमें अहिंसा है। हिंसा शरीरका गुण है। विषयवृत्तिका त्याग ब्रह्मचर्य है, परन्तु हम अपने लडकोका पालन इस तरह नही करते कि वे नपुसक हो जायें। वे अत्यन्त वीर्यवान् होनेपर भी अपनी विषयेन्द्रियको रोके, तभी वह ब्रह्मचर्य है। इसी तरह हमारे बच्चे शरीरसे बलवान् होने ही चाहिए। वे हिंसा-वृत्तिका सर्वथा त्याग न कर सके, तो उन्हे हिंसा करने देकर, लडनेकी शक्तिका

१. स्वामी सहजानन्द, १७८१-१८३३।

उपयोग करने देकर, अहिंसक बनाया जा सकता है। अहिंसाका उपदेश क्षत्रियोने क्षत्रियोको दिया है।

पूर्व और पश्चिमके बीच जो फर्क मैंने बताया है[1], वही है और वह जबरदस्त है। पाश्चात्य सस्कृति निरकुश है, हमारी सयम-प्रधान है। हम तो तभी हिंसा करेंगे जब वह अनिवार्य होगी और उसका उद्देश्य लोक-सग्रह होगा। पाश्चात्य देश निरकुश होकर हिंसा करेंगे। मैं पार्लियामेंट वगैरामें जो भाग लेता हूँ, वह नई प्रवृत्ति नही है। वह पुरानी प्रवृत्ति है और उन सस्थाओको नियममे रखने तक ही सीमित है। मॉण्टेग्यु साहबकी योजनापर मेरा लेख पढोगे, तो मालूम हो जायेगा। मुझे उसमें रस आ ही नही सकता। परन्तु उसमे भाग लेकर मैं अपने आदर्शोको फैला सकता हूँ। जब मेरे लिए अपने आदर्शोका भग करके उसमे रहनेका समय आया, तब मैंने उससे अलग रहनेका विचार कर लिया।

मेरे खयालसे मैंने जितना लिखा है, उससे तुम्हे उत्तर मिल जायेगा। मैं एक दिनके लिए आऊँ, तब बहुत स्पष्टीकरण नही हो सकता। इसलिए तुम्हे लिख भेजता हूँ। इससे तुम विचार कर सकोगे। और ज्यादा शका हो, तो पूछ सकते हो।

मैं अभी तो नवागाँवमे ही हूँ। आज यहाँसे रवाना होनेका विचार था, परन्तु शायद रवाना नही हो सकता।

बापूके आशीर्वाद

[गुजरातीसे]
महादेवभाईनी डायरी, खण्ड ४

३६४. पत्र : रावजीभाई पटेलको

[नवागाँव]
जुलाई २५, १९१८

भाईश्री रावजीभाई,

तुम्हारा पत्र मिला, यह ठीक हुआ। तुम्हे जो-कुछ पूछना हो, पूछना। फिर भी लिखित उत्तर दूं तो उससे तुम्हे विचार करनेका अवसर मिलेगा। मुझे पूरा विश्वास है कि तुम मणिभाई और बच्चोके प्रति अपने कर्त्तव्यका पूरी तरह पालन कर रहे हो। इसीलिए तो तुम्हारा वियोग सहन हो जाता है। मैं मानता हूँ कि उनके साथ रहकर तुम अपना और उनका बिगाड करोगे। तुम सोजित्रामें रहकर और जैसा मणिभाई कहे वैसा करके विमलाका[2] हित-साधन नही कर सकोगे। परन्तु तुम बाहर रहकर और तपस्याके द्वारा अपना चरित्र दृढ करके उन सबका भला कर सकते हो। मणिभाईके विरुद्ध तो तुम्हारा सत्याग्रह है ही और सत्याग्रह

१. देखिए "प्राचीन सभ्यता", ३०-३-१९१८।
२. रावजीभाईकी पुत्री।

कभी बुरा हो ही नही सकता। तुम मणिभाईके प्रति वैरभावके कारण नही वल्कि उनके प्रति प्रेमभावके कारण वाहर रहते हो। मीरावाईने प्रेमदृष्टिसे अपने पतिका त्याग किया और महात्मा बुद्धने प्रेमके वश होकर अपनी सती स्त्री और माता-पिताका त्याग किया। जो-कुछ तुमपर लागू होता है, वही शिवाभाईपर भी होता है। मान लो, तुम लडाईसे सकुशल लौट आये। तव क्या तुम्हारी दशा वदल नही जायेगी? तव क्या तुम अपने वाल-वच्चोंकी देखभाल करनेके लिए अधिक योग्य नही हो जाओगे? लडाईमें जानेमें हमारा उद्देश्य भोग-विलास नही, परन्तु अपने और अपने देशके महान् कष्टोंका अन्त करना है। इसमें भूल हो तो भी नुकसान नही होगा।

मुझसे मिलकर शान्ति प्राप्त करना असम्भव है। हम जवतक मैल छुडा रहे हैं, तवतक तो अशान्ति रहेगी ही। किन्तु उस अशान्तिमें शान्ति है, हमें ऐसा अनुभव होना चाहिए। हम कपडोंको धोते समय पछाडते हैं, परन्तु जानते है कि इससे सफाई होगी और इसीलिए प्रसन्नता प्राप्त करते हैं।

मोहनदासके वन्देमातरम्

[गुजरातीसे]
महादेवभाईनी डायरी, खण्ड ४

३६५. स्वर्गीय सोरावजी शापुरजी अडाजानिया

[नडियाद]
जुलाई २७, १९१८

सम्पादक
'वॉम्बे क्रॉनिकल',

महोदय,

सूरतके पास स्थित अडाजानके श्री सोरावजी शापुरजी हाल ही में जोहानिसवर्गमें चल बसे। वे भारतकी एक श्रेष्ठ सतान थे। मृत्युके समय उनकी आयु केवल ३५ वर्षकी थी। अपने इस सहयोगीके प्रति अत्यन्त दु:खित मनसे अपनी श्रद्धांजलि अर्पित करना मेरा कर्तव्य है। श्री सोरावजीको उनके गिने-चुने मित्र तो जानते थे, किन्तु भारतीय जन-समाज उनसे अपरिचित था। उन्होंने दक्षिण आफ्रिकामें काम किया था। वे सत्याग्रहियोंमें अग्रगण्य थे। वे उनमें उस समय सम्मिलित हुए थे जव दक्षिण आफ्रिकामें सत्याग्रह अपनी चरम अवस्थामें था, और ट्रान्सवालके वाहर फैल चुका था। मुझे स्वीकार करना चाहिए कि जव वे सत्याग्रहके इस सघर्षमें शामिल हुए तव मेरे मनमें उनकी शक्तिके वारेमें सन्देह था, परन्तु उन्होंने वहुत जल्दी प्रथम श्रेणीके सत्याग्रहीके रूपमें अपनी धाक जमा ली। यह वात न तो उनके मनमें और न मेरे ही मनमें आई थी कि उन्हे कई वार सपरिश्रम कारावास भोगना पडेगा और उसका योग १८ मास तक जा पहुँचेगा। परन्तु उन्होंने इस कष्टको वीरतापूर्वक और प्रसन्नतापूर्वक सहा। जव उन्होंने दक्षिण

आफ्रिकाके सार्वजनिक जीवनमें प्रवेश किया था, तब वे एक साधारण व्यापारी थे। वे हाईस्कूल तक पढ़े थे, फिर भी उनकी शिक्षा जितनी-भर थी उन्होंने ट्रान्सवालमें उसका उपयोग बहुत ही अच्छा किया। संघर्षके दिनोंमें वे दृढ़व्रती, चारित्र्यवान् और सौम्य-स्वभाव युवक सिद्ध हुए। उन्होंने कठिन स्थितियोंमें ऐसा साहस दिखाया जैसा बहुतसे उच्च कोटिके सत्याग्रही भी प्रायः नहीं दिखाते। ऐसे अवसर भी आये जब हममें से बड़े-बड़े अधीर हो सकते थे, परन्तु सोराबजी कभी विचलित न हुए।

संघर्ष समाप्त हो जानेपर मेरी यह इच्छा हुई थी कि जिन युवक भारतीयोंने आन्दोलनमें बहुत बहादुरीके साथ भाग लिया है उनमें से किसी एकको इंग्लैंड भेजा जाये। एक सज्जनने वहाँ जानेका खर्च देनेकी अपनी इच्छा और तैयारी बतायी थी। इनमें से अनेक कारणोंसे सोराबजी ही चुने गये। सवाल यह था कि जिस विद्यार्थीको पढ़ाई छोड़े ८ वर्ष हो गये, क्या वह फिर पढ़ सकेगा। परन्तु सोराबजी तो कृतनिश्चय थे। उनकी अभिलाषा बैरिस्टर बनकर अधिक प्रभावकारी देशसेवा करनेकी थी। आखिर वे इंग्लैंड गये। जिन दिनों श्री गोखले दक्षिण आफ्रिका गये थे उन दिनों सोराबजी उनके सम्पर्कमें आये थे। वे लन्दनमें उनके सम्पर्कमें और भी अधिक आये। मुझे मालूम है कि श्री गोखले सोराबजीकी योग्यताके बारेमें बहुत अच्छी राय रखते थे। उन्होंने सोराबजीको अपने [भारत सेवक] समाजका सदस्य बननेके लिए कहा था। लन्दनमें बसे हुए भारतीयोंके जितने बड़े आन्दोलन चले, उन सबमें सोराबजीने सक्रिय भाग लिया। कुछ समय तक वे लन्दन भारतीय समितिके मन्त्री भी रहे थे। महायुद्ध आरम्भ होनेपर लन्दनमें जो आहत सहायक दल बनाया गया था उसमें नाम लिखानेवाले वे सबसे पहले व्यक्ति थे और उन्होंने नेटलेमें घायलों और बीमारोंकी सेवाका काम किया था। बैरिस्टर हो जाने पर वे दक्षिण आफ्रिका लौट गये। उनका विचार वहाँ वकालत करके कुछ वर्ष दक्षिण आफ्रिकामें बिताकर और अपने स्थानपर किसी दूसरे योग्य व्यक्तिको बैठाकर भारत लौटनेका था। परन्तु शोक है, ईश्वरको कुछ और ही मंजूर था और इस होनहार युवकका जीवन-दीप एकाएक बुझ गया। मृत्युके समय वे ३५ वर्षके ही थे।

मैं ऊपर जो-कुछ कह आया हूँ उसमें सोराबजीके मानवीय गुणोंका चित्रण नहीं किया जा सका है। वे बहुत ही सच्चे आदमी थे। वे सच्चे पारसी थे, क्योंकि वे एक सच्चे भारतीय थे। वे कोई जाति और धर्मगत भेद नहीं मानते थे। उनकी देश-भक्ति अगाध थी और देशसेवा उनका धर्म बन गया था। वास्तवमें वे एक दुर्लभ पुरुष थे। उनके परिवारमें उनकी शोकमग्ना विधवा पत्नी है। मुझे यकीन है कि सोराबजीके अनेक मित्र उनके इस शोकमें उनके साथ हैं।

आपका,

मो० क० गांधी

[अंग्रेजीसे]

बॉम्बे क्रॉनिकल, २९-७-१९१८

३६६. पत्र : सर विलियम विन्सेंटको

नडियाद
जुलाई २७, १९१८

सेवामें,
माननीय सर डब्ल्यू० एच० विन्सेंट, के० सी० एस० आई०

आपका इसी २२ तारीखका पत्र मिला, धन्यवाद। आशा तो यही है कि न्यायाधिकरण पूर्णतः निष्पक्ष होगा और ठीक समयपर नियुक्त कर दिया जायेगा। क्या मैं यथासमय आपका दूसरा पत्र पानेकी आशा करूँ?

[हृदयसे आपका,]

[अंग्रेजीसे]

नेशनल आर्काइव्ज ऑफ इंडिया, होम पोलिटिकल (ए) जनवरी १९१९, सं० ३-१६।

३६७. पत्र : जमनालाल बजाजको

नडीयाद
आषाढ कृष्ण ४ [जुलाई २७, १९१८]

भाईश्री जमनालालजी,

आपके प्रेमभावसे मैं लज्जित होता हुं। मैं इतने प्रेमके लिए लायक बनु एसा चाहता हु — प्रभुजीसे मागता हु। आपकी भक्ति आपको हमेशा नीति मार्गमें आगे ले जायेगी, ऐसी मैं आशा रखता हु।

मारवाडमें विद्या-प्रचारके कार्यकी सफलताके लीये अच्छा व्यवस्थापककी आवश्यकता है।

भरतीका कार्य[1] बहुत धीमा चलता है। करीब १५० तक हुए होंगे। कोईको अबतक भेजे गये नहि है। गुजरातीयोंकी एक ब्रेटेलियन बनानेकी तजवीज कर रहा हु।

आपका,
मोहनदास गांधी

गांधीजीके स्वाक्षरोंमें मूल पत्र (जी० एन० २८४१) की फोटो-नकलसे।

१. पहले विश्व-युद्धके समय गांधीजी खेड़ा जिलेमें रंगरूटोंकी भरतीका काम कर रहे थे।

३६८. पत्र : सी० एफ० एण्ड्रयूजको

[नडियाद]
जुलाई २९, १९१८

प्रिय चार्ली,

दुबारा पत्र लिखनेका आनन्द लूट लेता हूँ। एक पराजित राष्ट्रके पैगम्बरका सन्देश सुननेमें जापानने अरुचि दिखाई, इसकी तहमें मुझे तो बहुत गहरा अर्थ दिखाई दे रहा है।[1] दुनियामें युद्ध सदा रहेगा। सारी मनुष्य-जातिका स्वभाव बदल जाये, इसकी सम्भावना दिखाई नही देती। मोक्ष और अहिंसा व्यक्ति ही प्राप्त कर सकेंगे। अहिंसाके पूर्ण पालनके साथ जमीन-जायदाद रखना या सन्तान पैदा करना असंगत है। दुष्कृत्य करनेवालेको मारना पड़े तो मारकर भी अपने स्त्री-बच्चोकी रक्षा करनेमे यथार्थ अहिंसा ही है। सामनेवाले मनुष्यको मारूँ नही और बीचमें पड़कर उसके सारे प्रहार अपने ऊपर झेल लूँ, तो वह सम्पूर्ण अहिंसा होगी। परन्तु हिन्दुस्तानने तो पलासीके रणक्षेत्रमें दोनोमें से एक भी काम नही किया हम तो एक-दूसरेसे लड़नेमें व्यस्त कायर लोगोका एक झुडमात्र थे। [ईस्ट इंडिया] कम्पनीके रुपयेके भूखे थे और तुच्छ वस्तुओके लिए अपनी आत्मा बेचनेको तैयार थे। आज भी हमारी दशा कम-ज्यादा अशमें — बल्कि ज्यादा अंशमे, कम अंशमें नही — ऐसी ही है। कुछ व्यक्तियोके बहादुरी दिखानेके उदाहरण होते हुए और उन दिनोके अतिशयोक्तिपूर्ण विवरणोमे पीछेसे सुधार हो जाने पर भी कुल मिलाकर हमने जो अपनी दुर्गत करवाई उसमे कोई अहिंसा नही थी। इसलिए जापानने जो अरुचि प्रकट की, वह मुझे तो ठीक मालूम होती है। पुराने जमानेके ईसाई पादरियोने क्या किया था, इस बारेमें मुझे काफी जानकारी नही है। मेरा खयाल है कि उन्होंने कमजोरीसे नही, बल्कि बहादुरीसे कष्ट सहन किये थे। प्राचीन कालके ऋषियोने तो यह रिवाज रखा था कि उनकी धार्मिक क्रियाओकी रक्षा क्षत्रिय करे। विश्वामित्रकी तपस्यामें राक्षसोके विघ्न डालनेपर रामने रक्षा की थी। बादमें विश्वामित्रको ऐसी रक्षाकी जरूरत नही रही।

सैनिक भरतीके काममें मुझे बहुत मुश्किल होती है। किन्तु तुम मान लो कि अभी-तक मुझे एक भी आदमी ऐसा नही मिला, जिसे मारनेमें आपत्ति होनेके कारण भरती होनेमें आपत्ति हो। वे इसलिए आपत्ति करते हैं क्योकि वे मरनेसे डरते हैं। मौतका यह अस्वाभाविक भय राष्ट्रको बरबाद कर रहा है। इस क्षण तो मैं केवल हिन्दुओका ही विचार कर रहा हूँ। मुसलमान युवकोमे मृत्युके प्रति पूर्ण उपेक्षाका भाव उनकी अद्भुत सम्पत्ति है।

१. संकेत श्री रवीन्द्रनाथ ठाकुर द्वारा टोकियो (जापान) में दिये गये उस भाषणकी ओर है जिसमें उन्होंने जापानपर पश्चिमकी नकल करनेका आरोप लगाया था। उनके उस कथनपर जापानी श्रोताओंने तानेभरी फब्तियाँ कसी थी। देखिए **नेशनलिज्म: रवीन्द्रनाथ ठाकुर**, पृष्ठ ४९-९३।

आज मैंने यह पत्र सुसबद्ध रूपमें नही लिखा है परन्तु अपने मनोमन्थनकी कुछ कल्पना तुम्हे दी है।

तुम्हे पता लग गया होगा कि सोरावजी गुजर गये है। उनकी मृत्यु जोहानिसबर्गमें हुई। बहुत आशास्पद जीवनका एकाएक अन्त हो गया। ईश्वरकी लीला अगम्य है।

सस्नेह,

तुम्हारा,
मोहन

[अंग्रेजीसे]

महादेव देसाईकी हस्तलिखित डायरीसे।
सौजन्य . नारायण देसाई

३६९. पत्र : मिली ग्राहम पोलकको

[नडियाद]
जुलाई २९, १९१८

प्रिय मिली,

सोराबजी नही रहे। यह दु खद समाचार अभी-अभी जोहानिसबर्गसे तार द्वारा मिला। इस मौतमें यो तो, कोई विशेषता नही है, सोराबजी-जैसे बहुत-से लोग मर चुके हैं और अब भी मरते हैं। किन्तु हम सबके जीवनमें सोराबजीका इतना महत्त्वपूर्ण स्थान बन गया था कि उनकी अचानक मृत्युसे हमें सख्त धक्का पहुँचा है। आत्माका नाश नही होता और कर्मका प्रवाह कभी टूटता नही, इस विश्वासके बलपर ही हम जीवनमें कर्म करते रहनेका उत्साह कायम रख पाते है। जब घटनाओका उद्देश्य और औचित्य हमारी समझमें नही आता, तब हमें आघात पहुँचता है। परन्तु मुझे ऐसा लगता है कि ईश्वरकी योजनामें कुछ भी असामयिक और हेतुविहीन नही होता।

[अंग्रेजीसे]

महादेव देसाईकी हस्तलिखित डायरीसे।
सौजन्य नारायण देसाई

३७०. पत्र : एस० के० रुद्रको

[नडियाद]
जुलाई २९, १९१८

प्रिय श्री रुद्र,

आपने अपने सुखमें मुझे भाग लेने दिया, इसके लिए मैं आभारी हूँ।[1] सुधीर बहुत ही भला लड़का है। हाँ, वह बहुत-अच्छा काम कर रहा है। दूसरे लड़के भी अपने-अपने क्षेत्रमें अच्छा काम कर रहे हैं। यह व्यवस्थित प्रशिक्षणका परिणाम है।

आप तो मेरे फौजी भरतीके कामको ठीक समझते हैं, लेकिन चार्ली मेरे साथ लड़ रहा है। उसके खयालसे शायद मैं अपने-आपको भ्रममें डाल रहा हूँ। उसे यह लगता है कि मेरे इस कामसे अहिंसाके ध्येयकी मेरी उपासनाको हानि पहुँचेगी। मैंने तो इसी ध्येयकी उपासनाके लिए यह काम हाथमें लिया है। मैं जानता हूँ कि मेरी जिम्मेदारी बहुत बड़ी है। जब मैं यह मानकर कि फौजी भरती कराना मेरा काम नहीं है, आरामसे बैठा हुआ था, तब भी मेरी जिम्मेदारी उतनी ही भारी थी। तब यह डर था कि मेरे वचनोंपर श्रद्धा रखनेवाले इस झूठे खयालसे कि यह चीज अहिंसा है बिलकुल नामर्द बन जायेंगे या बने रहेंगे। शरीर-बलकी व्यर्थता हमारी समझमें आये, उस शक्तिका हम त्याग करें, उससे पहले हममें मारनेकी पूरी शक्ति होनी चाहिए। ईसा मसीहमें दुश्मनोंको जलाकर भस्म करनेकी शक्ति थी, परन्तु उन्होंने उसे काममें नहीं लिया और अपने-आपको मार डालने दिया। क्योंकि वे इतने अधिक प्रेमसे भरे हुए थे, आदि।

हृदयसे आपका,
मो० क० गांधी

[अंग्रेजीसे]

महादेव देसाईकी हस्तलिखित डायरीसे।

सौजन्य : नारायण देसाई

१. श्री रुद्रके पुत्र फौजमें सेकंड लेफ्टिनेन्ट नियुक्त हुए थे और उनके दामाद प्राकृतिक विज्ञानकी परीक्षामें प्रथम श्रेणीमें उत्तीर्ण हुए थे।

३७१. पत्र : वी० एस० श्रीनिवास शास्त्रीको

[नडियाद]
जुलाई २९, १९१८

प्रिय श्री शास्त्रियर,

ठाकोर अभी-अभी आये हैं। वे कहते हैं कि आप फिर बीमार पड गये थे। आपको ऐसे कठोर डॉक्टरकी जरूरत है, जो निर्दय बनकर आपसे पूरा उपवास कराये और पानीका इलाज करे। प्रायोगिक धधोमें अन्यतम, इस धधे [प्रचलित डॉक्टरी चिकित्सा] से तो ऐसी हत्याके सिवा और कोई आशा नही रखी जा सकती, जिसे करनेका उसे लाइसेंस मिला हुआ है। जब-जब आपकी बीमारीकी बात सुनता हूँ, तभी किसी-न-किसी डॉक्टरको गोलीसे मार देनेको जी चाहता है। किन्तु मेरी अहिंसा इसमें बाधक होती है। आपके और हिन्दुस्तानके लिए यह सौभाग्यकी बात है कि मेरी कभी ससदमें बैठनेकी महत्त्वाकाक्षा ही नहीं है। नही तो ऐसा विधेयक पेश करूँ कि जो लोग बार-बार बीमार पडते हों, वे ससदके सदस्य बननेके योग्य न माने जायें।

'पोलकका तार साथमें भेजता हूँ।'[1] इसका पूरा अर्थ मैं नही समझा। परन्तु मेरा खयाल है कि योजनाके देशके द्वारा अस्वीकृत होनेका भय नही है।[2]

[अंग्रेजीसे]

महादेव देसाईकी हस्तलिखित डायरीसे।
सौजन्य नारायण देसाई

३७२. पत्र : देवदास गांधीको

[नडियाद]
जुलाई २९, १९१८

देहातकी जिन्दगी गर्मीमें तो भली प्रतीत होती है, परन्तु चौमासेमें अच्छी लगेगी या नहीं, यह सवाल है। मैं मानता हूँ कि चौमासेमें इच्छानुसार जाना-आना मेरे लिए तो बहुत मुश्किल हो जायेगा। गन्दगीके प्रति मेरी अरुचि बढती ही जाती है, घटती नही। पाखाना जरा भी खराब होता है तो अकुलाता हूँ। यहाँ शौचके लिए जगलमें जाता हूँ तो साथमें फावडा ले जाता हूँ। गड्ढा खोदकर उसमें बैठता हूँ और शौच-क्रियाके बाद गड्ढेमें मिट्टी डाल देता हूँ, तब आता हूँ। मैं देखता हूँ कि यह इतना-सा नियम न पालनेसे असख्य रोग फैलते हैं और करोडो मक्खियाँ पैदा होती हैं। मेरा खयाल है कि जिन्हे गन्दगी वगैरासे अधिक घिन नही होती,

१. यह उपलब्ध नहीं है।
२. अभिप्राय सम्भवत मॉण्टेग्यु चैम्सफोर्ड योजनासे है।

वे तो गाँवोमे बहुत सुखी रहते हैं। कल रातको दो भजन-मण्डलियाँ मेरे पास आई थी। दोनोके पास जो बाजे थे वे पाँचसे दस रुपये तक मूल्यके होगे। उनमें ढोलक, मंजीरे, करताल और इकतारा तम्बूरा थे। इन्हीसे उन्होने मधुर स्वर उत्पन्न किया। भजन सब कृष्ण-विषयक थे। उन्होने कैसे द्रौपदीका चीर बढाया, विदुरके घर शाक खाया और दुर्योधनका गर्व दूर किया आदि। यह-सब ऐसे मधुर शब्दोमें रचा गया है कि उसमें से प्रेमभाव और भक्तिभाव फूटे बिना रह ही नही सकता। कृष्णके लिए इतनी अधिक भक्ति क्यों है? मेरे खयालसे तो उनके शौर्यके कारण, उनकी परोपकारवृत्तिके कारण होनी चाहिए। अपनी अगाध शक्तिसे उन्होने पाण्डवोके छोटे-से राज्यको जिताया, दुष्ट कौरवोका नाश किया और प्रजाको दु.खसे छुड़ाया, इसलिए उनकी कीर्तिके गीत गाये गये और उन्हे अमर पद प्राप्त हुआ। उन्होने दुर्योधन जैसेकी परवाह नही की, उसके धनसे वे नही ललचाये, किन्तु सुदामाके तन्दुल उन्हे बहुत मीठे लगे। ऐसी थी उनकी सादगी। कृष्ण चरित्र चित्रित करके कविने हद कर दी है। इसमे शक नही कि ऐसा अद्‌भुत प्रतिभा-शाली कोई हुआ अवश्य है। मैं चाहता हूँ कि तुम सारा महाभारत संस्कृतमें पढ़ सको। जो रस मैं नही ले सका, उसे तुम ले सकोगे। मेरा विषय तो ग्राम-जीवनका सौन्दर्य था, परन्तु मैंने कृष्णके चरित्रके बारेमें लिख डाला। मेरे मनमे कृष्णके जीवनका यह ध्यान कल रातके संगीतसे आया। कल रातका संगीत मुझे अपने संगीतसे भी ज्यादा अच्छा लगा। वह स्वाभाविक और मधुर था। उसमे शोर बहुत नही था। ढोलक और अन्य वाद्योकी ध्वनि बहुत मंद थी। पूनमका चन्द्रमा निकला हुआ था। हम सब एक वृक्षके नीचे बैठे थे। सबकी पोशाक देहाती थी। सब जाजम बिछाकर उसपर बैठे थे। सभी लोग किसान थे। वे दिन-भर मजदूरी करके आये थे और अब निर्दोष आनन्दका भोग कर रहे थे। वे प्रभुके नामका रस पी रहे थे। मैंने उनमे से एकसे कहा . भाई, तुम तो बहुत रस पी रहे हो। उसने जवाब दिया : क्या करे भाई, गप्पे मारनेकी अपेक्षा हम लोग इस तरह भजन-कीर्तनमे ही समय बिताते है। ये लोग बारैया जातिके थे, इसलिए आम तौरपर गँवार माने जायेंगे; किन्तु वे ऐसे जरा भी नही थे। वे अशिक्षित माने जाते है, परन्तु अशिक्षित नही थे। मुझे ऐसा लगा कि अगर शिक्षित-वर्ग उन्हे अपनाये और उनमें नया रस भरे, तो उनसे मनचाहा काम लिया जा सकता है। उनमें ज्ञानका तो पार ही नही। उसका उपयोग करना आना चाहिए। जैसे अनाड़ी बढई अपने औजारोको दोष देता है, वही हालत हमारी है। अब तो तुम्हे खूब लम्बा पत्र लिख डाला। इसे पढकर मणिलालको भेज देना। मैं ऐसा पत्र फिर शायद ही लिखूँ। सबेरेका समय है, थोडा-सा वक्त है, मस्तिष्क विचारोसे भरा है। उसे थोड़ा-सा तुम्हारे सामने खाली कर दिया है। जो रस मैंने लिया है, तुम भी इसमें से थोड़ा-बहुत चख सको, तो यह मानूँगा कि तुम्हे मैंने विरासतका सच्चा हिस्सेदार बनाया। जैसे हम सरकारसे हिस्सा माँगते हैं, वैसे ही यदि मैं भी अपनी इस निधिका भाग तुम्हें देता हूँ तो अपने ऋणसे ही मुक्त होता हूँ।

बापूके आशीर्वाद

[गुजरातीसे]

महादेवभाईनी डायरी, खण्ड ४

३७३. पत्र : कस्तूरबा गांधीको

[नडियाद]
जुलाई २९, १९१८

प्रिय कस्तूर,

मैं जानता हूँ कि तुम मेरे साथ रहनेको बहुत तरसती हो, परन्तु मेरा खयाल है कि जो काम हमें करने हैं, वे करने ही चाहिए। अभी तुम्हे वही रहना चाहिए। यदि तुम वहाँ जो इतने सारे बच्चे हैं उन्हें अपने ही बच्चे समझो, तो तुरन्त तुम्हे बच्चोका अभाव खटकना बन्द हो जाये। ढलती उम्रमें इतना तो करना ही चाहिए। तुम जैसे-जैसे सबपर प्रेम भाव रखोगी, सबकी सेवा करोगी, वैसे-वैसे तुम्हारे भीतर आनन्द स्फुरित होगा। तुम्हे नित्य प्रात काल सब बीमारोको देखना ही चाहिए और उनकी सेवा करनी ही चाहिए। जिनके लिए विशेष भोजन बनाना हो, उनके लिए विशेष भोजन बनाना या रखना चाहिए। जो मराठी बहनें है, उनसे मिलना चाहिए। उनके बच्चोको खेल-कूद कराना और उन्हे लेकर घूमने जाना चाहिए। तुम्हे उनके मनपर यह असर डालना चाहिए कि वे हमसे अलग नही हैं। उनकी तन्दुरुस्ती अच्छी रहनी चाहिए।

निर्मलाके साथ अच्छी बातें यानी धर्म वगैराकी बातें करनी चाहिए। तुम उससे भागवत वगैरा पढवाकर सुन सकती हो। इसमें उसे भी रस आयेगा। यह निश्चित समझो कि यदि तुम इस तरह दूसरोंकी सेवामें लग जाओगी, तो तुम्हारा मन सदा प्रसन्न ही रहेगा। पुजाभाईके खाने-पीनेका ध्यान तो रखना ही चाहिए।

मोहनदास

[गुजरातीसे]
महादेवभाईनी डायरी, खण्ड ४

३७४. पत्र : किशोरलाल मशरूवालाको

[नडियाद]
जुलाई २९, १९१८

भाईश्री किशोरलाल,

यह पत्र तुम्हारे तथा भाई नरहरिके लिए है। भाई नारायणरावका यह आरोप कि महाराष्ट्रियो और गुजरातियोंमें भेद किया जाता है जिस हदतक सही हो, उसहद तक हमें उसे दूर करनेका प्रयत्न करना चाहिए। यह अहिंसाके प्रयोगका क्षेत्र है। पहला कदम यह है कि इस आरोपमें सार कितना है, इस बात-पर तुम सब मिलकर विचार करो। गुजराती स्त्रियोको महाराष्ट्री स्त्रियोसे खूब मिलने-जुलनेका प्रयत्न करना चाहिये। लडके ऐसा भेद जरा भी न रखें, यह सबसे

ज्यादा जरूरी है। मेरे लिखनेका अर्थ बहुत बढा-चढाकर न किया जाये; परन्तु उसपर क्षणभर विचार करके जितनी कार्रवाई करना उचित हो उतनी कर लेनी चाहिए।

तुम्हारे सम्मुख प्रार्थनाके सम्बन्धमें विचारार्थ इतनी बात प्रस्तुत करता हूँ। हम अपनी अशक्तिका विचार इतनी दूरतक न ले जायें कि कोई काम ही न कर सकें। हम शक्तिके अनुसार पढायें और जितनी कमी हो, उसे प्रयत्न करके दूर करे। मुझे ही संस्कृत पढ़ानी पड़े, तो मैं इस अशक्तिका उपयोग क्या करूँगा? मैं जानता हूँ कि मेरी सस्कृत सस्कृत-ही नही कहला सकती। किन्तु दूसरा कोई न हो, तो मैं जरूर पढाऊँगा और दिन-प्रतिदिन अपनी कमियोको दूर करता जाऊँगा। पारनेल इसी तरह लोकसभाके कानूनोकी जानकारीमें सबसे आगे बढ गया था। तुम अपनी अशक्तिका ही विचार करके प्रत्येक कार्यको करनेमें डरते हो। यदि तुम सामने आये हुए प्रत्येक कार्यको, जितनी शक्ति हो, उसीका उपयोग करके निपटा डालो, तो क्या तुम्हे अधिक आनन्द न मिलेगा?

लड़के अपना वल कैसे वढ़ायें? वे अपना बचाव करे, लेकिन उद्धत न बनें, उन्हे यह सिखाना वड़ा कठिन मालूम होता है। हम अवतक लडकोको यही सिखाते थे कि जो मारे, उसकी मार खाओ। क्या अव यह शिक्षा दी जा सकती है? वालकपर इस शिक्षाका क्या असर होगा? वह युवावस्थामें क्षमावान् होगा या डरपोक बनेगा? मेरी अक्ल काम नही करती। अपनी अक्ल दौड़ाना। अहिंसाके इस नये दिखाई देनेवाले स्वरूपसे मैं तो कई तरहके प्रश्नोके जालमें फँस गया हूँ। मुझे सभी गाँठोके खोलनेका कोई एक महासूत्र नही मिला। वह मिलना ही चाहिए। क्या हम अपने लडकोको एक तमाचा मारनेपर वदलेमें दो मारना सिखायें या उन्हे यह सिखायें कि उनपर कोई उनसे कमजोर व्यक्ति हमला करे तो वे उसके तमाचे खा लें, परन्तु यदि उन्हे कोई उनसे वलवान् व्यक्ति मारे, तो वे उसका सामना करे और उसमें उनपर जो प्रहार हो, उन्हे सहन करे? यदि कोई सरकारी अफसर उन्हे मारे, तो वे उसका क्या करे? जव कोई किसी लडकेको मारे, तो वह उसकी मार सहन करके हमारी सलाह ले या जैसा मौका हो, वैसा काम करे और उसका परिणाम भोगे? "जो एक तमाचा लगाये, उसके दो तमाचे सहन करो" इस राजमार्गको छोडनेसे ही उपर्युक्त संकट आते हैं। इनमें से पहला मार्ग सरल है अत क्या वह सच्चा हो सकता है या सकटमय मार्गसे गुजरनेपर ही सही रास्ता हाथ लगेगा? हिमालयपर चढनेकी पगडडियाँ अनेक दिशाओमें जाती हैं, वे कभी-कभी तो विरुद्ध दिशाओमें भी जाती हैं, फिर भी जानकार मार्गदर्शक तो [आरोहीको] अन्तमें चोटी पर ले ही जाता है। हिमालयपर सीधी लकीर से जा ही नही सकते। क्या इसी तरह अहिंसाका मार्ग भी विकट होगा? त्राहि माम्, त्राहि माम्।

मोहनदासके वन्देमातरम्

[गुजरातीसे]

महादेवभाईनी डायरी, खण्ड ४

३७५. पत्र : पुंजाभाई शाहको

[नडियाद]
जुलाई २९, १९१८

सुज्ञ श्री पुंजाभाई,

आपने अच्छा निश्चय किया।[1] परमार्थकी दृष्टिसे की हुई सारी प्रवृत्ति निवृत्ति ही है और वह मोक्षका कारण है। दूसरोंकी सेवा परमार्थ ही है। अपनी तरफसे हटाकर दूसरोंकी तरफ ध्यान ले जानेमें पुरुषार्थकी जरूरत रहती है। आश्रममें सबकी यथा-शक्ति सेवा करनेमें तो आनन्दका पार ही न होना चाहिए। आश्रममें कोई-न-कोई बीमार रहता ही है। दिनमें उसकी खबरगीरी रखनी चाहिए और बच्चोंके साथ विनोद करके उन्हें खुश रखना चाहिए। इस काममें क्लेश नहीं, झंझट नहीं। आत्माकी पहचान इसी तरह की जा सकती है। आपको आसानीसे इसका अनुभव हो जायेगा। भुवरजी वगैरा बीमारोंके पास थोड़ा-बहुत नित्य बैठनेका अभ्यास रखना।

[गुजरातीसे]

महादेवभाईनी डायरी, खण्ड ४

३७६. पत्र : कस्तूरबा गांधीको

[नडियाद]
जुलाई ३१, १९१८

प्रिय कस्तूर,

तुम्हें दुःखी देखता हूँ तो मैं दुःखी हो जाता हूँ। स्त्रियोंको लाया जा सकता, तो मैं तुम्हें लाता। मेरे बाहर जानेसे तुम इतनी विचलित क्यों हो जाती हो? हमने वियोगमें सुख मानना सीखा है। ईश्वरकी इच्छा होगी, तो फिर मिलेंगे और साथ रहेंगे। आश्रममें अनेक अच्छे काम हैं। तुम उनमें जुट जाओगी, तो अवश्य प्रसन्न रहोगी।

[गुजरातीसे]

महादेवभाईनी डायरी, खण्ड ४

१. मगनलाल गांधी जब इलाहाबादमें थे तब आश्रमकी व्यवस्थाका कार्य श्री पुंजाभाईने सँभाल लिया था।

३७७. पत्र: मणिलाल गांधीको

[नडियाद]
जुलाई ३१, १९१८

चि० मणिलाल,

तुम्हारा पत्र इन दिनो नही आया। साथमे भाई सैमका पत्र है। इसे तुम्हारे पढने और विचार करनेके लिए भेज रहा हूँ। उनका कितना ही दोष हो, फिर भी मुझे डर है कि तुमने बेहद रोष किया है और बहुत द्वेष-भाव दिखाया है। तुम अपने हककी रक्षा भले ही करते, परन्तु तुम्हे विनय नही छोडनी थी। तुम व्यवस्था चाहते हुए भी उनपर रोष करनेसे बच सकते थे। उनमें से किसीने भी बहुत-सा रुपया जमा कर लिया हो, ऐसी बात नही है, और न चुराया है। देवी बहनने क्या अपराध किया है? श्री वेस्ट और श्री सैम दोनोने अपने बच्चोकी शिक्षाकी हानि सही है, यह बहुत-बडी बात हुई है। मेरा तो यही खयाल है कि तुमने मेरे ऊपरका अपना रोष उनपर उतारा है। तुम उनके यहाँ जाते भी नही। ऐसा हरगिज न करना चाहिए। मेरे खयालसे तुम्हे उनसे माफी माँगनी चाहिए। परन्तु यह तो तुम्हे ठीक लगे, तभी करना। मुझे ठीक लगेगा, इसलिए नही। तुम अपनी स्वतन्त्रता कायम रखकर काम करोगे, तो मुझे ठीक ही लगेगा। मै मानता हूँ कि मैंने तुम्हे मुझ पर रोष करनेके अनेक कारण दिये है। उनके लिए तुम मुझे क्षमा करना। मैंने तुम्हे बहुत भटकाया और उससे तुम्हे नियमबद्ध शिक्षा नही मिल सकी। परन्तु तुम मुझे तभी क्षमा कर सकते हो, जब तुम्हे यह महसूस हो कि यह अनिवार्य था। मैंने अपना सारा जीवन खुदको पहचाननेमे बिताया है, यह ढूँढनेमें बिताया है कि मेरा कर्त्तव्य क्या है। मेरा काम चमका है, क्योकि मैंने जैसा माना, वैसा ही किया है। इससे मै बहुत-सी भूलोसे बचा हूँ। परन्तु ऊपरसे सोचनेपर लौकिक दृष्टिसे मैंने तुम्हारा अहित किया है। जैसे मैं अपने प्रयोगोकी बलि चढा हूँ, वैसे ही तुम और बा भी चढ़े हो। बा समझ गई है। इसलिए उसने जितना कमाया है, उतना किसी अन्य स्त्रीने नही कमाया। तुम अभी पूरी तरह नही समझे, इसलिए तुम्हारे मनमे रोष रहता है। मै अब भी कहना चाहता हूँ कि तुम सब भाइयोकी जैसी सेवा मैंने की है, वैसी दूसरा पिता नही करता। मैंने तुम्हे अपने धार्मिक अनुभवोमे हिस्सेदार बनाया है, इससे अधिक कोई क्या कर सकता है? दूसरे माँ-बापकी तरह मै तुम्हारा जीवन लौकिक रखकर अपना जीवन निराला बना सकता था। यदि मै वैसा करता, तो इस समय तुम्हारे और मेरे बीच कोई शृंखला न रहती, और जैसे गोकी बेन नामकी बहन है, वही दशा हमारी होती। मुझसे दूसरा कुछ नही हो सकता था क्योकि सत्यकी खोजमे मै तो जहाँ हूँ, वही रहता और तुम उस मार्गसे बाहर होते। यह तुम्हारे लिए इष्ट न होता। यदि तुम

इन बातपर धीरजसे विचार करोगे तो तुम मेरे ऊपर अपना रोष मिटा सकोगे। देखो, हरिलालके और मेरे बीच खाई पड गई है। हरिलालका जीवन मुझसे अलग हो गया है। पिता और पुत्रके बीचमें पिता-पुत्रका सम्बन्ध तभी माना जा सकता है, जब दोनोका जीवन एक हो और दोनो एक-दूसरेके लिए आधारभूत हो। मैं हरिलालके जीवनमें और हरिलाल मेरे जीवनमें दिलचस्पी नही ले सकता। इसमें हरिलालका दोष नही है। उसकी बुद्धि उसके कर्मोका अनुसरण कर रही है। मुझे हरिलालपर रोष नही है। परन्तु दोनोको जोडनेवाली कडी टूट गई, पिता और पुत्रके जीवनका माधुर्य जाता रहा। ससारमें ऐसा अक्सर होता है। मेरे बारेमें असाधारण बात सिर्फ इतनी ही है कि मैं धर्मकी खोज करते हुए हरिलालको अपने साथ नही खीच सका और हरिलाल अलग रह गया। हरिलालने अपने मालिकके लगभग तीन हजार रुपये केवल अपनी मूर्खताके कारण बरबाद कर दिये हैं। मालिकको उसने ऐसा पत्र लिखा है जो उसे ही लजानेवाला है और बेरोजगार हो गया है। वह मेरा लडका है, इसीलिए जेल जानेसे बच गया है। तुम मेरे जीवनमें साथ रहे हो, परन्तु असन्तुष्ट हो। उसमें से निकलना तुम्हें अनुकूल नही है और उसमें रहना भी बिलकुल पसन्द नही है। इसलिए तुम शान्त नही रह सकते। किसी भी तरह तुम सन्तोष रखो, तो शान्त भी हो सको। मैंने जान-बूझकर तुम्हारा अहित नही किया है। मैंने जो-कुछ किया है, वह तुम्हारा भला समझकर ही किया है। क्या तुम्हारे लिए मेरे ऊपर अपना रोष मिटानेके लिए इतना काफी नही है? मेरे लिखनेसे तुम अधिक रोष तो हरगिज नही करोगे। तुमने अपने विचार मुझे बता दिये, इससे मैं प्रसन्न ही हुआ हूँ। अब सारी व्यवस्था[1] तो तुम्हारे हाथमें आ ही गई होगी।

लडाईमें भरती होनेके सम्बन्धमें मेरी दूसरी पुस्तिका देख लेना। आश्रमसे पाँच व्यक्तियोंको चुना है, दूसरे भी उत्सुक हैं लेकिन वे अभी नही लिये जा सकते। चुने हुए व्यक्तियोंमें रामनन्दन, सुरेन्द्र, ठाकोरलाल, नानुभाई और रावजीभाई हैं। मैं तो हूँ ही। थोडे दिनोंमें यहाँ भरती-केन्द्र खुलेगा, ऐसा मेरा खयाल है। देवदास मद्रासमें हिन्दीका काम न कर रहा होता तो [वह भी] आता। उसका बहुत मन है। हरिलालको भी सूचित किया था, लेकिन वह क्यो आने लगा? तुम वहाँ महत्त्वपूर्ण काम कर रहे हो इसलिए तुम्हे नही लिया जा सकता। बाकी रहा रामदास, उसकी इच्छा हो तो वह आ सकता है। रामदासको नौकरी बदलनी पड रही है। यह अच्छा नही लगता। तुम खोजबीन करना।

निर्मला इस समय आश्रममें है। अपनी खुशीसे आई है। कब तक रहेगी, यह नही कहा जा सकता। वह ज्यादातर गोकी बहनकी सेवा करेगी।

आदरणीय खुशालभाई आश्रममें रहनेके लिए आए हैं। छगनलाल और वे अलग रहते हैं। छगनलाल राष्ट्रीय शालामें लगा हुआ है।

१. शायद फीनिक्स की।

इमारतें अब बन गई हैं। बुनाई-घर भी बन चुका है। उसमें रहा भी जा सकता है। पुस्तकालय आदि बनाना अभी बाकी है।

भाई सोराबजीका स्वर्गवास बहुत खटकता है। उनके जानेसे पूरा पहाड़ा ही फिरसे पढ़ना पड़ेगा।

बापूके आशीर्वाद

गांधीजीके स्वाक्षरोंमें मूल गुजराती पत्र (सी० डब्ल्यू० ११५) से।

सौजन्य : सुशीलाबेन गांधी

३७८. पत्र : मोहनलाल खंडेरियाको

नडियाद

आषाढ़ बदी ८ [जुलाई ३१, १९१८][1]

भाईश्री मोहनलाल,

आपका खेड़ा जिलेके सम्बन्धमें लिखा गया पत्र मिला। पैसा अभी नहीं मिला है। खेड़ा जिलेमें लड़ाईके सम्बन्धमें कुछ काम करना है, इस रुपयेका उपयोग उसीमें करूँगा।

मेरी इच्छा है कि आप ऐसा भी कुछ करें जिससे भाई सोराबजीकी स्मृति बनी रहे। उनके जैसा कार्यकर्त्ता मिलना मुश्किल है। मुझे लगता है कि उनके नामपर एक छात्रवृत्ति स्थापित करके किसी व्यक्तिको इंग्लैंड भेजा जाये यह सबसे अच्छा काम है।

मुझे भाई उमियाशंकरने बताया है कि आप बहुत अच्छा काम कर रहे हैं। यह जानकर मुझे प्रसन्नता हुई।

मोहनदासके वंदेमातरम्

मूल गुजराती पत्र (जी० एन० ६२१०) की फोटो-नकलसे।

१. इस पत्रमें लड़ाईके प्रयत्नोंकी जो चर्चा की गई है उससे पता चलता है कि यह पत्र १९१८ में लिखा गया था।

३७९. पत्र : एडा वेस्टको

[नडियाद]
जुलाई ३१, १९१८

प्रिय देवी,

'सोराबजीकी मृत्यु कितनी दुःखद है![1] मैं दक्षिण आफ्रिकाके बारेमें बड़ी बेफिक्री महसूस करता था और आशा रखता था कि सोराबजी अब वहाँ आ गये हैं, इसलिए सब काम अच्छी तरह चलेगा। मेरी सारी आशाएँ मिट्टीमें मिल गई हैं। . . .'[2]

पता नहीं, तुम सब फौजी भरती सम्बन्धी मेरी गतिविधिके बारेमें क्या सोचते हो। मैं अपना सारा समय इसी काममें लगा रहा हूँ। मेरी दलीलोंका सार यह है: हिन्दुस्तान मारनेकी शक्ति खो बैठा है। मारनेकी शक्तिका वह स्वेच्छापूर्वक त्याग करे, इससे पहले उसके लिए यह जरूरी है कि वह मारना सीखे। सम्भव है, एकबार शक्ति प्राप्त कर लेनेके बाद वह उसका कभी त्याग न करे। ऐसा करेगा, तो वह पश्चिमके जैसा ही या ज्यादा अच्छी तरह कहें, तो सभी आधुनिक स्वतन्त्र देशों जैसा खराब बन जायेगा। आज तो वह दोनोंमें से एक भी नहीं है। प्राचीन हिन्दुस्तानके लोग युद्धकला जानते थे — उनमें हिंसा करनेकी शक्ति थी — किन्तु उन्होंने इस प्रवृत्तिको यथाशक्ति अधिक-से-अधिक कम किया और दुनियाको सिखाया कि मारनेसे न मारना ज्यादा अच्छा है। आज तो मैं देखता हूँ कि हरएक आदमीकी इच्छा तो मारनेकी है, परन्तु बहुतसे लोग वैसा करनेसे डरते हैं अथवा उसकी शक्ति ही नहीं रखते। परिणाम कुछ भी हो, किन्तु मेरा निश्चित विचार है कि मारनेकी शक्ति तो हिन्दुस्तानको फिरसे प्राप्त कर ही लेनी चाहिए। परिणामस्वरूप देशमें जबरदस्त खून-खराबी हो जाये और हिन्दुस्तानको उस खून-खराबीमें से गुजरना पड़े तो गुजरे। लेकिन आजकी स्थिति तो असह्य है।

तुम्हारा,
भाई

[अंग्रेजीसे]

महादेव देसाईकी हस्तलिखित डायरीसे।
सौजन्य : नारायण देसाई

१ व २. यहाँपर मूलमें कुछ शब्द छूटे हुए हैं।

परिशिष्ट

परिशिष्ट १

कांग्रेस और मुस्लिम लीगका संयुक्त अभिनन्दनपत्र

[दिल्ली
नवम्बर २६, १९१७]

महानुभाव,

हम भारतीय राष्ट्रीय कांग्रेसकी अखिल भारतीय कमेटी और ऑल इंडिया मुस्लिम लीगकी परिषद्के सदस्यगण, आपका स्वागत करते हैं। श्रीमान् महामहिमके भारतीय मामलोंके प्रमुख मन्त्री हैं। हम आप तथा महामहिम सम्राट्के सम्मान्य प्रतिनिधि तथा इस देशमें उनकी सरकारके प्रधान, महाविभव वाइसराय और गवर्नर जनरल महोदयके सामने कृतज्ञ और आशान्वित होकर उपस्थित हो रहे हैं, कृतज्ञ इसलिए कि राष्ट्रीय कांग्रेस तथा मुस्लिम लीग द्वारा तैयार की गई सुधार-योजनाके ऊपर आपने और ग्रेट ब्रिटेनमें महामहिम सम्राट्के मन्त्रियोंने, जिनका श्रीमान् प्रतिनिधित्व कर रहे हैं, ध्यान दिया है, और आशान्वित इसलिए कि हमारे प्रस्ताव न्यायसंगत तथा ब्रिटिश इतिहास और नीतिके सर्वथा अनुकूल हैं, और इसलिए आप उन्हें स्वीकार करनेकी कृपा करेंगे।

महानुभाव, ग्रेट ब्रिटेनने भारतमें जो महान् और अच्छा कार्य किया है हम इस ऐतिहासिक अवसरपर उसके प्रति आभार प्रकट किये बिना नहीं रह सकते। इस देशकी बाह्य आक्रमणसे सुरक्षा और आन्तरिक शान्ति-व्यवस्थाकी स्थापना अपने-आपमें कोई साधारण उपलब्धियाँ नहीं हैं। लेकिन ग्रेट ब्रिटेनको इससे कहीं महत्तर श्रेय इस बातका है कि उसने एक अत्यन्त प्राचीन सभ्यताके वारिस, भारतके निवासियोंमें जो दुर्भाग्यवश अपनी उच्च प्रतिष्ठा खो चुके थे फिरसे एक नई बौद्धिक जाग्रति, राष्ट्रीय चेतना और स्वातन्त्र्यकी उत्कट लालसा उत्पन्न कर दी है। पुण्य स्मरण लॉर्ड रिपनने प्रसन्न वाणीमें शिक्षित भारतीयोंको ब्रिटिश शासनकी सन्तान बताया था। तब उन्होंने यह बहुत ठीक ही कहा था। और महानुभावो, हम आपको विश्वास दिला सकते हैं कि सर बार्टल फ्रेयरका यह कथन आज भी उतना ही सही है कि ब्रिटिश शासनके लाभोंको, वे भारतीय जिनका दृष्टिकोण उच्च अंग्रेजी शिक्षाने व्यापक बना दिया है, जितनी अच्छी तरह समझते हैं उतनी अच्छी तरह भारतका अन्य कोई वर्ग नहीं समझता, उन्होंने यह भी कहा कि अंग्रेजी शिक्षा भारतमें ब्रिटिश शासनका सबसे स्थायी स्मारक होगी। भारतीयोंकी राजनीतिक आकांक्षाएँ अपने-आपमें ब्रिटेन द्वारा पूर्वमें किये गये मंगल कार्योंकी सराहनाके समान हैं। लॉर्ड मैकॉलेने "इंग्लैंडके इतिहासके जिस सबसे शानदार दिवस" की कल्पना की थी, वह आ

गया है और भारतवासी वही स्वशासन माँग रहे हैं जिसे अंग्रेज जाति सदासे आत्माभिमानपूर्ण राष्ट्रीय जीवनकी एक अपरिहार्य शर्त मानती आई है। भारतीय राष्ट्रीय कांग्रेस, जिसे एक प्रसिद्ध भारतीय नेताने "ब्रिटिश शासनकी सबसे बडी सफलता और ब्रिटिश राष्ट्रकी गरिमाका सिरमौर" बताया था, उसी पवित्र राष्ट्रीय आकांक्षाकी सर्वोच्च अभिव्यक्ति है, और कांग्रेसका आदर्श ही भारतीय मुसलमानोकी सबसे महत्त्वपूर्ण संस्था, अखिल भारतीय मुस्लिम लीगका भी आदर्श है। गत २० अगस्तको इंग्लैंड और भारतमें एक साथ की जानेवाली इस सरकारी घोषणाका, कि सम्राट्की सरकार भारत सरकारकी पूर्ण सहमतिसे साम्राज्यके अभिन्न अंगके रूपमें भारतमें उत्तरदायी शासनकी स्थापनाके लक्ष्यको ब्रिटिश नीतिके रूपमें स्वीकार करती है, इस देशमें बहुत सन्तोषजनक प्रभाव पडा। उस ऐतिहासिक घोषणाके लिए भारतमें हम सभी धर्म, वर्ग और समुदायके लोग सम्राट्की सरकार और भारत सरकारके बहुत कृतज्ञ हैं।

तथापि, हमारा निवेदन है कि इस आदर्शकी पूर्तिके लिए सुधारोकी जो पहली किस्त लागू की जानेवाली है उनके अधीन जनताको और इस प्रकार विधान-मण्डलोमें जनताके निर्वाचित प्रतिनिधियोको काफी ठोस अधिकार प्रदान किये जाने चाहिए और भावी प्रगतिके निर्णयका अधिकार केवल भारत सरकार और इंग्लैंडके ही ऊपर नही छोडना चाहिए, जैसा कि इस समय तय किया गया है। यह बात स्वीकार की जानी चाहिए कि भारतकी जनताको जिसपर इस निर्णयका सीधा असर पडता है, ऐसे महत्त्वपूर्ण प्रश्नपर अपनी राय देनेका अधिकार है। यह नीति इंग्लैंडके प्रधान मंत्री द्वारा हालमें ही की गई इस घोषणाके सिद्धान्तके अनुकूल होगी, कि "नव-व्यवस्था करते समय किसी देशके निवासियोकी इच्छा ही सर्वाधिक महत्त्वपूर्ण होनी चाहिए" और यह नीति "गर्म देशोके ऊपर भी समान रूपसे लागू की जायेगी।" हमारा दृढ विश्वास है कि इस देशके और साम्राज्यके हितमें यह बात अत्यन्त आवश्यक है कि व्यवहारत जितनी जल्दी सम्भव हो उतनी जल्दी यहाँ पूर्ण उत्तरदायी शासनकी स्थापना हो। अत हम यह आश्वासन पानेके लिए इच्छुक हैं कि इस लक्ष्यकी ओर प्रगतिकी रफ्तार समुचित रूपसे तेज होगी। हमें आशा है कि सम्राट्की सरकार इस मुद्देपर विचार करेगी।

पहली किस्तमें काफी ठोस ढंगके सुधार यथाशीघ्र लागू करनेके निश्चयके लिए भी हम बहुत कृतज्ञ हैं। महानुभाव, हम यह निवेदन करनेकी छूट लेना चाहते हैं कि भारतीय राष्ट्रीय कांग्रेस और अखिल भारतीय मुस्लिम लीगके वार्षिक अधिवेशनोकी कार्रवाई इस बातका ज्वलन्त प्रमाण है कि सवैधानिक, वित्तीय और प्रशासनिक सभी क्षेत्रोमें व्यापक सुधारों की जबरदस्त आवश्यकता है। जन-साधारणकी आर्थिक स्थिति सुधारना और प्रबुद्ध-वर्गकी राजनीतिक आकांक्षाओंकी पूर्ति करना ही इन दोनो संगठनोंका मूल ध्येय रहा है। इन्होने भूमि-कर सम्बन्धी नीति और प्रशासनमें सुधारकी बराबर माँग की है। इन दोनो संगठनोकी बराबर माँग रही है कि खेतिहरोको कर्जसे राहत देनेके लिए कदम उठाये जायें, सिंचाई सम्बन्धी निर्माण-कार्योमें तेजी लाई जाये, औद्योगिक विकास और तकनीकी शिक्षाके बारेमें सक्रिय नीति अपनाई जाये, सभी क्षेत्रोमें शिक्षाका व्यापक प्रसार किया जाये, सरकारी खर्चमें कटौती और करोमें कमी की जाये जिनका सबसे ज्यादा दबाव उनपर पडता है जो उसका भार उठानेमें सबसे कम समर्थ हैं, पुलिस और

न्यायप्रशासनमे सुधार हो; नशाबन्दी कानूनोमें सुधार हो; वन-नियमोमें कानूनकी सख्ती कम की जाये; सार्वजनिक स्वास्थ्यमे उन्नति और चिकित्सा आदिकी समुचित व्यवस्था की जाये; गाँव-पंचायतोको फिरसे स्थापित किया जाये। ये सारी माँगे ऐसी है जिनका उद्देश्य और ध्येय हमारे लाखो-करोड़ो गरीब देशवासियोकी जिन्दगीको सुखी बनाना है। उनकी वर्तमान दशासे कोई भी सन्तुष्ट होनेका दावा नही कर सकता। हम बिना किसी संकोचके निवेदन करते है कि इन सुधारोके लिए शिक्षित भारतीय प्रयत्नशील रहे है, और इनके अबतक लागू न किये जानेमे दोष उनका नही है। यह सच है कि वे जो अधिकार, उनके अपने देशमें उन्हे न्यायत प्राप्त होने ही चाहिए, उनकी व्यावहारिक मान्यताकी माँग उत्साहके साथ करते रहे है; किन्तु ऐसी माँगके पीछे अपने अपेक्षाकृत कम खुशनसीब देशभाइयोका हित-साधन करनेकी उनकी हार्दिक इच्छा का जितना हाथ है, उतना ही हाथ उनकी राष्ट्रीय आत्माभिमानकी भावनाका भी है। यदि देशके शासनमे जनताके प्रतिनिधि और प्रवक्ताकी हैसियतसे उन्होने बराबर थोडी-बहुत वास्तविक सत्ता प्रदान किये जानेका आग्रह किया है, यदि उन्होने प्रशासनमे मातहती और घटिया ढगका दर्जा स्वीकार करनेसे इनकार कर दिया है, यदि उन्होने जाति या धर्मपर आधारित सारे भेदभाव और अयोग्यताओंको हटानेका आग्रह किया है, देशकी सुरक्षाकी जिम्मेदारीमें उन्हे जितना हिस्सा दिया गया है यदि उसके प्रति उन्होने असन्तोष व्यक्त किया है, और यदि उन्होने प्रतिक्रियावादी और दमनकारी कानूनोके विरुद्ध रोष प्रकट किया है, तो ऐसा केवल इसलिए कि भारतीय होनेके नाते अपने अधिकारोकी माँग करना उनके लिए एक अत्यन्त महत्त्वपूर्ण सार्वजनिक कर्त्तव्य है। समय-समयपर सरकारने जो प्रगतिशील कदम उठाये है उनके महत्त्वको स्वीकार करनेमें राष्ट्रीय काग्रेस या मुस्लिम लीगने कभी देर नही की है। और इसीलिए हम नि.सकोच यह कहनेकी अनुमति चाहेंगे कि वर्षोके अनुभवके बाद हमारा यह निश्चित मत है कि वर्तमान शासन-प्रणालीके अन्तर्गत जनताकी खुशहाली और प्रगतिके लिए जितना जरूरी है उसे देखते हुए केवल सामाजिक और आर्थिक सुधारोसे कुछ नही बनेगा। भारतीय जनमत बहुत ही शक्तिहीन है। नौकरी-सम्बन्धी और क्षेत्रीय हितोके सामने सारे देशके हित को कम महत्त्व दिया जाता है। इस प्रणालीमें ऐसा परिवर्तन किया जाना चाहिए कि आन्तरिक शासन-व्यवस्थामे जिस हदतक सम्भव हो उस हदतक जनताकी इच्छा ही सर्वोपरि रहे।

योजनाकी मुख्य-मुख्य बातें

महानुभाव, अपने इसी दृढ विश्वासके अधीन राष्ट्रीय काग्रेस और मुस्लिम लीगने उन संवैधानिक और प्रशासनिक सुधारोंपर विचार किया जिसे यहाँ तथा इग्लैंडकी सरकारसे स्वीकार करनेका निवेदन हम करना चाहते है। सुधारोकी यह सयुक्त योजना इन दोनों सगठनोंकी समितियोंकी संयुक्त बैठकोंमें होनेवाले गम्भीर विचार-विनिमयका परिणाम है। यहाँ हम निवेदन कर दें कि वाइसराय महोदयकी विधान परिषद्के उन्नीस निर्वाचित सदस्योने १९१६ की शरद ऋतुमे जो प्रार्थनापत्र दिया था वह काग्रेस और लीगके सयुक्त प्रस्तावोसे मिलता हुआ है। अब हम इस सुधार-योजनाके मुख्य पहलुओंकी

चर्चा करनेकी अनुमति लेते है। ये जिन बुनियादी सिद्धान्तोपर आधारित हैं वे हैं, पहला, भारतके साथ ब्रिटेनके सम्बन्धोकी रक्षाकी जानी चाहिए, और दूसरा, कि इस मूलभूत सिद्धान्तकी सीमामें रहते हुए, भारत सरकार और प्रान्तीय सरकारोके स्वरूप और सविधानमें परिवर्तन करके निर्वाचित सरकारोका रूप दिया जाये जो जनताके प्रति उत्तरदायी हो, और जनता अपना शासन अपने चुने हुए प्रतिनिधियोके जरिए करे। ब्रिटेन और भारतके सम्बन्ध सुरक्षित रखनेकी दृष्टिसे हमारा सुझाव है कि भारत सरकार विदेशी मामलो और देशकी रक्षाके मामलेमें सम्राट्की सरकार और उनके जरिए ब्रिटिश ससदके प्रति उत्तरदायी रहे। शाही विधान परिषद्को इन दो प्रश्नोंपर कोई अधिकार नही होगा और न ही उसे देशी रियासतो और सरकारके सम्बन्धोंमें हस्तक्षेप करनेका अधिकार होगा। इतनी बात निश्चित हो जानेके बाद, हमारा अनुरोध है कि आन्तरिक मामलोंमें नियन्त्रणका अधिकार भारत मन्त्रीकी जगह भारतीय विधान-मण्डलके हाथोंमें दे दिया जाये। भारत सरकार भी इसी प्रकार प्रान्तीय सरकारोको सत्ता प्रदान कर दे, और ये सरकार अपने प्रान्तके विधान-मण्डलके प्रति उत्तरदायी हो। स्पष्ट ही है कि ऐसी व्यवस्थामें कार्यपालिकामें बहुत अधिक सख्यामें भारतीय नियुक्त हो। विभिन्न मन्त्रिमण्डलो और विधान-मण्डलोकी सदस्य सख्या बढा दी जाये और उनका गठन इस प्रकार हो कि उनमें बहुत बडा बहुमत जनता द्वारा प्रत्यक्ष रूपसे निर्वाचित सदस्योका हो और जहाँतक सम्भव हो, ज्यादासे-ज्यादा लोगोंको चुनाव में मतदानका अधिकार दिया जाये। इन विधान-मण्डलोको न केवल कानून-निर्माण बल्कि वित्त और प्रशासनके मामलेमें भी वास्तविक और ठोस सत्ता प्रदान की जाये। काग्रेस और मुस्लिम लीगका प्रस्ताव है कि कार्य-कारिणीमें आधे सदस्य भारतीय हो, और विधान-मण्डलोके ८० प्रतिशत सदस्य जनता द्वारा चुने हुए हो। हमारी दृष्टिमें यह प्रस्ताव बिलकुल मुनासिब है। इसी प्रकार विधान-मण्डलोंको जितनी सत्ता देनेका सुझाव है वह भी बहुत ज्यादा नही है, वह व्यावहारिक है। विधि विषयक, वित्तीय अथवा प्रशासनिक मामलोंके बारेमें कोई अनुपयुक्त या जल्दबाजीमें तैयार किया गया विधेयक पास न किया जाये, उक्त सुधार-योजनामें उसकी समुचित रोकथामका पर्याप्त प्रबन्ध कर दिया गया है। अल्पसख्यकोके हितोकी रक्षाकी भी समुचित व्यवस्था की गई है। अल्पसख्यकोके बारेमें हम आपका ध्यान उक्त योजनाकी इस व्यवस्थाकी ओर आकर्षित करना चाहेगें जिसके अनु-सार साम्प्रदायिक हितोको प्रभावित करनेवाले किसी भी गैर-सरकारी प्रस्तावपर यदि सम्बन्धित सम्प्रदायके तीन-चौथाई सदस्य आपत्ति करेंगे तो उस प्रस्तावपर किसी भी विधान-मण्डलमें विचार नही किया जायेगा।

भारत-मन्त्री और उसकी कार्यकारिणी परिषद्से सम्बन्धित जो सुधार प्रस्तावित किये गये हैं वे स्वय भारतकी शासन-प्रणालीमें प्रस्तावित सुधारके परिणाम है। हमारा विश्वास है कि उनके कारण काम-काजके सुचारु सचालनमें फर्क पडे बिना बहुत-सा अनावश्यक खर्च बचेगा, और दोनो देशोंकी सरकारोंमें सामजस्यकी स्थापना होगी।

उक्त प्रस्तावोंके समर्थनमें इस अभिनन्दनपत्रके साथ हम जो प्रार्थनापत्र आपकी सेवामें प्रस्तुत कर रहे हैं, उसमें सुधारकी आवश्यकता विस्तारपूर्वक निवेदित की गई

है। उसमें एक महत्त्वपूर्ण और सजातीय विषय, स्वायत्त शासन, तथा प्रशासनमे कुछ तात्कालिक सुधारोके बारेमे भी चर्चा की गई है। इन दोनोके लिए काग्रेस और लीग बहुत समयसे सरकारसे प्रार्थना करते रहे हैं। काग्रेस और मुस्लिम लीगके प्रस्ताव, सुधारकी सयुक्त योजना तथा उन्नीस सदस्योका प्रार्थनापत्र, सदर्भकी सहूलियतके लिए हमारे प्रार्थनापत्रके साथ नत्थी कर दिये गये है। हम आशा करते है कि वास्तविक स्वायत्त शासनकी जिस योजनाका लॉर्ड रिपनने स्वप्न देखा था उसके कार्यान्वित किये जानेके लिए और अधिक प्रतीक्षा नही करनी पडेगी। लोक-सेवाका भारतीयकरण करानेके लिए हमारे श्रद्धेय देशवासी, स्वर्गीय दादाभाई नौरोजीने दीर्घकालतक कठिन प्रयत्न किया था। हमे आशा है वह भी काफी हदतक जल्दी ही किया जायेगा। न्याय-सेवको और न्यायपालिका सम्बन्धी कार्योको भी जल्दी ही कार्यपालिकासे बिलकुल पृथक् किया जाना चाहिए। यह सुधार प्रबुद्ध-वर्गके हितोकी अपेक्षा साधारण जनताके हितोकी दृष्टिसे अत्यन्त आवश्यक है। हमे आशा है कि शस्त्रास्त्र अधिनियम और नियमो [आर्म्स ऐक्ट ऐंड रूल्ज] में इस प्रकार सशोधन किया जायेगा कि उसमे से न केवल भारतीयोके विरुद्ध जातीय भेदभावका चिह्न मिट जाये बल्कि उसमें भारतीयोको यह अधिकार भी रहे कि वे कुछ शर्तोपर शस्त्रास्त्र रख सके या लेकर चल सके, और ये शर्तें वैसी ही हो जैसी कि अन्य सभ्य देशोमे, स्वय भारतकी ही अधिकाश रियासतोमें, और ब्रिटिश भारतमें अमरीकियो और अग्रेजोके मामलेमे प्रचलित हैं। फौजमे भारतीयोपर आयुक्त अधिकारी [कमीशड अफसर] न हो सकनेका जो प्रतिबन्ध था उसके हटाये जानेपर भारतवासी अपनी कृतज्ञता प्रकट कर ही चुके हैं। देशको आशा है कि उनकी भरतीके नियम उदार होगे, और योग्यता-सम्बन्धी परीक्षामे सफल होनेवाले सभी वर्गोके नौजवानोके लिए सम्मानजनक और देशानुरागपूर्ण आजीविकाका रास्ता खोल दिया जायेगा। यह भी आशा है कि उनके प्रशिक्षण और परीक्षाकी आवश्यक सुविधाएँ भारतमें ही उपलब्ध की जायेंगी और काफी बडी सख्यामें भारतीयोको नियुक्त किया जायेगा। भारतीयोको स्वयसेवकोकी हैसियतसे भरती होनेकी अनुमति नही है, यह एक काफी पुरानी शिकायत है। किन्तु स्वयंसेवकके रूपमें अपनी सेवाएँ अर्पित करनेकी जो प्रणाली अभीतक जारी रही है, वह समाप्त करनेका विचार हो, तो वैसी स्थितिमे हमारा विश्वास है कि युद्धके बाद भारतीय प्रतिरक्षा सेना [इंडियन डिफेंस फोर्स] को विघटित नही किया जायेगा, और यह अनुरोध है कि उसके भारतीय दस्तोको यूरोपीय दस्तोके साथ बिलकुल बराबरीका दर्जा प्रदान किया जाये।

साम्राज्यमें भारतका दर्जा

महानुभाव, अपनी बात समाप्त करनेसे पहले, हम आपका ध्यान जिस अत्यन्त महत्त्वपूर्ण बातकी ओर दिलायेंगे वह है साम्राज्यमे भारतका दर्जा। एक शब्दमे कहे तो हमारी माँग यह है कि उसे अधीनताके स्तरसे उठाकर अन्य डोमिनियनोके साथ बराबरीका दर्जा दिया जाये। इनके बीच वास्तविक और पूर्ण अर्थोमे पारस्परिक सम्बन्ध होने चाहिए। हमारा निवेदन है कि यदि अन्य डोमिनियनोको भारतसे सम्बन्धित मामलोमे कुछ अधिकार

वरतने दिये जायें तो भारतको उनके मामलेमें वे ही अधिकार होने चाहिए। यदि कभी भविष्यमें कोई साम्राज्यीय परिषद् या ससद स्थापित की जाये तो उसमे भारतको अन्य डोमिनियनोके समान ही और वरावरका प्रतिनिधित्व मिलना चाहिए। जबतक ऐसा नही किया जाता, तवतक हमारे देशके शासनमें अन्य डोमिनियनोका भाग लेना, सो भी तव जवकि भारतको उनके यहांके शासनमें भाग लेनेका वैसा कोई अधिकार नही है, हमारे मौजूदा असन्तोषजनक दर्जेको और भी नीचे गिरानेके समान होगा जिससे इस देशमें वहुत जवरदस्त विरोध उत्पन्न होगा। हमें आशा और विश्वास है कि सम्राट्की सरकार ऐसे किसी प्रस्तावको स्वीकार नही करेगी। और फिलहाल हमारी प्रार्थना है कि भारतको साम्राज्यीय सम्मेलनमें (और यदि कोई साम्राज्यीय मन्त्रि-मण्डल स्थापित किया जाये तो उसमें भी) हमारे विधान-मण्डलोके निर्वाचित सदस्यो द्वारा चुने गये अपने प्रतिनिधि भेजनेकी अनुमति दी जाये। इस वर्षके आरम्भमें इंग्लैंडमें होनेवाली साम्राज्यीय युद्ध-परिषद् और साम्राज्यीय युद्ध मन्त्रि-मण्डलकी वैठकोमें भाग लेनेके लिए भारतकी ओरसे तीन व्यक्तियोंको भेजकर भारतको जो सम्मान प्रदान किया गया था उसके लिए हम सम्राट्की सरकार और भारत सरकारके अत्यन्त कृतज्ञ हैं। उक्त युद्ध परिषद् द्वारा सर्व-सम्मतिसे स्वीकार किये गये उस प्रस्तावकी भी हम वहुत कद्र करते हैं जिसमें साम्रा-ज्यीय परिषद्की भावी साधारण वैठकोमें भारतको नियमित रूपसे अपना प्रतिनिधि भेजनेका सुझाव दिया गया था। एक ओर सम्राट्की सरकारके साथ और दूसरी ओर भारतकी जनताके साथ अपने सम्वन्धोमें भारत सरकारकी जो मौजूदा सवैधानिक स्थिति है उसमें भारत सरकार द्वारा नामजद किये गये व्यक्तिका दर्जा जनताके प्रतिनिधि अथवा जनताके प्रवक्ताका नहीं हो सकता, जैसा कि उत्तरदायी शासन प्राप्त डोमिनियनोके मंत्रियोका होता है। इस मामलेमें हम खेदपूर्वक यह निवेदन करनेको विवश हैं कि मौजूदा प्रणालीसे लेकर उत्तरदायी सरकारकी स्थापना तकके सक्रमण कालमें इस वातकी अनुमति दी जाये कि साम्राज्यीय परिषद् और साम्राज्यीय मन्त्रि-मण्डलमें भारतके विधानमण्डलोंके निर्वाचित सदस्यो द्वारा चुने गये व्यक्तियोको ही इस देशका प्रतिनिधि वनाकर भेजा जाये।

[अंग्रेजीसे]

लीडर, २८-११-१९१७

परिशिष्ट २

कांग्रेस-लीग योजना

(क) इस तथ्यको देखते हुए कि भारतकी महान् जातियाँ अत्यन्त प्राचीन सभ्यताओंकी वारिस हैं और उन्होंने शासन चलाने तथा प्रशासन करनेकी जबरदस्त क्षमता प्रदर्शित की है, और पिछले सौ सालके ब्रिटिश शासनमें उन्होंने शिक्षा तथा राजनैतिक चेतनाकी दृष्टिसे बहुत प्रगति की है, और साथ ही इस तथ्यको भी देखते हुए कि वर्तमान शासन-प्रणाली इस देशकी जनताकी उचित आकांक्षाओंको पूरा करनेमें असमर्थ है तथा मौजूदा स्थितियों और आवश्यकताओंमें अनुपयुक्त सिद्ध हो चुकी है; कांग्रेसका यह मत है कि अब समय आ गया है जब महामहिम सम्राट्को कृपापूर्वक इस आशयकी घोषणा कर देनी चाहिए कि ब्रिटिश सरकारकी नीति और उद्देश्य निकट भविष्यमें भारतको स्वशासन प्रदान करना है।

(ख) उसे यह घोषणा भी कर देनी चाहिए कि साम्राज्यका पुनर्गठन करते समय अखिल भारतीय कांग्रेस कमेटीने ऑल इंडिया मुस्लिम लीग द्वारा नियुक्त की गई सुधार-समितिके सहयोगसे सुधारोंकी जो योजना (जिसे आगे सविस्तार दिया जा रहा है) प्रस्तुत की है उसे स्वीकार करके भारतको स्वशासनकी दिशामें बढ़ाया जायेगा।

(ग) और यह भी कि साम्राज्यका पुनर्गठन होनेपर भारतको परतन्त्रताकी स्थितिसे उठाकर साम्राज्यके अन्य स्वशासित डोमिनियनों जैसा दर्जा प्रदान किया जायेगा।

सुधार-योजना

१ – प्रान्तीय विधान परिषद्

१. प्रान्तीय विधान परिषदोंमें ८० प्रतिशत निर्वाचित और २० प्रतिशत नामजद सदस्य होंगे।

२. बड़े प्रान्तोंमें सदस्योंकी संख्या कमसे-कम १२५ और छोटे प्रान्तोंमें ५० से लेकर ७५ होगी।

३. विधान परिषदोंके सदस्य यथासम्भव व्यापकतम मताधिकारके आधारपर सीधे जनता द्वारा निर्वाचित होंगे।

४ महत्त्वपूर्ण अल्पसंख्यक जातियोंको चुनावके जरिये प्रतिनिधित्व प्रदान करनेकी समुचित व्यवस्था होगी। प्रान्तीय विधान परिषदोंमें मुसलमानोंको विशेष निर्वाचकोंके जरिये निम्नलिखित अनुपातमें प्रतिनिधित्व मिलना चाहिए —

पंजाब — निर्वाचित भारतीय सदस्योंका	५० प्रतिशत
संयुक्त प्रान्त — ,, ,,	३० प्रतिशत
बंगाल — ,, ,,	४० प्रतिशत

विहार —	,,	,,	२५ प्रतिशत
मध्य प्रान्त —	,,	,,	१५ प्रतिशत
मद्रास —	,,	,,	१५ प्रतिशत
वम्बई —	,,	,,	३३ प्रतिशत

वशर्ते कि विशेष हितोका प्रतिनिधित्व करनेवाले निर्वाचको द्वारा होनेवाले चुनावोके अतिरिक्त शाही या प्रान्तीय विधान परिषदोके अन्य किसी चुनावमें कोई मुसलमान भाग नही लेगा।

और वशर्ते कि किसी जाति या सम्प्रदायको प्रभावित करनेवाले किसी विधेयक या उसकी किसी धारा, अथवा किसी गैर-सरकारी सदस्य द्वारा प्रस्तुत किये गये किसी प्रस्ताव पर, शाही या प्रान्तीय विधान परिषद्में जहाँ उक्त विधेयक या प्रस्ताव पेश किया गया हो, उस सम्प्रदायके तीन-चौथाई सदस्यो द्वारा विरोध किये जानेकी दशामे विचार नही किया जायेगा। ये किसी सम्प्रदायको प्रभावित करते है या नही, इसका निर्णय उस सम्प्रदायके सदस्य ही करेंगे।

५ प्रान्तीय सरकारके प्रधानको विधान परिषद्का सभापति नही होना चाहिए, वल्कि विधान परिषद्को अपना सभापति चुननेका अधिकार होना चाहिए।

६ पूरक प्रश्न पूछनेका अधिकार उसी सदस्यतक सीमित नही होना चाहिए जिसने मूल प्रश्न पूछा है, किसी भी अन्य सदस्यको पूरक प्रश्न करनेकी अनुमति होनी चाहिए।

७ (क) चुगी, डाक, तार, टकसाल, नमक, अफीम, रेलवे, स्थल-सेना और नौसेना तथा भारतीय रजवाडोसे प्राप्त होनेवाले नजरानोको छोडकर राजस्वके सभी साधनोपर प्रान्तीय सरकारोका अधिकार होना चाहिए।

(ख) राजस्वकी मदें अलग-अलग नही होनी चाहिए। भारत सरकारको विभिन्न प्रान्तोसे होनेवाले धनके अशदानकी राशि नियत कर दी जानी चाहिए। असाधारण तथा अप्रत्याशित स्थिति होनेपर उक्त नियत राशिका पुनर्निर्धारण आवश्यक होनेकी स्थितिमें अशदानकी राशि वढायी जा सकेगी।

(ग) प्रान्तीय विधान परिषद्को प्रान्तके आन्तरिक प्रशासन सम्बन्धी मामलोमें पूरी सत्ता होनी चाहिए। इनमें ऋण लेने, कर लगाने या कर-पद्धतिमें परिवर्तन करने तथा वजटपर वोट देनेकी सत्ता शामिल होगी। खर्चके सारे मुद्दे और आवश्यक राजस्व प्राप्त करनेके साधनो और तरीकोसे सम्बन्धित सभी प्रस्तावोको विधेयककी शकलमें नियोजित करके स्वीकृतिके लिए विधान परिषद्में प्रस्तुत किया जाना चाहिए।

(घ) प्रान्तीय सरकारके अधिकार-क्षेत्रमें आनेवाले सभी मामलोपर विचार करनेके लिए प्रस्ताव रखने और उनपर बहस करनेकी अनुमति होनी चाहिए। प्रस्ताव और वहस सम्बन्धी नियमोकी रचना विधान परिषद् स्वय करे।

(ङ) प्रान्तीय विधान परिषद् द्वारा पास किया गया कोई प्रस्ताव प्रान्तीय कार्यपालिकाके लिए वाध्यकारी होगा, वशर्ते कि सपरिषद्-गवर्नर उसे निषिद्ध न कर दें। किन्तु, कमसे-कम एक वर्षकी अवधि वीत जानेके वाद वही प्रस्ताव विधान परिषद् फिर पास कर दे, तो उसे कार्यरूप देना अनिवार्य होगा।

(च) किसी तात्कालिक महत्त्वके सार्वजनिक प्रश्नपर विचार करनेकी गरजसे कार्य-स्थगन प्रस्ताव पेश किया जा सकेगा, बशर्ते कि सदनमे उपस्थित सदस्योमे से कमसे-कम $\frac{1}{8}$ सदस्य उसके पक्षमे हो।

८ उपस्थित सदस्योमें से कमसे-कम $\frac{1}{8}$ सदस्योकी माँगपर प्रान्तीय विधान परिषद्की विशेष बैठक बुलाई जा सकेगी।

९ स्वय विधान परिषद् द्वारा रचे गये नियमोके अनुसार वित्त विधेयकको छोड़कर अन्य कोई भी विधेयक विधान परिषद्मे पेश किया जा सकेगा, और इसके लिए सरकारकी सहमति लेना जरूरी नही होगा।

१०. प्रान्तीय विधान परिषद् द्वारा पास किये गये सभी विधेयक गवर्नरकी स्वीकृति मिलनेके बाद ही कानून बन सकेंगे, लेकिन गवर्नर-जनरल यदि चाहे तो उनको निषिद्ध कर सकता है।

११. सदस्योका कार्यकाल पाँच वर्ष होगा।

२ – प्रान्तीय सरकारें

१ प्रत्येक प्रान्तीय सरकारका प्रधान एक गवर्नर होगा जो सामान्यत भारतीय सिविल सर्विस या अन्य किसी स्थायी सेवाका सदस्य नही होगा।

२. प्रत्येक प्रान्तमे एक कार्यकारिणी परिषद् होगी जो गवर्नर सहित, प्रान्तकी कार्यपालिका सरकार होगी।

३ सामान्यत भारतीय सिविल सर्विसके सदस्योको कार्यकारिणी परिषद्मे नियुक्त नही किया जायेगा।

४. कार्यकारिणी परिषद्के कमसे-कम आधे सदस्य भारतीय होगे जिनका चुनाव प्रान्तीय विधान परिषद्के निर्वाचित सदस्य करेंगे।

५. सदस्यताकी अवधि पाँच वर्ष होगी।

३ – शाही विधान परिषद्

१. शाही विधान परिषद्के सदस्योकी संख्या १५० होगी।

२. ८० प्रतिशत सदस्य निर्वाचित सदस्य होगे।

३. शाही विधान परिषद्के लिए, प्रान्तीय विधान परिषदोमे मुसलमानोके लिए मताधिकारकी जो व्यवस्था है उसीके अनुसार, यथासम्भव अधिकसे-अधिक लोगोको मताधिकार प्रदान किया जायेगा और प्रान्तीय विधान परिषदोको भी शाही विधान परिषद्के कुछ सदस्य चुननेका अधिकार होगा।

४. निर्वाचित सदस्योमे से एक तिहाई सदस्य मुसलमान होगे जिन्हे, विभिन्न प्रान्तीय विधान परिषदोमे पृथक् मुसलमान मतदाताओ द्वारा चुने गये मुसलमान सदस्योकी सख्याका जो अनुपात है, यथासम्भव उसी अनुपातमे विभिन्न प्रान्तोके पृथक मुसलमान मतदाताओ द्वारा चुना जायेगा। देखिए खण्ड १, धारा ४ की अवधान धाराएँ।

५ विधान परिषद्के सभापतिका चुनाव विधान परिषद् स्वय करेगी।

६ पूरक प्रश्न पूछनेका अधिकार मूल प्रश्नकर्त्ता तक सीमित न रहकर प्रत्येक सदस्यको होगा।

७ कुल सदस्य सख्याके कमसे-कम $\frac{1}{4}$ की माँगपर विधान परिषद्की विशेष बैठक बुलाई जा सकेगी।

८ किसी वित्त विधेयकको छोडकर अन्य कोई भी विधेयक विधान परिषद् द्वारा बनाये गये तत्सम्बन्धित नियमोके अनुसार विधान परिषद्में पेश किया जा सकेगा, और उसके लिए कार्यपालिका-सरकारकी सहमति लेना जरूरी नही होगा।

९. विधान परिषद् द्वारा पास किये सभी विधेयकोको कानून बननेसे पहले गवर्नर जनरलकी स्वीकृति मिलना जरूरी होगा।

१० आयके साधनो और खर्चके मुद्दोसे सम्बन्धित सभी वित्तीय प्रस्तावोको एक विधेयकके रूपमें प्रस्तुत किया जायेगा। ऐसा प्रत्येक विधेयक तथा बजट वोटके लिए शाही विधान परिषद्के सामने पेश किया जायेगा।

११ सदस्योका कार्यकाल पाँच वर्षका होगा।

१२ निम्नलिखित विषयोपर शाही विधान परिषद्का अनन्य नियन्त्रण होगा

(क) ऐसे मामले जिनमें सारे भारतके लिए एक समान कानून होना अपेक्षित है।

(ख) जिस हदतक कोई प्रान्तीय कानून आन्तरप्रान्तीय आर्थिक सम्बन्धोको प्रभावित करता हो।

(ग) भारतीय रजवाडोंसे मिलनेवाले नजरानोको छोडकर उन सभी प्रश्नोपर जिनका सम्बन्ध केवल केन्द्रीय राजस्वसे है।

(घ) उन सभी प्रश्नोपर जिनका सम्बन्ध केवल केन्द्रीय सरकारके खर्चसे है, लेकिन देशकी सुरक्षाके लिए सैनिक व्ययके सम्बन्धमें शाही विधान परिषद् द्वारा पास किया गया कोई प्रस्ताव सपरिषद्-गवर्नर जनरलके लिए बाध्यकारी नही होगा।

(ङ) जो विषय चुगी-शुल्क और चुगीमें परिवर्तन करने, कोई कर अथवा उपकर लगाने, परिवर्तन करने या हटाने, मुद्रा और बैंकिंगकी मौजूदा प्रणालीमें सुधार करने तथा देशके सभी उपयुक्त और नवोदित उद्योगोको आर्थिक सहायता या पुरस्कार देनेसे सम्बन्धित हैं।

(च) जो समस्त देशके सभी प्रशासनिक मामलोके विषयमें प्रस्तावसे सम्बन्धित हैं।

१३ सपरिषद्-गवर्नर जनरल यदि निषिद्ध न कर दें, तो विधान परिषद् द्वारा पास किया कोई भी प्रस्ताव कार्यपालिका सरकारके लिए बाध्यकारी होगा, किन्तु निषिद्ध कर दिये जानेपर यदि वही प्रस्ताव कमसे-कम एक वर्षकी अवधि बीत जानेपर विधान परिषद् फिर पास कर दे तो उसे कार्यान्वित करना अनिवार्य होगा।

१४ यदि कुल उपस्थित सदस्योमें से $\frac{1}{4}$ सदस्य समर्थन करे तो तात्कालिक महत्त्वके किसी निश्चित सार्वजनिक प्रश्नपर विचार करनेके लिए स्थगनका प्रस्ताव लाया जा सकेगा।

१५. यदि किसी प्रान्तीय विधान परिषद् या शाही विधान परिषद् द्वारा पास किये गये किसी विधेयकपर सम्राट् अपना निषेधाधिकार प्रयुक्त करना चाहे तो इस अधिकारका प्रयोग विधेयक पास होनेकी तारीखसे बारह महीनेके भीतर किया जाना चाहिए, और सम्बन्धित विधान परिषद्को जिस दिन इस निषेधाज्ञाकी सूचना मिलेगी उसी दिनसे उक्त विधेयक प्रभावहीन हो जायेगा।

१६ भारत-सरकार द्वारा सैनिक मामलोके, तथा भारतके वैदेशिक और राजनीतिक मामलोके सचालनमे, जिसमें युद्ध घोषित करने, शान्ति घोषित करने और सन्धि करनेका अधिकार शामिल होगा, शाही विधान परिषद्को हस्तक्षेप करनेकी सत्ता नही होगी।

४ – भारत-सरकार

१ गवर्नर जनरल भारत-सरकारका प्रधान होगा।

२. उसकी एक कार्यकारिणी परिषद् होगी, जिसके आधे सदस्य भारतीय होगे।

३ परिषद्के भारतीयोका चुनाव केन्द्रीय विधान परिषद्के निर्वाचित सदस्य करेगे।

४. साधारणतया भारतीय सिविल सर्विसके सदस्योको गवर्नर जनरलकी कार्यकारिणी परिषद्में नियुक्त नही किया जायेगा।

५ केन्द्रीय नागरिक सेवाओमे सारी नियुक्तियाँ करनेका अधिकार इस योजनाके अनुसार स्थापित होनेवाली भारतीय सरकारको होगा, लेकिन शाही विधान परिषद् द्वारा बनाये गये किन्ही कानूनोके भीतर रहते हुए मौजूदा हितोका ऐसी नियुक्तियोमें ध्यान रखा जायेगा।

६. भारत-सरकार साधारणतया किसी प्रान्तके आन्तरिक मामलोमें हस्तक्षेप नही करेगी। जो अधिकार विशिष्ट रूपसे प्रान्तीय सरकारोको न दिये गये हो वे भारत-सरकारमे निहित माने जायेगे। भारत-सरकारकी सत्ता साधारणतया प्रान्तीय सरकारोके ऊपर सर्वसामान्य निरीक्षण और देखभाल रखने तक सीमित होगी।

७ विधि-निर्माण और प्रशासनके मामलोमे इस योजनाके अनुसार स्थापित होनेवाली भारत-सरकार भारत मन्त्रीके हस्तक्षेपसे यथासम्भव मुक्त होगी।

८ भारत-सरकारके आय-व्यय लेखा-परीक्षाकी एक स्वतन्त्र पद्धति स्थापित की जाये।

५ – सपरिषद्–भारत मन्त्री

१ भारत मन्त्रीकी कार्यकारिणी परिषद् समाप्त कर दी जाये।

२ भारत मन्त्रीका वेतन ब्रिटेनकी सरकार द्वारा दिया जाना चाहिए।

३ भारत मन्त्रीका भारत-सरकारके मामलेमे वही दर्जा और अधिकार हो जो स्वशासित डोमिनियनोकी सरकारोके मामलेमे उपनिवेश मन्त्रीको प्राप्त है।

४. भारत मन्त्रीकी सहायताके लिए दो स्थायी अवर सचिव [अन्डर सेक्रेटरी] होने चाहिए। जिनमें से एक सदैव भारतमे रहे।

६ – भारत और साम्राज्य

१. साम्राज्यीय प्रश्नोंका निबटारा या नियन्त्रण करनेके लिए यदि किसी परिषद् या संगठनकी रचना की जाये तो उसमें भारतको अन्य डोमिनियनोंके साथ बराबरीके दर्जे-पर और समान अधिकारोंके साथ समुचित प्रतिनिधित्व दिया जाये।

२. पूरे साम्राज्यके अन्दर महामहिम सम्राट्के अन्य प्रजाजनोंको जो दर्जा और नागरिकताके अधिकार प्राप्त हैं वही दर्जा और नागरिकताके अधिकार भारतीयोंको प्रदान किये जायें।

७ – सेना-विषयक तथा अन्य मामले

१. महामहिम सम्राट्की सेना और नौ-सेनामें कमीशन-युक्त और गैरकमीशन-युक्त सभी पदोंपर भारतीयोंको नियुक्त होनेका अवसर प्रदान किया जाये, तथा उनके चुनाव, प्रशिक्षण तथा शिक्षा आदिकी भारतमें समुचित व्यवस्था की जाये।

२. भारतीयोंको सेनामें स्वयंसेवकके रूपमें भरती होनेकी अनुमति दी जाये।

३. भारतमें कार्यपालक अधिकारियोंको न्याय-विषयक अधिकार नहीं दिये जायेंगे, और प्रत्येक प्रान्तकी न्यायपालिका उस प्रान्तकी सर्वोच्च अदालतके अधीन रहेगी।

[अंग्रेजीसे]

हिस्ट्री ऑफ द इंडियन नेशनल कांग्रेस, खण्ड १

परिशिष्ट ३

एल० एफ० मॉर्सहैडको लिखे गये जे० टी० व्हिटीके पत्रका अंश

[बेतिया
नवम्बर १७, १९१७]

. . . यह तथ्य है कि रैयत श्री गांधीकी प्रतिष्ठाके बारेमें अतिरंजित विचार रखती है, परन्तु खासे प्रमाणोंके आधारपर मुझे मालूम हुआ है कि कुछ मामलोंमें उनके निर्देश रैयतको पसन्द नहीं आये और रैयतने उन मामलोंमें उनकी आज्ञा माननेसे इनकार कर दिया। उदाहरणार्थ मुझे बताया गया है कि तुरकौलिया देहातमें जब श्री गांधीने रैयतको २० प्रतिशत शरहबेशीसे, जिसपर वे राज़ी हुए थे, कम देनेकी सलाह दी तो उन्होंने साफ कह दिया कि हम ऐसा कोई काम नहीं करेंगे और वे अब कह रहे हैं कि "गांधी हैं कौन?"

दो दिन पहले श्री गांधीने मुझे सूचित करते हुए लिखा था[1] कि उनके पास रैयतकी तरफसे इस आशयके कई सवाल आये हैं कि जिन गाँवोंमें तावान लिया जा चुका है उनमें लगानकी बढ़ोतरीके मुकदमे क्यों चल रहे हैं; और जब कि सात बरससे लगानमें

१. यह उपलब्ध नहीं है।

कोई बढोतरी नही हुई है। मुझे ऐसा लगा कि इस पूछताछसे सामान्य स्थिति और तत्सम्बन्धी कानूनके ज्ञानका असाधारण अभाव प्रकट होता है। स्पष्ट ही हम अपने मुकदमे वापस नही लेगे क्योकि हम तो केवल सात सालकी बढोतरी अदा कर देना चाहते है और चाहते है कि इसका लेखा कानूनी लगानके रूपमे दर्ज हो जाये। और फिर हमारे पास अभीतक उन रैयतोकी कोई विश्वसनीय जानकारी नही है जिन्होने वास्तवमे तावान अदा कर दिया है।

मैंने श्री गाधीको जवाब दिया कि आपका खयाल गलत है। आपकी गलतफहमी दूर करनेमे मुझे प्रसन्नता होगी, आप मुझसे मिल ले, परन्तु साथ ही मै यह बता देना चाहता हूँ कि रैयतके लोग हमारे पास नही आये। मै उन मामलोमे, जिन्हे मै खुद निपटा सकता हूँ, किसी मध्यस्थका होना पसन्द नही करता।

उन्होन जवाबमें कहा कि मै समझ नही पाता कि सरकारी अफसर उन नेताओकी मदद लेनेसे इनकार क्यो करते है जो उनकी अपेक्षा रैयतके अधिक सम्पर्कमे है और उद्देश्य तो दोनोके कामोका एक ही है। उन्होने यह भी कहा कि वे आकर मुझे परेशान नही करना चाहते।

मैंने जवाब दिया कि जिस मामलेमे आप मेरे और मेरे काश्तकारोके बीचमें पडे है वह कोई उलझा हुआ मामला नही है। उसमें मुझे किसी बाहरी व्यक्तिकी मददकी जरूरत नही है। इसके सिवा यदि कोई मध्यस्थ बनकर काश्तकारोके साथ सीधे सम्पर्कमे आनेसे मुझे रोकता है तो मै यह बात पसन्द नही करता।

श्री गाधीने यह माननेसे इनकार किया कि उनका बीचमे पड़ना अनुचित है बल्कि उन्होने अपनी शिक्षा-नीतिके बारेमे मिलनेकी इच्छा व्यक्त की।

मै उनसे मिला और उनसे लम्बी बातचीत की और आयोगकी रिपोर्टमें उठाये गये अनेको मुद्दोपर विचार-विनिमय किया।

हमेशाकी तरह बातचीतमे मैंने उन्हे प्राय बहुत ही संगत पाया। उन्होने नीलकी खेती अचानक बन्द होनेपर खेद व्यक्त किया। उनका अपना विचार था कि कुछ और समय दिया जाना चाहिए था। उन्होने मुझे बताया कि लगान देनेसे इनकार करनेका कारण रैयतकी मूर्खता है। उसने आदेशोका गलत मतलब समझा। जब कभी वे मेरे पास आये तो मैंने उन्हे समझाया कि उन्हे लगान तो हमेशाकी तरह देना ही चाहिए। श्री गाधीने कहा कि अब वे अपनी अर्जित प्रतिष्ठाका उपयोग गाँवोमें सफाई और कृषिके तरीकोको बेहतर बनानेमे करना चाहते हैं। वे यथाशक्ति बागान-मालिको और उनके किसानोके सम्बन्ध सुधारना चाहते हैं।

उन्होने अपने साथियोका अमानके देहातमे कथित दगोके बारेमे पूछताछ करनेके लिए जाना सही माना। कहा जाता है कि इनमे पुलिसका हाथ था और यदि ऐसा है तो वे नि सन्देह रैयतके आमन्त्रणपर स्वय इसी प्रकारकी पूछताछ करनेको तैयार है।

मै अब भी मानता हूँ कि श्री गाधी स्वय उन बातोकी ओरसे उदासीन है जिन्हे वे अपना अन्तिम उद्देश्य मानते है। परन्तु अपनी प्रतिष्ठा बनाने और उसे मजबूत करनेके लिए वे अवश्य ही ऐसे तरीकोका इस्तेमाल करेगे जो आगे-पीछे जिलेकी शान्तिके लिए निश्चय ही खतरा उत्पन्न कर देगे।

लगानकी अदायगी न होने और जमींदारके सम्मत अधिकारोंमें हस्तक्षेपके सम्बन्धमें वे निश्चय ही कानूनका पालन किया जाना पसन्द करेंगे और रैयतको भी वैसी ही सलाह देंगे। इस सीमातक फिलहाल जिलेमें उनकी मौजूदगीसे कुछ नुकसानके बजाय लाभ ही होनेकी सम्भावना है। साथ ही वे आन्दोलनका केन्द्र-बिन्दु बने रहना चाहते हैं। उन्हें सभी पक्षोंके प्रति न्यायपूर्ण रहनेवाला मध्यस्थ माननेके बजाय बागान-मालिकोंके विरुद्ध रैयतका नेता माना जाता है और इसलिए यह सम्भव नहीं है कि उनको लेकर कोई बवंडर खड़ा न हो।

हृदयसे आपका,
जे० टी० ह्विटी

सिलैक्ट डॉक्यूमेंट्स ऑन महात्मा गांधीज मूवमेंट इन चम्पारन

परिशिष्ट ४

दफ्तरी पत्रव्यवहार और टिप्पणियोंके उद्धरण

(क) जे० एल० मैरीमैनका पत्र

मोतीहारी
नवम्बर १८, १९१७

प्रिय श्री गांधी,

आपका १४-११-१९१७ का पत्र मिला।

आप पाठशालाएँ खोलनेका प्रयत्न कर रहे हैं, यह जानकर मुझे खुशी हुई। अगर सूचित कर सकें कि आप किस ढंगकी पाठशालाएँ खोलना चाहते हैं और उनमें किस ढंगकी शिक्षा दी जायेगी तो अच्छा होगा। जहाँ शालाएँ खोलनी हैं उन जगहोंके नाम भी लिखें।

आपके इसी माहके १७ तारीखके पत्रमें, आपने कुछ काश्तकारोंकी इस शिकायतकी चर्चा की है कि उन्हें कतिपय कागजोंपर हस्ताक्षर करनेको विवश किया गया था . . . इस विषयमें, यदि उन्हें लगता है कि उनके साथ अन्याय हुआ है, तो वे अदालतमें जानेको स्वतन्त्र हैं।

मैं किसी भी ऐसे मामलेके बारेमें कोई ऐसी बात सुननेकी स्थितिमें नहीं हूँ जो अदालतके विचाराधीन हैं अथवा जो अदालतकी रायको किसी रूपमें प्रभावित कर सकती हो . . . इसलिए मुझे प्रसन्नता है कि शिवरतन नोनिया द्वारा दायर किये गये मुकदमेके बारेमें अपनी राय मुझे भेजनेका आपका इरादा नहीं है।

जे० एल० मैरीमैन

(ख) जे० एल० मैरीमैनका पत्र एल० एफ० मॉर्सहैडको

मोतीहारी
नवम्बर २४, १९१७

प्रिय श्री मॉर्सहैड,

मेरी पाक्षिक गोपनीय रिपोर्ट।

सामान्य स्थितिमें सुधार नही हुआ, बल्कि वह कुछ बिगडी ही है। मुझे यह रिपोर्ट देते हुए खेद होता है कि देशी भाषामे दी गई सरकारी विज्ञप्तिसे सरकारकी कठिनाइयाँ बढ गई मालूम पडती हैं।

८. . . . जान पड़ता है, श्री गाधीके लौटने तथा सरकारके इरादेकी घोषणासे उत्तेजना फिर बढ़ी है।

९ श्री गाधी पुन. हमारे बीच आ गये हैं, वैसे अभी-अभी मुझे उनका पत्र मिला है जिसमे उन्होने लिखा है कि वे १५ दिनके लिए बाहर जा रहे हैं। मैंने ९ नवम्बर, १९१७ को उनसे अपनी मुलाकातके बारेमे आपको सूचना दे दी थी। महीनेंके प्रारम्भमे यहाँ आनेके बादसे वे अत्यन्त सक्रिय है। उन्होने निम्नलिखित स्थानोमें स्कूल चलाने प्रारम्भ कर दिये हैं

(१) बरहरवा-ने-ढाका — श्री और श्रीमती गोखलेकी देखरेखमे। श्रीमती गोखले एक "प्रशिक्षित नर्स तथा दाई" है।

(२) मितीहरवा — श्री सोमण "बेलगाँवके एक सार्वजनिक कार्यकर्त्ता", श्री बालकृष्ण "गुजरातके एक नवयुवक" तथा स्वय श्रीमती गाधीकी देखरेखमे।

(३) बेलवा — पी० एस० शिकारपुर बेलवा कारखानेके पास।

मुझे कृपया हिदायत दी जाये कि श्री गाधी, उनके स्कूल तथा उनके स्वच्छता प्रचारके प्रति क्या रुख अपनाना है। उनके कार्यके स्वरूपके बारेमे इतमीनान किये बिना ही मैं उन्हे प्रोत्साहन दूँ अथवा तटस्थ रुख अपनाऊँ?

मैं अभी उनके द्वारा दी गई हिदायतो या उनके अनुयायियोके बारेमे कुछ नही कह सकता, क्योकि मैं उनके बारेमे कुछ जानता नही हूँ। जिस कामकी वे बात करते है यदि सचमुच उसमें उनकी दिलचस्पी है तो मेरी समझमे तो वे उससे, अर्थात् बिहारी किसानको स्वच्छताका पाठ पढानेसे बहुत जल्दी तग आ जायेंगे। श्री गाधी अपने स्कूलोके लिए चन्दा एकत्र करनेकी कोशिश कर रहे है, किन्तु इस सम्बन्धमे स्थानीय भारतीयोने बहुत कम उत्साह दिखाया है।

१०. इसी प्रकार निवेदन है कि श्री गाधीकी दूसरी गतिविधियोके प्रति क्या रुख अपनाया जाये, इस विषयमे भी मुझे सूचित कर दिया जाये। वे अपनेको स्वच्छता तथा शैक्षणिक मामलोतक ही सीमित नही रख रहे हैं। वे बेलवा (जिस स्थानपर उन्होने स्कूलकी स्थापना भी की है)मे शिवरतन नोनिया बनाम बेलवा कारखानेके श्री अमन द्वारा चलाये गये मामलेकी वैयक्तिक जांच कर रहे हैं। इसी सम्बन्धमें मैंने गत अक्तूबरकी २७ तारीखको अपने सरकारी पत्रमें बाबू जनकधारी प्रसादकी गतिविधियोकी खबर भेजी। उक्त मामलेमे जब कि न्यायालय अपना निर्णय दे चुका है, उन्होने मुझे अपने विचार

बतानेका इरादा जाहिर किया है। वे सिराहा-कारखानेकी रैयत द्वारा किये गये कुछ समझौतोके प्रश्नकी भी जाँच कर रहे हैं। मुझे श्री अमनसे मालूम हुआ कि बेलवामें श्री गाधीने अविकृत जाँच-पडताल की और वादियो तथा कुछ गवाहोके बयान लिये।

सार्वजनिक अधिकारीके नाते मैं समझता हूँ, कि यदि बाहरसे मित्रतापूर्ण सहायता मिले तो मुझे उसका स्वागत करना चाहिए। किन्तु जो मामले वस्तुत न्यायालयोमे विचाराधीन हैं, उनकी स्वतन्त्र रूपसे जाँच-पडतालकी प्रथाका मेरी दृष्टिमे, बडा दुरुपयोग हो सकता है, विशेषकर जब कि सम्बन्धित लोग चम्पारनके लोगोकी तरह अनजान तथा असन्तुलित हो और उनका झुकाव झूठ बोलनेकी ओर हो। श्री गाधी स्वय निष्पक्ष होनेका दावा करते हैं, हो सकता है कि यह दावा सही हो, किन्तु उनके बहुतसे सहायको की निष्पक्षता सन्देहास्पद है, और मैं सोचता हूँ कि वे अपने स्वार्थकी दृष्टिसे मामलेमें नमक-मिर्च मिलानेसे बाज नही आयेंगे। श्री गाधी यह विश्वास दिला चुके हैं कि वे केवल उन्ही मामलोमें हस्तक्षेप करेंगे, जहाँ उनको रैयतके साथ स्पष्ट अत्याचार दिखाई देगा। किन्तु मेरी समझमें श्री गाधी निर्भ्रान्त रूपसे यह तय नही कर सकते क्योकि मामलोमें इस प्रकारका भेद करना सर्वथा असम्भव है। इस प्रथाको या तो सभी मामलोमें स्वीकार करना चाहिए अथवा एकमें भी नही। इस मुद्देपर मैं पथप्रदर्शन चाहता हूँ।

अनुच्छेद ९ में उल्लिखित बेलगाँव, गुजरात तथा बम्बईसे स्वयसेवकोको लाये जानेके बारेमें भी मुझे सरकारके रुखके बारेमें सूचना दी जाये। श्री मैक्फर्सनने १९१७ के तारीख २० जुलाईके अर्धसरकारी-पत्र सख्या २५७७ सी०–१५७१/२ में हेकॉकको हिदायत दी थी कि वे श्री गाधीको सूचना दे दें कि उन्हे (हेकॉकको) "मालूम नही कि सरकार स्वयसेवकोके लाये जानेके प्रति क्या रुख ग्रहण करेगी।" क्या सरकार अब अपने रुखके बारेमें सूचित कर सकती है?

हृदयसे आपका,
जे० एल० मैरीमैन

(ग) एच० मैक्फर्सनको लिखे गये एल० एफ० मॉर्सहैडके पत्रका अंश

नवम्बर २७, १९१७

इस समय जिलेमें निम्नलिखित तीन बातोसे किसानोका उद्वेग बढ रहा है—स्वराज्यका प्रचार, गाधीकी कार्रवाई और हिन्दुओ और मुसलमानोका मनमुटाव। इनकी प्रतिक्रिया एक-दूसरेपर होती है और किसानोका मानसिक सन्तुलन बिगडता है एव उनमें कानून और सत्ताके प्रति उपेक्षाका भाव बढता है। जैसी कि पहले खबर दी जा चुकी है, सारन जिलेमे गाँव-गाँवमें स्वराज्य-सभाएँ की जा रही हैं और कहा जाता है कि सिपहियाकी घटनाको उन्हीसे उत्तेजन मिला। और गाधीका समर्थन पाकर उसके कारण गोपालगजके मनियारा कोठी क्षेत्रमें भी अशान्ति उत्पन्न हो रही है।

मैरीमैनके पत्रसे प्रकट हो जायेगा कि चम्पारनमें लगानसे इनकारी भी गम्भीर रूप धारण करती जा रही है और मजदूरोके झगडे भी तय नही हुए हैं। वे जानना

चाहते है कि श्री गाधीके प्रति क्या रुख अख्तियार किया जाये, मुख्यत. उनकी शिक्षा-योजनाओके और बाहरसे स्वयंसेवक बुलानेके बारेमे। किन्तु मुझे उनके इस पत्रपर उचित रूपसे विचारका समय नही मिला है।

(घ) डब्ल्यू० मॉडके पत्रका अंश

नवम्बर २७, १९१७

मुझे मालूम हुआ है कि सर विलियम विन्सेंट एक-दो दिनमें यहाँ आ रहे है। मेरा खयाल है कि यदि महाविभव और दोनो माननीय मन्त्रिगण उनसे मिलें और उन्हे जिलेकी हालत बतायें और उनसे यह पूछे कि भारत सरकार किस हदतक जानेके लिए तैयार है तो, इससे बात साफ हो सकती है। मुझे तो लगता है कि इसका एक ही उपाय हो सकता है और वह यह है कि श्री गाधीसे कमसे-कम छ महीने या एक सालके लिए जिलेसे चले जानेका वचन ले लिया जाये। यदि वे वस्तुत चले जायें तो स्थिति शान्त होनेकी कुछ सम्भावना है। वहाँ जबतक उनका नाम और व्यक्तित्व लोगोके सम्मुख आता रहता है तबतक स्थिति शान्त होनेकी कोई सम्भावना नही है। यदि हम श्री गाधीसे जिलेको ऐसा अवसर देनेका अनुरोध करे, और वे उसे माननेसे इनकार कर दे या उसपर अमल न करे एव हमे उनसे जबरदस्ती करनी पडे तो भारत सरकार हमारा समर्थन कहाँतक करेगी? निश्चय ही सर डब्ल्यू० विन्सेंट अपने-आप हमें कोई वचन नही दे सकेंगे, किन्तु हमें भारत-सरकारके विचारका कोई अन्दाज नही है, वे हमें उसकी एक झलक तो दे ही सकेंगे।

(ङ) ई० ए० गेटका पत्र मुख्य सचिवको

नवम्बर २८, १९१७

मुख्य सचिव,

मुझे श्री रीडने कल बताया कि उन्हे श्री नॉर्मन और हिलसे पता चला है कि उनके देहातोमें पूरी शान्ति है और श्री गाधीने विद्रोही किसानोको समझानेमें सहायता दी है। किन्तु उनका कहना है कि अब मुजफ्फरपुरमें बहुत क्षोभ फैल रहा है। इसका कारण वहाँ बाँटे गये कुछ पर्चे बताये जाते है जो वही निकाले गये है। उनमे कहा गया है कि इन पर्चोका मुजफ्फरपुर जिलेसे कोई सम्बन्ध नही है, उनका सम्बन्ध केवल चम्पारनसे है।

हथुआकी महारानीने भी आज सुबह मुझे कहा है कि सारन जिलेमें किसानोमे लगान न चुकानेकी प्रवृत्ति बढ रही है जिसका कारण श्री गाधी द्वारा उत्पन्न क्षोभ और स्वराज्यका प्रचार है। यह बात विचारणीय है कि क्या इस आशयकी कोई घोषणा निकालना कि यदि किसान लगान न देगे तो नुकसान उन्हीका होगा, ठीक रहेगा।

ई० ए० गेट

(च) ई० सी० रेलेंडके पत्रका अंश

दिसम्बर २, १९१७

चम्पारनकी स्थितिपर विचार करते समय हमें [गगा] नदीके उत्तरके दूसरे जिलो, मुख्यत छपरामें प्राप्त चिन्ताजनक समाचारोंका भी खयाल करना होगा। इसमें कोई सन्देह नही हो सकता कि मुजफ्फरपुर, दरभगा और सारन जिलोमें अशान्तिकी लहर फैल गई है। निस्सन्देह अशाति श्री गाधीके आनेसे प्रारम्भ हुई। इसमें किसीको शका नही कि चम्पारन जिलेमें असन्तोष था किन्तु श्री गाधीके आनेसे किसानोका रुख और भी बिगड गया। श्री गाधी क्या करनेवाले हैं, इस सम्बन्धमें उक्त जिलोमें सर्वत्र अफवाहें फैल गईं और हमें यह तो ठीक तरहसे मालूम है कि सभी जिलोके किसान शिकायतें लेकर श्री गाधीके पास गये। जान पडता है कि उस समय दूसरे जिलोकी शिकायतोपर खास ध्यान नही दिया गया, किन्तु जान पडता है कि दूसरे जिलोके किसानोका यह आम खयाल है कि श्री गाधी जब चम्पारन जिलेका काम पूरा कर चुकेंगे तब दूसरे जिलोके मामले भी हाथमें लेंगे। वास्तवमें हमें प्राप्त एक ताजा खबरके अनुसार उन्होंने अभी हालमें मुजफ्फरपुरमें एक सभामें यह कहा है कि उनके प्रयत्नोसे चम्पारन जिलेको जो लाभ मिलेगा वह बादमें इस जिलेके किसानोको भी मिलेगा। इन स्थितियोंमें सीधे-सादे लोग यदि श्री गाधीको सर्वशक्तिमान् मानते हैं तो इसमें आश्चर्यकी कोई बात नही है। श्री गाधीका मन्शा जो भी हो, और मैं यह विश्वास करनेके लिए तैयार हूँ कि वह अच्छा है, फिर भी यह बात तो है ही कि उनके साथ कुछ अवाछनीय लोग हैं और वे उनके नामका लाभ उठाकर अशान्ति उत्पन्न कर रहे हैं। यदि श्री गाधीके भाषणोके विवरण ठीक हैं तो उनसे लोगोंमें राज्यके प्रति अश्रद्धा अवश्य बढेगी। यदि, जैसा वे कहते हैं, ये सज्जन अशान्ति दूर करनेका प्रयत्न कर रहे हैं, तो इस समय उनका ऐसी बातें कहना कि वे किसानोको बागान-मालिकोके हिस्सेदारोकी तरह देखना चाहते हैं और हिन्दुओका हित सामूहिक गो-वध बन्द करा देनेमें है, अजीब मालूम होता है। जो मामले अदालतोमें विचाराधीन हैं उनमें उनके द्वारा जाँचकी कार्रवाई करना अदालतकी मानहानि जैसा है। और उससे निश्चय ही स्थानीय अधिकारियोकी प्रतिष्ठा घटती है। मुझे यह कहनेमें कोई झिझक नही है कि श्री गाधीका फिलहाल यहाँ रहना अवाछनीय है।

(छ) गृह विभागके सचिवको लिखे गये एच० मैक्फर्सनके पत्रका अश

दिसम्बर ६, १९१७

आज की स्थितिमें श्री गाधीका चम्पारनमें बने रहना कठिनाई उत्पन्न करनेवाली बात है। उनका उद्देश्य तो शुद्ध है, और कहते हैं कि वे शान्ति-स्थापनाके लिए प्रयास कर रहे हैं तथा इस दृष्टिसे कुछ मामलोमें उन्हे, अपेक्षाकृत अधिक जिम्मेदार बागान-मालिकोके सहयोगसे, सफलता भी मिली है, लेकिन उनकी राजनीति आम खेतिहरोकी समझमें नही आती, और वे जिन पिछलग्गुओसे घिरे हुए हैं उनके काम उद्देश्यके प्रति बराबर उसी ईमानदारीसे प्रेरित नही रहते जैसे श्री गाधीके होते हैं। श्री गाधी

होमरूलके एक प्रमुख व्याख्याता है, और जिस बृहदाकार प्रार्थनापत्रके लिए मुफस्सिल इलाकोसे हस्ताक्षर एकत्र किये जा रहे है, उसका मसविदा भी उन्हीका तैयार किया हुआ है।

श्री गाधीके कामोके कुछ ऐसे पहलू भी सामने आये है जिनका उद्देश्य चाहे जितना अच्छा हो, काश्तकार उन्हे गलत भी समझ सकते है। उनके कामोमे स्कूल स्थापित करना और जिन मामलोकी तहकीकात पुलिस कर रही है, उनका स्वय श्री गाधी और उनके अनुगामियो द्वारा जाँच करना भी शामिल है। स्कूलोमें बम्बईसे बुलाये गये शिक्षक पढाते है। इन स्कूलो और उनके शिक्षकोके बारेमे इतना अधिक ज्ञान तो नही है कि वे विद्यार्थियोको कैसे विचारोकी शिक्षा दे रहे है, इस विषयमे कुछ कहा जा सके, लेकिन यह निश्चित है कि फौजदारी मामलोमे हस्तक्षेप किये जानेके कारण स्थानीय पुलिस तथा न्यायाधिकारियोको बडी परेशानी हो रही है।

[अंग्रेजीसे]

सिलैक्ट डॉक्यूमेंट्स ऑन महात्मा गांधीज मूवमेंट इन चम्पारन

परिशिष्ट ५

बबन गोखलेका पत्र मो० क० गांधीको

बरहरवा

दिसम्बर ६, १९१७

प्रिय श्री गाधी,

इस पत्रके मिलनेतक आप मोतीहारी पहुँच जायेंगे। आपको यह पत्र यहांके कामकी प्रगतिके विषयमें लिख रहा हूँ।

जब आप पिछली बार यहाँ आये थे तबसे अबतक गाँवके लगभग सभी कुएँ दुरुस्त किये जा चुके है, गन्दे पानीकी जो नालियाँ कुओके करीब थी और जिनसे पीनेका पानी गन्दा हो रहा था, उन्हे हमने बन्द कर दिया है। एक या दो जगहोपर यह काम कठिन रहा क्योकि घरकी नालीका रुख तबतक नही बदला जा सकता था जबतक वह किसी पडोसीकी जमीनसे न निकाली जाये। यह काम हमने पडोसियोकी सहृदयता जगाकर पूरा कर ही लिया। दूसरे एक मामलेमें समझा-बुझाकर राजी करनेके लिए हमे गाँवके बुजुर्गोंकी मदद लेनी पडी। कुछ भी हो, हमने अपना काम पूरा कर लिया।

अब हम उन्हे अपने घरोके बिलकुल करीब गन्दगी करनेसे रोकनेकी कोशिशमें लगे है। यह हम एक बुजुर्ग मुसलमानकी सहायतासे करना चाहते हैं जो प्रति शुक्रवारकी नमाजके बाद लोगोको इस विषयमे समझायेगा। हिन्दुओके लिए भी हम ऐसा ही तरीका अपनाना चाहते है। मैं समझता हूँ कि कुछ सप्ताहोमे इसका कुछ अच्छा नतीजा निकलेगा। इस बीच हम लोगोने स्वय उनके पाखानेको मिट्टीसे ढँक-ढँककर

लोगोंको समझाया है कि पाखानेको मिट्टीसे ढँक देनेमें प्रतिष्ठा कम नहीं होती; लगता है वे यह बात समझ गये हैं। आपको यह जानकर खुशी होगी कि अब लोग ऐसा करने लगे हैं।

स्कूलोंमें विद्यार्थियोंकी संख्या ७५ से ऊपर हो गई है। पिछले महीने प्रतिदिन औसत हाजिरी ६० से ऊपर रही। लड़के अपने गीत सीखने और उन नये मैदानी खेलोंको सीखनेमें बहुत रुचि लेते दिखाई देते हैं, जो नियमित कवायदके बाद उन्हें सिखाये जाते हैं। श्रीमती गोखले लगभग रोज आसपासके गाँवोंमें जाती है क्योंकि वहाँ प्राय: एक-न-एक ऐसी रुग्णा नारी होती है जिसे डाक्टरी सहायताकी जरूरत हो।

जब लोग अपनी फसलसे निश्चिन्त हो चुकेंगे, तब हमारा इरादा उन्हें रोज सन्ध्या समय इकट्ठा करके स्वास्थ्य तथा सामान्य संस्कृतिके विषयोंपर कुछ बताते रहनेका है।

पिछले बुधवारको डॉक्टर देव यहाँ आये थे और चूँकि यहाँ बहुतसे ऐसे मरीज हैं जिन्हें हम नहीं सँभाल सकते थे, वे दिन-भरसे भी ज्यादा ठहरे। उनके नुस्खे हम ढाका डिस्पेंसरीमें नहीं बनवा सकते। इसके लिए उच्च अधिकारियोंको अर्जी देनी होगी कि इसे एक विशेष मामला मानकर ये नुस्खे वहाँ बनवा दिये जायें। इससे आसपासके गरीब लोगोंको बहुत राहत पहुँचेगी। परन्तु पहले हमारा विचार ढाकाके हॉस्पिटल असिस्टेंटसे मिलनेका है।

पिछले बुधवारको हमने आसपासके प्रमुख ग्रामीणोंकी एक बैठक बुलाई थी। वहाँ हिन्दू-मुसलमान दोनोंकी एक खासी समिति इस कामके लिए बनाई गई कि वह प्राथमिक शिक्षा तथा गाँवोंकी सफाईके कामका संगठन करे। फसलके बाद हाथमें लिये गये कामोंके लिए जरूरी धन जमा करनेके लिए समितिके सदस्योंकी फिर बैठक बुलायेंगे। अत्यन्त आदर सहित,

हृदयसे आपका,
बबन गोखले

[अंग्रेजीसे]

सिलैक्ट डॉक्यूमेंट्स ऑन महात्मा गांधीज मूवमेंट इन चम्पारन

परिशिष्ट ६

ई० एल० एल० हैमंडका पत्र मो० क० गांधीको

शिविर पटना

दिसम्बर १३, १९१७

प्रिय श्री गाधी,

शायद आपको स्मरण होगा कि आपने राचीमें चम्पारनसे मेसोपोटामियामें सेवाके लिए एक मजदूर टुकडी भरती कर सकनेकी बात की थी। उस समय मैं यह समझा था कि आप अपनी ही कमानके अधीन सेनाका सामान ढोनेवाली एक टुकडी खडी करना चाहते हैं। बहरहाल, मुझे बताया गया है कि आप एक मजदूर-टुकडी खडी करनेको राजी हैं। कृपया मुझे सूचित करें कि क्या यह ठीक है। कृपया यह भी लिखें कि क्या आप अब भी टुकडी खड़ी करनेको राजी हैं। यदि इस सम्बन्धमें आपकी कोई शर्तें हों तो उन्हें भी सूचित कीजिये। यदि आप चाहते हैं कि कोई टुकडी जो आप बनाये वह मौजूदा यूनिटोंका अंग न हो वरन् एक स्वतन्त्र आत्म-निर्भर टुकड़ी हो तो मुझे आर्मी हेड क्वार्टर्सको लिखना जरूरी होगा। लेकिन यदि आप स्वयं न जाना चाहते हों वैसी दशामें यदि आप गयाके रेलवे ट्रेनिंग डिपोके लिए, जहाँ हमें ५०० आदमी प्रति माह चाहिए, आदमी दिलवानेमें सहायता कर सकें तो हम आभारी होंगे। कृपया अपना उत्तर मुझे राची के पतेपर दीजिए।

हृदयसे आपका,

ई० एल० एल० हैमंड

सिलैक्ट डॉक्यूमेंट्स ऑन महात्मा गांधीज़ मूवमेंट इन चम्पारन

परिशिष्ट ७

ई० एल० एल० हैमंडका पत्र मो० क० गांधीको

राची

दिसम्बर १८, १९१७

प्रिय श्री गाधी,

आपके १५ तारीखके पत्रके लिए धन्यवाद। मैं यहाँ हमारी क्या आवश्यकता है सो आपको लिखकर भेज रहा हूँ, उससे आप समझ जायेंगे कि वह इस समय वर्तमान दलोंमें भरती तक ही सीमित है। नया मजदूर-दल खडा करनेका अभी कोई इरादा नही है।

मेसोपोटामिया या गया और पुरीके रेलवे प्रशिक्षण केन्द्रोंके लिए हमें आदमियों-की आवश्यकता है। वहाँ दो या तीन मासका प्रशिक्षण देनेके बाद उन्हें बसरा भेज दिया जायेगा। हम ३० रु० पेशगी देते हैं। भारतमें १५ रु० तथा समुद्र-पार जानेपर इन्हें २०) रु० मासिक दिया जाता है। प्रति व्यक्तिपर ३ रु० भरती कराई शुल्क दिया जाता है।

क्या आप अपने दौरोंके दरम्यान आर्थिक-लाभके इस प्रशस्त अवसरकी ओर जनताका ध्यान खींच सकेंगे? अगर एक घरसे एक आदमी भी चला जाये तो उसे अपने कुटुम्बको ८) रु० महीना भेजते रहकर भी अवधिके हिसाबसे लड़ाईके अन्तमें घर लौटनेपर, अप्राप्त वेतनके रूपमें १०० रुपयेसे २०० रुपये तक, नये सिरेसे जीवन प्रारम्भ करनेके लिए मिलेगा।

मजदूरोंकी आयु २० वर्षसे अधिक तथा ३५ वर्षसे कम होनी चाहिए और शारीरिक दृष्टिसे उन्हें सचमुच हट्टा-कट्टा होना चाहिए। यदि आप ऐसे व्यक्तियोंको भरती करनेमें हमें सहायता दे सकते हैं तो युद्ध-प्रयत्नमें सहयोगके साथ ही उन लोगोंका भी फायदा होगा जिनमें आप व्यक्तिगत तौरपर दिलचस्पी ले रहे हैं। सन्थाल परगनेमें तीन-चार लाख रुपये चुकता किये गये हैं और इससे वहांके महाजनों तथा अत्याचारी जमींदारोंको काफी परेशानी हुई है।

यदि आप स्वयं आहत-सहायकोंका एक दल खड़ा करना चाहें और मुझे बतायें कि आपको कितने आदमी मिल सकते हैं तो मैं आपके प्रस्तावको प्रधान सैन्य-कार्यालयके पास भेज दूंगा।

हृदयसे आपका,
ई० एल० एल० हैमंड

सिलैक्ट डॉक्यूमेंट्स ऑन महात्मा गांधीज़ मूवमेंट इन चम्पारन

परिशिष्ट ८

(क) एल० एफ० मॉर्सहैडका पत्र गांधीजीको

मोतीहारी
जनवरी १४, १९१८

प्रिय श्री गांधी,

चम्पारन खेती-बारी विधेयकके सम्बन्धमें मैंने सरकारको बताया है कि वर्तमान प्रारूपमें खण्ड ३ की पहली धारा खुश्की समझौतेपर भी उसके प्रचलित रूपमें तिन-कठिया-जैसा ही निषेध लगाती है, क्योंकि बागान मालिक-संघ द्वारा स्वीकृत साटेके स्वरूपमें यह शर्त निबद्ध है कि उपज मुहैया करनेके लिए कितने क्षेत्रमें खेती की जाये। इस उपजकी कीमत वजनके हिसाबसे चुकता की जाती है।

मुझे इस आशयका उत्तर मिला है कि सरकारके विचारमें विधेयकके खण्ड ५ में खुश्की साटाको, जिस रूपमे वह अबतक स्वीकृत रहा है, गैर-कानूनी करार देनेवाली कोई बात नही है, किन्तु खण्ड ३ निर्धारित क्षतिपूर्तिके जरिये करार तोडनेके दण्डका अवैध बना देगा। जाहिरा तौरपर दो बीघोमें या मेरे खयालसे जमीनके किसी और भागमें नील उगानेके समझौतेके सम्बन्धमे कोई आपत्ति नही है, बशर्ते कि काश्तकारोको काश्तके लिए वास्तविक भू-क्षेत्रोको चुननेकी पूरी आजादी हो और भूमि-सुधार समितिका स्पष्टत. यह इरादा था कि वर्तमान खुश्की प्रणालीको उक्त शर्तके साथ जारी रहने दिया जाये।

तदनुसार मुझसे कहा गया है कि मै इस मुद्देपर, तथा धारा ३ में सशोधन करनेके लिए, ऐसा उपयुक्त तरीका निकालनेके बारेमे, जिससे खुश्की साटामे कोई रुकावट न आये, रैयत तथा उनके प्रतिनिधि दोनोके विचार जान लूँ।

हमने आज सुबह इस मामलेपर विचार किया था, और मै आपके सामने श्री कैनेडीका संशोधन रखता हूँ जो इस प्रकार है

(क) "किसी भी अधिकार, भूम्यधिकार या दूसरे किसी हितके बावजूद, अक्तूबर १, १९१७ से चम्पारन जिलेके अन्तर्गत जितनी नई भूमि है, उसपर काश्तकारका पट्टा होगा, और वह पट्टेकी ऐसी किसी भी शर्तसे मुक्त होगा जिसके अनुसार काश्तकारपर अपने भूस्वामीकी सुविधाके लिए अपनी जमीनपर या उसके किसी भागपर कोई भी फसल उगानेकी बाध्यता आती हो, तथा कोई भी पूर्ववर्त्ती ऐसा या ऐसे अधिनियम जो पट्टेमे इस प्रकारके शर्तकी अनुमति देते है, इसके द्वारा स्पष्ट रूपसे रद्द किये जाते है।

(ख) "ऐसा कोई समझौता, ठेका या बन्धीकरण, जिसके जरिये कोई काश्तकार अपने भूस्वामीको अपनी जोतपर या उसके किसी भागपर उगाई गई फसलको देना स्वीकार करता है, उसके बारेमे करार करता है या उस फसलको उसके पास बन्धक रखता है, ऐसी शर्तकी हदतक अवैध माना जायेगा किन्तु यदि जोत या उसके किसी भागका इस प्रकारके समझौते, ठेके या बन्धीकरणमें विशेष रूपसे उल्लेख हुआ हो तो तब ऐसा नही होगा।"

मै समझता हूँ, इस सशोधनके दूसरे भागपर जिसे मैने 'ख' से चिह्नित किया है आपको आपत्ति है, किन्तु मेरे विचारमे केवल पहला भाग, जिसे मैने 'क' से चिह्नित किया है, स्वीकार्य होगा। कृपया सूचित करे कि क्या मै तदनुसार सरकारको सूचना दे दूँ? सरकार चाहती है कि उसे १९ तारीखको होनेवाली प्रवर समितिकी बैठकसे पूर्व उत्तर मिल जाये। क्या आप उस तारीखसे पूर्व मुझे उत्तर देकर अनुगृहीत करेगे? मै १५ और १६ को रामगढवाके शिविरमे तथा १७ और १८ को चैनपटियामे रहूँगा।

हृदयसे आपका,
एल० एफ० मॉर्सहैड

(ख) एल० एफ० मॉर्सहैडका पत्र एच० कूपलैंडको

शिविर रामगढवा
जनवरी १६, १९१८

प्रिय श्री कूपलैंड,

हैकॉक और मैंने इस विषयमें १४ तारीखको श्री गांधीसे भेंट की। मैंने श्री गांधीको बताया कि खण्ड ३ की पहली धारा खुश्की प्रणालीके प्रचलित और समिति द्वारा अपनी रिपोर्टके अनुच्छेद ८ में स्वीकृत स्वरूपपर भी तिनकठिया-जैसा ही निषेध लगाती है। इस प्रणालीके अन्तर्गत काश्तकार आमतौरपर पेशगी रकमके बदले नील उगाना मंजूर कर लेता है। जिस जमीनपर वह नील उगानेको कहता है, वह पसन्द आनेके बाद ही बागान-मालिक पेशगी देता है, और उपजके अनुसार उसे कीमत चुकाई जाती है।

बातचीत करनेके उद्देश्यसे मैंने राजपुरकी प्रणालीको लिया। जैसा कि मैं समझता हूँ, श्री स्लाई और श्री गांधी इस प्रणालीकी राजपुरमें जाँच कर चुके हैं और उससे सन्तुष्ट हैं। श्री गांधीने आपत्ति उठाई कि यदि रैयत स्वीकृत भू-क्षेत्रोंमें नील न उगाये तो करारको विशेष रूपसे कार्यान्वित करने तथा निर्धारित क्षतिपूर्तिके लिए उसपर मुकदमा चलाया जा सकता है। और यदि उसने पेशगी ले लेनेपर भी करारका अपना भाग पूरा नहीं किया और उसके परिणामस्वरूप क्षति होती है, तो निश्चय ही उसपर मुकदमा चलाया ही जायेगा।

श्री गांधीने विस्तारसे बताया कि उन खुश्की करारोंको पचानेके लिए इस विधेयकका मसविदा तैयार किया गया है, जो अन्यथा सर एस० पी० सिन्हाकी सम्मतिके अनुसार काश्तकारी अधिनियमके अन्तर्गत वर्जित माने गये थे। तब मैंने सुझाव दिया कि वे काश्तकारी अधिनियमके अमलके अधीन छोड़े जा सकते हैं। इससे खुश्की प्रणाली, कमसे-कम, उस स्थितिमें तो रहेगी जिसमें कि वह अब है। इसके विपरीत, प्रस्तुत विधेयक तो समितिके उस इरादेके विरुद्ध इसपर निषेध लगाता है। बातचीतको एक मुद्देपर केन्द्रित करनेके लिए मैंने उन्हें श्री कैनेडीका संशोधन दिखाया, और पूछा कि क्या वे इसके पहले भागका समर्थन करते हैं जिसके जरिये नया कानून काश्तकारीकी शर्तके रूपमें तिनकठिया प्रणालीका निषेध करने तक ही सीमित रह जाता है। उसे पढनेके बाद उन्होंने कहा कि वे समस्याके हलकी दृष्टिसे इसके प्रथम भागको स्वीकार करनेको तैयार हैं। मैंने उन्हें बताया कि मैं नहीं चाहता कि वे उसे सहसा स्वीकार कर लें। अच्छा होगा कि वे उसपर विचार कर लें। इसके बाद उनको मैंने संलग्न पत्र लिखा और उनका जो उत्तर मिला उसे भी यहाँ संलग्न कर रहा हूँ।

मैं स्वयं यह विश्वास नहीं करता कि श्री गांधी रैयतका प्रतिनिधित्व करते हैं। अगर उसपर कोई दबाव न डाला जाये तो वह अपने हिताहितका विचार करनेमें सक्षम है, और वह सारनमें और साथ ही चम्पारनमें तथा मुजफ्फरपुरमें खुश्की प्रणालीके अन्तर्गत जहाँ तिनकठिया नहीं है, नील उगानेके लिए बराबर तैयार थी और अब भी है। इस प्रणालीका एक मुख्य लाभ यह है कि यदि काश्तकारोंको महाजन या किसी और का कर्जा चुकानेके लिए पेशगीमें बड़ी रकमकी जरूरत हो तो वह उन्हें मिल

सकती है। किन्तु यदि उन्हे जिस भूमि-विशेषपर बुआई करनी है, उसके बारेमें करार करनेकी अनुमति नही होगी तो वे उक्त लाभसे वचित रह जायेंगे। लगानके हिसाबको सर्वथा पृथक् रखा जाये, इसके बारेमे व्यवस्था करना जरूरी हो सकता है, किन्तु इसके आगे जानेसे मेरे विचारमें, अच्छाईकी अपेक्षा शायद बुराई ही अधिक होगी।

हृदयसे आपका,
एल० एफ० मॉर्सहैड

[अग्रेजीसे]
सिलैक्ट डॉक्यूमेंट्स ऑन महात्मा गांधीज मूवमेंट इन चम्पारन

परिशिष्ट ९

विलियम एस० इर्विनका पत्र 'स्टेट्समैन'को

जनवरी ८, १९१८

'सम्पादक'
स्टेट्समैन
[कलकत्ता]

महोदय,

यह देखते हुए कि चम्पारनके बाहरके लोगोको, और विशेषरूपसे बिहार-उडीसाकी सरकार तथा भारत सरकारको (देखिए, नव-वर्षकी उपाधि-सूची) इस बातका कोई सही अन्दाज नही है कि जिलेको श्री गाधीके 'मिशन' और सर्वथा विलक्षण जाँच-समितिकी अविचारपूर्ण सिफारिशोसे कितनी भयकर हानि पहुँची है, मै एक बार पुन सारी स्थितिके कारण और प्रभावकी ओर ध्यान आकृष्ट करनेका लोभ सवरण नही कर पा रहा हूँ।

सरकारको श्री गाधीने आश्वासन दिया था कि चम्पारन लौटनेपर उनकी तमाम कोशिश जमीदारो और काश्तकारोके सद्भावपूर्ण सम्बन्धोको (जिसे खराब करनेके लिए वे तथा उनके साथी मुख्य रूपसे जिम्मेदार थे) और अच्छा बनाने (वास्तवमे पुन स्थापित करने) की होगी। मुझे आशा है कि इस पत्रको पढकर आप स्वय देख सकेंगे कि उन्होने अपने उस आश्वासनको ईमानदारीसे पूरा किया है अथवा नही। यही इस पत्रका उद्देश्य है।

चम्पारन लौटनेके बादसे श्री गाधीका काश्तकारोको यह निर्देश रहा है कि वे जमीदारो द्वारा लगानकी माँगका तबतक विरोध करे जबतक २० प्रतिशतकी छूट न दे दी जाये, शरहबेशी में २६ प्रतिशत छूट न दी जाये (जैसा भी मामला हो) या तावानका २५ प्रतिशत वापस न कर दिया जाये। ये निर्देश उन्होने प्रस्तावित विशेष कानूनको मद्देनजर रखकर दिये है जब कि फिलहाल इस आशयका कोई कानून नही है। इस सलाहके फल-स्वरूप, जिसपर काश्तकारोने पूरी तरह अमल किया है, न केवल फैक्टरियोको अपने चालू खर्चोंमें बहुत दिक्कत उठानी पडी है, बल्कि बेतिया पौण्डपावना ऋण-योजना

[बेतिया स्टर्लिंग लोन] आरम्भ करनेके ३२ वर्ष बाद पहली बार इसके कारण ऋण-के ब्याजकी जमानत करनेवाले जामिन लोग (या कमसे-कम उनमें से कुछ लोग) उसकी किस्त अदा नही कर सके। किस्त-अदायगीकी तारीख गत माहकी १५ तारीख निश्चित थी। मजबूर होकर जागीरको किस्त-अदा करनेके लिए फिरसे रुपया उधार लेना पडा। सरकारने एक सर्वथा अनावश्यक (जैसा कि स्वय लेफ्टिनेंट गवर्नर महोदयने कहा था) समिति नियुक्त करके जो गलती की उसका ही प्रत्यक्ष परिणाम यह हुआ कि जामिन लोग किस्त अदा नही कर सके। अब कोर्ट ऑफ वार्ड्स जामिनोको इस चूकके लिए कैसे जिम्मेदार ठहरा सकता है।

जिला अधिकारीने मुझसे चालू फसली सन् (१३२५) की पहली तिमाहीकी लगान वसूलीका एक वक्तव्य तैयार करनेको कहा था ताकि पिछले वर्ष इसी अवधिमें की गई वसूलीसे उसकी तुलना की जा सके। नि सन्देह इसका उद्देश्य मोतीहारी लि० द्वारा उपर्युक्त ब्याजकी रकमका अपना हिस्सा, जो रु० ४८,५९०–८–० था, अदा न कर पानेकी कैफियत लेना था। मैंने गैर-अदायगीके कारण जो घाटा था, उसके अतिरिक्त रु० ५६,०८६–८–३ का घाटा दिखाया। मछली पालनेवाले तालाब एक जमानेसे राजके और राजके अधीन पट्टा प्राप्त लोगोके अधिकारमें रहे है। अब गुमराह काश्तकार लोग उन तालाबोमें ठेके-दारोको मछली पकडनेसे रोकते है और लूट ले जाते हैं। इन काश्तकारोने पुलिस और अदा-लती जाँचोमें स्वीकार किया है कि ऐसा वे श्री गाधीके निर्देशपर करते है। इस कम्पनी-के इलाकेमें पिछले पाँच सालोमें या जबसे शरहबेशी और तावान लागू किया गया, लगानके मुकदमों या छोटे-मोटे अपराधोंके मुकदमोका औसत क्रमश २१ और ३ प्रतिवर्ष था। इस वर्ष श्री गाधी और समितिकी सिफारिशोकी दयासे, मेरा अनुमान है कि, लगानके सिलसिलेमें कमसे-कम २,२०० मुकदमे खडे होगे। अपराधोके कितने मुकदमे दर्ज होगे, मेरे लिए कोई अनुमान करना कठिन है। श्री गाधीको जिलेमें लानेवाले वकीलो और अन्यायपूर्वक दूसरेके अधिकारोपर दखल जमानेवालोकी दृष्टिमें नि सन्देह यह बहुत सन्तोषजनक है। किन्तु जो जिला अबतक मुकदमेबाजीसे मुक्त था, कितने दु खकी बात है कि अब उसके विषयमें यह नही कहा जा सकेगा।

मुझे बताया गया है, और मैं उसपर विश्वास करता हूँ कि मोतीहारीमें गौ-रक्षिणी सभाकी एक मीटिंगमें उन महानुभाव (गाधीजी) ने अपने हिन्दू और मुसलमान श्रोताओ-से प्रतिवर्ष एक गायकी हत्याके ऊपर आपसमें लडना बन्द करने और एक होकर साहब लोगो (अपने जमीदारो) पर आक्रमण करनेका अनुरोध किया जो प्रतिदिन गायें मारते और खाते हैं।

जब श्रीमती गाधीके पति होमरूल समारोह तथा ऐसे ही अन्य आयोजनोमें व्यस्त रहनेके कारण उनसे अलग होते है, उस समय वे श्रीमती एनी बेसेंटके पदचिह्नोका अनुसरण करते हुए जहाँ-तहाँ इसी तरहके अनर्गल उपदेश देती रहती हैं और अभी-अभी उन्होंने स्कूल खोलनेके बहाने एक छोटी जमीदारीके देहातमें एक बाजार खोल दिया है, जिसमें ठेकेदार या मालिकको दस्तूरके मुताबिक चुगी या बाजार कर दिये बिना गल्ला या अन्य चीजें खरीदी जा सकती हैं। स्पष्ट ही इसका मशा जानबूझकर कारखानेके मालिकोंके दो बाजारोको जो इस देहातके पास हैं, बरबाद कर देना ही

है। क्या ऊपरकी ये सारी बातें श्री गाधी द्वारा सरकारको दिये गये वचनकी पूर्तिके प्रामाणिक प्रयत्नोके अन्तर्गत खीची जा सकती है।

अदालतके चपरासियोने मुझे बताया कि वे जिन गाँवोमे सरकारी कामके सिलसिलेमें जाते है वहाँ तमाम सरकारी सत्ताके विरुद्ध जिस प्रकार द्रोहात्मक और अपूर्ण बाते होती है उन्हे दोहरानेकी वे हिम्मत नही कर सकते। कमसे-कम एक अदालती चपरासीको मै जानता हूँ जो मेरे दो गाँवोमे सम्मन जारी करने गया था। वहाँ उसको अपमानित किया गया, हैरान किया गया और गाँवसे बाहर कर दिया गया और उससे कहा गया कि "गाधी साहब" को छोडकर हम दीवानी या फौजदारी किसी सत्ताको नही मानते। उसने इसी तरहकी और भी बहुत बातें कही। ऐसे सैकडो दृष्टान्त दिये जा सकते है, लेकिन जब सरकार वैध रूपसे स्थापित सारी सत्ताकी अवमानना और सारे दीवानी और फौजदारी कानूनोकी अवज्ञाके प्रति आँखें बन्द कर ले और सम्पूर्ण बिहार और उडीसा-भरमें केवल ५ फैक्टरियोको प्रभावित करनेवाले एक विशेष विधेयकको पास करनेकी कोशिश करे, तब उन दृष्टान्तोके उल्लेखसे क्या लाभ? और इन फैक्टरियोके मामलेमें भी उसका रुख इतना अनुचित और अन्यायपूर्ण है कि जिस फैक्टरीके काश्तकार असन्तुष्ट और काबूके बाहर है उन्हे अनिवार्यत लाभ पहुँचेगा और जिन फैक्टरियोके काश्तकारोने कोई शिकायत नही की है और न उनके पास शिकायतकी कोई वजह है उन्हें अनुचित ढगसे दण्डित किया जायेगा। कोई नही जानता कि इस ढगके विशेष कानूनका किस हदतक कैसा असर होगा। सभी जिम्मेदारो और जमीनके मालिकोको यह चेतावनी ग्रहण कर लेनी चाहिए कि एक राजनीतिक आन्दोलनको सन्तुष्ट करनेके लिए-उनकी स्वतत्रताका भी इस प्रकार किसी भी क्षण बलिदान किया जा सकता है, और यदि लगभग स्पष्ट राजद्रोहका उपदेश देनेवाले किसी व्यक्तिके रास्तेमे रोडा प्रतीत हुआ तो स्थायी बन्दोबस्तको भी बगाल टेनेंसी ऐक्टकी तरह निर्दयतापूर्वक समाप्त कर दिया जायेगा। मै इस बातकी गारटी खुशी-खुशी देनेको तैयार हूँ कि यदि श्री गाधी और उनके चेलोको जिला छोडनेके लिए विवश कर दिया जाये तो दो महीनेसे भी कम समयमे पूर्ण व्यवस्था और शाति स्थापित हो जायेगी, क्योकि रैयत पहले ही से उनके बडे-बडे वादो और उन वादोकी थोथी पूर्तिको लेकर उनकी खिल्ली उडाने लगी है।

आपका,
विलियम एस० इर्विन

[अंग्रेजीसे]
स्टेट्समैन, ११-१-१९१८

परिशिष्ट १०

बिहार बागान-मालिक संघका स्मृतिपत्र[1]

जनवरी ५, १९१८

इन सदस्योकी रायमें चम्पारन खेतीबारी विधेयक निम्न कारणोसे अनावश्यक और अवांछनीय है —

(क) क्योंकि यह एक ऐसी जाँच-समितिकी सिफारिशोपर आधारित है जो निश्चय ही चम्पारनके बाहरसे सगठित किये गये एक कृत्रिम आन्दोलनको शान्त करनेके लिए नियुक्त की गई थी, न कि किसी बहुव्यापक शिकायतोके परिणामस्वरूप। यह दिखाया जा चुका है कि समितिने सम्पूर्ण चम्पारनकी भूमि-व्यवस्थाकी कोई गहरी जाँच नही की, बल्कि नीलवाली और ठेकेवाली कुछ जमीदारियो, जिनका पट्टा उन्हे कोर्ट ऑफ वार्ड्ससे मिला हुआ था, की प्रबन्ध-व्यवस्थाके बारेमें सतही जाँच की थी, और सो भी एक ऐसे समयपर जब कि रैयतका दिमाग एक आन्दोलनके कारण जिसे सरकारका प्रोत्साहन भी प्राप्त था, उत्तेजित था। और वह ऐसा मानने लगी है कि यह आन्दोलन काश्तकारो के लिए सतयुग ले आयेगा। इसके अलावा, यह भी दिखाया जा चुका है कि इस समितिका मंशा एक ऐसी रिपोर्ट तैयार करना था जिसपर उसके एक सदस्य महोदय, जो उपर्युक्त आन्दोलनके नेता हैं, हस्ताक्षर करनेको राजी हो जाये। मामलेके पूरे और सच्चे तथ्योको प्रस्तुत करनेकी इच्छासे यह रिपोर्ट तैयार नही की गई है।

बिहार और उडीसाकी वर्तमान सरकार और उसकी पूर्ववर्ती सरकारें उन तमाम तफसीलोसे परिचित हैं जिनका जिक्र समितिकी रिपोर्टमें किया गया है। रिपोर्टमें न कोई नये तथ्य प्रस्तुत किये गये है, न सर्वसामान्य स्थितिपर कोई नई रोशनी डाली गई है। न उसने यह आवश्यक माना कि कोई विशेष कानून बनाया जाना चाहिए।

इस समितिने जैसी असन्तोषजनक और पक्षपातपूर्ण जाँच की, उसके फलस्वरूप उसे जो सूचनाएँ प्राप्त हुईं वे जिलेकी सही सर्वसामान्य स्थितिपर प्रकाश डालनेकी दृष्टिसे अपर्याप्त थी। यह तथ्य, तथा समिति पक्षपातपूर्ण रुख और एक शरारती आन्दोलनकारी को हर कीमतपर, यहाँतक कि जरूरत पडनेपर सरकारी नियन्त्रणमें जमा ट्रस्ट फण्डकी रकमका दुरुपयोग तक करके सन्तुष्ट करनेकी उत्सुकता, इन तीनो बातोके चलते यह रिपोर्ट और उसमें जो सिफारिशें की गई हैं वे इतनी एकतरफा और अनुचित हैं कि उन्हे कोई महत्त्व नही देना चाहिए और यह विधेयक, जो साफ तौरपर उन सिफारिशो-पर आधारित है, बिलकुल वापस ले लेना चाहिए।

(ख) क्योंकि यह एक खास जिलेपर लागू होनेवाला विद्वेषपूर्ण और अनावश्यक कानून बनाता है।

१. राजस्व मण्डलने यह याचिका बिहार-उडीसा सरकारके राजस्व विभागके सचिवको भेज दी थी।

(ग) क्योकि उसका उद्देश्य रैयतके पट्टेके मौजूदा करारो और दायित्वोको अवैध करार देनेका है जबकि ये दोनो ही बिलकुल वैध सिद्ध हो चुके हैं, और करारोको तो सिर्फ सात वर्ष पहले ही बंगाल सरकारकी मंजूरी मिल चुकी है।

(घ) क्योकि इसका उद्देश्य बिना किसी मुआवजेके और अकारण ही एक ऐसी प्रणालीको समाप्त करनेका है जो एक सौ वर्षसे भी अधिक कालसे जारी है और जो अब भी अन्य जिलोमे बिना किसी झंझटके चालू है।

(ङ) क्योकि इसका उद्देश्य बिना जमीदार या भू-स्वामीकी मर्जीके और जबर्दस्ती उस लगानमें कमी करना है जिसे पूरी जाँच-पड़तालके बाद बन्दोबस्त अधिकारियोंने सर्वथा वैध, उचित और मुनासिब घोषित किया है, और जिसे कई वर्षो तक खुशी-खुशी अदा भी किया गया है।

यदि इस विधेयकको समाप्त करनेके पक्षमें तर्कपूर्ण कारणके बावजूद यदि सरकार इसे पास करानेकी कोशिश करती है तो हम इसके कतिपय मुख्य दोषोको कुछ हदतक दूर करानेके लिए कुछ सुझाव देगे।

खण्ड ३ (१) — यह खण्ड, अपने वर्तमान रूपमें, खुश्की प्रथाके अन्तर्गत नील और गन्नेकी खेतीको सर्वथा असम्भव बना देगा।

अगर बहसकी खातिर यह मान भी लिया जाये कि रैयतको अपने भू-स्वामी या जमीदारके साथ ऐसा कोई करार करने देना वांछनीय नही है जिसमे वह कई वर्षोंकी लम्बी अवधिके लिए अपनी जोतके एक नियत अंशमें उत्पन्न होनेवाली एक फसल-विशेषको एक निश्चित दरपर, जो उस जमीनके क्षेत्रफलपर निर्भर करेगी जिसपर उक्त फसल उगाई जायेगी, बेचनेके लिए बाँधता हो, तो भी यह अवश्य ही वांछनीय और जरूरी है कि वह अपनी मर्जीसे चुने हुए एक निश्चित जमीनके टुकड़ेपर पैदा होनेवाली फसलको उत्पादनकी मात्राके आधारपर निश्चित की गई दरके हिसाबसे बेच सके। यह सिद्धान्त विधेयकके उद्देश्य और कारणवाले वक्तव्यमें स्वीकार भी किया गया है। यदि, जैसा कि सुझाव रखा गया है, उसे एक निश्चित वजन भर पैदावार भू-स्वामीको देनेकी शर्त करने दिया जाता है तो वह मौसमकी दशापर निर्भर होनेके कारण निश्चित परिमाण न दे सकनेपर क्षतिपूर्ति करनेके लिए जिम्मेदार होगा। दूसरी ओर, यदि वह जमीनके एक टुकडे-विशेष की पैदावार देनेका करार करता है, तो उस टुकड़े पर अपेक्षासे कम उपज होनेकी स्थितिमे उसे पेशगी रकममे जितनी कमी पडेगी केवल उतनी ही रकम चुकानी होगी।

उसके अलावा, लगभग हमेशा ऐसा होता है कि खेतकी जुताई-निराई आरम्भ करनेसे पहले रैयत काफी रकम पेशगीके रूपमे माँगती है, और चूँकि किसान खर्चीले स्वभावका होता है, इसलिए यदि उससे ऐसा करार करनेकी अनुमति नही होगी जिससे वह एक निश्चित टुकडेपर एक फसल-विशेष पैदा करनेको बाध्य हो, तो सम्भावना इसी बातकी ज्यादा है कि वह पेशगी ले ले और उसके बाद निर्धारित मात्रामे उस फसलको पैदा करनेके लिऐ वह पर्याप्त उपयुक्त भूमिमे बुआई न करे। इस कारण जमीदारके लिए यह सम्भव नही होगा कि वह पेशगी दाम और बीजके दाम किसानको

देकर नुकसान उठाये। यही नही, किसान भी अपने जमीदारसे विना व्याजका ऋण नहीं पायेगा और मजबूर होकर उसे साहूकारोंसे ऊँचे व्याजपर ऋण लेना पडेगा।

साथ ही, यह स्पष्टत अत्यन्त अनुचित है कि विना किसी चेतावनी और विना किसी मुआवजेके मौजूदा करारोको समाप्त कर दिया जाये, और काश्तकारीकी एक ऐसी प्रणाली जो एक सौ सालसे ऊपरसे जारी है, उसे समाप्त करनेसे पहले वागान-मालिकोको कोई नई प्रणाली उसके स्थानपर जारी करनेका मौका न दिया जाये।

चम्पारनकी रैयत स्वभावत मूर्ख और रूढिवादी है, और किसी भी नई चीजको सन्देहकी दृष्टिसे देखती है। जिलेकी वर्तमान क्षुब्ध स्थिति और श्री गाधीके अनुगामियो द्वारा इस समय भी जारी आन्दोलनके कारण खुश्की प्रणालीकी कठिनाई दोगुनी हो जायेगी। इसलिए हम वहुत जोरदार ढगसे माँग करते हैं कि मौजूदा करारोको तीन साल तक और, या उस समय तक जारी रहने दिया जाये जवतक मूल साटोपर दी गई पेशगीका वकाया अदा नही कर दिया जाता। इस अवधिमें वागान-मालिक लोग तिनकठिया प्रणालीके स्थानपर खुश्की प्रणाली लागू कर देंगे।

अक्सर उपर्युक्त रकमको वसूल करनेमें वहुत मुश्किल होती है। यदि रैयत अदा करनेसे इनकार कर दे तो वहुत ज्यादा परेशानी और खर्च उठाना पडता है। किसान जानते हैं कि प्रति व्यक्ति वकायाकी रकम इतनी छोटी होती है कि उनके लिए कोई अदालत नही जायेगा। लेकिन सब मिलाकर यह रकम काफी वडी होती है।

इसलिए यह सिफारिश की जाती है कि जवतक रैयत द्वारा ली गई पेशगीकी रकम पूरी तरह अदा नही हो जाती तवतक वागान-मालिकोंके हितमें उपर्युक्त स्थिति वनी रहने दी जायेगी। इससे किसानोको कोई कष्ट नही होगा क्योकि वे किसी भी समय डाकसे या दीवानी अदालतोके जरिये पेशगीकी रकम वापस कर सकते हैं। . .

[अंग्रेजीसे]

सिलेक्ट डॉक्यूमेंट्स ऑन महात्मा गाधीज मूवमेंट इन चम्पारन

परिशिष्ट ११

मो० क० गांधीके साथ डब्ल्यू० मॉडकी भेंट

जनवरी ३१, १९१८

१ पहले हमने खुश्की प्रथापर चर्चा की। श्री गाधीने भूमिके किसी खण्ड-विशेष या प्लाटके वन्धीकरणपर आपत्ति प्रकट की, लेकिन कहा कि उन्हें इसपर एतराज नही है कि रैयत भूमिके कुछ हिस्सेमें नीलकी खेती करनेकी शर्त कर ले। तव मैंने चम्पारनके वागान-मालिको द्वारा प्रस्तावित सशोधनमें "स्वय उसके चुने हुए खेत या जमीनके टुकडेकी पैदावार" के स्थानपर "अपनी जोतके अमुक अशकी पैदावार" शब्द

रखनेका सुझाव रखा। श्री गाधीने तब धारा ३, ४ और ५की अवधान धाराओका मसविदा सुझाया। (देखिए पादटिप्पणी[1])

२ इसके बाद हमने उस प्रस्तावित सशोधनपर चर्चा की जिसका मशा जबतक पेशगी अदा न हो जाये तबतक साटाके दायित्वको जारी रखनेका था। यह बतानेके बावजूद कि इससे बहुतसी मुकदमेबाजी बच जायेगी, श्री गाधीने सशोधनको स्वीकार करनेसे बिल्कुल इनकार कर दिया।

३ फिर हमने सिरनीके बारेमे बात की। श्री गाधीका विचार था कि भले ही तुरकौलियाके मुकाबले सिरनीमें ली गई शरहबेशीकी दर कम रही हो, लेकिन जलहा या सिरनी, इन दोनोमे से किसीके बारेमें विचार नही करना चाहिए।

४ इसके बाद हमने इस प्रस्तावपर विचार किया कि शरहबेशी वृद्धिको घटाकर जितना तय कर दिया जाये उसे सबके लिए बाध्यकारी माना जाये। श्री गाधी इस मुद्देपर सहमत हुए, लेकिन उन्होने अपने जनवरी २४, १९१८के पत्रसे वह उद्धरण पेश किया जिसमें उन्होने कहा था कि "किसी भी सशोधनमें अनियमितता अथवा अनधिकारिता सम्बन्धी शिकायत होनेपर अपील करनेके अधिकारको सावधानी-पूर्वक बरकरार रखना होगा, उदाहरणार्थ, ऐसे मामलोमे कि जहाँ बन्दोबस्त अधिकारीने घटनाको गलत दर्ज कर लिया हो, या जहाँ स्पष्ट हो कि क्लर्कसे भूल हो गई है।

५. जहाँतक अबवाबका सम्बन्ध है, श्री गाधीको इस प्रस्तावपर कोई आपत्ति नही है कि उसे सारे प्रान्तपर लागू कर दिया जाये।

जहाँतक जमीदारोको हर मामलेमे उत्तरदायी बनाने विषयक श्री गाधीके स्वयके सशोधनका सवाल है, उसे प्रवर समितिके सामने रखा जा सकता है, किन्तु यदि वह स्वीकार नही होता तो सरकार पूरा खण्ड वापस लेनेका वादा नही कर सकती। श्री गाधीको उपधारा (३) बनी रहनेपर भी जबरदस्त आपत्ति है।

६ गाडी साटाके मामलेमे श्री गाधीका आग्रह है कि इसे समाप्त करनेके लिए भी कोई व्यवस्था होनी चाहिए अन्यथा गाडी साटाको लेकर बहुतसे मुकदमें पैदा होगे।

७ तावान वापस करनेके प्रश्नका जिक्र तो हुआ लेकिन भेटमे उसपर चर्चा नही हुई।

डब्ल्यू० मॉड

[अंग्रेजीसे]

सिलैक्ट डॉक्यूमेंट्स ऑन महात्मा गांधीज मूवमेंट इन चम्पारन

१ पादटिप्पणी इस प्रकार थी: "शर्त यह है कि इस उपखण्ड की कोई भी व्यवस्था रैयतको इसके खण्ड ५ की शर्तोंके अनुसार उसकी अपनी जीतके किसी भी हिस्सेपर कोई फसल-विशेष पैदा करनेका करार करनेसे नहीं रोकेगी।

खण्ड ५के लिए—शर्त यह है कि करारकी कोई भी व्यवस्था रैयतकी भूमि चुननेकी स्वतन्त्रताको समाप्त या सीमित नहीं करेगी।"

परिशिष्ट १२

शंकरलाल बैंकरकी पत्रिका

आप लोगोंके लिए मैं यह पहली ही पत्रिका लिख रहा हूँ। इसलिए मुझे यह तो कह ही देना चाहिये कि इसके लिए मेरा अधिकार नाम-मात्रका ही है। मैंने स्वय मजदूरी नही की। मजदूरोको जैसे दु ख सहने पडते है, वैसे मैंने नही सहे, इसी तरह उन दु खोको समझकर उन्हे दूर करनेके लिए भी मै कुछ कर नही सकता। अतएव इस अवसरपर जो कुछ भी सलाह देनेकी जरूरत मुझे मालूम हुई है, वह देते हुए मुझे सकोच तो होता ही है। हालाँकि अबतक मैंने आपके लिए कुछ किया नही है, तो भी आगे अपनी शक्तिके अनुसार आपके लिए कुछ-न-कुछ करनेकी मेरी बडी इच्छा है, *और इस इच्छाके कारण ही मैं यह लिखता हूँ।*

आजसे दो दिन पहले हमारी स्थिति कुछ हदतक चिन्ताजनक हो उठी थी। आपमें से कुछ भाई तगीका अनुभव करने लगे थे, और यह डर पैदा हो गया था कि कही वे इस तगीसे मुक्त होनेके लिए गाधीजीके आग्रहके अनुसार मजदूरी करनेके बदले, प्रतिज्ञा तोड़कर कामपर न चले जायें। लेकिन आज वह स्थिति नही रही है। गाधीजी-की प्रतिज्ञाके कारण हमारे जड हृदयोमें चैतन्य आ गया है, और हमें पता चला है कि हमारी प्रतिज्ञा कितनी गम्भीर है। 'मर जायेंगे, पर टेक न छोड़ेंगे,' यह बात अब महज सभाओंमें बोलनेकी नही रही, बल्कि करके दिखानेकी है, इसका विश्वास अब हमें हो गया है। इस बदली हुई परिस्थितिके प्रमाण-स्वरूप तगडस्त भाइयोने खुशी-खुशी मजदूरी करना शुरू किया है। यही नही, बल्कि जिनकी स्थिति अच्छी है, उन्होंने दूसरो-के सामने अपना उदाहरण रखकर और अपनी मजदूरीसे मिलनेवाली मेहनतानेकी रकम दूसरोकी मददमें खर्च करके हममें से फूटकी सम्भावनाको हमेशाके लिए नष्ट कर दिया है। लेकिन यह काफी नही है। गाधीजीकी प्रतिज्ञाके कारण हमारे ऊपर बडी भारी जिम्मेदारी आ पड़ी है। अगर इस जिम्मेदारीको हम अच्छी तरह समझते है, तो हमें इस लडाईको जल्दीसे-जल्दी खतम करनेके लिए जी-जानसे मेहनत करनी चाहिये, और जिन-जिन उपायोंसे हम अपनी टेकपर कायम रहकर लडाईको समेट सकते हो, उन सब उपायोका प्रयोग तुरन्त करना चाहिये। हमारी टेक ३५ प्रतिशत लेनेकी है। और हम जानते है कि मिल-मालिकोंके लिए आर्थिक दृष्टिसे ये ३५ प्रतिशत देना मुश्किल नही है। लेकिन ३५ प्रतिशत देनेमें उन्हे जो डर लगता है, वह यह है कि उससे मजदूर सिरपर चढ बैठेंगे, उद्धत बन जायेंगे, बात-बातमें बहाने बनाकर रूठेंगे और छोटी-छोटी बातोपर हडताल करके उद्योगका नाश करेंगे। मुझे तो इस भयका कोई कारण नही मालूम होता। जिस उद्योगसे मजदूरोको रोजी मिलती है, उसके नाशकी इच्छा वे कभी कर ही नही सकते। फिर भी यदि मजदूर न्याय-अन्यायका विचार किये बिना मर्यादा छोड़कर चले, तो जिस अनिष्टका जिक्र ऊपर किया है, वह हुए बिना न रहेगा। अगर

हम इस बुरे परिणामसे बचना चाहते हो, तो हमें बाकायदा ईमानदारीके साथ काम करनेका निश्चय करना चाहिये। हमें तय कर लेना चाहिये कि हम कोई अनुचित माँग पेश नही करेंगे, और न्यायके लिए भी हड़ताल-जैसी चीजका सहारा तबतक न लेंगे, जबतक दूसरे उपाय खतम न हो जाये। लेकिन खाली ऐसा निश्चय कर लेनेसे भी हमारा काम नहीं बनता। हमे मालिकोसे मिलना होगा, अपने इस निश्चयकी बात उनसे कहनी होगी, और अपने लिए उनके मनमे विश्वास उत्पन्न करना होगा। जिस भयके कारण वे हमें ३५ प्रतिशत देनेसे हिचकिचाते है, उनका वह भय दूर करना होगा। कारीगरोको मेरी यह आग्रहभरी सलाह है कि वे इसके लिए जरूरी कार्रवाई जल्दी ही करे।

[गुजरातीसे]

एक धर्मयुद्ध

परिशिष्ट १३

कमिश्नर श्री प्रैटका भाषण

[अहमदाबाद
अप्रैल १२, १९१८]

मै चाहता हूँ कि आप मेरी बाते खूब ध्यानसे सुने, और जब वापस अपने-अपने गाँव जाये तो जो कुछ मै कहता हूँ, उसे हर आदमीको बताये ताकि जो बात इस समय मै आपसे कह रहा हूँ वह सारे जिलेको मालूम हो जाये। जो बातें मै कहने जा रहा हूँ वह सिर्फ आपके लिए ही नही है, सारे जिलेके लिए है। आप लोगोको महात्मा गाधी, वल्लभभाई साहब और उनके साथ काम करनेवाले अन्य महानुभावोने बहुत सलाहे दी है। उन्होने गाँव-गाँवमे भाषण किये है। लेकिन आज मै आपसे अनुरोध करूँगा कि आप मेरी बाते सुने।

काश्तकारोके अधिकार ऐसे है कि वे भूमिको पीढी-दर-पीढी अपने अधिकारमें रख सकते है। लेकिन इन अधिकारोके साथ-साथ कानूनन नियत किया गया लगान नियमित रूपसे अदा करनेका कर्त्तव्य भी जुडा हुआ है। केवल इसी शर्तपर आप अपनी भूमिपर अधिकार बनाये रख सकते है। लगान तय करनेका काम सरकारका है, और वह बिना किसी वकील या बैरिस्टरकी दखलन्दाजीके अपने अफसरोके जरिये लगान तय करती है। लगानकी रकम तय करनेका अधिकार सरकारके सिवा किसीको नही है। यह ऐसा मामला नही है जिसमे दीवानी अदालतें दखल दे सके। कोई आदमी अदालतमें यह शिकायत लेकर नही जा सकता कि लगानकी दर बहुत-ज्यादा लगाई गई है। काश्तकारोको ऐसा कोई कानूनी अधिकार नही है कि वे लगान-निर्धारणको स्थगित करनेकी माँग कर सके या उसका आग्रह कर सके। स्थगित करना न करना पूरी तरह हमारी मरजीपर है। फसलकी हालतपर, और तत्सम्बन्धी शिकायतो और आपत्तियोपर विचार करनेके बाद हम आदेश जारी करते है। अन्तिम आदेश जारी हो जानेके

बाद कोई अपील नही की जा सकती। यह गाधीजी या वल्लभभाईके तय करनेकी बात नही है, और जहाँतक वसूली स्थगित करनेका सवाल है, आपका लडना व्यर्थ होगा। यह बात मैं आपको अच्छी तरह समझा देना चाहता हूँ। आपको मेरे इन शब्दोपर ध्यान देना चाहिए, सिर्फ इसीलिए नही कि ये मेरे शब्द हैं, बल्कि इसलिए भी कि कानूनी स्थिति भी यही है। यह मेरा ही आदेश नही, लॉर्ड विलिंग्डनका आदेश भी है। मेरे पास उनका पत्र है जिसमें उन्होने कहा है कि इस मामलेमे मैं जो भी आज्ञा जारी करूँगा, उसे वे स्वीकार करेगे। अत आपको यह समझ लेना चाहिए कि आज आपसे मैं नही, बल्कि एक तरहसे स्वय महाविभव गवर्नर महोदय बात कर रहे हैं।

श्री गाधी बहुत अच्छे आदमी है, एक सन्त पुरुष है, और ईमानदारीसे ऐसा मानते हैं कि वे आपको जो सलाह देते हैं वह आपके हितमें है। उनका विचार है कि भूमि का लगान अदा न करके आप गरीबोकी रक्षा करेगे। यही बात कल मुझसे भेंट करनेपर वे मुझे भी समझा रहे थे। लेकिन क्या सरकार गरीबोकी रक्षा करनेवाली नही है? गरीबोकी रक्षा करना आपके गवर्नरका कर्त्तव्य है या आप लोगोका? क्या आपको अकालके दिनोकी याद नही है? सन् १९००के अकालमें, और १९०२ में चूहोके कारण जो अकाल पडा था, मैं अहमदाबाद और पचमहाल जिलोका कलक्टर था। आपको याद होगा कि सरकार द्वारा गरीबोकी सहायतार्थ कितने नये-नये काम शुरू किये गये थे। मुझे याद है कि लोगोको भोजन देनेके उद्देश्यसे तालाब बनवाने और तकावी बाँटनेमें लाखो रुपये खर्च किये गये थे। आप लोगोमें जो वृद्ध हैं, उन्हे वे दिन अवश्य याद होगे। आज उसी सरकारके खिलाफ आप इस ज़िलेमें सघर्ष चला रहे है। दुनियामें एक बहुत बडी लडाई हो रही है और परिस्थितियाँ ऐसी हैं कि सरकारकी हर तरहसे मदद करना आप सबका कर्त्तव्य है। लेकिन मददकी जगह इस जिलेसे सरकारको क्या मिलता है? सरकारको मदद मिलती है, या लोगोका विरोध मिलता है?

अगर सरकारके खिलाफ आप अपनी लडाई जारी रखते है, तो उसके नतीजे आपको भोगने पडेंगे, होमरूल लीगवाले इन महानुभावोको नही। उन्हे किसी तरहका कोई नुकसान नही होगा। जेल उन्हे नही जाना होगा। इसी ढगका एक आन्दोलन जब दक्षिण आफ्रिकामें आरम्भ किया गया था तब महात्मा गाधी जेल गये थे। लेकिन इस देशमें वे जेल नही जायेंगे। जेल उनके उपयुक्त स्थान नही है। मैं आपसे फिर कहता हूँ कि वे बहुत ही भले और एक सन्त पुरुष हैं।

सरकारके मनमें आपके प्रति कोई क्रोध-भाव नही है। बच्चे जब अपने माता-पिताको ठोकर मारते हैं, तब वे दुखी तो हो जाते हैं, पर नाराज नही होते। जब्ती, चौथाई, जुर्माना, सर्वस्व अपहरण, नर्वा अधिकारोकी समाप्ति, आखिर ये सब तकलीफे आप क्यो सहते हैं? क्या आप अपने ही हाथो अपनी सम्पत्ति नष्ट करना चाहते हैं? क्या आपको अपनी स्त्रियो और बच्चोका कोई खयाल नही है? क्या आप साधारण मजदूरोकी हालतमें पहुँचना चाहते हैं? अगर हाँ, तो क्यो?

मुझे भूमि-कर कानूनका २८ वर्षका अनुभव है। महात्मा गाधी मेरे मित्र है। उन्हे आफ्रिकासे इस देशमें आये दो-तीन वर्ष ही हुए हैं। उन्होने अपनी जिन्दगीका ज्यादा समय आफ्रिकामे बिताया है। उन्हे धर्मका बहुत अच्छा ज्ञान है। उस विषयपर उनकी

जो भी सलाह होती है, ठोस होती है, लेकिन राजनीतिक मामलोमे, भूमि और भूमि-करके मामलेमे उनकी जानकारी बहुत थोडी है। इन सब मामलोको मै कही ज्यादा जानता-समझता हूँ। आप गलत सलाहके अनुसार काम करके दुख उठायेंगे तो मुझे दु ख होगा। नेक और भले पाटीदारोको जमीनसे बेदखल होते देखकर मुझे दु ख होगा। सरकारको मालूम है कि काश्तकारोके अधिकारोके बारेमें गलतफहमी रही है। इसलिए हमारी उदार सरकार आपको यह अन्तिम अवसर दे रही है कि आप उसकी सलाह सुने।

आपको वही सलाह देने मै यहाँ आया हूँ, और मुझे सिर्फ यह कहना है कि लगानकी अदायगी करना काश्तकारोका कर्त्तव्य है। यह मत सोचिए कि हमारे मामलतदार और तलाटी लोग आपकी जायदादकी जब्ती करके और बेचकर पैसा वसूलेंगे। वे इतनी तवालत नही उठायेंगे। हमारा समय बहुत कीमती है। वे लोग पैसा वसूल करनके लिए किसीके घर नही जायेंगे। मै आप लोगोको धमकी नही दे रहा हूँ। आपको यह बात जान लेनी चाहिए कि माता-पिता बच्चोको धमकाते नही, समझाते भर है। यदि आप लोग अपना लगान नही देंगे तो आपको जमीनसे बेदखल कर दिया जायेगा। बहुतसे लोग आपसे कहते है कि ऐसा नही किया जायेगा। लेकिन मै आपसे कहता हूँ कि ऐसा ही होगा। इसके लिए मुझे कोई प्रतिज्ञा करनेकी जरूरत नही है, क्योकि मेरे पास अपनी बात पूरी कर दिखानेकी सत्ता है। जो लोग लगान देनेसे मना करेंगे उन्हे जमीन वापस नही मिलेगी। सरकार अपनी बहीमे ऐसे काश्तकारोको नही रखना चाहती, और न हम अपने पट्टा-रजिस्टरमे ऐसे लोगोके नाम चढानेको उत्सुक है। एक बार जो नाम कट गये उन्हे दुबारा दर्ज नही किया जायेगा।

अब अन्तमे मै एक बात और बता दूँ। अगर कोई आदमी भ्रमवश या गलतीसे कोई प्रतिज्ञा कर ले, तो उसे अपनेको उस प्रतिज्ञासे बँधा हुआ माननेकी जरूरत नही है। ऐसी प्रतिज्ञा निभाना जरूरी नही है। यदि आप ऐसी प्रतिज्ञा भग कर दे तो कोई नही कहेगा कि आपने पाप किया है या गलती की है। दुनिया ऐसे आदमीको निर्दोष मानेगी। आपको याद होगा कि अहमदाबादमें क्या हुआ। आप लोगोमे बहुतसे लोग शायद समाचारपत्र न पढते हो, इसलिए मै बताता हूँ। अभी हालमे मिल-मालिको और मिल-मजदूरोमें झगडा हुआ। मजदूरोने यह प्रतिज्ञा की थी कि जबतक उनकी मजदूरी में ३५ प्रतिशत वृद्धि नही की जाती, वे कामपर नही जायेंगे। लेकिन अन्तमे क्या हुआ? जब उन्हें अनुभव हुआ कि उनकी माँग उचित नही है तो वे अपनी प्रतिज्ञापर दृढ नही रह सके, उसे तोड दिया, २७½ प्रतिशतकी वृद्धि स्वीकार कर ली और काम शुरू कर दिया। उसी तरह, मै आपसे कहता हूँ कि आपने प्रतिज्ञा करके गलती की है। आप सरकारके प्रति अपना कर्त्तव्य भूल गये, इसीलिए आपने ऐसा किया। आपने अपनी प्रतिज्ञाके परिणामोपर पूरी तरह विचार नही किया जिसका प्रभाव आपपर ही नही आपके बच्चोपर भी पडेगा। इन सब बातोको देखते हुए मै आपसे पुन विचार करनेको कहता हूँ। आप सोच-विचारकर निर्णय करे कि आपको सरकारके प्रति अपना कर्त्तव्य निभाना चाहिए या अपनी प्रतिज्ञापर दृढ रहते हुए उसके परिणाम भोगने चाहिए?

[अंग्रेजीसे]

सरदार वल्लभभाई पटेल

सामग्रीके साधन-सूत्र

इंडिया ऑफिस ज्यूडिशियल ऐंड पब्लिक रेकर्ड्स भूतपूर्व इंडिया ऑफिसके पुस्तकालयमें सुरक्षित भारतीय मामलोंसे सम्बन्धित कागजात और प्रलेख जिनका सम्बन्ध भारत-मन्त्रीसे था।

गांधी स्मारक संग्रहालय, नई दिल्ली गांधी साहित्य और सम्बन्धित कागजातका केन्द्रीय संग्रहालय तथा पुस्तकालय। देखिए खण्ड १, पृष्ठ ३५९।

(नेशनल आर्काइव्ज ऑफ इंडिया) राष्ट्रीय अभिलेखागार, नई दिल्ली में सुरक्षित कागजात।

साबरमती संग्रहालय पुस्तकालय तथा आलेख संग्रहालय, जिनमें गांधीजीके दक्षिण आफ्रिकी काल तथा १९३३ तक के भारतीय कालसे सम्बन्धित कागजात रखे हैं।

'अमृतबाजार पत्रिका' कलकत्तेसे प्रकाशित अंग्रेजी दैनिक।

'इंडियन रिव्यू': मद्राससे प्रकाशित अंग्रेजी मासिक।

'गुजराती' बम्बईसे प्रकाशित गुजराती साप्ताहिक।

'न्यू इंडिया' मद्राससे प्रकाशित अंग्रेजी दैनिक।

'प्रजाबन्धु' अहमदाबादसे प्रकाशित गुजराती साप्ताहिक।

'प्रताप' कानपुरसे प्रकाशित हिन्दी दैनिक।

'बंगाली' कलकत्तेसे प्रकाशित अंग्रेजी दैनिक।

'बॉम्बे क्रॉनिकल' बम्बईसे प्रकाशित अंग्रेजी दैनिक।

'मुम्बई समाचार'. बम्बईसे प्रकाशित गुजराती दैनिक।

'यंग इंडिया' १९१८–३१, अहमदाबादसे प्रकाशित अंग्रेजी साप्ताहिक, सम्पादक — मो० क० गांधी, प्रकाशक — मोहनलाल मगनलाल भट्ट।

'लीडर' इलाहाबादसे प्रकाशित अंग्रेजी दैनिक।

'स्टेट्समैन' कलकत्तासे प्रकाशित अंग्रेजी दैनिक।

'हिन्दू' मद्राससे प्रकाशित अंग्रेजी दैनिक।

बॉम्बे गवर्नमेंट रेकर्ड्स।

बॉम्बे गवर्नमेंट होम डिपार्टमेंट।

बॉम्बे सीक्रेट एब्स्ट्रैक्ट्स।

भारतीय राष्ट्रीय कांग्रेसके १९१७में हुए ३२वें अधिवेशनकी अंग्रेजी रिपोर्ट।

'अन्त्यज स्तोत्र' (गुजराती) अमृतलाल सुन्दरजी पडियार।

'एक धर्मयुद्ध' (गुजराती) महादेव देसाई, नवजीवन प्रकाशन मन्दिर, अहमदाबाद, १९४०।

'खेडा सत्याग्रह' (गुजराती) शंकरलाल डी० पारेख, गुजरात विद्यासभा, अहमदाबाद, १९२२।

'गोपाल कृष्ण गोखलेना व्याख्यानो', खण्ड १ (गुजराती). अनुवादक — महादेव देसाई, बॉम्बे होमरूल लीग, १९१८।

'गोसेवा' (गुजराती) · मो० क० गांधी, नवजीवन प्रकाशन मन्दिर, अहमदाबाद, १९३४।

'जीवन प्रभात' प्रभुदास गांधी, सस्ता साहित्य मण्डल, नई दिल्ली, १९५४।

'जीवनना झरणा', खण्ड १ (गुजराती) रावजीभाई मणिभाई पटेल, नवजीवन प्रकाशन मन्दिर, अहमदाबाद, १९४५।

'थॉट्स ऑन लैंग्वेज' (अंग्रेजी) : मो० क० गांधी, नवजीवन प्रकाशन मंदिर, अहमदाबाद, १९५६।

'धर्मात्मा गोखले' (गुजराती) मो० क० गांधी, नवजीवन प्रकाशन मन्दिर, अहमदाबाद, १९५०।

'बापू और हरिजन' · सम्पादक — क्षेमचन्द्र 'सुमन', पब्लिकेशन्स ब्यूरो, सूचना विभाग, उत्तर प्रदेश, लखनऊ, १९५२।

'बापूनी प्रसादी' (गुजराती) मथुरादास त्रिकमजी, नवजीवन प्रकाशन मन्दिर, अहमदाबाद, १९४८।

'महात्मा गांधी' रामचन्द्र वर्मा, गांधी हिन्दी पुस्तक भण्डार, कालबादेवी, बम्बई, १९१९।

'महात्मा गांधीनी विचारसृष्टि' (गुजराती). मथुरादास त्रिकमजी, १९१९।

महादेव देसाईकी हस्तलिखित डायरी।

'महादेवभाईनी डायरी' (गुजराती). नरहरि डी० पारेख, नवजीवन प्रकाशन मन्दिर, अहमदाबाद, १९५०।

'माई डियर चाइल्ड' (अंग्रेजी) · एलिस एम० बार्न्ज, नवजीवन प्रकाशन मन्दिर, अहमदाबाद, १९५६।

'सत्यना प्रयोगो अथवा आत्मकथा' (गुजराती) · मो० क० गांधी, नवजीवन प्रकाशन मन्दिर, अहमदाबाद।

'सरदार वल्लभभाई पटेल', खण्ड १ (गुजराती) : नरहरि डी० पारेख, नवजीवन प्रकाशन मन्दिर, अहमदाबाद।

'सिलैक्ट डॉक्यूमेंट्स ऑन महात्मा गांधीज मूवमेंट इन चम्पारन' (अंग्रेजी) · सम्पादक — डॉ० बी० बी० मिश्र, बिहार सरकार, १९६३।

'स्पीचेज ऐंड राइटिंग्ज ऑफ एम० के० गांधी' (अंग्रेजी) जी० ए० नटेसन ऐंड कम्पनी, मद्रास।

तारीखवार जीवन-वृत्तान्त

(अक्तूबर १९१७ – जुलाई १९१८)

अक्तूबर ९ के लगभग गांधीजीने बेतियामें गोशालाकी नींव रखी।

अक्तूबर १५ भागलपुरमें बिहार छात्र सम्मेलनकी अध्यक्षता की।

अक्तूबर १८ बिहार और उड़ीसा सरकारने चम्पारन खेती-बारी जांच समितिपर प्रस्ताव पास किया जिसमें "कृषकोंके प्रतिनिधि श्री गांधीकी समझ और संयम" की प्रशंसा की गई।

अक्तूबर १९ भड़ौंच पहुँचे। व्यापारियों द्वारा आयोजित स्वागत समारोहमें भाषण।

अक्तूबर २० द्वितीय गुजरात शिक्षा सम्मेलनकी अध्यक्षता की।

अक्तूबर २१. सम्मेलनके समापन भाषणमें कहा कि मैं अपना जीवन तभी सार्थक समझूँगा जब भारतके लिए अपने प्राण उत्सर्ग कर पाऊँ।

अक्तूबर २६ अखिल भारतीय शिष्टमण्डलने चैम्सफोर्ड और मॉण्टेग्युसे भेंट की। शिष्टमण्डलमें गांधीजीके अतिरिक्त मोतीलाल नेहरू, तिलक, जिन्ना, सप्रू आदि भी थे।

नवम्बर २: गांधीजी गोधरा पहुँचे। तीसरे दर्जेके रेलयात्रियोंके कष्टोंके विरोधमें आयोजित सभाकी अध्यक्षता की।

नवम्बर ३ गोधरामें प्रथम गुजरात राजनीतिक परिषद्की अध्यक्षता की।

नवम्बर ४ राजनीतिक परिषद्में घोषणा की कि सरकारने वीरमगांव चुंगी चौकी हटा देनेका निर्णय किया है।

नवम्बर ५ परिषद्के समापन भाषणमें भाग लेनेवालोंसे अनुरोध किया कि वे प्रचार कार्य जारी रखें और मॉण्टेग्युको भेजे जानेवाले प्रार्थनापत्रके लिए हस्ताक्षर प्राप्त करें।

ढेढ समाजकी सभाकी अध्यक्षता की।

नवम्बर ८ रातको मोतीहारी पहुँचे।

नवम्बर ९ जिलाधीश जे० एल० मैरीमैनसे भेंट की।

नवम्बर ११ मुजफ्फरपुर धर्मशाला, बिहारमें आयोजित सार्वजनिक सभामें भाषण, कांग्रेस-लीग सुझावोंका समर्थन करनेकी अपील की, शामको हिन्दू और मुसलमान नेताओंके सम्मेलनमें भाग लिया। नौ बजे मोतीहारीके लिए रवाना।

नवम्बर १२ उमरेठमें गोखले-पुस्तकालयका उद्घाटन। बिहार बागान-मालिक संघके मंत्री जे० एम० विल्सनने 'स्टेट्समैन' में बागान-मालिकोंके कानूनी सलाहकारकी राय प्रकाशित की।

नवम्बर १४ से पूर्व गुजरात हिन्दू स्त्री-मण्डलको भेजे गये अपने सन्देशमें गांधीजीने महिलाओंसे अनुरोध किया कि वे अपनी अशिक्षित बहनोंको शिक्षण देनेका कार्य

करे और विधवाओंको कातना और बुनना सीखनेके लिए उत्साहित कर देशसेवा करें।

नवम्बर १४: ढाका, चम्पारनके समीप बरहरवामें गांधीजीने स्कूलका उद्घाटन किया। बेतिया लौटे।

नवम्बर १५: बेतियाराजके प्रबन्धक जे० टी० ह्विटीसे भेंट।

नवम्बर १६: कोयरी गये, अमोलवा स्टेशन गये और पुलिस तथा मजदूरोंके बीचके मामलेकी जाँच की।

नवम्बर २०: अमोलवासे लगभग दो मील दूर, श्रीरामपुरके समीप भीतीहरवामें स्कूल खोला।

नवम्बर २२: जे० एल० मैरीमैनको सूचना दी कि वे पन्द्रह दिनके लिए चम्पारनसे बाहर जा रहे हैं और उनकी अनुपस्थितिमें बाबू ब्रजकिशोर उनका प्रतिनिधित्व करेंगे।

नवम्बर २६: दिल्लीमें चैम्सफोर्ड और मॉण्टेग्युसे भेंट की।

नवम्बर २७: तिलकके साथ भेंटके बाद मॉण्टेग्युने अपनी डायरीमें लिखा इस समय भारतमें वे कदाचित् सबसे अधिक शक्तिशाली नेता हैं और यदि वे चाहें तो युद्धमें ठोस सहायता दे सकते हैं।

नवम्बर २८: गांधीजी अलीगढ़ पहुँचे, लॉयल पुस्तकालयके मैदानमें "हिन्दू-मुस्लिम एकता" पर भाषण, बादमें अलीगढ़ कॉलेजके विद्यार्थियोंके समक्ष "सत्य और मितव्ययिता" पर भाषण, ख्वाजा अब्दुल मजीदके घर गये। रातकी गाड़ीसे कलकत्ता रवाना।

नवम्बर २९: परिषद्में चम्पारन विधेयक पेश किया गया और परिषद्ने उसे प्रवर समितिको सौंप दिया।

दिसम्बर ४–५: गांधीजीने अहमदाबादके मिल-मालिकोंसे मजदूरोंके वेतनके विषयमें बातचीत की।

दिसम्बर ६: नडियादकी दशा खडायता वाडीमें "गुजरातकी कुछ समस्याओं" पर भाषण।[1] प्रथम गुजरात राजनीतिक सम्मेलन और गुजरात स्त्री शिक्षा मण्डलकी बैठकोंकी अध्यक्षता की।

दिसम्बर १०: रौलट समितिके सदस्योंके नामोंकी घोषणा;
गांधीजीने ए० एच० वेस्टको पत्रमें लिखा कि वे 'इंडियन ओपिनियन' को डर्बन ले जानेकी अपेक्षा उसका बन्द कर दिया जाना ज्यादा पसन्द करेंगे।

दिसम्बर १६: विशाल सार्वजनिक सभामें भाषण, नडियाद छोड़नेके पूर्व हिन्दू अनाथालय देखने गये।

दिसम्बर १९: बिहार और उड़ीसा सरकारके राजस्व सचिवको चम्पारन खेती-बारी विधेयकपर अपने विचार लिखकर भेजे।

दिसम्बर २६: कलकत्तेमें भारतीय राष्ट्रीय कांग्रेसके ३२वें अधिवेशनमें भाग लिया।

१. उपलब्ध नहीं है।

दिसम्बर २७ . अखिल भारतीय समाज-सेवा सम्मेलनके स्थगित किये जानेकी घोषणा की।

दिसम्बर २९ कांग्रेसके अधिवेशनमें दक्षिण आफ्रिकावासी भारतीयोंपर लागू निर्योग्यताओंसे सम्बन्धित प्रस्ताव पेश किया।

दिसम्बर ३० भारतीय सामाजिक सम्मेलनमें दलित वर्गोंके उत्थान और शिक्षाके सम्बन्धमें प्रस्ताव प्रस्तुत किया, प्रथम वर्ग कृषि-विशेषज्ञोंकी परिषद्में भाषण, तिलककी अध्यक्षतामें अखिल भारतीय राष्ट्रभाषा सम्मेलनकी सभामें हिन्दीको भारतकी सामान्य भाषा बनानेकी सिफारिश की। रवीन्द्रनाथ ठाकुरने कांग्रेसके अधिवेशनमें भाग लिया और अपनी कविता 'भारतकी प्रार्थना' सुनाई। कांग्रेस सप्ताहके सिलसिलेमें उनका नाटक 'डाकघर' खेला गया।

दिसम्बर ३१ कलकत्तामें ऑल इंडिया मुस्लिम लीगकी बैठकके दूसरे दिन भाषण, बॉम्बे ऐंड बंगाल ह्यूमैनिटेरियन फंड्सके तत्वावधानमें आयोजित सभामें भी। अखिल भारतीय समाज सेवा सम्मेलनमें अध्यक्षीय भाषण।

१९१८

जनवरी १ गांधीजीने अहमदाबादमें पानीके अपर्याप्त और अनियमित प्रबन्धके विरोधमें आयोजित सभाकी अध्यक्षता की।

गुजरात सभाने बम्बई सरकारको लगानमें राहत देनेके लिए लिखा।

जनवरी ४–५ गांधीजीने अहमदाबाद मिल-मजदूरों और मिल-मालिकोंके प्रतिनिधियोंसे बातचीत की।

जनवरी ५ बिहार बागान-मालिक संघके चम्पारनके सदस्योंने चम्पारन खेती-बारी विधेयककी कुछ अवधान धाराओंके विरुद्ध स्मृतिपत्र भेजा।

जनवरी १० गांधीजीकी सलाहनुसार गुजरात सभाने खेड़ाके किसानोंको लगान अदा न करनेकी सलाह दी।

जनवरी १२ गांधीजी अहमदाबादसे मोतीहारी लौटे।

जनवरी १३ से पूर्व जो अपनी नौकरियाँ छोड़कर कुछ दूसरे कामकी खोजमें थे, ऐसे शिक्षकोंको, काम देनेकी तत्परता घोषित की।

जनवरी १४ तिरहुत क्षेत्रके कमिश्नर एल० एफ० मॉर्सहेडसे चम्पारन खेती-बारी विधेयकपर बातचीत की। अपने वक्तव्यमें खेड़ाके कलक्टरने गुजरात सभा द्वारा किसानोंको लगान न चुकानेकी राय दिये जानेकी निंदा की और लगान देनेसे इनकार करनेवाले किसानोंके विरुद्ध कानूनी कार्रवाई करनेकी धमकी दी।

जनवरी १६ बम्बई सरकारके वक्तव्यमें कहा गया कि जिन मामलोंमें जरूरी था वहाँ खेड़ाके कलक्टरने लगानमें राहत दी है।

जनवरी २१ गांधीजीने हिन्दीको राष्ट्रभाषा बनानेके सम्बन्धमें रवीन्द्रनाथ ठाकुरकी राय जाननेके लिए उन्हें पत्र लिखा।

जनवरी २४ बिहार और उड़ीसा सरकारके राजस्व सचिवसे निवेदन किया कि रैयतके प्रतिनिधिसे सलाहके बिना चम्पारन खेती-बारी विधेयकमें कोई भी महत्त्वपूर्ण परिवर्तन न किया जाये।

फरवरी ४: खेड़ाकी स्थितिपर बम्बईकी सार्वजनिक सभामें भाषण।

फरवरी ५ : खेडाकी स्थितिके सम्बन्धमे दिनशा वाछा और जी० के० पारेखके साथ बम्बईके गवर्नरसे भेंट की; उसके बाद साबरमतीके लिए रवाना हुए।

फरवरी ६ : आश्रम पहुँचे, कलक्टरो और मामलतदारो द्वारा जारी किये गये नोटिस देखे।

फरवरी ७ उत्तरी क्षेत्रके कमिश्नर प्रैटको पत्र लिखकर सरकारी नोटिसोमे प्रयुक्त अशोभनीय भाषाका विरोध किया।

फरवरी ८ अहमदाबादके मिल-मजदूरोसे न्याय-मार्गपर चलने और बिना कटुताके समझौता करनेका अनुरोध किया।

फरवरी १२ कलक्टर और कमिश्नरसे खेड़ाकी स्थितिपर बातचीत की।

फरवरी १४: पचोके सामने प्लेग बोनसको ध्यानमे रखते हुए वेतन-वृद्धिके सम्बन्धमें शकरलाल बैंकर और वल्लभभाई पटेलके साथ मजदूरोका प्रतिनिधित्व किया।

फरवरी १५ : प्रैटको पत्र लिखा और अनुरोध किया कि जबतक वे स्थितिकी जाँच कर रहे हैं तबतक लगानकी वसूली स्थगित कर दी जाये।

फरवरी १९ से पूर्व . गोखलेके भाषणोके अनुवादकी भूमिका लिखी।

फरवरी १९ . मिल-मजदूरोको उनके आन्दोलनके प्रति अपनी जिम्मेदारी समझाई। गोखलेकी तीसरी बरसीके अवसरपर 'सर्वेंट ऑफ इडिया' का प्रकाशन शुरू किया।

फरवरी २० बम्बईमे भगिनी समाजके वार्षिक उत्सवकी अध्यक्षता की, स्त्री-शिक्षापर भाषण। नडियाद लौट आये।

फरवरी २१: मोटरसे खेडा गये, कलक्टरसे भेंट।

फरवरी २२: अहमदाबादके मिल-मालिकोने तालाबन्दीकी घोषणा कर दी।

फरवरी २५: गाधीजी नडियादसे अहमदाबाद लौट आये।

फरवरी २६ . मिल-मजदूरोके सघर्षके सम्बन्धमे पत्रिकाओका प्रकाशन तथा नित्य साबरमतीके किनारे बबूलके पेडके नीचे मजदूरोके समक्ष भाषण प्रारम्भ किया।

फरवरी २७: साबरमती आश्रमकी प्रार्थना-सभामें भाषण, प्रैटसे भेंट।

मार्च १ . मजदूरोके सलाहकारोमे जरूरतमन्द हडताली मजदूरोके खान-पानका प्रबन्ध करनेका वचन लिया।

मार्च ४ . बिहार और उडीसा विधान परिषद्ने चम्पारन खेती-बारी विधेयक पास कर दिया।

मार्च ७: सहयोगियोके साथ तालाबन्दीसे उत्पन्न स्थितिके विषयमे चर्चा।

मार्च १०: अहमदाबादके प्रेमाभाई हॉलमे गुजरात सभाकी वार्षिक बैठककी अध्यक्षता की।

मार्च ११: नडियादके कलक्टरसे भेंट।

मार्च १२ : मिलोमें तालाबन्दीकी समाप्ति। मिल-मजदूरो द्वारा हडताल शुरू।

मार्च १३ . दो सभाओकी अध्यक्षता की, इनमे श्रीमती बेसेटने भाषण दिया था।

मार्च १४: अपनी दशाके बारेमे मिल-मजदूरोके उलाहनेकी खबर गाधीजीको दी गई।

मार्च १५: मजदूर अपनी टेकसे न हटें इस इरादेसे प्रार्थना-सभामें उपवास करनेके निर्णयकी घोषणा।

मार्च १६ अनसूयाबेनके घरसे साबरमती आश्रम लौटे।

मार्च १७ बम्बईके गवर्नरसे लगान की वसूली स्थगित करनेकी अपील, अपील स्वीकार नहीं हुई। आश्रमकी प्रार्थना-सभामें उपवासके महत्त्वको समझाया।

मार्च १८ मिल-मजदूरों और मालिकोंके समझौतेकी घोषणा, प्रो० ध्रुव पंच नियुक्त।

मार्च १९ अन्तिम पत्रिका, संख्या १७में समझौतेका पूरा मतलब समझाया, मिल-मजदूरोंके जुलूसमें भाग लिया।

मार्च २१ सार्वजनिक सभामें भाषण, सी० एफ० एन्ड्रयूजने भी सभामें भाषण दिया, उसके बाद गाधीजी खेडाके किसानोंका मामला बम्बईके गवर्नरके सम्मुख रखनेके लिए बम्बई रवाना हुए।

मार्च २२ से पूर्व गवर्नर द्वारा लगानकी वसूली स्थगित करनेकी अपील अस्वीकृत होनेपर गाधीजीने प्रैटको अन्तिम चेतावनी दी।

मार्च २२ खेडा सत्याग्रह आरम्भ करते हुए नडियादके ५,००० किसानोंके समक्ष भाषण। सत्याग्रहियोंसे लगान अदा न करने और उससे होनेवाले कष्टोंका सामना करनेका वचन लिया।

एन्ड्रयूजका तार पानेपर दिल्लीके लिए रवाना।

मार्च २५ अली भाइयोंकी रिहाईके सिलसिलेमें वाइसरायके निजी सचिवसे भेंट की।

मार्च २७ नडियाद लौटे। हालमें किये गये अपने उपवासके सम्बन्धमें समाचारपत्रोंको पत्र लिखा।

खेडाकी स्थितिपर परिपत्र प्रकाशित किया।

मार्च २८ खेडाकी स्थितिपर समाचारपत्रोंको वक्तव्य, इन्दौरके लिए रवाना।

मार्च २९ इन्दौरमें हिन्दी साहित्य सम्मेलनमें अध्यक्षीय भाषण।

मार्च ३१ समाचारपत्रोंको लिखे पत्रमें मद्रास जिलेके युवकोंसे हिन्दी सीखनेका अनुरोध।

अप्रैल १ खेडाका दौरा शुरू, कठलाल और फिर कठाना गये, सार्वजनिक सभामें सरकारके रुखको अन्यायपूर्ण कहा।

अप्रैल २ [illegible]वानोंमें लोगोंसे अपील की कि वे सरकारकी दमनकारी कार्रवाइयोंसे डरें नहीं।

अप्रैल ५ वडथलमें कलक्टरसे भेंट की, लोगोंको परिणामकी कुछ परवाह किये बिना साहसपूर्वक कष्टोंका सामना करनेकी सलाह दी।

अप्रैल ६ कस्तूरबा, वल्लभभाई और महादेव देसाईके साथ उत्तरसडा गये, २,००० किसानोंकी सभामें भाषण।

अप्रैल ७ नवागावकी सभामें गाधीजीका भाषण सुननेके लिए लगभग ३,००० किसान उपस्थित।

अप्रैल ८ गाधीजी बोरसद गये, ४,००० लोगोंकी सभामें भाषण, मद्रासके गोखले हॉलमें राष्ट्रीय शिक्षा सप्ताहके उद्घाटनके अवसरपर एनी बेसेंटने गाधीजीका सन्देश पढ़कर सुनाया।

अप्रैल १० गाधीजीने अहमदाबादके जिलाधीशसे भेंट की, अकलाचामें खेडाकी स्थिति-पर भाषण।

अप्रैल ११ : अहमदाबादके कमिश्नरसे भेंट की; वडौदमें भाषण।

अप्रैल १२ से पूर्व. अप्रैल १२ को कमिश्नरकी सभामें भाग लेनेके लिए अहमदाबादकी जनताके नाम परिपत्र जारी किया।

अप्रैल १२ : कमिश्नरने गांधीजीकी सहायतासे आयोजित २,००० किसानोंकी सभामें भाषण दिया।

गांधीजीने कमिश्नरके भाषणके कारण उत्पन्न गलतफहमीको दूर करनेके लिए भाषण दिया।

नडियादकी सभामें भाषण देनेके बाद बम्बईके लिए रवाना।

अप्रैल १३ : बम्बईमें राजस्व मण्डलके सदस्यों, सर कारमाइकेल, सर न० गो० चन्दावरकर और दूसरे लोगोंसे खेड़ाके सम्बन्धमें भेंट की।

अप्रैल १५. नडियाद से 'बॉम्बे क्रॉनिकल' को पत्र लिखकर कमिश्नरके भाषणके कारण उत्पन्न गलतफहमीको दूर किया।

अप्रैल १६. ओडमें, संगठित होकर सरकारका विरोध करनेकी आवश्यकतापर, भाषण दिया।

अप्रैल १७ : कमिश्नरके भाषणके विषयमें 'बॉम्बे क्रॉनिकल' को लिखे अपने पत्रके मुद्दोंका विस्तार करते हुए एक पत्रक प्रकाशित किया। दतेली और चिखोदरामें सत्याग्रहियोंके समक्ष भाषण।

अप्रैल १८. बोरसद ताल्लुकाके रास गाँवमें गये, किसानोंके समक्ष भाषण।

अप्रैल २० कस्तूरबा और अन्य लोगोंके साथ आनन्द ताल्लुकेके कासर, अजरपुरा और सामन्था गाँवोंमें गये; वहाँ किसानोंकी सभाओंमें भाषण दिये।

अप्रैल २२. बोरसद ताल्लुकेमें पालज और सुणाव गाँवोंमें किसानोंके समक्ष भाषण।

अप्रैल २३. बम्बई जाते समय कस्तूरबाको पत्रमें लिखा "तुम्हें मगनलालको माँ जैसा सुख देना है। . . . मेरे कामका उत्तराधिकार लेनेके लिए अभी तो वही योग्य है।" बम्बईके नागरिकोंकी सभामें खेड़ा सत्याग्रहके सम्बन्धमें भाषण। लगानकी वसूली फौरन बन्द करने या किसानोंके कष्टोंकी निष्पक्ष जाँच करवानेके लिए तिलकने प्रस्ताव रखा।

अप्रैल २४. गांधीजी बम्बईसे दिल्ली रवाना।

सरकारने खेडाकी स्थितिपर समाचारपत्रोंमें वक्तव्य प्रकाशित किया।

अप्रैल २५. उत्तरी क्षेत्रके मामलतदारोंको आज्ञा दी गई कि जो लोग लगान देनेमें असमर्थ हैं उनसे वसूली न की जाये।

वाइसरायने दिल्लीमें युद्ध-सम्मेलनका उद्घाटन किया।

अप्रैल २६ : सर क्लॉडहिलको पत्र लिखा और युद्ध सम्मेलन या उसकी किसी समितिमें शामिल होनेसे इनकार किया।

अप्रैल २७. वाइसरायसे भेंट करनेके बाद युद्ध सम्मेलनमें शामिल होना स्वीकार किया। तिलकने युद्ध-सम्मेलनमें आनेका निमन्त्रण अस्वीकार किया।

अप्रैल २८. युद्ध-सम्मेलनमें हिन्दीमें बोले; सर विलियम विन्सेंटसे भेंट।

अप्रैल २९. युद्ध-सम्मेलनमें भरतीके प्रस्तावका समर्थन किया।

अप्रैल ३० वाइसरायके निजी सचिव मैफीको पत्रमें लिखा कि युद्ध सम्मेलनमें की गई अपनी घोषणाके अनुसार मैं अपनी सेवाएँ अधिकारियोको अर्पित करता हूँ।

मई १ दिल्लीसे नडियादके लिए रवाना।

मई २ नडियाद पहुँचे, रातको बम्बई रवाना।

मई ३ अखिल भारतीय कांग्रेस कमेटीके अधिवेशनमें गये। एनी बेसेंटसे भेंट।

मई ४ बीजापुरके लिए रवाना।

मई ५ बीजापुरमें बम्बई प्रान्तीय सम्मेलन तथा अन्त्यज सम्मेलनमें भाग लिया।

मई ६ खेड़ाकी लगानबंदीपर बॉम्बे गवर्नमेंट द्वारा जारी की गई विज्ञप्तिके उत्तरमें वक्तव्य दिया। बम्बई प्रान्तीय सम्मेलनमें गिरमिटिया प्रथाको रद करनेके प्रस्तावका समर्थन किया। बम्बईके लिए रवाना।

मई १३ डुडाकुवामें "आत्मबल बनाम दमन" विषयपर भाषण दिया।

मई १४ कठलालमें बीमार।

मई १६ नन्देसरमें भाषण।

मई १७ अहमदाबादसे चम्पारन रवाना।

मई १८ मैफीको सूचना दी कि वे भरती करनेकी पूरी तैयारी कर रहे हैं।

मई २४ मोतीहारीमें आश्रमकी नींव रखनेके बाद बाँकीपुरके रास्तेसे अहमदाबादके लिए रवाना।

मई २६ पटनामें आयोजित विराट सभामें "भारतकी राष्ट्र भाषा और स्वराज्य" पर भाषण।

मई २७ नडियादमें सत्याग्रहके महत्त्वके विषयमें भाषण।

जून २ 'बाम्बे क्रॉनिकल' और सर जॉर्ज बार्न्सको दक्षिण आफ्रिकामें भारतीय विरोधी कानूनोंके विषयमें लिखा।

जून ३ उत्तरसंडा और नवागामके किसानोके सम्मुख भाषण।

जून ६ खेड़ा सत्याग्रहकी समाप्तिकी सूचना देते हुए खेडाकी जनताके नाम सन्देश।

जून ८ नडियादके जिलाधीशकी अदालतमें गवाही दी; और स्वीकार किया कि गलतीसे जब्त किये गये खेतोंसे प्याज खोद लेनेकी सलाह उन्होंने ही अभियुक्तको दी थी।

अदालतके बाहर जमा भीड़को सत्याग्रहपर दृढ रहनेकी सलाह दी।

जून ९ बम्बई पहुँचे, बम्बई सरकारके मुख्य सचिवको पत्र लिखा और बम्बई प्रान्तीय युद्ध-सम्मेलनमें बोलनेसे इनकार किया।

जून १० टाउन हॉलमें बम्बई प्रान्तीय युद्ध-सम्मेलनमें भाग लिया।

जून ११ पूनामें भारत सेवक समाज (सर्वेंट्स ऑफ इंडिया सोसाइटी) के उत्सवमें भाग लिया।

जून १५ बम्बईके गवर्नरसे भेंट की।

जून १६ प्रान्तीय युद्ध-सम्मेलनमें लॉर्ड विलिंग्डनके उत्तेजनात्मक वक्तव्योंके विरोधमें आयोजित बम्बईकी सार्वजनिक सभाकी अध्यक्षता की।

सभामें पास किये गये प्रस्तावोंमें सरकारके रुखकी आलोचना की गई।

जून १७ · नडियादमे अपने साथियोके साथ भरतीके बारेमे सलाह-मशविरा किया।

जून २१. नडियादमे भरती-अभियान शुरू करते हुए सार्वजनिक सभामे भाषण दिया।

जून २२: नडियादसे भरती होनेकी अपील करते हुए पहली पत्रिका छापी।

जून २४· अहमदाबादमे गवर्नरके भाषणके विरोधमे बोले, लोगोसे भरती होनेकी अपील की।

जून २६· रासमे भरती होनेकी आवश्यकतापर भाषण।

जून २७ खेडामें जेल-मुक्त सत्याग्रहियोके स्वागतार्थं आयोजित समारोहमे सत्याग्रहके महत्त्व और बलपर प्रकाश डाला।

जून २८· कठलालमे 'प्याज सत्याग्रह' के अग्रणी मोहनलाल पड्याको जेलसे मुक्त होने पर मानपत्र भेंट करनेके लिए आयोजित सभामे सत्याग्रहकी तुलना कल्पवृक्षसे की।

जून २९. गाधीजीको खेडा सत्याग्रहकी सफल समाप्तिपर सभामे मानपत्र भेंट किया गया।

जुलाई ८. मॉण्टेग्यु-चैम्सफोर्ड सवैधानिक सुधारोपर रिपोर्ट प्रकाशित।

जुलाई ९· जिन्नाको पत्र लिखा कि उन्हे भरतीके लिए काम करनेके साथ-साथ मॉण्टेग्यु-चैम्सफोर्ड सुधार-योजनामे परिवर्तन करनेके लिए भी आग्रह करना चाहिए।

जुलाई १४. करमसदमें भरतीके सम्बन्धमे भाषण।

जुलाई १७: बम्बईसे नडियाद वापस आ गये।

जुलाई १८: शास्त्रीके अनुरोधपर उन्हे मॉण्टेग्यु-चैम्सफोर्ड सुधार-योजनाके सम्बन्धमे अपने विचार लिख भेजे।

प्रैटकी अध्यक्षतामे हुई सभामें घोषणा की कि जबतक मेरे गुजराती भाई ही आनाकानी करते हो तबतक भरतीके कामके लिए मै निस्सकोच भावसे गुजरातसे बाहर नही जा सकता।

जुलाई २२ भरतीकी अपील करते हुए दूसरी पत्रिका प्रकाशित की। गोविन्द मालवीयको पत्र लिखा कि मॉण्टेग्यु चैम्सफोर्ड योजना अच्छी है और उसकी कमियाँ आन्दोलन द्वारा दूर की जा सकती है।

जुलाई २७: दक्षिण आफ्रिकाके सघर्षके साथी सोराबजी शापुरजी अडाजानियाकी अकाल मृत्युपर 'बॉम्बे क्रॉनिकल' को पत्र।

शीर्षक-सांकेतिका

सांकेतिका

ब

ह